पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों
की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को
बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर
मआरिफ़ुल क़ुरआन
3
तफ़सीर
हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह.
(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

पिछले चालीस सालों से उर्दू भाषा में लाखों की तादाद में प्रकाशित होकर क़ुरआनी उलूम को बेशुमार अफ़राद तक पहुँचाने वाली बेनज़ीर तफ़सीर

मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन

जिल्द (3)

उर्दू तफ़सीर

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी देवबन्दी रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान व दारुल-उलूम देवबन्द)

हिन्दी अनुवादक

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (एम. ए. अलीग.)

रीडर अ़ल्लामा इक़बाल यूनानी मैडिकल कॉलेज मुज़फ़्फ़र नगर (उ.प्र.)

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

****

तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन

हज़रत मौलाना **मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब रह.

(मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान)

हिन्दी अनुवाद

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी एम. ए. (अलीग.)

मौहल्ला महमूद नगर, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 09456095608

जिल्द (3) सूरः मायदा, सूरः अन्आम, सूरः आराफ़

(पारा 6, रुकूअ़ 5 से पारा 9 रुकूअ़ 1 तक)

अक्तूबर 2012

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा.) लि.

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

بسم الله الرحمن الرحيم

WA'A TASIMOO BIHAB LILLAHI JAMEE-'AN WA LAA TAFARRAQOO

समर्पित

◎ अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला के कलाम **क़ुरआन मजीद** के प्रथम व्याख्यापक, हादी-ए-आ़लम, आख़िरी पैग़म्बर, तमाम नबियों में अफ़ज़ल हज़रत **मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम** के नाम, जिनका एक-एक क़ौल व अ़मल कलामे रब्बानी और मन्शा-ए-इलाही की अ़मली तफ़सीर था।

◎ **दारुल-उलूम देवबन्द** के नाम, जो क़ुरआन मजीद और उसकी तफ़सीर (हदीसे पाक) की अ़ज़ीमुश्शान ख़िदमत और दीनी रहनुमाई के सबब पूरी इस्लामी दुनिया में एक मिसाली संस्था है। जिसके इल्मी फ़ैज़ से मुस्तफ़ीद (लाभान्वित) होने के सबब इस नाचीज़ को इल्मी समझ और क़ुरआन मजीद की इस ख़िदमत की तौफ़ीक़ नसीब हुई।

◎ **उन तमाम नेक रूहों और हक़ के तलाश करने वालों** के नाम, जो हर तरह के पक्षपात से दूर रहकर और हर प्रकार की कठिनाईयों का सामना करके अपने असल मालिक व ख़ालिक़ के पैग़ाम को क़ुबूल करने वाले और दूसरों को कामयाबी व निजात के रास्ते पर लाने के लिये प्रयासरत हैं

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

दिल की गहराईयों से शुक्रिया

❂ मोहतरम जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ साहिब (मालिक फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली) का, जिनकी मुहब्बतों, इनायतों, क़द्रदानियों और मुझे अपने इदारे से जोड़े रखने के सबब क़ुरआन मजीद की यह अहम ख़िदमत अन्जाम पा सकी।

❂ मेरे उन बच्चों का जिन्होंने इस तफ़सीर की तैयारी में मेरा भरपूर साथ दिया, तथा मेरे सहयोगियों, सलाहकारों, शुभ-चिन्तकों और हौसला बढ़ाने वाले हज़रात का, अल्लाह तआ़ला इन सब हज़रात को अपनी तरफ़ से ख़ास जज़ा और बदला इनायत फ़रमाये। आमीन या रब्बल्-अ़लमीन।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋❋

प्रकाशक के क़लम से

अल्लाह तआ़ला का लाख-लाख शुक्र व एहसान है कि उसने मुझे और मेरे इदारे (फ़रीद बुक डिपो नई दिल्ली) को इस्लामी, दीनी और तारीख़ी किताबों के प्रकाशन के ज़रिये दीनी व दुनियावी उलूम की ख़िदमत की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई।

अल्हम्दु लिल्लाह हमारे इदारे से क़ुरआन पाक, हदीस मुबारक और दीनी विषयों पर बेशुमार किताबें शाया हो चुकी हैं। बल्कि अगर यह कहा जाये कि आज़ाद हिन्दुस्तान में हर इल्म व फ़न के अन्दर जिस क़द्र किताबें फ़रीद बुक डिपो देहली को प्रकाशित करने का सौभाग्य नसीब हुआ है उतना किसी और इदारे के हिस्से में नहीं आया तो यह बेजा न होगा। कोई इदारा फ़रीद बुक डिपो के मुक़ाबले में पेश नहीं किया जा सकता। यह सब कुछ अल्लाह के फ़ज़्ल व करम और उसकी इनायतों का फल है।

फ़रीद बुक डिपो देहली ने उर्दू, अ़रबी, फ़ारसी, गुजराती, हिन्दी और बंगाली अनेक भाषाओं में किताबें पेश करके एक नया रिकॉर्ड बनाया है। हिन्दी ज़बान में अनेक किताबें इदारे से शाया हो चुकी हैं। हिन्दी भाषा हमारी मुल्की ज़बान है। पढ़ने वालों की माँग और तलब देखते हुए तफ़सीरे क़ुरआन के उस अहम ज़ख़ीरे को हिन्दी ज़बान में लाने का फ़ैसला किया गया जो पिछले कई दशकों से इल्मी जगत में धूम मचाये हुए है। मेरी मुराद तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन से है। इस तफ़सीर के परिचय की आवश्यकता नहीं, दुनिया भर में यह एक मोतबर और विश्वसनीय तफ़सीर मानी जाती है।

मौलाना मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी ने फ़रीद बुक डिपो के लिये बहुत सी मुफ़ीद और कारामद किताबों का हिन्दी में तर्जुमा किया है। हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी के इस्लाही ख़ुतबात की 15 जिल्दें और तफ़सीर तौज़ीहुल-क़ुरआन उन्होंने हिन्दी में मुन्तक़िल की हैं जो इदारे से छपकर मक़बूल हो चुकी हैं। उन्हीं से यह काम करने का आग्रह किया गया जिसे उन्होंने क़ुबूल कर लिया और अब अल्हम्दु लिल्लाह यह शानदार तफ़सीर आपके हाथों में पहुँच रही है। हिन्दी भाषा में क़ुरआनी ख़िदमत की यह अहम कड़ी आपके सामने है। उम्मीद है कि आपको पसन्द आयेगी और क़ुरआन पाक के पैग़ाम को समझने और उसको आ़म करने में एक अहम रोल अदा करेगी।

मैं अल्लाह करीम की बारगाह में दुआ़ करता हूँ कि वह इस ख़िदमत को क़ुबूल फ़रमाये और हमारे लिये इसे ज़ख़ीरा-ए-आख़िरत और रहमत व बरकत का सबब बनाये आमीन।

ख़ादिम-ए-क़ुरआन

मुहम्मद नासिर ख़ान

मैनेजिंग डायरेक्टर, फ़रीद बुक डिपो, देहली

अनुवादक की ओर से

الحمد لله رب العالمين. والصلوة والسلام على رسوله الكريم. وعلى آله وصحبه اجمعين.

برحمتك ياارحم الراحمين.

तमाम तारीफ़ों की असल हक़दार अल्लाह तआ़ला की पाक ज़ात है जो तमाम जहानों की पालनहार है। वह बेहद मेहरबान और बहुत ही ज़्यादा रहम करने वाला है। और बेशुमार दुरूद व सलाम हों उस ज़ाते पाक पर जो अल्लाह तआ़ला की तमाम मख़्लूक़ में सब से बेहतर है, यानी हमारे आक़ा व सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम। और आपकी आल पर और आपके सहाबा किराम पर और आपके तमाम पैरोकारों पर।

अल्लाह करीम का बेहद फ़ज़्ल व करम है कि उसने मुझ नाचीज़ को अपने पाक कलाम की एक और ख़िदमत की तौफ़ीक़ बख़्शी। उसकी ज़ात तमाम ख़ूबियों, कमालात, तारीफ़ों और बन्दगी की हक़दार है।

इससे पहले सन् 2003 ईसवी में नाचीज़ ने **हकीमुल-उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी** रह. का तर्जुमा हिन्दी भाषा में पेश किया जिसको काफ़ी मक़बूलियत मिली, यह तर्जुमा इस्लामिक बुक सर्विस देहली ने प्रकाशित किया। उसके बाद **तफ़सीर इब्ने कसीर मुकम्मल** हिन्दी भाषा में पेश करने की सआ़दत नसीब हुई, जो रमज़ान (अगस्त 2011) में प्रकाशित होकर मन्ज़रे आ़म पर आ चुकी है। इसके अ़लावा **फ़रीद बुक डिपो** ही से मौजूदा ज़माने के मशहूर आ़लिम **शैख़ुल-इस्लाम हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी** दामत बरकातुहुम की मुख़्तसर तफ़सीर **तौज़ीहुल-क़ुरआन** शाया होकर पाठकों तक पहुँच रही है।

उर्दू भाषा में जो मक़बूलियत क़ुरआनी तफ़सीरों में तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन के हिस्से में आयी शायद ही कोई तफ़सीर उस मक़ाम तक पहुँची हो। यह तफ़सीर हज़ारों की संख्या में हर साल छपती और पढ़ने वालों तक पहुँचती है, और यह सिलसिला तक़रीबन चालीस सालों से चल रहा है मगर आज तक कोई तफ़सीर इतनी मक़बूलियत हासिल नहीं कर सकी।

हिन्द महाद्वीप की जानी-मानी इल्मी शख़्सियत **हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी** साहिब देवबन्दी (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) की यह तफ़सीर क़ुरआनी तफ़सीरों में एक बड़ा क़ीमती सरमाया है। दिल चाहता था कि हिन्दी जानने वाले हज़रात तक भी यह उलूम और क़ुरआनी मतालिब पहुँचें मगर काम इतना बड़ा और अहम था कि शुरू करने की हिम्मत न होती थी।

जो हज़रात इल्मी काम करते हैं उनको मालूम है कि एक ज़बान से दूसरी ज़बान में तर्जुमा करना कितना मुश्किल काम है, और सही बात तो यह है कि इस काम का पूरा हक़ अदा होना बहुत ही मुश्किल है। फिर भी मैंने कोशिश की है कि इबारत का मफ़्हूम व मतलब तर्जुमे में उतर आये। कहीं-कहीं ब्रेकिट बढ़ाकर भी इबारत को आसान बनाने की कोशिश की है। तर्जुमे में जहाँ तक संभव हुआ कोई छेड़छाड़ नहीं की गयी क्योंकि उलेमा-ए-मुहक़्क़िक़ीन ने इस तर्जुमे को इल्हामी तर्जुमा क़रार

दिया है। जहाँ बहुत ही ज़रूरी महसूस हुआ वहाँ आसानी के लिये कोई लफ़्ज़ बदला गया या ब्रकिट के अन्दर मायनों को लिख दिया गया।

अ़रबी और फ़ारसी के शे'रों का मफ़्हूम अगर मुसन्निफ़ की इबारत में आ गया है और हिन्दी पाठकों के लिये ज़रूरी न समझा तो कुछ अश्आर को निकाल दिया गया है, और जहाँ ज़रूरत समझी वहाँ अ़रबी, फ़ारसी शे'रों का तर्जुमा लिख दिया है। ऐसे मौक़ों पर अहक़र ने उस तर्जुमे के अपनी तरफ़ से होने की वज़ाहत कर दी है ताकि अगर तर्जुमा करने में ग़लती हुई हो तो उसकी निस्बत साहिबे तफ़सीर की तरफ़ न हो बल्कि उसे मुझ नाचीज़ की इल्मी कोताही गरदाना जाये।

हल्ले लुग़ात और **क़िराअतों का इख़्तिलाफ़** चूँकि इल्मे तफ़सीर पर निगाह न रखने वाले, क़िराअतों के फ़न से ना-आशना और अ़रबी ग्रामर से नावाक़िफ़ शख़्स एक हिन्दी जानने वाले के लिये कोई फ़ायदे की चीज़ नहीं, बल्कि बहुत सी बार कम-इल्मी के सबब इससे उलझन पैदा हो जाती है लिहाज़ा तफ़सीर के इस हिस्से को हिन्दी अनुवाद में शामिल नहीं किया गया।

हिन्दी जानने वाले हज़रात के लिये यह हिन्दी तफ़सीर एक नायाब तोहफ़ा है। अगर ख़ुद अपने मुताले से वह इसे पूरी तरह न समझ सकें तब भी कम से कम इतना मौक़ा तो है कि किसी आ़लिम से सबक़न् सबक़न् इस तफ़सीर को पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं। जिस तरह उर्दू तफ़सीरें भी सिर्फ़ उर्दू पढ़ लेने से पूरी तरह समझ में नहीं आतीं बल्कि बहुत सी जगह किसी आ़लिम से रुजू करके पेश आने वाली मुश्किल को हल किया जाता है, इसी तरह अगर हिन्दी जानने वाले हज़रात पूरी तरह इस तफ़सीर से फ़ायदा न उठा पायें तो हिम्मत न हारें, हिन्दी की इस तफ़सीर के ज़रिये उन्हें क़ुरआन पाक के तालिब-इल्म बनने का मौक़ा तो हाथ आ ही जायेगा। जो बात समझ में न आये वह किसी मोतबर आ़लिम से मालूम कर लें और इस तफ़सीरी तोहफ़े से अपनी इल्मी प्यास बुझायें। अल्लाह का शुक्र भेजिये कि आप तफ़सीर के तालिब-इल्म बनने के अहल हो गये वरना उर्दू न जानने की हालत में तो आप इस मौक़े से भी मेहरूम थे।

फ़रीद बुक डिपो से मेरी वाबस्तगी पच्चीस सालों से है। इस दौरान बहुत सी किताबें लिखने, प्रूफ़ रीडिंग करने और हिन्दी में तर्जुमा करने का मुझ नाचीज़ को मौक़ा मिला है। इदारे के संस्थापक **जनाब मुहम्मद फ़रीद ख़ाँ मरहूम** से लेकर मौजूदा मालिक और मैनेजिंग डायरेक्टर **जनाब अल-हाज मुहम्मद नासिर ख़ाँ** तक सब ही की ख़ास इनायतें मुझ नाचीज़ पर रही हैं। मैंने इस इदारे के लिये बहुत सी किताबों का हिन्दी तर्जुमा किया है, हज़रत **मौलाना क़ारी मुहम्मद तैयब** साहिब मोहतमिम दारुल-उलूम देवबन्द की किताबों और मज़ामीन पर किया हुआ मेरा काम सात जिल्दों में इसी इदारे से प्रकाशित हुआ है, इसके अ़लावा **"मालूमात का समन्दर"** और **"तज़किरा अ़ल्लामा मुहम्मद इब्राहीम बलियावी"** वग़ैरह किताबें भी यहीं से शाया हुई हैं। जो किताबें मैंने उर्दू से हिन्दी में इस इदारे के लिये की हैं उनकी तायदाद भी पचास से अधिक है, इसी सिलसिले में एक और कड़ी यह जुड़ने जा रही है।

इस तफ़सीर को उर्दू से मिलती-जुलती हिन्दी भाषा (यानी हिन्दुस्तानी ज़बान) में पेश करने की कोशिश की गयी, हिन्दी के संस्कृत युक्त अलफ़ाज़ से परहेज़ किया गया है। कोशिश यह की है कि मजमूई तौर पर मज़मून का मफ़्हूम व मतलब समझ में आ जाये। फिर भी अगर कोई लफ़्ज़ या

किसी जगह का कोई मज़मून समझ में न आये तो उसको नोट करके किसी आ़लिम से मालूम कर लेना चाहिये।

तफ़सीर की यह तीसरी जिल्द आपके हाथों में है इन्शा-अल्लाह तआ़ला बाक़ी की जिल्दें भी बहुत जल्द आपकी ख़िदमत में पेश की जायेंगी। इस तफ़सीर की तैयारी में कितनी मेहनत से काम लिया गया है इसका कुछ अन्दाज़ा उसी वक़्त हो सकता है जबकि उर्दू तफ़सीर को सामने रखकर मुक़ाबला किया जाये। तब मालूम होगा कि पढ़ने वालों के लिये इसे कितना आसान करने की कोशिश की गयी है। अल्लाह तआ़ला हमारी इस मेहनत को क़ुबूल फ़रमाये और अपने बन्दों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये आमीन।

इस तफ़सीर से फ़ायदा उठाने वालों से आ़जिज़ी और विनम्रता के साथ दरख़्वास्त है कि वे मुझ नाचीज़ के ईमान पर ख़ात्मे और दुनिया व आख़िरत में कामयाबी के लिये दुआ़ फ़रमायें। अल्लाह करीम इस ख़िदमत को मेरे माँ-बाप और उस्ताज़ों के लिये भी मग़फ़िरत का ज़रिया बनाये, आमीन।

आख़िर में बहुत ही आ़जिज़ी के साथ अपनी कम-इल्मी और सलाहियत के अभाव का एतिराफ़ करते हुए यह अ़र्ज़ है कि बेऐब अल्लाह तआ़ला की ज़ात है। कोई भी इनसानी कोशिश ऐसी नहीं जिसके बारे में सौ फ़ीसद यक़ीन के साथ कहा जा सके कि उसके अन्दर कोई ख़ामी और कमी नहीं रह गयी है। मैंने भी यह एक मामूली कोशिश की है, अगर मुझे इसमें कोई कामयाबी मिली है तो यह महज़ अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम, उसके पाक नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये लाये हुए पैग़ाम (क़ुरआन व हदीस) की रोशनी का फ़ैज़, अपनी मादरे इल्मी दारुल-उलूम देवबन्द की निस्बत और मेरे असातिज़ा हज़रात की मेहनत का फल है, मुझ नाचीज़ का इसमें कोई कमाल नहीं। हाँ इन इल्मी जवाहर-पारों को समेटने, तरतीब देने और पेश करने में जो ग़लती, ख़ामी और कोताही हुई हो वह यक़ीनन मेरी कम-इल्मी और नाक़िस सलाहियत के सबब है। अहले नज़र हज़रात से गुज़ारिश है कि अपनी राय, मश्विरों और नज़र में आने वाली ग़लतियों व कोताहियों से मुत्तला फ़रमायें ताकि आईन्दा किये जाने वाले इल्मी कामों में उनसे लाभ उठाया जा सके। वस्सलाम

तालिबे दुआ़

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

79, महमूद नगर, गली नम्बर 6, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.) 251001

15 सितम्बर 2012

फ़ोन:- 0131-2442408, 09456095608, 09012122788

E-mail: imranqasmialig@yahoo.com

एक अहम बात

क़ुरआन मजीद के मतन को अ़रबी के अ़लावा हिन्दी या किसी दूसरी भाषा के रस्मुलख़त (लिपि) में बदलने पर अक्सर उलेमा की राय इसके विरोध में है। कुछ उलेमा का ख़्याल है कि इस तरह करने से क़ुरआन मजीद के हर्फ़ों की अदायगी में तहरीफ़ (कमी-बेशी और रद्दोबदल) हो जाती है और उनको भय (डर) है कि जिस तरह इन्जील और तौरात तहरीफ़ का शिकार हो गईं वैसे ही ख़ुदा न करे इसका भी वही हाल हो। यह तो ख़ैर नामुम्किन है, इसकी हिफ़ाज़त का वायदा अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद किया है और करोड़ों हाफ़िज़ों को क़ुरआन मजीद मुँह-ज़बानी याद है।

इस सिलसिले में नाचीज़ **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी** (इस तफ़सीर का हिन्दी अनुवादक) अ़र्ज़ करता है कि हक़ीक़त यह है कि अ़रबी रस्मुलख़त के अ़लावा दूसरी किसी भी भाषा में क़ुरआन मजीद को क़तई तौर पर सौ फ़ीसद सही नहीं पढ़ा जा सकता। इसलिए कि हर्फ़ों की बनावट के एतिबार से भी किसी दूसरी भाषा में यह गुंजाईश नहीं कि वह अ़रबी ज़बान के तमाम हुरूफ़ का मुतबादिल (विकल्प) पेश कर सके। फिर अगर किसी तरह कोई निशानी मुक़र्रर करके इस कमी को पूरा करने की कोशिश भी की जाए तो **'मख़ारिजे हुरूफ़'** यानी हुरूफ़ के निकालने का जो तरीक़ा, मक़ाम और इल्म है वह उस वैकल्पिक तरीक़े से हासिल नहीं किया जा सकता। जबकि यह सब को मालूम है कि सिर्फ़ अलफ़ाज़ के निकालने में फ़र्क़ होने से अ़रबी ज़बान में मायने बदल जाते हैं। इसलिये अ़रबी मतन की जो हिन्दी दी गयी है उसको सिर्फ़ यह समझें कि वह आपके अन्दर अ़रबी क़ुरआन पढ़ने का शौक़ पैदा करने के लिये है। तिलावत के लिये अ़रबी ही पढ़िये और उसी को सीखिये। वरना हो सकता है कि किसी जगह ग़लत उच्चारण के सबब पढ़ने में सवाब के बजाय अ़ज़ाब के हक़दार न बन जायें।

मैंने अपनी पूरी कोशिश की है कि जितना मुझसे हो सके इस तफ़सीर को आसान बनाऊँ मगर फिर भी बहुत से मक़ामात पर ऐसे इल्मी मज़ामीन आये हैं कि उनको पूरी तरह आसान नहीं किया जा सका, मगर ऐसी जगहें बहुत कम हैं, उनके सबब इस अहम और क़ीमती सरमाये से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता। अगर कोई मक़ाम समझ में न आये तो उस पर निशान लगाकर बाद में किसी आ़लिम से मालूम कर लें। तफ़सीर पढ़ने के लिये यक्सूई और इत्मीनान का एक वक़्त मुक़र्रर करना चाहिये, चाहे वह थोड़ा सा ही हो। अगर इस लगन के साथ इसका मुताला जारी रखा जायेगा तो उम्मीद है कि आप इस क़ीमती

ख़ज़ाने से इल्म व मालूमात का एक बड़ा हिस्सा हासिल कर सकेंगे। यह बात एक बार फिर अ़र्ज़ किये देता हूँ कि असल मतन को अ़रबी ही में पढ़िये तभी आप उसका किसी कद्र हक़ अदा कर सकेंगे। यह ख़ालिक़े कायनात का कलाम है अगर इसको सीखने में थोड़ा वक़्त और पैसा भी ख़र्च हो जाये तो इस सौदे को सस्ता और लाभदायक समझिये। कल जब आख़िरत का आ़लम सामने होगा और क़ुरआन पाक पढ़ने वालों को इनामात व सम्मान से नवाज़ा जायेगा तो मालूम होगा कि अगर पूरी दुनिया की दौलत और तमाम उम्र ख़र्च करके भी इसको हासिल कर लिया जाता तो भी इसकी क़ीमत अदा न हो पाती।

हमने रुकूअ़, पाव, आधा, तीन पाव और सज्दे के निशानात मुक़र्रर किये हैं इनको ध्यान से देख लीजिये।

रुकूअ़	❁	पाव	❖
आधा	●	तीन पाव	▲
सज्दा	✪		

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी (मुज़फ़्फ़र नगर उ. प्र.)

OOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOOO

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

पेश-लफ़्ज़

वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब मद्द ज़िल्लुहुम की तफ़सीर **'मआरिफ़ुल्-क़ुरआन'** को अल्लाह तआ़ला ने अ़वाम व ख़्वास में असाधारण मक़बूलियत अ़ता फ़रमाई, और जिल्दे अव्वल का पहला संस्करण हाथों हाथ ख़त्म हो गया। दूसरे संस्करण की छपाई के वक़्त हज़रत मुसन्निफ़ मद्द ज़िल्लुहुम ने पहली जिल्द पर मुकम्मल तौर से दोबारा नज़र डाली और उसमें काफ़ी तरमीम व इज़ाफ़ा अ़मल में आया। इसी के साथ हज़रते वाला की इच्छा थी कि दूसरी बार छपने के वक़्त पहली जिल्द के शुरू में क़ुरआनी उलूम और उसूले तफ़सीर से मुताल्लिक़ एक मुख़्तसर मुक़द्दिमा भी तहरीर फ़रमायें, ताकि तफ़सीर के मुताले (अध्ययन) से पहले पढ़ने वाले हज़रात उन ज़रूरी मालूमात से लाभान्वित हो सकें, लेकिन लगातार बीमारी और कमज़ोरी की बिना पर हज़रत के लिये बज़ाते ख़ुद मुक़द्दिमे का लिखना और तैयार करना मुश्किल था, चुनाँचे हज़रते वाला ने यह ज़िम्मेदारी अहक़र के सुपुर्द फ़रमाई।

अहक़र ने हुक्म के पालन में और इस सौभाग्य को प्राप्त करने के लिये यह काम शुरू किया तो यह मुक़द्दिमा बहुत लम्बा हो गया, और क़ुरआनी उलूम के विषय पर ख़ास मुफ़स्सल किताब की सूरत बन गई। इस पूरी किताब को 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' के शुरू में बतौर मुक़द्दिमा शामिल करना मुश्किल था, इसलिये हज़रत वालिद साहिब के इशारे और राय से अहक़र ने इस मुफ़स्सल किताब का ख़ुलासा तैयार किया और सिर्फ़ वे चीज़ें बाक़ी रखीं जिनका मुताला तफ़सीर मआ़रिफ़ुल-क़ुरआन के मुताला करने वाले के लिये ज़रूरी था, और जो एक आ़म पाठक के लिये दिलचस्पी का सबब हो सकती थी। उस बड़े मज़मून का यह ख़ुलासा 'मआरिफ़ुल-क़ुरआन' पहली जिल्द के इस संस्करण में मुक़द्दिमे के तौर पर शामिल किया जा रहा है, अल्लाह तआ़ला इसे मुसलमानों के लिये नाफ़े और मुफ़ीद (लाभदायक) बनाये और इस नाचीज़ के लिये आख़िरत का ज़ख़ीरा साबित हो।

इन विषयों पर तफ़सीली इल्मी मबाहिस (बहसें) अहक़र की उस विस्तृत और तफ़सीली किताब में मिल सकेंगे जो इन्शा-अल्लाह तआ़ला जल्द ही एक मुस्तक़िल किताब की सूरत में प्रकाशित होगी (अब यह किताब 'उलूमुल-क़ुरआन' के नाम से प्रकाशित हो चुकी है)। लिहाज़ा जो हज़रात तहक़ीक़ और तफ़सील के तालिब हों वे उस किताब की तरफ़ रुजू फ़रमायें। व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाह, अ़लैहि तवक्कल्तु व इलैहि उनीब।

अहक़र
मुहम्मद तक़ी उस्मानी
दारुल-उलूम कोरंगी, कराची- 14
23 रबीउल-अव्वल 1394 हिजरी

Wa lilahl asma ulhusna fad uhu biha

मुख़्तसर विषय-सूची

मआरिफ़ुल-क़ुरआन जिल्द नम्बर (3)

	उनवान	पेज
✪	समर्पित	5
✪	दिल की गहराईयों से शुक्रिया	6
✪	प्रकाशक के क़लम से	7
✪	अनुवादक की ओर से	8
✪	एक अहम बात	11
✪	पेश लफ़्ज़	13
	सूरः मायदा	**31**
✪	आयत नम्बर 1	33
✪	सूरत का शाने-नुज़ूल और मज़ामीन का ख़ुलासा	33
✪	ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	35
✪	मआरिफ़ व मसाईल	35
✪	आयत नम्बर 2	39
✪	इस आयत के मज़मून का पीछे से सम्बन्ध	39
✪	ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	41
✪	मआरिफ़ व मसाईल	42
✪	आपसी सहयोग व मदद का क़ुरआनी उसूल	44
✪	क़ौमियतों की तक़सीम	47
✪	क़ौमियत और संगठन व एकता के लिये क़ुरआनी तालीम	47
✪	आयत नम्बर 3 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	51
✪	मआरिफ़ व मसाईल	53
✪	ईद और त्यौहार मनाने का इस्लामी उसूल	58
✪	आयत नम्बर 4	63
✪	इस आयत के मज़मून का पीछे से संबन्ध	64
✪	ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	64
✪	मआरिफ़ व मसाईल	65

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 5 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	66
✪ मआरिफ़ व मसाईल	67
✪ सिर्फ़ नाम के यहूदी व ईसाई जो वास्तव में दहरिये हैं वे इसमें दाख़िल नहीं	73
✪ अहले किताब के खाने से क्या मुराद है?	74
✪ अहले किताब का ज़बीहा हलाल होने की हिक्मत और वजह	75
✪ ख़ुलासा-ए-कलाम	80
✪ आयत नम्बर 6-7	88
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	89
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	89
✪ आयत नम्बर 8-10 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	90
✪ मआरिफ़ व मसाईल	91
✪ परीक्षाओं के नम्बर, सनद व सर्टिफ़िकेट और चुनाव के वोट सब गवाही के हुक्म में दाख़िल हैं	94
✪ आयत नम्बर 11-12 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	96
✪ मआरिफ़ व मसाईल	97
✪ आयत नम्बर 13-14 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	103
✪ मआरिफ़ व मसाईल	105
✪ ईसाई फ़िर्क़ों में आपसी दुश्मनी	108
✪ आयत नम्बर 15-18 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	108
✪ मआरिफ़ व मसाईल	112
✪ आयत नम्बर 19 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	113
✪ मआरिफ़ व मसाईल	114
✪ ज़माना-ए-फ़तुरत की तहक़ीक़	114
✪ ज़माना-ए-फ़तुरत के अहकाम	115
✪ एक सवाल और उसका जवाब	115
✪ ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के विशेष कमालात की तरफ़ इशारा	116
✪ आयत नम्बर 20-26 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	117
✪ मआरिफ़ व मसाईल	120
✪ पवित्र ज़मीन से कौनसी ज़मीन मुराद है?	123
✪ क़ौम की इन्तिहाई बेवफ़ाई और मूसा अ़लैहिस्सलाम का बेइन्तिहा जमाव और हिम्मत	127
✪ आयत नम्बर 27-32 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	131

उनवान	पेज
✪ मआरिफ़ व मसाईल	135
✪ हाबील और क़ाबील का क़िस्सा	135
✪ ऐतिहासिक रिवायतों के नक़ल करने में एहतियात और सच्चाई वाजिब है	136
✪ अ़मल के क़ुबूल होने का मदार इख़्लास और परहेज़गारी पर है	139
✪ आयत नम्बर 33-34 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	140
✪ जुर्म व सज़ा के चन्द क़ुरआनी नियम	140
✪ मआरिफ़ व मसाईल	141
✪ क़ुरआनी क़वानीन का अ़जीब व ग़रीब क्रांतिकारी अन्दाज़	141
✪ शरई सज़ाओं की तीन क़िस्में	142
✪ आयत नम्बर 35-40 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	150
✪ मआरिफ़ व मसाईल	152
✪ आयत नम्बर 41-43	163
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	165
✪ इन आयतों के नाज़िल होने का सबब व मौक़ा	165
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	169
✪ मआरिफ़ व मसाईल	171
✪ इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों के मुक़द्दिमों का क़ानून	172
✪ यहूदियों की एक बुरी ख़स्लत	174
✪ अ़वाम के लिये उलेमा की पैरवी का उसूल	174
✪ यहूदियों की एक दूसरी बुरी ख़स्लत	176
✪ तीसरी बुरी ख़स्लत	176
✪ 'अल्लाह की किताब में रद्दोबदल करना'	176
✪ चौथी बुरी ख़स्लत रिश्वत ख़ोरी	177
✪ आयत नम्बर 44-50 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	178
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	181
✪ मआरिफ़ व मसाईल	186
✪ क़ुरआन तौरात और इंजील का भी मुहाफ़िज़ है	189
✪ नबियों की शरीअ़तों में आंशिक भिन्नता और उसकी हिक्मत	189
✪ मज़कूरा आयतों में आये हुए स्पष्ट और ज़िमनी अहकाम का ख़ुलासा	191
✪ आयत नम्बर 51-58 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	192
✪ मआरिफ़ व मसाईल	197

उनवान	पेज
✪ शाने नुज़ूल	197
✪ आयत नम्बर 59-61 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	208
✪ मआरिफ़ व मसाईल	210
✪ दावत व तब्लीग़ में मुख़ातब की रियायत	210
✪ आयत नम्बर 62-63 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	211
✪ मआरिफ़ व मसाईल	211
✪ यहूदियों की अख़्लाक़ी हालत की तबाही	211
✪ आमाल को सुधारने का तरीक़ा	212
✪ उलेमा पर अ़वाम के आमाल की ज़िम्मेदारी	213
✪ उलेमा व बुज़ुर्गों के लिये एक चेतावनी	213
✪ उम्मत के सुधार का तरीक़ा	215
✪ गुनाहों पर नफ़रत का इज़हार न करने पर सज़ा की धमकी	215
✪ आयत नम्बर 64-67 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	216
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	217
✪ मआरिफ़ व मसाईल	219
✪ यहूदियों की एक गुस्ताख़ी का जवाब	219
✪ अल्लाह के अहकाम पर पूरा अ़मल दुनिया में भी बरकतों का सबब है	220
✪ अल्लाह के अहकाम पर पूरा अ़मल किस तरह होता है	220
✪ एक शुब्हा और उसका जवाब	221
✪ तब्लीग़ की ताकीद और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली	222
✪ हज्जतुल-विदा के मौके पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की एक नसीहत	223
✪ आयत नम्बर 68-69 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	224
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	225
✪ मआरिफ़ व मसाईल	225
✪ अहले किताब को अल्लाह की शरीअ़त की पैरवी की हिदायत	225
✪ अहकाम की तीन क़िस्में	227
✪ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को एक तसल्ली	228
✪ चार क़ौमों को ईमान और नेक अ़मल की तरग़ीब और आख़िरत में निजात का वायदा	228
✪ अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सम्मान व विशेषता का मदार नेक आमाल पर है	229
✪ रिसालत पर ईमान लाये बग़ैर निजात नहीं	230

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 70-71 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	232
✪ मआरिफ़ व मसाईल	233
✪ बनी इस्राईल का अ़हद तोड़ना	233
✪ आयत नम्बर 72-76 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	234
✪ मआरिफ़ व मसाईल	236
✪ हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम के ख़ुदा होने की तरदीद	237
✪ हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम नबी थीं या वली?	237
✪ आयत नम्बर 77-81 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	238
✪ मआरिफ़ व मसाईल	240
✪ बनी इस्राईल के ग़लत चलन का एक दूसरा पहलू	240
✪ बनी इस्राईल की इफ़रात व तफ़रीत	241
✪ अल्लाह जल्ल शानुहू तक पहुँचने का तरीक़ा	241
✪ इल्मी तहक़ीक़ और गहन अध्ययन ग़ुलू नहीं	242
✪ बनी इस्राईल को दरमियानी रास्ते की हिदायत	243
✪ बनी इस्राईल का बुरा अन्जाम	243
✪ आयत नम्बर 82-86 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	244
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	245
सातवाँ पारा (व इज़ा समिअ़ू)	**246**
✪ मआरिफ़ व मसाईल	247
✪ यहूदियों व ईसाईयों में से कुछ लोगों की हक़-परस्ती	247
✪ हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब की तक़रीर का हब्शा के बादशाह पर असर	248
✪ हब्शा के बादशाह के वफ़्द की दरबारे नबी में हाज़िरी	248
✪ क़ौम व मिल्लत की असली रूह हक़-परस्त उलेमा और बुज़ुर्ग हज़रात हैं	250
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	250
✪ आयत नम्बर 87-88 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	250
✪ मआरिफ़ व मसाईल	251
✪ दुनिया से बेताल्लुक़ी अगर अल्लाह की बताई हुई हदों के अन्दर हो तो जायज़, वरना हराम है	251
✪ किसी हलाल चीज़ को हराम क़रार देने के तीन दर्जे	251
✪ आयत नम्बर 89 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	253

उनवान	पेज
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	253
✪ मआरिफ़ व मसाईल	254
✪ क़सम खाने की चन्द सूरतें और उनसे संबन्धित अहकाम	254
✪ क़सम टूटने से पहले कफ़्फ़ारे की अदायेगी मोतबर नहीं	256
✪ आयत नम्बर 90-92 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	256
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से जोड़	257
✪ मआरिफ़ व मसाईल	258
✪ कायनात की पैदाईश इनसान के लाभ उठाने के लिये है	258
✪ 'अज़लाम' की वज़ाहत	258
✪ क़ुर्आ डालने की जायज़ सूरत	259
✪ शराब और जुए की जिस्मानी और रूहानी ख़राबियाँ	259
✪ आयत नम्बर 93-96 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	263
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	264
✪ मआरिफ़ व मसाईल	266
✪ आयत नम्बर 97-100 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	268
✪ मआरिफ़ व मसाईल	270
✪ अमन व इत्मीनान के चार असबाब	270
✪ बैतुल्लाह पूरे आ़लम का सुतून है	271
✪ बैतुल्लाह का वजूद विश्व-शांति का सबब है	271
✪ आयत के उतरने का मौक़ा व सबब	275
✪ आयत नम्बर 101-103 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	277
✪ मआरिफ़ व मसाईल	278
✪ बेज़रूरत सवाल करने की मनाही	278
✪ शाने नुज़ूल	279
✪ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद नुबुव्वत और वही का सिलसिला ख़त्म है	279
✪ बहीरा, सायबा वग़ैरह की तफ़सील	280
✪ आयत नम्बर 104-105 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	281
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	281
✪ मआरिफ़ व मसाईल	282
✪ इन आयतों के उतरने का मौक़ा और सबब	282

	उनवान	पेज
✪	ना-अहल को मुक़्तदा बनाना तबाही को दावत देना है	283
✪	पैरवी करने का मेयार	284
✪	किसी की आलोचना करने का असरदार तरीक़ा	284
✪	मख़्लूक़ के सुधार की फ़िक्र करने वालों को एक तसल्ली	284
✪	गुनाहों की रोक-थाम के बारे में हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु का एक ख़ुतबा	285
✪	मारूफ़ और मुन्कर के मायने	286
✪	क़ुरआन व हदीस में ग़ौर व फ़िक्र करने वालों के विभिन्न अक़वाल में कोई शरई बुराई नहीं होती	286
✪	आयत नम्बर 106-108	287
✪	इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	289
✪	इन आयतों के नाज़िल होने का मौक़ा व सबब	289
✪	ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	289
✪	मआरिफ़ व मसाईल	292
✪	एक काफ़िर की गवाही दूसरे काफ़िर के मामले में माननीय है	293
✪	जिस शख़्स पर किसी का हक़ हो वह उसको क़ैद करा सकता है	293
✪	आयत नम्बर 109-110	294
✪	इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	295
✪	ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	295
✪	मआरिफ़ व मसाईल	296
✪	क़ियामत में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से सबसे पहले सवाल होगा	296
✪	एक शुब्हा और उसका जवाब	297
✪	एक सवाल और उसका जवाब	298
✪	अम्बिया हज़रात की इन्तिहाई शफ़क़त का ज़हूर	298
✪	मेहशर में पाँच चीज़ों का सवाल	299
✪	हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से विशेष सवाल व जवाब	299
✪	अल्लाह की बारगाह में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का जवाब	300
✪	हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर कुछ विशेष इनामों का ज़िक्र	300
✪	आयत नम्बर 11-115 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	301
✪	मआरिफ़ व मसाईल	303
✪	मोमिन को मोजिज़ों का मुतालबा नहीं करना चाहिये	303

उनवान	पेज
✪ जब नेमत असाधारण और बड़ी हो तो नाशुक्री का वबाल भी बड़ा होता है	304
✪ आयत नम्बर 116-118 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	307
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	307
✪ इन आयतों से मालूम होने वाली चन्द अहम बातें	307
✪ आयत नम्बर 119-120	309
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	309
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	309
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	311
सूरः अन्आ़म	**315**
✪ आयत नम्बर 1-5 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	315
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	316
✪ आयत नम्बर 6-11 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	321
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	323
✪ आयत नम्बर 12-14 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	328
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	329
✪ आयत नम्बर 15-21 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	330
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	333
✪ आयत नम्बर 22-26 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	338
✪ मुश्रिक लोगों के कामयाब न होने की क़ैफ़ियत	339
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	340
✪ आयत नम्बर 27-32 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	345
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	348
✪ आयत नम्बर 33-41 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	352
✪ काफ़िरों की बेहूदा बातों पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह की तरफ़ से तसल्ली	354
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	357
✪ मख़्लूक़ के हुक़ूक़ की हद से ज़्यादा अहमियत	358
✪ आयत नम्बर 42-45 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	359
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	360
✪ आयत नम्बर 46-49 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	365

	उनवान	पेज
✪	आयत नम्बर 50-51 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	366
✪	मआरिफ़ व मसाईल	367
✪	अरब के काफ़िरों की तरफ़ से दुश्मनी के तौर पर फ़रमाईशी मोजिज़ों का मुतालबा	367
✪	आयत नम्बर 52-55 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	373
✪	मआरिफ़ व मसाईल	375
✪	घमण्ड व जाहिलीयत का ख़ात्मा और इज़्ज़त व ज़िल्लत का इस्लामी मेयार इस्लाम में अमीर व ग़रीब का कोई भेदभाव नहीं	375
✪	चन्द अहकाम और हिदायतें	379
✪	तौबा से हर गुनाह माफ़ हो जाता है	382
✪	आयत नम्बर 56-58 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	384
✪	इन आयतों के मज़मून का पीछे से सम्बन्ध	385
✪	आयत नम्बर 59-62 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	387
✪	मआरिफ़ व मसाईल	387
✪	गुनाहों से बचने का बेहतरीन नुस्ख़ा	387
✪	क़ुरआनी परिभाषा में इल्म-ए-ग़ैब और आम मुतलक़ क़ुदरत सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की ख़ास सिफ़त है, कोई मख़्लूक़ इसमें शरीक नहीं	388
✪	आयत नम्बर 63-64 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	396
✪	मआरिफ़ व मसाईल	397
✪	अल्लाह के इल्म और उसकी कामिल क़ुदरत की कुछ निशानियाँ	397
✪	एक सबक़ लेने वाली बात	398
✪	हादसों और मुसीबतों का असली इलाज	398
✪	आयत नम्बर 65-67 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	401
✪	मआरिफ़ व मसाईल	402
✪	अल्लाह के अ़ज़ाब की तीन क़िस्में	403
✪	आयत नम्बर 68-73 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	412
✪	मआरिफ़ व मसाईल	415
✪	बेदीन और ग़लत लोगों की मज्लिसों से परहेज़ का हुक्म	415
✪	आयत नम्बर 74-81 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	421
✪	मआरिफ़ व मसाईल	423
✪	अ़क़ायद व आमाल के सुधार की दावत अपने घर और अपने ख़ानदान से शुरू करनी चाहिये	424

उनवान	पेज
✪ दो क़ौमी दृष्टिकोण, मुसलमान एक क़ौम और काफ़िर दूसरी क़ौम है	424
✪ तब्लीग़ व दावत में हिक्मत व तदबीर से काम लेना नबियों का तरीक़ा और सुन्नत है	426
✪ इस्लाम के प्रचारकों के लिये चन्द हिदायतें	428
✪ आयत नम्बर 82-89 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	430
✪ मआरिफ़ व मसाईल	432
✪ आयत नम्बर 90-94 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	437
✪ मआरिफ़ व मसाईल	440
✪ आयत नम्बर 95-98 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	445
✪ मआरिफ़ व मसाईल	446
✪ मख़्लूक़ात के आराम के लिये रात की क़ुदरती और जबरी निर्धारण एक अज़ीम नेमत है	447
✪ सूरज और चाँद का हिसाब	449
✪ आयत नम्बर 99-102 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	453
✪ मआरिफ़ व मसाईल	454
✪ आयत नम्बर 103-107 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	456
✪ मआरिफ़ व मसाईल	457
✪ अल्लाह तआ़ला के दीदार का मसला	458
✪ आयत नम्बर 108-113 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	464
आठवाँ पारा (व लौ अन्नना)	**465**
✪ मआरिफ़ व मसाईल	466
✪ किसी गुनाह का सबब बनना भी गुनाह है	469
✪ आयत नम्बर 114-117 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	474
✪ मआरिफ़ व मसाईल	476
✪ आयत नम्बर 118-121 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	480
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध	481
✪ मआरिफ़ व मसाईल	483
✪ आयत नम्बर 122 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	484
✪ मआरिफ़ व मसाईल	484
✪ मोमिन ज़िन्दा है और काफ़िर मुर्दा	485

उनवान	पेज
✪ ईमान नूर है और कुफ़्र अंधेरी	487
✪ ईमान के नूर का फ़ायदा दूसरों को भी पहुँचता है	489
✪ आयत नम्बर 123-125 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	490
✪ मआरिफ़ व मसाईल	491
✪ नुबुव्वत व रिसालत मेहनत से हासिल की जाने वाली और इख़्तियारी चीज़ नहीं, बल्कि एक ओहदा है........	493
✪ दीन में दिली इत्मीनान और उसकी पहचान	494
✪ सहाबा किराम को दीन में दिली इत्मीनान हासिल था, इसलिये शक व शुब्हात बहुत कम पेश आये	495
✪ शक व शुब्हात के दूर करने का असली तरीक़ा बहस व मुबाहसा नहीं दिली इत्मीनान को हासिल करना है	495
✪ आयत नम्बर 126-128 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	496
✪ मआरिफ़ व मसाईल	497
✪ आयत नम्बर 129-132 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	502
✪ मआरिफ़ व मसाईल	503
✪ मेहशर में लोगों की जमाअतें आमाल व अख़्लाक़ की बुनियाद पर होंगी, दुनियावी ताल्लुक़ात की बुनियाद पर नहीं	503
✪ दुनिया में भी आमाल व अख़्लाक़ का सामूहिक मामलात में असर	504
✪ एक ज़ालिम को दूसरे ज़ालिम के हाथ से सज़ा मिलती है	505
✪ क्या जिन्नात में भी रसूल होते हैं?	507
✪ हिन्दुओं के अवतार भी उमूमन जिन्नात हैं, उनमें किसी रसूल व नबी होने का गुमान व संभावना है	508
✪ आयत नम्बर 133-136 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	509
✪ मआरिफ़ व मसाईल	511
✪ अल्लाह तआला सबसे बेनियाज़ है, कायनात की पैदाईश सिर्फ़ उसकी रहमत का नतीजा है	512
✪ किसी इनसान को अल्लाह ने बेनियाज़ नहीं बनाया, इसमें बड़ी हिक्मत है, इनसान बेनियाज़ हो जाये तो ज़ुल्म करता है	512
✪ काफ़िरों की इस चेतावनी में मुसलमानों के लिये सबक़	515
✪ आयत नम्बर 137-140 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	516
✪ इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़	517

उनवान	पेज
आयत नम्बर 141-142 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	519
मआरिफ़ व मसाईल	521
ज़मीन का उश्र	523
आयत नम्बर 143-144 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	526
आयत नम्बर 145-147 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	528
आयत नम्बर 148-150 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	530
आयत नम्बर 151-153 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	532
मआरिफ़ व मसाईल	534
ज़िक्र हुई आयतों की अहम विशेषतायें	535
ये आयतें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का वसीयत नामा हैं	536
सबसे पहला बड़ा गुनाह शिर्क है जिसको हराम किया गया है	537
शिर्क का मतलब और उसकी क़िस्में	537
दूसरा गुनाह माँ-बाप से बदसुलूकी है	538
तीसरा हराम, औलाद का क़त्ल करना	539
औलाद की तालीमी अख़्लाक़ी तरबियत न करना और बेदीनी के लिये आज़ाद छोड़ देना भी एक तरह से औलाद का क़त्ल है	541
चौथा हराम बेहयाई का काम है	541
पाँचवाँ हराम नाहक़ किसी को क़त्ल करना है	543
छठा हराम, यतीम का माल नाजायज़ तौर पर खाना	544
सातवाँ हराम नाप-तौल में कमी	545
अफ़सरों, मुलाज़िमों, मज़दूरों का अपनी तयशुदा ड्यूटी और ज़िम्मेदारी में कोताही करना भी नाप-तौल में कमी करने के हुक्म में है	545
आठवाँ हुक्म अ़दल व इन्साफ़ है इसके ख़िलाफ़ करना हराम है	547
नवाँ हुक्म अल्लाह के अ़हद को पूरा करना, यानी अ़हद तोड़ने का हराम होना	548
आयत नम्बर 154-157 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	551
मआरिफ़ व मसाईल	553
आयत नम्बर 158 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	554
मआरिफ़ व मसाईल	555
आयत नम्बर 159-160 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	559
मआरिफ़ व मसाईल	560
दीन में बिदअ़त ईजाद करने पर सख़्त वईद	561

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 161-165 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	565
✪ मआरिफ़ व मसाईल	567
✪ किसी के गुनाह का भार दूसरा नहीं उठा सकता	569
सूरः आराफ़	**573**
✪ आयत नम्बर 1-7	575
✪ सूरत के मज़ामीन का ख़ुलासा	576
✪ ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	576
✪ मआरिफ़ व मसाईल	577
✪ आयत नम्बर 8-10 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	579
✪ मआरिफ़ व मसाईल	579
✪ आमाल का वज़न होने के बारे में एक शुब्हा और जवाब	581
✪ आमाल का वज़न किस तरह होगा?	583
✪ आयत नम्बर 11-18 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	586
✪ मआरिफ़ व मसाईल	589
✪ शैतान की दुआ क़ियामत तक ज़िन्दगी की क़ुबूल हुई या नहीं, क़ुबूल होने की सूरत में दो आयतों के आपस में टकराने वाले अलफ़ाज़ की आपस में मुवाफ़कत	589
✪ क्या काफ़िर की दुआ भी क़ुबूल हो सकती है?	590
✪ हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम और शैतान के वाक़िए के विभिन्न अलफ़ाज़	591
✪ शैतान को यह जुर्रत कैसे हुई कि अल्लाह की बारगाह में ऐसी बेधड़क गुफ़्तगू की	591
✪ शैतान का हमला इनसान पर चार दिशाओं में सीमित नहीं, आ़म है	591
✪ आयत नम्बर 19-25 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	592
✪ मआरिफ़ व मसाईल	594
✪ आयत नम्बर 26-27 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	595
✪ मआरिफ़ व मसाईल	596
✪ लिबास के दो फ़ायदे	597
✪ इनसान पर शैतान का पहला हमला	597
✪ ईमान के बाद सबसे पहला फ़र्ज़ सतर का ढाँकना है	598
✪ नया लिबास बनाने के वक़्त पुराने लिबास को सदक़ा कर देने का बड़ा सवाब	598
✪ सतर ढाँकना पहले दिन से इनसान का फ़ितरी अ़मल है, तरक़्क़ी का नया फ़ल्सफ़ा ग़लत है	598

	उनवान	पेज
✪	लिबास की एक तीसरी क़िस्म	598
✪	ज़ाहिरी लिबास का भी असल मक़सद तक़वा हासिल करना है	599
✪	आयत नम्बर 28-31 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	601
✪	मआरिफ़ व मसाईल	602
✪	नमाज़ में सतर ढाँकना फ़र्ज़ है उसके बग़ैर नमाज़ नहीं होती	607
✪	नमाज़ के लिये अच्छा लिबास	607
✪	नमाज़ में लिबास के मुताल्लिक़ चन्द मसाईल	608
✪	खाना पीना ज़रूरत के मुताबिक़ फ़र्ज़ है	609
✪	दुनिया की चीज़ों में असल उनका जायज़ व मुबाह होना है	609
✪	खाने-पीने में हद से बढ़ना जायज़ नहीं	609
✪	खाने-पीने में दरमियानी राह ही दीन व दुनिया के लिये लाभदायक है	610
✪	एक आयत से आठ शरई मसाईल	611
✪	आयत नम्बर 32-34 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	612
✪	मआरिफ़ व मसाईल	614
✪	उम्दा लिबास और लज़ीज़ खाने से परहेज़ इस्लाम की तालीम नहीं	615
✪	खाने और पहनने में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत	616
✪	आयत नम्बर 35-39 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	619
✪	आयत नम्बर 40-43 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	622
✪	मआरिफ़ व मसाईल	624
✪	शरीअ़त के अहकाम में आसानी की रियायत	627
✪	जन्नत वालों के दिलों से आपसी मन-मुटाव निकाल दिये जायेंगे	627
✪	हिदायत के विभिन्न दर्जे हैं जिसका आख़िरी दर्जा जन्नत में दाख़िल होना है	629
✪	आयत नम्बर 44-49 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	629
✪	मआरिफ़ व मसाईल	632
✪	आराफ़ वाले कौन लोग हैं?	633
✪	सलाम का मस्नून लफ़्ज़	635
✪	आयत नम्बर 50-53 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	637
✪	आयत नम्बर 54 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	639
✪	मआरिफ़ व मसाईल	640
✪	आसमान व ज़मीन की पैदाईश में छह दिन की मुद्दत क्यों हुई	640
✪	ज़मीन व आसमान और सितारों की पैदाईश से पहले दिन रात कैसे पहचाने गये?	641

उनवान	पेज
✪ आयत नम्बर 55-56 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	644
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	
✪ ज़मीन की दुरुस्ती और ख़राबी क्या है और लोगों के गुनाहों का इसमें क्या दख़ल है	650
✪ आयत नम्बर 57-58 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	655
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	655
✪ आयत नम्बर 59-64 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	661
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	662
✪ आयत नम्बर 65-72 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	669
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	670
✪ आ़द और समूद क़ौमों का मुख़्तसर इतिहास	670
✪ हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का नसब-नामा और कुछ हालात	671
✪ आयत नम्बर 73-76 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	675
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	676
✪ अहकाम व मसाईल	680
✪ आयत नम्बर 77-79 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	681
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	682
✪ आयत नम्बर 80-84 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	685
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	687
✪ आयत नम्बर 85-87 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	691
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	693
नवाँ पारा (क़ालल् म-लउ)	**698**
✪ आयत नम्बर 88-93 मय ख़ुलासा-ए-तफ़सीर	698
✪ मआ़रिफ़ व मसाईल	701

✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪✪
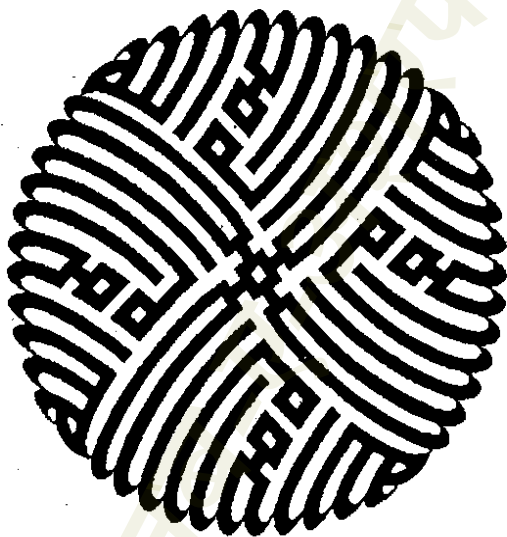
Derived from the works of Emin Barin [12]
" Lā ilāha illā Allāh "

* सूरः मायदा *

यह सूरत मदनी है। इसमें 120 आयतें
और 16 रुकूअ़ हैं।
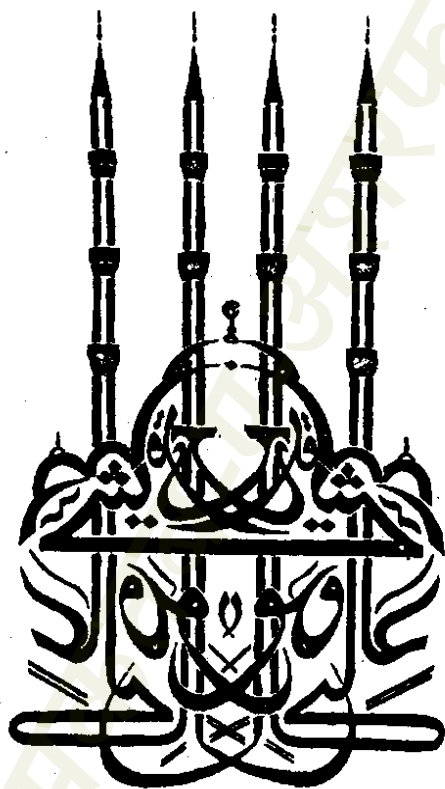
सूरः मायदा

ایاتها ۱۲۰ (۵) سُورَةُ الْمَآئِدَةِ مَدَنِيَّةٌ (۱۱۲) رکوعاتها ۱۶

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ ۚ اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ غَيْرَ مُحِلِّى الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ۗ اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيْدُ ۝

सूरः मायदा मदीना में नाज़िल हुई। इसमें 120 आयतें और 16 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू औफ़ू बिल्-अ़ुक़ूदि, उहिल्लत् लकुम् बहीमतुल्-अन्आ़मि इल्ला मा युत्ला अ़लैकुम् ग़ै-र मुहिल्लिस्सैदि व अन्तुम् हुरुमुन्, इन्नल्ला-ह यह्कुमु मा युरीद (1)	ऐ ईमान वालो! पूरा करो अ़हदों को, हलाल हुए तुम्हारे लिये चौपाये मवेशी सिवाय उनके जो तुमको आगे सुनाये जायेंगे, मगर हलाल न जानो शिकार को एहराम की हालत में, अल्लाह हुक्म करता है जो चाहे। (1)

सूरत का शाने-नुज़ूल और मज़ामीन का ख़ुलासा

यह सूरः मायदा की शुरू की आयत है। सूरः मायदा सब के नज़दीक मदनी सूरत है और मदनी सूरतों में भी आख़िर की सूरत है। यहाँ तक कि कुछ हज़रात ने इसको क़ुरआन पाक की आख़िरी सूरत भी कहा है। मुस्नद अहमद में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर और हज़रत अस्मा बिन्ते यज़ीद रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की रिवायत से नकल किया गया है कि सूरः मायदा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर उस वक़्त नाज़िल हुई जबकि आप सफ़र में अ़ज़बा नाम की ऊँटनी पर सवार थे। वही उतरते वक़्त जो असाधारण भार और बोझ हुआ करता था दस्तूर के अनुसार उस वक़्त भी हुआ, यहाँ तक कि ऊँटनी आ़जिज़ हो गयी तो आप ऊँटनी से नीचे उतर आये। यह सफ़र बज़ाहिर हज्जतुल-विदा (आख़िरी हज) का सफ़र है जैसा कि कुछ रिवायतों से इसकी ताईद होती है। हज्जतुल-विदा हिजरत के दसवें साल में हुआ, और इससे वापसी के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुनियावी हयात (ज़िन्दगी) तक़रीबन अस्सी दिन

रही। इब्ने हय्यान ने बहरे मुहीत में फ़रमाया कि सूरः मायदा के कुछ हिस्से सफ़रे हुदैबिया में और कुछ फ़त्हे-मक्का के सफ़र में और कुछ हज्जतुल-विदा के सफ़र में नाज़िल हुए हैं। इससे मालूम हुआ कि यह सूरत क़ुरआन उतरने के आख़िरी मरहलों में नाज़िल हुई है, चाहे बिल्कुल आख़िरी सूरत न हो।

तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में अबू उबैद हज़रत हमज़ा बिन हबीब और अ़तीया बिन क़ैस के हवाले से यह रिवायत रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मन्क़ूल है:

المائدة من اخر القران تنزیلا فاحلوا احلا لها وحرّموا حرمها.

यानी सूरः मायदा उन चीज़ों में से है जो क़ुरआन नाज़िल होने के आख़िरी दौर में नाज़िल की गयी हैं। इसमें जो चीज़ हलाल की गयी है उसको हमेशा के लिये हलाल और जो चीज़ हराम की गयी है उसको हमेशा के लिये हराम समझो।

इसी क़िस्म की एक रिवायत इब्ने कसीर ने मुस्तद्रक हाकिम के हवाले से हज़रत जुबैर बिन नुफ़ैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल की है कि वह हज के बाद हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के पास हाज़िर हुए तो आपने फ़रमाया- जुबैर तुम सूरः मायदा पढ़ते हो? इन्होंने अ़र्ज़ किया हाँ पढ़ता हूँ। हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने फ़रमाया कि यह क़ुरआन पाक की आख़िरी सूरत है, इसमें जो अहकाम हलाल व हराम के आये हैं वह मोहकम (स्थिर) हैं। उनमें नस्ख़ (रद्दोबदल) का शुब्हा नहीं है, उनका ख़ास एहतिमाम करो।

सूरः मायदा में भी सूरः निसा की तरह फ़ुरूई अहकाम, मामलात, मुआ़हदे वग़ैरह के ज़्यादा बयान किये गये हैं। इसी लिये रूहुल-मआ़नी के लेखक ने फ़रमाया है कि सूरः ब-क़रह और सूरः आले इमरान मज़ामीन के एतिबार से एक जैसी हैं। क्योंकि इनमें ज़्यादातर अ़क़ीदों के बुनियादी अहकाम- तौहीद, रिसालत, क़ियामत वग़ैरह के आये हैं। फ़ुरूई अहकाम ज़िमनी हैं, और सूरः निसा और सूरः मायदा मज़ामीन के एतिबार से एक जैसी हैं कि इन दोनों में ज़्यादातर फ़ुरूई अहकाम का बयान है, उसूल का बयान ज़िमनी है। सूरः निसा में आपसी मामलात और बन्दों के हुक़ूक़ पर ज़ोर दिया गया है। शौहर-बीवी के हुक़ूक़, यतीमों के हुक़ूक़, माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के हुक़ूक़ की तफ़सील बयान हुई है। सूरः मायदा की पहली आयत में भी इन तमाम मामलात और मुआ़हदों की पाबन्दी और उनके पूरा करने की हिदायत आई है:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ.

इसीलिये सूरः मायदा का दूसरा नाम सूरः उक़ूद (मुआ़हदों वाली सूरत) भी है। (बहरे मुहीत)

मुआ़हदों और मामलात के बारे में यह सूरत और ख़ास तौर पर इसकी शुरू की आयत एक ख़ास हैसियत रखती है। इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब हज़रत अ़मर बिन हज़्म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यमन का आ़मिल (गवर्नर) बनाकर भेजा और एक फ़रमान लिखकर उनके हवाले किया तो उस फ़रमान के शुरू में आपने यह आयत तहरीर फ़रमाई थी।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! (तुम्हारे ईमान का तक़ाज़ा यह है कि अपने) अ़हदों को (जो कि अपने ईमान के तहत तुमने अल्लाह तआ़ला से किये हैं) पूरा करो (यानी शरीअ़त के अहकाम पर अ़मल करो, क्योंकि ईमान लाने से सब का पूरा करना लाज़िम हो गया और उनके लाज़िम होने का तक़ाज़ा यह है कि उनको पूरा किया जाये)। तुम्हारे लिए तमाम चौपाये "यानी चार पैरों पर चलने वाले चरने वाले जानवर" (जैसे ऊँट, बकरी, गाय वग़ैरह जिनका हलाल होना इससे पहले सूरः अन्आ़म में है जो कि मक्की सूरत है, मालूम हो चुका है, पस उनके जैसे जितने चौपाये हैं सब) हलाल किये गये हैं (जैसे हिरन, नील गाय वग़ैरह, कि ये भी ऊँट बकरी गाये के जैसे हैं, कि दरिन्दे और शिकारी नहीं, सिवाय उन जानवरों के जो कि शरीअ़त की दूसरी दलीलों हदीस वग़ैरह से मख़्सूस और अलग हो चुके हैं, जैसे गधा, ख़च्चर वग़ैरह। इन अलग किये हुए जानवरों के अ़लावा और सब जानवर जंगली व पालतू हलाल हैं) मगर जिनका ज़िक्र आगे (आयत नम्बर 3 में) आता है, (कि वो मवेशी चौपायों में दाख़िल होने और हदीस वग़ैरह से ख़ास किये गये जानवरों से ख़ारिज होने के बावजूद भी हराम हैं, और बाक़ी तुम्हारे लिये हलाल हैं), लेकिन (उनमें जो) शिकार (हैं उन) को हलाल मत समझना जिस हालत में कि तुम एहराम (या हरम) में हो, (जैसे हज व उमरे का एहराम बाँधे हुए हो अगरचे हरम से बाहर हो, या यह कि हरम के अन्दर हो कि ग़ालिबन शिकार भी हरम के अन्दर होगा, क्योंकि हुक्म का असल मदार शिकार का हरम के अन्दर होना है चाहे एहराम बाँधे हुए न होओ दोनों हालतों में शिकार यानी ख़ुश्की व जंगली का हराम है)। बेशक अल्लाह तआ़ला जो चाहें हुक्म करें (यानी वही मस्लेहत होता है। पस जिस जानवर को चाहा हमेशा के लिये उसकी ज़ात ही के एतिबार से हराम कर दिया, मजबूरी और बेक़रारी की बात अलग है। और जिसको चाहा हमेशा के लिये हलाल कर दिया। जिसको चाहा किसी हालत में हलाल कर दिया, किसी हालत में हराम कर दिया। तुमको हर हाल में हुक्म का पालन करना लाज़िमी है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस सूरत की पहली आयत का पहला जुमला एक ऐसा जामे जुमला है कि उसकी तशरीह व तफ़सीर (बयान व व्याख्या) में हज़ारों पृष्ठ लिखे जा सकते हैं और लिखे गये हैं। इरशाद हैः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ.

यानी ऐ ईमान वालो! अपने मुआ़हदों (वायदों और समझौतों) को पूरा किया करो। इसमें पहलेः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا.

(ऐ ईमान वालो!) से ख़िताब फ़रमाकर मज़मून की अहमियत की तरफ़ मुतवज्जह कर दिया

गया कि इसमें जो हुक्म है वह पूरी तरह ईमान का तक़ाज़ा है। इसके बाद हुक्म फ़रमायाः

اَوْفُوْا بِالْعُقُوْدِ.

(अपने अ़हदों को पूरा करो) लफ़्ज़ उक़ूद अ़क़्द की जमा (बहुवचन) है जिसके लफ़्ज़ी मायने बाँधने के हैं। और जो मुआ़हदा दो शख़्सों या दो जमाअ़तों में बंध जाये उसको भी अ़क़्द कहा जाता है। इसलिये वह भी अ़हद व समझौते के मायने में हो गया।

इमामे तफ़सीर इब्ने जरीर ने मुफ़स्सिरीन सहाबा व ताबिईन का इस पर इजमा (एक राय होना) नक़ल किया है। इमाम जस्सास ने फ़रमाया कि अ़क़्द कहा जाये या अ़हद व मुआ़हदा, इसका हुक्म ऐसे मामले पर होता है जिसमें दो फ़रीक़ों ने आने वाले ज़माने में कोई काम करने या छोड़ने की पाबन्दी एक दूसरे पर डाली हो। और दोनों मुत्तफ़िक़ (सहमत) होकर उसके पाबन्द हो गये हों। हमारे उर्फ़ (बोलचाल) में इसी का नाम मुआ़हदा है। इसी लिये इस जुमले के मज़मून का खुलासा यह हो गया कि आपसी मुआ़हदों का पूरा करना लाज़िम व ज़रूरी समझो।

अब यह देखना है कि इन मुआ़हदों (समझौतों और अ़हदों) से कौनसे मुआ़हदे मुराद हैं। इसमें हज़राते मुफ़स्सिरीन के अक़वाल बज़ाहिर भिन्न नज़र आते हैं। किसी ने कहा है कि इससे मुराद वो मुआ़हदे हैं जो अल्लाह तआ़ला ने अपने बन्दों से ईमान व फ़रमाँबरदारी के मुताल्लिक़ लिये हैं। या वो मुआ़हदे जो अल्लाह तआ़ला ने अपने नाज़िल किये हुए अहकाम हलाल व हराम से मुताल्लिक़ अपने बन्दों से लिये हैं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यही मन्क़ूल है, और कुछ ने फ़रमाया कि मुआ़हदों से इस जगह वो मुआ़हदे मुराद हैं जो लोग आपस में एक दूसरे से कर लिया करते हैं- जैसे निकाह का मुआ़हदा, ख़रीद व बेच का मुआ़हदा वग़ैरह। मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) में से इब्ने ज़ैद और ज़ैद बिन असलम इसी तरफ़ गये हैं। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि मुआ़हदों से वह हलफ़ और मुआ़हदे मुराद हैं जो ज़माना-ए-जाहिलीयत (इस्लाम से पहले ज़माने) में एक दूसरे से आपसी सहयोग के लिये कर लिया करते थे। इमाम मुजाहिद, रबीअ़, क़तादा वग़ैरह मुफ़स्सिरीन ने भी यही फ़रमाया है, लेकिन सही बात यह है कि इनमें कोई टकराव या भिन्नता नहीं, बल्कि ये सब क़िस्म के मुआ़हदे लफ़्ज़ उक़ूद के तहत में दाख़िल हैं, और सभी को पूरा करने के लिये क़ुरआने करीम ने हिदायत दी है।

इसी लिये इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने फ़रमाया कि मुआ़हदों की जितनी क़िस्में हैं सब इस लफ़्ज़ के हुक्म में दाख़िल हैं, और फिर फ़रमाया कि इसकी प्रारंभिक तीन क़िस्में हैं- एक वह मुआ़हदा (समझौता और अ़हद) जो इनसान का रब्बुल-आ़लमीन (यानी अल्लाह तआ़ला) के साथ है। मसलन् ईमान, नेकी करने और फ़रमाँबरदारी का अ़हद या हलाल व हराम की पाबन्दी का अ़हद। दूसरे वह मुआ़हदा जो एक इनसान का खुद अपने नफ़्स के साथ है, जैसे किसी चीज़ की नज़्र (मन्नत) अपने ज़िम्मे मान ले, या शपथ लेकर कोई चीज़ अपने ज़िम्मे लाज़िम कर ले। तीसरे वह मुआ़हदा जो एक इनसान का दूसरे इनसान के साथ है। और इस तीसरी क़िस्म में वो तमाम मुआ़हदे शामिल हैं जो दो शख़्सों या दो जमाअ़तों या दो हुकूमतों के बीच होते हैं।

हुकूमतों के अन्तर्राष्ट्रीय समझौते या आपसी समझौते। जमाअ़तों के आपसी अ़हद व

समझौते और दो इनसानों के बीच हर तरह के मामलात- निकाह, तिजारत, साझेदारी, मज़दूरी व नौकरी, हिबा वग़ैरह इन तमाम मुआहदों में जो जायज़ शर्तें आपस में तय हो जायें इस आयत की रू से उनकी पाबन्दी हर फ़रीक़ पर लाज़िम व वाजिब है। और जायज़ की क़ैद (शर्त) इसलिये लगाई कि ख़िलाफ़े शरीअ़त शर्त लगाना या उसका क़ुबूल करना किसी के लिये जायज़ नहीं।

इसके बाद आयत के दूसरे जुमले में इस आम ज़ाब्ते के ख़ास अंशों और हिस्सों का ज़िक्र फ़रमाया गया है। इरशाद है:

أُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيْمَةُ الْاَنْعَامِ.

लफ़्ज़ **बहीमा** उन जानवरों के लिये बोला जाता है जिनको आ़दतन बिना अ़क़्ल वाले समझा जाता है। क्योंकि लोग उनकी बोली को आ़दतन नहीं समझते तो उनकी मुराद अस्पष्ट रहती है। और इमाम शेअ़रानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि **बहीमा** को बहीमा इसलिये नहीं कहते कि उसको अ़क़्ल नहीं और अ़क़्ल की बातें उस पर ग़ैर-वाज़ेह रहती हैं, जैसा कि लोगों का आ़म ख़्याल है, बल्कि हक़ीक़त यह है कि अ़क़्ल व समझ से कोई जानवर बल्कि कोई पेड़-पौधा और पत्थर भी ख़ाली नहीं। हाँ दर्जों का फ़र्क़ ज़रूर है। इन चीज़ों में उतनी अ़क़्ल नहीं है जितनी इनसान में, इसी लिये इनसान को अहकाम का मुकल्लफ़ (पाबन्द) बनाया गया है, जानवरों को मुकल्लफ़ नहीं बनाया गया। वरना अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरतों की हद तक हर जानवर बल्कि हर पेड़-पत्थर को हक़ तआ़ला ने अ़क़्ल व समझ बख़्शी है। यही तो वजह है कि हर चीज़ अल्लाह तआ़ला की तस्बीह करती है। क़ुरआन में इसकी वज़ाहत है:

وَاِنْ مِّنْ شَیْءٍ اِلَّا یُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ.

अ़क़्ल न होती तो अपने ख़ालिक़ व मालिक को किस तरह पहचानती और किस तरह तस्बीह करती।

इमाम शेअ़रानी के फ़रमाने का ख़ुलासा यह है कि **बहीमा** को बहीमा इसलिये नहीं कहते कि उसकी बेअ़क़्ली के सबब मालूमात उस पर मुब्हम (अस्पष्ट) रहते हैं, बल्कि इसलिये कि उसकी बोली लोग नहीं समझते, उसका कलाम लोगों पर मुब्हम (अस्पष्ट) रहता है। बहरहाल लफ़्ज़े बहीमा हर जानदार के लिये बोला जाता है और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि चौपाये जानदारों के लिये यह लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है।

और लफ़्ज़े "अन्आ़म" नअ़म की जमा (बहुवचन) है। पालतू जानवर जैसे ऊँट, गाय, भैंस, बकरी वग़ैरह जिनकी आठ क़िस्में सूरः अन्आ़म में बयान फ़रमाई गयी हैं उनको अन्आ़म कहा जाता है। बहीमा का लफ़्ज़ आ़म था, अन्आ़म के लफ़्ज़ ने इसको ख़ास कर दिया। मुराद आयत की यह हो गयी कि घरेलू जानवरों की आठ क़िस्में तुम्हारे लिये हलाल कर दी गयीं। लफ़्ज़ उक़ूद के तहत में अभी आप पढ़ चुके हैं कि तमाम मुआ़हदे दाख़िल हैं। उनमें से एक मुआ़हदा वह भी है जो अल्लाह तआ़ला ने अपने बन्दों से हलाल व हराम की पाबन्दी के मुताल्लिक़ लिया है। इस

जुमले में इस ख़ास मुआ़हदे का बयान आया है कि अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिये ऊँट, बकरी, गाय, भैंस वग़ैरह को हलाल कर दिया है, इनको शरई क़ायदे के मुवाफ़िक़ ज़िबह करके खा सकते हैं।

अल्लाह तआ़ला के इस हुक्म की इन हदों के अन्दर रखकर पाबन्दी करो। न तो मजूसी और बुत-परस्तों की तरह बिल्कुल ही इन जानवरों के ज़िबह करने ही को हराम क़रार दो कि यह अल्लाह की हिक्मत पर एतिराज़ करना और उसकी नेमत की नाशुक्री है। और न दूसरे गोश्त खाने वाले फ़िर्क़ों की तरह बेक़ैद होकर हर तरह के जानवर को खा जाओ। बल्कि अल्लाह तआ़ला के दिये हुए क़ानून के तहत जिन जानवरों को उसने हलाल किया है उनको खाओ, और जिन जानवरों को हराम क़रार दिया है उनसे बचो। क्योंकि अल्लाह तआ़ला ही ख़ालिक़े कायनात हैं। वह हर जानवर की हक़ीक़त और ख़्वास (गुणों व ख़ासियतों) से और इनसान के अन्दर उनसे पैदा होने वाले असरात से वाक़िफ़ हैं। वह पाक और सुथरी चीज़ों को इनसान के लिये हलाल कर देते हैं। जिनके खाने से इनसान की जिस्मानी सेहत पर या रूहानी अख़्लाक़ पर बुरा असर न पड़े, और गन्दे नापाक जानवरों से मना फ़रमाते हैं जो इनसानी सेहत के लिये घातक और नुक़सानदेह हैं या उनके अख़्लाक़ ख़राब करने वाले हैं। इसी लिये इस आ़म हुक्म से चन्द चीज़ों को अलग किया और बाहर रखा।

हुक्म से बाहर रखी गयी पहली चीज़ यह है:

اِلَّا مَا یُتْلٰی عَلَیْکُمْ.

यानी सिवाय उन जानवरों के जिनका हराम होना क़ुरआन में बयान कर दिया गया है। मसलन मुर्दार जानवर या सुअर वग़ैरह। दूसरी चीज़ जो हुक्म से अलग रखी गयी यह है:

غَیْرَ مُحِلِّی الصَّیْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ.

जिसका मतलब यह है कि चौपाये जानवर तुम्हारे लिये हलाल हैं और जंगल का शिकार भी हलाल है मगर जबकि तुमने हज या उमरे का एहराम बाँधना हुआ हो तो उस वक़्त शिकार करना जुर्म व गुनाह है, उससे बचो। आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

اِنَّ اللّٰهَ یَحْکُمُ مَا یُرِیْدُ.

यानी अल्लाह तआ़ला जो चाहता है हुक्म देता है, किसी को हक़ नहीं कि उसके मानने में आना-कानी (क्यों और कैसे का सवाल) करे। इसमें शायद इस हिक्मत की तरफ़ इशारा है कि इनसान के लिये कुछ जानवरों को ज़िबह करके खाने की इजाज़त कोई ज़ुल्म नहीं। जिस मालिक ने ये सब जानें बनाई हैं उसी ने पूरी हिक्मत व समझदारी के साथ यह क़ानून भी बनाया है कि अदना को आला के लिये ग़िज़ा बनाया है, ज़मीन की मिट्टी दरख़्तों की ग़िज़ा है, दरख़्त जानवरों की ग़िज़ा और जानवर इनसान की ग़िज़ा। इनसान से आला (ऊँचे रुतबे वाली) कोई मख़्लूक़ इस दुनिया में नहीं है इसलिये इनसान किसी की ग़िज़ा नहीं बन सकता।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ اٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۚ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۚ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۖ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۖ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۚ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तुहिल्लू शआ-इरल्लाहि व लश्शह्रल्-हरा-म व लल्-हद्-य व लल्क़लाइ-द व ला आम्मीनल् बैतल्-हरा-म यब्तग़ू-न फ़ज़्लम् मिर्रब्बिहिम् व रिज़्वानन्, व इज़ा हलल्तुम् फ़स्तादू व ला यज्रिमन्नकुम श-नआनु क़ौमिन् अन् सद्दूकुम् अ़निल् मस्जिदिल्-हरामि अन् तअ़्तदू। व तआ़वनू अ़लल्-बिर्रि वत्तक़्वा व ला तआ़वनू अ़लल्-इस्मि वल्-अ़ुद्वानि वत्तक़ुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह शदीदुल्-अ़िक़ाब (2) ❖

ऐ ईमान वालो! हलाल न समझो अल्लाह की निशानियों को और न अदब वाले महीने को और न उस जानवर को जो नियाज़ काबे की हो, और न जिनके गले (में) पट्टा डालकर ले जायें काबा, और न आने वालों को सम्मान वाले घर की तरफ़, जो ढूँढते हैं फ़ज़्ल अपने रब का और उसकी ख़ुशी, और जब एहराम से निकलो तो शिकार कर लो, और सबब न हो तुमको उस क़ौम की दुश्मनी जो कि तुमको रोकती थी सम्मान वाली मस्जिद से इस पर कि ज़्यादती करने लगो। और आपस में मदद करो नेक काम पर और परहेज़गारी पर, और मदद न करो गुनाह पर और ज़ुल्म पर, और डरते रहो अल्लाह से, बेशक अल्लाह का अज़ाब सख़्त है। (2) ❖

इस आयत के मज़मून का पीछे से सम्बन्ध

सूरः मायदा की पहली आयत में मुआ़हदों (संधियों, समझौतों और वायदों) के पूरा करने की ताकीद थी। उन मुआ़हदों (समझौतों) में से एक मुआ़हदा यह भी है कि अल्लाह तआ़ला के मुक़र्रर किये हुए हलाल व हराम की पाबन्दी की जाये। इस दूसरी आयत में इस मुआ़हदे की दो अहम दफ़आ़त (बातों और धाराओं) का बयान है। एक अल्लाह के निशानात का सम्मान व एहतिराम और उनकी बेहुर्मती से बचने की हिदायत, दूसरी अपने और ग़ैर, दोस्त और दुश्मन सब के साथ अ़दल व इन्साफ़ का मामला और ज़ुल्म का बदला ज़ुल्म से लेने की मनाही।

इस आयत के उतरने का सबब चन्द वाक़िआ़त हैं। पहले उनको सुन लीजिए ताकि आयत

का मज़मून पूरी तरह दिल में बैठ सके। एक वाक़िआ हुदैबिया का है जिसकी तफ़सील क़ुरआन ने दूसरी जगह बयान फ़रमाई है। वह यह कि हिजरत के छठे साल में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम ने इरादा किया कि उमरा करें। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक हज़ार से अधिक सहाबा के साथ एहराम उमरा बाँधकर मक्का मुअ़ज़्ज़मा के इरादे से रवाना हुए। मक्का के करीब हुदैबिया के स्थान में पहुँचकर मक्का वालों को इत्तिला दी कि हम किसी जंग या जंगी मक़सद के लिये नहीं, बल्कि सिर्फ़ उमरा करने के लिये आ रहे हैं, हमें उसकी इजाज़त दो। मक्का के मुश्रिकों ने इजाज़त न दी और बड़ी सख़्त और कड़ी शर्तों के साथ यह मुआ़हदा किया कि इस वक़्त सब अपने एहराम खोल दें और वापस जायें। अगले साल उमरा के लिये इस तरह आयें कि हथियार साथ न हों, सिर्फ़ तीन रोज़ ठहरें और उमरा करके चले जायें। और भी बहुत सी ऐसी शर्तें थीं जिनका तस्लीम कर लेना बज़ाहिर मुसलमानों के वक़ार व इज़्ज़त के मनाफ़ी था। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म पर सब मुत्मईन होकर वापस हो गये। फिर सन् 7 हिजरी में दोबारा ज़ीक़ादा के महीने में उन्हें शर्तों की पाबन्दी के साथ यह उमरा क़ज़ा किया गया।

बहरहाल हुदैबिया के वाक़िए और इन अपमान जनक शर्तों ने सहाबा किराम के दिलों में मक्का के मुश्रिकों की तरफ़ से इन्तिहाई नफ़रत व बुग़ज़ का बीज बो दिया था। दूसरा वाक़िआ यह पेश आया कि मक्का के मुश्रिकों में से हतीम बिन हिन्द अपना तिजारत का माल लेकर मदीना तय्यिबा आया और माल बेचने के बाद अपना सामान और आदमी मदीना से बाहर छोड़कर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और मुनाफ़िक़ाना (धोखा देने के लिये झूठ) तौर पर अपना इस्लाम लाने का इरादा ज़ाहिर किया ताकि मुसलमान उससे मुत्मईन हो जायें। लेकिन नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके आने से पहले ही वही के ज़रिये ख़बर पाकर सहाबा किराम को बतला दिया था कि हमारे पास एक शख़्स आने वाला है जो शैतान की ज़बान से कलाम करेगा। और जब यह वापस गया तो आपने फ़रमाया कि यह शख़्स कुफ़्र के साथ आया और धोखे व ग़द्दारी के साथ लौटा है। यह शख़्स हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मज्लिस से निकल कर सीधा मदीना से बाहर पहुँचा, जहाँ मदीना वालों के जानवर चर रहे थे, उनको हंका कर साथ ले गया। सहाबा किराम को इसकी इत्तिला कुछ देर में हुई। पीछा करने के लिये निकले तो वह उनकी पहुँच से बाहर हो चुका था। फिर जब हिजरत के सातवें साल हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा किराम के साथ हुदैबिया के उमरे की क़ज़ा के लिये जा रहे थे तो दूर से तबले की आवाज़ सुनी और देखा कि यही हतीम बिन हिन्द मदीना वालों के उन जानवरों को जो मदीना से लाया था क़ुरबानी के लिये अपने साथ लिये हुए उमरा करने जा रहा है। उस वक़्त सहाबा किराम का इरादा हुआ कि उस पर हमला करके अपने जानवर छीन लें और उसको यहीं ख़त्म कर दें।

तीसरा वाक़िआ यह हुआ कि हिजरत के आठवें साल रमज़ान मुबारक में मक्का मुकर्रमा फ़तह हुआ और तक़रीबन पूरे अ़रब पर इस्लामी क़ब्ज़ा हो गया। और मक्का के मुश्रिकों को

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बग़ैर किसी इन्तिक़ाम के (बदला लिये हुए) आज़ाद फ़रमा दिया। वे आज़ादी के साथ अपने सब काम करते रहे, यहाँ तक कि अपने जाहिलाना (इस्लाम से पहले के) तरीक़े पर हज व उमरे की रस्में भी अदा करते रहे। उस वक़्त कुछ सहाबा किराम के दिलों में हुदैबिया के वाक़िए का इन्तिक़ाम (बदला) लेने का ख़्याल आया कि इन्होंने हमें जायज़ और हक़ तरीक़े पर उमरा करने से रोक दिया था, हम इनके नाजायज़ और ग़लत तरीक़े के उमरे व हज को क्यों आज़ाद छोड़ें, इन पर हमला करें, इनके जानवर छीन लें और इनको ख़त्म कर दें।

ये वाक़िआत इमाम इब्ने जरीर ने हज़रत इक्रिमा व सुद्दी की रिवायत से नक़ल किये हैं। ये चन्द वाक़िआत थे जिनकी बिना पर यह आयत नाज़िल हुई। जिसमें मुसलमानों को यह हिदायत दी गयी कि अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम (सम्मान) तुम्हारा अपना फ़र्ज़ है, किसी दुश्मन के बुग़्ज़ व दुश्मनी की वजह से इसमें ख़लल डालने की क़तई इजाज़त नहीं। अश्हुरे-हुरुम (सम्मानित महीनों) में क़त्ल व क़िताल भी जायज़ नहीं। क़ुरबानी के जानवरों को हरम तक जाने से रोकना या उनका छीन लेना भी जायज़ नहीं, और जो मुश्रिक लोग एहराम बाँधकर अपने ख़्याल के मुताबिक़ अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व रज़ा हासिल करने के इरादे से चले हैं (अगरचे कुफ़्र की वजह से उनका यह ख़्याल ग़लत और बुरा है लेकिन) अल्लाह के शआ़इर (निशानों और मक़ामात) की हिफ़ाज़त व एहतिराम का तक़ाज़ा यह है कि उनसे कोई टकराव न किया जाये। तथा वे लोग जिन्होंने तुम्हें उमरा करने से रोक दिया था, उनके बुग़्ज़ व दुश्मनी का इन्तिक़ाम इस तरह लेना जायज़ नहीं कि मुसलमान उनको मक्का में दाख़िल होने या हज के शआ़इर (अरकान) अदा करने से रोक दें। क्योंकि उनके ज़ुल्म के बदले में हमारी तरफ़ से ज़ुल्म हो जायेगा, जो इस्लाम में जायज़ और सही नहीं। अब आयत की पूरी तफ़सीर देखिये।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! ख़ुदा तआ़ला (के दीन) की निशानियों की (यानी जिन चीज़ों के अदब की हिफ़ाज़त के वास्ते ख़ुदा तआ़ला ने कुछ अहकाम मुक़र्रर किये हैं, उन अहकाम के ख़िलाफ़ करके उनकी बेअदबी न करो। मसलन हरम और एहराम का यह अदब मुक़र्रर किया है कि उसमें शिकार न करो तो शिकार करना बेअदबी और हराम होगा) और न सम्मान वाले महीने की (बेअदबी करो कि उसमें काफ़िरों से लड़ने लगो) और न (हरम में) क़ुरबानी होने वाले जानवर की (बेअदबी करो कि उससे छेड़छाड़ करने लगो) और न उन (जानवरों) की (बेअदबी करो) जिनके गले में (इस निशानी के लिये) पट्टे पड़े हुए हों (कि यह अल्लाह की नियाज़ हैं, हरम में ज़िबह होंगे) और न उन लोगों की (बेअदबी करो) जो कि बैतुल-हराम (यानी बैतुल्लाह) के इरादे से जा रहे हों (और) अपने रब के फ़ज़्ल और रज़ामन्दी के तालिब हों। (यानी इन चीज़ों के अदब के सबब काफ़िरों के साथ भी छेड़छाड़ और टकराव मत करो) और (ऊपर की आयत में जो एहराम के अदब के सबब शिकार को हराम फ़रमाया गया है वह एहराम ही तक है वरना)

जिस वक़्त तुम एहराम से बाहर आ जाओ तो (इजाज़त है कि) शिकार किया करो (बशर्ते कि वह शिकार हरम में न हो) और (ऊपर जिन चीज़ों से टकराव और छेड़ से मना किया गया है इसमें) ऐसा न हो कि तुमको किसी क़ौम से जो इस सबब से बुग़्ज़ व नफ़रत है कि उन्होंने तुमको (हुदैबिया के साल में) मस्जिदे-हराम (में जाने) से रोक दिया था, (मुराद क़ुरैश के काफ़िर हैं) वह (बुग़्ज़) तुम्हारे लिए इसका सबब हो जाए कि तुम (शरीअ़त की) हद से निकल जाओ। (यानी बयान हुए अहकाम के ख़िलाफ़ कर बैठो। ऐसा न करना) और नेकी और परहेज़गारी (की बातों) में एक-दूसरे की मदद किया करो, (जैसे यह एहकाम हैं कि इनमें दूसरों को भी अ़मल करने की तरग़ीब दो) और गुनाह और "ज़ुल्म व" ज़्यादती (की बातों में) एक-दूसरे की मदद मत करो, (जैसे यही अहकाम हैं अगर कोई इनके ख़िलाफ़ करने लगे तो तुम उसकी मदद मत करो) और अल्लाह तआ़ला से डरा करो (कि इससे सब अहकाम की पाबन्दी आसान हो जाती है) बेशक अल्लाह तआ़ला (अहकाम की मुख़ालफ़त करने वाले को) सख़्त सज़ा देने वाले हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आयत के पहले जुमले में इरशाद है:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ

यानी ऐ ईमान वालो अल्लाह की निशानियों की बेक़द्री न करो।

इसमें लफ़्ज़ **शआ़इर** जिसका तर्जुमा **निशानियों** से किया गया है, शईरा की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं अ़लामत (पहचान और निशानी), इसी लिये शआ़इर और शईरा उस महसूस चीज़ को कहा जाता है जो किसी चीज़ की अ़लामत हो। **शआ़इरे इस्लाम** उन आमाल व अफ़आ़ल को कहा जायेगा जो उर्फ़ में (आ़म बोल-चाल और सामाजिक तौर पर) मुसलमान होने की अ़लामत समझे जाते हैं और देखे व महसूस किये जाते हैं, जैसे नमाज़, अज़ान, हज, ख़तना और सुन्नत के मुवाफ़िक़ दाढ़ी वग़ैरह। **शआ़इरल्लाह** की तफ़सीर इस आयत में मुख़्तलिफ़ अलफ़ाज़ से नक़ल की गयी है मगर साफ़ बात वह है जो तफ़सीर **बहरे मुहीत** और **रूहुल-मआ़नी** में हज़रत हसन बसरी और हज़रत अ़ता रह. से मन्क़ूल है, और इमाम जस्सास ने इसको तमाम अक़वाल के लिये जामे (जमा करने वाली) फ़रमाया है, और वह यह कि **शआ़इरल्लाह** से मुराद तमाम शरई और दीन के मुक़र्रर किये हुए वाजिबात व फ़राईज़ और उनकी हदें हैं। इस आयत में **ला तुहिल्लू शआ़इरल्लाहि** के इरशाद का यही हासिल है कि अल्लाह के **शआ़इर** की बेक़द्री न करो। और शआ़इरुल्लाह की बेक़द्री एक तो यह है कि सिरे से उन अहकाम को नज़र-अन्दाज़ कर दिया जाये, दूसरे यह है कि उन पर अ़मल तो करें मगर अधूरा करें, पूरा न करें। तीसरे यह कि मुक़र्रर की हुई हदों (सीमाओं) से निकल करके आगे बढ़ने लगें। **ला तुहिल्लू शआ़इरल्लाहि** में इन तीनों सूरतों से मना फ़रमाया गया है।

यही हिदायत क़ुरआने करीम ने दूसरे उनवान से इस तरह इरशाद फ़रमाई है:

وَمَنْ يُّعَظِّمْ شَعَآئِرَ اللّٰهِ فَاِنَّهَا مِنْ تَقْوَى الْقُلُوْبِ.

यानी जो शख़्स अल्लाह की अदब व सम्मान वाली चीज़ों का सम्मान व आदर करे तो वह दिलों के तक़्वे का असर है। आयत के दूसरे जुमले में शआइरुल्लाह की एक ख़ास क़िस्म यानी शआइरे हज (हज की निशानियों) की कुछ तफ़सीलात बताई गयी हैं। इरशाद है:

وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْىَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا.

यानी सम्मानित महीने में क़त्ल व क़िताल (लड़ाई और क़त्ल) करके उसकी बेहुर्मती न करो। सम्मानित महीने वो चार महीने हैं जिनमें आपसी जंग करना शरअ़न हराम था। ज़ीक़ादा, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम और रजब (यानी इस्लामिक कैलेंडर का ग्यारहवाँ, बारहवाँ, पहला और सातवाँ महीना) बाद में यह हुक्म जमहूर उलेमा के नज़दीक मन्सूख़ (निरस्त और रद्द) हो गया, तथा मक्का के हरम में क़ुरबान होने वाले जानवर और ख़ुसूसन जिनके गले में क़ुरबानी की निशानी के तौर पर क़लादा डाला गया है, उनकी बेक़द्री न करो। उन जानवरों की बेक़द्री की एक सूरत तो यह है कि उनको हरम तक पहुँचने से रोक दिया जाये या छीन लिया जाये। दूसरी सूरत यह है कि उनसे क़ुरबानी के अ़लावा कोई दूसरा काम सवारी या दूध हासिल करने वग़ैरह का लिया जाये। आयत ने इन सब सूरतों को नाजायज़ क़रार दे दिया।

फिर फ़रमायाः

وَلَآ آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا

यानी उन लोगों की बेक़द्री व अपमान न करो जो हज के लिये मस्जिदे हराम का इरादा करके घर से निकले हैं, और इस सफ़र से उनका मक़सद यह है कि वे अपने रब का फ़ज़्ल और रज़ा हासिल करें। उन लोगों की बेक़द्री न करने का मतलब यह है कि इस सफ़र में उनसे टकराव या रुकावट का मामला न किया जाये। न कोई तकलीफ़ पहुँचाई जाये। इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا.

यानी पहली आयत में एहराम की हालत में शिकार की जो मनाही की गयी है उसकी हद बतलाई गयी कि जब तुम एहराम से फ़ारिग़ हो जाओ तो शिकार करने की मनाही ख़त्म हो गयी। अब शिकार कर सकते हो।

ऊपर ज़िक्र हुई आयत में उस मुआ़हदे के अहम भाग का बयान हो रहा है जो हर इनसान और रब्बुल-आ़लमीन के बीच है। उसके चन्द हिस्सों का यहाँ तक बयान हुआ है। जिसमें अव्वल मुतलक़ तौर पर अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम (सम्मान) करना और उनकी बेक़द्री व अनादर करने से बचने की हिदायत है, और फिर ख़ास तौर पर उन अल्लाह की निशानियों की कुछ तफ़सीलात हैं जो हज से मुताल्लिक़ हैं। उनमें हज के इरादे से आने वाले मुसाफ़िरों और उनके साथ आने वाले क़ुरबानी के जानवरों से किसी क़िस्म की रुकावट डालने और उनकी बेहुर्मती से बचने की हिदायत की है।

इसके बाद मुआहदे का दूसरा भाग इस तरह इरशाद फ़रमायाः

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا.

यानी जिस क़ौम ने तुमको हुदैबिया के वाक़िए के वक़्त मक्का में दाख़िल होने और उमरा करने से रोक दिया था और तुम सख़्त ग़म व ग़ुस्से के साथ नाकाम वापस आ रहे थे। अब जबकि तुमको क़ुव्वत और ताक़त हासिल है तो ऐसा न होना चाहिये कि पिछले वाक़िए के ग़म व ग़ुस्से और नफ़रत का इन्तिक़ाम इस तरह लिया जाये कि तुम उनको बैतुल्लाह और मस्जिदे हराम में दाख़िल होने और हज करने से रोकने लगो। क्योंकि यह ज़ुल्म है, और इस्लाम ज़ुल्म का इन्तिक़ाम ज़ुल्म से लेना नहीं चाहता बल्कि ज़ुल्म के बदले में इन्साफ़ करना और इन्साफ़ पर क़ायम रहना सिखलाता है। उन्होंने अपनी क़ुव्वत व सत्ता के वक़्त मुसलमानों को मस्जिदे हराम में दाख़िल होने और उमरा करने से ज़ुल्मन रोक दिया था, तो उसका जवाब यह न होना चाहिये कि अब मुसलमान अपने इक़्तिदार (ताक़त व इख़्तियार) के वक़्त उनको हज के उन अरकान से रोक दें।

क़ुरआने करीम की तालीम यह है कि अ़दल व इन्साफ़ में दोस्त व दुश्मन सब बराबर होने चाहियें, तुम्हारा दुश्मन कैसा ही सख़्त हो और उसने तुम्हें कैसी ही तकलीफ़ पहुँचाई हो, उसके मामले में इन्साफ़ ही करना तुम्हारा फ़र्ज़ है।

यह इस्लाम ही की विशेषताओं में से है कि वह दुश्मनों के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करता है और उनके ज़ुल्म का जवाब ज़ुल्म से नहीं बल्कि इन्साफ़ से देना सिखलाता है।

आपसी सहयोग व मदद का क़ुरआनी उसूल

وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ. اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ.

यह सूरः मायदा की दूसरी आयत का आख़िरी जुमला है। इसमें क़ुरआन हकीम ने एक ऐसे उसूली और बुनियादी मसले के बारे में एक हकीमाना फ़ैसला दिया है जो पूरे वैश्विक निज़ाम की रूह है, और जिस पर इनसान की हर बेहतरी व कामयाबी बल्कि ख़ुद उसकी ज़िन्दगी और बक़ा मौक़ूफ़ है। वह मसला है आपसी सहयोग व मदद का। हर समझ व होश रखने वाला इनसान जानता है कि इस दुनिया का पूरा इन्तिज़ाम इनसानों के आपसी सहयोग व मदद पर क़ायम है। अगर एक इनसान दूसरे इनसान की मदद न करे तो कोई अकेला इनसान चाहे वह कितना ही अ़क़्लमन्द या कितना ही ज़ोरावर या मालदार हो, अपनी ज़िन्दगी की ज़रूरतों को तन्हा हासिल नहीं कर सकता। अकेला इनसान न अपनी ग़िज़ा के लिये ग़ल्ला उगाने से लेकर खाने के क़ाबिल बनाने तक के तमाम मराहिल को तय कर सकता है, न लिबास वग़ैरह के लिये रूई की काश्त से लेकर अपने बदन के मुवाफ़िक़ कपड़ा तैयार करने तक बेशुमार समस्याओं को हल कर सकता है, और न अपने बोझ को एक जगह से दूसरी जगह मुन्तक़िल कर सकता है। ग़र्ज़ कि हर इनसान अपनी ज़िन्दगी के हर क्षेत्र और मैदान में दूसरे हज़ारों, लाखों इनसानों का मोहताज

है। उनके आपसी सहयोग व मदद से ही सारी दुनिया का निज़ाम चलता है। और अगर ग़ौर किया जाये तो यह मदद व सहयोग दुनियावी ज़िन्दगी ही में ज़रूरी नहीं, मरने से लेकर कब्र में दफ़न होने तक के सारे मराहिल भी इसी मदद व सहयोग के मोहताज हैं। बल्कि उसके बाद भी अपने पीछे रहने वालों की दुआ-ए-मग़फ़िरत और ईसाले सवाब का मोहताज रहता है।

हक् जल्ल शानुहू ने अपनी हिक्मते बालिग़ा और कामिल क़ुदरत से इस जहान का ऐसा स्थिर निज़ाम बनाया है कि हर इनसान को दूसरे का मोहताज बना दिया। ग़रीब आदमी पैसों के लिये मालदार का मोहताज तो बड़े से बड़ा मालदार भी मेहनत व मशक़्क़त के लिये ग़रीब मज़दूर का मोहताज है। सौदागर ग्राहकों का मोहताज है और ग्राहक सौदागरों का। मकान बनाने वाला राज मिस्त्री, लुहार, बढ़ई का मोहताज है और ये सब उसके मोहताज हैं। अगर यह सब को शामिल ज़रूरत व एहतियाज न होती और मदद व सहयोग महज़ अख़्लाक़ी बरतरी पर रह जाता तो कौन किसका काम करता। इसका वही हश्र होता जो आम अख़्लाक़ी मूल्यों का इस दुनिया में हो रहा है, और अगर कामों की यह तक़सीम किसी हुकूमत या अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की तरफ़ से क़ानून की शक्ल में लागू कर भी दी जाती तो इसका भी वही अन्जाम होता जो आज पूरी दुनिया में दुनिया के क़ानून का हो रहा है, कि क़ानून रजिस्टरों में महफ़ूज़ है और बाज़ार और दफ़्तरों में रिश्वत, बेजा रियायत, ज़िम्मेदारी से बेपरवाही और बेअ़मली का क़ानून चल रहा है। यह सिर्फ़ तमाम हिक्मत वालों से ज़्यादा हकीम और क़ादिरे मुतलक़ का ख़ुदाई निज़ाम है कि मुख़्तलिफ़ लोगों के दिलों में मुख़्तलिफ़ कारोबार की उमंग और सलाहियत पैदा कर दी। उन्होंने अपनी-अपनी ज़िन्दगी की धुरी व मक़सद उसी काम को बना लियाः

हर यके रा बहरे कारे साख़्तन्द मैले ऊ रा दर दिलश अन्दाख़्तन्द

तर्जुमाः- अल्लाह तआ़ला ने हर किसी को किसी ख़ास काम के लिये पैदा किया है और फिर उस काम की दिलचस्पी व रुझान उसके दिल में डाल दिया है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

वरना अगर कोई अन्तर्राष्ट्रीय संस्था या कोई हुकूमत लोगों में कामों की तक़सीम करती और किसी जमाअ़त को बढ़ई के काम के लिये, किसी को लुहार के काम के लिये, किसी को झाडू देने और सफ़ाई करने के लिये, किसी को पानी के लिये, किसी को ख़ुराक के लिये मुक़र्रर करती तो कौन उसके हुक्म की ऐसी इताअ़त (पालन) करता कि दिन का चैन और रात की नींद ख़राब करके उस काम में लग जाता।

अल्लाह तआ़ला जल्ल शानुहू ने हर इनसान को जिस काम के लिये पैदा किया है उस काम की रग़बत (रुचि व दिलचस्पी) उसके दिल में डाल दी। वह बग़ैर किसी क़ानूनी मजबूरी के उस ख़िदमत ही को अपनी ज़िन्दगी का काम समझता है, उसके ज़रिये अपनी रोज़ी हासिल करता है। इस स्थिर निज़ाम का यह नतीजा होता है कि इनसान की सारी ज़रूरतें चन्द टके (रुपये) ख़र्च करने से आसानी के साथ हासिल हो जाती हैं। पका-पकाया खाना, सिला-सिलाया कपड़ा, बना-बनाया फ़र्नीचर, तैयार शुदा मकान सब कुछ एक इनसान कुछ पैसे ख़र्च करके हासिल कर लेता है। अगर यह निज़ाम न होता तो एक करोड़पति इनसान अपनी पूरी दौलत लुटाकर भी गेहूँ

का एक दाना हासिल न कर सकता। इसी क़ुदरती निज़ाम का नतीजा है कि आप होटल में ठहरकर जिस-जिस चीज़ से फ़ायदा उठाते हैं अगर उनकी छानबीन करें तो मालूम होगा कि आटा अमेरिका का, घी पंजाब का, गोश्त सिंध का, मसाले विभिन्न मुल्कों के, बरतन और फ़र्नीचर मुख़्तलिफ़ मुल्कों का, काम करने वाले बैरे बावर्ची विभिन्न शहरों के आपकी ख़िदमत में लगे हुए हैं, और एक लुक़्मा जो आपके मुँह तक पहुँचा है उसमें लाखों मशीनों, जानवरों और इनसानों ने काम किया है, तब यह आपके ज़ायक़े को संवार सका है। आप सुबह घर से निकले, तीन चार मील जाना है जिसकी ताक़त या फ़ुर्सत आपको नहीं। आपको अपने किसी क़रीबी मक़ाम में टैक्सी और रिक्शा या बस खड़ी हुई मिलेगी, जिसका लोहा ऑस्ट्रेलिया का, लकड़ी बर्मा की, मशीनरी अमेरिका की, ड्राईवर फ़्रन्टियर का, कंडेक्टर यू. पी. का, यह कहाँ-कहाँ के सामान और कहाँ-कहाँ की मख़्लूक़ आपकी ख़िदमत के लिये खड़ी है कि सिर्फ़ चन्द पैसे देकर आप इन सबसे ख़िदमत ले लें। उनको किस हुकूमत ने मजबूर किया है या किसने पाबन्द किया है कि ये सारी चीज़ें आपके लिये मुहैया कर दें, सिवाय उस क़ानूने क़ुदरत के जो दिलों के मालिक ने क़ुदरती तौर पर हर एक के दिल पर जारी फ़रमा दिया है।

आजकल सोशलिस्ट मुल्कों ने इस क़ुदरती निज़ाम को बदलकर इन चीज़ों को हुकूमत की ज़िम्मेदारी बना लिया कि कौन इनसान क्या काम करे। इसके लिये उनको सबसे पहले जबर व ज़ुल्म के ज़रिये इनसानी आज़ादी छीननी पड़ी जिसके नतीजे में हज़ारों इनसानों को क़त्ल किया गया, हज़ारों को क़ैद किया गया, बाक़ी बचे इनसानों को सख़्त जबर व ज़ुल्म के ज़रिये मशीन के पुर्ज़ों की तरह इस्तेमाल किया। जिसके नतीजे में अगर किसी जगह कुछ चीज़ों की पैदावार बढ़ भी गयी तो इनसानों की इनसानियत ख़त्म करके बढ़ी, तो यह सौदा सस्ता नहीं पड़ा। क़ुदरती निज़ाम में हर इनसान आज़ाद भी है और क़ुदरती तक़सीम तबीयतों की बिना पर ख़ास-ख़ास कामों के लिये मजबूर भी, और वह मजबूरी भी चूँकि अपनी तबीयत से है इसलिये उसको कोई भी जबर (दबाव) महसूस नहीं करता। सख़्त से सख़्त मेहनत और घटिया से घटिया काम के लिये ख़ुद आगे बढ़ने वाले और कोशिश करके हासिल करने वाले हर जगह हर ज़माने में मिलते हैं। और अगर कोई हुकूमत उनको इस काम के लिये मजबूर करने लगे तो ये सब उससे भागने लगेंगे।

ख़ुलासा यह है कि सारी दुनिया का निज़ाम आपसी सहयोग व ताल्लुक़ पर क़ायम है। लेकिन इस तसव्वुर का एक दूसरा रुख़ भी है कि अगर अपराध, चोरी, डाका, क़त्ल व ग़ारतगरी वग़ैरह के लिये यह आपसी मदद व सहयोग होने लगे, चोर और डाकुओं की बड़ी-बड़ी और संगठित ताक़तवर जमाअ़तें बन जायें तो यही मदद व सहयोग इस दुनिया के सारे निज़ाम को तबाह भी कर सकता है। मालूम हुआ कि यह आपसी मदद व सहयोग एक दो धारी तलवार है जो अपने ऊपर भी चल सकती है और दुनिया के निज़ाम (व्यवस्था) को बरबाद भी कर सकती है। इसलिये इसमें ऐसा होना कुछ दूर की बात भी न थी कि अपराध और क़त्ल व ग़ारत या नुक़सान पहुँचाने के लिये आपसी मदद व सहयोग की क़ुव्वत इस्तेमाल करने लगें। और यह

सिर्फ़ आशंका नहीं बल्कि वास्तविकता बनकर दुनिया के सामने आ गया तो उसकी प्रतिक्रिया के तौर पर दुनिया के बुद्धिजीवियों ने अपनी सुरक्षा के लिये विभिन्न और अनेक नज़रियों पर ख़ास-ख़ास जमाअतों पर क़ौमों की बुनियाद डाली, कि एक जमाअत या एक क़ौम के ख़िलाफ़ जब कोई दूसरी जमाअत या क़ौम हमलावर हो तो ये सब उनके मुक़ाबले में आपसी मदद व सहयोग की क़ुव्वत को इस्तेमाल करके बचाव और सुरक्षा कर सकें।

क़ौमियतों की तक़सीम

अ़ब्दुल-करीम शहरिस्तानी की किताब "मिलल व नहल" में है कि शुरू में जब तक इनसानी आबादी ज़्यादा नहीं थी तो दुनिया की चार दिशाओं के एतिबार से चार क़ौमें बन गयीं। पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी, उत्तरी। इनमें से हर एक दिशा के लोग अपने आपको एक क़ौम और दूसरों को दूसरी क़ौम समझने लगे। और इसी बुनियाद पर मदद व सहयोग क़ायम कर लिया। इसके बाद जब आबादी ज़्यादा फैली तो हर दिशा के लोगों में नसबी और ख़ानदानी बुनियादों पर क़ौमियत और संगठन का तसव्वुर एक उसूल बन गया। अ़रब का सारा निज़ाम इसी नसबी और क़बाईली बुनियाद पर था। इसी पर जंगें लड़ी जाती थीं। बनू हाशिम एक क़ौम, बनू तमीम दूसरी क़ौम, बनू ख़ुज़ाआ़ तीसरी क़ौम। हिन्दुस्तान के हिन्दुओं में तो आज तक ऊँची ज़ात और नीची ज़ात का भेदभाव और फ़र्क़ इसी तरह चल रहा है।

यूरोपियन क़ौमों के नये दौर ने न कोई अपना नसब बाक़ी रखा न दुनिया के नसबों को कुछ समझा। जब दुनिया में उनकी तरक़्क़ी हुई तो नसबी और क़बाईली क़ौमियतें और तक़सीमें ख़त्म करके फिर इलाक़ाई और सूबाई (क्षेत्रीय), वतनी और लिसानी (भाषाई) बुनियादों पर इनसानियत के टुकड़े-टुकड़े करके अलग-अलग क़ौमें खड़ी कर दी गयीं। और आज यही सिक्का तक़रीबन सारी दुनिया में चल रहा है। यहाँ तक कि यह जादू मुसलमानों पर भी चल गया। अ़रबी, तुर्की, इराक़ी, सिन्धी की तक़सीमें ही नहीं बल्कि उनमें भी तक़सीम दर तक़सीम होकर मिस्री, शामी, हिजाज़ी, नजदी और पंजाबी, बंगाली, सिन्धी, हिन्दी वग़ैरह की अलग-अलग क़ौम बन गयी। हुकूमत के सब कारोबार इन्हीं बुनियादों पर चलाये गये। यहाँ तक कि यह क्षेत्रीय भेदभाव उनके रग व ख़ून में शामिल हो गया और हर राज्य के लोगों का सहयोग व मदद इसी बुनियाद पर होने लगी।

क़ौमियत और संगठन व एकता के लिये क़ुरआनी तालीम

क़ुरआने करीम ने इनसान को फिर भूला हुआ सबक़ याद दिलाया। सूरः निसा की शुरू की आयतों में यह वाज़ेह कर दिया कि तुम सब इनसान एक माँ-बाप की औलाद हो। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसकी वज़ाहत करते हुए हज्जतुल-विदा के ख़ुतबे (संबोधन) में

ऐलान कर दिया कि किसी अ़रबी को अ़जमी (ग़ैर-अ़रबी) पर या गोरे को काले पर कोई फ़ज़ीलत नहीं। फ़ज़ीलत (बड़ाई) का मदार सिर्फ़ तक़वे और अल्लाह तआ़ला की इताअ़त पर है। इस क़ुरआनी तालीम नेः

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ اِخْوَةٌ.

(तमाम ईमान वाले आपस में भाई-भाई हैं) का ऐलान करके हब्शा के काले भजंग को सुर्ख़ तुर्की और रूमी का, अ़जम की निचली ज़ात के इनसानों को अ़रब के क़ुरैशी और हाशमी का भाई बना दिया। क़ौमियत और बिरादरी इस बुनियाद पर क़ायम की कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल को मानने वाले एक क़ौम, और न मानने वाले दूसरी क़ौम हैं। यही वह बुनियाद थी जिसने अबू जहल और अबू लहब के ख़ानदानी रिश्तों को रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से तोड़ दिया, और बिलाल हब्शी और सुहैब रूमी का रिश्ता जोड़ दिया।

हसन ज़्-बसरा बिलाल ज़्-हब्श सुहैब अज़् रूम
ज़्-ख़ाके मक्का अबू जहल ईं चे बुल-अ़जबीस्त

ख़ुदा की क़ुदरत और शान देखिये कि बसरे की मिट्टी से हसन बसरी, हब्श की मिट्टी से हज़रत बिलाल हब्शी और मुल्क रूम से हज़रत सुहैब रूमी पैदा हों और मक्का की पाक ज़मीन से अबू जहल जैसा दुश्मने दीन पैदा हो। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

यहाँ तक कि क़ुरआने करीम ने ऐलान कर दियाः

خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَّمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने तुम सब को पैदा किया, फिर तुम दो हिस्सों में बंट गये। कुछ काफ़िर हो गये, कुछ मोमिन।

बदर व उहुद और **अहज़ाब** व **हुनैन** की जंगों और मुहिमों में इसी क़ुरआनी तक़सीम का अ़मली प्रदर्शन हुआ था, कि नसबी भाई जब ख़ुदा तआ़ला और उसके रसूल की इताअ़त से बाहर हुआ तो मुसलमान भाई का भाईचारे और मदद का रिश्ता उससे कट गया और वह इसकी तलवार की ज़द में आ गया। नसबी भाई तलवार लेकर मुक़ाबले पर आया तो इस्लामी भाई इमदाद के लिये पहुँचा। बदर व उहुद और ख़न्दक़ की जंगों के वाक़िआ़त इस पर गवाह और सुबूत हैं:

हज़ार ख़ेश कि बेगाना अज़् ख़ुदा बाशद
फ़िदाई यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि ख़ुदा तआ़ला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व क़ुरबान हैं जो कि अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदार है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

मज़कूरा आयत में क़ुरआने हकीम ने मदद व सहयोग का यही माक़ूल और सही उसूल बतलाया है। फ़रमायाः

وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ.

यानी नेकी और ख़ुदा-तरसी पर मदद व सहयोग करो, बदी और ज़ुल्म पर मदद न करो।

ग़ौर कीजिए कि इसमें क़ुरआने करीम ने यह उनवान भी इख़्तियार नहीं फ़रमाया कि मुसलमान भाईयों के साथ मदद व सहयोग का मामला करो और ग़ैरों के साथ न करो, बल्कि मुसलमानों के साथ मदद व सहयोग करने की जो असल बुनियाद है यानी नेकी और ख़ुदा से डरना उसी को मदद व सहयोग करने की बुनियाद क़रार दिया। जिसका साफ़ मतलब यह है कि मुसलमान भाई भी अगर हक़ के ख़िलाफ़ या ज़ुल्म व ज़्यादती की तरफ़ चल रहा हो तो नाहक़ और ज़ुल्म पर उसकी भी मदद न करो, बल्कि इसकी कोशिश करो कि नाहक़ और ज़ुल्म से उसका हाथ रोको। क्योंकि दर हक़ीक़त यही उसकी सही इमदाद है, ताकि ज़ुल्म व ज़्यादती से उसकी दुनिया और आख़िरत तबाह न हो।

सही बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

انصر اخاك ظالمًا او مظلومًا.

यानी अपने भाई की मदद करो चाहे वह ज़ालिम हो या मज़लूम।

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम जो क़ुरआनी तालीम में रंगे जा चुके थे, उन्होंने हैरत से पूछा कि या रसूलल्लाह! मज़लूम भाई की इमदाद तो हम समझ गये, मगर ज़ालिम की इमदाद का क्या मलतब है? आपने फ़रमाया कि उसको ज़ुल्म से रोको, यही उसकी इमदाद है।

क़ुरआने करीम की इस तालीम ने नेकी व तक़वे और ख़ुदा-तरसी को असल मेयार बनाया। इसी पर क़ौमियत की तामीर खड़ी की। इस पर मदद व सहयोग की दावत दी। इसके मुक़ाबले में 'इस्म व उदवान' (गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती) को सख़्त जुर्म क़रार दिया। उस पर मदद व सहयोग करने से रोका। 'बिर्र व तक़वा' (नेकी व परहेज़गारी) के दो लफ़्ज़ इख़्तियार फ़रमाये। जमहूर मुफ़स्सिरीन ने बिर्र के मायने इस जगह नेक अमल क़रार दिये हैं, और तक़वा के मायने बुराईयों का छोड़ना बतलाये हैं। और लफ़्ज़ इस्म मुतलक़ गुनाह और नाफ़रमानी के मायने में है, चाहे वह हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ हो या इबादतों से, और उदवान के लफ़्ज़ी मायने हद से निकलने के हैं। मुराद इससे ज़ुल्म व ज़्यादती है।

बिर्र व तक़वा पर मदद व सहयोग करने के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

اَلدَّالُّ عَلَى الْخَيْرِ كَفَاعِلِهٖ.

यानी जो शख़्स किसी को नेकी का रास्ता बता दे तो उसको सवाब ऐसा ही है जैसे उस नेकी को उसने ख़ुद किया हो।

यह हदीस इमाम इब्ने कसीर ने बज़्ज़ार के हवाले से नक़ल फ़रमाई है। और सही बुख़ारी में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख़्स लोगों को हिदायत और नेकी की तरफ़ दावत दे तो जितने आदमी उसकी दावत पर नेक अमल करेंगे, उन सब के

बराबर उसको भी सवाब मिलेगा, बग़ैर इसके कि उन लोगों के सवाब में से कुछ कम किया जाये। और जिस शख़्स ने लोगों को किसी गुमराही या गुनाह की तरफ़ बुलाया, तो जितने लोग उसके बुलाने से गुनाह में मुब्तला हुए उन सब के गुनाहों के बराबर उसको भी गुनाह होगा, बग़ैर इसके कि उनके गुनाहों में कुछ कमी की जाये।

और इब्ने कसीर ने तबरानी की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स किसी ज़ालिम के साथ उसकी मदद करने के लिये चला वह इस्लाम से निकल गया। इसी पर पुराने बुज़ुर्गों ने ज़ालिम बादशाहों की नौकरी और कोई ओहदा क़ुबूल करने से सख़्त परहेज़ किया है, कि इसमें उनके ज़ुल्म की इमदाद व सहयोग है। तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में आयते करीमाः

فَلَنْ اَكُوْنَ ظَهِيْرًا لِّلْمُجْرِمِيْنَ

के तहत यह हदीस नक़ल की है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- क़ियामत के दिन आवाज़ दी जायेगी कि कहाँ हैं ज़ालिम लोग और उनके मददगार, यहाँ तक कि वे लोग जिन्होंने ज़ालिमों की दवात क़लम को दुरुस्त किया है, वे भी सब एक लोहे के ताबूत में जमा करके जहन्नम में फेंक दिये जायेंगे।

यह है क़ुरआन व सुन्नत की वह तालीम जिसने दुनिया में नेकी, इन्साफ़, हमदर्दी और अच्छा बर्ताव फैलाने के लिये मिल्लत के हर फ़र्द को एक दाई (प्रचारक) बनाकर खड़ा कर दिया था। और अपराध व ज़ुल्म और ज़्यादती की रोकथाम के लिये मिल्लत के हर फ़र्द को एक ऐसा सिपाही बना दिया था जो छुपे और खुले तौर पर अपनी ड्यूटी बजा लाने पर ख़ौफ़े ख़ुदा तआ़ला की वजह से मजबूर था। इसी हकीमाना तालीम व तरबियत का नतीजा था जो दुनिया ने सहाबा व ताबिईन के दौर में देखा। आज भी जब किसी मुल्क में जंग का ख़तरा मंडराता है तो शहरी सुरक्षा के महकमे क़ायम करके क़ौम के हर फ़र्द को कुछ फ़ुनून की तालीम का तो एहतिमाम किया जाता है मगर अपराधों की रोकथाम और ख़ात्मे के लिये इसका कहीं एहतिमाम नहीं है कि लोगों को ख़ैर का दाई (दावत देने वाला) और शर (बुराई) को रोकने वाला सिपाही बनाने की कोशिश करें। और ज़ाहिर है कि इसकी मश्क़ न फ़ौजी प्रेड से होती है न शहरी सुरक्षा के तरीक़ों से। यह हुनर तो शिक्षा स्थानों में सीखने सिखाने का है जो आजकल बदक़िस्मती से इन चीज़ों के नाम से नावाक़िफ़ है। 'बिर्र व तक़्वा' और उनकी तालीमात का दाख़िला आजकल के आ़म शिक्षा स्थानों में वर्जित और मना है। और 'इस्म व उदवान' (गुनाह और ज़ुल्म व ज़्यादती) का हर रास्ता खुला हुआ है। फिर यह बेचारी पुलिस कहाँ तक अपराधों की रोकथाम करे। जब सारी क़ौम हलाल व हराम और और हक़ व नाहक़ से बेगाना होकर अपराध की आ़दी बन जाये। आज जो अपराधों की अधिकता, चोरी, डाका, बुराईयों, क़त्ल व ग़ारतगरी की कसरत हर जगह और हर मुल्क में रोज़-बरोज़ ज़्यादा से ज़्यादा होती जाती है, और क़ानूनी मशीनरी उनकी रोकथाम से लाचार है, इसके यही दो सबब हैं कि एक तरफ़ तो हुकूमतें इस क़ुरआनी निज़ाम से दूर हैं, सत्ता में बैठे लोग अपनी ज़िन्दगी को "बिर्र व तक़्वा" के उसूल पर डालते हुए झिझकते

हैं। अगरचे इसके नतीजे में हज़ारों परेशानियाँ और कड़वाहटें झेलनी पड़ती हैं। काश वे इस कड़वे घूँट को एक दफ़ा तजुर्बे के लिये ही पी जायें, और ख़ुदा तआ़ला की क़ुदरत का तमाशा देखें कि किस तरह उनको और अ़वाम को अमन व सुकून और चैन व राहत की बेहतरीन और उम्दा ज़िन्दगी नसीब होती है।

दूसरी तरफ़ अ़वाम ने यह समझ लिया कि जराईम व अपराध की रोकथाम सिर्फ़ हुकूमत का काम है। वह हर अपराधी के अपराध पर पर्दा डालने के आ़दी हो गये हैं। महज़ हक़ को ज़ाहिर करने और अपराधों की रोकथाम के लिये सच्ची गवाही देने का रिवाज ही उनमें न रहा। उनको यह समझना चाहिये कि मुजरिम के जुर्म पर पर्दा डालना और गवाही से दूर भागना जुर्म की मदद करना है जो क़ुरआने करीम की तालीम के अनुसार हराम और सख़्त गुनाह है। औरः

وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ.

(और मदद न करो गुनाह पर और जुल्म पर) के हुक्म से बग़ावत है।

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ وَمَا اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ وَ الْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوْذَةُ وَ الْمُتَرَدِّيَةُ وَ النَّطِيْحَةُ وَمَا اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَا ذَكَّيْتُمْ وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ وَ اَنْ تَسْتَقْسِمُوْا بِالْاَزْلَامِ ذٰلِكُمْ فِسْقٌ اَلْيَوْمَ يَئِسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَ اَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا فَمَنِ اضْطُرَّ فِيْ مَخْمَصَةٍ غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثْمٍ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ③

हुर्रिमत् अ़लैकुमुल्मैततु वद्दमु व लह्मुल्-ख़िन्ज़ीरि व मा उहिल्-ल लिग़ैरिल्लाहि बिही वल्मुन्ख़नि-क़तु वल्मौक़ूज़तु वल्मु-तरद्दियतु वन्नती-हतु व मा अ-कलस्सबुअ़ु इल्ला मा ज़क्कैतुम्, व मा ज़ुबि-ह अ़लन्नुसुबि व अन् तस्तक़्सिमू बिल्अज़्लामि, ज़ालिकुम् फ़िस्कुन्, अल्यौ-म य-इसल्लज़ी-न क-फ़रू मिन् दीनिकुम् फ़ला तख़्शौहुम् वख़्शौनि, अल्यौ-म	हराम हुआ तुम पर मुर्दा जानवर और लहू और गोश्त सुअर का, और जिस जानवर पर नाम पुकारा जाये किसी और का और जो मर गया हो गला घोंटने से या चोट से या ऊँचे से गिरकर या सींग मारने से, और जिसको खाया हो दरिन्दे ने, मगर जिसको तुमने ज़िबह कर लिया, और हराम है जो ज़िबह हुआ किसी थान पर, और यह कि तक़सीम करो जुए के तीरों से, यह गुनाह का काम है, आज नाउम्मीद हो गये काफ़िर तुम्हारे दीन से, सो उनसे मत डरो और मुझसे डरो, आज मैं पूरा

अक्मल्तु लकुम् दीनकुम् व अत्मम्तु अ़लैकुम् निअ़्मती व रज़ीतु लकुमुल्-इस्ला-म दीनन्, फ़-मनिज़्तुर्-र फ़ी मख़्म-सतिन् ग़ै-र मु-तजानिफ़िल्-लिइस्मिन् फ़-इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्-रहीम (3)	कर चुका हूँ तुम्हारे लिये दीन तुम्हारा, और पूरा किया तुम पर मैंने एहसान अपना और पसन्द किया मैंने तुम्हारे वास्ते इस्लाम को दीन, फिर जो कोई लाचार हो जाये भूख में लेकिन गुनाह पर माईल न हो तो अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (3)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तुम पर (ये जानवर वग़ैरह) हराम किए गए हैं मुर्दार (जानवर जो कि बावजूद ज़िबह के लिये वाजिब होने के बिना शरई तरीक़े के मर जाये) और ख़ून (जो बहता हो) और सुअर का गोश्त (इसी तरह उसके सब अंग), और जो (जानवर) कि (रज़ा व ख़ुशनूदी हासिल करने के इरादे से) अल्लाह के अ़लावा किसी और के लिए नामित कर दिया गया हो, और जो गला घुटने से मर जाये, और जो किसी चोट से मर जाये, और जो गिरकर मर जाये (जैसे पहाड़ से या कुएँ में), और जो किसी की टक्कर से मर जाये, और जिसको कोई दरिन्दा (पकड़कर) खाने लगे (और उसके सदमे से मर जाये) लेकिन (गला घोंटने से दरिन्दे के खाने तक जिनका ज़िक्र है उनमें से) जिसको तुम (दम निकलने से पहले शरई क़ायदे के मुताबिक़) ज़िबह कर डालो (वह इस हराम होने से अलग है)। और (साथ ही) जो (जानवर) (ग़ैरुल्लाह की) इबादत गाहों पर ज़िबह किया जाये (हराम है अगरचे ज़बान से ग़ैरुल्लाह के लिये नामित न करे। क्योंकि हराम होने का मदार बुरी तरह मरने पर है इसका ज़हूर कभी क़ौल से होता है कि नामज़द करे, कभी अ़मल से होता है कि ऐसे स्थानों पर ज़िबह करे), और यह (भी हराम है) कि (गोश्त वग़ैरह) तक़सीम करो तीरों के क़ुरा डालने के ज़रिये, ये सब गुनाह (और हराम) हैं।

आज के दिन (यानी अब) ना-उम्मीद हो गये काफ़िर लोग तुम्हारे दीन (के मग़लूब व गुम हो जाने) से, (क्योंकि माशा-अल्लाह इस्लाम ख़ूब फैल गया) सो इन (काफ़िरों) से मत डरना (कि तुम्हारे दीन को गुम कर सकें) और मुझसे डरते रहना, (यानी मेरे अहकाम की मुख़ालफ़त मत करना)। आज के दिन मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को (हर तरह) कामिल कर दिया, (क़ुव्वत में भी जिससे काफ़िरों को मायूसी हुई और अहकाम व क़वायद में भी) और (इस मुकम्मल करने से) मैंने तुम पर अपना इनाम मुकम्मल कर दिया (दीनी इनाम भी कि अहकाम की तकमील हुई और दुनियावी इनाम भी कि क़ुव्वत हासिल हुई, और दीन के कामिल करने में दोनों आ गये)। और मैंने इस्लाम को तुम्हारा दीन बनने के लिए (हमेशा को) पसन्द कर लिया, (यानी क़ियामत तक तुम्हारा यही दीन रहेगा, इसको निरस्त व रद्द करके दूसरा दीन तजवीज़ न किया जायेगा।

पस तुमको चाहिये कि मेरी नेमत का शुक्र करके इस दीन पर पूरे-पूरे क़ायम रहो) फिर (उपर्युक्त चीज़ों का हराम होना मालूम कर लेने के बाद यह भी मालूम कर लो कि) पस जो शख़्स शिद्दत की भूख में बेताब हो जाए (और इस वजह से ऊपर बयान हुई चीज़ों को खा ले) शर्त यह है कि किसी गुनाह की तरफ़ उसका मैलान "यानी रुझान" न हो (यानी न ज़रूरत की मात्रा से ज़्यादा खाये और न मज़ा लेना मक़सूद हो, जिसको सूरः ब-क़रह में:

غَيْرَ بَاغٍ وَّلَا عَادٍ

से ताबीर फ़रमाया है) तो यक़ीनन अल्लाह तआला माफ़ करने वाले हैं (अगर ज़रूरत की मात्रा का पूरा अन्दाज़ा न हुआ और एक आध लुक़्मा ज़्यादा भी खा गया, और) रहमत वाले हैं (कि ऐसी हालत में इजाज़त दे दी)।

मआरिफ़ व मसाईल

यह सूरः मायदा की तीसरी आयत है। जिसमें बहुत से उसूल और उनसे निकलने वाले अहकाम व मसाईल बयान किये गये हैं। पहला मसला हलाल व हराम जानवरों का है जिन जानवरों का गोश्त इनसान के लिये नुक़सानदेह है, चाहे जिस्मानी तौर पर कि उससे इनसान के बदन में बीमारी का ख़तरा है, या रूहानी तौर पर कि उससे इनसान के अख़्लाक़ और दिली हालत व कैफ़ियत ख़राब होने का ख़तरा है, उनको क़ुरआन ने ख़बाईस (गन्दगी और बुरी) क़रार दिया और हराम कर दिया, और जिन जानवरों में कोई जिस्मानी या रूहानी नुक़सान नहीं है, उनको पाक और हलाल क़रार दिया।

इस आयत में फ़रमाया है कि हराम किये गये तुम पर मुर्दार जानवर। मुर्दार से मुराद वह जानवर हैं जो बग़ैर ज़िबह के किसी बीमारी के सबब या तबई मौत से मर जायें। ऐसे मुर्दार जानवरों का गोश्त "तिब्बी" तौर पर भी इनसान के लिये सख़्त नुक़सान देने वाला है और रूहानी तौर पर भी।

अलबत्ता हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दो चीज़ों को इस हुक्म से अलग क़रार दिया है- एक "मछली" दूसरे "टिड्डी।" यह हदीस मुस्नद अहमद, इब्ने माजा, दारे क़ुतनी, बैहक़ी वग़ैरह ने रिवायत की है।

दूसरी चीज़ जिसको इस आयत ने हराम क़रार दिया है वह ख़ून है, और क़ुरआने करीम की दूसरी आयत में 'औ दमम् मस्फ़ूहन्' फ़रमाकर यह बतला दिया गया कि ख़ून से मुराद बहने वाला ख़ून है। इसलिये जिगर और तिल्ली बावजूद ख़ून होने के इस हुक्म से अलग और बाहर हैं। उक्त हदीस में जहाँ "मैता" (मुर्दार) से मछली और टिड्डी को अलग और बाहर फ़रमाया है, उसी में जिगर और तिल्ली को ख़ून से अलग क़रार दिया है।

तीसरी चीज़ "सुअर का गोश्त" है जिसको हराम फ़रमाया है। लहम (गोश्त) से मुराद उसका पूरा बदन है जिसमें चर्बी, पट्ठे वग़ैरह सब ही दाख़िल हैं।

चौथे वह जानवर जो ग़ैरुल्लाह (अल्लाह के अ़लावा किसी और) के लिये नामज़द कर दिया

गया हो। फिर अगर ज़िबह के वक़्त भी उस पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया है तो वह खुला शिर्क है और यह जानवर सब के नज़दीक मुर्दार के हुक्म में है।

जैसा कि अ़रब के मुश्रिक लोग अपने बुतों के नाम पर ज़िबह किया करते थे। या बाज़े जाहिल किसी पीर-फ़क़ीर के नाम पर। और अगर ज़िबह के वक़्त नाम तो अल्लाह तआ़ला का लिया मगर जानवर किसी ग़ैरुल्लाह के नाम पर भेंट किया हो और उसकी रज़ामन्दी के लिये क़ुरबान किया हो तो जमहूर फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा की अक्सरियत) ने इसको भी:

مَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ

(जिस जानवर पर नाम पुकारा गया हो अल्लाह के अ़लावा किसी और का) के तहत हराम क़रार दिया है।

पाँचवे वह जानवर हराम है जो गला घोंटकर हलाक किया गया हो या ख़ुद ही किसी जाल वग़ैरह में फंसकर दम घुट गया हो। अगरचे गला घोंटे हुए और चोट लगने से मरने वाले भी मुर्दार के अन्दर दाख़िल हैं मगर जाहिलीयत के ज़माने के लोग इनको जायज़ समझते थे। इसलिये ख़ास तौर पर इनका ज़िक्र किया गया।

छठे वह जानवर जो सख़्त चोट के ज़रिये हलाक हुआ हो। जैसे लाठी या पत्थर वग़ैरह से मारा गया हो। और जो तीर किसी शिकार को इस तरह क़त्ल कर दे कि धार की तरफ़ से न लगे वैसे ही चोट से मर जाये वह भी मौक़ूज़ा (चोट से मरने) में दाख़िल होकर हराम है।

हज़रत अ़दी बिन हातिम रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अ़र्ज़ किया कि मैं कई बार "मेराज़" तीर से शिकार करता हूँ। अगर शिकार उससे मर जाये तो क्या खा सकता हूँ? आपने फ़रमाया कि अगर वह जानवर तीर के अ़र्ज़ (चौड़ाई वाले हिस्से) की चोट से मरा है तो वह मौक़ूज़ा (चोट से मरे हुए) में दाख़िल है उसको मत खा, (और अगर धार की तरफ़ से लगा है और उसने ज़ख़्म कर दिया है तो खा सकते हो। यह रिवायत इमाम जस्सास ने "अहकामुल-क़ुरआन" में अपनी सनदों से नक़ल की है। इसमें शर्त यह है कि तीर फेंकने के वक़्त बिस्मिल्लाह कहकर फेंका गया हो)।

जो शिकार बन्दूक़ की गोली से हलाक हो गया उसको भी फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने "मौक़ूज़ा" में दाख़िल और हराम क़रार दिया है। इमाम जस्सास रह. ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि वह फ़रमाते थे:

المقتولة بالبندقة تلك الموقوذه.

यानी बन्दूक़ के ज़रिये जो जानवर क़त्ल किया गया है वह भी मौक़ूज़ा (चोट से मरने वाला) है इसलिये हराम है। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा, इमाम शफ़ई, इमाम मालिक रह. वग़ैरह सब इस पर मुत्तफ़िक़ हैं। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

सातवें वह जानवर जो किसी पहाड़, टीले, ऊँची इमारत या कुएँ वग़ैरह में गिरकर मर जाये,

वह भी हराम है। इसी लिये हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि अगर कोई शिकार पहाड़ पर खड़ा है और तुमने तीर बिस्मिल्लाह पढ़कर उस पर फेंका और वह तीर की ज़द (मार) से नीचे गिरकर मर गया तो सको न खाओ।

क्योंकि इसमें भी संदेह है कि उसकी मौत तीर की ज़द (चोट) से न हो, गिरने के सदमे से हो, तो वह गिरकर मरने वाले में दाख़िल हो जायेगा। इसी तरह अगर किसी परिन्दे पर तीर फेंका, वह पानी में गिर गया तो उसके खाने को भी इसी बिना पर मना फ़रमाया है कि यह भी संदेह है कि उसकी मौत डूबने से वाक़े हुई हो। (जस्सास)

और हज़रत अ़दी बिन हातिम रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यही मज़मून रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से भी रिवायत फ़रमाया है। (जस्सास)

आठवें वह जानवर जो किसी टक्कर और भिडंत से हलाक हो गया हो। जैसे रेल, मोटर वग़ैरह की चपेट में आकर मर जाये या किसी दूसरे जानवर की टक्कर से मर जाये।

नवें वह जानवर जिसको किसी दरिन्दे जानवर ने फाड़ दिया हो उससे मर गया हो।

इन नौ क़िस्मों की हुर्मत (हराम होना) बयान फ़रमाने के बाद एक बात को इनसे अलग और बाहर बयान किया गया। फ़रमायाः 'इल्ला मा ज़क्कैतुम' यानी अगर इन जानवरों में से तुमने किसी को ज़िन्दा पा लिया और ज़िबह कर लिया तो वह हलाल हो गया। उसका खाना जायज़ है।

यह इस्तिस्ना (हुक्म से अलग करना) शुरू की चार क़िस्मों से मुताल्लिक़ नहीं हो सकता, क्योंकि मुर्दार और ख़ून में तो इसकी संभावना ही नहीं। और सुअर और जो अल्लाह के अ़लावा के लिये नामज़द कर दिया गया हो वो अपनी ज़ात से हराम हैं, ज़िबह करना न करना उनमें बराबर है। इसी लिये हज़रत अ़ली, हज़रत इब्ने अ़ब्बास, हज़रत हसन बसरी, हज़रत क़तादा वग़ैरह पहले बुज़ुर्गों का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि यह हुक्म से अलग करना शुरू की चार के बाद यानी गला घोंटने और उसके बाद वालों से संबन्धित है। इसलिये मतलब इसका यह हो गया कि इन तमाम सूरतों में अगर जानवर ज़िन्दा पाया गया, ज़िन्दगी की निशानियाँ उसमें महसूस की गयीं और इसी हालत में उसको अल्लाह के नाम पर ज़िबह कर दिया गया तो वह हलाल है। चाहे वह गला घोंटा हुआ हो, या सख़्त चोट लगा हुआ या ऊपर से गिरा हुआ या किसी टक्कर की चपेट में आया हुआ या जिसको दरिन्दे ने फाड़ डाला है। इनमें से जिसको भी ज़िन्दगी की निशानियाँ महसूस करते हुए ज़िबह कर लिया वह हलाल हो गया।

दसवें वह जानवर हराम है जो नुसुब पर ज़िबह किया गया हो। नुसुब वह पत्थर हैं जो काबा के गिर्द खड़े किये हुए थे और जाहिलीयत के ज़माने के लोग उनकी पूजा करते और उनके पास लाकर जानवरों की क़ुरबानी उनके लिये करते थे। और इसको इबादत समझते थे।

जाहिलीयत (इस्लाम से पहले) ज़माने के लोग इन सब क़िस्म के जानवरों को खाने के आ़दी थे जो ख़बाईस (बुरी और गन्दी चीज़ों) में दाख़िल हैं। क़ुरआने करीम ने इन सब को हराम क़रार दिया।

ग्यारहवीं चीज़ जिसको इस आयत में हराम क़रार दिया है। वह 'इस्तिस्क़ाम बिल्अज़लाम' है। अज़लाम उन तीरों को कहते हैं जो अरब के जाहिली (इस्लाम ज़ाहिर होने से पहले के) दौर में इस काम के लिये मुक़र्रर था कि उसके ज़रिये क़िस्मत आज़माई की जाती थी, और ये सात तीर थे जिनमें से एक पर नअ़म (हाँ) एक पर ला (नहीं) और इस तरह के दूसरे अलफ़ाज़ लिखे होते थे। और ये तीर बैतुल्लाह के ख़ादिम के पास रहते थे।

जिस किसी शख़्स को अपनी क़िस्मत या आईन्दा के किसी काम का लाभदायक या नुक़सानदेह होना मालूम करना होता तो काबा के ख़ादिम के पास जाते और सौ रुपये उसको भेंट में देते, वह उन तीरों को तरकश से एक-एक करके निकालता। अगर उस पर लफ़्ज़ 'नअ़म' (हाँ) निकल आया तो समझते थे कि यह काम मुफ़ीद है, और अगर 'ला' (नहीं) निकल आया तो समझते थे कि यह काम न करना चाहिये। हराम जानवरों के सिलसिले में इसका ज़िक्र करने की वजह यह है कि अरब वालों की यह भी आदत थी कि चन्द आदमी शरीक होकर कोई ऊँट वग़ैरह ज़िबह करते मगर गोश्त की तक़सीम हर एक के साझे के हिस्से के मुताबिक़ करने के बजाय उन जुए के तीरों से करते थे। जिसमें कोई बिल्कुल मेहरूम रहता, किसी को बहुत ज़्यादा, किसी को हक़ से कम मिलता था। इसलिये जानवरों की हुर्मत (हराम होने) के साथ इस तरीक़ा-ए-कार की हुर्मत को भी बयान कर दिया गया।

उलेमा ने फ़रमाया कि आईन्दा (भविष्य) के हालात और ग़ैब की चीज़ें मालूम करने के जितने तरीक़े राईज (प्रचलित) हैं, चाहे सितारों के ज़रिये या हाथ की लकीरें देखकर या फ़ाल वग़ैरह निकाल कर, यह सब तरीक़े 'जुए के तीरों के ज़रिये क़ुर्आ निकालने' के हुक्म में हैं।

और 'इस्तिक़्साम बिल्अज़लाम' का लफ़्ज़ कभी जुए के लिये भी बोला जाता है। जिसमें क़ुर्आ अन्दाज़ी या लॉट्री के तरीक़ों से हुक़ूक़ का निर्धारण किया जाये। यह भी क़ुरआनी हुक्म के मुताबिक़ हराम है जिसको क़ुरआने करीम ने मैसर (जुए) के नाम से वर्जित और मना क़रार दिया है। इसी लिये हज़रत सईद बिन जुबैर, इमाम मुजाहिद और इमाम शअ़बी ने फ़रमाया कि जिस तरह अरब के लोग 'अज़लाम' (तीरों) के ज़रिये हिस्से निकालते इसी तरह फ़ारस (प्राचीन ईरान) व रोम में शतरंज, चौसर वग़ैरह के मोहरों से यह काम लिया जाता है। वह भी अज़लाम के हुक्म में हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

'इस्तिक़्साम बिल्अज़लाम' (जुए के तीरों को डालने) की हुर्मत के साथ इरशाद फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ فِسْقٌ.

यानी यह तरीक़ा क़िस्मत मालूम करने या हिस्सा मुक़र्रर करने का फ़िस्क़ (गुनाह) और गुमराही है। उसके बाद इरशाद फ़रमायाः

اَلْيَوْمَ يَئِسَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ دِيْنِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ.

आज के दिन काफ़िर तुम्हारे दीन (पर ग़ालिब आने) से मायूस हो चुके हैं। इसलिये अब तुम उनसे कोई ख़ौफ़ न रखो। अलबत्ता मुझसे डरते रहो।

यह आयत हिजरत के दसवें साल हज्जतुल-विदा में अ़रफ़े के दिन रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल हुई। जबकि मक्का और तक़रीबन सारा अ़रब फ़तह हो चुका था। पूरे अ़रब ख़ित्ते पर इस्लामी क़ानून जारी था। इस पर फ़रमाया कि अब से पहले जो काफ़िर यह मन्सूबे बनाया करते थे कि मुसलमानों की जमाअ़त हमारे मुक़ाबले में कम भी है और कमज़ोर भी, उनको ख़त्म कर दिया जाये। अब न उनमें यह हौसले बाक़ी रहे, न उनकी वह ताक़त रही। इसलिये मुसलमान उनसे मुत्मईन होकर अपने रब की इताअ़त व इबादत में लग जायें।

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا.

इस आयत के नाज़िल होने की ख़ास शान है। अ़रफ़ा का दिन है जो तमाम साल के दिनों में एक सरदार की हैसियत रखता है और इत्तिफ़ाक़ से यह अ़रफ़ा जुमा के दिन पड़ा, जिसके फ़ज़ाईल मशहूर व मारूफ़ हैं। मैदान-ए-अ़रफ़ात का मक़ाम जबल-ए-रहमत के क़रीब है, जो अ़रफ़ा के दिन अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से रहमत के उतरने का ख़ास मक़ाम है। वक़्त अ़सर के बाद का है, जो आ़म दिनों में भी मुबारक वक़्त है और ख़ुसूसन जुमा के दिन में कि दुआ़ की क़ुबूलियत की घड़ी बहुत सी रिवायतों के मुताबिक़ इसी वक़्त आई है, और अ़रफ़ा के दिन और ज़्यादा ख़ुसूसियत के साथ दुआ़यें क़ुबूल होने का ख़ास वक़्त है।

हज के लिये मुसलमानों का सबसे बड़ा पहला अ़ज़ीम इज्तिमा है, जिसमें तक़रीबन डेढ़ लाख सहाबा-ए-किराम शरीक हैं। रहमतुल-लिल्आलमीन सहाबा-ए-किराम के साथ जबले-रहमत के नीचे अपनी ऊँटनी 'अ़ज़बा' पर सवार हैं और हज के सबसे बड़े रुक्न यानी वक़ूफ़े अ़रफ़ात में मशग़ूल हैं।

इन फ़ज़ाईल व बरकात और रहमतों के साये में यह आयते करीम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर नाज़िल होती है। सहाबा-ए-किराम का बयान है कि जब आप पर यह आयत वही के ज़रिये नाज़िल हुई तो दस्तूर के मुताबिक़ वही का भार और बोझ इतना महसूस हुआ कि ऊँटनी उससे दबी जा रही थी, यहाँ तक कि मजबूर होकर बैठ गयी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि यह आयत क़ुरआन की तक़रीबन आख़िरी आयत है। इसके बाद कोई आयत अहकाम से मुताल्लिक़ नाज़िल नहीं हुई। सिर्फ़ तरग़ीब व तरहीब (शौक़ दिलाने और डराने) की चन्द आयतें हैं जिनका उतरना इस आयत के बाद बतलाया गया है। इस आयत के नाज़िल होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस दुनिया में सिर्फ़ इक्यासी दिन ज़िन्दा रहे, क्योंकि सन् दस हिजरी की नवीं ज़िलहिज्जा में यह आयत नाज़िल हुई और सन् ग्यारह हिजरी की बारहवीं रबीउल-अव्वल (1) को हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी।

(1) यह मशहूर क़ौल की बिना पर लिख दिया गया है वरना ख़ुद हज़रत मुअल्लिफ़ (यानी तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन के लेखक) ने अपने रिसाले "सीरते ख़ातमुल-अम्बिया" पेज 144 पर हाफ़िज़ इब्ने हजर अ़स्क़लानी रह. और हाफ़िज़ मुग़लताई रह. के हवाले से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तारीख़े वफ़ात दो रबीउल-अव्वल को सही क़रार दिया है और 81 दिन इसी हिसाब से बनते हैं। मुहम्मद तक़ी उस्मानी

यह आयत जो इस ख़ास शान और एहतिमाम से नाज़िल हुई इसका मफ़्हूम भी मिल्लते इस्लाम और मुसलमानों के लिये एक बहुत बड़ी ख़ुशख़बरी, भारी इनाम और इस्लाम का इम्तियाज़ी निशान है। जिसका ख़ुलासा यह है कि दीने हक़ और नेमते इलाही का इन्तिहाई मेयार जो इस आलम में पूरी इनसानियत को अ़ता होने वाला था, आज वह मुकम्मल कर दिया गया। गोया हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के ज़माने से जो दीने हक़ और नेमते इलाही का उतरना और रिवाज व चलन शुरू किया गया था और हर ज़माने और हर ख़ित्ते के मुनासिबे हाल इस नेमत का एक हिस्सा आदम की औलाद (यानी इनसानों) को अ़ता होता रहा, आज वह दीन और नेमत मुकम्मल सूरत में ख़ातमुल-अम्बिया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी उम्मत को अ़ता कर दी गयी।

इसमें तमाम अम्बिया व रसूलों की जमाअ़त में सय्यिदुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सआ़दत और विशेष दर्जे का तो इज़हार है ही इसके साथ तमाम उम्मतों के मुक़ाबले में उम्मते मुहम्मदिया की भी एक ख़ास इम्तियाज़ी शान का वाज़ेह सुबूत है।

यही वजह है कि एक मर्तबा यहूद के चन्द उलेमा हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि तुम्हारे क़ुरआन में एक ऐसी आयत है जो अगर यहूदियों पर नाज़िल होती तो वे उसके नाज़िल होने का एक जश्ने ईद (ख़ुशी का जश्न) मनाते। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने सवाल किया कि वह कौनसी आयत है? उन्होंने यही आयत पढ़ दीः

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ.

हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने उनके जवाब में फ़रमाया कि हाँ हम जानते हैं कि यह आयत किस जगह और किस दिन नाज़िल हुई। इशारा इसी बात की तरफ़ था कि वह दिन हमारे लिये दोहरी ईद का दिन था, एक अ़रफ़ा दूसरे जुमा।

ईद और त्यौहार मनाने का इस्लामी उसूल

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के इस जवाब में एक इस्लामी उसूल की तरफ़ भी इशारा है जो तमाम दुनिया की क़ौमों व धर्मों में सिर्फ़ इस्लाम ही की विशेषता है। वह यह कि दुनिया में हर क़ौम और हर मज़हब व मिल्लत के लोग अपने-अपने हालात व ख़ुसूसियात के मातहत अपने ख़ास-ख़ास तारीख़ी वाक़िआ़त के दिनों की यादगारें मनाते हैं, और उन दिनों को उनके यहाँ एक ईद या त्यौहार की हैसियत हासिल होती है।

कहीं क़ौम के बड़े आदमी की पैदाईश या मौत का या सत्ता संभालने का दिन मनाया जाता है और कहीं किसी ख़ास मुल्क या शहर की फ़तह या और किसी अ़ज़ीम तारीख़ी वाक़िए का, जिसका हासिल कुछ विशेष व्यक्तियों की इ़ज़्ज़त अफ़ज़ाई के सिवा कुछ नहीं। इस्लाम व्यक्ति परस्ती का क़ायल नहीं है, उसने जाहिलीयत के ज़माने की इन तमाम रस्मों और व्यक्तिगत

यादगारों को छोड़कर उसूल और मक़ासिद की यादगारें क़ायम करने का उसूल बना दिया।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को "ख़लीलुल्लाह" का ख़िताब दिया गया और क़ुरआने करीम में उनके इम्तिहानात और सब में मुकम्मल कामयाबी को सराहा गया। जैसा कि फ़रमायाः

وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖمَ رَبُّهٗ بِكَلِمٰتٍ فَاَتَمَّهُنَّ

लेकिन न उनकी पैदाईश या मौत का दिन मनाया गया न उनके बेटे हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम और उनकी वालिदा की पैदाईश व मौत या दूसरे हालात की कोई यादगार क़ायम की गयी। हाँ उनके आमाल में जो चीज़ें मक़ासिदे दीन से मुताल्लिक़ थीं, उनकी यादगारों को न सिर्फ़ महफ़ूज़ रखा गया बल्कि बाद में आने वाली नस्लों के दीन व मज़हब का हिस्सा और फ़र्ज़ व वाजिब क़रार दे दिया गया। क़ुरबानी, ख़तना, सफ़ा मरवा के बीच दौड़ना, मिना में तीन जगह कंकरियाँ मारना, यह सब उन्हें बुज़ुर्गों के ऐसे अफ़आ़ल (कामों) की यादगार हैं जो उन्होंने अपने नफ़सानी जज़्बात और इनसान के तबई तक़ाज़ों को अल्लाह तआ़ला की रज़ा तलाशने के मुक़ाबले में कुचलते हुए अदा किये। और जिनमें हर दौर और हर ज़माने के लोगों को इसका सबक़ मिलता है कि इनसानों को अल्लाह तआ़ला की रज़ा हासिल करने के लिये अपनी महबूब से महबूब चीज़ को क़ुरबान कर देनी चाहिये।

इसी तरह इस्लाम में किसी बड़े से बड़े आदमी की मौत व ज़िन्दगी या व्यक्तिगत हालात का कोई दिन मनाने के बजाय उनके आमाल के दिन मनाये गये। जो किसी ख़ास इबादत से मुताल्लिक़ हैं जैसे शबे बराअत, रमज़ान मुबारक, शबे क़द्र, अ़रफ़ा का दिन, आ़शूरा का दिन वग़ैरह। ईदें सिर्फ़ दो रखी गयीं, वह भी ख़ालिस दीनी लिहाज़ से। पहली ईद रमज़ान मुबारक के समापन और हज के महीनों के शुरू होने पर रखी गयी, और दूसरी ईद हज की इबादत से फ़राग़त के बाद रखी गयी।

ख़ुलासा यह है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के इस जवाब ने यह बतला दिया कि यहूदियों व ईसाईयों की तरह हमारी ईदें ऐतिहासिक वाक़िआ़त के ताबे नहीं, कि जिस तारीख़ में कोई अहम वाक़िआ़ पेश आ गया उसको ईद मनायें, जैसा कि पहली जाहिलीयत (इस्लाम से पहले ज़माने) की रस्म थी, और आजकल की नई जाहिलीयत ने तो इसको बहुत ही फैला दिया है, यहाँ तक कि दूसरी क़ौमों की नक़ल करके मुसलमान भी इसमें मुब्तला होने लगे।

ईसाईयों ने हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के जन्म-दिवस की ईदे मीलाद मनाई। उनको देखकर कुछ मुसलमानों ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैदाईश पर **ईदे मीलादुन्नबी** के नाम से एक ईद बना दी। उसी रोज़ बाज़ारों में जलूस निकालने और उसमें तरह-तरह की ख़ुराफ़ात को और रात में रोशनियों को इबादत समझकर करने लगे। जिसकी कोई असल सहाबा किराम, ताबिईन हज़रात और उम्मत के पहले पुराने बुज़ुर्गों के अ़मल में नहीं मिलती।

और हक़ीक़त यह है कि यह दिन मनाने का तरीक़ा उन क़ौमों में तो चल सकता है जो कि कमाल वाले अफ़राद और उनके हैरत-अंगेज़ कारनामों के लिहाज़ से मुफ़लिस हैं (यानी उनमें ऐसे

हज़रात नहीं पाये जाते), पूरी क़ौम में दो-चार शख़्सियतें इस क़ाबिल होती हैं, और उनके भी कुछ मख़्सूस काम ऐसे होते हैं जिनकी यादगार मनाने को क़ौमी फ़ख़्र समझते हैं।

इस्लाम में यह दिन मनाने की रस्म चले तो एक लाख बीस हज़ार से ज़ायद तो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम हैं, जिनमें से हर एक की न सिर्फ़ पैदाईश बल्कि उनके हैरत-अंगेज़ कारनामों की लम्बी फ़ेहरिस्त है, जिनके दिन मनाने चाहियें। अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के बाद ख़ातमुल-अम्बिया "सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम" की पाक ज़िन्दगी को देखा जाये तो आपकी ज़िन्दगी का शायद कोई दिन भी ऐसे कारनामों से ख़ाली नहीं जिनका दिन मनाना चाहिये। बचपन से लेकर जवानी तक के वो कमालात जिन्होंने पूरे अ़रब में आपको अमीन का लक़ब दिया था, क्या वह ऐसे नहीं हैं कि मुसलमान उनकी यादगार मनायें? फिर क़ुरआन का नाज़िल होना, हिजरत, ग़ज़वा-ए-बदर, जंगे-उहुद, जंगे-ख़न्दक़, फ़त्हे-मक्का, जंगे-हुनैन, जंगे-तबूक और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तमाम जंगें व मुहिमें हैं। एक भी ऐसा नहीं कि जिसकी यादगार न मनाई जाये। इसी तरह आपके हज़ारों मोजिज़े यादगार मनाने की चीज़ें हैं, और अगर दिल की समझ के साथ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़िन्दगी पर नज़र डालें तो आपकी पाक ज़िन्दगी का हर दिन नहीं हर घण्टा एक यादगार मनाने का तक़ाज़ा रखता है।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बाद तक़रीबन डेढ़ लाख सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम वह हैं जिनमें से हर एक दर हक़ीक़त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ज़िन्दा मोजिज़ा है। क्या यह बेइन्साफ़ी नहीं होगी कि उनकी यादगारें न मनाई जायें। और यह रस्म चल पड़े तो फिर सहाबा-ए-किराम के बाद उम्मत के बुज़ुर्गों, औलिया-अल्लाह और उलेमा व मशाईख़ पर नज़र डालो जो करोड़ों की तायदाद में होंगे। अगर यादगारी दिन मनाये जायें तो उनको छोड़ देना क्या उनके हक़ में बेइन्साफ़ी और उनकी क़द्र न पहचानना नहीं होगा? और अगर यह तय कर लिया जाये कि सभी के यादगारी दिन मनाये जायें तो साल भर में एक दिन भी हमारा यादगार मनाने से ख़ाली न रहे बल्कि हर दिन के हर घण्टे में कई-कई यादगारें और कई-कई ईदें मनानी पड़ेंगी।

यही वजह है कि रसूले करीम "सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम" और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने इस रस्म को जाहिलीयत की रस्म क़रार देकर नज़र-अन्दाज़ किया है, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के इस फ़रमान में इसी की तरफ़ इशारा है।

अब इस आयत के मायने व मतलब की तफ़सील सुनिये। इसमें हक़ तआ़ला शानुहू ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी उम्मते मरहूमा को तीन खुसूसी इनाम अ़ता फ़रमाने की ख़ुशख़बरी दी है- एक दीन के मुकम्मल करने, दूसरे नेमत के पूरा करने, तीसरे इस्लामी शरीअ़त का इस उम्मत के लिये इन्तिख़ाब (चुनना और पसन्द किया जाना)।

दीन को कामिल करने के मायने तर्जुमाने क़ुरआन हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह ने यह बयान फ़रमाये हैं कि आज दीने हक़ की तमाम हदों, सीमाओं, फ़राईज़ और अहकाम व आदाब मुकम्मल कर दिये गये हैं। अब इसमें न किसी इज़ाफ़े और

ज़्यादती की ज़रूरत बाक़ी है और न कमी का शुब्हा व गुंजाईश। (रूहुल-मआनी)

यही वजह है कि इसके बाद इस्लामी अहकाम में से कोई नया हुक्म नाज़िल नहीं हुआ, जो चन्द आयतें इसके बाद नाज़िल हुईं उनमें या तो तरग़ीब व तरहीब (शौक़ दिलाने और डराने) के मज़ामीन हैं या उन्हीं अहकाम की ताकीद है जिनका बयान पहले हो चुका था।

और यह बात इसके मनाफ़ी (विरुद्ध) नहीं कि इज्तिहादी उसूल के मातहत इमाम हज़रात नये-नये पेश आने वाले वाक़िआत व हालात के मुताल्लिक़ अपने इज्तिहाद (कोशिश व मेहनत) से शरीअ़त के अहकाम बयान करें, क्योंकि क़ुरआने करीम ने जिस तरह शरई अहकाम की हदें व फ़राईज़ वग़ैरह बयान फ़रमाये हैं इसी तरह इज्तिहाद के उसूल भी क़ुरआन ही ने मुतैयन फ़रमा दिये हैं। उनके ज़रिये जो अहकाम क़ियामत तक निकाले जायें वो सब एक हैसियत से क़ुरआन ही के बयान किये हुए अहकाम हैं। क्योंकि उन उसूल के मातहत हैं जो क़ुरआन ने बयान किये।

ख़ुलासा यह है कि दीन को कामिल करने का मतलब हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ यह है कि दीन के तमाम अहकाम को मुकम्मल कर दिया गया। अब न इसमें किसी ज़्यादती की ज़रूरत बाक़ी है न मन्सूख़ (रद्द व निरस्त) होकर कमी का शुब्हा व गुंजाईश। क्योंकि इसके बाद ही निरन्तर वही का सिलसिला रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के साथ ख़त्म होने वाला था, और अल्लाह की वही के बग़ैर क़ुरआन का कोई हुक्म मन्सूख़ नहीं हो सकता। और बज़ाहिर अहकाम की जो ज़्यादती इज्तिहाद के उसूल के तहत फ़ुक़हा व मुज्तहिदीन (क़ुरआन व हदीस में ग़ौर करके अहकाम निकालने वाले उलेमा व इमामों) की तरफ़ से हुई वह वास्तव में ज़्यादती नहीं बल्कि क़ुरआनी अहकाम की तशरीह व बयान है।

और **नेमत पूरा करने** से मुराद मुसलमानों का ग़लबा, तरक़्क़ी और उनके मुख़ालिफ़ों का दबना व हार जाना है, जिसका ज़हूर मक्का मुकर्रमा की फ़तह और जाहिलीयत (इस्लाम से पहले के ज़माने) की रस्मों के मिटाने से और उस साल हज में किसी मुश्रिक के शरीक न होने के ज़रिये हुआ।

यहाँ क़ुरआनी अलफ़ाज़ में यह बात भी ध्यान देने के क़ाबिल है कि दीन के साथ कामिल करने का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया गया और नेमत के साथ पूरा करने का लफ़्ज़, हालाँकि ये दोनों लफ़्ज़ बज़ाहिर एक दूसरे के जैसे और एक ही मायनों वाले समझे जाते हैं, लेकिन दर हक़ीक़त इन दोनों के मफ़्हूम में एक फ़र्क़ है जिसको **मुफ़रदातुल-क़ुरआन** में इमाम राग़िब अस्फ़हानी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने इस तरह बयान फ़रमाया है कि किसी चीज़ का "पूरा करना और तकमील" इसको कहते हैं कि उस चीज़ से जो ग़र्ज़ और उद्देश्य था वह पूरा हो गया, और पूरा करने के लफ़्ज़ के मायने यह हैं कि अब दूसरी चीज़ की ज़रूरत और हाजत नहीं रही। इसलिये "दीन को कामिल करने" का हासिल यह हुआ कि क़ानूने इलाही और अहकामे दीन के इस दुनिया में भेजने का जो मक़सद था वह आज पूरा कर दिया गया, और नेमत के पूरा करने

का मतलब यह हुआ कि अब मुसलमान किसी के मोहताज नहीं, उनको ख़ुद हक़ तआ़ला जल्ल शानुहू ने ग़लबा, क़ुव्वत और इख़्तियार अ़ता फ़रमा दिया, जिसके ज़रिये वे इस दीने हक़ के अहकाम को जारी और नाफ़िज़ (लागू) कर सकें।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि इस आयत में दीन की निस्बत तो मुसलमानों की तरफ़ फ़रमाई गयी है और नेमत की निस्बत हक़ तआ़ला की तरफ़। वजह यह है कि दीन का ज़हूर उन आमाल और कामों के ज़रिये होता है जो उम्मत के अफ़राद करते हैं और नेमत की तकमील (पूरा करना) डायरेक्ट हक़ तआ़ला की तरफ़ से है। (इब्ने क़य्यिम, तफ़सीरुल-क़य्यिम)

इस तक़रीर से यह भी स्पष्ट हो गया कि दीन को कामिल करना आज होने का यह मतलब नहीं कि पहले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का दीन नाक़िस था, बल्कि जैसा कि तफ़सीर बहरे मुहीत में क़फ़ाल मरूज़ी रह. के हवाले से नक़ल किया है कि दीन तो हर नबी व रसूल का उसके ज़माने के एतिबार से कामिल व मुकम्मल था। यानी जिस ज़माने में जिस पैग़म्बर पर कोई शरीअ़त और दीन अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल किया गया उस ज़माने और उस क़ौम के लिहाज़ से वही कामिल व मुकम्मल था, लेकिन अल्लाह जल्ल शानुहू के इल्म में यह तफ़सील पहले से थी कि जो दीन इस ज़माने और इस क़ौम के लिये मुकम्मल है वह बाद के ज़माने और आने वाली क़ौमों के लिये मुकम्मल न होगा, बल्कि इसको मन्सूख़ (रद्द और निरस्त) करके दूसरा दीन व शरीअ़त नाफ़िज़ की जायेगी। बख़िलाफ़ शरीअ़ते इस्लाम के जो सबसे आख़िर में नाज़िल की गयी कि वह हर दिशा और हर लिहाज़ से कामिल व मुकम्मल है। न वह किसी विशेष ज़माने के साथ मख़्सूस है और न किसी ख़ास क्षेत्र, मुल्क या क़ौम के साथ, बल्कि क़ियामत तक हर ज़माने, हर ख़ित्ते और हर क़ौम के लिये यह शरीअ़त (अल्लाह का क़ानून) कामिल व मुकम्मल है।

तीसरा इनाम जो इस उम्मते मरहूमा के लिये इस आयत में बयान फ़रमाया गया वह यह है कि इस उम्मत के बाद अल्लाह जल्ल शानुहू ने अपने तक़दीरी चयन के ज़रिये दीने इस्लाम को मुन्तख़ब (चुना और पसन्द) फ़रमाया जो हर हैसियत से कामिल व मुकम्मल है, और जिस पर निजात का दारोमदार है।

कलाम का ख़ुलासा यह है कि इस आयत ने यह बतला दिया कि उम्मते मरहूमा के लिये दीने इस्लाम एक बड़ी नेमत है जो उनको बख़्शी गयी है। और यही दीन है जो हर हैसियत और दिशा से कामिल व मुकम्मल है, न इसके बाद कोई नया दीन आयेगा और न इसमें कोई कमी-बेशी की जायेगी।

यही वजह थी कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो आ़म मुसलमान इसको सुनकर ख़ुश हो रहे थे मगर हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु पर रोना तारी था। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनसे रोने की वजह पूछी तो अ़र्ज़ किया कि इस आयत से इसकी तरफ़ इशारा मालूम होता है कि अब आपका क़ियाम (ठहरना) इस दुनिया में बहुत कम है। क्योंकि पूरा और मुकम्मल होने के साथ रसूल को भेजने की ज़रूरत भी पूरी हो चुकी। रसूले करीम

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसकी तस्दीक़ (पुष्टि) फ़रमाई। (तफ़सीर इब्ने कसीर, बहरे मुहीत वग़ैरह)

चुनाँचे आने वाले वक़्त ने बतला दिया कि इसके सिर्फ़ इक्यासी दिन बाद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इस दुनिया से रुख़्सत हो गये।

आयत के आख़िर में:

فَمَنِ اضْطُرَّ فِیْ مَخْمَصَةٍ.

(फिर जो कोई लाचार हो जाये भूख में) का ताल्लुक़ उन जानवरों से है जिनके हराम होने का बयान आयत के शुरू में आया है। और इस जुमले का मतलब एक ख़ास हालत को आ़म क़ायदे से अलग और बाहर करना है कि अगर कोई शख़्स भूख की सख़्ती से बेक़रार हो जाये और ख़तरा मौत का लाहिक़ हो जाये, ऐसी हालत में अगर वह ऊपर बयान हुए हराम जानवरों में से कुछ खा ले तो उसके लिये गुनाह नहीं। मगर शर्त यह है कि पेट भरना और मज़ा लेना मक़सद न हो, बल्कि सिर्फ़ इतना खा ले जिससे बेक़रारी व बेचैनी की हालत दूर हो जाये। आयत में "ग़ै-र मुतजानिफ़िल् लिइस्मिन्" का यही मतलब है कि उस खाने में उसका मैलान गुनाह की तरफ़ न हो, बल्कि सिर्फ़ बेक़रारी, मजबूरी और जान पर बन आने वाली हालत को दूर करना हो।

आख़िर में "फ़-इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम" से इस तरफ़ इशारा है कि ये हराम चीज़ें उस वक़्त भी अपनी जगह हराम व नाजायज़ ही हैं, सिर्फ़ उस शख़्स की बेक़रारी व सख़्त भूख की वजह से उसके लिये माफ़ कर दिया गया है।

يَسْئَلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ ؕ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ
الطَّيِّبٰتُ ۙ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ ؗ فَكُلُوْا مِمَّآ اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا
اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ ۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيْعُ الْحِسَابِ ۝

यस्अलून-क मा ज़ा उहिल्-ल लहुम् क़ुल् उहिल्-ल लकुमुत्तय्यिबातु व मा अ़ल्लम्तुम् मिनल्-जवारिहि मुकल्लिबी-न तुअ़ल्लिमूनहुन्-न मिम्मा अ़ल्ल-मकुमुल्लाहु फ़-कुलू मिम्मा अम्सक्-न अ़लैकुम् वज़्कुरुस्मल्लाहि अ़लैहि वत्तक़ुल्ला-ह इन्नल्ला-ह सरीअ़ुल्-हिसाब (4)	तुझसे पूछते हैं कि क्या चीज़ उनके लिये हलाल है? कह दे तुमको हलाल हैं सुथरी चीज़ें, और जो सधाओ शिकारी जानवर शिकार पर दौड़ाने को कि उनको सिखाते हो उसमें से जो अल्लाह ने तुमको सिखाया है, सो खाओ उसमें से जो पकड़ रखें तुम्हारे वास्ते, और अल्लाह का नाम लो उसपर, और डरते रहो अल्लाह से, बेशक अल्लाह जल्द लेने वाला है हिसाब। (4)

इस आयत के मज़मून का पीछे से संबन्ध

पहली आयात में हलाल व हराम जानवरों का ज़िक्र था, इस आयत में इसी मामले के मुताल्लिक़ एक सवाल का जवाब है। कुछ सहाबा-ए-किराम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से शिकारी कुत्ते और बाज़ से शिकार करने का हुक्म मालूम किया था, इस आयत में उसका जवाब ज़िक्र हुआ है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

लोग आप से पूछते हैं कि (कुत्ते और बाज़ के शिकार किये हुए जानवरों में से) क्या-क्या (जानवर) उनके लिए हलाल किए गये हैं (यानी जितने हलाल शिकार ज़िबह करने से हलाल हो जाते हैं क्या कुत्ते और बाज़ के शिकार करने से वे सब हलाल रहते हैं या उनमें से कुछ ख़ास जानवर हलाल होते हैं, या बिल्कुल कोई हलाल नहीं होता। और जो हलाल होते हैं तो क्या उसके लिये कुछ शर्त भी है?) आप (जवाब में) फ़रमा दीजिए कि तुम्हारे लिये तमाम हलाल जानवर (जो शिकार के ज़रिये पहले से हलाल हैं, वे सब कुत्ते और बाज़ के ज़रिये शिकार करने से भी) हलाल रखे हैं। (यह सवाल के पहले भाग का जवाब है, आगे दूसरे भाग का जवाब यह है कि कुत्ते और बाज़ के ज़रिये किये हुए शिकार हलाल होने के लिये कुछ शर्तें हैं, वो यह कि) जिन शिकारी जानवरों को (जैसे कुत्ता, बाज़ वग़ैरह) तुम (ख़ास तौर पर जिसका बयान आगे आता है) तालीम दो (यह एक शर्त है), और तुम उनको (शिकार पर) छोड़ो भी (यह दूसरी शर्त है), और उनको (जो तालीम देना ऊपर ज़िक्र किया गया है) उस तरीक़े से तालीम दो जो तुमको अल्लाह तआ़ला ने (शरीअ़त में) तालीम दिया है, (वह तरीक़ा यह है कि कुत्ते को तो यह तालीम दी जाये कि शिकार पकड़कर खाये नहीं, और बाज़ को यह तालीम दी जाये कि जब उसको बुलाओ अगरचे वह शिकार के पीछे जा रहा हो फ़ौरन वापस आ जाये, यह पहली शर्त का बयान है) तो ऐसे शिकारी जानवर जिस (शिकार) को तुम्हारे लिए पकड़ें उसको खा लो (यह तीसरी शर्त है जिसकी पहचान और निशानी तालीम देने के तरीक़े में बयान हो चुकी है, सो अगर कुत्ता उस शिकार को खाने लगे या बाज़ बुलाने से वापस न आये तो समझा जायेगा कि जब यह जानवर इसके कहने में नहीं तो इन्होंने शिकार भी इसके लिये नहीं पकड़ा बल्कि ख़ुद अपने लिये पकड़ा है) और (जब शिकार पर उस शिकारी जानवर को छोड़ने लगो तो) उस (जानवर) पर (यानी उसके छोड़ने के वक़्त) अल्लाह का नाम भी लिया करो (यानी बिस्मिल्लाह पढ़कर छोड़ो। यह चौथी शर्त है) और (तमाम बातों में) अल्लाह से डरते रहा करो, (जैसे शिकार में ऐसे व्यस्त मत हो जाओ कि नमाज़ वग़ैरह से ग़फ़लत हो जाये, या इतनी हिर्स मत करो कि शिकार के हलाल होने की शर्तों के बग़ैर भी उस जानवर को खा जाओ) बेशक अल्लाह तआ़ला जल्दी हिसाब लेने वाले हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ऊपर बयान हुए जवाब व सवाल में शिकारी कुत्ते और बाज़ वग़ैरह के ज़रिये शिकार हलाल होने के लिये चार शर्तें ज़िक्र की गयी हैं:

अव्वल यह कि कुत्ता या बाज़ सिखाया और सधाया हुआ हो और सिखाने सधाने का यह उसूल क़रार दिया है कि जब तुम कुत्ते को शिकार पर छोड़ो तो वह शिकार पकड़कर तुम्हारे पास ले आये, ख़ुद उसको खाने न लगे। और बाज़ के लिये यह उसूल मुक़र्रर किया कि जब तुम उसको वापस बुलाओ तो वह फ़ौरन आ जाये अगरचे वह शिकार के पीछे जा रहा हो। जब यह शिकारी जानवर ऐसे सध जायें तो इससे साबित होगा कि वो जो शिकार करते हैं तुम्हारे लिये करते हैं, अपने लिये नहीं। अब उन शिकारी जानवरों का शिकार ख़ुद तुम्हारा शिकार समझा जायेगा। और अगर किसी वक़्त वे इस तामील (हुक्म मानने) के ख़िलाफ़ करें, मसलन कुत्ता ख़ुद शिकार को खाने लगे या बाज़ तुम्हारे बुलाने पर वापस न आये तो यह शिकार तुम्हारा नहीं रहा, इसलिये इसका खाना जायज़ नहीं।

दूसरी शर्त यह है कि तुम फ़ौरन अपने इरादे से कुत्ते को या बाज़ को शिकार के पीछे छोड़ो। यह न हो कि वे ख़ुद-बख़ुद किसी शिकार के पीछे दौड़कर उसको शिकार कर लें। उक्त आयत में इस शर्त का बयान लफ़्ज़ **मुकल्लिबी-न** से किया गया है। यह लफ़्ज़ दर अस्ल **तकलीब** से निकला है जिसके असली मायने कुत्तों को सिखलाने के हैं। फिर आ़म शिकारी जानवरों को सिखलाने और शिकार पर छोड़ने के मायने में भी इस्तेमाल होने लगा। **जलालैन** के लेखक इस जगह मुकल्लिबीन की तफ़सीर **इरसाल** से करते हैं, जिसके मायने हैं शिकार पर छोड़ना। और **तफ़सीरे क़ुर्तुबी** में भी यह क़ौल नक़ल किया गया है।

तीसरी शर्त यह है कि शिकारी जानवर शिकार को ख़ुद न खाने लगें बल्कि तुम्हारे पास ले आयें। इस शर्त का बयान **"मिम्मा अम्सक्-न अ़लैकुम"** (जो पकड़ रखें तुम्हारे वास्ते) से हुआ है।

चौथी शर्त यह है कि जब शिकारी कुत्ते या बाज़ को शिकार पर छोड़ो तो बिस्मिल्लाह कहकर छोड़ो। जब ये चारों शर्तें पूरी हों तो अगर जानवर तुम्हारे पास आने तक दम तोड़ चुका हो तो भी हलाल है, ज़िबह करने की ज़रूरत नहीं, वरना बग़ैर ज़िबह के तुम्हारे लिये हलाल न होगा।

इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक एक पाँचवीं शर्त यह भी है कि वह शिकारी जानवर शिकार को ज़ख़्मी भी कर दे। इस शर्त की तरफ़ लफ़्ज़ "जवारिहि" में इशारा मौजूद है।

मसलाः- यह हुक्म उन जंगली और ग़ैर-पालतू जानवरों का है जो अपने क़ब्ज़े में न हों, और अगर किसी जंगली जानवर को अपने क़ाबू में कर लिया गया है तो वह बग़ैर बाक़ायदा ज़िबह के हलाल नहीं होगा।

आयत के आख़िर में यह हिदायत भी कर दी गयी है कि शिकार जानवर के ज़रिये अल्लाह तआला जल्ल शानुहू ने हलाल तो कर दिया है, मगर शिकार के पीछे लगकर नमाज़ और ज़रूरी शरई अहकाम से ग़फ़लत बरतना जायज़ नहीं।

اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ؕ وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ ۪ وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ ۫ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَاۤ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا مُتَّخِذِيْۤ اَخْدَانٍ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ ۫ وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ۟

अल्यौ-म उहिल्-ल लकुमुत्तय्यिबातु, व तआमुल्लज़ी-न ऊतुल्-किता-ब हिल्लुल्-लकुम् व तआमुकुम् हिल्लुल्-लहुम् वल्मुह्सनातु मिनल्-मुअ्मिनाति वल्मुह्सनातु मिनल्लज़ी-न ऊतुल्-किता-ब मिन् क़ब्लिकुम् इज़ा आतैतुमूहुन्-न उजूरहुन्-न मुह्सिनी-न ग़ै-र मुसाफ़िही-न व ला मुत्तख़िज़ी अख़्दानिन्, व मंय्यक्फ़ुर् बिल्ईमानि फ़-क़द् हबि-त अ-मलुहू व हु-व फ़िल्-आख़ि-रति मिनल्-ख़ासिरीन (5) ✿	आज हलाल हुईं तुमको सब सुथरी चीज़ें, और अहले किताब का खाना तुमको हलाल है और तुम्हारा खाना उनको हलाल है, और हलाल हैं तुमको पाकदामन औरतें मुसलमान और पाकदामन औरतें उनमें से जिनको दी गई किताब तुमसे पहले जब दो उनको मेहर उनके क़ैद में लाने को, न मस्ती निकालने को और न छुपी आशनाई करने को, और जो मुन्किर हुआ ईमान से तो ज़ाया हुई मेहनत उसकी और आख़िरत में वह घाटे वालों में है। (5) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आज (तुम पर जैसे हमेशा के लिये दीनी इनाम हुआ कि दीन को मुकम्मल करने से सम्मानित किये गये इसी तरह हमेशा के लिये एक माक़ूल बहुत बड़ा दुनियावी इनाम भी हुआ कि) तुम्हारे लिए हलाल चीज़ें (जो कि इससे पहले हलाल कर दी गयी थीं हमेशा के लिये) हलाल रखी गईं (कि कभी निरस्त न होंगी) और जो लोग (तुमसे पहले आसमानी) किताब दिये गये हैं (यानी यहूदी व ईसाई) उनका खाना (यानी ज़िबह किया हुआ जानवर) तुमको हलाल है, और (उसका हलाल होना ऐसा ही यक़ीनी है जैसा कि) तुम्हारा खाना (यानी ज़िबह किया हुआ)

उनको हलाल है। और पारसा औरतें भी जो मुसलमान हों (तुमको हलाल हैं) और (जैसा कि मुसलमान औरतों का हलाल होना यक़ीनी है इसी तरह) पारसा औरतें उन लोगों में से भी जो तुमसे पहले (आसमानी) किताब दिये गये हैं (तुमको हलाल हैं) जबकि तुम उनका मुआवज़ा दे दो, (यानी मेहर देना अगरचे शर्त नहीं मगर वाजिब है, और उक्त औरतें जो हलाल की गयी हैं तो) इस तरह से कि तुम (उनको) बीवी बनाओ (यानी निकाह में लाओ, जिनकी शर्तें शरीअत में बयान हुई हैं) न तो ऐलानिया बदकारी करो न ख़ुफ़िया ताल्लुक़ात पैदा करो, (ये सब शरीअत के अहकाम हैं जिन पर ईमान लाना फ़र्ज़ है) और जो शख़्स ईमान (लाने की चीज़ों) के साथ कुफ़्र करेगा (जैसे निश्चित हलाल चीज़ों के हलाल होने या निश्चित हराम चीज़ों के हराम होने का इनकार करेगा) तो उस शख़्स का (हर नेक) अमल बरबाद (और अकारत) हो जाएगा और वह आख़िरत में बिल्कुल घाटा उठाने वाला में होगा (बस हलाल को हलाल समझो और हराम को हराम समझो)।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः मायदा की पहली आयत में **बहीमतुल-अन्आम** यानी पालतू जानवर, बकरी, गाय, भैंस वग़ैरह का हलाल होना बयान फ़रमाया गया है और तीसरी आयत में नौ क़िस्म के हराम जानवरों की तफ़सील है, मगर इस तफ़सील से इसके शुरूआती जुमले में इस पूरे बाब का ख़ुलासा इस तरह बयान फ़रमा दिया है कि इसमें जानवरों के हलाल व हराम होने का ख़ास्सा भी मालूम हो गया, और इसका एक मेयार व उसूल भी। इरशाद है:

اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ.

यानी आज तुम्हारे लिये हलाल हुई सब साफ़ सुथरी चीज़ें।

आज से मुराद वह दिन है जिसमें यह आयत और इससे पहली आयत नाज़िल हुई हैं, यानी हज्जतुल-विदा सन् 10 हिजरी का अरफ़े का दिन। मतलब यह है कि जैसे आज तुम्हारे लिये दीने कामिल मुकम्मल कर दिया गया और अल्लाह तआला की नेमत तुम पर मुकम्मल हो गयी, इसी तरह अल्लाह तआला की पाकीज़ा चीज़ें जो पहले भी तुम्हारे लिये हलाल थीं, हमेशा के लिये हलाल रखी गयीं और उनके मन्सूख़ (रद्द व निरस्त) होने का गुमान व संदेह ख़त्म हुआ। क्योंकि वही का सिलसिला ख़त्म होने वाला है।

इस जुमले में तय्यिबात (पाक चीज़ों) के हलाल होने का बयान है और एक दूसरी आयत में इरशाद है:

يُحِلُّ لَهُمُ الطَّيِّبٰتِ وَيُحَرِّمُ عَلَيْهِمُ الْخَبٰٓئِثَ.

यानी हलाल करता है उनके लिये तय्यिबात को और हराम करता है उन पर ख़बीस और चीज़ें। इसमें तय्यिबात के मुक़ाबले में ख़बाईस लाकर इन दोनों लफ़्ज़ों की हक़ीक़त वाज़ेह कर दी गयी।

लुग़त में तय्यिबात साफ़-सुथरी और पसन्दीदा चीज़ों को कहा जाता है और ख़बाईस इसके मुक़ाबिल की गन्दी और क़ाबिले नफ़रत चीज़ों के लिये बोला जाता है। इसलिये आयत के इस जुमले ने यह बतला दिया कि जितनी चीज़ें साफ़-सुथरी मुफ़ीद और पाकीज़ा हैं वो इनसान के लिये हलाल की गयीं, और जो गन्दी क़ाबिले नफ़रत और नुक़सानदेह हैं वो हराम की गयी हैं। वजह यह है कि इनसान दूसरे जानवरों की तरह नहीं है कि इसका मक़सदे ज़िन्दगी दुनिया में खाने, पीने, सोने, जागने और जीने मरने तक सीमित हो, इसको क़ुदरत ने कायनात का मख़दूम किसी ख़ास मक़सद से बनाया है, और वह आला मक़सद पाकीज़ा अख़्लाक़ के बग़ैर हासिल नहीं हो सकता। इसी लिये बद-अख़्लाक़ इनसान दर हक़ीक़त इनसान कहलाने के क़ाबिल नहीं।

इसी लिये क़ुरआने करीम ने ऐसे लोगों के मुताल्लिक़ फ़रमाया "बल् हुम् अज़ल्लु" यानी वे पशुओं से भी ज़्यादा गुमराह हैं। और जब इनसान की इनसानियत का मदार अख़्लाक़ के सुधार और बेहतरी पर हो तो ज़रूरी है कि जितनी चीज़ें इनसानी अख़्लाक़ को गन्दा और ख़राब करने वाली हैं उनसे इसका मुकम्मल परहेज़ कराया जाये। इनसान के अख़्लाक़ पर उसके आस-पास की चीज़ों और उसके समाज का असर पड़ना आसानी से समझ में आने वाली चीज़ है जिसको हर शख़्स जानता है। और यह ज़ाहिर है कि जब आस-पास की चीज़ों से इनसानी अख़्लाक़ प्रभावित होते हैं तो जो चीज़ें इनसान के बदन का हिस्सा और अंग बनती हैं उनसे अख़्लाक़ किस क़द्र प्रभावित होंगे। इसलिये खाने पीने की सारी चीज़ों में इसकी एहतियात लाज़िमी हुई। चोरी, डाका, रिश्वत, सूद, जुए वग़ैरह की हराम आमदनी जिसके बदन का हिस्सा बनेगी वह लाज़िमी तौर पर उसको इनसानियत से दूर और शैतानियत से क़रीब कर देगी। इसी लिये क़ुरआने करीम का इरशाद है:

يَاَيُّهَا الرُّسُلُ كُلُوْا مِنَ الطَّيِّبٰتِ وَاعْمَلُوْا صَالِحًا.

नेक अ़मल के साथ हलाल रोज़ी खाने का हुक्म दिया गया है। क्योंकि हलाल खाने के बग़ैर नेक अ़मल के बारे में सोचा नहीं जा सकता। ख़ास तौर पर गोश्त जो इनसान के बदन का अहम अंग बनता है उसमें इसकी एहतियात सबसे ज़्यादा ज़रूरी है कि कोई ऐसा गोश्त उसकी ग़िज़ा में दाख़िल न हो जो उसके अख़्लाक़ को ख़राब करे। इसी तरह वह गोश्त जो जिस्मानी तौर पर इनसान के लिये नुक़सानदेह है कि बीमारी और हलाकत के जरासीम उसमें हैं, उससे इनसान के परहेज़ का ज़रूरी होना तो सभी जानते हैं। जितनी चीज़ें शरीअ़त ने ख़बाईस (बुरी और गन्दी) क़रार दी हैं वो यक़ीनी तौर पर इनसान के जिस्म या रूह या दोनों को ख़राब करने वाली और इनसानी जान या अख़्लाक़ को तबाह करने वाली हैं। इसलिये उनको हराम कर दिया गया। उसके मुक़ाबले में तय्यिबात (पाक और अच्छी चीज़ों) से इनसान के जिस्म व रूह की तरबियत और उम्दा अख़्लाक़ का जन्म व तरक़्क़ी होती है, उनको हलाल क़रार दिया गया। ग़र्ज़ कि क़ुरआने पाक के जुमले "उहिलू-ल लकुमुत्तय्यिबातु" ने हलाल व हराम होने का फ़ल्सफ़ा भी बतला दिया और उसूल भी।

अब यह बात कि कौनसी चीज़ें तय्यिबात यानी साफ़-सुथरी, मुफ़ीद और पसन्दीदा हैं और

कौनसी ख़बाईस यानी गन्दी, नुक़सानदेह और क़ाबिले नफ़रत हैं, इसका असल फ़ैसला सलीम तबीयतों की रुचि व नफ़रत पर है। यही वजह है कि जिन जानवरों को इस्लाम ने हराम क़रार दिया है, हर ज़माने के सही तबीयत वाले इनसान उनको गन्दा और क़ाबिले नफ़रत समझते रहे हैं, जैसे मुर्दार जानवर, ख़ून। अलबत्ता कई बार जाहिलाना रस्में तबीयत पर ग़ालिब आ जाती हैं तो अच्छे-बुरे की तमीज़ उठ जाती है, या बाज़ चीज़ों की गंदगी व बुराई छुपी होती है, ऐसे मामलात में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का फ़ैसला सब के लिये हुज्जत है, क्योंकि इनसानी अफ़राद में सबसे ज़्यादा सही व सलीम तबीयत वाले इनसान अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम हैं जिनको हक़ तआ़ला ने मख़्सूस तौर पर सलीम फ़ितरत से नवाज़ा और उनकी तरबियत की ख़ुद ज़िम्मेदारी उठाई है। उनके आस-पास अपने फ़रिश्तों के पहरे लगाये जिससे उनके दिल व दिमाग़ और अख़्लाक़ किसी ग़लत माहौल से मुतास्सिर (प्रभावित) नहीं हो सकते। उन्होंने जिन चीज़ों को ख़बाईस (बुरी और गन्दी) क़रार दिया वो हक़ीक़त में ख़बाईस हैं और जिनको तय्यिबात (पाक और अच्छी) समझा वो हक़ीक़त में तय्यिबात हैं।

चुनाँचे नूह अ़लैहिस्सलाम के ज़माने से ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने तक हर पैग़म्बर ने मुर्दार जानवर और सुअर वग़ैरह को हराम करने का अपने अपने वक़्त में ऐलान फ़रमाया है। जिससे मालूम हुआ कि ये चीज़ें ऐसी ख़बाईस (गन्दी, ख़राब और बुरी) हैं कि हर ज़माने के सही व सलामती वाली तबीयत रखने वाले हज़रात ने इनको गन्दी और नुक़सानदेह चीज़ समझा है।

हज़रत शाह वलीयुल्लाह क़ुद्दि-स सिर्रुहू देहलवी ने हुज्जतुल्लाहिल-बालिग़ा में बयान फ़रमाया है कि जितने जानवर इस्लामी शरीअ़त ने हराम क़रार दिये हैं, इन सब पर ग़ौर किया जाये तो सिमट कर ये सब दो उसूलों के तहत आ जाते हैं। एक यह कि कोई जानवर अपनी फ़ितरत व तबीयत के एतिबार से ख़बीस (बुरा, नुक़सानदेह और गन्दा) हो। दूसरे यह कि उसके ज़िबह का तरीक़ा ग़लत हो, जिसका नतीजा यह होगा कि वह ज़बीहा (ज़िबह किए हुए) के बजाय मैता यानी मुर्दार क़रार दिया जायेगा।

सूरः मायदा की तीसरी आयत में नौ चीज़ों को हराम बतलाया है। उनमें ख़िन्ज़ीर (सुअर) पहली क़िस्म में दाख़िल है। बाक़ी आठ चीज़ें दूसरी क़िस्म में। क़ुरआने करीम ने "व युहर्रिमु अ़लैहिमुल-ख़बाइ-स" फ़रमाकर संक्षिप्त तौर पर तमाम ख़बीस जानवरों के हराम होने का हुक्म दिया और इसकी तफ़सील में से चन्द चीज़ें क़ुरआन ने स्पष्ट रूप से बयान फ़रमा दीं। जैसे सुअर का गोश्त और बहता ख़ून वग़ैरह। बाक़ी चीज़ों का बयान रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने किसी जानवर के ख़बीस होने की एक निशानी यह बतलाई कि किसी क़ौम के बतौर अ़ज़ाब के जिस जानवर की शक्ल में बिगाड़ और तब्दील कर दिया गया हो तो यह निशानी इसकी है कि यह जानवर तबई तौर पर ख़बीस है कि जिन लोगों पर हक़ तआ़ला का ग़ज़ब नाज़िल हुआ उनको इस जानवर की शक्ल दी गयी। मसलन क़ुरआने करीम में है:

وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ

यानी कुछ क़ौमों को ख़िन्ज़ीर (सुअर) और बन्दर की शक्ल में बतौर अ़ज़ाब के बदला गया है। जिससे साबित हुआ कि जानवरों की ये दोनों क़िस्में अपनी तबीयत के हिसाब से ख़बाईस (बुरी और गन्दी चीज़ों) में दाख़िल हैं। उनको बाक़ायदा ज़िबह भी कर दिया जाये तो भी हलाल नहीं हो सकते। और बहुत से जानवर ऐसे भी हैं कि कामों और निशानियों से उनका ख़बीस होना आ़म तबीयतें ख़ुद भी महसूस कर लेती हैं। मसलन दरिन्दे जानवर, जिनका काम ही दूसरे जानवरों को ज़ख़्मी करना, फाड़ना, खाना और सख़्त-दिली है।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से भेड़िये के मुताल्लिक़ किसी ने मालूम किया तो फ़रमाया कि क्या कोई इनसान उसको खा सकता है? इसी तरह बहुत से ऐसे जानवर हैं जिनकी ख़सलत दूसरों को तकलीफ़ पहुँचाना, चीज़ों को उचक लेना है। जैसे साँप, बिच्छू, मक्खी या चील और बाज़ वग़ैरह।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक ज़ाब्ते (उसूल और नियम) के तौर पर बयान फ़रमाया कि हर दरिन्दा जानवर जो दाँतों से फाड़ खाता है, जैसे शेर, भेड़िया वग़ैरह, और परिन्दों में वह जानवर जो अपने पंजे से शिकार करते हैं जैसे बाज़, शकरा वग़ैरह ये सब हराम हैं। या ऐसे जानवर जिनकी तबीयत में कमीनगी, ज़िल्लत या गंदगियों के साथ मुलव्वस होना है, जैसे चूहा या मुर्दार खाने वाला जानवर या गधा वग़ैरह, ये सब चीज़ें ऐसी हैं कि इन जानवरों के तबई गुण और उनका नुक़सानदेह होना हर इनसान जो तबीयत की मामूली सलामती रखता हो, महसूस करता है।

ख़ुलासा यह है कि जिन जानवरों को इस्लामी शरीअ़त ने हराम क़रार दिया है उनमें से एक क़िस्म तो वह है जिनमें ज़ाती तौर पर बुराई और गंदगी पाई जाती है। दूसरी क़िस्म वह है कि उनकी ज़ात में कोई बुराई और गंदगी नहीं, मगर जानवरों के ज़िबह करने का जो तरीक़ा अल्लाह तआ़ला ने मुक़र्रर फ़रमा दिया है उस तरीक़े पर उसको ज़िबह नहीं किया गया, चाहे सिरे से ज़िबह ही नहीं किया गया हो, जैसे झटका करके मारा हो या चोट के ज़रिये मारा हुआ जानवर, या ज़िबह तो किया मगर उस पर अल्लाह के नाम के बजाय किसी ग़ैरुल्लाह का नाम लिया, या किसी का भी न लिया और जान-बूझकर अल्लाह के नाम को ज़िबह के वक़्त छोड़ दिया तो यह ज़िबह भी शरई तौर पर मोतबर नहीं, बल्कि ऐसा ही है जैसे किसी जानवर को बग़ैर ज़िबह के मार दिया हो।

यहाँ एक बात ख़ास तौर से क़ाबिले ग़ौर है कि इनसान जो कुछ खाता-पीता है वह सब अल्लाह तआ़ला की दी हुई नेमतें हैं। मगर जानवरों के सिवा और किसी चीज़ के खाने पकाने पर यह पाबन्दी नहीं है कि 'अल्लाहु अक्बर' या 'बिस्मिल्लाह' कहकर ही खाया पकाया जाये, इसके बग़ैर वह हलाल ही न हो। ज़्यादा से ज़्यादा यह है कि हर चीज़ खाने-पीने के वक़्त "बिस्मिल्लाह" कहना मुस्तहब क़रार दिया गया और जान-बूझकर कोई इस वक़्त अल्लाह का नाम छोड़ दे तो जानवर को मुर्दार और हराम क़रार दिया गया इसमें क्या हिक्मत है।

ग़ौर किया जाये तो फ़र्क़ स्पष्ट है कि जानदारों की जानें एक हैसियत से सब बराबर हैं।

इसलिये एक जानदार के लिये दूसरे जानदार को फ़ना करना और ज़िबह करके खा लेना बज़ाहिर जायज़ न होना चाहिये। अब जिनके लिये यह जायज़ किया गया तो उन पर अल्लाह तआ़ला का एक भारी इनाम है। इसलिये जानवर को ज़िबह करने के वक़्त उस ख़ुदाई नेमत का ध्यान व ख़्याल और शुक्र का अदा करना ज़रूरी क़रार दिया गया। बख़िलाफ़ ग़ल्ला, दाना, फल वग़ैरह कि उनकी पैदाईश ही इसलिये है कि इनसान उनको फ़ना करके अपनी ज़रूरतें पूरी करे। इसलिये उन पर सिर्फ़ बिस्मिल्लाह कहना मुस्तहब के दर्जे में रखा गया है, वाजिब और ज़रूरी नहीं किया गया।

इसके अ़लावा एक वजह यह भी है कि ज़माना-ए-जाहिलीयत (इस्लाम आने से पहले के दौर) से यह रस्म जारी थी कि मुश्रिक लोग जानवरों के ज़िबह के वक़्त अपने बुतों के नाम लिया करते थे। इस्लामी शरीअ़त ने उनकी इस काफ़िराना रस्म को एक बेहतरीन इबादत में तब्दील कर दिया कि अल्लाह का नाम लेना ज़रूरी क़रार दिया। और इस मुश्रिकाना रस्म को मिटाने की मुनासिब सूरत यही थी कि ग़लत नाम के बजाय कोई सही नाम तजवीज़ कर दिया जाये, वरना चली हुई रस्म व आ़दत का छूटना मुश्किल होता। यहाँ तक आयत के पहले जुमले की वज़ाहत थी। दूसरा जुमला यह है:

وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ لَّكُمْ وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ

यानी अहले किताब का खाना तुम्हारे लिये हलाल है, और तुम्हारा खाना अहले किताब के लिये हलाल।

इस जगह सहाबा व ताबिईन की बहुत बड़ी जमाअ़त के नज़दीक खाने से मुराद ज़बीहा (ज़िबह किये हुए) जानवर हैं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास, हज़रत अबू दर्दा, इब्राहीम, क़तादा, सुद्दी, ज़स्हाक, मुजाहिद रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से यही मन्क़ूल है। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी व जस्सास)

क्योंकि दूसरी क़िस्म के खानों में अहले किताब (ईसाई व यहूदी), मूर्ति पूजक और मुश्रिक लोग सब बराबर हैं कि रोटी, आटा, दाल, चावल, फल वग़ैरह जिनमें ज़िबह की ज़रूरत नहीं, वह किसी भी जायज़ तरीक़े पर हासिल हो तो मुसलमान को उसका खाना जायज़ है और मुसलमानों से उनको मिले तो उनके लिये हलाल है। इसलिये ख़ुलासा-ए-मज़मून इस जुमले का यह हुआ कि अहले किताब का ज़बीहा मुसलमानों के लिये और मुसलमान का ज़बीहा अहले किताब के लिये हलाल है।

अब इस जगह चन्द मसाईल क़ाबिले ग़ौर हैं- अव्वल यह कि अहले किताब क़ुरआन व सुन्नत की परिभाषा में कौन लोग हैं? किताब से क्या मुराद है? और क्या अहले किताब होने के लिये यह भी ज़रूरी है कि वे लोग अपनी किताब पर सही तौर से ईमान व अ़मल रखते हों। इसमें यह तो ज़ाहिर है कि किताब के लुग़वी मायने यानी हर लिखा हुआ वर्क़ तो मुराद हो नहीं सकता। वही किताब मुराद हो सकती है जो अल्लाह की तरफ़ से आई हो। इसलिये उम्मत की सर्वसम्मति से किताब से मुराद वह आसमानी किताब है जिसका किताबुल्लाह होना क़ुरआन की तस्दीक़ से यक़ीनी हो। जैसे तौरात, इंजील, ज़बूर, हज़रत मूसा और हज़रत इब्राहीम पर उतरने

वाली कुछ छोटी आसमानी किताबें वग़ैरह। इसलिये वे क़ौमें जो किसी ऐसी किताब पर ईमान रखती और उसको अल्लाह की वही क़रार देती हों जिसका किताबुल्लाह होना क़ुरआन व सुन्नत के यक़ीनी माध्यमों से साबित नहीं। वे क़ौमें अहले किताब में दाख़िल नहीं होंगी, जैसे मक्का के मुश्रिक, आग के पुजारी, बुतों की पूजा करने वाले, हिन्दू, बोध, आर्य, सिख वग़ैरह।

इससे मालूम हुआ कि यहूद व ईसाई जो तौरात व इंजील पर ईमान रखने वाले हैं वे क़ुरआन की इस्तिलाह में अहले किताब में दाख़िल हैं। तीसरी एक क़ौम जिसको साबिईन कहते हैं उनके हालात संदिग्ध और अस्पष्ट हैं। जिन हज़रात के नज़दीक ये लोग हज़रत दाऊद अ़लैहिस्सलाम की ज़बूर पर ईमान रखते हैं वे इनको भी अहले किताब में शामिल क़रार देते हैं और जिनकी तहक़ीक़ यह है कि ज़बूर से इनका कोई ताल्लुक़ नहीं, यह सितारों की पुजारी क़ौम है, वे इनको बुत परस्तों और मजूस के साथ शरीक क़रार देते हैं। बहरहाल यक़ीनी तौर पर जिनको सर्वसम्मति से अहले किताब कहा जाता है वे यहूदी व ईसाई हैं। तो क़ुरआने हकीम के इस हुक्म का हासिल यह हुआ कि यहूद व ईसाईयों का ज़बीहा (ज़िबह किया हुआ हलाल जानवर) मुसलमानों के लिये और मुसलमानों का ज़बीहा उनके लिये हलाल है।

अब रहा यह मामला कि यहूदियों व ईसाईयों को अहले किताब कहने और समझने के लिये क्या यह शर्त है कि वे सही तौर पर असली तौरात व इंजील पर अ़मल रखते हों, या कमी-बेशी की गयी और असल हालत से बदली हुई तौरात और इंजील का इत्तिबा करने वाले और ईसा व मरियम को ख़ुदा का शरीक क़रार देने वाले भी अहले किताब में दाख़िल हैं। सो क़ुरआने करीम की बेशुमार वज़ाहतों से स्पष्ट है कि अहले किताब होने के लिये सिर्फ़ इतनी बात काफ़ी है कि वे किसी आसमानी किताब के क़ायल हों और उसकी इत्तिबा (पैरवी और अनुसरण) करने के दावेदार हों। चाहे वे उसके इत्तिबा में कितनी ही गुमराहियों में जा पड़े हों।

क़ुरआने करीम ने जिनको अहले किताब का लक़ब दिया उन्हीं के बारे में यह भी जगह-जगह इरशाद फ़रमाया कि ये लोग अपनी आसमानी किताबों में रद्दोबदल करते हैं। फ़रमायाः

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ.

और यह भी फ़रमाया कि यहूदियों ने हज़रत उज़ैर अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा का बेटा क़रार दे दिया और ईसाईयों ने हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को। फ़रमायाः

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ۨابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ.

इन हालात व सिफ़ात के बावजूद जब क़ुरआन ने उनको अहले किताब क़रार दिया है तो मालूम हुआ कि यहूदी व ईसाई जब तक यहूदियत व ईसाईयत को बिल्कुल न छोड़ दें वे अहले किताब में दाख़िल हैं। चाहे वे कितने ही बुरे अ़क़ीदों और ग़लत आमाल में मुब्तला हों।

इमाम जस्सास रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब अहकामुल-क़ुरआन में नक़ल किया है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के दौरे ख़िलाफ़त में आपके किसी आ़मिल या गवर्नर

ने एक ख़त लिखकर यह मालूम किया कि यहाँ कुछ लोग ऐसे हैं जो तौरात पढ़ते हैं और हफ़्ते के दिन की ताज़ीम (सम्मान) भी यहूद की तरह करते हैं, मगर क़ियामत पर उनका ईमान नहीं, ऐसे लोगों के साथ क्या मामला किया जाये। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब में लिखा कि वे अहले किताब ही का एक फ़िर्क़ा समझे जायेंगे।

सिर्फ़ नाम के यहूदी व ईसाई जो वास्तव में दहरिये हैं वे इसमें दाख़िल नहीं

आजकल यूरोप के ईसाईयों और यहूदियों में एक बहुत बड़ी तादाद ऐसे लोगों की भी है जो अपनी जनगणना के एतिबार से यहूदी या ईसाई कहलाते हैं मगर हक़ीक़त में वे ख़ुदा के वजूद और किसी मज़हब ही के क़ायल नहीं। न तौरात व इंजील को ख़ुदा की किताब मानते हैं और न मूसा व ईसा अ़लैहिमस्सलाम को अल्लाह का नबी व पैग़म्बर तस्लीम करते हैं। यह ज़ाहिर है कि वह शख़्स मर्दुम-शुमारी के नाम की वजह से अहले किताब के हुक्म में दाख़िल नहीं हो सकते।

ईसाईयों के बारे में जो हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने फ़रमाया कि उनका ज़बीहा (ज़िबह किया हुआ) हलाल नहीं। इसकी वजह यह बतलाई कि ये लोग ईसाई दीन में से सिवाय शराब पीने के और किसी चीज़ के क़ायल नहीं। हज़रत अ़ली कर्रमुल्लाह वज्हहू का इरशाद यह है कि:

روى ابن الجوزى بسنده عن علىؓ قال لا تاكلوا من ذبائح نصارى بنى تغلب فانهم لم يتمسكوا من النصرانية بشىء الّاشربهم الخمروروٰاه الشافعى بسند صحيح عنه. (تفسير مظهرى ص ٣٤، جلد ٣ مائدة)

इब्ने जोज़ी ने सही सनद के साथ हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह क़ौल नक़ल किया है कि ईसाई बनी तग़लिब के ज़िबह किये हुए को न खाओ। क्योंकि उन्होंने ईसाई मज़हब में से शराब पीने के सिवा कुछ नहीं लिया। इमाम शाफ़ई ने भी सही सनद के साथ यह रिवायत नक़ल की है।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू को बनी तग़लिब के मुताल्लिक़ यही मालूमात थीं कि वे बेदीन हैं, ईसाई नहीं, अगरचे ईसाई कहलाते हैं। इसलिये उनके ज़बीहे (ज़िबह किये हुए जानवर) से मना फ़रमाया। सहाबा व ताबिईन की एक बड़ी जमाअ़त की तहक़ीक़ यह थी कि ये भी आ़म ईसाईयों की तरह हैं, दीन के पूरी तरह मुन्किर नहीं, इसलिये उन्होंने इनका ज़बीहा भी हलाल क़रार दिया।

وقال جمهور الامة ان ذبيحة كل نصرانى حلال سواء كان من بنى تغلب اوغيرهم وكذالك اليهود.

(تفسير قرطبى ص٧٨، جلد ٦)

और उम्मत की एक बड़ी जमाअ़त कहती है कि ईसाईयों का ज़बीहा हलाल है। चाहे बनी तग़लिब में से हो, या उनके अ़लावा किसी दूसरे क़बीले और जमाअ़त से हो। इसी तरह हर

यहूदी का ज़बीहा भी हलाल है।

खुलासा यह है कि जिन ईसाईयों के मुताल्लिक़ यह बात यक़ीनी तौर पर मालूम हो जाये कि वे ख़ुदा के वजूद ही को नहीं मानते या हज़रत मूसा व ईसा अ़लैहिमस्सलाम को अल्लाह का नबी नहीं मानते, वे अहले किताब के हुक्म में नहीं।

अहले किताब के खाने से क्या मुराद है?

तआ़म के लुग़वी मायने खाने की चीज़ के हैं। जिसमें अ़रबी लुग़त के हिसाब से हर क़िस्म की खाने की चीज़ें दाख़िल हैं। लेकिन जम्हूरे उम्मत के नज़दीक इस जगह तआ़म (खाने) से मुराद सिर्फ़ अहले किताब के ज़िबह किये हुए जानवरों का गोश्त है। क्योंकि गोश्त के अ़लावा खाने की दूसरी चीज़ों में अहले किताब और दूसरे काफ़िरों में कोई इम्तियाज़ और फ़र्क़ नहीं। खाने पीने की ख़ुश्क चीज़ें- गेहूँ, चना, चावल और फल वग़ैरह हर काफ़िर के हाथ का हलाल व जायज़ है, इसमें किसी का कोई मतभेद नहीं, और जिस खाने में इनसानी कारीगरी का दख़ल है उसमें चूँकि काफ़िरों के बर्तनों और हाथों की पाकी का कोई भरोसा नहीं इसलिये एहतियात इसमें है कि उससे परहेज़ किया जाये। बिना सख़्त ज़रूरत के इस्तेमाल न करें। मगर इसमें जो हाल मुश्रिकों, बुत-परस्तों का है वही अहले किताब का भी है कि नापाकी का संदेह दोनों में बराबर है।

खुलासा यह है कि अहले किताब और दूसरे काफ़िरों के खाने में जो फ़र्क़ शरअ़न हो सकता है वह सिर्फ़ उनके ज़िबह किये हुए जानवरों के गोश्त में है। इसलिये उक्त आयत में उम्मत की सर्वसम्मति से अहले किताब के तआ़म (खाने) से मुराद उनके ज़िबह किये हुए जानवर हैं। इमामे तफ़सीर अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने लिखा है:

والطعام اسم لمايؤكل والذبائح منه وهوههنا خاص بالذبائح عند كثيرمن اهل العلم بالتاويل واماّ ماحرّم من طعامهم فليس بداخل فی عموم الخطاب. (قرطبی ص۷۷، جلد ۶)

तर्जुमाः लफ़्ज़े **तआ़म** हर खाने की चीज़ के लिये बोला जाता है जिसमें ज़िबह किये हुए जानवरों का गोश्त भी दाख़िल है। और इस आयत में तआ़म का लफ़्ज़ ख़ास ज़िबह किये हुए जानवरों के गोश्त के लिये इस्तेमाल किया गया है, अक्सर उलेमा-ए-तफ़सीर के नज़दीक। और अहले किताब के तआ़म (खाने) में से जो चीज़ें मुसलमानों के लिये हराम हैं वे इस उमूमी ख़िताब में दाख़िल नहीं।

इसके बाद इमाम क़ुर्तुबी ने अधिक तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई है:

لاخلاف بین العلماء ان مالایحتاج الی ذبح کالطعام الذی لامحاولة فیه کا لفاکهة والبر جائزا کله اذ لایضر فیه تملك احد والطعام الذی تقع فیه المحاولة علی ضربین احدهما مافیه محاولة صنعة لا تعلق لها بالدّین کخبزة الدقیق وعصره الزّیت ونحوه. فهذا ان تجنب من الذمی فعلی وجه التقذر. والضرب الثانی

التذكية الّتى ذكرنا انها هى اللتى تحتاج الى الدين والنية. فلما كان القياس ان لا تجوز ذبائحهم كما نقول انهم لا صلاة لهم ولا عبادة مقبولة له رخص الله تعالىٰ فى ذبائحهم على هذه الأمة واخرجها النص عن القياس على ماذكرنا من قول ابن عباس. (قرطبى سورة مائدة ص٧٧، جلد ٦)

तर्जुमाः उलेमा के दरमियान इसमें कोई इख़्तिलाफ़ (मतभेद) नहीं कि वे चीज़ें जिनमें ज़िबह की ज़रूरत नहीं होती मसलन वह खाना जिसमें तसर्रुफ़ (उलट-फेर और कारीगरी) नहीं करना पड़ता जैसे मेवा और गन्दुम वग़ैरह, उसका खाना जायज़ है। इसलिये कि उसमें किसी का मालिक बनना बिल्कुल नुक़सानदेह नहीं है। अलबत्ता वह खाना जिसमें इनसान को कुछ अ़मल करना पड़ता है उसकी दो क़िस्में हैं- एक वह जिसमें कोई ऐसा काम करना पड़े जिसका दीन से कोई ताल्लुक़ न हो, मसलन आटे से रोटी बनाना, ज़ैतून से तेल निकालना वग़ैरह, तो काफ़िर ज़िम्मी की ऐसी चीज़ों से अगर कोई बचना चाहे तो वह महज़ तबीयत के नापसन्द करने की बिना पर होगा। और दूसरी क़िस्म वह है जिसमें ज़िबह का अ़मल करना पड़ता है जिसके लिये दीन और नीयत की ज़रूरत है। तो अगरचे क़ियास का तक़ाज़ा यह था कि वह काफ़िर की नमाज़ और इबादतों की तरह उसका ज़िबह का अ़मल भी क़ुबूल न होना चाहिये था, लेकिन अल्लाह ने इस उम्मत के लिये ख़ास तौर पर उनके ज़िबह किये हुए को हलाल कर दिया और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत ने इस मसले को ख़िलाफ़े क़ियास साबित किया है।

ख़ुलासा यह है कि इस आयत में अहले किताब के खाने से मुराद उलेमा-ए-तफ़सीर की सर्वसम्मति से वह खाना है जिसका हलाल होना मज़हब और अ़क़ीदे पर मौक़ूफ़ (निर्भर) है। यानी ज़बीहा। इसी लिये इस खाने में अहले किताब के साथ विशेषता का मामला किया गया, क्योंकि वे भी अल्लाह की भेजी हुई किताबों और पैग़म्बरों पर ईमान के दावेदार हैं अगरचे अपने दीन में उनकी रद्दोबदल ने उनके दावे की सच्चाई को खो दिया। यहाँ तक कि शिर्क व कुफ़्र में मुब्तला हो गये। बख़िलाफ़ बुतों के पुजारी मुश्रिकों के कि वे किसी आसमानी किताब या नबी या रसूल पर ईमान लाने का दावा भी नहीं रखते और जिन किताबों या शख़्सियतों पर उनका ईमान है वे न अल्लाह की भेजी हुई किताबें हैं और न उनका रसूल व नबी होना अल्लाह के किसी कलाम से साबित है।

अहले किताब का ज़बीहा हलाल होने की हिक्मत और वजह

जिस मसले पर बहस चल रही है उसका यह तीसरा सवाल है। इसका जवाब अक्सर सहाबा व ताबिईन हज़रात और तफ़सीर के उलेमा की तरफ़ से यह है कि तमाम काफ़िरों में से अहले किताब (यहूदी व ईसाईयों) का ज़बीहा (ज़िबह किये हुए जानवरों का गोश्त) और उनकी औरतों

से निकाह हलाल क़रार देने की वजह यह है कि उनके दीन में सैंकड़ों रद्दोबदल और कमी-बेशी होने के बावजूद इन दो मसलों में उनका मज़हब भी इस्लाम के बिल्कुल मुताबिक़ है। यानी वे ज़बीहे पर अल्लाह का नाम लेना अ़क़ीदे के तौर पर ज़रूरी समझते हैं। इसके बग़ैर जानवर को मुर्दार और नापाक व हराम क़रार देते हैं।

इसी तरह निकाह के मसले में जिन औरतों से इस्लाम में निकाह हराम है उनके मज़हब में भी हराम है, और जिस तरह इस्लाम में निकाह का ऐलान और गवाहों के सामने होना ज़रूरी है इसी तरह उनके मौजूदा मज़हब में भी यही अहकाम हैं।

इमामे तफ़सीर अ़ल्लामा इब्ने कसीर ने यही क़ौल अक्सर सहाबा व ताबिईन का नक़ल फ़रमाया है। उनकी इबारत यह है:

(وطعام اهل الكتاب) قال ابن عباس وابوامامة ومجاهدوسعيدبن جبيروعكرمة وعطاء والحسن ومكحول وابراهيم النخعي والسدى ومقاتل بن حيان يعني ذبائحهم حلال للمسلمين لانهم يعتقدون تحريم الذبح لغيرالله ولايذكرون على ذبائحهم الاّاسم الله وان اعتقدوا فيه تعالٰى ماهومنزه عند تعالٰى وتقدس.

(ابن كثير: سورة مائدة ١٩ جلد ٣)

तर्जुमाः हज़रत इब्ने अ़ब्बास, अबू उमामा, मुजाहिद, सईद बिन जुबैर, इक्रिमा, अ़ता, हसन, मक्हूल, इब्राहीम नख़ई, सुद्दी और मुक़ातिल बिन हय्यान रह. ने अहले किताब के खाने की तफ़सीर उनके ज़बीहों के साथ की है। और यह मसला मुसलमानों के लिये यहाँ सर्वसम्मति प्राप्त है कि उनके ज़बीहे मुसलमानों के लिये हलाल हैं। क्योंकि वे ग़ैरुल्लाह के लिये ज़िबह करने को हराम समझते हैं और अपने ज़बीहों पर ख़ुदा के सिवा और किसी का नाम नहीं लेते। अगरचे वे अल्लाह के बारे में ऐसी बातों के मोतक़िद हों जिनसे बारी तआ़ला पाक और बुलन्द व बाला है।

इमाम इब्ने कसीर के इस बयान में एक तो यह बात मालूम हुई कि ऊपर बयान हुए तमाम हज़राते सहाबा व ताबिईन के नज़दीक अहले किताब के खाने से उनके ज़बीहे मुराद हैं। और उनके हलाल होने पर उम्मत का इजमा (एक राय) है।

दूसरी बात यह मालूम हुई कि इन सब हज़रात के नज़दीक अहले किताब के ज़बीहों (ज़िबह किये हुए जानवरों के गोश्त) के हलाल होने की वजह यह है कि यहूदियों व ईसाईयों के मज़हब में बहुत सी रद्दोबदल और उलट-फेर के बावजूद ज़बीहे का मसला इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ बाक़ी है कि ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह किये हुए जानवर को वे भी हराम कहते हैं और ज़बीहे पर अल्लाह का नाम लेना ज़रूरी समझते हैं। यह दूसरी बात है कि अल्लाह तआ़ला की शान में वे तस्लीस (ख़ुदाई में तीन हिस्सेदारों) के मुश्रिकाना अ़क़ीदे के क़ायल हो गये और अल्लाह और मसीह इब्ने मरियम को एक ही कहने लगे। जिसका क़ुरआने करीम ने इन अलफ़ाज़ में ज़िक्र फ़रमाया है:

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ.

तर्जुमाः बेशक काफ़िर हो गये वे लोग जिन्होंने कहा कि अल्लाह तो मसीह बिन मरियम हैं।

इसका हासिल यह हुआ कि ज़बीहे के बारे में तमाम क़ुरआनी आयतें जो सूरः ब-क़रह और सूरः अन्आम में आई हैं, जिनमें ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह किये हुए जानवर को भी और उस जानवर को भी जिस पर अल्लाह का नाम नहीं लिया गया, हराम क़रार दिया है, ये सब आयतें अपनी जगह पर अटल हैं और इन पर अ़मल जारी है। सूरः मायदा की आयत जिसमें अहले किताब के खाने को हलाल क़रार दिया है, वे भी इन आयतों के हुक्म से अलग और भिन्न नहीं, क्योंकि अहले किताब के खाने को हलाल क़रार देने की वजह ही यह है कि उनके मौजूदा मज़हब में भी ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह किया हुआ जानवर, और वह जानवर जिस पर अल्लाह का नाम नहीं लिया गया हराम है। मौजूदा ज़माने में तौरात व इंजील के जो नुस्ख़े (प्रतियाँ) अब भी मौजूद हैं उनमें भी ज़बीहे और निकाह के अहकाम तक़रीबन वही हैं जो क़ुरआने करीम और इस्लाम में हैं। जिनकी तफ़सील आगे ज़िक्र की जायेगी।

हाँ यह हो सकता है कि बाज़े जाहिल अ़वाम अपने मज़हब के इस हुक्म के ख़िलाफ़ कुछ अ़मल करते हों, जैसा कि ख़ुद मुसलमानों के जाहिल अ़वाम में भी बहुत सी जाहिलाना रस्में शामिल हो गयी हैं, मगर उनको मज़हबे इस्लाम नहीं कहा जा सकता। ईसाई लोगों में के जाहिल अ़वाम के तर्ज़े अ़मल को देखकर ही कुछ हज़राते ताबिईन ने यह फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला ने अहले किताब के खाने को हलाल क़रार दिया और अल्लाह तआ़ला जानता है कि वे अपने ज़बीहों के साथ क्या मामला करते हैं, कोई उस पर मसीह या उज़ैर का नाम लेता है, कोई बग़ैर बिस्मिल्लाह के ज़िबह करता है, तो मालूम हुआ कि सूरः मायदा वाली आयत जिसमें अहले किताब के खाने को हलाल क़रार दिया है, इस आयत ने अहले किताब के ज़बीहों के हक़ में सूरः ब-क़रह और सूरः अन्आम की उन आयतों को विशेष कर दिया या एक क़िस्म का नस्ख़ (उनके हुक्म को निरस्त व स्थगित) क़रार दिया है जिनमें ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह करने को या बग़ैर अल्लाह के नाम के ज़िबह करने को हराम क़रार दिया है।

कुछ बड़े उलेमा के कलाम से मालूम होता है कि जिन हज़राते ताबिईन ने अहले किताब के उस ज़िबह किये हुए जानवर को हलाल फ़रमाया है जिस पर बिस्मिल्लाह न पढ़ी गयी हो या जिसको ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह किया गया हो, उनके नज़दीक भी अहले किताब का असल मज़हब तो इस्लामी अहकाम से अलग नहीं है मगर उनके जाहिल अ़वाम यह ग़लतियाँ करते हैं। इसके बावजूद उन हज़रात ने जाहिल अहले किताब को भी आ़म अहले किताब के हुक्म से अलग नहीं किया और ज़बीहे और निकाह के मामले में उनका भी वही हुक्म रखा जो उनके पुर्खों, बड़ों और असल मज़हब की पैरवी करने वालों का है कि उनका ज़बीहा और उनकी औरतों से निकाह जायज़ है।

अ़ल्लामा इब्ने अ़रबी ने अपनी किताब अहकामुल-क़ुरआन में लिखा है कि मैंने अपने उस्ताद अबुल-फ़तह मक़्दसी से सवाल किया कि मौजूदा ईसाई तो ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह

करते हैं, मसलन मसीह या उज़ैर का नाम ज़िबह के वक़्त लेते हैं तो उनका ज़बीहा कैसे हलाल हो सकता है? इस पर अबुल-फ़तह मक़्दसी ने फ़रमायाः

هم من ابائهم وقد جعلهم الله تعالى تبعالمن كان قبلهم مع علمه بحالهم. (احکام ابن عربی ص۲۲۹، جلد اول)

तर्जुमाः उनका हुक्म अपने पूर्वजों और बड़ों के जैसा है (आजके अहले किताब का) यह हाल अल्लाह को मालूम था, लेकिन अल्लाह ने इनको इनके बड़ों के ताबे बना दिया है।

इसका हासिल यह हुआ कि उम्मत के बुज़ुर्गों में जिन हज़राते उलेमा ने अहले किताब के ऐसे ज़बीहों की इजाज़त दे दी है जिन पर अल्लाह का नाम नहीं लिया गया बल्कि ग़ैरुल्लाह का लिया गया, उनके नज़दीक भी असल मज़हब अहले किताब का यही है कि ये चीज़ें उनके मज़हब में भी हराम हैं मगर उन हज़रात ने ग़लत काम करने वाले अ़वाम को भी उस हुक्म में शामिल रखा जो असल अहले किताब का हुक्म है। इसलिये उनके ज़बीहे को भी हलाल क़रार दे दिया। और सहाबा व ताबिईन और मुज्तहिद इमामों की एक बड़ी जमाअ़त ने इस पर नज़र फ़रमाई कि अहले किताब के जाहिल अ़वाम जो ग़ैरुल्लाह के नाम या बग़ैर अल्लाह के नाम के ज़िबह करते हैं, यह इस्लामी हुक्म के तो ख़िलाफ़ है ही, ख़ुद ईसाईयों के मौजूदा मज़हब के भी ख़िलाफ़ है। इसलिये उनके अ़मल का अहकाम पर कोई असर नहीं होना चाहिये। उन्होंने यह फ़ैसला दिया कि उन लोगों का ज़बीहा अहले किताब के खाने में दाख़िल ही नहीं। इसलिये उसके हलाल होने की कोई वजह नहीं और उनके ग़लत अ़मल की वजह से क़ुरआनी आयतों के हुक्म में तब्दीली या विशेष दर्जे में रखने का क़ौल इख़्तियार करना किसी तरह सही नहीं।

इसी लिये तफ़सीर के तमाम इमाम- इब्ने जरीर, इब्ने कसीर, अबू हय्यान वग़ैरह इस पर सहमत हैं कि सूरः ब-क़रह और सूरः अन्आ़म की आयतों में कोई नस्ख़ (हुक्म का रद्द या बदलना) वाक़े नहीं हुआ। यही जम्हूर सहाबा व ताबिईन का मज़हब है जैसा कि इब्ने कसीर के हवाले से ऊपर नक़ल हो चुका है और तफ़सीर "बहरे मुहीत" में नीचे लिखे अलफ़ाज़ में मज़कूर है।

وذهب الى ان الكتابى اذالم يذكر الله على الذبيحة وذكرغير الله لم تو كل وبه قال ابو الد رداء وعبادة بن الصامت وجماعة من الصحابة وبه قال ابو حنيفة وابويوسف ومحمد وزفر ومالك وكره النخعى والثورى اكل ماذبح واهل به لغير الله. (بحرمحيط ص ٤٣١ جلد ٤)

तर्जुमाः उनका मज़हब यह है कि किताबी अगर ज़बीहे पर अल्लाह का नाम न ले और अल्लाह के सिवा कोई नाम ले तो उसका खाना जायज़ नहीं। यही क़ौल है अबू दर्दा, उबादा बिन सामित और सहाबा किराम की एक जमाअ़त का। और यही इमाम अबू हनीफ़ा, अबू यूसुफ़, मुहम्मद, ज़ुफ़र और मालिक का मज़हब है। इमाम नख़ई और सुफ़ियान सौरी उसके खाने को मक्रूह क़रार देते हैं।

कलाम का हासिल यह है कि सहाबा व ताबिईन और उम्मत के बुज़ुर्गों का इसमें कोई मतभेद नहीं है कि अहले किताब का असल मज़हब क़ुरआन नाज़िल होने के ज़माने में भी यही

था कि जिस जानवर पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया जाये या जान-बूझकर अल्लाह का नाम छोड़ा जाये वह हराम है। इसी तरह निकाह के हलाल व हराम होने में भी अहले किताब का असल मज़हब मौजूदा ज़माने तक अक्सर चीज़ों में इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ है, उसके ख़िलाफ़ जो कुछ अहले किताब में पाया गया वह जाहिल अ़वाम की ग़लतियाँ हैं, उनका मज़हब नहीं है।

मौजूदा तौरात व इंजील जो अनेक भाषाओं में छपी हुई मिलती हैं, उनसे भी इसकी ताईद (पुष्टि) होती है। मुलाहिज़ा हों उनके निम्नलिखित अक़वाल। बाईबिल के अ़हद नामा क़दीम में जो मौजूदा ज़माने के यहूदियों व ईसाईयों दोनों के नज़दीक मुसल्लम (माना हुआ) है, ज़बीहे के मुताल्लिक़ ये अहकाम हैं:

1. जो जानवर ख़ुद-बख़ुद मर गया हो और जिसको दरिन्दों ने फाड़ा हो, उनकी चर्बी और काम में लाओ तो लाओ, तुम उसे किसी हाल में न खाना। (अहबारे 24)

2. पर गोश्त को तो अपने सब फाटकों के अन्दर अपने दिल की रुचि और ख़ुदावन्द अपने दी हुई बरकत के मुवाफ़िक़ ज़िबह करके खा सकेगा..........लेकिन तुम ख़ून को बिल्कुल न खाना। (इस्तिस्ना 12-15)

3. तुम बुतों की क़ुरबानियों के गोश्त और लहू और गला घोंटे हुए जानवरों और हरामकारी से परहेज़ करो। (अ़हद नामा जदीद किताबुल-आमाल 15-29)

4. ईसाईयों के सबसे बड़ा पेशवा (धर्मगुरु) पोलिस करंथियून के नाम पहले ख़त में लिखता है कि जो क़ुरबानी ग़ैर-क़ौमें करती हैं शैतानों के लिये करती हैं न कि ख़ुदा के लिये, और मैं नहीं चाहता कि तुम शैतानों के शरीक हो। तुम ख़ुदावन्द के प्याले और शैतानों के प्याले दोनों में से नहीं पी सकते। (करंथियून 10-20-20)

5. किताबे आमाल हवारिय्यीन में है- हमने यह फ़ैसला करके लिखा था कि वे सिर्फ़ बुतों की क़ुरबानी के गोश्त से और लहू और गला घोंटे हुए जानवरों और हरामकारी से अपने आपको बचाये रखें। (आमाल 21-25)

यह तौरात व इंजील के वो स्पष्ट अहकाम व बयानात हैं जो आजकल की बाईबिल सोसाईटियों ने छापी हुई हैं, जिनमें सैंकड़ों रद्दोबदल और संशोधनों के बाद भी बिल्कुल क़ुरआने करीम के अहकाम के मुताबिक़ ये चीज़ें बाक़ी हैं। क़ुरआने करीम की आयत यह है:

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ وَالْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوْذَةُ وَالْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّطِيْحَةُ وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَاذَكَّيْتُمْ وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ. (سورة المآئدة-٣)

तुम पर हराम कर दिया गया मुर्दार और ख़ून और ख़िन्ज़ीर (सुअर) का गोश्त। और जिस पर अल्लाह के सिवा और किसी का नाम पुकारा गया हो। और गला घोंटा हुआ, और चोट खाकर मरा हुआ। और गिरकर मरा हुआ। और सींग खाकर मरा हुआ। और जिसे दरिन्दे ने खाया हो, हाँ मगर यह कि तुमने उसको पाक कर लिया हो। और वह जानवर जो बुतों के नाम पर ज़िबह किया जाये।

इस आयत ने मैता यानी ख़ुद मरा हुआ जानवर, और ख़ून और ख़िन्ज़ीर का गोश्त और जिस पर ग़ैरुल्लाह (अल्लाह के अ़लावा) का नाम लिया गया हो, और गला घोंटा हुआ जानवर और चोट से मारा या और ऊँची जगह से गिरकर मरा हुआ, या सींगों की चोट से मारा हुआ और जिसको दरिन्दों ने फाड़ा हो सब हराम क़रार दिये हैं। तौरात व इंजील की बयान हुई वज़ाहतों में भी "ख़िन्ज़ीर के गोश्त" के अ़लावा तक़रीबन सभी को हराम क़रार दिया है, सिर्फ़ चोट से या ऊँची जगह से गिरकर सींगों से मरने वाले जानवर की तफ़सील अगरचे मज़कूर नहीं है मगर वह सब तक़रीबन ख़ुद मरे या गला घोंटकर मारे हुए के हुक्म में दाख़िल हैं।

इसी तरह क़ुरआने करीम ने ज़बीहे पर अल्लाह का नाम लेने की ताकीद फ़रमाई है:

فَكُلُوْا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ.

और जिस जानवर पर अल्लाह का नाम न लिया गया हो उसको हराम किया है:

وَلَا تَاْكُلُوْا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ.

बाईबिल में किताब इस्तिस्ना की मज़कूरा इबारत 2 से भी इसकी ताकीद समझ में आती है कि जानवर को अल्लाह के नाम से ज़िबह किया जाये। इसी तरह निकाह के मामलात में भी अहले किताब का मज़हब अक्सर चीज़ों में इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ है।

मुलाहिज़ा हो- अहबार, 18, 6 से 19 तक। जिसमें एक लम्बी फ़ेहरिस्त मुहर्रमात (हराम होने वाले रिश्तों) की दी गयी है और जिनमें ज़्यादातर वही हैं जिनको क़ुरआन ने हराम किया है, यहाँ तक कि दो बहनों को एक साथ निकाह में जमा करने की हुर्मत (हराम होना) और माहवारी की हालत में सोहबत (हमबिस्तरी) का हराम होना भी उसमें स्पष्ट रूप से बयान हुआ है। साथ ही बाईबिल में इसकी भी वज़ाहत है कि बुत-परस्त और मुश्रिक क़ौमों से निकाह जायज़ नहीं। मौजूदा तौरात के अलफ़ाज़ ये हैं।

> "तू उनसे ब्याह-शादी भी न करना। न उनके बेटों को अपनी बेटियाँ देना और न अपने बेटों के लिये उनकी बेटियाँ लेना। क्योंकि वे मेरे बेटों को मेरी पैरवी से बरगश्ता कर देंगे, ताकि वे दूसरे माबूदों की इबादत करें।" (इस्तिस्ना 7-3-4)

ख़ुलासा-ए-कलाम

कलाम का हासिल और निचोड़ यह है कि क़ुरआन में अहले किताब के ज़बीहे और उनकी औ़रतों से निकाह को हलाल और दूसरे काफ़िरों के ज़बीहों और औ़रतों को हराम क़रार देने की वजह ही यह है कि इन दोनों मसलों में अहले किताब का असल मज़हब आज तक भी इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ है और जो कुछ इसके ख़िलाफ़ उनके अ़वाम में पाया जाता है वह जाहिलों की बदकारियाँ और ग़लतियाँ हैं, उनका मज़हब नहीं है। इसी लिये सहाबा व ताबिईन और मुज्तहिद इमामों की अक्सरियत और बड़ी जमाअ़त के नज़दीक सूरः ब-क़रह, सूरः अन्आ़म और सूरः मायदा की तमाम आयतों में कोई टकराव, तरमीम या तख़्सीस नहीं है। और जिन उलेमा व ताबिईन ने ग़लत काम करने वाले अ़वाम के अ़मल को भी अहले किताब के ताबे करके उनके

हुक्म में शामिल रखा और सूरः ब-क़रह व सूरः अन्आम की आयतों में तरमीम व रद्दोबदल या ख़ास (विशेष) होने का क़ौल इख़्तियार किया है, उसकी भी बुनियाद यह है कि ईसाई जिनका क़ौल यह है किः

اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ.

(यानी अल्लाह तो ईसा बिन मरियम ही हैं।)

ये लोग अगर अल्लाह का नाम भी लें तो उससे मुराद ईसा बिन मरियम ही लेते हैं। इसलिये उनके ज़बीहे में अल्लाह का नाम लेना या मसीह का नाम लेना बराबर हो गया। इस बिना पर उन हज़राते ताबिईन ने अहले किताब के ज़बीहे में इसकी इजाज़त दे दी है। अ़ल्लामा इब्ने अ़रबी ने अहकामुल-क़ुरआन में इस बुनियाद की वज़ाहत फ़रमाई है।

(अहकाम, इब्ने अ़रबी पेज 229, जिल्द 1)

मगर उम्मत की अक्सरियत ने इसको क़ुबूल नहीं किया जैसा कि तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीर बहरे मुहीत के हवाले से अभी गुज़र चुका है। और तफ़सीरे मज़हरी में अनेक अक़्वाल नक़ल करने के बाद लिखा हैः

وَالصحيح المختار عند ناهو القول الاوّل. يعنى ذبائح اهل الكتاب تاركًا للتسمية عامدًا اوعلى غيراسم اللّٰه تعالى لايوكل ان علم ذالك يقينًا اوكان غالب حالهم ذٰلك وهو محمل النهى عن اكل ذبائح نصارى العرب ومحمل قول علىؓ لا تاكلوا من ذبائح نصارىٰ بنى تغلب فانّهم لم يتمسكوا من النصرانية بشىءٍ الابشربهم الخمرفلعل عليًّا علم من حالهم انهم لا يسمون اللّٰه عند الذبح اويذبحون على غيراسم اللّٰه هكذا حكم نصارى العجم ان كان عادتهم الذبح على غيراسم اللّٰه تعالٰى غالبًا لايوكل ذبيحتهم ولا شك ان النصارى فى هٰذا الزمان لا يذبحون بل يقتلون بالوقذ غالبًا فلا يحل طعامهم. (تفسير مظهرى ص٣٩ جلد ٣)

तर्जुमाः और सही और पसन्दीदा हमारे नज़दीक वह पहला ही क़ौल है यानी यह कि अहले किताब के ज़बीहे जिन पर जान-बूझकर अल्लाह का नाम लेना छोड़ दिया हो, या ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह किये गये हों वो हलाल नहीं, अगर यक़ीनी तौर पर इसका इल्म हो जाये कि उस पर अल्लाह का नाम नहीं लिया या ग़ैरुल्लाह का लिया है, या अहले किताब की आम आ़दत यह हो जाये। जिन बुज़ुर्गों ने अ़रब के ईसाईयों के ज़बीहों को मना किया है उनके क़ौल का मक़सद भी यही है। इसी तरह हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जो यह फ़रमाया कि ईसाई बनी तग़लिब के ज़बीहे खाना जायज़ नहीं, क्योंकि उन्होंने ईसाई मज़हब में से सिवाय शराब पीने के और कुछ नहीं लिया, इसको भी इसी पर महमूल किया है। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु को यह साबित हुआ होगा कि बनी तग़लिब अपने ज़बीहों पर अल्लाह का नाम नहीं लेते, या फिर ग़ैरुल्लाह का नाम लेते हैं। पस यही हुक्म अ़जमी ईसाईयों का भी है कि अगर उनकी आ़दत यही हो जाये कि आ़म तौर पर ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह करते हैं, तो उनका ज़बीहा खाना जायज़ नहीं। और इसमें शक नहीं कि आजकल

के ईसाई तो ज़िबह ही नहीं करते बल्कि आम तौर पर चोट मारकर हलाक करते हैं। इसलिये उनका ज़बीहा हलाल नहीं है।

यह तफ़सीली बहस यहाँ इसलिये नक़ल की गयी कि इस मक़ाम पर मिस्र के मशहूर आ़लिम मुफ़्ती अ़ब्दुहू से एक सख़्त चूक हो गयी है जिसके ग़लत, किताब व सुन्नत और उम्मत की अक्सरियत के ख़िलाफ़ होने में कोई शक व शुब्हा नहीं। उनसे तफ़सीर 'अल-मिनार' में इस जगह दोहरी ग़लती हुई है।

अव्वल तो अहले किताब के मफ़्हूम (मतलब) में दुनिया के काफ़िर, मजूस, हिन्दू, सिख वग़ैरह सब को दाख़िल करके इतना आ़म कर दिया कि पूरे क़ुरआन में जो काफ़िर अहले किताब और ग़ैर-अहले किताब की तक़सीम और फ़र्क़ किया गया है वह बिल्कुल बेमानी और बेहक़ीक़त हो जाता है।

और दूसरी ग़लती इससे बड़ी यह हुई कि अहले किताब के खाने के मफ़्हूम में अहले किताब के हर खाने को बिना किसी शर्त के हलाल कर दिया। चाहे वे जानवर को ज़िबह करें या न करें और उस पर अल्लाह का नाम लें या न लें, हर हाल में वे जानवर को जिस तरह खाते हैं उसको मुसलमानों के लिये हलाल कर दिया।

जिस वक़्त उनका यह फ़तवा मिस्र में प्रकाशित हुआ उस वक़्त ख़ुद मिस्र के और दुनिया के तमाम बड़े उलेमा ने इसको ग़लत क़रार दिया। इस पर बहुत से लेख और पुस्तकें लिखे गये। मुफ़्ती अ़ब्दुहू को फ़तवा देने के पद से हटाने के मुतालबे हर तरफ़ से हुए। उधर मुफ़्ती साहिब मौसूफ़ के शागिर्दों और कुछ पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित और यूरोपियन समाज के शौक़ीन और पसन्द करने वाले लोगों ने बहसें चलाईं। क्योंकि यह फ़तवा उनके रास्ते की तमाम मुश्किलों का हल था कि यूरोप के यहूदी व ईसाई बल्कि बेदीनों का हर खाना उनके लिये हलाल हो गया।

लेकिन इस्लाम का यह भी मोजिज़ा (कमाल व चमत्कार) है कि ख़िलाफ़े शरीअ़त काम चाहे कितने ही बड़े आ़लिम से क्यों न हो जाये, आ़म मुसलमानों के दिल उससे कभी मुत्मईन नहीं होते। इस मामले में भी यही हुआ और पूरी दुनिया के मुसलमानों ने इसको गुमराही क़रार दिया और उस वक़्त यह मामला दबकर रह गया, मगर मौजूदा ज़माने के बेदीन जिनका मक़सद ही यह है कि इस्लाम का नया स्वरूप तैयार किया जाये कि जिसमें यूरोप की हर बेहूदगी खप जाये और नौजवानों की नफ़सानी इच्छाओं को पूरा करे, उन्होंने फिर इस बहस को इस अन्दाज़ से निकाला कि गोया वे ख़ुद कोई अपनी तहक़ीक़ (शोध) पेश कर रहे हैं, हालाँकि वह सब नक़ल मुफ़्ती अ़ब्दुहू के मज़कूरा लेख की है। इसी लिये ज़रूरत हुई कि इस बहस को किसी क़द्र तफ़सील से लिखा जाये।

अब अल्हम्दु लिल्लाह ज़रूरत के मुताबिक़ इसका बयान हो गया और इसकी पूरी तफ़सील मेरे रिसाले "इस्लामी ज़बीहे" में है। वहाँ देखी जा सकती है।

दूसरा मसला इस जगह यह है कि क़ुरआने करीम के इस इरशाद में एक हुक्म जो मुसलमानों के लिये बयान फ़रमाया कि अहले किताब का खाना जो तुम्हारे लिये जायज़ है, यह

तो ज़ाहिर है, मगर इसका दूसरा हिस्सा यानी मुसलमानों का खाना अहले किताब के लिये जायज़ है, इसका क्या मक़सद है? क्योंकि अहले किताब जो क़ुरआनी इरशादात के क़ायल ही नहीं, उनके लिये क्या हलाल है क्या हराम, इसके बयान से क्या फ़ायदा।

तफ़सीर बहरे मुहीत वग़ैरह में इसके मुताल्लिक़ फ़रमाया कि दर असल यह हुक्म भी मुसलमानों ही को बतलाना मन्ज़ूर है कि तुम्हारा ज़बीहा उनके लिये जायज़ है। इस वास्ते तुम अपने ज़बीहे में से किसी ग़ैर-मुस्लिम अहले किताब को खिला दो तो कोई गुनाह नहीं। यानी अपनी क़ुरबानी में से किसी किताबी शख़्स को दे सकते हो। और अगर हमारा ज़बीहा उनके लिये हराम होता तो हमारे लिये जायज़ न होता कि हम उनको उसमें से खिलायें। इसलिये अगरचे यह हुक्म बज़ाहिर अहले किताब का है मगर हक़ीक़त में इसके मुख़ातब मुसलमान ही हैं। और तफ़सीर रूहुल-मआनी में इमाम सुद्दी के हवाले से इस जुमले का एक और मन्शा ज़िक्र किया है, वह यह कि अहले किताब (यहूदी व ईसाई लोगों) के मज़हब में बाज़ हलाल जानवर या उनके कुछ हिस्से (अंग) सज़ा के तौर पर हराम कर दिये गये थे, इसलिये वह जानवर या जानवर का हिस्सा अहले किताब के खाने में बज़ाहिर दाख़िल नहीं, लेकिन आयत के इस जुमले ने बतला दिया कि जो जानवर तुम्हारे लिये हलाल है चाहे अहले किताब उसको हलाल न जानते हों, अगर अहले किताब के ज़िबह किये हुए मिलें तो वे भी मुसलमानों के लिये हलाल ही समझे जायेंगे। 'व तआमुकुम हिल्लुल-लहुम' में इस तरफ़ इशारा किया गया है। अगर यह मतलब मुराद लिया जाये तो भी आख़िरकार इस जुमले का ताल्लुक़ ख़ुद मुसलमानों के साथ हो गया।

और तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया कि फ़ायदा इस जुमले का फ़र्क़ बयान करना है ज़बीहों के मामले में और निकाह के मामले में। वह फ़र्क़ यह है कि ज़बीहे तो दोनों तरफ़ से हलाल हैं, अहले किताब का ज़बीहा मुसलमानों के लिये और मुसलमानों का ज़बीहा अहले किताब के लिये, मगर औरतों के निकाह का यह मामला नहीं। अहले किताब की औरतें मुसलमानों के लिये हलाल हैं मगर मुसलमानों की औरतें अहले किताब के लिये हलाल नहीं।

तीसरा मसला यह है कि अगर कोई मुसलमान (अल्लाह की पनाह) मुर्तद होकर यहूदी या ईसाई बन जाये तो वह अहले किताब में दाख़िल नहीं बल्कि वह मुर्तद है, उसका ज़बीहा पूरी उम्मत के नज़दीक हराम है। इसी तरह जो मुसलमान इस्लाम की ज़रूरी और क़तई चीज़ों में से किसी चीज़ का इनकार करने की वजह से मुर्तद हो गया है, अगरचे वह क़ुरआन और रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मानने का दावा भी करता हो वह भी मुर्तद (इस्लाम से ख़ारिज) है, उसका ज़बीहा हलाल नहीं। सिर्फ़ क़ुरआन पढ़ने या क़ुरआन पर अमल करने का दावा करने से वह अहले किताब में दाख़िल नहीं हो सकता। हाँ किसी दूसरे मज़हब व मिल्लत का आदमी अगर अपना मज़हब छोड़कर यहूदी व ईसाई बन जाये तो वह अहले किताब में शुमार होगा और उसका ज़बीहा हलाल क़रार पायेगा।

आयत का तीसरा जुमला यह है:

وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ.

यानी तुम्हारे लिये मुसलमान आबरू वाली और पाकदामन औरतों से निकाह हलाल है। इसी तरह अहले किताब की आबरू वाली और पाकदामन औरतों से भी निकाह हलाल है।

इसमें दोनों जगह मुहसनात का लफ़्ज़ आया है जिसके मायने अरबी लुग़त व मुहावरे के एतिबार दो हो सकते हैं- एक आज़ाद जिसका मुक़ाबिल बाँदियाँ हैं, दूसरे आबरू वाली व पाकदामन औरतें हैं; लुग़त के एतिबार से इस जगह भी दोनों मायने मुराद हो सकते हैं।

इसी लिये उलेमा-ए-तफ़सीर में से मुजाहिद ने इस जगह मुहसनात की तफ़सीर आज़ाद से की है जिसका हासिल यह हुआ कि अहले किताब की आज़ाद औरतें मुसलमानों के लिये हलाल हैं, बाँदियाँ हलाल नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी)

लेकिन उलेमा-ए-सहाबा और ताबिईन की एक बड़ी जमाअ़त के नज़दीक इस जगह मुहसनात के मायने आबरू वाली और पाकदामन औरतों के हैं और मुराद आयत की यह है कि जिस तरह आबरू वाली और पाकदामन मुसलमान औरतों से निकाह जायज़ है इसी तरह अहले किताब की आबरू वाली व पाकदामन औरतों से भी जायज़ है। (अहकामुल-क़ुरआन, जस्सास व मज़हरी)

लेकिन अक्सर उलेमा इस पर सहमत हैं कि इस जगह आबरू वाली व पाकदामन औरतों की क़ैद (शर्त) के यह मायने नहीं कि जो पाकदामन न हों उन औरतों से निकाह ही हराम है। बल्कि इस क़ैद का फ़ायदा बेहतर और मुनासिब सूरत की तरफ़ तवज्जोह दिलाना है कि चाहे मुसलमान औरत से निकाह करो या अहले किताब से, बहरहाल यह बात पेशे नज़र रहनी चाहिये कि पाकदामन आबरू वाली औरत से निकाह हो। बदकार और फ़ासिक़ औरतों से निकाह का रिश्ता जोड़ना किसी शरीफ़ मुसलमान का काम नहीं। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

इसलिये इस जुमले का ख़ुलासा-ए-मज़मून यह हुआ कि मुसलमान के लिये हलाल है कि किसी मुसलमान औरत से निकाह करे या अहले किताब की औरत से। अलबत्ता दोनों सूरतों में इसका लिहाज़ रखना चाहिये कि आबरूदार और पाकदामन औरत से निकाह करे। बदकार, नाक़ाबिले एतिबार औरत से निकाह का रिश्ता जोड़ना दीन व दुनिया दोनों की तबाही है, इससे बचना चाहिये। इस आयत में अहले किताब की क़ैद (शर्त) से उम्मत की सर्वसम्मति से यह साबित हो गया कि जो ग़ैर-मुस्लिम अहले किताब में दाख़िल नहीं, उनकी औरतों से निकाह हलाल नहीं।

पहले गुज़रे बयान में यह स्पष्ट हो चुका कि इस ज़माने में जितने फ़िर्के और जमाअ़तें ग़ैर-मुस्लिमों की मौजूद हैं उनमें सिर्फ़ यहूदी व ईसाई ही दो क़ौमें हैं जो अहले किताब में शुमार हो सकती हैं, बाक़ी मौजूदा धर्मों में से कोई भी अहले किताब में दाख़िल नहीं। आग के पुजारी, या बुत-परस्त (मूर्ति पूजक) हिन्दू या सिख, आर्य, बुद्ध वग़ैरह सब इसी आ़म हुक्म में दाख़िल हैं। क्योंकि यह बात बयान हो चुकी है कि अहले किताब से मुराद वे लोग हैं जो किसी ऐसी किताब के मानने वाले और उसकी पैरवी के दावेदार हों जिसका आसमानी किताब और अल्लाह की वही

होना क़ुरआन व सुन्नत की दलीलों और बयानात से साबित है, और ज़ाहिर है कि वह तो तौरात व इंजील ही हैं, जिनकी मानने वाली कुछ क़ौमें इस वक़्त दुनिया में मौजूद हैं, बाक़ी ज़बूर और इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पर उतरी किताबें न कहीं महफ़ूज़ व मौजूद हैं, न कोई क़ौम उनके मानने और उन पर अ़मल करने की दावेदार है, और "वेद" और "ग्रन्थ" या "ज़ुर्दश्त" वग़ैरह किताबें जो दुनिया में पवित्र कही जाती हैं उनके अल्लाह की वही और आसमानी किताब होने का कोई सुबूत किसी शरई दलील से नहीं है। और सिर्फ़ यह संभावना कि शायद ज़बूर और इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पर उतरी आसमानी पुस्तकों ही की बदली हुई वह सूरत हो जिसको बुद्धमत की किताब या वेद या ग्रन्थ वग़ैरह के नामों से नामित किया जाता है, सिर्फ़ एक संभावना और ख़ाली गुमान है जो सुबूत के लिये काफ़ी नहीं। इसलिये तमाम उम्मत की राय के मुताबिक़ यह साबित हो गया कि मौजूदा ज़माने की विभिन्न धर्मों में से सिर्फ़ यहूदी व ईसाईयों की औरतों से मुसलमानों का निकाह हलाल है और किसी क़ौम की औरत से जब तक कि वह मुसलमान न हो जाये निकाह हराम है।

क़ुरआने करीम की आयतः

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكٰتِ حَتّٰى يُؤْمِنَّ

(यानी सूरः ब-क़रह की आयत नम्बर 221) इसी मज़मून के लिये आई है जिसके मायने यह हैं कि मुश्रिक औरतों से उस वक़्त तक निकाह न करो जब तक कि वे मुसलमान न हो जायें। और अहले किताब के सिवा दूसरी क़ौमें सब **मुश्रिकात** (शिर्क करने वालियों) में दाख़िल हैं।

ग़र्ज़ कि क़ुरआन मजीद की दो आयतें इस मसले में बयान हुई हैं- एक में यह है कि मुश्रिक औरतों से उस वक़्त तक निकाह हलाल नहीं जब तक कि वे मुसलमान न हो जायें। दूसरी यह आयत सूरः मायदा की जिससे मालूम हुआ कि अहले किताब की औरतों से निकाह जायज़ है।

इसलिये उलेमा, सहाबा व ताबिईन की अक्सरियत ने दोनों आयतों का मफ़्हूम और मतलब यह क़रार दिया कि उसूली तौर पर ग़ैर-मुस्लिम औरत से मुसलमान का निकाह न होना चाहिये, लेकिन सूरः मायदा की इस आयत ने अहले किताब की औरतों को इस उमूमी हुक्म से अलग कर दिया है इसी लिये यहूदी व ईसाई औरतों के सिवा किसी दूसरी क़ौम की औरत से बग़ैर इस्लाम लाये हुए मुसलमान का निकाह नहीं हो सकता।

अब रहा मसला अहले किताब यानी यहूदी व ईसाई औरतों का तो बाज़ सहाबा किराम के नज़दीक यह भी जायज़ नहीं। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर का यही मज़हब है। उनसे जब कोई पूछता तो वह फ़रमाते थे कि अल्लाह तआ़ला का इरशाद क़ुरआने करीम में स्पष्ट हैः

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكٰتِ حَتّٰى يُؤْمِنَّ

यानी मुश्रिक औरतों से उस वक़्त तक निकाह न करो जब तक कि वे मुसलमान न हो जायें। और मैं नहीं जानता कि इससे बड़ा कौनसा शिर्क होगा कि वह ईसा बिन मरियम या

किसी दूसरे बन्दा-ए-ख़ुदा को अपना रब और ख़ुदा क़रार दे। (अहकामुल-क़ुरआन, जस्सास)

एक मर्तबा मैमून बिन मेहरान ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से सवाल किया कि हम एक ऐसे मुल्क में आबाद है जहाँ अहले किताब ज़्यादा रहते हैं, तो क्या हम उनकी औ़रतों से निकाह कर सकते हैं और उनका ज़बीहा खा सकते हैं? हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने उनको जवाब में ये दोनों आयतें पढ़कर सुना दीं। एक वह जिसमें मुश्रिक औ़रतों से निकाह को हराम फ़रमाया है, दूसरे यह सूरः मायदा की आयत जिसमें अहले किताब की औ़रतों से निकाह का हलाल होना बयान किया है।

मैमून बिन मेहरान ने कहा ये दोनों आयतें तो मैं भी क़ुरआन में पढ़ता हूँ और जानता हूँ। मेरा सवाल तो यह है कि इन दोनों को सामने रखकर मेरे लिये शरीअ़त का हुक्म क्या है? इसके जवाब में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फिर यही दोनों आयतें पढ़कर सुना दीं और अपनी तरफ़ से कुछ नहीं फ़रमाया। जिसका मतलब उम्मत के उलेमा ने यह क़रार दिया कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को अहले किताब की औ़रतों से निकाह हलाल होने पर भी इत्मीनान नहीं था।

और सहाबा व ताबिईन की एक बड़ी जमाअ़त के नज़दीक अगरचे क़ुरआन के मुताबिक़ अहले किताब की औ़रतों से निकाह हलाल है लेकिन उनसे निकाह करने से तजुर्बे के आधार पर जो दूसरी ख़राबियाँ और बुराईयाँ अपने लिये और अपनी औ़लाद के लिये बल्कि पूरी उम्मते मुस्लिमा के लिये लाज़िमी तौर से पैदा होंगी, उनकी बिना पर अहले किताब की औ़रतों से निकाह को वे भी मक्रूह (बुरा और नापसन्दीदा) समझते थे।

इमाम जस्सास ने **अहकामुल-क़ुरआन** में शक़ीक़ बिन सलमा की रिवायत से नक़ल किया है कि हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु जब मदायन पहुँचे तो वहाँ एक यहूदी औ़रत से निकाह कर लिया। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को इसकी इत्तिला मिली तो उनको ख़त लिखा कि उसको तलाक़ दे दो। हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब में लिखा कि क्या वह मेरे लिये हराम है? अमीरुल-मोमिनीन फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब में तहरीर फ़रमाया कि मैं हराम नहीं कहता लेकिन उन लोगों की औ़रतों में आ़म तौर पर आबरू व पाकदामनी नहीं है इसलिये मुझे ख़तरा है कि आप लोगों के घराने में इस रास्ते से बुराई व बदकारी दाख़िल न हो जाये। और इमाम मुहम्मद बिन हसन रह. ने किताबुल-आसार में इस वाक़िए को इमाम अबू हनीफ़ा रह. की रिवायत से इस तरह नक़ल किया है कि दूसरी मर्तबा फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जब हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु को ख़त लिखा तो उसके ये अलफ़ाज़ थे:

اعزم عليك ان لا تضع كتابى حتّٰى تخلى سبيلها فانى اخاف ان يقتديك المسلمون فيختاروالنساء اهل الذمة لجمالهن و كفٰى بذلك فتنة لنساء المسلمين. (كتاب الآثار ص١٥٦)

यानी आपको क़सम देता हूँ कि मेरा यह ख़त अपने हाथ से रखने से पहले ही उसको

तलाक़ देकर आज़ाद कर दो। क्योंकि मुझे यह ख़तरा है कि दूसरे मुसलमान भी आपकी पैरवी और अनुसरण करें और ज़िम्मियों व अहले किताब की औरतों को उनके हुस्न व सुन्दरता की वजह से मुसलमान औरतों पर तरजीह देने लगें, तो मुसलमान औरतों के लिये इससे बड़ी मुसीबत क्या होगी।

इस वाक़िए को नक़ल करके इमाम मुहम्मद बिन हसन रह. ने फ़रमाया कि हनफ़ी फ़ुक़हा इसी को इख़्तियार करते हैं कि उस निकाह को हराम तो नहीं कहते लेकिन दूसरी ख़राबियों और बुराईयों की वजह से मक्रूह (बुरा और नापसन्दीदा) समझते हैं। और अ़ल्लामा इब्ने हम्माम ने फ़तहुल-क़दीर में नक़ल किया है कि हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के अ़लावा हज़रत तल्हा और हज़रत कअ़ब बिन मालिक को भी ऐसा ही वाक़िआ पेश आया कि उन्होंने सूरः मायदा की आयत की बिना पर अहले किताब की औरतों से निकाह कर लिया तो जब फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को इसकी इत्तिला मिली तो सख़्त नाराज़ हुए और उनको हुक्म दिया कि तलाक़ दे दें। (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु का ज़माना ख़ैरुल-क़ुरून (ख़ैर) का ज़माना है। जब इसका कोई संदेह तक न था कि कोई यहूदी, ईसाई औरत किसी मुसलमान की बीवी बनकर इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ कोई साज़िश कर सके, उस वक़्त तो सिर्फ़ यह शंकायें सामने थीं कि कहीं उनमें बदकारी हो तो उनकी वजह से हमारे घराने गन्दे हो जायें, या उनके हुस्न व ख़ूबसूरती की वजह से लोग उनको तरजीह देने लगें। जिसका नतीजा यह हो कि मुसलमान औरतें तकलीफ़ में पड़ जायें। मगर फ़ारूक़ी नज़र दूर तक देखने वाली इतनी ही ख़राबियों को सामने रखकर उन हज़रात को तलाक़ पर मजबूर करती है। अगर आज का नक़्शा उन हज़रात के सामने होता तो अन्दाज़ा कीजिए कि उनका इसके बारे में क्या अ़मल होता। अव्वल तो वे लोग जो आज अपने नाम के साथ मर्दुम शुमारी के रजिस्ट्रों में यहूदी या ईसाई लिखवाते हैं, उनमें बहुत से वे लोग हैं जो अपने अ़क़ीदे के एतिबार से यहूदियत व ईसाईयत को एक लानत समझते हैं। न उनका तौरात व इंजील पर अ़क़ीदा है न हज़रत मूसा व हज़रत ईसा अ़लैहिमस्सलाम पर। वे अ़क़ीदे के एतिबार से बिल्कुल अधर्मी और बद्दीन हैं। महज़ क़ौमी या रस्मी तौर पर अपने आपको यहूदी और ईसाई कहते हैं।

ज़ाहिर है कि उन लोगों की औरतें मुसलमानों के लिये किसी तरह हलाल नहीं। और अगर मान लो वे अपने मज़हब के पाबन्द भी हों तो उनको किसी मुसलमान घराने में जगह देना अपने पूरे ख़ानदान के लिये दीनी और दुनियावी तबाही को दावत देना है। इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ जो साज़िशें इस रास्ते से इस आख़िरी दौर में हुईं और होती रहती हैं, जिनके इबरत लेने वाले वाक़िआत रोज़ आँखों के सामने आते हैं, कि एक लड़की ने पूरी मुस्लिम क़ौम और सल्तनत को तबाह कर दिया। ये ऐसी चीज़ें हैं कि हलाल व हराम को नज़र अन्दाज़ करते हुए भी कोई अ़क़्ल व समझ वाला इनसान इसके क़रीब जाने के लिये तैयार नहीं हो सकता।

ग़र्ज़ कि क़ुरआन व सुन्नत और सहाबा के अ़मल व तालीम की रू से मुसलमानों पर लाज़िम है कि आजकल की किताबी औरतों को निकाह में लाने से पूरी तरह परहेज़ करें। आयत

के आख़िर में यह हिदायत भी कर दी गयी है कि अहले किताब की औरतों को अगर रखना ही है तो बाक़ायदा निकाह करके बीवी की हैसियत से रखें, उनके मेहर वग़ैरह के हुक़ूक़ अदा करें। उनको रखैल के तौर पर रखना और खुले तौर पर बदकारी करना ये सब चीज़ें हराम हैं।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ اِلَى الْكَعْبَيْنِ ۚ وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا ۚ وَاِنْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَآءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَآئِطِ اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَآءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَآءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ ۚ مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ حَرَجٍ وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝ وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ الَّذِيْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ ۙ اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इज़ा क़ुम्तुम् इलस्सलाति फ़ग़्सिलू वुजूहकुम् व ऐदि-यकुम् इलल्-मराफ़िक़ि वम्सहू बिरुऊसिकुम् व अर्जु-लकुम् इलल्-कअ्बैनि, व इन् कुन्तुम् जुनुबन् फ़त्तह्हरू, व इन् कुन्तुम् मर्ज़ा औ अ़ला स-फ़रिन् औ जा-अ अ-हदुम् मिन्कुम् मिनल्ग़ा-इति औ लामस्तु-मुन्निसा-अ फ़-लम् तजिदू माअन् फ़-तयम्म-मू सओदन् तय्यिबन् फ़म्सहू बिवुजूहिकुम् व ऐदीकुम् मिन्हु, मा युरीदुल्लाहु लि-यज्अ़-ल अ़लैकुम् मिन् ह-रजिंव्-व लाकिंय्युरीदु लियुतह्हि-रकुम् व लियुतिम्-म निअ्म-तहू अ़लैकुम् लअ़ल्लकुम् तश्कुरून (6)	ऐ ईमान वालो! जब तुम उठो नमाज़ को तो धो लो अपने मुँह और हाथ कोहनियों तक और मल लो अपने सर को, और पाँव को टख़्नों तक, और अगर तुमको जनाबत हो तो ख़ूब तरह पाक हो, और अगर तुम बीमार हो या सफ़र में या कोई तुम में आया है ज़रूरत की जगह से (यानी पेशाब-पाख़ाने की ज़रूरत पूरी कर के) या पास गये हो औरतों के फिर न पाओ तुम पानी तो इरादा करो पाक मिट्टी का, और मल लो अपने मुँह और हाथ उससे, अल्लाह नहीं चाहता कि तुम पर तंगी करे व लेकिन चाहता है कि तुमको पाक करे और पूरा करे अपना एहसान तुम पर ताकि तुम एहसान मानो। (6)

वज़्कुरू निअ्-मतल्लाहि अ़लैकुम् व मीसाक़हुल्लज़ी वास-क़कुम् बिही इज़् क़ुल्तुम् समिअ्ना व अतअ्ना वत्तक़ुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह अ़लीमुम् बिज़ातिस्सुदूर (7)	और याद करो एहसान अल्लाह का अपने ऊपर और अहद उसका जो तुमसे ठहराया (लिया गया) था जब तुमने कहा था हमने सुना और माना और डरते रहो अल्लाह से, अल्लाह ख़ूब जानता है दिलों की बात। (7)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

पिछली आयतों में शरीअ़त के कुछ वो अहकाम ज़िक्र किये गये हैं जिनका ताल्लुक़ इनसान की दुनियावी ज़िन्दगी और खाने-पीने से है। इस आयत में इबादत से संबन्धित शरीअ़त के कुछ अहकाम ज़िक्र किये गये हैं।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! जब तुम नमाज़ को उठने लगो (यानी नमाज़ पढ़ने का इरादा करो और तुमको उस वक़्त वुज़ू न हो) तो (वुज़ू कर लो, यानी) अपने चेहरों को धोओ और अपने हाथों को कोहनियों समेत (धोओ), और अपने सरों पर (भीगा) हाथ फेरो, और अपने पैरों को भी टख़्नों समेत (धोओ), और अगर तुम नापाकी की हालत में हो तो (नमाज़ से पहले) सारा बदन पाक करो, और अगर तुम बीमार हो (और पानी का इस्तेमाल नुक़सानदेह हो) या सफ़र की हालत में हो (और पानी नहीं मिलता जैसा कि आगे आता है, यह तो उज़्र की हालत हुई) या (अगर बीमारी व सफ़र का उज़्र भी न हो बल्कि वैसे ही वुज़ू या ग़ुस्ल टूट जाये, इस तरह से कि जैसे) तुम में से कोई शख़्स (पेशाब या पाख़ाने के) इस्तिन्जे से (फ़ारिग़ होकर) आया हो (जिससे वुज़ू टूट जाता है) या तुमने बीवियों से निकटता की हो (जिससे ग़ुस्ल टूट गया हो और) फिर (इन सारी सूरतों में) तुमको पानी (के इस्तेमाल का मौक़ा) न मिले (चाहे उसके नुक़सान देने की वजह से या पानी न मिलने के सबब) तो (इन सब हालतों में) तुम पाक ज़मीन से तयम्मुम (कर लिया) करो, यानी अपने चेहरों और हाथों पर हाथ फेर लिया करो इस ज़मीन (की जिन्स) पर से (हाथ मारकर), अल्लाह तआ़ला को (इन अहकाम के मुक़र्रर फ़रमाने से) यह मन्ज़ूर नहीं कि तुम पर कोई तंगी डालें, (यानी यह मन्ज़ूर है कि तुम पर कोई तंगी न रहे, चुनाँचे बयान हुए अहकाम में ख़ुसूसन और शरीअ़त के तमाम अहकाम में उमूमन सहूलत और बेहतरी की रियायत ज़ाहिर है) लेकिन उसको (यानी अल्लाह तआ़ला को) यह मन्ज़ूर है कि तुमको पाक साफ़ रखे, (इसलिये तहारत के क़ायदों और इन्साफ़ का हुक्म दिया और किसी एक तरीक़े पर बस नहीं किया गया कि अगर वह न हो तो एक अफ़ मुम्किन ही न हो, जैसे सिर्फ़ पानी को पाक करने वाला रखा जाता तो पानी न होने... सूरः तहारत हासिल न हो सकती, यह तहारत और पाकी बदनों की

तो ख़ास तहारत के अहकाम ही में है, और दिलों की पाकी तमाम नेकियों में आ़म है। पस यह पाक करना दोनों को शामिल है, और अगर ये अहकाम न होते तो कोई तहारत हासिल न होती) और यह (मन्ज़ूर है) कि तुम पर अपना इनाम पूरा फ़रमाये (इसलिये अहकाम की तकमील फ़रमाई ताकि हर हाल में बदनी व दिली तहारत जिसका फल व परिणाम अल्लाह की रज़ा व निकटता है, जो सबसे बड़ी नेमत है, हासिल कर सको) ताकि तुम (इस इनायत का) शुक्र अदा करो (शुक्र में हुक्मों का पालन करना भी दाख़िल है)।

और तुम लोग अल्लाह तआ़ला के इनाम को जो तुम पर हुआ है याद करो (जिसमें बड़ा इनाम यह है कि तुम्हारी कामयाबी के तरीक़े तुम्हारे लिये अल्लाह की तरफ़ से बता दिये गये) और उसके उस अ़हद को भी (याद करो) जिसका तुमसे मुआ़हिदा किया है, जबकि तुमने (उसको अपने ऊपर लाज़िम भी कर लिया था कि अ़हद लेने के वक़्त तुमने) कहा था कि हमने (इन अहकाम को) सुना और मान लिया, (क्योंकि इस्लाम लाने के वक़्त हर शख़्स इसी मज़मून का अ़हद करता है) और अल्लाह तआ़ला (की मुख़ालफ़त) से डरो, बिला शुब्हा अल्लाह तआ़ला दिलों तक की बातों की पूरी ख़बर रखते हैं (इसलिये जो काम करो उसमें सही नीयत व अ़क़ीदा भी होना चाहिये, सिर्फ़ दिखावे के लिये अ़मल करना काफ़ी नहीं। मतलब यह है कि इन अहकाम में अव्वल तो तुम्हारा ही फ़ायदा है फिर तुमने इन्हें अपने सर भी रख लिया है। फिर मुख़ालफ़त में नुक़सान भी है इस वजह से फ़रमाँबरदारी करना और हुक्म बजा लाना ही ज़रूरी हुआ, और वह भी दिल से होना चाहिये वरना अगर दिखावे के लिये हुआ तो यह भी एक तरह से हुक्म न मानना ही है)।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ ۡ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا ۭ اِعْدِلُوْا ۣ هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ۡ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ۝ وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ ۙ لَهُمْ مَّغْفِرَةٌ وَّاَجْرٌ عَظِيْمٌ ۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰۗىِٕكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू कूनू	ऐ ईमान वालो! खड़े हो जाया करो
क़व्वामी-न लिल्लाहि शु-हदा-अ	अल्लाह के वास्ते गवाही देने को इन्साफ़
बिल्क़िस्ति व ला यज्रिमन्नकुम्	की, और किसी क़ौम की दुश्मनी के
श-नआनु क़ौमिन् अ़ला अल्ला	सबब इन्साफ़ को हरगिज़ न छोड़ो, अ़दल
तअ़्दिलू, इअ़्दिलू, हु-व अक़्रबु	करो यही बात [illegible] नज़दीक है तक़वे
लित्तक़्वा वत्तक़ुल्ला-ह, इन्नल्ला-ह	से, और डर[illegible] तुम अल्लाह से, अल्लाह

ख़बीरुम्-बिमा तअ्मलून (8) व-अदल्लाहुल्लज़ी-न आमनू व अमिलुस्सालिहाति लहुम् मग़्फ़ि-रतुंव्-व अज्रुन् अज़ीम (9) वल्लज़ी-न क-फ़रू व कज़्ज़बू बिआयातिना उलाइ-क अस्हाबुल्-जहीम (10)	को ख़ूब ख़बर है जो तुम करते हो। (8) वायदा किया अल्लाह ने ईमान वालों से और जो नेक अमल करते हैं कि उनके वास्ते बख़्शिश और बड़ा सवाब है। (9) और जिन लोगों ने कुफ़्र किया और झुठलाईं हमारी आयतें वे हैं दोज़ख़ वाले। (10)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला (की रज़ा) के लिए (अहकाम की) पूरी पाबन्दी करने वाले (और गवाही की नौबत आये तो) इन्साफ़ के साथ गवाही अदा करने वाले रहो, और किसी ख़ास क़ौम की दुश्मनी तुम्हारे लिए इसका सबब न हो जाए कि तुम (उनके मामलात में) अ़दल "यानी इन्साफ़" न करो। (ज़रूर हर मामले में) इन्साफ़ किया करो कि वह (यानी अ़दल करना) तक़्वे "यानी परहेज़गारी" से ज़्यादा क़रीब है (यानी इससे तक़्वे वाला कहलाता है) और (तक़्वा इख़्तियार करना तुम पर फ़र्ज़ है, चुनाँचे हुक्म हुआ है कि) अल्लाह तआ़ला (की मुख़ालफ़त) से डरो (यही हक़ीक़त है तक़्वे की। पस अ़दल जिस पर कि यह फ़र्ज़ तक़्वा टिका हुआ है वह भी फ़र्ज़ होगा) बिला शुब्हा अल्लाह तआ़ला को तुम्हारे सब आमाल की पूरी ख़बर है। (पस अहकाम के ख़िलाफ़ करने वालों को सज़ा हो जाये तो कुछ दूर की बात नहीं)। अल्लाह तआ़ला ने ऐसे लोगों से जो ईमान ले आए और उन्होंने अच्छे काम किए वायदा किया है कि उनके लिए मग़फ़िरत और बड़ा सवाब है। और जिन लोगों ने कुफ़्र किया और हमारे अहकाम को झूठा ठहराया ऐसे लोग दोज़ख़ में रहने वाले हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई तीन आयतों में से पहली आयत का मज़मून तक़रीबन इन्हीं अलफ़ाज़ के साथ सूरः निसा में भी गुज़र चुका है। फ़र्क़ इतना है कि वहाँ "कूनू क़व्वामी-न बिल्क़िस्ति शु-हदा-अ लिल्लाहि" इरशाद हुआ था और यहाँ "कूनू क़व्वामी-न लिल्लाहि शु-हदा-अ बिल्क़िस्ति" फ़रमाया गया है। इन दोनों आयतों में अलफ़ाज़ के आगे-पीछे करने की एक लतीफ़ वजह अबू हय्यान रह. ने तफ़सीर बहरे मुहीत में ज़िक्र की है, जिसका ख़ुलासा यह है कि:

इनसान को अ़दल व इन्साफ़ से रोकने और ज़ुल्म व ज़्यादती में मुब्तला करने के आ़दतन दो सबब हुआ करते हैं- एक अपने नफ़्स या अपने दोस्तों, रिश्तेदारों की तरफ़दारी, दूसरे किसी शख़्स की दुश्मनी व अ़दावत। सूरः निसा की आयत का इशारा पहले मज़मून की तरफ़ है और

सूरः मायदा की इस आयत का इशारा दूसरे मज़मून की तरफ़।

इसी लिये सूरः निसा में इसके बाद इरशाद है:

وَلَوْ عَلَىٰٓ اَنْفُسِكُمْ اَوِالْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ.

यानी अ़दल व इन्साफ़ पर क़ायम रहो चाहे वह अ़दल व इन्साफ़ का हुक्म ख़ुद तुम्हारे ख़ुद के या तुम्हारे माँ-बाप और रिश्तेदारों व दोस्तों के ख़िलाफ़ पड़े। और सूरः मायदा की इस आयत में उक्त जुमले के बाद यह इरशाद है:

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا.

यानी किसी क़ौम की अ़दावत व दुश्मनी तुम्हें इस पर आमादा न कर दे कि तुम इन्साफ़ के ख़िलाफ़ करने लगो।

इसलिये सूरः निसा की आयत का हासिल यह हुआ कि अ़दल व इन्साफ़ के मामले में अपने नफ़्स और माँ-बाप और अ़ज़ीज़ों की भी परवाह न करो। अगर इन्साफ़ का हुक्म उनके ख़िलाफ़ है तो ख़िलाफ़ ही पर क़ायम रहो। और सूरः मायदा की आयत का ख़ुलासा यह हुआ कि अ़दल व इन्साफ़ के मामले में किसी दुश्मन की दुश्मनी की वजह से सही राह से न भटक जाओ कि उसको नुक़सान पहुँचाने के लिये ख़िलाफ़े इन्साफ़ काम करने लगो।

यही वजह है कि सूरः निसा की आयत में "क़िस्त" यानी इन्साफ़ को पहले बयान फ़रमायाः

كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ.

और सूरः मायदा की आयत में **लिल्लाह** को पहले बयान फ़रमायाः

كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ لِلّٰهِ شُهَدَآءَ بِالْقِسْطِ.

अगरचे अन्जाम और नतीजे के एतिबार से ये दोनों उनवान एक ही मक़सद को अदा करते हैं। क्योंकि जो शख़्स इन्साफ़ पर खड़ा होगा वह अल्लाह ही के लिये खड़ा होगा, और जो शख़्स अल्लाह ही के लिये खड़ा हुआ है वह ज़रूर इन्साफ़ ही करेगा। लेकिन अपने नफ़्स और दोस्तों अ़ज़ीज़ों की रियायत के मक़ाम में यह ख़्याल गुज़र सकता है कि इन ताल्लुक़ात की रियायत भी तो अल्लाह ही के लिये है, इसलिये वहाँ लफ़्ज़ **क़िस्त** को पहले लाकर इसकी तरफ़ हिदायत कर दी कि वह रियायत अल्लाह के लिये नहीं हो सकती जो अ़दल व इन्साफ़ के ख़िलाफ़ हो। और सूरः मायदा में दुश्मनों के साथ अ़दल व इन्साफ़ बरतने का हुक्म देना था तो वहाँ लफ़्ज़ **लिल्लाह** को पहले लाकर इनसानी फ़ितरत को भावनाओं के आगे झुक जाने से निकाल दिया, कि तुम लोग अल्लाह के लिये खड़े हो, जिसका लाज़िमी नतीजा यह है कि दुश्मनों के साथ भी इन्साफ़ करो।

ख़ुलासा यह है कि सूरः निसा और सूरः मायदा की दोनों आयतों में दो चीज़ों की तरफ़ हिदायत है- एक यह कि चाहे मामला दोस्तों से हो या दुश्मनों से, अ़दल व इन्साफ़ के हुक्म पर क़ायम रहो। न किसी ताल्लुक़ की रियायत से इसमें कमज़ोरी आनी चाहिये और न किसी दुश्मनी व अ़दावत से। दूसरी हिदायत इन दोनों आयतों में इसकी भी है कि सच्ची गवाही और हक़ बात

के बयान करने से बचना न चाहिये, ताकि फ़ैसला करने वालों को हक़ और सही फ़ैसला करने में दुश्वारी पेश न आये।

क़ुरआने करीम ने इस मज़मून पर कई आयतों में विभिन्न उनवानों से ज़ोर दिया है और इसकी ताकीद फ़रमाई है कि लोग सच्ची गवाही देने में कोताही और सुस्ती न बरतें। एक आयत में बहुत ही स्पष्टता के साथ यह हुक्म दियाः

وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ وَمَنْ يَّكْتُمْهَا فَإِنَّهٗٓ اٰثِمٌ قَلْبُهٗ.

यानी गवाही को छुपाओ नहीं, और जो शख़्स छुपायेगा उसका दिल गुनाहगार होगा।

जिससे सच्ची गवाही देना वाजिब और उसका छुपाना सख़्त गुनाह साबित हुआ।

लेकिन इसके साथ ही क़ुरआने हकीम ने इस पर भी नज़र रखी है कि लोगों को सच्ची गवाही देने से रोकने वाली चीज़ दर असल यह है कि गवाह को बार-बार अ़दालतों की हाज़िरी और फ़ुज़ूल क़िस्म की वकीलाना ज़िरह से वास्ते पड़ते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि जिस शख़्स का नाम किसी गवाही में आ गया वह एक मुसीबत में मुब्तला हो गया। अपने कारोबार से गया, मुफ़्त की परेशानी में मुब्तला हुआ।

इसलिये क़ुरआने करीम ने जहाँ सच्ची गवाही देने को लाज़िम व वाजिब क़रार दिया वहीं यह भी इरशाद फ़रमायाः

وَلَا يُضَآرَّ كَاتِبٌ وَّلَا شَهِيْدٌ.

यानी मामले की तहरीर लिखने वालों और गवाहों को नुक़सान न पहुँचाया जाये।

आज की अ़दालतों और उनमें पेश होने वाले मुक़द्दिमों की अगर सही तहक़ीक़ की जाये तो मालूम होगा कि मौक़े के और सच्चे गवाह बहुत ही कम मिलते हैं। समझदार शरीफ़ आदमी जहाँ कोई ऐसा वाक़िआ़ देखता है वहाँ से भागता है कि कहीं गवाही में नाम न आ जाये। पुलिस इधर-उधर के गवाहों से ख़ाना पुरी करती है और नतीजा इसका वही हो सकता है जो रात-दिन देखने और अनुभव में आ रहा है कि पाँच-दस प्रतिशत मुक़द्दिमों में भी हक़ व इन्साफ़ पर फ़ैसला नहीं हो सकता और अ़दालतें भी मजबूर हैं जैसी गवाहियाँ उनके पास पहुँचती हैं वो उन्हीं के ज़रिये कोई नतीजा निकाल सकती हैं और उन्हीं की बुनियाद पर फ़ैसला कर सकती हैं।

मगर इस बुनियादी ग़लती को कोई नहीं देखता कि अगर गवाहों के साथ शरीफ़ाना मामला किया जाये और उनको बार-बार परेशान न किया जाये तो अच्छे भले, नेक और सच्चे आदमी क़ुरआनी तालीमात के पेशे नज़र गवाही में आने से पीछे न रहेंगे। मगर जो कुछ हो रहा है वह यह है कि मामले की शुरूआ़ती तहक़ीक़ जो पुलिस करती है वही बार-बार बुलाकर गवाह को इतना परेशान कर देती है कि वह आईन्दा के लिये अपनी औलाद को कह मरता है कि कभी किसी मामले के गवाह न बनना। फिर अगर मामला अ़दालत में पहुँचता है तो वहाँ तारीख़ों पर तारीख़ें लगती हैं। हर तारीख़ पर उस बेक़सूर गवाह को हाज़िरी की सज़ा भुगतनी पड़ती है। क़ानून की इस लम्बी प्रक्रिया ने जो अंग्रेज़ अपनी यादगार छोड़ गया है, हमारी सारी अ़दालतों

और महक्मों को गन्दा किया हुआ है। पुराने सादे अन्दाज़ पर जो आज भी हिजाज़ (सऊदी अ़रब) और कुछ दूसरे मुल्कों में प्रचलित है न मुक़द्दिमों की इतनी अधिकता हो सकती है और न उनमें इतनी लम्बी प्रक्रिया हो सकती है, न गवाहों को गवाही देना मुसीबत बन सकता है।

ख़ुलासा यह है कि गवाही का ज़ाब्ता और कार्रवाई का क़ानून अगर क़ुरआनी तालीमात के मुताबिक़ बनाया जाये तो उसकी बरकतें आज भी आँखों से साफ़ नज़र आने लगें। क़ुरआन ने एक तरफ़ घटना से बाख़बर लोगों पर सच्ची गवाही अदा करने को लाज़िम व वाजिब क़रार दे दिया है तो दूसरी तरफ़ लोगों को ऐसी हिदायतें दे दी हैं कि गवाहों को बिना वजह परेशान न किया जाये। कम से कम वक़्त में उनका बयान लेकर फ़ारिग़ कर दिया जाये।

परीक्षाओं के नम्बर, सनद व सर्टिफ़िकेट और चुनाव के वोट सब गवाही के हुक्म में दाख़िल हैं

आख़िर में एक और अहम बात भी यहाँ जानना ज़रूरी है, वह यह कि लफ़्ज़े शहादत और गवाही का जो मफ़्हूम आजकल उर्फ़ में मशहूर हो गया है वह तो सिर्फ़ मुक़द्दिमों व झगड़ों में किसी हाकिम के सामने गवाही देने के लिये मख़्सूस समझा जाता है, मगर क़ुरआन व सुन्नत की इस्तिलाह (परिभाषा) में लफ़्ज़ शहादत इससे ज़्यादा बड़ा और विस्तृत मफ़्हूम रखता है। मसलन किसी बीमार को डॉक्टरी सर्टिफ़िकेट देना कि यह ड्यूटी अदा करने के क़ाबिल नहीं या नौकरी करने के क़ाबिल नहीं, यह भी एक शहादत (गवाही) है। अगर इसमें हक़ीक़त के ख़िलाफ़ लिखा गया तो वह झूठी शहादत होकर बड़ा गुनाह हो गया।

इसी तरह परीक्षाओं में छात्रों के पर्चों पर नम्बर लगाना भी एक शहादत (गवाही) है। अगर जान-बूझकर या बेपरवाही से नम्बरों में कमी-बेशी कर दी तो वह भी झूठी शहादत है, और हराम व सख़्त गुनाह है।

कामयाब होने वाले और तालीम पूरी करने वाले तालिब-इल्मों को सनद या सर्टिफ़िकेट देना इसकी शहादत (गवाही) है कि वह संबन्धित काम की क्षमता व योग्यता रखता है। अगर वह शख़्स वास्तव में ऐसा नहीं है तो उस सर्टिफ़िकेट या सनद पर दस्तख़त करने वाले सब के सब झूठी गवाही देने के मुजरिम हो जाते हैं।

इसी तरह विधान सभा, लोक सभा और दूसरे ओहदों वग़ैरह के चुनाव में किसी उम्मीदवार को वोट देना भी एक गवाही है, जिसमें वोट देने वाले की तरफ़ से इसकी गवाही है कि हमारे नज़दीक यह शख़्स अपनी सलाहियत और क़ाबलियत के एतिबार से और दियानत व अमानत के एतिबार से भी क़ौमी प्रतिनिधि बनने के क़ाबिल है।

अब ग़ौर कीजिए कि हमारे नुमाईन्दों (प्रतिनिधियों) में कितने ऐसे होते हैं जिनके हक़ में यह गवाही सच्ची और सही साबित हो सके। मगर हमारे अ़वाम हैं कि उन्होंने इसको सिर्फ़ हार-जीत का खेल समझ रखा है, इसलिये वोट का हक़ कभी पैसों के बदले में फ़रोख़्त होता है, कभी

किसी दबाव के तहत इस्तेमाल किया जाता है, कभी नापायदार दोस्तों और घटिया वायदों के भरोसे पर उसको इस्तेमाल किया जाता है।

और तो और लिखे-पढ़े दीनदार मुसलमान भी ना-अहल (अयोग्य) लोगों को वोट देते वक़्त कभी यह महसूस नहीं करते कि हम यह झूठी गवाही देकर लानत व अ़ज़ाब के पात्र बन रहे हैं।

नुमाईन्दों के चुनाव के लिये वोट देने की क़ुरआन की तालीमात के मुताबिक़ एक दूसरी हैसियत भी है जिसको शफ़ाअ़त या सिफ़ारिश कहा जाता है, कि वोट देने वाला गोया यह सिफ़ारिश करता है कि फ़ुलाँ उम्मीदवार को नुमाईन्दगी दी जाये। इसका हुक्म क़ुरआन करीम के अलफ़ाज़ में पहले बयान हो चुका है, इरशाद है:

وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَّكُنْ لَّهٗ نَصِيْبٌ مِّنْهَا وَمَنْ يَّشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَّكُنْ لَّهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا.

यानी जो शख़्स अच्छी और सच्ची सिफ़ारिश करेगा, तो जिसके हक़ में सिफ़ारिश की है उसके नेक अ़मल का हिस्सा उसको भी मिलेगा। और जो शख़्स बुरी सिफ़ारिश करता है, यानी किसी ना-अहल और बुरे शख़्स को कामयाब बनाने की कोशिश करता है, उसको उसके बुरे आमाल का हिस्सा मिलेगा।

इसका नतीजा यह है कि यह उम्मीदवार अपने कार्यकाल के पाँच साला दौर में जो ग़लत और नाजायज़ काम करेगा उन सब का वबाल वोट देने वाले को भी पहुँचेगा।

वोट की एक तीसरी शरई हैसियत वकालत की है कि वोट देने वाला उस उम्मीदवार को अपनी नुमाईन्दगी के लिये वकील बनाता है। लेकिन अगर यह वकालत उसके किसी व्यक्तिगत हक़ से संबन्धित होती और उसका नफ़ा नुक़सान सिर्फ़ उसकी ज़ात को पहुँचता तो उसका यह खुद ज़िम्मेदार होता, मगर यहाँ ऐसा नहीं। क्योंकि यह वकालत ऐसे अधिकारों से संबन्धित है जिनमें उसके साथ पूरी क़ौम शरीक है। इसलिये अगर किसी ना-अहल को अपनी नुमाईन्दगी के लिये वोट देकर कामयाब बनाया तो पूरी क़ौम के हुक़ूक़ को बरबाद करने का गुनाह भी इसकी गर्दन पर रहा।

ख़ुलासा यह कि हमारा वोट तीन हैसियतें रखता है- एक गवाही, दूसरे सिफ़ारिश और तीसरे संयुक्त अधिकारों में वकालत। तीनों हैसियतों में जिस तरह नेक सालेह क़ाबिल आदमी को वोट देना बहुत बड़े सवाब का ज़रिया है और उसके फल और परिणाम उसको मिलने वाले हैं, इसी तरह ना-अहल या बेईमान शख़्स को वोट देना झूठी गवाही भी है और बुरी सिफ़ारिश भी और नाजायज़ वकालत भी, और उसके तबाह करने वाले परिणाम भी उसके नामा-ए-आमाल में लिखे जायेंगे।

इसलिये हर मुसलमान वोटर पर फ़र्ज़ है कि वोट देने से पहले इसकी पूरी तहक़ीक़ कर ले कि जिसको वोट दे रहा है वह काम की योग्यता रखता है या नहीं, और ईमानदार है या नहीं, महज़ ग़फ़लत व बेपरवाही से बिना वजह इन बड़े गुनाहों का करने वाला न हो।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَّبْسُطُوْۤا اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ ۝ وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيْثَاقَ بَنِيْۤ اِسْرَآءِيْلَ ۚ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَيْ عَشَرَ نَقِيْبًا ۚ وَقَالَ اللّٰهُ اِنِّيْ مَعَكُمْ ۚ لَئِنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِيْ وَعَزَّرْتُمُوْهُمْ وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا لَّاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۚ فَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيْلِ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनुज़्कुरू निअ़्म-तल्लाहि अ़लैकुम् इज़् हम्-म कौमुन् अंय्यब्सुतू इलैकुम् ऐदि-यहुम् फ-कफ़्-फ ऐदि-यहुम् अ़न्कुम् वत्तक़ुल्ला-ह, व अ़लल्लाहि फ़ल्य-तवक्कलिल्-मुअ्मिनून (11) ❁ व ल-क़द् अ-ख़ज़ल्लाहु मीसा-क़ बनी इस्राई-ल व बअ़स्ना मिन्हुमुस्नै अ़-श-र नक़ीबन्, व क़ालल्लाहु इन्नी म-अ़कुम्, ल-इन् अक़म्तुमुस्सला-त व आतैतुमुज़्ज़का-त व आमन्तुम् बिरुसुली व अ़ज़्ज़रतुमूहुम् व अक़्रज़्तुमुल्ला-ह क़रज़न् ह-सनल् -ल-उकफ़्फ़िरन्-न अ़न्कुम् सय्यिआतिकुम् व ल-उद्ख़िलन्नकुम् जन्नातिन् तज्री मिन् तह़्तिहल्-अन्हारु फ़-मन् क-फ़-र बअ़्-द ज़ालि-क मिन्कुम् फ़-क़द् ज़ल्-ल

ऐ ईमान वालो याद रखो एहसान अल्लाह का अपने ऊपर जब इरादा किया लोगों ने कि तुम पर हाथ चलायें, फिर रोक दिये तुमसे उनके हाथ, और डरते रहो अल्लाह से और अल्लाह ही पर चाहिए भरोसा ईमान वालों को। (11) ❁ और ले चुका है अल्लाह अ़हद बनी इस्राईल से और मुक़र्रर किये हमने उनमें बारह सरदार और कहा अल्लाह ने मैं तुम्हारे साथ हूँ अगर क़ायम रखोगे तुम नमाज़ और देते रहोगे ज़कात और यक़ीन लाओगे मेरे रसूलों पर और मदद करोगे उनकी और क़र्ज़ दोगे अल्लाह को अच्छी तरह का क़र्ज़ तो यक़ीनन दूर कर दूँगा मैं तुमसे गुनाह तुम्हारे और दाख़िल कर दूँगा तुमको बाग़ों में कि जिनके नीचे बहती हैं नहरें, फिर जो कोई काफ़िर हुआ तुम में से इसके बाद तो वह बेशक

सवाअस्सबील (12)	गुमराह हुआ सीधे रास्ते से। (12)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआला के इनाम को याद करो जो तुम पर हुआ है, जबकि एक क़ौम (यानी क़ुरैश के काफ़िर शुरू इस्लाम में जबकि मुसलमान कमज़ोर थे) इस फ़िक्र में थे कि तुम पर (इस तरह) हाथ डाल दें (कि तुम्हारा ख़ात्मा ही कर दें) सो अल्लाह तआला ने तुम पर उनका क़ाबू (इस क़द्र) न चलने दिया (और आख़िर में तुमको ग़ालिब कर दिया। पस इस नेमत को याद करो) और (अहकाम के मानने और हुक्मों के पालन में) अल्लाह तआला से डरो (कि इस नेमत का यह शुक्रिया है) और (आईन्दा भी) ईमान वालों को हक़ तआला ही पर भरोसा रखना चाहिए। (जिसने पहले तुम्हारे सब काम बनाये हैं आईन्दा भी आख़िरत तक उम्मीद रखो "इत्तक़ुल्लाह" में यानी अल्लाह से डरो फ़रमाकर ख़ौफ़ दिलाया और तवक्कुल का हुक्म फ़रमाकर उम्मीद, और यही दो अ़मल इताअ़त व फ़रमाँबरदारी में मददगार हैं)।

और अल्लाह तआला ने (हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के माध्यम से) बनी इस्राईल से (भी) अ़हद लिया था (जिसका बयान आगे जल्दी ही आता है) और (उन अ़हदों की ताकीद के लिये) हमने उनमें से (उनके क़बीलों की संख्या के हिसाब से) बारह सरदार मुक़र्रर किए (कि हर-हर क़बीले पर एक-एक सरदार रहे जो अपने मातहतों पर हमेशा अ़हदों के पूरा करने की ताकीद रखे) और (अ़हद के पूरा करने की और ज़्यादा ताकीद के लिये उनसे) अल्लाह तआला ने (यूँ) फ़रमाया कि मैं तुम्हारे साथ हूँ (तुम्हारे बुरे-भले की सब मुझको ख़बर रहेगी, मतलब यह है कि अ़हद लिया फिर उसकी ताकीद दर ताकीद फ़रमाई और उस अ़हद के मज़मून का ख़ुलासा यह था कि) अगर तुम नमाज़ की पाबन्दी रखोगे और ज़कात अदा करते रहोगे और मेरे सब रसूलों पर (जो आईन्दा भी नये-नये आते रहेंगे) ईमान लाते रहोगे और (दुश्मनों के मुक़ाबले में) उनकी मदद करते रहोगे और (ज़कात के अ़लावा और दूसरी ख़ैर की जगहों में भी ख़र्च करके) अल्लाह तआला को अच्छे तौर पर (यानी इख़्लास के साथ) क़र्ज़ देते रहोगे, तो मैं ज़रूर तुमसे तुम्हारे गुनाह दूर कर दूँगा और ज़रूर तुमको (जन्नत के) ऐसे बाग़ों में दाख़िल करूँगा जिनके (महलों के) नीचे नहरें जारी होंगी। और जो शख़्स इस (अ़हद व पैमान लेने) के बाद भी कुफ़्र करेगा तो बेशक वह सही रास्ते से दूर जा पड़ा।

मआरिफ़ व मसाईल

सूरः मायदा की सातवीं आयत जो पहले गुज़र चुकी है उसमें हक़ तआला ने मुसलमान से एक अ़हद व वायदा लेने और उनके मानने और तस्लीम कर लेने का ज़िक्र फ़रमाया है:

وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيْثَاقَهُ الَّذِىْ وَاثَقَكُمْ بِهٖٓ اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاتَّقُوا اللّٰهَ.

यह अ़हद ख़ुदा और रसूल की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) और शरई अहकाम की पैरवी का

वायदा व इक़रार है। जिसका इस्तिलाही उनवान कलिमा-ए-तय्यिबा यानी "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" है। और हर कलिमा पढ़ने वाला मुसलमान इस अ़हद और वायदे का पाबन्द है। इसके बाद की आयत में अ़हद की कुछ अहम धाराओं यानी ख़ास-ख़ास शरई अहकाम का बयान फ़रमाया है। जिसमें दोस्त व दुश्मन सब के लिये अ़दल व इन्साफ़ के क़ायम करने की और ताक़त व सत्ता पाने के बाद दुश्मनों से बदला लेने की भावना के बजाय इन्साफ़ और रवादारी (सद्भावना) की तालीम दी गयी है। यह अ़हद ख़ुद भी अल्लाह तआ़ला का एक बड़ा इनाम है, इसी लिये इसको "उज़्कुरू नेअ़्मतल्लाहि अ़लैकुम" (अपने ऊपर अल्लाह के इनाम को याद करो) से शुरू किया गया है।

उक्त आयत को फिर इसी जुमले "उज़्कुरू नेअ़्मतल्लाहि अ़लैकुम" (अपने ऊपर अल्लाह के इनाम को याद करो) से शुरू करके यह बतलाना मन्ज़ूर है कि मुसलमानों ने अपने इस अ़हद व वायदे की पाबन्दी की तो अल्लाह तआ़ला ने उनको दुनिया व आख़िरत में क़ुव्वत व तरक़्क़ी और बुलन्द दर्जे अ़ता फ़रमाये और दुश्मनों के हर मुक़ाबले में उनकी इमदाद फ़रमाई। दुश्मनों का क़ाबू उन पर न चलने दिया।

इस आयत में ख़ास तौर पर इसका ज़िक्र है कि दुश्मनों ने कई बार रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों के मिटा देने और क़त्ल व ग़ारत कर देने के मन्सूबे बनाये, और तैयारियाँ कीं, मगर अल्लाह तआ़ला ने सब को नाकाम व मायूस कर दिया। इरशाद है कि "एक क़ौम इस फ़िक्र में थी कि तुम पर हाथ डाले, मगर अल्लाह तबारक व तआ़ला ने उनके हाथ तुमसे रोक दिये।"

कुल मिलाकर तो ऐसे वाकिआ़त तारीख़े इस्लाम में बेशुमार हैं कि काफ़िरों के मन्सूबे अल्लाह के फ़ज़्ल से ख़ाक में मिल गये, लेकिन कुछ ख़ास-ख़ास अहम वाकिआ़त भी हैं जिनको हज़राते मुफ़स्सिरीन ने इस आयत का मिस्दाक़ क़रार दिया है। मसलन मुस्नदे अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि:

किसी जिहाद में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम एक मन्ज़िल पर ठहरे, सहाबा-ए-किराम मुख़्तलिफ़ हिस्सों में अपने-अपने ठिकानों पर आराम करने लगे। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बिल्कुल अकेले एक पेड़ के नीचे ठहर गये और अपने हथियार एक पेड़ पर लटका दिये। दुश्मनों में से एक गाँव वाला मौक़ा ग़नीमत जानकर झपटा और आते ही रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तलवार पर क़ब्ज़ा कर लिया और आप पर तलवार खींचकर बोलाः

مَنْ يَمْنَعُكَ مِنِّيْ.

"अब बतलाईये कि आपको मेरे हाथ से कौन बचा सकता है?"

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बेधड़क फ़रमाया कि "अल्लाह अ़ज़्ज़ व जल्ल" गाँव वाले ने फिर वही कलिमा दोहरायाः

مَنْ يَّمْنَعُكَ مِنِّىْ.

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फिर इसी बेफ़िक्री के साथ फ़रमाया "अल्लाह अ़ज़्ज़ व जल्ल।" दो तीन मर्तबा इसी तरह की गुफ़्तगू होती रही, यहाँ तक कि ग़ैबी क़ुदरत के रौब ने उसको मजबूर किया उसने तलवार को म्यान में दाख़िल करके रख दिया। उस वक़्त रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम को बुलाया और यह वाक़िआ सुनाया। यह गाँव वाला अभी तक आपके बराबर में बैठा हुआ था, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसको कुछ नहीं कहा। (इब्ने कसीर)

इसी तरह कुछ सहाबा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से इस आयत की तफ़सीर में मन्क़ूल है कि कअ़ब बिन अशरफ़ यहूदी ने एक मर्तबा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपने घर में बुलाकर क़त्ल करने की साज़िश की थी। अल्लाह तआ़ला ने आपको इसकी इत्तिला कर दी और उनकी सारी साज़िश ख़ाक में मिल गयी। (इब्ने कसीर) और हज़रत मुजाहिद, हज़रत इक्रिमा वग़ैरह से मन्क़ूल है कि एक मर्तबा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी मामले के लिये बनू नज़ीर के यहूदियों के पास तशरीफ़ ले गये। उन्होंने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को एक दीवार के नीचे बैठाकर बातों में लगा लिया और दूसरी तरफ़ अ़मर बिन जहश को इस काम पर मुक़र्रर कर दिया कि दीवार के पीछे से ऊपर चढ़कर पत्थर की एक चट्टान आपके ऊपर डाल दे। अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उनके इरादे पर बाख़बर फ़रमाया और आप फ़ौरन वहाँ से उठ गये। (इब्ने कसीर)

इन वाक़िआ़त में कोई टकराव नहीं, सब के सब आयते मज़कूरा का मिस्दाक़ हो सकते हैं। आयते मज़कूरा में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मुसलमानों की ग़ैबी हिफ़ाज़त का ज़िक्र करने के बाद फ़रमायाः

وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُوْنَ.

इसमें एक इरशाद तो यह है कि अल्लाह का यह इनाम सिर्फ़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि इस नुसरत व मदद और ग़ैबी हिफ़ाज़त का असली सबब तक़वा और तवक्कुल है। जो क़ौम या फ़र्द जिस ज़माने और जिस जगह में इन दो गुणों को इख़्तियार करेगा उसकी भी इसी तरह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हिफ़ाज़त व हिमायत होगी। किसी ने ख़ूब कहा हैः

फ़िज़ा-ए-बदर पैदा कर फ़रिश्ते तेरी नुसरत को
उतर सकते हैं गरदूँ से क़तार अन्दर क़तार अब भी

और यह भी हो सकता है कि इस जुमले को पहली आयतों के मजमूए के साथ लगाया जाये। जिनमें बदतरीन दुश्मनों के साथ अच्छे सुलूक और अ़दल व इन्साफ़ के अहकाम दिये गये हैं, तो फिर इस जुमले में इस तरफ़ इशारा होगा कि ऐसे सख़्त दुश्मनों के साथ अच्छा सुलूक और रवादारी की तालीम बज़ाहिर एक सियासी ग़लती और दुश्मनों की जुर्रत व हिम्मत बढ़ाने के

जैसा है, इसलिये इस जुमले में मुसलमानों को इस पर सचेत किया गया कि अगर तुम तक़्वे वाले और अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करने वाले रहो तो यह रवादारी और अच्छा बर्ताव तुम्हारे लिये बिल्कुल भी नुक़सानदेह न होगा और मुख़ालिफ़ों को जुर्रत के बजाय तुम्हारे ताबे करने और इस्लाम से क़रीब करने का सबब बनेगा। तथा तक़्वा और ख़ौफ़े ख़ुदा ही वह चीज़ है जो किसी इनसान को, वायदे व अ़हद की पाबन्दी पर ज़ाहिरन व बातिनन मजबूर कर सकता है। जहाँ यह तक़्वा यानी ख़ौफ़े ख़ुदा नहीं होता वहाँ वायदे व अ़हद का वही हश्र होता है जो आजकल आ़म लोगों में देखा जाता है, इसलिये ऊपर की जिस आयत में मीसाक़ (अ़हद) का ज़िक्र है वहाँ भी आयत के आख़िर में "वत्तक़ुल्ला-ह" (और अल्लाह से डरो) फ़रमाया गया था। और यहाँ फिर इसको दोहराया गया, तथा इस पूरी आयत में इस तरफ़ भी इशारा फ़रमाया गया है कि मुसलमानों की फ़तह व नुसरत सिर्फ़ ज़ाहिरी साज़ व सामान (संसाधनों और माद्दी क़ुव्वत) की मोहताज नहीं है, बल्कि उनकी असल ताक़त का राज़ तक़्वे और तवक्कुल में छुपा हुआ है।

इस आयत में मुसलमानों से वायदा व अ़हद लेने और उनके पूरा करने पर दुनिया व आख़िरत में उसके बेहतरीन फल और अच्छे परिणामों का ज़िक्र करने के बाद मामले का दूसरा रुख़ सामने लाने के लिये दूसरी आयत में यह बतलाया गया है कि यह अ़हद व मीसाक़ लेना सिर्फ़ मुसलमानों के लिये मख़्सूस नहीं, बल्कि इनसे पहले दूसरी उम्मतों से भी इसी क़िस्म के मीसाक़ (अ़हद) लिये गये थे। मगर वे अपने अ़हद व मीसाक़ में पूरे न उतरे इसलिये उन पर तरह-तरह के अ़ज़ाब मुसल्लत किये गये। इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल से भी एक अ़हद लिया था, और उनसे अ़हद लेने की यह सूरत इख़्तियार की गयी थी कि बनी इस्राईल की पूरी क़ौम जो बारह ख़ानदानों पर मुश्तमिल थी उन्हीं में से हर ख़ानदान से एक सरदार चुना गया, और हर ख़ानदान की तरफ़ से उसके हर सरदार ने ज़िम्मेदारी उठाई कि मैं और मेरा पूरा ख़ानदान अल्लाह के इस अ़हद की पाबन्दी करेगा। इस तरह उन बारह सरदारों ने पूरी क़ौमे बनी इस्राईल की ज़िम्मेदारी ले ली। उनके ज़िम्मे यह था कि ख़ुद भी इस मीसाक़ (अ़हद) की पाबन्दी करें और अपने ख़ानदान से भी करायें। यहाँ यह बात भी क़ाबिले ज़िक्र है कि इ़ज़्ज़त व फ़ज़ीलत के मामले में इस्लाम का असल उसूल तो यह है कि:

बन्दा-ए-इश्क़ शुदी तर्के नसब कुन जामी
कि दरीं राह फ़ुलाँ बिन फ़ुलाँ चीज़े नेस्त

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज्जतुल-विदा (अपने आख़िरी हज) के ऐतिहासिक ख़ुतबे में पूरी वज़ाहत के साथ इसका ऐलान फ़रमाया है कि इस्लाम में अ़रब व अ़जम, काले गोरे और ऊँची नीची ज़ात पात का कोई एतिबार नहीं। जो इस्लाम में दाख़िल हो गया वह सारे मुसलमानों का भाई हो गया। हसब नसब, रंग वतन, भाषा का भेद व विशेषता जो जाहिलीयत के बुत थे इन सब को इस्लाम ने तोड़ डाला। लेकिन इसके मायने यह नहीं कि इन्तिज़ामी मामलात में व्यवस्था क़ायम रखने के लिये भी ख़ानदानी विशेषताओं का लिहाज़ न किया जाये।

यह फ़ितरी चीज़ है कि एक ख़ानदान के लोग दूसरों के मुक़ाबले में अपने ख़ानदान के जाने पहचाने आदमी पर ज़्यादा भरोसा कर सकते हैं। और यह शख़्स उनकी पूरी नफ़्सियात से वाक़िफ़ होने की बिना पर उनके जज़्बात व ख़्यालात की ज़्यादा रियायत कर सकता है। इसी रणनीति पर आधारित था कि बनी इस्राईल के बारह ख़ानदानों से जब अ़हद लिया गया तो हर ख़ानदान के एक-एक सरदार को ज़िम्मेदार ठहराया गया।

और इसी इन्तिज़ामी मस्लेहत और मुकम्मल इत्मीनान व सुकून की रियायत उस वक़्त भी की गयी जबकि बनी इस्राईल की क़ौम पानी न होने की वजह से सख़्त परेशानी व बेक़रारी में थी। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने दुआ़ की और अल्लाह के हुक्म से उन्होंने अपना अ़सा (डंडा) एक पत्थर पर मारा तो अल्लाह तआ़ला ने उस पत्थर से बारह चश्मे बारह ख़ानदानों के लिये अलग-अलग जारी कर दिये।

सूरः आराफ़ में क़ुरआने करीम ने अल्लाह तआ़ला के इस एहसाने अ़ज़ीम का इस तरह ज़िक्र फ़रमाया हैः

وَقَطَّعْنٰهُمُ اثْنَتَیْ عَشْرَةَ اَسْبَاطًا اُمَمًا.

فَانْبَجَسَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَیْنًا.

हमने बाँट दिये उनके बारह ख़ानदान बारह जमाअ़तों में। फिर फूट निकले पत्थर से बारह चश्मे (हर एक ख़ानदान के लिये अलग-अलग)।

और यह बारह की संख्या भी कुछ अ़जीब ख़ुसूसियत और मक़बूलियत रखती है।

जिस वक़्त मदीना के अन्सार रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मदीना के लिये दावत देने हाज़िर हुए और आपने उनसे बैअ़त के ज़रिये इक़रार लिया तो उस मुआ़हदे में भी अन्सार के बारह सरदारों ने ज़िम्मेदारी लेकर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ मुबारक पर बैअ़त की थी, उनमें तीन सरदार क़बीला औस के और नौ क़बीला ख़ज़्रज के थे। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

और सहीहैन (बुख़ारी व मुस्लिम) में हज़रत जाबिर बिन समुरा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- लोगों का काम और निज़ाम उस वक़्त तक चलता रहेगा जब तक कि बारह ख़लीफ़ा उनकी क़्यादत (नेतृत्व) करेंगे। इमाम इब्ने कसीर ने इस रिवायत को नक़ल करके फ़रमाया कि इस हदीस के किसी लफ़्ज़ से यह साबित नहीं होता कि यह बारह इमाम एक के बाद एक लगातार होंगे, बल्कि उनके बीच फ़ासला भी हो सकता है। चुनाँचे चार ख़ुलफ़ा- हज़रत सिद्दीक़ अकबर, फ़ारूक़े आज़म, उस्माने ग़नी, अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम लगातार हुए और बीच की कुछ मुद्दत के बाद फिर हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ उम्मत के सर्वसम्मति से पाँचवे ख़लीफ़ा-ए-बरहक़ माने गये।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि बनी इस्राईल से इक़रार (अ़हद) लेने के लिये अल्लाह तआ़ला ने उनके बारह ख़ानदानों के बारह सरदारों को ज़िम्मेदार ठहराया और उनसे इरशाद फ़रमाया

"इन्नी म-अ़कुम" यानी मैं तुम्हारे साथ हूँ। मतलब यह है कि अगर तुमने मीसाक़ (अ़हद) की पाबन्दी की और दूसरों से पाबन्दी कराने का पक्का इरादा किया तो मेरी इमदाद व नुसरत तुम्हारे साथ होगी। इसके बाद आयते मज़कूरा में इस अ़हद की चन्द अहम धाराओं और बनी इस्राईल के अ़हद तोड़ने और उन पर अ़ज़ाबे इलाही आने का ज़िक्र है।

मीसाक़ (अ़हद) की धाराओं का ज़िक्र करने से पहले एक जुमला यह इरशाद फ़रमाया "इन्नी म-अ़कुम" (बेशक मैं तुम्हारे साथ हूँ) जिसमें दो बातें बतला दी गयी हैं- एक यह कि अगर तुम मीसाक़ पर क़ायम रहे तो मेरी इमदाद तुम्हारे साथ रहेगी और तुम हर क़दम पर उसको अपनी आँखों से देखोगे। दूसरे यह कि अल्लाह तआ़ला हर वक़्त और हर जगह तुम्हारे साथ है और इस मीसाक़ (अ़हद) की निगरानी फ़रमा रहा है। तुम्हारा कोई अ़ज़्म व इरादा और फ़िक्र व ख़्याल या हरकत व अ़मल उसके इल्म से बाहर नहीं है। वह तुम्हारी तन्हाईयों के राज़ों को भी देखता और सुनता है, वह तुम्हारे दिलों की नीयतों और इरादों से भी वाक़िफ़ है। मीसाक़ (अ़हद) की ख़िलाफ़वर्ज़ी करके तुम किसी तरह भी उसकी गिरफ़्त से नहीं बच सकते।

इसके बाद अ़हद की धाराओं में सबसे पहले "नमाज़ को क़ायम करने" का ज़िक्र है और फिर "ज़कात के अदा करने" का। इससे मालूम हुआ कि नमाज़ और ज़कात के फ़राईज़ इस्लाम से पहले हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम पर भी आयद थे। और दूसरे क़ुरआनी इशारों व रिवायतों से साबित होता है कि ये फ़राईज़ बनी इस्राईल ही के साथ मख़्सूस नहीं बल्कि हर पैग़म्बर और हर शरीअ़त में हमेशा लागू रहे हैं।

तीसरा नम्बर मीसाक़ (अ़हद) में यह है कि अल्लाह तआ़ला के सब रसूलों पर ईमान लायें और उनका जो मक़सद है यानी मख़्लूक़ को सही राह दिखाना उसमें उनकी इमदाद करें। बनी इस्राईल में चूँकी बहुत से रसूल आने वाले थे, इसलिये उनको ख़ुसूसियत से इसकी ताकीद फ़रमाई गयी। और अगरचे ईमानी चीज़ों (यानी अ़क़ीदों) का दर्जा अ़मली चीज़ों (अहकाम) यानी नमाज़, ज़कात वग़ैरह से दर्जे में पहले और ऊपर है मगर मीसाक़ (अ़हद) में पहले उसको रखा गया जिस पर फ़िलहाल अ़मल करना था। आने वाले रसूल तो बाद में आयेंगे, उन पर ईमान लाने और उनकी इमदाद करने की नौबत भी बाद में आने वाली थी इसलिये इसको बाद में बयान फ़रमाया गया।

चौथा नम्बर मीसाक़ (अ़हद) में यह है कि:

اَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا.

(यानी तुम अल्लाह तआ़ला को क़र्ज़ दो, अच्छी तरह का क़र्ज़)। अच्छी तरह के क़र्ज़ का मतलब यह है कि इख़्लास के साथ हो, कोई दुनियावी ग़र्ज़ उसमें शामिल न हो, और अल्लाह की राह में अपनी महबूब (पसन्दीदा और प्यारी) चीज़ ख़र्च करे, रद्दी और बेकार चीज़ें देकर न टाले। इसमें अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च करने को क़र्ज़ देने से इसलिये ताबीर किया गया है कि क़र्ज़ का बदला क़ानूनी, समाजी और अख़्लाक़ी तौर पर वाजिबुल-अदा समझा जाता है। इसी तरह यह यक़ीन करते हुए अल्लाह की राह में ख़र्च करें कि इसका बदला ज़रूर मिलेगा।

और फ़र्ज़ ज़कात का ज़िक्र मुस्तक़िल तौर पर करने के बाद इस जगह अच्छे क़र्ज़ का ज़िक्र यह बतला रहा है कि इससे मुराद ज़कात के अ़लावा दूसरे सदक़े व ख़ैरात हैं। इससे यह भी मालूम हुआ कि मुसलमान सिर्फ़ ज़कात अदा करके सारी माली ज़िम्मेदारियों से मुक्त नहीं हो जाता, ज़कात के अ़लावा भी कुछ और माली हुक़ूक़ इनसान के ज़िम्मे लाज़िम हैं। किसी जगह मस्जिद नहीं तो मस्जिद की तामीर, और दीनी तालीम के लिये हुकूमत ज़िम्मेदारी नहीं उठा रही है तो दीनी तालीम का इन्तिज़ाम मुसलमानों ही पर लाज़िम है। फ़र्क़ इतना है कि ज़कात फ़र्ज़े-ऐन और यह फ़र्ज़े-काफ़िया हैं।

फ़र्ज़े-काफ़िया के मायने यह हैं कि क़ौम के चन्द अफ़राद या किसी जमाअ़त ने उन ज़रूरतों को पूरा कर दिया तो दूसरे मुसलमान ज़िम्मेदारी से बरी हो जाते हैं और अगर किसी ने भी न किया तो सब गुनाहगार होते हैं। आजकल दीनी तालीम और उसके मदरसे जिस बेकसी और दुर्दशा की हालत में हैं इसको वही लोग जानते हैं जिन्होंने उनको दीन की अहम ख़िदमत समझकर क़ायम किया हुआ है। ज़कात अदा करने की हद तक मुसलमान जानते हैं कि हमारे ज़िम्मे फ़र्ज़ है और यह जानने के बावजूद बहुत कम अफ़राद हैं जो ज़कात अदा करते हैं। और अदा करने वालों में भी बहुत कम अफ़राद हैं जो पूरा हिसाब करके पूरी ज़कात अदा करते हैं, और जो कहीं-कहीं पूरी ज़कात अदा करने वाले भी हैं तो वे बिल्कुल यह समझे हुए हैं कि अब हमारे ज़िम्मे और कुछ नहीं। उनके सामने मस्जिद की ज़रूरत आये तो ज़कात का माल पेश करते हैं, और दीनी मदरसों की ज़रूरत पेश आये तो सिर्फ़ ज़कात का माल दिया जाता है, हालाँकि ये फ़राईज़ ज़कात के अ़लावा मुसलमानों पर आ़यद हैं और क़ुरआने करीम की इस आयत और इसके जैसी बहुत सी आयतों ने इसको स्पष्ट कर दिया है।

मीसाक़ (अ़हद) की अहम धारायें बयान करने के बाद भी यह बतला दिया कि अगर तुमने मीसाक़ की पाबन्दी की तो उसकी जज़ा यह होगी कि तुम्हारे पिछले गुनाह भी माफ़ कर दिये जायेंगे और हमेशा की राहत व आ़फ़ियत की बेमिसाल जन्नत में रखा जायेगा। और आख़िर में यह भी बतला दिया कि इन तमाम स्पष्ट बयानात व इरशादात के बाद भी अगर किसी ने कुफ़्र व नाफ़रमानी इख़्तियार की तो वह एक साफ़ सीधी राह छोड़कर अपने हाथों तबाही के गढ़े में जा गिरा।

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ وَجَعَلْنَا قُلُوْبَهُمْ قٰسِيَةً ۚ يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِهٖ ۙ وَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۚ وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَآئِنَةٍ مِّنْهُمْ اِلَّا قَلِيْلًا مِّنْهُمْ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ ۚ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ وَمِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰٓى اَخَذْنَا مِيْثَاقَهُمْ فَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِهٖ ۠ فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۚ وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللّٰهُ بِمَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ۝

फ़बिमा नक़्ज़िहिम् मीसाक़हुम् लअ़न्नाहुम् व जअ़ल्ना क़ुलूबहुम् क़ासि-यतन् युहर्रिफ़ूनल्कलि-म अ़म्--मवाज़िअ़िही व नसू हज़्ज़म् मिम्मा ज़ुक्किरू बिही व ला तज़ालु तत्तलिअ़ु अ़ला ख़ाइ-नतिम् मिन्हुम् इल्ला क़लीलम् मिन्हुम् फ़अ़्फ़ु अ़न्हुम् वस्फ़ह्, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल् मुह्सिनीन (13) व मिनल्लज़ी-न क़ालू इन्ना नसारा अख़ज़्ना मीसाक़हुम् फ़-नसू हज़्ज़म् मिम्मा ज़ुक्किरू बिही फ़-अग़्रैना बैनहुमुल् अ़दा-व-त वल्बग़्ज़ा-अ इला यौमिल्-क़ियामति, व सौ-फ़ युनब्बिउहुमुल्लाहु बिमा कानू यस्नअ़ून (14)	सो उनके अ़हद तोड़ने पर हमने उन पर लानत की और कर दिया हमने उनके दिलों को सख़्त, फेरते हैं कलाम को उसके ठिकाने से और भूल गये नफ़ा उठाना उस नसीहत से जो उनको की गई थी और हमेशा तू बाख़बर होता रहता है उनकी किसी दग़ा पर मगर थोड़े लोग उनमें से, सो माफ़ कर और दरगुज़र कर उनसे, अल्लाह दोस्त रखता है एहसान करने वालों को। (13) और वे जो कहते हैं अपने को नसारा (यानी ईसाई) उनसे भी लिया था हमने अ़हद उनका, फिर भूल गये नफ़ा उठाना उस नसीहत से जो उनको की गई थी, फिर हमने लगा दी आपस में उनके दुश्मनी और कीना क़ियामत के दिन तक, और आख़िर जता देगा उनको अल्लाह जो कुछ करते थे। (14)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(लेकिन बनी इस्राईल ने तो उक्त अ़हद को तोड़ डाला, और तोड़ने के बाद तरह-तरह की सज़ाओं में जैसे सूरतों का बदल जाना और ज़िल्लत व रुस्वाई वग़ैरह, गिरफ़्तार हुए। पस अल्लाह की इनायतों और मेहरबानियों के बाद यह जो उनके साथ हुआ) तो सिर्फ़ उनके अ़हद तोड़ने की वजह से हमने उनको अपनी रहमत (यानी उसके आसार) से दूर कर दिया, (और यही हक़ीक़त है लानत की) और (इसी लानत के आसार में से यह है कि) हमने उनके दिलों को कठोर कर दिया (कि हक़ बात का उन पर असर ही नहीं होता, और इस सख़्त-दिली के आसार में से यह है कि) वे लोग (यानी उनमें के उलेमा अल्लाह के) कलाम (यानी तौरात) को उसके (अलफ़ाज़ या मतलब के) मौक़ों से बदलते हैं (यानी लफ़्ज़ी या मानवी रद्दोबदल करते हैं) और (उस रद्दोबदल का असर यह हुआ कि) वे लोग जो कुछ उनको (तौरात में) नसीहत की गई थी उसमें से एक बड़ा हिस्सा (नफ़े का जो कि उनको अ़मल करने से नसीब होता) ज़ाया कर बैठे, (क्योंकि ज़्यादा मश्क़ उनकी इस मज़ामीन के बदले में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

की रिसालत की तस्दीक़ से संबन्धित हिस्से में होती थी, और ज़ाहिर है कि ईमान से ज़्यादा बड़ा हिस्सा क्या होगा। ग़र्ज़ कि अ़हद के तोड़ने पर लानत मुरत्तब हुई और लानत पर दिल की सख़्ती वग़ैरह, और दिल की सख़्ती पर अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल और रद्दोबदल पर बड़े फ़ायदे का हाथ से जाना, और तरतीब की वजह ज़ाहिर है) और (फिर यह भी तो नहीं कि जितना कर चुके उस पर बस करें बल्कि हालत यह है कि) आपको आये दिन (यानी हमेशा दीन के बारे में) किसी न किसी (नई) ख़ियानत की इत्तिला होती रहती है जो उनसे सादिर होती है सिवाय उनमें के गिने-चुने चन्द शख़्सों के (जो कि मुसलमान हो गये थे) सो आप उनको माफ़ कीजिए और उनसे दरगुज़र कीजिए (यानी जब तक शरई ज़रूरत न हो उनकी ख़ियानतों का इज़हार और उनको रुस्वा व ज़लील न कीजिए) बिला शुब्हा अल्लाह तआ़ला अच्छा मामला करने वाले लोगों से मुहब्बत करता है।

(और बिना ज़रूरत रुस्वा न करना एक तरह का अच्छा बर्ताव है) और जो लोग (दीन की मदद के दावे के तौर पर) कहते हैं कि हम ईसाई हैं, हमने उनसे भी उनका अ़हद (यहूदियों के अ़हद की तरह) लिया था, सो वे भी जो कुछ उनको (इंजील वग़ैरह में) नसीहत की गई उसमें से अपना एक बड़ा हिस्सा (नफ़े का जो कि उनको अ़मल करने से नसीब होता) ज़ाया कर बैठे, (क्योंकि वह चीज़ जिसको खो बैठे तौहीद है और ईमान लाना है जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर जिसका हुक्म उनको भी हुआ था और इसका बड़े फ़ायदे की चीज़ होना ज़ाहिर है, जब तौहीद को छोड़ बैठे) तो हमने उनमें आपस में क़ियामत तक के लिए बुग़्ज़ और दुश्मनी डाल दी, (यह तो दुनियावी सज़ा हुई) और जल्द ही (आख़िरत में कि वह भी क़रीब ही है) उनको अल्लाह तआ़ला उनका किया हुआ जतला देंगे (फिर सज़ा देंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आयत में यह बतलाया गया है कि बनी इस्राईल ने अपनी बदबख़्ती से इन वाज़ेह हिदायतों पर कान न धरे और मीसाक़ (अ़हद व इक़रार) की मुख़ालफ़त की तो अल्लाह तआ़ला ने उनको तरह-तरह के अ़ज़ाबों में मुब्तला कर दिया।

बनी इस्राईल पर उनके बुरे आमाल और सरकशी की सज़ा में दो तरह के अ़ज़ाब आये- एक ज़ाहिरी और महसूस जैसे पथराव या ज़मीन का तख़्ता उलट देना वग़ैरह, जिनका ज़िक्र क़ुरआने करीम की आयतों में अनेक मक़ामात पर आया है।

दूसरी क़िस्म अ़ज़ाब की मानवी और रूहानी है कि सरकशी की सज़ा में उनके दिल व दिमाग़ मस्ख़ हो गये। उनमें सोचने समझने की सलाहियत न रही। वे अपने गुनाहों के वबाल में और ज़्यादा गुनाहों में मुब्तला होते चले गये।

इरशाद है:

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِّيْثَاقَهُمْ لَعَنّٰهُمْ وَجَعَلْنَا قُلُوْبَهُمْ قٰسِيَةً

यानी हमने उनके अ़हद तोड़ने और मीसाक़ के उल्लंघन की सज़ा में उनको अपनी रहमत से

दूर कर दिया, और उनके दिलों को सख़्त कर दिया कि अब उनमें किसी चीज़ की गुंजाईश न रही। इसी रहमत से दूरी और दिलों की सख़्ती को क़ुरआने करीम ने सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन में 'रा-न' के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया हैः

كَلَّا بَلْ رَانَ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ مَّا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ.

यानी स्पष्ट क़ुरआनी आयतों और खुली हुई निशानियों से इनकार की वजह यह है कि उनके दिलों पर उनके गुनाहों की वजह से ज़ंग बैठ गया है।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि इनसान जब पहली बार कोई गुनाह करता है तो उसके दिल पर एक सियाह नुक़्ता (काला धब्बा) लग जाता है, जिसकी बुराई को वह हर वक़्त ऐसा महसूस करता है जैसे किसी साफ़ सफ़ेद कपड़े पर एक सियाह दाग़ लग जाये, वह हर वक़्त नज़र को तकलीफ़ देता है। फिर अगर उसने सचेत होकर तौबा कर ली और आईन्दा गुनाह से बाज़ आ गया तो वह नुक़्ता मिटा दिया जाता है। और अगर उसने परवाह न की बल्कि दूसरे गुनाहों में मुब्तला होता चला गया तो हर गुनाह पर एक सियाह नुक़्ते का इज़ाफ़ा होता रहेगा यहाँ तक कि उसके दिल का पन्ना उन नुक़्तों से बिल्कुल सियाह हो जायेगा। उस वक़्त उसके दिल की यह हालत हो जायेगी जैसे कोई बर्तन औंधा रखा हो कि उसमें कोई चीज़ डाली जाये तो फ़ौरन बाहर आ जाती है, इसलिये कोई ख़ैर और नेकी की बात उसके दिल में नहीं जमती, उस वक़्त उसके दिल की यह कैफ़ियत हो जाती है किः

لا يعرف معروفا ولا ينكر منكرا.

यानी अब न वह किसी नेकी को नेक समझता है न बुराई को बुरा बल्कि मामला उलट होने लगता है कि ऐब को हुनर, बदी को नेकी, गुनाह को सवाब समझने लगता है और अपनी नाफ़रमानी व बद-अ़मली में बढ़ता चला जाता है। यह उसके गुनाह की नक़द सज़ा है जो उसको दुनिया ही में मिल जाती है।

कुछ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया हैः

ان من جزاء الحسنة الحسنة بعدها وان من جزاءِ السيئة السيئة بعدها.

यानी नेकी की एक नक़द जज़ा यह है कि उसके बाद उसको दूसरी नेकी की तौफ़ीक़ होती है। इसी तरह गुनाह की नक़द सज़ा यह है कि एक गुनाह के बाद उसका दिल दूसरे गुनाहों की तरफ़ माईल होने लगता है।

मालूम हुआ कि नेकियों और गुनाहों में अपनी तरफ़ खींचना और कशिश है कि एक नेकी दूसरी नेकी को दावत देती है, और एक बदी दूसरी बदी और गुनाह को साथ ले आती है।

बनी इस्राईल को अ़हद तोड़ने की नक़द सज़ा नियमानुसार यह मिली कि वे रहमते ख़ुदावन्दी से दूर हो गये, जो निजात का सब से बड़ा वसीला है और उनके दिल सख़्त हो गये जिसकी नौबत यहाँ तक पहुँच गयी किः

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ عَنْ مَّوَاضِعِه.

यानी ये लोग कलामे इलाही को उसके ठिकाने से फेर देते हैं। यानी ख़ुदा के कलाम में कमी-बेशी और रद्दोबदल करते हैं। कभी उसके अलफ़ाज़ में और कभी मायने में, कभी तिलावत (पढ़ने) में। तहरीफ़ (रद्दोबदल) की ये सब क़िस्में क़ुरआने करीम और हदीस की किताबों में बयान की गयी हैं जिसका किसी क़द्र एतिराफ़ आजकल कुछ यूरोपियन ईसाईयों को भी करना पड़ा है। (तफ़सीरे उस्मानी)

इस मानवी सज़ा का यह नतीजा हुआ किः

وَنَسُوْا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوْا بِه.

यानी नसीहत जो उनको की गयी थी उससे नफ़ा उठाना भूल गये। और फिर फ़रमाया कि उनकी यह सज़ा उनके गले का ऐसा हार बन गयीः

وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَآئِنَةٍ مِّنْهُمْ.

यानी आप हमेशा उनकी किसी दग़ा फ़रेब पर अवगत होते रहेंगेः

اِلَّا قَلِيْلًا مِّنْهُمْ.

सिवाय थोड़े लोगों के, जैसे हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु वग़ैरह जो पहले अहले किताब के दीन पर थे फिर सच्चे मुसलमान हो गये।

यहाँ तक बनी इस्राईल के बुरे आमाल और बुरे अख़्लाक़ का जो बयान आया बज़ाहिर इसका तक़ाज़ा यह था कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनसे इन्तिहाई नफ़रत और अपमान का मामला करें, उनको पास न आने दें। इसलिये आयत के आख़िरी जुमले में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी किः

فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ. اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ.

यानी आप उनको माफ़ करें और उनके बुरे आमाल से दरगुज़र करें। उनसे नफ़रत व दूरी की सूरत न रखें। क्योंकि अल्लाह तआ़ला एहसान करने वालों को पसन्द करता है।

मतलब यह है कि उनके ऐसे हालात के बावजूद अपने तबई तक़ाज़े पर अ़मल न करें, यानी उनसे नफ़रत घृणा का बर्ताव न करें। क्योंकि उनकी सख़्त-दिली और बेहिसी के बाद अगरचे किसी वअ़ज़ व नसीहत का उनके लिये असरदार होना बहुत दूर की बात है लेकिन रवादारी और अच्छे अख़्लाक़ का मामला ऐसा कीमिया है कि उसके ज़रिये उन बेहिसों में हिस (समझ) पैदा हो सकती है। और उनमें हिस पैदा हो या न हो, बहरहाल अपने अख़्लाक़ व मामलात को दुरुस्त रखना तो ज़रूरी है, एहसान का मामला अल्लाह तआ़ला को पसन्द है, उसके ज़रिये मुसलमानों को तो अल्लाह तआ़ला की और निकटता हासिल हो ही जायेगी।

وَمِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى.

इस आयत से पहली आयत में यहूदियों के अ़हद तोड़ने और अ़ज़ाब का ज़िक्र था, इस

आयत में कुछ ईसाईयों का हाल बयान फ़रमाया है।

ईसाई फ़िर्क़ों में आपसी दुश्मनी

इस आयत में हक़ तआ़ला ने ईसाईयों के अ़हद तोड़ने की यह सज़ा बयान की है कि उनमें आपस में फूट, नफ़रत और दुश्मनी डाल दी गयी है जो क़ियामत तक चलती रहेगी।

इस पर आजकल के ईसाईयों के हालात से यह शुब्हा पैदा हो सकता है कि वे तो आपस में सब एकजुट नज़र आते हैं। जवाब यह है कि यह हाल उन लोगों का बयान किया गया है जो वाक़ई ईसाई हैं और ईसाई मज़हब के पाबन्द हैं, और जो ख़ुद अपने मज़हब को भी छोड़कर बेदीन बन गये वे दर हक़ीक़त ईसाईयों की फ़ेहरिस्त से ख़ारिज हैं, चाहे वे क़ौमी तौर पर अपने आपको ईसाई कहते हों। ऐसे लोगों में अगर वह मज़हबी फूट और आपसी दुश्मनी न हो तो वह इस आयत के विरुद्ध नहीं। क्योंकि फूट और विवाद तो मज़हब की बुनियाद पर था, जब मज़हब ही न रहा तो इख़्तिलाफ़ (विवाद) भी न रहा और आयत में बयान उन लोगों का है जो मज़हबी तौर पर नसारा और ईसाई हैं, उनका विवाद और फूट मशहूर व परिचित है।

तफ़सीरे बैज़ावी के हाशिये में तैसीर से नक़ल किया है कि नसारा (ईसाईयों) में असल तीन फ़िर्क़े थे- एक निस्तूरिया जो ईसा अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा का बेटा कहते थे। दूसरा याक़ूबिया जो ख़ुद ईसा अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा के साथ मिला हुआ और उनमें रचा हुआ मानते थे। तीसरा मलकाईया जो ईसा अ़लैहिस्सलाम को तीन ख़ुदाओं में से एक मानते थे। और ज़ाहिर है कि अ़क़ीदों में इतने बड़े विवाद व फ़र्क़ के साथ आपस में दुश्मनी होना लाज़िमी है।

يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ قَدْ جَآءَكُمْ رَسُوْلُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ كَثِيْرًا مِّمَّا كُنْتُمْ تُخْفُوْنَ مِنَ الْكِتٰبِ وَيَعْفُوْا عَنْ كَثِيْرٍ ۬ؕ قَدْ جَآءَكُمْ مِّنَ اللّٰهِ نُوْرٌ وَّكِتٰبٌ مُّبِيْنٌ ۙ يَّهْدِيْ بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهٗ سُبُلَ السَّلٰمِ وَيُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَى النُّوْرِ بِاِذْنِهٖ وَيَهْدِيْهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ؕ قُلْ فَمَنْ يَّمْلِكُ مِنَ اللّٰهِ شَيْئًا اِنْ اَرَادَ اَنْ يُّهْلِكَ الْمَسِيْحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهٗ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا ؕ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا ؕ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ وَالنَّصٰرٰى نَحْنُ اَبْنٰٓؤُا اللّٰهِ وَاَحِبَّآؤُهٗ ؕ قُلْ فَلِمَ يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوْبِكُمْ ؕ بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِّمَّنْ خَلَقَ ؕ يَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا ؗ وَاِلَيْهِ الْمَصِيْرُ ۝

या अह्लल्-किताबि क़द् जाअकुम् रसूलुना युबय्यिनु लकुम् कसीरम्-मिम्मा कुन्तुम् तुख़्फ़ू-न मिनल्-किताबि व यअ़्फ़ू अ़न् कसीरिन्, क़द् जाअकुम् मिनल्लाहि नूरुंव्-व किताबुम् मुबीन (15) यह्दी बिहिल्लाहु मनित्त-ब-अ़ रिज़्वानहू सुबुलस्सलामि व युख़्रिजुहुम् मिनज़्ज़ुलुमाति इलन्नूरि बि-इज़्निही व यह्दीहिम् इला सिरातिम् मुस्तक़ीम (16) ल-क़द् क-फ़रल्लज़ी-न क़ालू इन्नल्ला-ह हुवल्-मसीहुब्नु मर्य-म, क़ुल् फ़-मंय्यम्लिकु मिनल्लाहि शैअन् इन् अरा-द अंय्युह्लिकल्-मसीहब्-न मर्य-म व उम्म-हू व मन् फ़िल्अर्ज़ि जमीअ़न्, व लिल्लाहि मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि व मा बैनहुमा, यख़्लुक़ु मा यशा-उ, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (17) व क़ालतिल्-यहूदु वन्नसारा नह्नु अब्नाउल्लाहि व अहिब्बाउहू, क़ुल् फ़लि-म युअ़ज़्ज़िबुकुम् बिज़ुनूबिकुम्, बल् अन्तुम् ब-शरुम् मिम्-मन्

ऐ किताब वालो तहक़ीक़ (कि) आया है तुम्हारे पास रसूल हमारा, ज़ाहिर करता है तुम पर बहुत सी चीज़ें जिनको तुम छुपाते थे किताब में से, और दरगुज़र करता है बहुत सी चीज़ों से, बेशक तुम्हारे पास आई है अल्लाह की तरफ़ से रोशनी और किताब ज़ाहिर करने वाली। (15) जिससे अल्लाह हिदायत करता है उसको जो ताबे हुआ उसकी रज़ा का, सलामती की राहें, और निकालता है उनको अंधेरों से अपने हुक्म से और उनको चलाता है सीधी राह। (16) बेशक काफ़िर हुए जिन्होंने कहा कि अल्लाह वही मसीह है मरियम का बेटा, तू कह दे फिर किसका बस चल सकता है अल्लाह के आगे अगर वह चाहे कि हलाक करे मसीह मरियम के बेटे को और उसकी माँ को और जितने लोग हैं ज़मीन में सब को, और अल्लाह ही के लिये है सल्तनत आसमानों और ज़मीन की और जो कुछ दरमियान इन दोनों के है, पैदा करता है जो चाहे और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है। (17) और कहते हैं यहूदी और ईसाई- हम बेटे हैं अल्लाह के और उसके प्यारे, तू कह फिर क्यों अ़ज़ाब है तुमको तुम्हारे गुनाहों पर, कोई नहीं, बल्कि तुम भी एक आदमी हो उसकी मख़्लूक़ में बख़्शे जिसको चाहे और अ़ज़ाब करे जिसको चाहे और

ख़-ल-क़, यग़्फ़िरु लिमंय्यशा-उ व युअ़ज़्ज़िबु मंय्यशा-उ, व लिल्लाहि मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि व मा बैनहुमा व इलैहिल्-मसीर (18)	अल्लाह ही के लिये है सल्तनत आसमानों और ज़मीन की और जो कुछ दोनों के बीच में है, और उसी की तरफ़ लौटकर जाना है। (18)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ किताब वालो (यानी यहूदियो व ईसाईयो)! तुम्हारे पास हमारे (ये) रसूल (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आए हैं (जिनके इल्मी कमाल का तो यह हाल है कि) किताब (के मज़ामीन) में से जिन चीज़ों को तुम छुपाते हो उनमें से बहुत-सी बातों को (जिनके इज़हार में कोई शरई मस्लेहत हो ज़ाहिरी तौर पर उलूम का न सीखने के बावजूद ख़ालिस वही के ज़रिये वाक़िफ़ होकर) तुम्हारे सामने साफ़-साफ़ खोल देते हैं और (अ़मली व अख़्लाक़ी कमाल का यह आ़लम है कि जिन चीज़ों को तुमने छुपा लिया था उनमें से) बहुत-सी चीज़ों को (जानने और बाख़बर होने के बावजूद अख़्लाक़ के सबब उनके इज़हार से) दरगुज़र कर देते हैं। (जबकि उनके इज़हार में कोई शरई मस्लेहत न हो, सिर्फ़ तुम्हारी रुस्वाई ही होती हो। और यह इल्मी कमाल नुबुव्वत की दलील है। और अख़्लाक़ी कमाल उसकी पुष्टि करने वाला और ताकीद करने वाला है। इससे मालूम हुआ कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दूसरे मोजिज़ों के अ़लावा ख़ुद तुम्हारे साथ आपका यह बर्ताव आपकी नुबुव्वत साबित करने के लिये काफ़ी है। और इसी रसूल के ज़रिये) तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से एक रोशन चीज़ आई है और (वह) एक स्पष्ट किताब (है) कि उसके ज़रिये से अल्लाह तआ़ला ऐसे शख़्सों को जो हक़ की रज़ा के तालिब हों सलामती की राहें बतलाते हैं (यानी जन्नत में जाने के तरीक़े जो ख़ास अ़क़ीदे व आमाल हैं, तालीम फ़रमाते हैं, क्योंकि दर हक़ीक़त मुकम्मल सलामती तो जन्नत ही में हो सकती है, न उसमें कोई कमी होती है और न छिन जाने और ख़त्म होने का ख़तरा) और उनको अपनी तौफ़ीक़ से (कुफ़्र व नाफ़रमानी की) अंधेरियों से निकाल कर (ईमान व नेक अ़मल के) नूर की तरफ़ ले आते हैं, और उनको (हमेशा) सही रास्ते पर क़ायम रखते हैं।

बिला शुब्हा वे लोग काफ़िर हैं जो (यूँ) कहते हैं कि अल्लाह तआ़ला मसीह इब्ने मरियम ही है। आप (यूँ) पूछिए (कि अगर ऐसा है तो यह बतलाओ) कि अगर अल्लाह तआ़ला हज़रत मसीह इब्ने मरियम (जिनको तुम अल्लाह और ख़ुदा समझते हो) को और उनकी माँ (हज़रत मरियम) को और जितने ज़मीन में आबाद हैं उन सब को (मौत से) हलाक करना चाहें तो (क्या) कोई शख़्स ऐसा है जो ख़ुदा तआ़ला से उनको ज़रा भी बचा सके, (यानी इतनी बात को तो तुम भी मानते हो कि उनको हलाक करना अल्लाह की क़ुदरत में है, तो जिस ज़ात का हलाक करना दूसरे के क़ब्ज़े में हो वह ख़ुदा कैसे हो सकता है। इससे मसीह अ़लैहिस्सलाम के ख़ुदा होने का

अक़ीदा बातिल हो गया) और (जो वास्तव में ख़ुदा और सब का माबूद है यानी) अल्लाह तआ़ला (उसकी यह शान है कि उस) ही के लिए ख़ास है हुकूमत आसमानों पर और ज़मीन पर और जितनी चीज़ें इन दोनों के बीच हैं उन पर, और वह जिस चीज़ को चाहें पैदा कर दें, और अल्लाह तआ़ला को हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत है।

और यहूदी व ईसाई (दोनों फ़रीक़) दावा करते हैं कि हम अल्लाह के बेटे और उसके महबूब (प्यारे) हैं (मतलब यह मालूम होता है कि हम चूँकि अम्बिया की औलाद हैं इसलिये अल्लाह तआ़ला के यहाँ हमारी एक ख़ुसूसियत है कि हम गुनाह भी करें तो उस पर इतनी नाराज़ी नहीं होती जितनी दूसरों पर होती है, जैसे बाप पर अपने बेटे की नाफ़रमानी का इतना असर नहीं होता जितना किसी ग़ैर आदमी के वैसे ही काम पर होता है। उनके इस ख़्याल के बातिल और ग़लत होने के लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है कि) आप (उनसे) यह पूछिए कि (अच्छा तो) फिर तुमको तुम्हारे गुनाहों के बदले (आख़िरत में) अ़ज़ाब क्यों देंगे (जिसके तुम भी क़ायल हो, जैसा कि यहूदियों का क़ौल थाः

لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّآ اَيَّامًا مَّعْدُوْدَةً.

यानी अगर हमें जहन्नम का अ़ज़ाब हुआ भी तो चन्द रोज़ ही होगा। और ख़ुद हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम का क़ौल क़ुरआन पाक में ज़िक्र किया गया हैः

اِنَّهٗ مَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ.

यानी जिस शख़्स ने अल्लाह के साथ किसी को शरीक ठहराया तो अल्लाह तआ़ला उस पर जन्नत हराम कर देते हैं। जिससे स्पष्ट है कि वास्तव में जो ईसाई हैं वे भी इसके इक़रारी हैं कि आख़िरत में गुनाहों पर उन्हें भी अ़ज़ाब होगा।

ख़ुलासा यह है कि आख़िरत के अ़ज़ाब का जब तुम्हें ख़ुद भी इक़रार है तो यह बतलाओ कि क्या कोई बाप अपने बेटे या महबूब (प्यारे) को अ़ज़ाब भी दिया करता है? इसलिये अपने आपको ख़ुदा की औलाद कहना बातिल (ग़लत और झूठ) है।

यहाँ यह शुब्हा नहीं किया जा सकता कि कई बार बाप भी अपनी औलाद के सुधार व तर्बियत के लिये अदब सिखाने के लिये सज़ा देता है तो सज़ा होना बेटा होने के ख़िलाफ़ नहीं। क्योंकि बाप की सज़ा अदब सिखाने के लिये होती है ताकि वह आईन्दा ऐसा काम न करे। और आख़िरत में अदब सिखाने का कोई मक़ाम नहीं। क्योंकि वह दारुल-अ़मल (अ़मल करने की जगह) नहीं दारुल-जज़ा (बदले की जगह) है। वहाँ आगे कोई काम करने, या किसी काम से रोकने का कोई गुमान व ख़्याल नहीं, जिसको अदब सिखाना कहा जाये। इसलिये वहाँ जो सज़ा होगी वह ख़ालिस सज़ा और अ़ज़ाब देना ही हो सकता है, जो औलाद या महबूब होने के क़तई मनाफ़ी (ख़िलाफ़ और विरुद्ध) है, इसलिये मालूम हुआ कि तुम्हारी कोई विशेषता अल्लाह के यहाँ नहीं, बल्कि तुम भी और सब मख़्लूक़ ही की तरह के एक (मामूली) आदमी हो, अल्लाह तआ़ला जिसको चाहेंगे बख़्शेंगे और जिसको चाहेंगे सज़ा देंगे, और अल्लाह तआ़ला ही की है सब

हुकूमत आसमानों में भी और ज़मीन में भी और जो कुछ उनके बीच में है (उनमें भी)। उसी की (यानी अल्लाह ही की) तरफ़ सब को लौटकर जाना है (उसके सिवा कोई पनाह की जगह नहीं)।

मआरिफ़ व मसाईल

इस आयत में ईसाईयों के एक ही क़ौल की तरदीद की गयी है जो उनके एक फ़िर्के का अक़ीदा है, यानी यह कि हज़रत मसीह (मआज़ल्लाह) अल्लाह तआला ही हैं। मगर तरदीद जिस दलील से की गयी है वह तमाम फ़िर्क़ों के बातिल अक़ीदों को शामिल है जो भी तौहीद के ख़िलाफ़ हैं। चाहे ख़ुदा का बेटा होने का अक़ीदा हो या तीन ख़ुदाओं में से एक ख़ुदा होने का ग़लत अक़ीदा, इससे सब का रद्द और ग़लत होना ज़ाहिर हो गया।

और इस जगह हज़रत मसीह और उनकी वालिदा का ज़िक्र करने में दो हिक्मतें हो सकती हैं- अव्वल तो यह कि हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम का हक़ तआला के सामने यह आजिज़ व बेबस होना कि न वह अपने आपको अल्लाह से बचा सकते हैं न अपनी माँ को जिनकी ख़िदमत व हिफ़ाज़त को शरीफ़ बेटा अपनी जान से भी ज़्यादा अज़ीज़ रखता है। दूसरे यह कि इसमें उस फ़िर्के के ख़्याल की भी तरदीद (रद्द) हो गयी जो हज़रत मरियम को तीन ख़ुदाओं में से एक ख़ुदा मानते हैं।

और इस जगह हज़रत मसीह और हज़रत मरियम अ़लैहिमस्सलाम की मौत को बतौर फ़र्ज़ के ज़िक्र फ़रमाया है, हालाँकि क़ुरआन नाज़िल होने के वक़्त हज़रत मरियम की मौत महज़ फ़र्ज़ी नहीं थी बल्कि वाक़े हो चुकी थी। इसकी वजह या तो तग़लीब है यानी असल में तो ईसा अ़लैहिस्सलाम की मौत को बतौर फ़र्ज़ (मान लेने) के बयान करना था, माँ का ज़िक्र भी इसी उनवान के तहत में कर दिया गया अगरचे उनकी मौत वाक़े हो चुकी थी। और यह भी कहा जा सकता है कि मुराद यह है कि जिस तरह हज़रत मरियम पर हम मौत मुसल्लत कर चुके हैं, हज़रत मसीह और दूसरी सब मख़्लूक़ पर भी इसी तरह मुसल्लत कर देना हमारे क़ब्ज़े में है। और "यख़्लुक़ु मा यशा-उ" में ईसाईयों के इसी ग़लत अक़ीदे के मन्शा को बातिल करना है। क्योंकि हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा बनाने का असल मन्शा उनके यहाँ यह है कि उनकी पैदाईश सारी दुनिया के क़ायदों (दस्तूर और तरीक़ों) के ख़िलाफ़ बग़ैर बाप के सिर्फ़ माँ से हुई है। अगर वह भी इनसान होते तो क़ायदे के मुताबिक़ माँ और बाप दोनों के ज़रिये पैदाईश होती।

इस जुमले में इसका जवाब दे दिया कि अल्लाह तआला को सब तरह की कामिल क़ुदरत हासिल है कि जो चाहे जिस तरह चाहे पैदा कर दे। जैसा कि आयतः

اِنَّ مَثَلَ عِيْسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ اٰدَمَ

में इसी शुब्हे को दूर फ़रमाया है कि हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश क़ुदरत के आ़म क़ानून से अलग होना उनकी ख़ुदाई की दलील नहीं हो सकती। देखो हज़रत आदम

अ़लैहिस्सलाम को तो हक़ तआ़ला ने माँ और बाप दोनों के बग़ैर पैदा फ़रमा दिया था। उनको सब क़ुदरत है, वही ख़ालिक़ व मालिक और इबादत के लायक़ हैं। दूसरा कोई उनका शरीक नहीं हो सकता।

يَٰٓأَهْلَ ٱلْكِتَٰبِ قَدْ جَآءَكُمْ رَسُولُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلَىٰ فَتْرَةٍ مِّنَ ٱلرُّسُلِ أَن تَقُولُوا۟ مَا جَآءَنَا مِنۢ بَشِيرٍ وَلَا نَذِيرٍ ۖ فَقَدْ جَآءَكُم بَشِيرٌ وَنَذِيرٌ ۗ وَٱللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَىْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٩﴾

या अह्लल्-किताबि क़द् जाअकुम् रसूलुना युबय्यिनु लकुम् अ़ला फ़त्रतिम् मिनर्रुसुलि अन् तक़ूलू मा जाअना मिम्-बशीरिंव्-व ला नज़ीरिन् फ़-क़द् जा-अकुम् बशीरुंव्-व नज़ीरुन्, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (19) ✿	ऐ किताब वालो! आया है तुम्हारे पास रसूल हमारा खोलता है तुम पर रसूलों के सिलसिला टूटने के बाद, कभी तुम कहने लगो कि हमारे पास न आया कोई ख़ुशी या डर सुनाने वाला, सो आ चुका तुम्हारे पास ख़ुशी और डर सुनाने वाला और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है। (19) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ अहले किताब! तुम्हारे पास हमारे (ये) रसूल (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आ पहुँचे जो कि तुमको (शरीअ़त की बातें) साफ़-साफ़ बतलाते हैं, ऐसे वक़्त में कि रसूलों (के आने का) सिलसिला (मुद्दत से) मौक़ूफ़ "यानी रुका हुआ और बन्द" था, (और पहली शरीअ़तें नापैद और गुम हो चुकी थीं और अम्बिया का सिलसिला लम्बे समय तक बन्द रहने से उन गुमशुदा शरीअ़तों के दोबारा मालूम होने की संभावना भी न रही थी। इसलिये अब किसी रसूल के आने की सख़्त ज़रूरत थी, तो ऐसे वक़्त आपका तशरीफ़ लाना बड़ी नेमत और ग़नीमत समझना चाहिये) ताकि तुम (क़ियामत में) (यूँ न) कहने लगो (कि दीन के मामले में ग़लती और कोताही में हम इसलिये माज़ूर हैं कि) हमारे पास (कोई रसूल जो कि) ख़ुशख़बरी देने वाला और डराने वाला (हो जिससे हमको दीन का सही इल्म और अ़मल पर उभार पैदा होता) नहीं आया, सो (अब इस उज़्र की गुंजाईश नहीं रही क्योंकि) तुम्हारे पास ख़ुशख़बरी देने वाले और डराने वाले (यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आ चुके हैं, (अब न मानो तो अपने अन्जाम को ख़ुद समझ लो) और अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखते हैं (कि जब चाहें रहमत से अपने अम्बिया भेज दें, जब चाहें अपनी हिक्मत से उनको रोक लें, इसलिये किसी को यह हक़ नहीं है कि जब लम्बे समय से अम्बिया का सिलसिला बन्द है तो अब कोई रसूल नहीं आ सकता। क्योंकि यह सिलसिला एक मुद्दत तक बन्द रखना हक़ तआ़ला की हिक्मत से था, उसने

नुबुव्वत का सिलसिला बन्द और ख़त्म कर देने का कोई ऐलान उस वक़्त तक नहीं किया था, बल्कि पिछले तमाम अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के ज़रिये ये ख़बरें भी दे दी थीं कि आख़िरी ज़माने में एक ख़ास रसूल ख़ास शान और ख़ास सिफ़ात के साथ आने वाले हैं। जिन पर नुबुव्वत का समापन होगा। इस ऐलान के मुताबिक़ ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये)।

मआरिफ़ व मसाईल

عَلٰی فَتْرَةٍ مِّنَ الرُّسُلِ

फ़तरत के लफ़्ज़ी मायने सुस्त होने, ठहर जाने और किसी काम को निलंबित और बन्द कर देने के आते हैं। इस आयत में तफ़सीर के उलेमा ने फ़तरत के यही मायने बयान फ़रमाये हैं। और मुराद इससे कुछ अरसे के लिये नुबुव्वत व अम्बिया के सिलसिले का बन्द रहना है जो हज़रत ईसा के बाद ख़ातमुल-अम्बिया हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने तक का ज़माना है।

ज़माना-ए-फ़तूरत की तहक़ीक़

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हज़रत मूसा और हज़रत ईसा अलैहिमस्सलाम के बीच एक हज़ार सात सौ साल का ज़माना है। इस तमाम मुद्दत में अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के भेजने का सिलसिला बराबर जारी रहा। इसमें कभी फ़तूरत नहीं हुई। सिर्फ़ बनी इस्राईल में से एक हज़ार अम्बिया इस अरसे में भेजे गये, और ग़ैर बनी इस्राईल में से जो अम्बिया हुए वह उनके अलावा हैं। फिर हज़रत ईसा की पैदाईश और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने के बीच सिर्फ़ पाँच सौ साल का समय है। इसमें नबियों के आने का सिलसिला बन्द रहा, इसी लिये इस ज़माने को ज़माना-ए-फ़तूरत कहा जाता है। इससे पहले कभी इतना ज़माना अम्बिया के भेजे जाने से ख़ाली नहीं रहा।

(तफ़सीरे क़ुर्तुबी वज़ाहत के साथ)

हज़रत मूसा और हज़रत ईसा अलैहिमस्सलाम के बीच की मुद्दत, इसी तरह हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बीच की मुद्दत में और भी अनेक रिवायतें हैं जिनमें इससे कम व ज़्यादा मुद्दतें बयान हुई हैं। मगर असल मक़सद पर इससे कोई असर नहीं पड़ता।

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने हज़रत सलमान फ़ारसी से रिवायत किया है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम और ख़ातमुल-अम्बिया अलैहिस्सलाम के बीच का ज़माना छह सौ साल का था। और इस पूरी मुद्दत में कोई नबी नहीं भेजे गए जैसा कि सही बुख़ारी व मुस्लिम के हवाले से मिश्कात शरीफ़ में हदीस आई है, जिसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اَنَا اَوْلَى النَّاسِ بِعِيْسٰى

यानी मैं हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के साथ लोगों से ज़्यादा क़रीब हूँ। और इसका मतलब हदीस के आख़िर में यह बयान फ़रमायाः

لَيْسَ بَيْنَنَا نَبِيٌّ

यानी हम दोनों के बीच कोई नबी नहीं भेजा गया।

और सूरः यासीन में जो तीन रसूलों का ज़िक्र है वे दर हक़ीक़त हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के भेजे हुए क़ासिद थे जिनको लुग़वी (शाब्दिक) मायने के एतिबार से रसूल (पैग़ाम लाने वाला) कहा गया है। और ख़ालिद बिन सनान अ़रबी का जो कुछ हज़रात ने इस फ़त्रत के ज़माने में होना बयान किया है उसके मुताल्लिक़ तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में शिहाब के हवाले से बयान किया है कि उनका नबी होना तो सही है मगर उनका ज़माना हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से पहले है, बाद में नहीं।

ज़माना-ए-फ़त्रत के अहकाम

उक्त आयत से बज़ाहिर यह मालूम होता है कि अगर मान लो कोई क़ौम ऐसी हो कि उनके पास न कोई रसूल और न कोई पैग़म्बर आया और न उनके नायब (प्रतिनिधि) पहुँचे, और न पिछले नबियों की शरीअ़त उनके पास महफ़ूज़ थी, तो ये लोग अगर शिर्क के अ़लावा किसी ग़लत काम और गुमराही में मुब्तला हो जायें तो वे माज़ूर समझे जायेंगे। वे अ़ज़ाब के हक़दार नहीं होंगे। इसी लिये हज़राते फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) का अहले फ़त्रत के मामले में मतभेद है कि वे बख़्शे जायेंगे या नहीं।

उलेमा की अक्सरियत का रुझान यह है कि उम्मीद इसी की है कि वे बख़्श दिये जायेंगे जबकि वे अपने उस मज़हब के पाबन्द रहे हों जो ग़लत-सलत उनके पास हज़रत मूसा या हज़रत ईसा अ़लैहिमस्सलाम की तरफ़ मन्सूब होकर मौजूद था। बशर्ते कि वे तौहीद (एक ख़ुदा को मानने के अ़क़ीदे) के मुख़ालिफ़ और शिर्क में मुब्तला न हों। क्योंकि तौहीद का मसला (यानी अल्लाह को एक मानने का अ़क़ीदा) किसी नक़ल का मोहताज नहीं। वह हर इनसान ज़रा सा ग़ौर करे तो अपनी ही अ़क़्ल से मालूम कर सकता है।

एक सवाल और उसका जवाब

यहाँ यह सवाल पैदा हो सकता है कि जिन अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) को इस आयत में ख़िताब है उनके लिये अगरचे फ़त्रत के ज़माने में कोई रसूल नहीं पहुँचा मगर उनके पास तौरात और इंजील तो मौजूद थीं। उनके उलेमा भी थे, तो फिर क़ियामत में उनके लिये यह उज़्र करने का क्या मौक़ा था कि हमारे पास कोई हिदायत नहीं पहुँची थी। जवाब यह है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर तक असल तौरात व इंजील बाक़ी नहीं

रही थीं, रद्दोबदल और कमी-बेशी होकर उनमें झूठे क़िस्से कहानियाँ दाख़िल हो गयी थीं। इसलिये उनका होना और न होना बराबर था। और इत्तिफ़ाक़ से कहीं कोई असली नुस्ख़ा (प्रति) किसी के पास गुमनाम जगह में महफ़ूज़ रहा भी हो तो वह इसके ख़िलाफ़ नहीं। जैसा कि कुछ उलेमा जैसे इमाम इब्ने तैमिया वग़ैरह ने लिखा है कि तौरात व इंजील के असली नुस्ख़े (प्रतियाँ) कहीं-कहीं मौजूद थे।

ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के विशेष कमालात की तरफ़ इशारा

इस आयत में अहले किताब को मुख़ातब करके यह इरशाद फ़रमाना कि हमारे रसूल मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक लम्बे अंतराल के बाद आये हैं, इसमें एक इशारा इस तरफ़ भी है कि तुम लोगों को चाहिये कि आपके वजूद को बड़ी ग़नीमत और बड़ी नेमत समझें, लम्बे समय से यह सिलसिला बन्द था अब तुम्हारे लिये फिर खोला गया है।

दूसरा इशारा इस तरफ़ भी है कि आपका तशरीफ़ लाना ऐसे ज़माने और ऐसे मक़ाम में हुआ है जहाँ इल्म और दीन की कोई रोशनी मौजूद न थी। अल्लाह की मख़्लूक़ अल्लाह से ना-आशना होकर बुत-परस्ती में लग गयी थी। ऐसे ज़माने में ऐसी क़ौम की इस्लाह (सुधार) कोई आसान काम न था। ऐसे जाहिलीयत के ज़माने में ऐसी बिगड़ी हुई क़ौम आपके हवाले हुई। आपकी सोहबत के फ़ैज़ और नुबुव्वत के नूर से थोड़े ही अ़रसे में यह क़ौम सारी दुनिया के लिये इल्म, अ़मल, अख़्लाक़, मामलात, रहन-सहन, बर्ताव और ज़िन्दगी के तमाम क्षेत्रों में उस्ताद और पैरवी के क़ाबिल क़रार दी गयी, जिससे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नुबुव्वत व रिसालत और आपकी पैग़म्बराना तालीम का पहले तमाम अम्बिया में अफ़ज़ल व आला होना देखने और अनुभव से साबित हो गया। जो डॉक्टर किसी ऐसे मरीज़ का इलाज करे जो इलाज से मायूस हो चुका हो और ऐसी जगह में करे जहाँ डाक्टरी यंत्र व उपकरण और दवायें भी मौजूद न हों, और फिर वह उसके इलाज में इतना कामयाब हो कि यह मरने के क़रीब मरीज़ न सिर्फ़ यह कि तन्दुरुस्त हो गया बल्कि एक विशेषज्ञ और माहिर डॉक्टर भी बन गया, तो उस डॉक्टर के कमाल में किसी को क्या शुब्हा रह सकता है।

इसी तरह फ़तुरत के लम्बे ज़माने के बाद जबकि हर तरफ़ कुफ़्र व नाफ़रमानी की अंधेरी ही अंधेरी छाई हुई थी, आपकी तालीमात और तरबियत ने ऐसा उजाला कर दिया कि उसकी नज़ीर किसी पिछले दौर में नज़र नहीं आती तो सारे मोजिज़े एक तरफ़, तन्हा यह मोजिज़ा (चमत्कार) इनसान को आप पर ईमान लाने के लिये मजबूर कर सकता है।

وَاِذْ قَالَ مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ يٰقَوْمِ اذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا ۖ وَّاٰتٰىكُمْ مَّا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ﴿20﴾ يٰقَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِيْ كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَرْتَدُّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِكُمْ فَتَنْقَلِبُوْا خٰسِرِيْنَ ﴿21﴾ قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّ فِيْهَا قَوْمًا جَبَّارِيْنَ ۖ وَاِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَا حَتّٰى يَخْرُجُوْا مِنْهَا ۚ فَاِنْ يَّخْرُجُوْا مِنْهَا فَاِنَّا دٰخِلُوْنَ ﴿22﴾ قَالَ رَجُلٰنِ مِنَ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمَا ادْخُلُوْا عَلَيْهِمُ الْبَابَ ۚ فَاِذَا دَخَلْتُمُوْهُ فَاِنَّكُمْ غٰلِبُوْنَ ۚ وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوْٓا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿23﴾ قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَآ اَبَدًا مَّا دَامُوْا فِيْهَا فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ ﴿24﴾ قَالَ رَبِّ اِنِّيْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِيْ وَاَخِيْ فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿25﴾ قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً ۚ يَتِيْهُوْنَ فِي الْاَرْضِ ۗ فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿26﴾

व इज़् का-ल मूसा लिक़ौमिही या क़ौमिज़्कुरू निअ्-मतल्लाहि अ़लैकुम् इज़् ज-अ-ल फ़ीकुम् अम्बिया-अ व ज-अ-लकुम् मुलूकंव्-व आताकुम् मा लम् युअ्ति अ-हदम् मिनल्-आ़लमीन (20) या क़ौमिद्ख़ुलुल् अर्ज़ल् मुक़द्द-सतल्लती क-तबल्लाहु लकुम् व ला तर्तद्दू अ़ला अद्बारिकुम् फ़-तन्क़लिबू ख़ासिरीन (21) क़ालू या मूसा इन्-न फ़ीहा क़ौमन् जब्बारी-न व इन्ना लन् नद्ख़ु-लहा हत्ता यख़्रुजू मिन्हा फ़-इंय्यख़्रुजू मिन्हा फ़-इन्ना दाख़िलून (22) क़ा-ल रजुलानि मिनल्लज़ी-न

और जब कहा मूसा ने अपनी क़ौम को ऐ क़ौम याद करो एहसान अल्लाह का अपने ऊपर जब पैदा किये तुम में नबी और कर दिया तुमको बादशाह और दिया तुमको जो नहीं दिया था किसी को जहान में। (20) ऐ क़ौम दाख़िल हो पाक ज़मीन में जो मुक़र्रर कर दी अल्लाह ने तुम्हारे वास्ते और न लौटो अपनी पीठ की तरफ़ फिर जा पड़ोगे नुक़सान में। (21) बोले ऐ मूसा वहाँ एक क़ौम है ज़बरदस्त और हम हरगिज़ वहाँ न जायेंगे यहाँ तक कि वे निकल जायें उसमें से, फिर अगर वे निकल जायेंगे उसमें से तो हम ज़रूर दाख़िल होंगे। (22) कहा दो मर्दों ने अल्लाह से डरने वालों में से कि ख़ुदा की

यख़ाफ़ू-न अन्अ़मल्लाहु अ़लैहिमद्ख़ुलू अ़लैहिमुल्बा-ब फ़-इज़ा दख़ल्तुमूहु फ़इन्नकुम् ग़ालिबू-न, व अ़लल्लाहि फ़-तवक्कलू इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (23) क़ालू या मूसा इन्ना लन् नद्ख़ु-लहा अ-बदम् मा दामू फ़ीहा फ़ज़्हब् अन्-त व रब्बु-क फ़क़ातिला इन्ना हाहुना क़ाअ़िदून (24) क़ा-ल रब्बि इन्नी ला अम्लिकु इल्ला नफ़्सी व अख़ी फ़फ़्रुक़् बैनना व बैनल् क़ौमिल् फ़ासिक़ीन (25) क़ा-ल फ़-इन्नहा मुहर्र-मतुन् अ़लैहिम् अर्बअ़ी-न स-नतन् यतीहू-न फ़िल्अर्ज़ि, फ़ला तअ्-स अ़लल् क़ौमिल्-फ़ासिक़ीन (26) ✿	नवाज़िश थी उन दो पर, घुस जाओगे तो तुम ही ग़ालिब होगे और अल्लाह पर भरोसा करो अगर यक़ीन रखते हो। (23) बोले ऐ मूसा हम हरगिज़ न जायेंगे सारी उम्र जब तक वे रहेंगे उसमें सो तू जा और तेरा रब और तुम दोनों लड़ो हम तो यहीं बैठे हैं। (24) बोला ऐ रब मेरे मेरे इख़्तियार में नहीं मगर मेरी जान और मेरा भाई, सो जुदाई कर दे तू हम में और इस नाफ़रमान क़ौम में। (25) फ़रमाया तहक़ीक़ वह ज़मीन हराम की गई है इन पर चालीस साल, सर मारते फिरेंगे मुल्क में, सो तू अफ़सोस न कर नाफ़रमान लोगों पर। (26) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त भी ज़िक्र के क़ाबिल है) जब मूसा (अ़लैहिस्सलाम) ने अपनी क़ौम (यानी बनी इस्राईल) से (पहले जिहाद का शौक़ दिलाने की भूमिका में यह) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! तुम अल्लाह तआ़ला के इनाम को जो कि तुम पर हुआ है याद करो, जबकि अल्लाह तआ़ला ने तुम में से बहुत-से पैग़म्बर बनाये (जैसे हज़रत याक़ूब अ़लैहिस्सलाम और हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम और ख़ुद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम आदि और किसी क़ौम में पैग़म्बरों का होना उनका दुनियावी और दीनी शर्फ़ है, यह तो बातिनी व रूहानी नेमत दी) और (ज़ाहिरी नेमत यह दी कि) तुमको मुल्क वाला बनाया (चुनाँचे फ़िरऔ़न के मुल्क पर अभी क़ाबिज़ हो चुके हो) और तुमको (कुछ-कुछ) वे चीज़ें दीं जो दुनिया जहान वालों में से किसी को नहीं दीं (जैसा कि दरिया में रास्ता देना, दुश्मन को अ़जीब अन्दाज़ से ग़र्क़ करना, जिसके बाद एक दम से हद से ज़्यादा ज़िल्लत व मुसीबत से निकलकर बहुत ही बुलन्दी व राहत में पहुँच गये, यानी इसमें तुमको ख़ास ख़ुसूसियत दी। फिर इस भूमिका के बाद असली मक़सद

के साथ उनको ख़िताब फ़रमाया कि) ऐ मेरी क़ौम! (इन नेमतों और एहसानों का तक़ाज़ा यह है कि तुमको जो इस जिहाद के बारे में अल्लाह का हुक्म हुआ है उस पर आमादा रहो और) बरकत वाले मुल्क (यानी शाम की राजधानी) में (जहाँ ये अ़मालिक़ा शासक हैं, जिहाद के इरादे से) दाख़िल होओ, कि इसको अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे हिस्से में लिख दिया है (इसलिये इरादा करते ही फ़तह होगी) और पीछे (वतन की तरफ़) वापस मत चलो कि फिर बिल्कुल घाटे और नुक़सान में पड़ जाओगे (दुनिया में भी कि मुल्की विस्तार से मेहरूम रहोगे और आख़िरत में कि जिहाद के फ़रीज़े को छोड़ने से गुनाहगार रहोगे)।

कहने लगे कि ऐ मूसा! वहाँ तो बड़े-बड़े ज़बरदस्त आदमी (रहते) हैं, और हम तो वहाँ हरगिज़ क़दम न रखेंगे जब तक कि वे (किसी तरह) वहाँ से (न) निकल जाएँ। (हाँ) अगर वे वहाँ से (कहीं और) चले जाएँ तो हम बेशक जाने को तैयार हैं। (मूसा अ़लैहिस्सलाम की बात की ताईद के लिये) उन दो शख़्सों ने (भी) जो कि (अल्लाह से) डरने वालों (यानी मुत्तक़ियों) में से थे, (और) जिन पर अल्लाह तआ़ला ने फ़ज़्ल किया था (कि अपने अ़हद पर जमे रहे थे उन कम-हिम्मतों को समझाने के तौर पर) कहा कि तुम उन पर (चढ़ाई करके उस शहर के) दरवाज़े तक तो चलो, सो जिस वक़्त तुम दरवाज़े में क़दम रखोगे उसी वक़्त ग़ालिब आ जाओगे (मतलब यह है कि जल्दी फ़तह हो जायेगा, चाहे रौब से भाग जायें या थोड़ा ही मुक़ाबला करना पड़े) और अल्लाह तआ़ला पर नज़र रखो अगर तुम ईमान रखते हो (यानी तुम उनके जिस्मानी तौर पर ज़बरदस्त और डीलडोल वाले होने पर नज़र मत करो। मगर उन लोगों पर इस समझाने-बुझाने का बिल्कुल भी असर नहीं हुआ और उन दो बुज़ुर्गों को तो उन्होंने क़ाबिले ख़िताब भी न समझा बल्कि मूसा अ़लैहिस्सलाम से बहुत ही बेपरवाई और गुस्ताख़ी के साथ) कहने लगे कि ऐ मूसा! हम तो (एक बात कह चुके हैं कि हम) हरगिज़ कभी भी वहाँ क़दम न रखेंगे जब तक वे लोग वहाँ मौजूद हैं, (अगर लड़ना ऐसा ही ज़रूरी है) तो आप और आपके अल्लाह मियाँ चले जाईए और दोनों (जाकर) लड़-भिड़ लीजिए, हम तो यहाँ से सरकते नहीं।

(मूसा अ़लैहिस्सलाम बहुत ही परेशान हुए और तंग आकर) दुआ़ करने लगे कि ऐ मेरे परवर्दिगार! (मैं क्या करूँ इन पर कुछ बस नहीं चलता) हाँ मैं अपनी जान और अपने भाई पर अलबत्ता (पूरा) इख़्तियार रखता हूँ। सो आप हम दोनों (भाईयों) के और इस नाफ़रमान क़ौम के बीच (मुनासिब) फ़ैसला फ़रमा दीजिए (यानी जिसकी हालत का जो तक़ाज़ा हो वह हर एक के लिये तजवीज़ फ़रमा दीजिए)। इरशाद हुआ (बेहतर) तो (हम यह फ़ैसला करते हैं कि) यह (मुल्क) तो उनके हाथ चालीस साल तक न लगेगा, (और घर जाना भी नसीब न होगा, रास्ता ही न मिलेगा) यूँ ही (चालीस साल तक) ज़मीन में सर मारते फिरते रहेंगे। (हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जो यह फ़ैसला सुना जिसका गुमान न था, ख़्याल यह था कि कोई मामूली तंबीह हो जायेगी तो तबई तौर पर ग़मगीन होने लगे। इरशाद हुआ कि ऐ मूसा! जब इन नाफ़रमान लोगों के लिये हमने यह तजवीज़ किया तो यही मुनासिब है) सो आप इस नाफ़रमान क़ौम (की दुर्दशा) पर (ज़रा भी) ग़म न कीजिए।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में उस मीसाक़ (अ़हद) का ज़िक्र था जो अल्लाह तआ़ला और उसके रसूलों की इताअ़त के बारे में बनी इस्राईल से लिया गया था, और उसके साथ उनके सार्वजनिक रूप से अ़हद तोड़ने और अ़हद के ख़िलाफ़ करने और उसपर सज़ाओं का बयान था। इन ज़िक्र हुई आयतों में उनके अ़हद तोड़ने का एक ख़ास वाक़िआ़ बयान हुआ है।

वह यह है कि जब फ़िरऔन और उसके लश्कर दरिया में ग़र्क़ हो गये और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम बनी इस्राईल फ़िरऔ़न की ग़ुलामी से निजात पाकर मिस्र की हुकूमत के मालिक बन गये तो अल्लाह तआ़ला ने अपना अतिरिक्त इनाम और उनके बाप-दादा के वतन मुल्के शाम को भी उनके क़ब्ज़े में वापस दिलाने के लिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के ज़रिये उनको यह हुक्म दिया कि वे जिहाद की नीयत से पवित्र ज़मीन यानी मुल्के शाम में दाख़िल हों, और साथ ही उनको यह ख़ुशख़बरी भी सुना दी कि इस जिहाद में फ़तह उनकी ही होगी। अल्लाह तआ़ला ने उस पवित्र ज़मीन को उनके हिस्से में लिख दिया है, वह ज़रूर उनको मिलकर रहेगी। मगर बनी इस्राईल अपनी तबई ख़ुसूसियतों की वजह से अल्लाह तआ़ला के इनामात- फ़िरऔ़न के ग़र्क़ होने और मिस्र के फ़तह होने वग़ैरह को आँखों से देख लेने के बावजूद यहाँ भी अ़हद व मीसाक़ पर पूरे न उतरे और मुल्क शाम के जिहाद के इस हुक्मे इलाही के ख़िलाफ़ ज़िद करके बैठ गये। जिसकी सज़ा उनको क़ुदरत की तरफ़ से इस तरह मिली कि चालीस साल तक एक सीमित इलाक़े में क़ैद और बन्दी होकर रह गये कि बज़ाहिर न उनके गिर्द कोई हिसार (घेरा) था, न उनके हाथ-पाँव किसी क़ैद में जकड़े हुए थे, बल्कि खुले मैदान में थे और अपने वतन मिस्र की तरफ़ वापस चले जाने के लिये हर दिन सुबह से शाम तक सफ़र करते थे, मगर शाम को फिर वहीं नज़र आते थे जहाँ से सुबह चले थे। इसी दौरान हज़रत मूसा और हज़रत हारून अ़लैहिमस्सलाम की वफ़ात हो गयी और ये लोग इसी तरह तीह की वादी में हैरान व परेशान फिरते रहे। उनके बाद अल्लाह तबारक व तआ़ला ने दूसरे पैग़म्बर इनकी हिदायत के लिये भेजे।

चालीस बरस इसी तरह पूरे होने के बाद फिर उनकी बाक़ी बची नस्ल ने उस वक़्त के पैग़म्बर के नेतृत्व में शाम व बैतुल-मुक़द्दस के जिहाद का इरादा किया और अल्लाह तआ़ला का वह वायदा पूरा हुआ कि यह पवित्र ज़मीन तुम्हारे हिस्से में लिख दी गयी है। यह मुख़्तसर बयान है उस वाक़िए का जो उपरोक्त आयतों में बयान हुआ है। अब इसकी तफ़सील क़ुरआनी अलफ़ाज़ में देखिये।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को जब यह हिदायत मिली कि अपनी क़ौम को बैतुल-मुक़द्दस और मुल्के शाम को फ़तह करने के लिये जिहाद का हुक्म दें तो उन्होंने पैग़म्बर वाली हिक्मत व नसीहत को सामने रखते हुए यह हुक्म सुनाने से पहले उनको अल्लाह तआ़ला के वो इनामात याद दिलाये जो बनी इस्राईल पर अब तक हो चुके थे। इरशाद फ़रमायाः

اُذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا وَّاٰتٰىكُمْ مَّا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला का वह फ़ज़्ल व इनाम याद करो जो तुम पर हुआ है कि तुम्हारी क़ौम में बहुत से नबी भेजे और तुमको मुल्क वाला बना दिया और तुम्हें वो नेमतें बख़्शीं जो दुनिया जहान में किसी को नहीं मिलीं।

इसमें तीन नेमतों का बयान है जिनमें से पहली नेमत एक रूहानी और मानवी नेमत है कि उनकी क़ौम में लगातार अम्बिया (नबी) ख़ूब ज़्यादा भेजे गये, जिससे बढ़कर आख़िरत का और मानवी सम्मान कोई नहीं हो सकता। तफ़सीरे मज़हरी में नक़ल किया है कि किसी क़ौम और किसी उम्मत में अम्बिया (नबियों) की कसरत इतनी नहीं हुई कि जितनी बनी इस्राईल में हुई है।

इमामे हदीस इब्ने अबी हातिम ने इमाम आमश की रिवायत से नक़ल किया है कि क़ौम बनी इस्राईल के आख़िरी दौर में जो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से लेकर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम तक है सिर्फ़ उस दौर में एक हज़ार अम्बिया बनी इस्राईल में भेजे गये। दूसरी नेमत जिसका ज़िक्र इस आयत में है वह दुनियावी और ज़ाहिरी नेमत है कि उनको बादशाह यानी मुल्क व सल्तनत वाला बना दिया गया। इसमें इसकी तरफ़ इशारा है कि यह बनी इस्राईल जो मुद्दत से फ़िरऔ़न और क़ौमे फ़िरऔ़न के ग़ुलाम बने हुए दिन रात उनके ज़ुल्मों का शिकार रहते थे, आज अल्लाह तआ़ला ने इनके दुश्मन को नेस्त व नाबूद करके इनको उनकी हुकूमत व सल्तनत का मालिक बना दिया। यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि अम्बिया के मामले में तो इरशाद हुआ कि:

جَعَلَ فِيْكُمْ اَنْۢبِيَآءَ.

यानी तुम्हारी क़ौम में से बहुत से लोगों को अम्बिया (नबी) बना दिया गया।

जिसका मफ़्हूम यह है कि पूरी क़ौम नबी नहीं थी। और यही हक़ीक़त भी है कि अम्बिया (नबी) कुछ ही होते हैं और पूरी क़ौम उनकी उम्मत और पैरोकार होती है। और जहाँ दुनिया के मुल्क व सल्तनत का ज़िक्र आया तो वहाँ फ़रमायाः

وَجَعَلَكُمْ مُّلُوْكًا.

यानी बना दिया तुमको बादशाह और हुकूमत वाला।

जिसका ज़ाहिरी मफ़्हूम यही है कि तुम सब को बादशाह और सल्तनत वाला बना दिया। लफ़्ज़े **मुलूक मलिक** की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने आ़म बोल-चाल में बादशाह के हैं, और यह ज़ाहिर है कि जिस तरह पूरी क़ौम नबी और पैग़म्बर नहीं होती इसी तरह किसी मुल्क में पूरी क़ौम बादशाह भी नहीं होती, बल्कि क़ौम का एक फ़र्द या चन्द अफ़राद शासक होते हैं, बाक़ी क़ौम उनके ताबे होती है। लेकिन क़ुरआनी अलफ़ाज़ ने इन सब को मुलूक क़रार दिया।

इसकी एक वजह तो वह है जो तफ़सीर **बयानुल-क़ुरआन** में कुछ उलेमा व बुज़ुर्गों के हवाले से बयान की गयी है कि आ़म बोल-चाल में जिस क़ौम का बादशाह होता है उसकी सल्तनत व हुकूमत को उस पूरी क़ौम की तरफ़ मन्सूब किया जाता है। जैसे इस्लाम के

मध्यकाल में बनू उमैया और बनू अ़ब्बास की हुकूमत कहलाती थी। इसी तरह हिन्दुस्तान में ग़ज़नवी और ग़ौरियों की हुकूमत फिर मुग़लों की हुकूमत फिर अंग्रेज़ों की हुकूमत, पूरी क़ौम के अफ़राद की तरफ़ मन्सूब की जाती थी। इसलिये जिस क़ौम का एक हाकिम व बादशाह हो वह पूरी क़ौम हुक्मराँ और बादशाह कहलाती है।

इस मुहावरे के मुताबिक़ बनी इस्राईल की पूरी क़ौम को क़ुरआने करीम ने मुलूक (बादशाह और शासक) क़रार दिया। इसमें इशारा इस तरफ़ भी हो सकता है कि इस्लामी हुकूमत दर हक़ीक़त अ़वामी हुकूमत होती है, अ़वाम ही को अपना अमीर व इमाम चुनने का हक़ होता है और अ़वाम ही अपनी इज्तिमाई राय से उसको पदमुक्त भी कर सकते हैं। इसलिये देखने में अगरचे एक व्यक्ति शासक होता है मगर दर हक़ीक़त वह हुकूमत अ़वाम ही की होती है।

दूसरी वजह वह है जो तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह में कुछ बुज़ुर्गों और पहले उलेमा से नक़ल की है कि लफ़्ज़ मलिक बादशाह के मफ़्हूम से ज़्यादा आ़म है। ऐसे शख़्स को मलिक कह दिया जाता है जो ख़ुशहाल और मालदार हो। मकान, जायदाद, नौकर चाकर रखता हो। इस मफ़्हूम के एतिबार से उस वक़्त बनी इस्राईल में से हर फ़र्द मलिक का मिस्दाक़ था। इसलिये उन सब को मुलूक फ़रमाया गया।

तीसरी नेमत जिसका ज़िक्र इस आयत में है कि वह मानवी और ज़ाहिरी दोनों क़िस्म की नेमतों का मजमूआ़ है। फ़रमायाः

وَاٰتٰـكُمْ مَّالَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ.

यानी तुमको वो नेमतें अ़ता फ़रमायीं जो दुनिया जहान में किसी को नहीं दी गयीं। इन नेमतों में रूहानी व बातिनी सम्मान और नुबुव्वत व रिसालत भी दाख़िल है और ज़ाहिरी हुकूमत व सल्तनत और माल व दौलत भी, अलबत्ता यहाँ यह सवाल हो सकता है कि क़ुरआनी वज़ाहत के अनुसार उम्मते मुहम्मदिया सारी उम्मतों से अफ़ज़ल है। क़ुरआन पाक की आयतें:

كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ.

और:

كَذٰلِكَ جَعَلْنٰـكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا.

इस पर शाहिद (गवाह और सुबूत) हैं और हदीसे नबवी की बेशुमार रिवायतें इसकी ताईद में हैं। जवाब यह है कि इस आयत में दुनिया के उन लोगों का ज़िक्र है जो बनी इस्राईल के मूसवी दौर में मौजूद थे, कि उस वक़्त पूरे आ़लम में किसी को वो नेमतें नहीं दी गयी थीं जो बनी इस्राईल को मिली थीं। आने वाले ज़माने में किसी उम्मत को उनसे भी ज़्यादा नेमतें मिल जायें यह इसके मनाफ़ी (विरुद्ध) नहीं।

इस पहली आयत में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का जो क़ौल नक़ल फ़रमाया गया है यह तम्हीद (भूमिका) थी उस हुक्म के बयान करने की जो अगली आयत में इस तरह बयान हुआ है:

يٰقَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِىْ كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ

यानी ऐ मेरी क़ौम तुम उस पवित्र ज़मीन दाख़िल हो जाओ जो अल्लाह ने तुम्हारे हिस्से में लिख रखी है।

पवित्र ज़मीन से कौनसी ज़मीन मुराद है?

पवित्र ज़मीन से कौनसी ज़मीन मुराद है? इसमें मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) के अक़वाल बज़ाहिर एक-दूसरे के विपरीत हैं। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि बैतुल-मुक़द्दस मुराद है। कुछ हज़रात ने क़ुदुस शहर और ईलिया को पवित्र ज़मीन का मिस्दाक़ बतलाया है। कुछ ने शहर अरीहा को जो उर्दुन की नहर और बैतुल-मुक़द्दस के बीच दुनिया का बहुत पुराना शहर था और आज तक मौजूद है, और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के ज़माने में उसकी शान व विशालता के अ़जीब व ग़रीब हालात नक़ल किये जाते हैं।

कुछ रिवायतों में है कि इस शहर के एक हज़ार हिस्से (वार्ड) थे। हर हिस्से में एक-एक हज़ार बाग़ थे। और कुछ रिवायतों में है कि पवित्र ज़मीन से मुराद दमिश्क़, फ़िलिस्तीन और कुछ के नज़दीक उर्दुन है। और हज़रत क़तादा ने फ़रमाया कि पूरा मुल्के शाम पवित्र ज़मीन है। हज़रत कअ़बे अहबार ने फ़रमाया कि मैंने अल्लाह की किताब (ग़ालिबन तौरात) में देखा है कि मुल्के शाम पूरी ज़मीन में अल्लाह का ख़ास ख़ज़ाना है, और इसमें अल्लाह के मख़्सूस मक़बूल बन्दे हैं। इस ज़मीन को मुक़द्दस (पवित्र) इसलिये कहा गया है कि वह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का वतन और ठिकाना (केन्द्र) रहा है।

कुछ रिवायतों में है कि एक दिन हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम लबनान के पहाड़ पर चढ़े। अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया कि ऐ इब्राहीम! यहाँ से आप नज़र डालो, जहाँ तक आपकी नज़र पहुँचेगी हमने उसको पवित्र ज़मीन बना दिया। ये सब रिवायतें तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी से नक़ल की गयी हैं। और साफ़ बात यह है कि इन अक़वाल में टकराव कुछ नहीं, पूरा मुल्के शाम आख़िरी रिवायतों के मुताबिक़ पवित्र ज़मीन है। बयान करने में कुछ हज़रात ने मुल्के शाम के किसी हिस्से को बयान कर दिया, किसी ने पूरे को।

"क़ालू या मूसा......." इससे पहले आयत में अल्लाह तआ़ला ने बनी इस्राईल को हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के द्वारा अ़मालिक़ा क़ौम से जिहाद करके मुल्क शाम फ़तह करने का हुक्म दिया था, और साथ ही यह ख़ुशख़बरी भी दी थी कि मुल्क शाम की ज़मीन अल्लाह तआ़ला ने उनके लिये लिख दी है। इसलिये उनकी फ़तह यक़ीनी है।

इस ज़िक्र हुई आयत में इसका बयान है कि इसके बावजूद बनी इस्राईल ने अपनी जानी-पहचानी सरकशी व नाफ़रमानी और टेढ़ी चाल की वजह से इस हुक्म को भी तस्लीम न किया, बल्कि मूसा अ़लैहिस्सलाम से कहा कि ऐ मूसा! उस मुल्क पर तो बड़े ज़बरदस्त ताक़तवर लोगों का क़ब्ज़ा है, हम तो उस ज़मीन में उस वक़्त तक दाख़िल न होंगे जब तक वे लोग वहाँ

क़ाबिज़ हैं। हाँ वे कहीं चले जायें तो बेशक हम वहाँ जा सकते हैं।

इस वाक़िए की तफ़सील जो तफ़सीर के इमामों हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास और इक्रिमा और अ़ली बिन अबी तल्हा वग़ैरह से मन्क़ूल है, यह है कि उस वक़्त मुल्के शाम और बैतुल-मुक़द्दस पर अ़मालिक़ा क़ौम का क़ब्ज़ा था, जो क़ौमे आ़द की कोई शाख़ा और बड़े डीलडोल और आश्चर्य जनक क़द-काठी के लोग थे, जिनसे जिहाद करके बैतुल-मुक़द्दस फ़तह करने का हुक्म हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम को मिला था।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के हुक्म की तामील के लिये अपनी क़ौम बनी इस्राईल को साथ लेकर मुल्क शाम की तरफ़ रवाना हुए। जाना बैतुल-मुक़द्दस पर था। जब नहर उर्दुन से पार होकर दुनिया के प्राचीन शहर अरीहा पर पहुँचे तो यहाँ क़ियाम फ़रमाया और बनी इस्राईल के इन्तिज़ाम के लिये बारह सरदारों का चयन करना क़ुरआने करीम की पिछली आयतों में बयान हो चुका है। उन सरदारों को आगे भेजा ताकि वे उन लोगों के हालात और जंग के मोर्चे की कैफ़ियतें मालूम करके आयें जो बैतुल-मुक़द्दस पर क़ाबिज़ हैं और जिनसे जिहाद करने का हुक्म मिला है। यह हज़रात बैतुल-मुक़द्दस पहुँचे तो शहर से बाहर ही अ़मालिक़ा क़ौम का कोई आदमी मिल गया और वह अकेला इन सब को गिरफ़्तार करके ले गया और अपने बादशाह के सामने पेश किया कि ये लोग हमसे जंग करने के इरादे से आये हैं। शाही दरबार में मश्विरा हुआ कि इन सबको क़त्ल कर दिया जाये या कोई दूसरी सज़ा दी जाये। आख़िरकार राय इस पर ठहरी कि इनको आज़ाद कर दें ताकि ये अपनी क़ौम में जाकर अ़मालिक़ा की क़ुव्वत व दबदबे के ऐसे ग़ैबी गवाह साबित हों कि कभी उनकी तरफ़ रुख़ करने का ख़्याल भी दिल में न लायें।

इस मौक़े पर तफ़सीर की अक्सर किताबों में इस्राईली रिवायतों की लम्बी चौड़ी कहानियाँ दर्ज हैं जिनमें इस मिलने वाले शख़्स का नाम औ़ज बिन उनुक़ बतलाया है। और उसकी बेपनाह क़द व क़ामत और क़ुव्वत व ताक़त को ऐसा बढ़ा-चढ़ाकर बयान किया है कि किसी समझदार आदमी को उसका नक़ल करना भी भारी है।

इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर ने फ़रमाया कि औ़ज बिन उनुक़ के जो क़िस्से इन इस्राईली रिवायतों में मज़कूर हैं, न अ़क्ल उनको क़ुबूल कर सकती है और न शरीअ़त में उनका कोई जवाज़ है, बल्कि यह सब झूठ व बोहतान है। बात सिर्फ़ इतनी है कि अ़मालिक़ा क़ौम के लोग चूँकि क़ौमे आ़द के बचे हुए लोग हैं, जिनके डरावने और आश्चर्यजनक क़द व क़ामत का ख़ुद क़ुरआने करीम ने ज़िक्र फ़रमाया है। इस क़ौम का डील-डोल और क़ुव्वत व ताक़त एक मिसाल थी। उनमें का एक आदमी क़ौमे बनी इस्राईल के बारह आदमियों को गिरफ़्तार करके ले जाने पर क़ादिर हो गया।

बहरहाल बनी इस्राईल के बारह सरदार अ़मालिक़ा की क़ैद से रिहा होकर अपनी क़ौम के पास अरीहा स्थान पर पहुँचे और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से उस अ़जीब व ग़रीब क़ौम और उसकी नाक़ाबिले अन्दाज़ा क़ुव्वत व शौकत का ज़िक्र किया। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के दिल पर तो इन सब बातों का ज़र्रा बराबर भी असर न हुआ, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने वही के

ज़रिये फ़तह व कामयाबी की ख़ुशख़बरी सुना दी थी। बक़ौल अकबरः

मुझको बेदिल कर दे ऐसा कौन है
याद मुझको 'अन्तुमुल-अअ्लौन' है

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम तो उनकी क़ुव्वत व शौकत (ग़लबे, दबदबे और वर्चस्व) का हाल सुनकर अपनी जगह हिम्मत व मज़बूती का पहाड़ बने हुए जिहाद के लिये आगे बढ़ने की फ़िक्र में लगे रहे, मगर ख़तरा यह हो गया कि बनी इस्राईल को अगर सामने वाले दुश्मन की इस बेपनाह ताक़त का इल्म हो गया तो ये लोग फिसल जायेंगे। इसलिये इन बारह सरदारों को हिदायत फ़रमाई कि अ़मालिक़ा क़ौम के ये हालात बनी इस्राईल को हरगिज़ न बतायें, बल्कि राज़ रखें। मगर हुआ यह कि उनमें से हर एक ने अपने-अपने दोस्तों से ख़ुफ़िया तौर पर इसका तज़किरा कर दिया, सिर्फ़ दो आदमी जिनमें से एक का नाम यूशा बिन नून और दूसरे का कालिब बिन यूक़न्ना था, उन्होंने हज़रत मूसा की हिदायत पर अ़मल करते हुए इस राज़ को किसी पर ज़ाहिर नहीं किया।

और ज़ाहिर है कि बारह में से जब दस ने राज़ खोल दिया तो उसका फैल जाना क़ुदरती मामला था। बनी इस्राईल में जब इन हालात की ख़बरें फैलने लगीं तो वे रोने-पीटने लगे और कहने लगे कि इससे तो अच्छा यही था कि क़ौमे फ़िरऔ़न की तरह हम भी दरिया में ग़र्क़ हो जाते। वहाँ से बचा लाकर हमें यहाँ मरवाया जा रहा है। उन्हीं हालात में बनी इस्राईल ने ये अलफ़ाज़ कहेः

يٰمُوْسٰٓى اِنَّ فِيْهَا قَوْمًا جَبَّارِيْنَ وَاِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَا حَتّٰى يَخْرُجُوْا مِنْهَا.

यानी ऐ मूसा उस शहर में तो बड़ी ज़बरदस्त क़ौम आबाद है, जिनका मुक़ाबला हम से नहीं हो सकता। इसलिये जब तक वे लोग आबाद और मौजूद हैं हम वहाँ जाने का नाम न लेंगे।

अगली आयत में है कि दो शख़्स जो डरने वाले थे और जिन पर अल्लाह तआ़ला ने इनाम फ़रमाया था उन्होंने बनी इस्राईल की यह गुफ़्तगू सुनकर बतौर नसीहत उनको कहा कि तुम पहले ही डर के मारे मरे जाते हो, ज़रा क़दम उठाकर शहर बैतुल-मुक़द्दस के दरवाज़े तक तो चलो। हमें यक़ीन है कि तुम्हारा इतना ही अ़मल तुम्हारी फ़तह का सबब बन जायेगा। बैतुल-मुक़द्दस के दरवाज़े में दाख़िल होते ही तुम ग़ालिब हो जाओगे और दुश्मन शिकस्त खाकर भाग जायेगा। ये दो शख़्स जिनका इस आयत में ज़िक्र है, अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक वही बारह में से दो सरदार हैं जिन्होंने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की हिदायत पर अ़मल करते हुए अ़मालिक़ा क़ौम का पूरा हाल बनी इस्राईल को न बताया था। यानी यूशा बिन नून और कालिब बिन यूक़न्ना।

क़ुरआने करीम ने इस जगह उन दोनों बुज़ुर्गों की दो सिफ़तें ख़ास तौर पर ज़िक्र फ़रमाई हैं। एक "अल्लज़ी-न यख़ाफ़ू-न" यानी ये लोग जो डरते हैं। इसमें यह ज़िक्र नहीं फ़रमाया कि किससे डरते हैं। इशारा इस बात की तरफ़ है कि डरने के लायक़ सारे जहान में सिर्फ़ एक ही

ज़ात है, यानी अल्लाह जल्ल शानुहू। क्योंकि सारी कायनात उसी के कब्ज़ा-ए-क़ुदरत में है। उसकी मर्ज़ी व इजाज़त के बग़ैर कोई न किसी को मामूली सा भी नफ़ा पहुँचा सकता है, न ज़रा सा भी नुक़सान। और जब डरने के लायक़ एक ही ज़ात है और वह मुतैयन है तो फिर उसके मुतैयन करने की ज़रूरत न रही।

दूसरी सिफ़त उन बुज़ुर्गों की क़ुरआने करीम ने यह बतलाई कि "अन्अमल्लाहु अ़लैहिमा" यानी अल्लाह तआ़ला ने उन पर इनाम फ़रमाया। इसमें इस बात की तरफ़ इशारा है कि जिस शख़्स में जहाँ कोई ख़ूबी और भलाई है वह सब अल्लाह तआ़ला का इनाम व अ़ता है। वरना उन बारह सरदारों में ज़ाहिरी क़ुव्वतें हाथ, पाँव, आँख, कान और अन्दरूनी क़ुव्वतें अ़क़्ल व होश और फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की सोहबत व साथ ये सारी ही चीज़ें सभी को हासिल थीं, इसके बावजूद और सब फिसल गये और यही दो अपनी जगह जमे रहे। तो मालूम हुआ कि असल हिदायत इनसान की ज़ाहिरी व बातिनी क़ुव्वतों, उसकी कोशिश व अ़मल के ताबे (अधीन) नहीं बल्कि अल्लाह तआ़ला का इनाम है। अलबत्ता इस इनाम के लिये कोशिश व अ़मल शर्त ज़रूर है।

इससे मालूम हुआ कि जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला ने अ़क़्ल व होश और समझदारी व होशियारी अ़ता फ़रमाई हो वह अपनी इन ताक़तों पर नाज़ न करे, बल्कि अल्लाह तआ़ला ही से रहनुमाई व हिदायत तलब करे। मौलाना रूमी ने इस बात को बहुत ही अच्छे अन्दाज़ में यूँ बयान फ़रमाया है:

फ़हम व ख़ातिर तेज़ करदन् नेस्त राह
जुज़् शिकस्ता मी नगीरद् फ़ज़्ले शाह

यानी अ़क़्ल व होश और समझदारी के बढ़ा लेने ही से इस रास्ते की कामयाबी हासिल नहीं होती, बल्कि आ़जिज़ी व इन्किसारी इख़्तियार करने वाला ही अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम को हासिल कर पाता है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

कलाम का ख़ुलासा यह है कि उन दोनों बुज़ुर्गों ने अपनी बिरादरी को यह नसीहत फ़रमाई कि अ़मालिक़ा क़ौम की ज़ाहिरी क़ुव्वत व शान से न घबरायें, अल्लाह पर तवक्कुल करके बैतुल-मुक़द्दस के दरवाज़े तक चले चलें तो फ़तह और ग़लबा उनका है। उन बुज़ुर्गों का यह फ़ैसला कि दरवाज़े तक पहुँचने के बाद उनको ग़लबा ज़रूर हासिल हो जायेगा और दुश्मन शिकस्त खाकर भाग जायेगा, हो सकता है कि अ़मालिक़ा क़ौम के जायज़ा लेने की बिना पर हो कि वे लोग बड़े डील-डोल और ताक़त व क़ुव्वत के बावजूद दिल के कच्चे हैं। जब हमले की ख़बर पायेंगे तो ठहर न सकेंगे। और यह भी मुम्किन है कि अल्लाह का फ़रमान जो फ़तह की ख़ुशख़बरी के तौर पर मूसा अ़लैहिस्सलाम से सुन चुके थे, उस पर कामिल यक़ीन होने की वजह से यह फ़रमाया हो। मगर बनी इस्राईल ने जब अपने पैग़म्बर मूसा अ़लैहिस्सलाम की बात न सुनी तो इन दोनों बुज़ुर्गों की क्या सुनते। फिर वही जवाब और ज़्यादा भौंडे अन्दाज़ से दिया कि:

فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ.

यानी आप और आपके अल्लाह मियाँ ही जाकर उनसे मुक़ाबला कर लें, हम तो यहीं बैठे रहेंगे। बनी इस्राईल का यह कलिमा अगर मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर होता तो खुला कुफ़्र था, और इसके बाद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का उनके साथ रहना, उनके लिये मैदाने तीह में दुआ़यें करना, जिसका ज़िक्र अगली आयत में आ रहा है, इसकी संभावना न थी।

इसलिये तफ़सीर के इमामों ने इस कलिमे का मतलब यह क़रार दिया है कि आप जाईये और उनसे जंग कीजिए, आपका रब आपकी मदद करेगा, हम तो मदद करने की हिम्मत नहीं रखते। इस मायने के एतिबार से यह कलिमा कुफ़्र की हद से निकल गया, अगरचे यह जवाब बहुत ही भौंडा और दिल को तकलीफ़ देने वाला है। यही वजह है कि बनी इस्राईल का यह कलिमा एक कहावत बन गया।

बदर की जंग में निहत्ते और भूखे मुसलमानों के मुक़ाबले पर एक हज़ार हथियार बन्द नौजवानों का लश्कर आ खड़ा हुआ और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह देखकर अपने रब से दुआ़यें फ़रमाने लगे, तो हज़रत मिक़दाद बिन अस्वद सहाबी आगे बढ़े और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! ख़ुदा की क़सम है हम हरगिज़ वह बात न कहेंगे जो मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से कही थी, कि:

فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ.

यानी आप और आपके अल्लाह मियाँ ही जाकर उनसे मुक़ाबला कर लें, हम तो यहीं बैठे रहेंगे। बल्कि हम आपके दायें और बायें से और सामने से और पीछे से रक्षा करेंगे। आप बेफ़िक्र होकर मुक़ाबले की तैयारी फ़रमायें।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह सुनकर बेहद ख़ुश हुए और सहाबा किराम में भी जिहाद के जोश की एक नई लहर पैदा हो गयी। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु हमेशा फ़रमाया करते थे कि मिक़दाद बिन अस्वद के इस कारनामे पर मुझे बड़ा रश्क (ईर्ष्या) है। काश यह सआ़दत मुझे भी हासिल होती।

कलाम का ख़ुलासा यह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने ऐसे नाज़ुक मौक़े पर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को कोरा जवाब देकर अपने सब अ़हद व मीसाक़ तोड़ डाले।

क़ौम की इन्तिहाई बेवफ़ाई और मूसा अ़लैहिस्सलाम का बेइन्तिहा जमाव और हिम्मत

قَالَ رَبِّ اِنِّىْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِىْ.

क़ौमे बनी इस्राईल के पिछले हालात व वाक़िआ़त और उनके साथ अल्लाह तआ़ला और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के मामलात का जायज़ा लेने वाला अगर सरसरी तौर पर भी इसको सामने रखे कि जो क़ौम बनी इस्राईल सदियों से फ़िरऔ़न की ग़ुलामी में तरह-तरह की ज़िल्लतें

और यातनायें बरदाश्त कर रही थी, हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की तालीम और उनकी बरकत से उनको ख़ुदा तआ़ला ने कहाँ से कहाँ पहुँचाया। उनकी आँखों के सामने अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत के कैसे-कैसे दृश्य आये। फ़िरऔन और क़ौमे फ़िरऔन को हज़रत मूसा व हारून अलैहिमस्सलाम के हाथों अपने क़ायम किये हुए दरबार में खुली शिकस्त हुई। जिन जादूगरों पर उनका भरोसा था वही अब हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर ईमान ले आये और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का दम भरने लगे। फिर ख़ुदाई का दावा करने वाला फ़िरऔन और शाही महलों में बसने वाले फ़िरऔन वालों से ख़ुदा तआ़ला की ज़बरदस्त क़ुदरत ने किस तरह तमाम महलों व मकानों और उनके साज़ व सामान को एक दम से ख़ाली करा लिया, और किस तरह बनी इस्राईल की आँखों के सामने उसे दरिया में ग़र्क़ कर दिया, और किस तरह चमत्कारी अन्दाज़ में बनी इस्राईल को दरिया से पार कर दिया, और किस तरह वह दौलत जिस पर फ़िरऔन यह कहकर फ़ख़्र किया करता थाः

اَلَيْسَ لِىْ مُلْكُ مِصْرَ وَهٰذِهِ الْاَنْهٰرُ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِىْ.

अल्लाह तआ़ला ने पूरा मुल्क और उसकी पूरी मिल्क बग़ैर किसी जंग व लड़ाई के बनी इस्राईल को अ़ता फ़रमा दी।

इन तमाम वाक़िआ़त में अल्लाह जल्ल शानुहू की ज़बरदस्त क़ुदरत के प्रदर्शन और निशानियाँ इस क़ौम के सामने आये। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने इस क़ौम को पहले ग़फ़लत व जहालत से फिर फ़िरऔन की ग़ुलामी से निजात दिलाने में क्या-क्या रूह को तड़पा देने वाली मुसीबतें बरदाश्त कीं। इन सब चीज़ों के बाद जब उसी क़ौम को ख़ुदाई इमदाद व इनामात के वायदों के साथ मुल्क शाम पर जिहाद करने का हुक्म मिला तो उन लोगों ने अपनी इस कम-हिम्मती और ख़बासत का इज़हार किया और कहने लगेः

اِذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَا اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ.

यानी आप और आपके अल्लाह मियाँ ही जाकर उनसे मुक़ाबला कर लें, हम तो यहीं बैठे रहेंगे।

दुनिया का बड़े से बड़ा सुधारक दिल पर हाथ रखकर देखे कि इन हालात और इसके बाद क़ौम की इन हरकतों का उस पर क्या असर होगा। मगर यहाँ तो अल्लाह तआ़ला के बुलन्द-हिम्मत रसूल हैं, कि हिम्मत व जमाव के पहाड़ बने हुए अपनी धुन में लगे हैं।

क़ौम की निरन्तर अ़हद-शिकनी और वायदा-फ़रामोशी से आ़जिज़ आकर अपने रब के सामने सिर्फ़ इतना अ़र्ज़ करते हैंः

اِنِّىْ لَاۤ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِىْ وَاَخِىْ.

यानी मुझे तो अपनी जान और अपने भाई के सिवा किसी पर इख़्तियार नहीं। अ़मालिक़ा क़ौम पर जिहाद की मुहिम को किस तरह सर किया जाये। यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि क़ौमे बनी इस्राईल में से कम से कम दो सरदार यूशा बिन नून और कालिब बिन यूक़न्ना

जिन्होंने पूरी तरह हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की पैरवी का सुबूत दिया था और क़ौम को समझाने और सही रास्ते पर लाने में हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के साथ लगातार कोशिश की थी, उस वक़्त हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उनका भी ज़िक्र नहीं किया, बल्कि सिर्फ़ अपना और हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम का तज़किरा फ़रमाया। इसका सबब वही क़ौम बनी इस्राईल का अ़हद तोड़ना और नाफ़रमानी करना था, कि सिर्फ़ हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम नबी व पैग़म्बर होने के सबब मासूम थे, और उनका हक़ रास्ते पर क़ायम रहना यक़ीनी था। बाक़ी ये दोनों सरदार मासूम भी न थे। इस इन्तिहाई ग़म व ग़ुस्से के आ़लम में सिर्फ़ उसका ज़िक्र किया जिसका हक़ पर क़ायम रहना यक़ीनी था। इस इज़्हार के साथ कि मुझे अपनी जान और अपने भाई के सिवा किसी पर इख़्तियार नहीं। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने यह दुआ़ फ़रमाईः

فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ.

यानी हम दोनों और हमारी क़ौम के दरमियान आप ही फ़ैसला फ़रमा दीजिए। इस दुआ़ का हासिल हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ यह था कि ये लोग जिस सज़ा के मुस्तहिक़ हैं उनको वह सज़ा दी जाये और हम दोनों जिस सूरतेहाल के मुस्तहिक़ हैं हमको वह अ़ता फ़रमाया जाये।

अल्लाह तआ़ला ने इस दुआ़ को इस तरह क़ुबूल फ़रमाया कि इरशाद हुआः

فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً يَتِيْهُوْنَ فِى الْاَرْضِ.

यानी मुल्क शाम की ज़मीन उन पर चालीस साल के लिये हराम क़रार दे दी गयी। अब अगर वे वहाँ जाना भी चाहें तो न जा सकेंगे। और फिर यह नहीं कि मुल्क शाम न जा सकेंगे बल्कि वे अगर अपने वतन मिस्र की तरफ़ लौटना चाहेंगे तो वहाँ भी न जा सकेंगे बल्कि इस मैदान में उनको नज़रबन्द कर दिया जायेगा।

खुदा तआ़ला की सज़ाओं के लिये न पुलिस और उनकी हथकड़ियाँ शर्त हैं और न जेलख़ाने की मज़बूत दीवारें और लोहे के दरवाज़े, बल्कि जब वह किसी को बन्दी और नज़र बन्द करना चाहें तो खुले मैदान में भी क़ैद कर सकते हैं। सबब ज़ाहिर है कि सारी कायनात उसी की मख़्लूक़ और महकूम है। जब कायनात को किसी की क़ैद का हुक्म हो जाता है तो सारी हवा और फ़िज़ा ज़मीन व मकान उसके लिये जेलर बन जाते हैं:

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा-मन् व तू मुर्दा बा-हक़ ज़िन्दा अन्द

"कि मिट्टी, हवा, पानी और आग फ़रमाँबरदार हैं। अगरचे हमें तुम्हें ये बेजान और मुर्दा मालूम होते हैं मगर अल्लाह तआ़ला के साथ इनका जो मामला है वह ज़िन्दों की तरह है, कि ज़िन्दों की तरह उसके हुक्म की तामील करते हैं।" मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

चुनाँचे यह छोटा सा मैदान जो मिस्र और बैतुल-मुक़द्दस के बीच है, जिसकी पैमाईश हज़रत मुक़ातिल की तफ़सीर के मुताबिक़ तीस फ़र्सख़ लम्बाई और नौ फ़र्सख़ चौड़ाई है। एक फ़र्सख़

अगर तीन मील का क़रार दिया जाये तो नब्बे मील की लम्बाई और सत्ताईस मील की चौड़ाई का कुल रक़बा हो जाता है। और कुछ रिवायतों के मुताबिक़ सिर्फ़ तीस मील गुणा अट्ठारह मील का रक़बा है, अल्लाह तआ़ला ने इस पूरी क़ौम को जिसकी तायदाद हज़रत मुक़ातिल के बयान के मुवाफ़िक़ छह लाख अफ़राद थी, इस छोटे से खुले मैदानी रक़बे के अन्दर इस तरह क़ैद कर दिया कि चालीस साल लगातार इस दौड़-धूप में रहे कि किसी तरह उस मैदान से निकल कर मिस्र वापस चले जायें, या आगे बढ़कर बैतुल-मुक़द्दस पर पहुँच जायें। मगर होता यह था कि सारे दिन के सफ़र के बाद जब शाम होती तो यह मालूम होता कि फिर-फिराकर वह उसी जगह पर पहुँच गये हैं जहाँ से सुबह चले थे।

तफ़सीर के उलेमा ने फ़रमाया कि अल्लाह जल्ल शानुहू किसी क़ौम को जो सज़ा देते हैं वह उनके बुरे आमाल की मुनासबत से होती है। इस नाफ़रमान क़ौम ने चूँकि यह कलिमा बोला था कि 'इन्ना हाहुना क़ाअ़िदून' यानी हम तो यहीं बैठे हैं। अल्लाह तआ़ला ने इनको इस सज़ा में चालीस साल तक के लिये वहीं क़ैद कर दिया। ऐतिहासिक रिवायतें इसमें मुख़्तलिफ़ हैं कि इस चालीस साल के अ़रसे में बनी इस्राईल की मौजूदा नस्ल जिसने नाफ़रमानी की थी, सभी फ़ना हो गये, और उनकी अगली नस्ल बाक़ी रह गयी, जो इस चालीस साल की क़ैद से निजात पाने के बाद बैतुल-मुक़द्दस में दाख़िल हुई, या उनमें से भी कुछ लोग बाक़ी थे। बहरहाल क़ुरआने करीम ने एक तो यह वायदा किया था कि 'क-तबल्लाहु लकुम' यानी मुल्के शाम बनी इस्राईल के हिस्से में लिख दिया है, वह वायदा पूरा होना ज़रूरी था, कि क़ौमे बनी इस्राईल इस मुल्क पर क़ाबिज़ व मुसल्लत हों, मगर बनी इस्राईल के मौजूदा अफ़राद ने नाफ़रमानी करके अल्लाह के इस इनाम से मुँह मोड़ा तो उनको यह सज़ा मिल गयी कि:

مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً.

यानी चालीस साल तक वे पवित्र ज़मीन फ़तह करने से मेहरूम कर दिये गये। फिर उनकी नस्ल में जो लोग पैदा हुए उनके हाथों यह मुल्क फ़तह हुआ और अल्लाह तआ़ला का वायदा पूरा हुआ।

तीह की इस वादी में हज़रत मूसा व हारून अ़लैहिमस्सलाम भी अपनी क़ौम के साथ थे मगर यह वादी उनके लिये क़ैद और सज़ा थी और इन दोनों हज़रात के लिये अल्लाह की नेमतों का प्रतीक।

यही वजह है कि चालीस साल का यह दौर जो बनी इस्राईल पर अल्लाह की नाराज़गी का का गुज़रा इसमें भी अल्लाह तआ़ला ने उनको हज़रत मूसा व हज़रत हारून अ़लैहिमस्सलाम की बरकत से तरह-तरह की नेमतों से नवाज़ा। खुले मैदान की धूप से आ़जिज़ आये तो मूसा अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से अल्लाह तआ़ला ने उन पर बादलों की छतरी लगा दी, जिस तरफ़ ये लोग चलते थे बादल इनके साथ-साथ साया करते हुए चलते थे। प्यास और पानी की किल्लत की शिकायत पेश आई तो अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को एक ऐसा पत्थर अ़ता फ़रमा दिया कि वह हर जगह उनके साथ-साथ रहता था, और जब पानी की ज़रूरत होती

थी तो मूसा अ़लैहिस्सलाम अपना अ़सा (लाठी) उस पर मारते थे तो बारह चश्मे उसमें से जारी हो जाते थे। भूख की तकलीफ़ पेश आती तो आसमानी ग़िज़ा **मन्न** व **सलवा** उन पर नाज़िल कर दी गयी, रात को अंधेरे की शिकायत हुई तो अल्लाह तआ़ला ने रोशनी का एक मीनार उनके लिये खड़ा कर दिया जिसकी रोशनी में ये सब काम-काज करते थे।

ग़र्ज़ कि इस मैदाने तीह में सिर्फ़ अल्लाह की नाराज़गी का शिकार लोग ही न थे बल्कि अल्लाह तआ़ला के दो महबूब पैग़म्बर और उनके साथ दो मक़बूल बुज़ुर्ग यूशा बिन नून और कालिब बिन यूक़न्ना भी थे, इनके तुफ़ैल में इस क़ैद व सज़ा के ज़माने में भी ये इनामात उन पर होते रहे, और अल्लाह तआ़ला तमाम रहम करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले हैं, मुम्किन है कि बनी इस्राईल के इन अफ़राद ने भी इन हालात को देखने के बाद अपने जुर्म से तौबा कर ली हो, उसके बदले में ये इनामात उनको मिल रहे हों।

सही रिवायतों के मुताबिक़ इसी चालीस साल के दौर में पहले हज़रत हारून अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात हुई और उसके एक साल या छह महीने बाद हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात हो गयी। इनके बाद हज़रत यूशा बिन नून को अल्लाह तआ़ला ने नबी बनाकर बनी इस्राईल की हिदायत के लिये मामूर फ़रमाया, और चालीस साल की क़ैद ख़त्म होने के बाद बनी इस्राईल की बाक़ी बची क़ौम हज़रत यूशा बिन नून के नेतृत्व में बैतुल-मुक़द्दस के जिहाद के लिये रवाना हुई, अल्लाह तआ़ला के वायदे के मुताबिक़ मुल्के शाम उनके हाथ पर फ़तह हुआ और इस मुल्क की बेहिसाब दौलत उनके हाथ में आई।

आयत के आख़िर में जो इरशाद फ़रमायाः

فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ.

यानी इस नाफ़रमान क़ौम पर आप तरस न खायें। यह इस बिना पर कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम अपनी तबीयत और फ़ितरत से ऐसे होते हैं कि अपनी उम्मत की तकलीफ़ व परेशानी को बरदाश्त नहीं कर सकते, अगर उनको सज़ा मिले तो ये भी उससे ग़मगीन व मुतास्सिर हुआ करते हैं, इसलिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को यह तसल्ली दी गयी कि आप उनकी सज़ा से दुखी और परेशान न हों।

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ؕ قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ ؕ قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿۲۷﴾ لَئِنْۢ بَسَطْتَّ اِلَيَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَنِيْ مَاۤ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِيَ اِلَيْكَ لِاَقْتُلَكَ ۚ اِنِّيْۤ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعٰلَمِيْنَ ﴿۲۸﴾ اِنِّيْۤ اُرِيْدُ اَنْ تَبُوْٓاَ بِاِثْمِيْ وَاِثْمِكَ فَتَكُوْنَ مِنْ اَصْحٰبِ النَّارِ ۚ وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظّٰلِمِيْنَ ﴿۲۹﴾ فَطَوَّعَتْ لَهٗ نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ فَقَتَلَهٗ فَاَصْبَحَ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿۳۰﴾ فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَّبْحَثُ فِي الْاَرْضِ لِيُرِيَهٗ

كَيْفَ يُوَارِي سَوْءَةَ أَخِيهِ ۚ قَالَ يَا وَيْلَتَىٰ أَعَجَزْتُ أَنْ أَكُونَ مِثْلَ هَٰذَا الْغُرَابِ فَأُوَارِيَ سَوْءَةَ أَخِي ۖ فَأَصْبَحَ مِنَ النَّادِمِينَ ۛ مِنْ أَجْلِ ذَٰلِكَ كَتَبْنَا عَلَىٰ بَنِي إِسْرَائِيلَ أَنَّهُ مَنْ قَتَلَ نَفْسًا بِغَيْرِ نَفْسٍ أَوْ فَسَادٍ فِي الْأَرْضِ فَكَأَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيعًا وَمَنْ أَحْيَاهَا فَكَأَنَّمَا أَحْيَا النَّاسَ جَمِيعًا ۚ وَلَقَدْ جَاءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ إِنَّ كَثِيرًا مِنْهُمْ بَعْدَ ذَٰلِكَ فِي الْأَرْضِ لَمُسْرِفُونَ

वत्लु अ़लैहिम् न-बअब्नै आद-म बिल्हक़्क़ि। इज़् क़र्रबा क़ुर्बानन् फ़तुक़ुब्बि-ल मिन् अ-हदिहिमा व लम् यु-तक़ब्बल् मिनल्-आख़रि, क़ा-ल लअक़्तुलन्न-क, क़ा-ल इन्नमा य-तक़ब्बलुल्लाहु मिनल् मुत्तक़ीन। (27) ● ल-इम् बसत्-त इलय्-य य-द-क लितक़्तु-लनी मा अ-न बिबासितिंय्-यदि-य इलै-क लि-अक़्तु-ल-क इन्नी अख़ाफ़ुल्ला-ह रब्बल्-आ़लमीन (28) इन्नी उरीदु अन् तबू-अ बि-इस्मी व इस्मि-क फ़-तकू-न मिन् अस्हाबिन्नारि व ज़ालि-क जज़ाउज़्ज़ालिमीन (29) फ़तव्व-अ़त् लहू नफ़्सुहू क़त्-ल अख़ीहि फ़-क़-त-लहू फ़-अस्ब-ह मिनल्-ख़ासिरीन (30) फ़-ब-अ़सल्लाहु ग़ुराबंय्यब्हसु फ़िल्अर्ज़ि लियुरि-यहू

और सुना उनको वास्तविक हाल आदम के दो बेटों का जब नियाज़ की दोनों ने कुछ नियाज़ और मक़बूल हुई एक की और न मक़बूल हुई दूसरे की। कहा मैं तुझको मार डालूँगा, वह बोला अल्लाह क़ुबूल करता है तो परहेज़गारों से। (27) ● अगर तू हाथ चलायेगा मुझपर मारने को, मैं न हाथ चलाऊँगा तुझपर मारने को, मैं डरता हूँ अल्लाह से जो परवर्दिगार है सब जहानों का। (28) मैं चाहता हूँ कि तू हासिल करे मेरा गुनाह और अपना गुनाह फिर हो जाये तू दोज़ख़ वालों में, और यही है सज़ा ज़ालिमों की। (29) फिर उसको राज़ी किया उसके नफ़्स ने ख़ून पर अपने भाई के, फिर उसको मार डाला, सो हो गया वह नुक़सान उठाने वालों में। (30) फिर भेजा अल्लाह तआ़ला ने एक कौआ जो कुरेदता था ज़मीन को ताकि उसको दिखाये किस तरह छुपाना है लाश अपने भाई की,

कै-फ़ युवारी सौअ-त अख़ीहि, क़ा-ल या वै-लता अ-अ़जज़्तु अन् अकू-न मिस्-ल हाज़ल्-ग़ुराबि फ़-उवारि-य सौअ-त अख़ी फ़-अस्ब-ह मिनन्नादिमीन (31) मिन् अज्लि ज़ालि-क, कतब्ना अ़ला बनी इस्राई-ल अन्नहू मन् क़-त-ल नफ़्सम् बिग़ैरि नफ़्सिन् औ फ़सादिन् फ़िल्अर्ज़ि फ़-कअन्नमा क़-तलन्ना-स जमीअ़न् व मन् अह्याहा फ़-कअन्नमा अह्यन्ना-स जमीअ़न्, व ल-क़द् जाअत्हुम् रुसुलुना बिल्बय्यिनाति सुम्-म इन्-न कसीरम् मिन्हुम् बअ़्-द ज़ालि-क फ़िल्अर्ज़ि ल-मुस्रिफ़ून (32)	बोला हाय अफ़सोस मुझसे इतना न हो सका कि हूँ बराबर उस कौए के, कि मैं छुपाऊँ लाश अपने भाई की, फिर लगा पछताने। (31) इसी सबब से लिखा हमने बनी इस्राईल पर कि जो कोई क़त्ल करे एक जान को बिना बदले जान के, या बग़ैर फ़साद करने के मुल्क में, तो गोया क़त्ल कर डाला उसने सब लोगों को, और जिसने ज़िन्दा रखा एक जान को तो गोया ज़िन्दा कर दिया सब लोगों को, और ला चुके हैं उनके पास रसूल हमारे खुले हुए हुक्म, बहुत लोग उनमें से इस पर भी मुल्क में दस्त-दराज़ी (नाफ़रमानी व ज़्यादती) करते हैं। (32)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) आप इन अहले किताब को (हज़रत) आदम (अ़लैहिस्सलाम) के दो बेटों का (यानी हाबील व क़ाबील का) क़िस्सा सही तौर पर पढ़कर सुनाईये (ताकि इनका अपने को नेक लोगों के साथ जोड़ने का घमण्ड जाता रहे, जिसका "हम अल्लाह के प्यारे हैं" में इज़हार हो रहा है। और यह क़िस्सा उस वक़्त हुआ था) जबकि दोनों ने (अल्लाह तआ़ला के नाम की) एक-एक नियाज़ पेश की और उनमें से एक की (यानी हाबील की) तो मक़बूल हो गई और दूसरे की (यानी क़ाबील की) मक़बूल न हुई (क्योंकि जिस मामले के फ़ैसले के लिये यह नियाज़ चढ़ाई गयी थी उसमें हाबील हक़ पर था, इसलिये उसकी नियाज़ क़ुबूल हो गयी, और क़ाबील हक़ पर न था उसकी क़ुबूल न हुई, वरना फिर फ़ैसला न होता, बल्कि और धोखा व शक हो जाता। जब) वह दूसरा (यानी क़ाबील उसमें भी हारा तो झल्लाकर) कहने लगा कि मैं तुझको ज़रूर क़त्ल करूँगा, उस एक ने (यानी हाबील ने) जवाब दिया (कि तेरा हारना तो तेरे ही ग़लत रास्ते पर होने की वजह से है, मेरी क्या ख़ता, क्योंकि) ख़ुदा तआ़ला

मुत्तक़ियों का ही अ़मल क़ुबूल करते हैं (मैंने तो तक़्वा इख़्तियार किया और ख़ुदा के हुक्म पर रहा, ख़ुदा तआ़ला ने मेरी नियाज़ क़ुबूल की, तूने तक़्वा छोड़ दिया और ख़ुदा के हुक्म से मुँह मोड़ा, तेरी नियाज़ क़ुबूल नहीं की। सो इसमें तेरी ख़ता है या मेरी? इन्साफ़ कर, लेकिन अगर फिर भी तेरा यही इरादा है तो तू जान, मैंने तो पुख़्ता अ़हद कर लिया है कि) अगर तू मुझ पर मेरे क़त्ल करने के लिए हाथ बढ़ायेगा तब भी मैं तुझ पर तेरे क़त्ल करने के लिए हरगिज़ हाथ डालने वाला नहीं, (क्योंकि) मैं तो ख़ुदा परवर्दिगारे आ़लम से डरता हूँ (कि इसके बावजूद कि तेरा क़त्ल जायज़ होने का बज़ाहिर एक सबब मौजूद है, यानी यह कि तू मुझको क़त्ल करना चाहता है, मगर इस वजह से कि इस जवाज़ का अब तक किसी दलील व हुक्म से मुझको इल्म नहीं हुआ इसलिये मैं इस पर अ़मल करने को एहतियात के ख़िलाफ़ समझता हूँ। और इस शुब्हे की वजह से ख़ुदा से डरता हूँ और यह हिम्मत तुझी को है कि इसके बावजूद कि कोई ऐसी बात नहीं जिसकी वजह से मेरा क़त्ल किया जाना जायज़ हो, बल्कि एक रुकावट मौजूद है, लेकिन फिर भी तू ख़ुदा से नहीं डरता)।

मैं (यूँ) चाहता हूँ कि (मुझसे कोई गुनाह का काम न हो चाहे तू मुझ पर कितना ही ज़ुल्म क्यों न करे, जिससे कि) तू मेरे गुनाह और अपने गुनाह सब अपने सर रख ले, फिर तू दोज़ख़ियों में शामिल हो जाए। और यही सज़ा होती है ज़ुल्म करने वालों की। सो (यूँ तो वह पहले ही से क़त्ल करने का इरादा कर चुका था, जब यह सुना कि यह विरोध भी न करेगा, चाहिये तो यह था कि नर्म पड़ जाता मगर बेफ़िक्र होकर और भी) उसके जी ने उसको अपने भाई के क़त्ल पर आमादा कर दिया, फिर आख़िर उसको क़त्ल ही कर डाला जिससे (कमबख़्त) बड़े नुक़सान उठाने वालों में शामिल हो गया (दुनिया में तो यह नुक़सान कि अपने बाज़ू की क़ुव्वत यानी भाई और दिल के चैन को गुम कर बैठा और आख़िरत में यह नुक़सान कि सख़्त अ़ज़ाब में मुब्तला होगा। अब जब क़त्ल से फ़ारिग़ हुआ तो हैरान है कि लाश को क्या करूँ जिससे यह राज़ पोशीदा रहे, कुछ समझ में न आया तो) फिर (आख़िर) अल्लाह तआ़ला ने एक कौआ (वहाँ) भेजा कि वह (चोंच और पंजों से) ज़मीन को खोदता था (और खोदकर एक दूसरे कौए को कि वह मरा हुआ था उस गढ़े में ढकेल कर उस पर मिट्टी डालता था) ताकि वह (कौआ) उस (यानी क़ाबील) को तालीम कर दे कि अपने भाई (हाबील) की लाश को किस तरीक़े से छुपाए। (क़ाबील यह वाक़िआ देखकर अपने जी में बड़ा शर्मिन्दा और ज़लील हुआ कि मुझको कौए के बराबर भी समझ नहीं, और बहुत ज़्यादा हसरत से) कहने लगा कि अफ़सोस मेरी हालत पर! क्या मैं इससे भी गया-गुज़रा हूँ कि इस कौए ही के बराबर होता और अपने भाई की लाश को छुपा देता। (सो इस बदहाली पर) बड़ा शर्मिन्दा हुआ।

इसी (वाक़िए की) वजह से (जिससे नाहक़ क़त्ल की ख़राबियाँ साबित होती हैं) हमने (अल्लाह के अहकाम के पाबन्द तमाम लोगों पर उमूमन और) बनी इस्राईल पर (ख़ुसूसन) यह (हुक्म) लिख दिया (यानी मुक़र्रर कर दिया) कि (नाहक़ क़त्ल करना इतना बड़ा गुनाह है कि) जो शख़्स किसी शख़्स को बिना दूसरे शख़्स के बदले के (जो नाहक़ क़त्ल किया गया हो) या

बिना किसी (बुराई व) फ़साद के जो ज़मीन में उससे फैला हो (ख़्वाह-मख़्वाह) क़त्ल कर डाले तो (उसको बाज़ एतिबार से ऐसा गुनाह होगा कि) गोया उसने तमाम आदमियों को क़त्ल कर डाला, (वह बाज़ एतिबार यह है कि इस गुनाह का दुस्साहस किया, ख़ुदा तआ़ला की नाफ़रमानी की, ख़ुदा तआ़ला उससे नाराज़ हुआ, दुनिया में क़त्ल के बदले क़त्ल का पात्र ठहरा, आख़िरत में दोज़ख़ का हक़दार हुआ। ये चीज़ें ऐसी हैं कि एक को क़त्ल करो या हज़ार को सब में मुश्तरक हैं, यह अलग बात है कि सख़्त और बहुत सख़्त का फ़र्क़ हो। और ये दो क़ैदें "यानी शर्तें" इसलिये लगायीं कि क़िसास में क़त्ल करना जायज़ है, इसी तरह क़त्ल जायज़ होने के दूसरे असबाब भी जिसमें रास्ते में लूटमार करना जिसका ज़िक्र आगे आ रहा है, और मुसलमानों के साथ लड़ने वाला काफ़िर जिसका ज़िक्र जिहाद के अहकाम में आ चुका है, सब दाख़िल हैं, इन सूरतों में क़त्ल करना जायज़ बल्कि कुछ सूरतों में वाजिब है) और (यह भी लिख दिया था कि जैसे नाहक़ क़त्ल करना बहुत बड़ा गुनाह है इसी तरह किसी को ग़ैर-वाजिब क़त्ल से बचा लेना भी बड़े सवाब का काम है, कि) जो शख़्स किसी शख़्स को बचा ले तो (उसका ऐसा सवाब मिलेगा कि) गोया उसने तमाम आदमियों को बचा लिया। (ग़ैर-वाजिब की क़ैद इसलिये लगाई कि जिस शख़्स का क़त्ल शरई तौर पर वाजिब हो उसकी इमदाद या सिफ़ारिश हराम है, और इस बचा लेने के मज़मून से भी क़त्ल करने की हद से ज़्यादा बुराई ज़ाहिर हो गयी कि जब बचाना ऐसा अच्छा और पसन्दीदा अ़मल है तो लाज़िमी तौर पर क़त्ल करना बहुत बुरा और नापसन्दीदा फ़ेल होगा।) और उनके (यानी बनी इस्राईल के) पास (इस मज़मून के लिख देने के बाद) हमारे बहुत-से पैग़म्बर भी (नुबुव्वत की) स्पष्ट दलीलें लेकर आए और वक़्त वक़्त पर इस मज़मून की ताकीद करते रहे) मगर इस (ताकीद व एहतिमाम) के बाद भी उनमें से बहुत-से दुनिया में ज़्यादती करने वाले ही रहे (और उन पर कुछ असर न हुआ, यहाँ तक कि कुछ ने ख़ुद उन नबियों ही को क़त्ल कर दिया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हाबील और क़ाबील का क़िस्सा

इन आयतों में हक़ तआ़ला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत फ़रमाई है कि आप अहले किताब को या पूरी उम्मत को हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के दो बेटों का क़िस्सा सही-सही सुना दीजिए।

क़ुरआन मजीद पर नज़र रखने वाले जानते हैं कि क़ुरआने करीम कोई क़िस्से कहानी या तारीख़ की किताब नहीं, जिसका मक़सद किसी वाक़िए को अव्वल से आख़िर तक बयान करना हो, लेकिन गुज़रे ज़माने के वाक़िआ़त और पहले गुज़री क़ौमों के हालात अपने दामन में बहुत सी इबरतें और नसीहतें रखते हैं, वही तारीख़ की असली रूह है, और उनमें बहुत से हालात व वाक़िआ़त ऐसे भी होते हैं जिन पर शरीअ़त के विभिन्न अहकाम की बुनियाद होती है। इन्हीं

फ़ायदों को सामने रखते हुए क़ुरआने करीम का अन्दाज़ हर जगह यह है कि मौक़े-मौक़े पर कोई वाक़िआ बयान करता है, और अक्सर पूरा वाक़िआ भी एक जगह बयान नहीं करता, बल्कि उसके जितने हिस्से से उस जगह कोई मक़सद जुड़ा होता है उसका वही टुकड़ा वहाँ बयान कर दिया जाता है।

हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के दो बेटों का यह क़िस्सा भी इसी हिक्मत भरे अन्दाज़ पर नक़ल किया जा रहा है, इसमें मौजूदा और आईन्दा नस्लों के लिये बहुत सी इबरतें और नसीहतें हैं, और उसके अन्तर्गत बहुत से शरई अहकाम की तरफ़ इशारा किया गया है।

अब पहले क़ुरआनी अलफ़ाज़ की व्याख्या और उसके तहत में असल क़िस्सा देखिये, उसके बाद उससे संबन्धित अहकाम व मसाईल का बयान होगा।

इससे पहली आयतों में बनी इस्राईल को जिहाद का हुक्म और उसमें उनकी कम-हिम्मती और बुज़दिली का ज़िक्र था, इस क़िस्से में उसके मुक़ाबले में नाहक़ क़त्ल करने की बुराई और उसकी तबाहकारी का बयान करके क़ौम को इस एतिदाल (सही राह) पर लाना मक़सूद है कि जिस तरह हक़ की हिमायत और बातिल को मिटाने में क़त्ल व क़िताल से दम चुराना ग़लती है, इसी तरह नाहक़ क़त्ल व क़िताल पर क़दम बढ़ाना दीन व दुनिया की तबाही है।

ऐतिहासिक रिवायतों के नक़ल करने में एहतियात और सच्चाई वाजिब है

पहली आयत में 'इब्नै आद-म' का लफ़्ज़ ज़िक्र हुआ है। यूँ तो हर इनसान, आदमी और आदम की औलाद है, हर एक को इब्ने आदम (आदम की औलाद) कहा जा सकता है, लेकिन तफ़सीर के उलेमा की एक बड़ी जमाअ़त के नज़दीक इस जगह 'इब्नै आद-म' से हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम के दो सगे और डायरेक्ट उनकी पुश्त के बेटे मुराद हैं, यानी हाबील व क़ाबील। इन दोनों का क़िस्सा बयान करने के लिये इरशाद हुआः

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَىْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ.

यानी इन लोगों को आदम अ़लैहिस्सलाम के दो बेटों का क़िस्सा सही-सही हक़ीक़त के मुताबिक़ सुना दीजिए। इसमें 'बिल्हक़्क़ि' के लफ़्ज़ से तारीख़ी रिवायतों की नक़ल में एक अहम उसूल की तालीम फ़रमाई गयी है कि तारीख़ी रिवायतों के नक़ल करने में बड़ी एहतियात लाज़िम है, जिसमें न कोई झूठ हो न कोई मिलावट और धोखा, और न असल वाक़िए में किसी क़िस्म की तब्दीली या कमी-ज़्यादती। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

क़ुरआने करीम ने सिर्फ़ इसी जगह नहीं बल्कि दूसरे मौक़ों में भी इस उसूल पर क़ायम रहने की हिदायतें दी हैं। एक जगह इरशाद हैः

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ.

दूसरी जगह इरशाद है:

نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ نَبَاَهُمْ بِالْحَقِّ.

तीसरी जगह इरशाद है:

ذٰلِكَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ قَوْلَ الْحَقِّ.

इन तमाम मौक़ों में ऐतिहासिक वाक़िआत के साथ लफ़्ज़ हक़ लाकर इस बात की अहमियत को वाज़ेह किया गया है कि वाक़िआत को नक़ल करने में हक़ और सच्चाई की रियायत लाज़िमी है। रिवायात व हिकायात की बिना पर जिस क़द्र ख़राबियाँ दुनिया में होती हैं उन सब की बुनियाद आ़म तौर पर वाक़िआत के नक़ल करने में बेएहतियाती होती है। ज़रा सा लफ़्ज़ और उनवान बदल देने से वाक़िए की हक़ीक़त ही बदल और बिगड़ जाती है। पिछली क़ौमों के धर्म और शरीअ़तें इसी बेएहतियाती की राह से ज़ाया हो गये, और उनकी मज़हबी किताबें चन्द बेसनद और बेतहक़ीक़ कहानियों का मजमूआ बनकर रह गयीं। इस जगह एक लफ़्ज़ "बिल्हक़्क़ि" का इज़ाफ़ा करके इस अहम मक़सद की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया गया।

इसके अ़लावा इसी लफ़्ज़ में क़ुरआने करीम के मुख़ातब लोगों की इस तरफ़ भी रहनुमाई करना है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जो बिना पढ़े-लिखे हैं और हज़ारों साल पहले के वाक़िआत बिल्कुल सच्चे और सही बयान फ़रमा रहे हैं, तो इसका माध्यम सिवाय अल्लाह की वही और नुबुव्वत के क्या हो सकता है।

इस भूमिका के बाद उन दोनों बेटों का वाक़िआ क़ुरआने करीम ने यह बयान फ़रमायाः

اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ.

यानी उन दोनों ने अल्लाह तआ़ला के लिये अपनी अपनी क़ुरबानी पेश की, मगर एक की क़ुरबानी क़ुबूल हो गयी और दूसरे की क़ुबूल न हुई।

लफ़्ज़ क़ुरबान, अ़रबी लुग़त के एतिबार से हर उस चीज़ को कहा जाता है जिसको किसी के क़ुर्ब (निकटता) का ज़रिया बनाया जाये, और शरीअ़त की इस्तिलाह में उस ज़बीहे वग़ैरह को कहा जाता है जो अल्लाह तआ़ला की रज़ा और निकटता हासिल करने के लिये किया जाये।

इस क़ुरबानी के पेश करने का वाक़िआ जो सही और मज़बूत सनदों के साथ मन्क़ूल है और इब्ने कसीर ने इसको पहले और बाद के उलेमा का मुत्तफ़िक़ा क़ौल क़रार दिया है, यह है कि जब हज़रत आदम और हज़रत हव्वा अ़लैहिमस्सलाम दुनिया में आये और बच्चों की पैदाईश व नस्ल बढ़ने का सिलसिला शुरू हुआ तो हर एक हमल (गर्भ) से उनको दो बच्चे जुड़वाँ पैदा हुए, एक लड़का और दूसरी लड़की। उस वक़्त जबकि आदम अ़लैहिस्सलाम की औलाद में सिवाय बहन-भाईयों के कोई और न था, और भाई-बहन का आपस में निकाह नहीं हो सकता, तो अल्लाह जल्ल शानुहू ने उस वक़्त की ज़रूरत के लिहाज़ से आदम अ़लैहिस्सलाम की शरीअ़त में यह ख़ुसूसी हुक्म जारी फ़रमा दिया था कि एक हमल (गर्भ और पेट) से जो लड़का और

लड़की पैदा हो वह तो आपस में सगे बहन-भाई समझे जायें, और उनके बीच निकाह हराम क़रार पाये, लेकिन दूसरे हमल से पैदा होने वाले लड़के के लिये पहले हमल से पैदा होने वाली लड़की सगी बहन के हुक्म में नहीं होगी, बल्कि उनके बीच निकाह का रिश्ता जायज़ होगा।

लेकिन हुआ यह कि पहले लड़के क़ाबील के साथ जो लड़की पैदा हुई वह हसीन व जमील थी और दूसरे लड़के हाबील के साथ पैदा होने वाली लड़की बद-शक्ल थी। जब निकाह का वक़्त आया तो दस्तूर के अनुसार हाबील के साथ पैदा होने वाली बद-शक्ल लड़की क़ाबील के हिस्से में आई, इस पर क़ाबील नाराज़ होकर हाबील का दुश्मन हो गया और यह ज़िद करने लगा कि मेरे साथ जो लड़की पैदा हुई है वही मेरे निकाह में दी जाये। हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम ने शरई क़ायदे के मुवाफ़िक़ इसको क़ुबूल न फ़रमाया और हाबील व क़ाबील के बीच के विवाद को दूर करने के लिये यह सूरत तजवीज़ फ़रमाई कि तुम दोनों अपनी-अपनी क़ुरबानी अल्लाह के लिये पेश करो, जिसकी क़ुरबानी क़ुबूल हो जायेगी यह लड़की उसको दी जायेगी। क्योंकि हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम को यक़ीन था कि क़ुरबानी उसी की क़ुबूल होगी जिसका हक़ है, यानी हाबील की।

उस ज़माने में क़ुरबानी क़ुबूल होने की एक वाज़ेह और खुली हुई निशानी यह थी कि आसमान से एक आग आती और क़ुरबानी को खा जाती थी, और जिस क़ुरबानी को आग न खाये तो यह उसके नामक़बूल होने की निशानी होती थी।

अब सूरत यह पेश आई कि हाबील के पास भेड़-बकरियाँ थीं, उसने एक उम्दा दुंबे की क़ुरबानी की। क़ाबील किसान आदमी था, उसने कुछ ग़ल्ला, गन्दुम वग़ैरह क़ुरबानी के लिये पेश किया, और हुआ यह कि दस्तूर के मुताबिक़ आसमान से आग आई, हाबील की क़ुरबानी को खा गयी और क़ाबील की क़ुरबानी ज्यों-की-त्यों पड़ी रह गयी। इसी पर क़ाबील को अपनी नाकामी के साथ रुस्वाई का ग़म व ग़ुस्सा और बढ़ गया तो उससे रहा न गया और खुले तौर पर अपने भाई से कह दियाः

لَاَقْتُلَنَّكَ

यानी मैं तुझे क़त्ल कर डालूँगा।

हाबील ने उस वक़्त भी ग़ुस्से की बात का जवाब ग़ुस्से के साथ देने के बजाय एक ठण्डी और उसूली बात कही, जिसमें उसकी हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही भी थी किः

اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ.

यानी "अल्लाह तआ़ला का दस्तूर यही है कि मुत्तक़ी परहेज़गार का अ़मल क़ुबूल फ़रमाया करते हैं।"

अगर तुम तक़्वा व परहेज़गारी इख़्तियार करते तो तुम्हारी क़ुरबानी भी क़ुबूल होती, तुमने ऐसा नहीं किया तो क़ुरबानी क़ुबूल न हुई, इसमें मेरा क्या क़सूर है?

इस कलाम में हासिद (जलने वाले) के हसद का इलाज भी ज़िक्र कर दिया गया है कि

हासिद को जब यह नज़र आये कि किसी शख़्स को अल्लाह तआ़ला ने कोई ख़ास नेमत अ़ता फ़रमाई है जो उसको हासिल नहीं, तो उसको चाहिये कि अपनी मेहरूमी को अपनी अ़मली कोताही और गुनाहों के सबब से समझकर उनसे तौबा करने की फ़िक्र करे, न यह कि दूसरे से उस नेमत के छिन जाने की फ़िक्र में पड़ जाये। क्योंकि यह उसके फ़ायदे के बजाय नुक़सान का सबब है, क्योंकि अल्लाह के यहाँ मक़बूलियत का मदार तक़्वे पर है। (तफ़सीरे मज़हरी)

अ़मल के क़ुबूल होने का मदार इख़्लास और परहेज़गारी पर है

यहाँ हाबील व क़ाबील की आपसी गुफ़्तगू में एक ऐसा जुमला आ गया जो एक अहम उसूल की हैसियत रखता है, कि आमाल व इबादात की क़ुबूलियत तक़्वे और ख़ौफ़े ख़ुदा पर मौक़ूफ़ है। जिसमें तक़्वा (अल्लाह का डर और परहेज़गारी) नहीं उसका अ़मल मक़बूल नहीं। इसी वजह से पहले बुज़ुर्गों व उलेमा ने फ़रमाया है कि यह आयत इबादत गुज़ारों और अ़मल करने वालों के लिये बड़ी चेतावनी है। यही वजह थी कि हज़रत आ़मिर बिन अ़ब्दुल्लाह अपनी वफ़ात के वक़्त रो रहे थे, लोगों ने अ़र्ज़ किया कि आप तो उम्रभर नेक आमाल और इबादतों में मशग़ूल रहे, फिर रोने की क्या वजह है? फ़रमाया तुम यह कहते हो और मेरे कानों में अल्लाह तआ़ला का यह इरशाद गूँज रहा है:

اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ.

मुझे कुछ मालूम नहीं कि मेरी कोई इबादत क़ुबूल भी होगी या नहीं।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अगर मुझे यह यक़ीन हो जाये कि मेरा कोई अ़मल अल्लाह तआ़ला ने क़ुबूल फ़रमा लिया तो यह वह नेमत है कि सारी ज़मीन सोना बनकर अपने क़ब्ज़े में आ जाये तो भी उसके मुक़ाबले में कुछ न समझूँ।

इसी तरह हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अगर यह बात यक़ीनी तौर पर तय हो जाये कि मेरी एक नमाज़ अल्लाह तआ़ला के नज़दीक क़ुबूल हो गयी तो मेरे लिये वह सारी दुनिया और इसकी नेमतों से ज़्यादा है।

हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक शख़्स को ख़त में ये नसीहतें लिखीं कि:

> "मैं तुझे तक़्वे की ताकीद करता हूँ जिसके बग़ैर कोई अ़मल क़ुबूल नहीं होता, और तक़्वे वालों के सिवा किसी पर रहम नहीं किया जाता, और उसके बग़ैर किसी चीज़ पर सवाब नहीं मिलता। इस बात का वअ़ज़ कहने (बयान करने) वाले तो बहुत हैं मगर अ़मल करने वाले बहुत कम हैं।"

और हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि तक़्वे के साथ कोई छोटा सा

अ़मल भी छोटा नहीं है, और जो अ़मल मक़बूल हो जाये वह छोटा कैसे कहा जा सकता है।
(तफ़सीर इब्ने कसीर)

إِنَّمَا جَزٰٓؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَسْعَوْنَ فِي الْأَرْضِ فَسَادًا أَنْ يُّقَتَّلُوْٓا أَوْ يُصَلَّبُوْٓا أَوْ تُقَطَّعَ أَيْدِيْهِمْ وَأَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ أَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْأَرْضِ ۚ ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ إِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ أَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ ۚ فَاعْلَمُوْٓا أَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

इन्नमा जज़ाउल्लज़ी-न युहारिबूनल्ला-ह व रसूलहू व यस्ओ़-न फ़िल्अर्जि फ़सादन् अंय्युक़त्तलू औ युसल्लबू औ तुक़त्त-अ़ ऐदीहिम् व अर्जुलुहुम् मिन् ख़िलाफ़िन् औ युन्फ़ौ मिनल्-अर्जि, ज़ालि-क लहुम् ख़िज़्युन् फ़िद्दुन्या व लहुम् फ़िल्-आख़िरति अ़ज़ाबुन् अ़ज़ीम (33) इल्लल्लज़ी-न ताबू मिन् क़ब्लि अन् तक़्दिरू अ़लैहिम् फ़अ़्लमू अन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्-रहीम (34) ✿	यही सज़ा है उनकी जो लड़ते हैं अल्लाह से और उसके रसूल से, और दौड़ते हैं मुल्क में फ़साद करने को, कि उनको क़त्ल किया जाये या सूली चढ़ाये जायें या काटे जायें उनके हाथ और पाँव विपरीत दिशा से, या दूर कर दिये जायें इस जगह से, यह उनकी रुस्वाई है दुनिया में, और उनके लिये आख़िरत में बड़ा अ़ज़ाब है। (33) मगर जिन्होंने तौबा की तुम्हारे क़ाबू पाने से पहले तो जान लो कि अल्लाह तआ़ला बख़्शने वाला मेहरबान है। (34) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जुर्म व सज़ा के चन्द क़ुरआनी नियम

जो लोग अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) से लड़ते हैं और (इस लड़ने का मतलब यह है कि) मुल्क में फ़साद (यानी अशांति) फैलाते फिरते हैं (मुराद इससे रास्तों की लूट-पाट यानी डकैती है, ऐसे शख़्स पर जिसको अल्लाह ने शरई क़ानून से जिसका इज़्हार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये से हुआ है अमन दिया हो, यानी मुसलमान पर और ज़िम्मी पर और इसी लिये इसको अल्लाह और रसूल से लड़ना कहा गया है, कि उसने अल्लाह के दिये हुए अमन को तोड़ा, और चूँकि रसूल के ज़रिये से इसका ज़हूर हुआ

इसलिये रसूल का ताल्लुक़ भी बढ़ा दिया। ग़र्ज़ कि जो लोग ऐसी हरकत करते हैं) उनकी यही सज़ा है कि (एक हालत में तो) क़त्ल किए जाएँ (वह हालत यह है कि उन रास्ते में लूटने वालों ने किसी को सिर्फ़ क़त्ल किया हो और माल लेने की नौबत न आई हो) या (अगर दूसरी हालत हुई हो तो) सूली दिए जाएँ (यह वह हालत है कि उन्होंने माल भी लिया हो और क़त्ल भी किया हो) या (अगर तीसरी हालत हुई हो तो) उनके हाथ और पाँव विपरीत दिशा से (यानी दाहिना हाथ और बायाँ पाँव) काट दिए जाएँ (यह वह हालत है कि सिर्फ़ माल लिया और क़त्ल न किया हो) या (अगर चौथी हालत हुई हो तो) ज़मीन पर (आज़ादाना आबाद रहने) से निकाल (कर जेल में भेज) दिए जाएँ (यह वह हालत है कि न माल लिया हो न क़त्ल किया हो, इरादा करने के बाद ही गिरफ़्तार हो गये हों)। यह (बयान हुई सज़ा तो) उनके लिए दुनिया में सख़्त रुस्वाई (और ज़िल्लत) है, और उनको आख़िरत में (जो) बड़ा अ़ज़ाब होगा (सो अलग)।

हाँ मगर जो लोग इससे पहले कि तुम उनको गिरफ़्तार करो तौबा कर लें तो (इस हालत में) जान लो कि बेशक अल्लाह तआ़ला (अपने हुक़ूक़) बख़्श देंगे (और तौबा क़ुबूल करने में) मेहरबानी फ़रमा देंगे। (मतलब यह कि ऊपर जो सज़ा बयान हुई है वह सज़ा और अल्लाह के हक़ के तौर पर है जो कि बन्दे के माफ़ करने से माफ़ नहीं होती, क़िसास और बन्दे के हक़ के तौर पर नहीं जो कि बन्दे के माफ़ करने से माफ़ हो जाता है। पस जबकि गिरफ़्तारी से पहले उन लोगों का तौबा करने वाला होना साबित हो जाये तो सज़ा ख़त्म हो जायेगी, जो कि अल्लाह का हक़ था, अलबत्ता बन्दे का हक़ बाक़ी रहेगा। पस अगर माल लिया होगा तो उसका ज़िमान देना होगा, और अगर क़त्ल किया होगा तो उसका क़िसास लिया जायेगा, लेकिन इस ज़िमान व क़िसास के माफ़ करने का हक़ माल वाले और क़त्ल किये गये शख़्स के वली को हासिल होगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़ुरआनी क़वानीन का अ़जीब व ग़रीब क्रांतिकारी अन्दाज़

पहली आयतों में हाबील के क़त्ल होने का वाक़िआ़ और उसका ज़बरदस्त जुर्म होना ज़िक्र हुआ था, अब बयान हुई आयतों में और इनके बाद क़त्ल व ग़ारतगरी, डाका डालने और चोरी की शरई सज़ाओं का बयान है। डाके और चोरी की सज़ाओं के बीच ख़ौफ़े ख़ुदा और नेक काम करने के ज़रिये उसकी रज़ा व निकटता हासिल करने की हिदायत है। क़ुरआने करीम का यह अन्दाज़ बहुत ही लतीफ़ तरीक़े पर ज़ेहनी इन्क़िलाब पैदा करने वाला है, कि वह दुनिया की सज़ाओं की किताबों की तरह सिर्फ़ जुर्म व सज़ा के बयान पर बस नहीं करता, बल्कि हर जुर्म व सज़ा के साथ ख़ौफ़े ख़ुदा और आख़िरत को याद दिला कर इनसान का रुख़ एक ऐसे आ़लम की तरफ़ मोड़ देता है जिसका तसव्वुर उसको हर ऐब व गुनाह से पाक कर देता है। और अगर हालात व वाक़िआ़त पर ग़ौर किया जाये तो साबित होगा कि ख़ुदा व आख़िरत के डर के बग़ैर

दुनिया का कोई क़ानून, पुलिस और फ़ौज दुनिया में अपराधों की रोक-थाम की गारंटी नहीं दे सकती। क़ुरआने करीम का यही अन्दाज़ हकीमाना और मुरब्बियाना है, जिसने दुनिया में इन्क़िलाब (क्रांति) बरपा किया, और ऐसे इनसानों का एक समाज पैदा किया जो अपनी पाकीज़गी व पवित्रता में फ़रिश्तों से भी ऊँचा मक़ाम रखते हैं।

शरई सज़ाओं की तीन क़िस्में

डाके और चोरी की शरई सज़ायें जिनका ज़िक्र उक्त आयतों में है, उनकी तफ़सील और संबन्धित आयतों की तफ़सीर बयान करने से पहले मुनासिब है कि इन सज़ाओं से संबन्धित शरई इस्तिलाहों (परिभाषाओं) की कुछ वज़ाहत कर दी जाये जिनसे अज्ञानता की वजह से बहुत से लिखे-पढ़े लोगों को भी शुब्हात पेश आते हैं। दुनिया के आम क़वानीन में अपराधों की तमाम सज़ाओं को मुतलक़ तौर पर ताज़ीरात का नाम दिया जाता है, चाहे वह किसी जुर्म से संबन्धित हो। ताज़ीराते हिन्द, ताज़ीराते पाकिस्तान वग़ैरह के नामों से जो किताबें प्रकाशित हो रही हैं वो हर क़िस्म के अपराधों और हर तरह की सज़ाओं पर आधारित हैं। लेकिन इस्लामी शरीअ़त में मामला ऐसा नहीं, बल्कि अपराध की सज़ाओं की तीन क़िस्में क़रार दी गयीं।

1. हुदूद। 2. क़िसास। 3. ताज़ीरात।

इन तीनों क़िस्मों की परिभाषा और मतलब समझने से पहले यह बात जान लेना ज़रूरी है कि जिन अपराधों से किसी दूसरे इनसान को तकलीफ़ या नुक़सान पहुँचता है उसमें मख़्लूक़ पर भी ज़ुल्म होता है और ख़ालिक़ की भी नाफ़रमानी होती है, इसलिये हर ऐसे जुर्म में अल्लाह का हक़ और बन्दे का हक़ दोनों शामिल होते हैं, और इनसान दोनों का मुजरिम बनता है।

लेकिन कुछ जुर्मों में बन्दे के हक़ की हैसियत को ज़्यादा अहमियत हासिल है, और कुछ में अल्लाह के हक़ की हैसियत ज़्यादा ज़ाहिर है, और अहकाम में कामों का मदार इसी ग़ालिब हैसियत पर रखा गया है।

दूसरी बात यह जानना ज़रूरी है कि इस्लामी शरीअ़त ने ख़ास-ख़ास अपराधों के अ़लावा बाक़ी जराईम की सज़ाओं के लिये कोई पैमाना मुतैयन नहीं किया, बल्कि क़ाज़ी के इख़्तियार में दिया है कि हर ज़माने, हर जगह और हर माहौल के लिहाज़ से जैसी और जितनी सज़ा जुर्म को रोकने के लिये ज़रूरी समझे वह जारी करे। यह भी जायज़ है कि हर जगह और हर ज़माने की इस्लामी हुकूमत शरई नियमों का लिहाज़ रखते हुए क़ाज़ियों के इख़्तियारात पर कोई पाबन्दी लगाये और जराईम की सज़ाओं का कोई ख़ास पैमाना बनाकर उसका पाबन्द कर दे, जैसा कि बाद के ज़मानों में ऐसा होता रहा है, और इस वक़्त तमाम मुल्कों में तक़रीबन यही सूरत राईज (प्रचलित और जारी) है।

अब समझिये कि जिन जराईम (अपराधों) की कोई सज़ा क़ुरआन व हदीस ने मुतैयन नहीं की बल्कि अमीर व हाकिम की राय पर रखा है, उन सज़ाओं को शरई इस्तिलाह में "ताज़ीरात" कहा जाता है, और जिन जराईम की सज़ायें क़ुरआन व सुन्नत ने मुतैयन कर दी हैं वे दो क़िस्म

पर हैं- एक वो जिनमें अल्लाह के हक़ को ग़ालिब क़रार दिया गया है उनकी सज़ा को "हद" कहा जाता है, जिसकी जमा "हुदूद" है। दूसरे वह जिनमें बन्दे के हक़ को शरई तालीम के मुताबिक़ ग़ालिब माना गया है, उसकी सज़ा को "क़िसास" कहा जाता है। क़ुरआने करीम ने हुदूद व क़िसास का बयान पूरी तफ़सील व तशरीह के साथ ख़ुद कर दिया है, बाक़ी ताज़ीरी जराईम की तफ़सीलात को रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और वक़्त के हाकिमों की राय पर छोड़ दिया है कि वे जो बेहतर समझें इस बारे में फ़ैसला करें।

ख़ुलासा यह है कि क़ुरआने करीम ने जिन जराईम (अपराधों) की सज़ा को अल्लाह के हक़ के तौर पर मुतैयन करके जारी किया है उनको हुदूद कहते हैं, और जिनको बन्दे के हक़ के तौर पर जारी फ़रमाया है उनको क़िसास कहते हैं, और जिन जराईम की सज़ा का निर्धारण नहीं फ़रमाया उसको ताज़ीर कहते हैं। सज़ा की इन तीनों क़िस्मों के अहकाम बहुत सी चीज़ों में अलग-अलग हैं, जो लोग अपने उर्फ़ में आ़म बोल-चाल की बिना पर हर जुर्म की सज़ा को ताज़ीर कहते हैं और शरई इस्तिलाहों के फ़र्क़ पर नज़र नहीं करते उनको शरई अहकाम में बहुत ज़्यादा धोखे और शुब्हात पेश आते हैं।

ताज़ीरी सज़ायें हालात के मातहत हल्की से हल्की भी की जा सकती हैं, सख़्त से सख़्त भी और माफ़ भी की जा सकती हैं। उनमें हाकिमों के इख़्तियारात बहुत विस्तृत हैं, और हुदूद में किसी हुकूमत या किसी हाकिम व अमीर को अदना तब्दीली या कमी-बेशी की इजाज़त नहीं है, और न वक़्त और जगह के बदलने का उन पर कोई असर पड़ता है। न किसी अमीर व हाकिम को उसके माफ़ करने का हक़ है। इस्लामी शरीअ़त में हुदूद सिर्फ़ पाँच हैं- डाका, चोरी, ज़िना, ज़िना की तोहमत की सज़ायें। ये सज़ायें क़ुरआने करीम में स्पष्ट बयान हुई हैं। पाँचवीं शराब पीने की सज़ा है, जो सहाबा-ए-किराम की सर्वसम्मति से साबित हुई है। इस तरह कुल पाँच जराईम की सज़ायें निर्धारित हो गयीं, जिनको "हुदूद" कहा जाता है। (1)

ये सज़ायें जिस तरह कोई हाकिम व अमीर कम या माफ़ नहीं कर सकता, इसी तरह तौबा कर लेने से भी दुनियावी सज़ा के हक़ में माफ़ी नहीं होती, हाँ आख़िरत का गुनाह सच्ची तौबा से माफ़ होकर वहाँ का खाता बेबाक़ हो जाता है। इनमें से सिर्फ़ डाके की सज़ा में एक सूरत हुक्म से बाहर यह है कि डाकू अगर गिरफ़्तारी से पहले तौबा करे और मामलात से उसकी तौबा पर इत्मीनान हो जाये तो भी यह हद उससे ख़त्म हो जायेगी। गिरफ़्तारी के बाद की तौबा मोतबर नहीं। इसके अ़लावा दूसरी हुदूद तौबा से भी दुनिया के हक़ में माफ़ नहीं होतीं, चाहे यह तौबा गिरफ़्तारी से पहले हो या बाद में। तमाम ताज़ीरी अपराधों में हक़ के मुवाफ़िक़ सिफ़ारिशें सुनी जा सकती हैं, अल्लाह की हुदूद में सिफ़ारिश करना भी जायज़ नहीं, और उनका सुनना भी जायज़ नहीं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसकी सख़्त मनाही फ़रमाई है। हुदूद की सज़ायें आ़म तौर पर सख़्त हैं, और उनके लागू और जारी करने का क़ानून भी सख़्त है, कि

(1) इर्तिदाद (यानी इस्लाम लाने के बाद उससे फिर जाने और कुफ़्र में दाख़िल हो जाने) की सज़ा को मिलाकर अक्सर फ़ुक़हा ने हुदूद की तायदाद छह बयान की है। मुहम्मद तक़ी उस्मानी 1.1.1423 हिजरी

उनमें किसी को किसी कमी-बेशी की किसी हाल में इजाज़त नहीं, न कोई उनको माफ़ कर सकता है, जहाँ सज़ा और क़ानून की यह सख़्ती रखी गयी है वहीं मामले को मोतदिल (नॉर्मल) करने के लिये अपराध के पूरा करने और अपराध के सुबूत के पूरी तरह हासिल होने के लिये शर्तें भी बहुत ही कड़ी रखी गयी हैं। उन शर्तों में से कोई एक शर्त भी न पाई जाये तो हद (सज़ा) जारी नहीं होगी, बल्कि मामूली सा शुब्हा भी सुबूत में पाया जाये तो हद ख़त्म हो जाती है। इस बारे में इस्लाम का तयशुदा क़ानून यह है:

اَلْحُدُوْدُ تَنْدَرِءُ بِالشُّبُهَاتِ

यानी हुदूद (सज़ाओं) को मामूली शुब्हे से ख़त्म और निरस्त कर दिया जाता है।

यहाँ यह भी समझ लेना चाहिये कि जिन सूरतों में शरई सज़ा किसी शुब्हे या किसी शर्त की कमी की वजह से जारी न की जाये तो यह ज़रूरी नहीं कि मुजरिम को खुली छूट मिल जाये जिससे उसको जुर्म पर और जुर्रत पैदा हो, बल्कि हाकिम उसके हाल के मुनासिब उसको ताज़ीरी सज़ा देगा, और शरीअ़त की ताज़ीरी सज़ायें भी उमूमन बदनी और जिस्मानी सज़ायें हैं, जिनमें सबक़ लेने वाली होने की वजह से अपराधों की रोक-थाम का मुकम्मल इन्तिज़ाम है। फ़र्ज़ कीजिए कि ज़िना के सुबूत पर सिर्फ़ तीन गवाह मिले, और गवाह मोतबर और सही हैं जिन पर झूठ का शुब्हा नहीं हो सकता, मगर शरई क़ानून के हिसाब से चौथा गवाह न होने की वजह से उस पर शरई सज़ा जारी नहीं होगी, लेकिन इसके यह मायने नहीं कि उसको खुली छूट दे दी जाये, बल्कि हाकिमे वक़्त उसको मुनासिब ताज़ीरी सज़ा देगा जो कोड़े लगाने की सूरत में होगी। या चोरी के सुबूत के लिये जो शर्तें मुक़र्रर हैं उनमें कोई कमी या शुब्हा पैदा होने की वजह से उस पर शरई सज़ा हाथ काटने की जारी नहीं हो सकती, तो इसका यह मतलब नहीं कि वह बिल्कुल आज़ाद हो गया, बल्कि उसको दूसरी ताज़ीरी सज़ायें उसकी हालत के मुताबिक़ दी जायेंगी।

क़िसास की सज़ा भी हुदूद की तरह क़ुरआन में मुतैयन है, कि जान के बदले में जान ली जाये, ज़ख़्मों के बदले में उसके जैसे ज़ख़्म की सज़ा दी जाये। लेकिन फ़र्क़ यह है कि हुदूद को अल्लाह के हक़ की हैसियत से नाफ़िज़ किया गया है, अगर हक़ वाला इनसान माफ़ भी करना चाहे तो माफ़ न होगा, और सज़ा ख़त्म न होगी। मसलन जिसका माल चोरी किया है वह माफ़ भी कर दे तो चोरी की शरई सज़ा माफ़ न होगी, बख़िलाफ़ क़िसास के कि इसमें बन्दे का हक़ होने की हैसियत को क़ुरआन व सुन्नत ने ग़ालिब क़रार दिया है, यही वजह है कि क़ातिल पर क़त्ल का जुर्म साबित हो जाने के बाद उसको मक़्तूल (क़त्ल होने वाले) के वली के हवाले कर दिया जाता है, वह चाहे तो क़िसास ले ले और उसको क़त्ल करा दे, और चाहे माफ़ कर दे।

इसी तरह ज़ख़्मों के क़िसास का भी यही हाल है। यह बात आप पहले जान चुके हैं कि हुदूद या क़िसास के जारी न होने से यह लाज़िम नहीं आता कि मुजरिम को खुली छूट मिल जाये, बल्कि हाकिमे वक़्त ताज़ीरी सज़ा जितनी और जैसी मुनासिब समझे दे सकता है। इसलिये यह

शुब्हा न होना चाहिये कि अगर ख़ून के मुजरिम को मक़्तूल के वारिसों के माफ़ करने पर छोड़ दिया जाये तो क़ातिलों की जुर्रत बढ़ जायेगी, और क़त्ल की वारदात आ़म हो जायेंगी, क्योंकि उस शख़्स की जान लेना तो मक़्तूल के वली-वारिस का हक़ था, वह उसने माफ़ कर दिया, लेकिन दूसरे लोगों की जानों की हिफ़ाज़त हुकूमत का हक़ है, वह इस हक़ की सुरक्षा के लिये उसको उम्रक़ैद की या दूसरी क़िस्म की सज़ायें देकर इस ख़तरे की रोकथाम कर सकती है।

यहाँ तक शरई सज़ाओं- हुदूद, क़िसास, और ताज़ीरात की शरई इस्तिलाहों और उनसे संबन्धित ज़रूरी मालूमात का बयान हुआ, अब इनके मुताल्लिक़ आयतों की तफ़सीर और हुदूद की तफ़सील देखिये। पहली आयत में उन लोगों की सज़ा का बयान है जो अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जंग व मुक़ाबला करते हैं, और ज़मीन में फ़साद मचाते हैं।

यहाँ पहली बात क़ाबिले ग़ौर यह है कि अल्लाह व रसूल के साथ लड़ाई व मुक़ाबला और ज़मीन में फ़साद का क्या मतलब है, और कौन लोग इसके मिस्दाक़ हैं। लफ़्ज़ "मुहारबा" हर्ब से लिया गया है और इसके असली मायने सल्ब करने और छीन लेने के हैं, और मुहावरों में यह लफ़्ज़ सलम् के मुक़ाबले में इस्तेमाल होता है, जिसके मायने अमन और सलामती के हैं। तो मालूम हुआ कि हर्ब का मफ़्हूम बद-अमनी (अशांति) फैलाना है। और ज़ाहिर है कि इक्का दुक्का चोरी या क़त्ल व ग़ारतगरी से सार्वजनिक शांति सल्ब नहीं होती, बल्कि यह सूरत तभी होती है जबकि कोई ताक़तवर जमाअ़त रास्तों की लूट-मार और क़त्ल व ग़ारतगरी पर खड़ी हो जाये। इसी लिये हज़राते फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने इस सज़ा का मुस्तहिक़ सिर्फ़ उस जमाअ़त या व्यक्ति को क़रार दिया है जो हथियार बन्द होकर अ़वाम पर डाके डाले, और हुकूमत के क़ानून को क़ुव्वत के साथ तोड़ना चाहे, जिसको दूसरे लफ़्ज़ों में डाकू या बाग़ी कहा जा सकता है। आ़म व्यक्तिगत जराईम करने वाले चोर, जेब-कतरे वग़ैरह इसमें दाख़िल नहीं हैं।

(तफ़सीरे मज़हरी)

दूसरी बात यहाँ यह क़ाबिले ग़ौर है कि इस आयत में मुहारबे (लड़ने और मुक़ाबला करने) को अल्लाह और रसूल की तरफ़ मन्सूब किया है, हालाँकि डाकू या बग़ावत करने वाले जो मुक़ाबला या लड़ाई करते हैं वह इनसानों के साथ होता है। वजह यह है कि कोई ताक़तवर जमाअ़त जब ताक़त के साथ अल्लाह और उसके रसूल के क़ानून को तोड़ना चाहे तो अगरचे ज़ाहिर में उसका मुक़ाबला अ़वाम और इनसानों के साथ होता है लेकिन वास्तव में उसकी जंग हुकूमत के साथ है, और इस्लामी हुकूमत में जब क़ानून अल्लाह और रसूल का नाफ़िज़ हो तो यह मुहारबा (जंग) भी अल्लाह व रसूल ही के मुक़ाबले में कहा जायेगा।

ख़ुलासा यह है कि पहली आयत में जिस सज़ा का ज़िक्र है यह उन डाकुओं और बाग़ियों पर आ़यद होती है जो सामूहिक क़ुव्वत के साथ हमला करें, सार्वजनिक अमन को बरबाद करें और हुकूमत के क़ानून को खुल्लम-खुल्ला तोड़ने की कोशिश करें। और ज़ाहिर है कि इसकी विभिन्न सूरतें हो सकती हैं- माल लूटने, आबरू पर हमला करने से लेकर क़त्ल व ख़ून बहाने तक सब इसके मफ़्हूम में शामिल हैं। इसी से मुक़ातला और मुहारबा में फ़र्क़ मालूम हो गया कि

लफ़्ज़ मुक़ातला ख़ून बहने वाली लड़ाई के लिये बोला जाता है अगरचे कोई क़त्ल हो या न हो, और चाहे ज़िमनन् माल भी लूटा जाये, और लफ़्ज़ मुहारबा ताक़त के साथ बद-अमनी फैलाने और सलामती को तबाह करने के मायने में है। इसी लिये यह लफ़्ज़ सामूहिक ताक़त के साथ अ़वाम की जान व माल और आबरू में से किसी चीज़ पर हाथ डालने के लिये इस्तेमाल होता है, जिसको रास्ते की लूट-पाट, डाके और बग़ावत से ताबीर किया जाता है।

इस जुर्म की सज़ा क़ुरआने करीम ने ख़ुद मुतैयन फ़रमा दी और अल्लाह के हक़ यानी सरकारी जुर्म के तौर पर नाफ़िज़ किया, जिसको शरीअ़त की इस्तिलाह में हद कहा जाता है। अब सुनिये कि डाका और रहज़नी (रास्ते में लूट-पाट करने) की शरई सज़ा क्या है। ज़िक्र हुई आयत में रहज़नी की चार सज़ायें बयान हुई हैं:

اَنْ يُّقَتَّلُوْٓا اَوْ يُصَلَّبُوْٓا اَوْ تُقَطَّعَ اَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِ.

"यानी उनको क़त्ल किया जाये या सूली चढ़ाया जाये या उनके हाथ और पाँव विपरीत दिशाओं से काट दिये जायें या उनको ज़मीन से निकाल दिया जाये।"

इनमें से पहली तीन सज़ाओं में मुबालग़े का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया जो किसी काम के बार-बार करने और सख़्ती पर दलालत करता है। इसमें बहुवचन का कलिमा इस्तेमाल फ़रमा कर इस तरफ़ भी इशारा फ़रमा दिया कि उनका क़त्ल करना या सूली चढ़ाना या हाथ पाँव काटना आ़म सज़ाओं की तरह नहीं कि जिस फ़र्द (व्यक्ति) पर जुर्म साबित हो सिर्फ़ उसी फ़र्द पर सज़ा जारी की जाये, बल्कि यह जुर्म जमाअ़त में से एक फ़र्द से भी सादिर हो गया तो पूरी जमाअ़त को क़त्ल या सूली, या हाथ पाँव काटने की सज़ा दी जायेगी।

साथ ही इस तरफ़ भी इशारा कर दिया गया कि यह क़त्ल और सूली चढ़ाना वग़ैरह क़िसास (बदले) के तौर पर नहीं, कि क़त्ल होने वाले के वारिसों के माफ़ कर देने से माफ़ हो जाये, बल्कि यह शरई हद (सज़ा) अल्लाह के हक़ की हैसियत के नाफ़िज़ की गयी है। जिन लोगों को नुक़सान पहुँचा है वे माफ़ भी कर दें तो भी शरई तौर पर सज़ा माफ़ न होगी। ये दोनों हुक्म मुबालग़े का कलिमा ज़िक्र करने से मालूम हुए। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

रहज़नी (रास्ते में लूट-पाट करने) की ये चार सज़ायें हर्फ़ "औ" (या) के साथ ज़िक्र की गयी हैं, जो चन्द चीज़ों में इख़्तियार देने के लिये भी इस्तेमाल किया जाता है, और काम की तक़सीम के लिये भी। इसी लिये उम्मत के उलेमा, सहाबा और ताबिईन की एक जमाअ़त हर्फ़ "औ" को इख़्तियार देने के लिये क़रार देकर इस तरफ़ गई है कि इन चार सज़ाओं में इमाम व हाकिम को शरअ़न् इख़्तियार दिया गया है कि डाकुओं की ताक़त व दबदबे और जराईम के हल्का या भारी होने पर नज़र करके उनके हाल के मुताबिक़ ये चारों सज़ायें या इनमें से कोई एक जारी करे।

हज़रत सईद बिन मुसैयब, हज़रत अ़ता, हज़रत दाऊद, हज़रत हसन बसरी, हज़रत ज़ह्हाक, हज़रत इब्राहीम नख़ई, इमाम मुजाहिद और चारों इमामों में से इमाम मालिक रह. का यही

मज़हब है। और इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हंबल रह. और सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम व ताबिईन की एक जमाअ़त ने हर्फ़ "औ" को इस जगह काम की तक़सीम के मायने में लेकर आयत का मफ़्हूम यह क़रार दिया कि रहज़नों और रहज़नी के विभिन्न हालात पर विभिन्न सज़ायें मुक़र्रर हैं। इसकी ताईद एक हदीस से भी होती है जिसमें हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अबू बरदा असलमी से सुलह का समझौता फ़रमाया था, मगर उसने अ़हद का उल्लंघन किया और कुछ लोग मुसलमान होने के लिये मदीना तय्यिबा आ रहे थे, उन पर डाका डाला। इस वाक़िए में हज़रत जिब्रीले अमीन सज़ा का यह हुक्म लेकर नाज़िल हुए कि जिस शख़्स ने किसी को क़त्ल भी किया और माल भी लूटा उसको सूली चढ़ाया जाये, और जिसने सिर्फ़ क़त्ल किया माल नहीं लूटा उसको क़त्ल किया जाये, और जिसने कोई क़त्ल नहीं किया सिर्फ़ माल लूटा है उसके हाथ-पाँव विपरीत दिशाओं से काट दिये जायें। और जो उनमें से मुसलमान हो जाये उसका जुर्म माफ़ कर दिया जाये, और जिसने क़त्ल व ग़ारतगरी कुछ नहीं किया सिर्फ़ लोगों को डराया जिससे आ़म शांति में ख़लल पड़ा उसको देस निकाला दिया जाये। अगर उन लोगों ने दारुल-इस्लाम (इस्लामी हुकूमत) के किसी मुस्लिम या ग़ैर-मुस्लिम नागरिक को क़त्ल किया है मगर माल नहीं लूटा तो उनकी सज़ा यह है उन सब को क़त्ल कर दिया जाये। अगरचे क़त्ल करने का फ़ेल अप्रत्यक्ष रूप से सिर्फ़ कुछ अफ़राद से सादिर हुआ हो। और अगर किसी को क़त्ल भी किया, माल भी लूटा तो उनकी सज़ा यह है कि उनको सूली चढ़ाया जाये, जिसकी सूरत यह है कि उनको ज़िन्दा सूली पर लटकाया जाये, फिर नेज़े वग़ैरह से पेट फाड़ दिया जाये। और अगर उन लोगों ने सिर्फ़ माल लूटा है किसी को क़त्ल नहीं किया तो उनकी सज़ा यह है कि उनके दाहिने हाथ गट्टों पर से और बायें पाँव टख़्नों पर से काट दिये जायें, और इसमें भी यह माल लूटने का अ़मल डायरेक्ट तौर पर अगरचे कुछ अफ़राद से सादिर हुआ हो, मगर सज़ा सबके लिये यही होगी। क्योंकि करने वालों ने जो कुछ किया है अपने साथियों के सहयोग और मदद के भरोसे पर किया है, इसलिये सब के सब जुर्म में शरीक हैं। और अगर अभी तक क़त्ल व ग़ारतगरी का कोई जुर्म उनसे सादिर नहीं हुआ था कि पहले ही गिरफ़्तार कर लिये गये तो उनकी सज़ा यह है कि उनको ज़मीन से निकाल दिया जाये।

ज़मीन से निकालने का मफ़्हूम उलेमा की एक जमाअ़त के नज़दीक यह है कि उनको दारुल-इस्लाम (इस्लामी हुकूमत की सरहदों) से निकाल दिया जाये। और कुछ हज़रात के नज़दीक यह है कि जिस जगह पर डाका डाला है वहाँ से निकाल दिया जाये। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इस क़िस्म के मामलात में यह फ़ैसला फ़रमाया कि अगर मुजरिम को यहाँ से निकालकर दूसरे शहरों में आज़ाद छोड़ दिया जाये तो वहाँ के लोगों को सतायेगा, इसलिये ऐसे मुजरिम को क़ैदख़ाने में बन्द कर दिया जाये। यही उसका ज़मीन से निकालना है कि ज़मीन में कहीं चल-फिर नहीं सकता। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. ने भी यही इख़्तियार फ़रमाया है।

रहा यह सवाल कि इस तरह के सशत्र हमलों में आजकल आम तौर पर सिर्फ़ माल की लूट खसोट या क़त्ल व ख़ूँरेज़ी ही पर बस नहीं होता, बल्कि अक्सर औरतों की अस्मत लूटने और अपहरण वग़ैरह के वाक़िआत भी पेश आते हैं और क़ुरआन मजीद का जुमलाः

وَيَسْعَوْنَ فِي الْأَرْضِ فَسَادًا.

इस क़िस्म के तमाम अपराधों को शामिल भी है, तो वे किस सज़ा के मुस्तहिक़ होंगे। इसमें ज़ाहिर यही है कि इमाम व हाकिम को इख़्तियार होगा कि इन चारों सज़ाओं में से जो उनके हाल के मुनासिब देखे वह जारी करे, और बदकारी का शरई सुबूत मिल जाये तो ज़िना की सज़ा जारी करे।

इसी तरह अगर सूरत यह हो कि न किसी को क़त्ल किया न माल लूटा, मगर कुछ लोगों को ज़ख़्मी कर दिया, तो ज़ख़्मों के क़िसास (बदले) का क़ानून नाफ़िज़ किया जायेगा।

(तफ़सीरे मज़हरी)

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ.

यानी ये शरई सज़ायें जो दुनिया में उन पर जारी की गयी हैं, यह तो दुनिया की रुस्वाई और सज़ा का एक नमूना है, और आख़िरत की सज़ा इससे भी सख़्त और लम्बी है।

इससे मालूम हुआ कि दुनियावी सज़ाओं हुदूद व क़िसास या ताज़ीरात से बग़ैर तौबा के आख़िरत की सज़ा माफ़ नहीं होती, हाँ सज़ा पाने वाला शख़्स दिल से तौबा कर ले तो आख़िरत की सज़ा माफ़ हो जायेगी।

दूसरी आयतः

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ.

में हुक्म से अलग रहने वाली एक सूरत का ज़िक्र किया गया है, वह यह है कि डाकू और बाग़ी अगर हुकूमत के घेरे में आने और उन पर क़ाबू पाने से पहले-पहले जबकि उनकी क़ुव्वत व ताक़त बहाल है, इस हालत में अगर तौबा करके रास्ते में लूट-पाट से ख़ुद ही बाज़ आ जायें तो डाके की यह शरई सज़ा उनसे ख़त्म हो जायेगी। हुक्म से अलग की यह सूरत सज़ाओं के आम क़ानून से अलग है, क्योंकि दूसरे अपराध चोरी ज़िना वग़ैरह में जुर्म करने और क़ाज़ी की अदालत में जुर्म साबित हो जाने के बाद अगर मुजरिम सच्चे दिल से तौबा करे तो अगरचे उस तौबा से आख़िरत की सज़ा माफ़ हो जायेगी मगर दुनिया में शरई सज़ा माफ़ न होगी, जैसा कि चन्द आयतों के बाद चोरी की सज़ा के तहत में इसका तफ़सीली बयान आयेगा।

आम हुक्म में से इस सूरत के अलग करने की हिक्मत यह है कि एक तरफ़ डाकुओं की सज़ा में यह सख़्ती इख़्तियार की गयी है कि पूरी जमाअत में से किसी एक से भी जुर्म हो तो सज़ा पूरी जमाअत को दी जाती है, इसलिये दूसरी तरफ़ हुक्म से अलग करने की इस सूरत के ज़रिये मामले को हल्का कर दिया गया, कि तौबा कर लें तो दुनिया की सज़ा भी माफ़ हो जाये।

इसके अ़लावा इसमें एक सियासी मस्लेहत भी है कि एक ताक़तवर जमाअ़त पर हर वक़्त क़ाबू पाना आसान नहीं होता, इसलिये उनके वास्ते तरग़ीब (शौक़ व लालच) का दरवाज़ा खुला रखा गया, कि वे तौबा की तरफ़ माईल हो जायें।

साथ ही इसमें यह भी मस्लेहत है कि किसी की जान को क़त्ल करने की सज़ा एक इन्तिहाई और आख़िरी सज़ा है, इसमें इस्लामी क़ानून का रुख़ यह है कि इसकी नौबत कम से कम आये और डाके की सूरत में एक जमाअ़त का क़त्ल लाज़िम आता है इसलिये तरग़ीबी पहलू से उनको सुधार की दावत भी साथ-साथ जारी रखी गयी, इसी का यह असर था कि अ़ली असदी जो मदीना तय्यिबा के निकट एक गिरोह बना करके आने-जाने वालों पर डाका डालता था, एक रोज़ क़ाफ़िले में किसी क़ारी की ज़बान से यह आयत उसके कान में पड़ गयीः

يٰعِبَادِىَ الَّذِيْنَ اَسْرَفُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ لَا تَقْنَطُوْا مِنْ رَّحْمَةِ اللّٰهِ.

वह क़ारी (पढ़ने वाले) के पास पहुँचे और दोबारा पढ़ने की दरख़्वास्त की। दूसरी मर्तबा आयत सुनते ही अपनी तलवार म्यान में दाख़िल की और रहज़नी से तौबा करके मदीना तय्यिबा पहुँचे। उस वक़्त मदीना पर मरवान बिन हकम हाकिम थे, हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु उनका हाथ पकड़कर अमीरे मदीना के पास ले गये और क़ुरआन की उक्त आयत पढ़कर फ़रमाया कि आप इसको कोई सज़ा नहीं दे सकते। हुकूमत भी उनके फ़साद व रहज़नी से आ़जिज़ हो रही थी, सब को ख़ुशी हुई।

इसी तरह हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू के ज़माने में हारिसा बिन बदर बग़ावत करके निकल गया और क़त्ल व ग़ारतगरी को पेशा बना लिया, मगर फिर अल्लाह तआ़ला ने तौफ़ीक़ दी और तौबा करके वापस आया तो हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू ने उस पर शरई हद (सज़ा) जारी नहीं फ़रमाई।

यहाँ यह बात याद रखने के क़ाबिल है कि शरई सज़ा के माफ़ हो जाने से यह लाज़िम नहीं आता कि जिन बन्दों के हुक़ूक़ उसने ज़ाया किये हैं वे भी माफ़ हो जायें, बल्कि अगर किसी का माल लिया है और वह मौजूद है तो उसका वापस करना ज़रूरी है, और किसी को क़त्ल किया है या ज़ख़्मी किया है तो उसका क़िसास (बदला) उस पर लाज़िम है, अलबत्ता चूँकि क़िसास बन्दे का हक़ है तो क़त्ल किये गये शख़्स के वली-वारिस या हक़ वाले के माफ़ करने से माफ़ हो जायेगा, और जो कोई माली नुक़सान किसी को पहुँचाया है उसका ज़िमान अदा करना या उससे माफ़ कराना लाज़िम है। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. और फ़ुक़हा की एक बड़ी जमाअ़त का यही मस्लक है, और अगर ग़ौर किया जाये तो यह बात यूँ भी ज़ाहिर है कि बन्दों के हुक़ूक़ से छुटकारा और मुक्ति हासिल करना ख़ुद तौबा का एक हिस्सा है, बग़ैर इसके तौबा ही मुकम्मल नहीं होती। इसलिये किसी डाकू को तौबा करने वाला उसी वक़्त माना जायेगा जब वह बन्दों के हुक़ूक़ को अदा या माफ़ करा ले।

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْٓا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ وَجَاهِدُوْا فِيْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ لِيَفْتَدُوْا بِهٖ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَا تُقُبِّلَ مِنْهُمْ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿﴾ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخٰرِجِيْنَ مِنْهَا ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ﴿﴾ وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿﴾ فَمَنْ تَابَ مِنْۢ بَعْدِ ظُلْمِهٖ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوْبُ عَلَيْهِ ۗ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿﴾ اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۗ يُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿﴾

या अय्युहल्लज़ी-न आमनुत्तक़ुल्ला-ह वब्तग़ू इलैहिल्-वसील-त व जाहिदू फ़ी सबीलिही लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून (35) इन्नल्लज़ी-न क-फ़रू लौ अन्-न लहुम् मा फ़िल्अर्ज़ि जमीअ़ंव्-व मिस्लहू म-अ़हू लियफ़्तदू बिही मिन् अ़ज़ाबि यौमिल्-क़ियामति मा तुक़ुब्बि-ल मिन्हुम् व लहुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (36) युरीदू-न अंय्यख़्रुजू मिनन्नारि व मा हुम् बिख़ारिजी-न मिन्हा व लहुम् अ़ज़ाबुम् मुक़ीम (37) वस्सारिक़ु वस्सारि-क़तु फ़क़्तअ़ू ऐदि-यहुमा जज़ाअम् बिमा क-सबा नकालम् मिनल्लाहि, वल्लाहु अ़ज़ीज़ुन् हकीम (38) फ़-मन् ता-ब मिम्बअ़्दि ज़ुल्मिही व अस्ल-ह फ़-इन्नल्ला-ह

ऐ ईमान वालो डरते रहो अल्लाह से और ढूँढो उस तक वसीला, और जिहाद करो उसकी राह में ताकि तुम्हारा भला हो। (35) जो लोग काफ़िर हैं अगर उनके पास हो जो कुछ ज़मीन में है सारा और उसके साथ इतना ही और हो ताकि बदले में दें अपने क़ियामत के दिन अ़ज़ाब से, तो उनसे क़ुबूल न होगा और उनके वास्ते दर्दनाक अ़ज़ाब है। (36) चाहेंगे कि निकल जायें आग से और वे उससे निकलने वाले नहीं, और उनके लिये हमेशा का अ़ज़ाब है। (37) और चोरी करने वाला मर्द और चोरी करने वाली औरत काट डालो उनके हाथ सज़ा में उनकी कमाई के, चेतावनी है अल्लाह की तरफ़ से और अल्लाह ग़ालिब है हिक्मत वाला। (38) फिर जिसने तौबा की अपने ज़ुल्म करने के बाद और सुधार किया तो अल्लाह क़ुबूल करता है उसकी तौबा,

यतूबु अ़लैहि, इन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (39) अलम् तअ़्लम् अन्नल्ला-ह लहू मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि, युअ़ज़्ज़िबु मंय्यशा-उ व यग़्फ़िरु लिमंय्यशा-उ, वल्लाहु अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (40)	बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (39) तुझको मालूम नहीं कि अल्लाह ही के वास्ते है सल्तनत आसमान और ज़मीन की, अ़ज़ाब करे जिसको चाहे और बख़्शे जिसको चाहे, और अल्लाह सब चीज़ पर क़ादिर है। (40)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला (के अहकाम की मुख़ालफ़त) से डरो (यानी गुनाहों को छोड़ दो) और (नेकी के ज़रिये) अल्लाह तआ़ला की निकटता "और रज़ा" ढूँढो (यानी ज़रूरी कामों और नेकियों के पाबन्द रहो) और (उन ज़रूरी नेक कामों में से ख़ास तौर पर) अल्लाह तआ़ला की राह में जिहाद किया करो, उम्मीद है कि (इस तरीक़े से) तुम (पूरे) कामयाब हो जाओगे (और कामयाबी अल्लाह तआ़ला की रज़ामन्दी का हासिल होना और दोज़ख़ से निजात है)। यक़ीनन जो लोग काफ़िर हैं अगर (मान लो) उन (में से हर एक) के पास तमाम दुनिया भर की चीज़ें हों (जिसमें ज़मीन में से निकलने वाले तमाम दफ़ीने व ख़ज़ाने भी आ गये) और (उन्हीं चीज़ों पर क्या बस है बल्कि) उन चीज़ों के साथ उतनी चीज़ें और भी हों ताकि वे उसको देकर क़ियामत के दिन के अ़ज़ाब से छूट जाएँ तब भी वे चीज़ें उनसे क़ुबूल न की जाएँगी (और अ़ज़ाब से न बचेंगे, बल्कि) उनको दर्दनाक अ़ज़ाब होगा। (फिर अ़ज़ाब में दाख़िल हो जाने के बाद) इस बात की इच्छा (व तमन्ना) करेंगे कि दोज़ख़ से (किसी तरह) निकल आएँ और (यह इच्छा कभी पूरी न होगी और) वे उससे (कभी) न निकलेंगे और उनको हमेशा का अ़ज़ाब होगा (यानी किसी तदबीर से न सज़ा टलेगी न सज़ा का हमेशा के लिये होना कम होगा)।

और जो मर्द चोरी करे (इसी तरह) और जो औ़रत चोरी करे सो (उनका हुक्म यह है कि ऐ हाकिमो!) उन दोनों के (दाहिने) हाथ (गट्टे पर से) काट डालो उनके (इस) किरदार के बदले में (और यह बदला) बतौर सज़ा के (है) अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से, और अल्लाह तआ़ला बड़े क़ुव्वत वाले हैं (जो सज़ा चाहें मुक़र्रर फ़रमाएँ) और बड़ी हिक्मत वाले हैं (कि मुनासिब ही सज़ा मुक़र्रर फ़रमाते हैं)। फिर जो शख़्स (शरई क़ानून के मुवाफ़िक़) अपनी (इस) ज़्यादती के बाद तौबा करे (चोरी के बाद) और (आमाल की) दुरुस्ती रखे (यानी चोरी वग़ैरह न करे, अपनी तौबा पर क़ायम रहे) तो बेशक अल्लाह तआ़ला उस (के हाल) पर (रहमत के साथ) तवज्जोह फ़रमाएँगे (कि तौबा से पिछला गुनाह माफ़ फ़रमायेंगे, और तौबा पर जमे रहने की तौफ़ीक़ से मज़ीद इनायत फ़रमा देंगे) बेशक अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले हैं (कि उसका गुनाह माफ़ कर दिया) बड़ी रहमत वाले हैं (कि आईन्दा भी और ज़्यादा इनायत की। ऐ मुख़ातब!) क्या तुम नहीं जानते (यानी सब जानते हैं) कि अल्लाह ही के लिए (साबित) है हुकूमत सब आसमानों की

और ज़मीन की, वह जिसको चाहें सज़ा दें और जिसको चाहें माफ़ कर दें, और अल्लाह तआ़ला को हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र की गयी आयतों में से पहली आयत में डाके और बग़ावत की शरई सज़ा और उसके अहकाम की तफ़सील मज़कूर थी, और आगे तीन आयतों के बाद चोरी की शरई सज़ा का बयान आने वाला है। इसके बीच की तीन आयतों में परहेज़गारी, नेकी व इबादत, जिहाद की तरग़ीब और कुफ़्र व दुश्मनी और नाफ़रमानी की तबाहकारी का बयान फ़रमाया गया है। क़ुरआने करीम के इस ख़ास तरीक़े और अन्दाज़ में ग़ौर करो तो मालूम होगा कि क़ुरआने करीम का आ़म अन्दाज़ यह है कि वह सिर्फ़ हाकिमाना तौर पर ताज़ीर व सज़ा का क़ानून बयान करके नहीं छोड़ देता बल्कि शफ़क़त भरे अन्दाज़ में ज़ेहनों को अपराधों से बाज़ रहने के लिये हमवार भी करता है। ख़ुदा तआ़ला और आख़िरत के ख़ौफ़ और जन्नत की हमेशा रहने वाली नेमतों और राहतों को याद दिलाकर उनके दिलों को जुर्म से नफ़रत करने वाला बनाता है। यही वजह है कि अक्सर जुर्म व सज़ा के क़ानून के बाद 'इत्तक़ुल्लाह' (अल्लाह से डरो) वग़ैरह को दोहराया जाता है। यहाँ भी पहली आयत में तीन चीज़ों का हुक्म दिया गया है, पहले 'इत्तक़ुल्ला-ह' यानी अल्लाह तआ़ला से डरो, क्योंकि ख़ौफ़े ख़ुदा ही वह चीज़ है जो इनसान को वास्तविक रूप से ख़ुफ़िया व ऐलानिया अपराधों से रोक सकती है।

दूसरा इरशाद है 'वब्तग़ू इलैहिल् वसील-त' यानी अल्लाह की निकटता तलाश करो। लफ़्ज़ वसीला "वसलुन्" से निकला है, जिसके मायने मिलने और जुड़ने के हैं। यह लफ़्ज़ सीन और सॉद दोनों से तक़रीबन एक ही मायने में आता है, फ़र्क़ इतना है कि "वसलुन्" सॉद के साथ मुतलक़न् मिलने और जुड़ने के मायने में है, और सीन के साथ दिलचस्पी व मुहब्बत के साथ मिलने के लिये इस्तेमाल होता है।

'सिहाहे जोहरी' और 'मुफ़्रदातुल-क़ुरआन' राग़िब अस्फ़हानी में इसकी वज़ाहत है। इसलिये सॉद के साथ "वुस्ला" और "वसीला" हर उस चीज़ को कहा जाता है जो दो चीज़ों के बीच मेल और जोड़ पैदा कर दे, चाहे वह मेल और जोड़ रुचि व मुहब्बत से हो या किसी दूसरी सूरत से। और सीन के साथ लफ़्ज़ वसीला के मायने उस चीज़ के हैं जो किसी को किसी दूसरे से मुहब्बत व चाहत के साथ मिला दे। (लिसानुल-अ़रब, मुफ़्रदाते राग़िब)

अल्लाह तआ़ला की तरफ़ **वसीला** हर वह चीज़ है जो बन्दे को दिलचस्पी व मुहब्बत के साथ अपने माबूद के क़रीब कर दे। इसलिये पहले के बुज़ुर्गों, सहाबा व ताबिईन ने इस आयत में वसीला की तफ़सीर नेकी, अल्लाह की निकटता और ईमान व नेक अ़मल से की है, हाकिम की रिवायत में हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि वसीला से मुराद निकटता व इताअ़त है। और इब्ने जरीर रह. ने हज़रत अ़ता, मुजाहिद और हसन बसरी रह. वग़ैरह से भी यही नक़ल किया है। और इब्ने जरीर रह. वग़ैरह ने हज़रत क़तादा रह. से इस आयत की

तफ़सीर यह नक़ल की है:

تَقَرَّبُوْٓا اِلَيْهِ بِطَاعَتِهٖ وَالْعَمَلِ بِمَا يُرْضِيْهِ.

यानी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ निकटता हासिल करो, उसकी फ़रमाँबरदारी और रज़ामन्दी के काम करके। इसलिये आयत की तफ़सीर का ख़ुलासा यह हुआ कि अल्लाह तआ़ला की नज़दीकी तलाश करो ईमान और नेक अ़मल के ज़रिये।

और मुस्नद अहमद की एक सही हदीस में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि **वसीला** एक आला दर्जा है जन्नत का, जिसके ऊपर कोई दर्जा नहीं है। तुम अल्लाह तआ़ला से दुआ़ करो कि वह दर्जा मुझे अ़ता फ़रमा दे।

और सही मुस्लिम की एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब मुअज़्ज़िन अज़ान कहे तो तुम भी वही कलिमात कहते रहो जो मुअज़्ज़िन कहता है, उसके बाद मुझ पर दुरूद पढ़ो और मेरे लिये वसीला की दुआ़ करो।

इन हदीसों से मालूम हुआ कि वसीला एक ख़ास दर्जा है जन्नत का जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मख़्सूस है। और ज़िक्र हुई आयत में हर मोमिन को वसीला तलब करने और ढूँढने का हुक्म बज़ाहिर इस ख़ुसूसियत के मनाफ़ी है (यानी जब यह दर्जा नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये ख़ास है तो औरों को उसे तलब करने के क्या मायने), मगर जवाब ज़ाहिर है कि जिस तरह हिदायत का आला मक़ाम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये मख़्सूस है और आप हमेशा उसके लिये दुआ़ किया करते थे, मगर उसके शुरू के और दरमियानी दर्जे तमाम मोमिनों के लिये आ़म हैं, इसी तरह वसीला का आला दर्जा रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये मख़्सूस है और उसके नीचे के दर्जे सब मोमिनों के लिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही के वास्ते और ज़रिये से आ़म हैं।

हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपने पत्रों में और क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने तफ़सीरे मज़हरी में इस पर सचेत किया है कि लफ़्ज़ **वसीला** में मुहब्बत व दिलचस्पी का मफ़्हूम शामिल होने से इस तरफ़ इशारा है कि वसीला के दर्जों में तरक़्क़ी अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत पर निर्भर है, और मुहब्बत पैदा होती है सुन्नत की पैरवी करने से, क्योंकि हक़ तआ़ला का इरशाद है:

فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ.

(अगर तुम मुहब्बत रखते हो अल्लाह की तो मेरी राह चलो ताकि मुहब्बत करे तुमसे अल्लाह) इसलिये जितना कोई अपनी इबादतों, मामलात, अख़्लाक़, रहन-सहन और ज़िन्दगी के तमाम क्षेत्रों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की पैरवी करेगा उतना ही अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत उसको हासिल होगी और वह ख़ुद अल्लाह तआ़ला के नज़दीक महबूब हो जायेगा। और जितनी ज़्यादा मुहब्बत बढ़ेगी उतनी ही अल्लाह तआ़ला की नज़दीकी हासिल होगी।

लफ़्ज़ वसीला की लुग़वी तशरीह (वज़ाहत व बयान) और सहाबा व ताबिईन की तफ़सीर से जब यह मालूम हो गया कि हर वह चीज़ जो अल्लाह तआला की रज़ा और निकटता का ज़रिया बने वह इनसान के लिये अल्लाह तआला के क़रीब होने का वसीला है। इसमें जिस तरह ईमान और नेक अमल दाख़िल हैं इसी तरह नबियों और नेक लोगों की सोहबत व मुहब्बत भी दाख़िल है कि वह भी अल्लाह की रज़ा के असबाब में से है, और इसी लिये उनको वसीला बनाकर अल्लाह तआला से दुआ करना दुरुस्त हुआ, जैसा कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने क़हत (सूखे) के ज़माने में हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु को वसीला बनाकर अल्लाह तआला से बारिश की दुआ माँगी, अल्लाह तआला ने क़ुबूल फ़रमाई।

और एक रिवायत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद एक नाबीना सहाबी को इस तरह दुआ माँगने की तालीम फ़रमाईः

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْأَلُكَ وَاَتَوَجَّهُ اِلَیْكَ بِنَبِیِّكَ مُحَمَّدٍ نَبِیِّ الرَّحْمَةِ. (منار)

मज़कूरा आयत में पहले तक़वे (परहेज़गारी) की हिदायत फ़रमाई गयी, फिर अल्लाह तआला से ईमान और नेक आमाल के ज़रिये उसकी निकटता हासिल करने की। आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَجَاهِدُوْا فِیْ سَبِیْلِهٖ.

यानी जिहाद करो अल्लाह की राह में।

अगरचे नेक आमाल में जिहाद भी दाख़िल था लेकिन नेक आमाल में जिहाद का आला मक़ाम बतलाने के लिये इसको अलग करके बयान फ़रमा दिया गया, जैसा कि हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद हैः

وَذِرْوَةُ سَنَامِهِ الْجِهَادُ.

यानी इस्लाम का आला मक़ाम जिहाद है।

दूसरे इस जगह जिहाद को अहमियत के साथ ज़िक्र करने की यह हिक्मत भी है कि पिछली आयतों में ज़मीन में फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) फैलाने का हराम व नाजायज़ होना और उसकी दुनियावी व आख़िरत की सज़ाओं का बयान आया था, जिहाद भी ज़ाहिर के एतिबार से ज़मीन में फ़साद फैलाने की सूरत मालूम होती है, इसलिये मुम्किन था कि कोई नावाक़िफ़ जिहाद और फ़साद में फ़र्क़ न समझे, इसलिये ज़मीन में फ़साद की मनाही के बाद जिहाद का हुक्म अहमियत के साथ ज़िक्र करके दोनों के फ़र्क़ की तरफ़ लफ़्ज़ "फ़ी सबीलिही" से इरशाद फ़रमा दिया। क्योंकि डाका, बग़ावत वग़ैरह में जो क़त्ल व लड़ाई और माल लूटा जाता है वह महज़ अपने ज़ाती स्वार्थों, इच्छाओं और घटिया मक़ासिद के लिये होता है, और जिहाद में अगर इसकी नौबत आये भी तो महज़ अल्लाह का कलिमा बुलन्द करने और ज़ुल्म व ज़्यादती को मिटाने के लिये है जिनमें ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है। दूसरी और तीसरी आयत में कुफ़्र व शिर्क और नाफ़रमानी का बड़ा वबाल होना ऐसे अन्दाज़ में बतलाया गया है कि उस पर ज़रा भी ग़ौर किया जाये तो

वह इनसान की ज़िन्दगी में एक इन्क़िलाबे अ़ज़ीम (बड़ा बदलाव और भारी क्रांति) पैदा कर दे, और कुफ़्र व शिर्क और नाफ़रमानी सब को छोड़ने पर मजबूर कर दे।

वह यह है कि आ़म तौर पर इनसान जिन गुनाहों में मुब्तला होता है वह अपनी इच्छाओं, ज़रूरतों या बाल-बच्चों व घर वालों की इच्छाओं के लिये होता है, और उन सब को पाना माल व दौलत जमा करने से होता है, इसलिये माल व दौलत जमा करने में हलाल व हराम का फ़र्क़ किये बग़ैर लग जाता है। इस आयत में अल्लाह ज़ल्ल शानुहू ने उनकी इस बदमस्ती के इलाज के लिये फ़रमाया कि आज चन्द दिन की ज़िन्दगी और इसकी राहत के लिये जिन चीज़ों को तुम हज़ारों मेहनतों और कोशिशों के ज़रिये जमा करते हो और फिर भी सब जमा नहीं होतीं, इस नाजायज़ हवस का अन्जाम यह है कि क़ियामत का अ़ज़ाब जब सामने आयेगा तो उस वक़्त अगर ये लोग चाहें कि दुनिया में हासिल किये हुए माल व दौलत और साज़ व सामान सब को फ़िदया (बदले में) देकर अपने आपको अ़ज़ाब से बचा लें तो यह नामुम्किन है, बल्कि फ़र्ज़ कर लो कि सारी दुनिया का माल व दौलत और पूरा सामान इसी एक शख़्स को मिल जाये, और फिर इसी पर बस नहीं, इतना ही और भी मिल जाये, और यह सब को अपने अ़ज़ाब से बचने के लिये फ़िदया बनाना चाहे तो कोई चीज़ क़ुबूल न होगी, और इसको आख़िरत के अ़ज़ाब से निजात न होगी।

तीसरी आयत में यह भी वाज़ेह कर दिया कि काफ़िरों का यह अ़ज़ाब हमेशा के लिये होगा, जिससे वे कभी निजात न पायेंगे।

चौथी आयत में फिर जराईम (अपराधों) की सज़ाओं की तरफ़ वापसी की गयी और चोरी की शरई सज़ा का बयान फ़रमाया गया। शरई सज़ाओं की तीन क़िस्में जो पहले बयान हो चुकी हैं, चोरी की सज़ा उनकी हुदूद वाली क़िस्म में दाख़िल है, क्योंकि क़ुरआने करीम ने इस सज़ा को ख़ुद मुतैयन फ़रमाया, हाकिम की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर नहीं छोड़ा, और अल्लाह के हक़ के तौर पर मुतैयन फ़रमाया है, इसलिये इसको चोरी की हद (सज़ा) कहा जाता है। आयत में इरशाद है:

وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا جَزَآءً ۢبِمَا كَسَبَا نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ

यानी "चोरी करने वाले मर्द और चोरी करने वाली औ़रत के हाथ काट दो उनके किरदार के बदले में, और अल्लाह ज़बरदस्त हिक्मत वाला है।"

यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि क़ुरआनी अहकाम में ख़िताब आ़म तौर पर मर्दों को होता है और औ़रतें भी उसमें उनके ताबे होकर शामिल होती हैं। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात और तमाम अहकाम में क़ुरआन व सुन्नत का यही उसूल है, लेकिन चोरी की सज़ा और ज़िना की सज़ा में सिर्फ़ मर्दों के ज़िक्र पर बस नहीं फ़रमाया, बल्कि दोनों जातियों (औ़रत ज़ात और मर्द ज़ात) को अलग-अलग करके हुक्म दिया।

इसकी वजह यह है कि मामला हुदूद (सज़ाओं) का है, जिनमें ज़रा सा भी शुब्हा पड़ जाये

तो ख़त्म हो जाती हैं, इसलिये औरतों के लिये मर्दों के तहत ख़िताब करने को काफ़ी नहीं समझा बल्कि स्पष्ट रूप से ज़िक्र फ़रमाया।

दूसरी बात इस जगह क़ाबिले ग़ौर यह है कि लफ़्ज़ सरक़ा के लुग़वी मायने और शरई परिभाषा क्या है? लुग़त की मशहूर किताब क़ामूस में है कि कोई शख़्स किसी दूसरे का माल किसी सुरक्षित जगह से बग़ैर उसकी इजाज़त के छुपकर ले ले, इसको सरक़ा (चोरी) कहते हैं, यही उसकी शरई परिभाषा है, और इस परिभाषा के हिसाब से सरक़ा (चोरी) साबित होने के लिये चन्द चीज़ें ज़रूरी हुईं:

पहली यह कि वह माल किसी व्यक्ति या समूह की ज़ाती मिल्कियत हो, चुराने वाले की उसमें न मिल्कियत हो न मिल्कियत का शुब्हा हो, और न ऐसी चीज़ें हों जिनमें अ़वाम के हुक़ूक़ बराबर हैं। जैसे आ़म लोगों को फ़ायदा पहुँचाने की संस्था और उनकी चीज़ें। इससे मालूम हुआ कि अगर किसी शख़्स ने कोई ऐसी चीज़ ले ली जिसमें उसकी मिल्कियत या मिल्कियत का शुब्हा है, या जिसमें अ़वाम के हुक़ूक़ बराबर हैं तो सरक़ा की हद (चोरी की सज़ा) उस पर जारी न की जायेगी, हाकिम जो बेहतर समझे उसके मुवाफ़िक़ ताज़ीरी सज़ा जारी कर सकता है।

दूसरी चीज़ सरक़े (चोरी) की परिभाषा में सुरक्षित माल होता है, यानी ताला लगे हुए बन्द मकान के ज़रिये या किसी निगराँ चौकीदार के ज़रिये सुरक्षित होना। जो माल किसी महफ़ूज़ जगह में न हो उसको कोई शख़्स उठा ले तो वह भी चोरी की सज़ा को वाजिब करने वाला नहीं होगा, और माल के सुरक्षित होने में शुब्हा भी हो जाये तो भी सज़ा नहीं दी जायेगी, गुनाह और ताज़ीरी सज़ा का मामला अलग है।

तीसरी शर्त बिना इजाज़त होना है। जिस माल के लेने या उठाकर इस्तेमाल करने की किसी को इजाज़त दे रखी हो, वह उसको बिल्कुल ले जाये तो चोरी की सज़ा आ़यद नहीं होगी, और इजाज़त का शुब्हा भी पैदा हो जाये तो सज़ा ख़त्म हो जायेगी।

चौथी शर्त छुपाकर लेना है। क्योंकि दूसरे का माल खुले तौर पर लूटा जाये तो वह सरक़ा (चोरी) नहीं बल्कि डाका है, जिसकी सज़ा पहले बयान हो चुकी है। ग़र्ज़ कि ख़ुफ़िया न हो तो चोरी की सज़ा उस पर जारी न होगी।

इन तमाम शर्तों की तफ़सील सुनने से आपको यह मालूम हो गया कि हमारे उर्फ़ में जिसको चोरी कहा जाता है वह एक आ़म और विस्तृत मफ़्हूम है, उसकी तमाम सूरतों में चोरी की सज़ा यानी हाथ काटना शरअ़न आ़यद नहीं है, बल्कि चोरी की सिर्फ़ उस सूरत पर यह शरई सज़ा जारी होगी जिसमें ये तमाम शर्तें मौजूद हों।

इसके साथ ही यह भी आप मालूम कर चुके हैं कि जिन सूरतों में चोरी की शरई सज़ा नहीं दी जाती, तो यह लाज़िम नहीं है कि मुजरिम को खुली छूट मिल जाये, बल्कि हाकिमे वक़्त अपने तौर पर जो बेहतर समझे उसके मुताबिक़ उसको ताज़ीरी सज़ा दे सकता है, जो जिस्मानी, कोड़ों की सज़ा भी हो सकती है।

इसी तरह यह भी न समझा जाये कि जिन सूरतों में चोरी की कोई शर्त न पाये जाने की

वजह से शरई सज़ा जारी न हो तो वह शरअ़न जायज़ व हलाल है, क्योंकि ऊपर बतलाया जा चुका है कि यहाँ गुनाह और आख़िरत के अ़ज़ाब का ज़िक्र नहीं, दुनियावी सज़ा और वह भी ख़ास क़िस्म की सज़ा का ज़िक्र है। वैसे किसी शख़्स का माल बग़ैर उसकी दिली मर्ज़ी के किसी तरह भी ले लिया जाये तो वह हराम और आख़िरत के अ़ज़ाब का सबब है, जैसा कि क़ुरआने करीम की आयतः

لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ.

में इसकी वज़ाहत मौजूद है।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ज़िक्र है कि चोरी में जो अलफ़ाज़ क़ुरआने करीम के आते हैं वही ज़िना की सज़ा में हैं, मगर चोरी के मामले में मर्द का ज़िक्र पहले औ़रत का बाद में है, और ज़िना में इसके उलट औ़रत का ज़िक्र पहले किया गया। चोरी की सज़ा में इरशाद हैः

وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ.

और ज़िना की सज़ा में फ़रमाया हैः

اَلزَّانِيَةُ وَالزَّانِيْ.

इस तरतीब के उल्टा करने की कई हिक्मतें मुफ़स्सिरीन हज़रात ने लिखी हैं। उनमें से दिल को ज़्यादा लगने वाली बात यह है कि चोरी का जुर्म मर्द के लिये औ़रत की तुलना में ज़्यादा सख़्त है, क्योंकि उसको अल्लाह तआ़ला ने माल कमाने की वह क़ुव्वत बख़्शी है जो औ़रत को हासिल नहीं। उस पर माल कमाने के इतने दरवाज़े खुले होने के बावजूद चोरी के ज़लील जुर्म में मुब्तला हो, यह उसके जुर्म को बढ़ा देता है। और ज़िना के मामले में औ़रत को हक़ तआ़ला तबई हया व शर्म के साथ ऐसा माहौल बख़्शता है कि इन सब चीज़ों के होते हुए इस बेहयाई पर उतरना उसके लिये बहुत ही सख़्त जुर्म है, इसलिये चोरी में मर्द का ज़िक्र पहले है और ज़िना में औ़रत का।

मज़कूरा आयत के अलफ़ाज़ में चोरी की शरई सज़ा बयान करने के बाद दो जुमले इरशाद फ़रमाये हैं। एकः

جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا.

यानी यह सज़ा बदला है उनकी बद-किरदारी का। दूसरा जुमला फ़रमायाः

نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ.

इसमें दो लफ़्ज़ हैं 'नकाल' और 'मिनल्लाहि'। लफ़्ज़ "नकाल" के मायने अ़रबी लुग़त में ऐसी सज़ा के हैं जिसको देखकर दूसरों को भी सबक़ मिले, और वे जुर्म करने से बाज़ आ जायें। इसलिये "नकाल" का तर्जुमा हमारे मुहावरे के मुवाफ़िक़ सीख लेने वाली सज़ा का हो गया। इसमें इशारा है कि हाथ काटने की सख़्त सज़ा ख़ास हिक्मत पर आधारित है, कि एक पर सज़ा जारी हो तो सब के सब काँप उठें, और इस बुरे जुर्म का ख़ात्मा हो जाये। दूसरा लफ़्ज़

"मिनल्लाहि" का बढ़ाकर एक अहम मज़मून की तरफ़ इशारा फ़रमाया जो यह है कि चोरी के जुर्म की दो हैसियतें हैं- एक यह कि उसने किसी दूसरे इनसान का माल बग़ैर हक़ के लिया, जिससे उस पर ज़ुल्म हुआ। दूसरी यह कि उसने अल्लाह तआ़ला के हुक्म के ख़िलाफ़ किया, पहली हैसियत से यह सज़ा मज़लूम का हक़ है, और उसका तक़ाज़ा यह है कि जिसका हक़ है अगर वह सज़ा को माफ़ कर दे तो माफ़ हो जायेगी, जैसा कि क़िसास (बदले) के तमाम मसाईल में यही मामूल है। दूसरी हैसियत से यह सज़ा अल्लाह के हक़ की ख़िलाफ़वर्ज़ी करने की है, उसका तक़ाज़ा यह है कि जिस शख़्स की चोरी की है अगर वह माफ़ भी कर दे तो माफ़ न हो, जब तक ख़ुद अल्लाह तआ़ला माफ़ न फ़रमा दें, जिसको शरीअ़त की परिभाषा में हद या हुदूद कहा जाता है। लफ़्ज़ "मिनल्लाहि" से इस दूसरी हैसियत को मुतैयन करके इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि यह सज़ा हद है, क़िसास नहीं है। यानी सरकारी जुर्म की हैसियत से यह सज़ा दी गयी है, इसलिये जिसकी चोरी की है उसके माफ़ करने से भी सज़ा ख़त्म नहीं होगी।

आयत के आख़िर में 'वल्लाहु अ़ज़ीज़ुन् हकीम' फ़रमाकर उस शुब्हे का जवाब दे दिया जो आजकल आ़म तौर पर ज़बानों पर है कि यह सज़ा बड़ी सख़्त है, और कुछ गुस्ताख़ या नावाक़िफ़ तो यूँ कहने से भी नहीं झिझकते कि यह सज़ा वहशियाना (बेरहमी की) है, नऊज़ु बिल्लाह मिन्हा। इशारा इसकी तरफ़ फ़रमाया कि इस सख़्त सज़ा की तजवीज़ महज़ अल्लाह तआ़ला के क़वी और ज़बरदस्त होने का नतीजा नहीं, बल्कि उनके हकीम होने पर भी आधारित है। जिन शरई सज़ाओं को आजकल के यूरोप के अ़क़्लमन्द सख़्त और वहशियाना कहते हैं उनकी हिक्मत, ज़रूरत और फ़ायदों की बहस उन्हीं आयतों की तफ़सीर के बाद तफ़सील के साथ आयेगी।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

فَمَنْ تَابَ مِنْ بَعْدِ ظُلْمِهٖ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوْبُ عَلَيْهِ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ.

यानी "जो शख़्स अपनी बद-किरदारी (ग़लत आचरण) और चोरी से बाज़ आ गया और अपने अ़मल की इस्लाह कर ली तो अल्लाह तआ़ला उसको माफ़ फ़रमा देंगे, क्योंकि अल्लाह बहुत बख़्शने वाले और मेहरबान हैं।"

डाका डालने की शरई सज़ा जिसका बयान चन्द आयतों पहले आया है, उसमें भी माफ़ी का ज़िक्र है, और चोरी की सज़ा के बाद भी माफ़ी का ज़िक्र है। लेकिन दोनों जगह की माफ़ी के बयान में एक ख़ास फ़र्क़ है, और उसी फ़र्क़ की बिना पर दोनों सज़ाओं में माफ़ी का मतलब फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) के नज़दीक विभिन्न है। डाका डालने की सज़ा में तो हक़ तआ़ला ने सज़ा से अलग करते हुए यह हुक्म ज़िक्र फ़रमायाः

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ.

जिसका हासिल यह है कि डाका डालने की जो शरई सज़ा आयत में मज़कूर है उससे यह सूरत अलग और ख़ारिज है कि डाकुओं पर हुकूमत का क़ाबू चलने और गिरफ़्तार होने से पहले

जो तौबा करे उसको यह शरई सज़ा माफ़ कर दी जायेगी। और चोरी की सज़ा के बाद जो माफ़ी का ज़िक्र है उसमें इस दुनियावी सज़ा से कोई हुक्म अलग नहीं रखा, बल्कि आख़िरत के एतिबार से उनकी तौबा मक़बूल होने का बयान है, जिसकी तरफ़ 'फ़-इन्नल्ला-ह यतूबु अ़लैहि' में इशारा मौजूद है, कि हाकिमे वक़्त इस तौबा की वजह से शरई सज़ा न छोड़ेंगे, बल्कि अल्लाह तआ़ला उनके जुर्म को माफ़ फ़रमाकर आख़िरत की सज़ा से निजात देंगे। इसी लिये फ़ुक़हा हज़रात इस पर तक़रीबन सहमत हैं कि डाकू अगर गिरफ़्तार होने से पहले तौबा कर लें तो डाके की शरई सज़ा उन पर जारी न होगी, मगर चोर अगर चोरी करने के बाद चाहे गिरफ़्तारी से पहले या बाद में चोरी से तौबा करे तो चोरी की सज़ा जो दुनियावी सज़ा है वह माफ़ न होगी, गुनाह की माफ़ी होकर आख़िरत के अ़ज़ाब से निजात पा जाना इसके ख़िलाफ़ नहीं।

बाद वाली आयत में इरशाद फ़रमायाः

اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ. يُعَذِّبُ مَنْ يَّشَآءُ وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ. وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَیْءٍ قَدِيْرٌ.

"यानी क्या आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को मालूम नहीं कि आसमानों और ज़मीन की सल्तनत व हुकूमत सिर्फ़ अल्लाह की है, और उसकी यह शान है कि जिसको चाहता है अ़ज़ाब देता है, जिसको चाहता है बख़्श देता है, और अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर क़ादिर है।"

इस आयत का जोड़ और संबन्ध पिछली आयतों से यह है कि पिछली आयतों में डाके और चोरी की शरई सज़ाओं जिनमें हाथ-पाँव या सिर्फ़ हाथ काट डालने के सख़्त अहकाम हैं, ज़ाहिरी एतिबार से देखने में यह अहकाम इनसानी सम्मान और उसके तमाम मख़्लूक़ात में सम्मानीय होने के ख़िलाफ़ हैं। इस शुब्हे को दूर करने के लिये इस आयत में अल्लाह जल्ल शानुहू ने पहले सारे जहान के लिये अपना मालिके हक़ीक़ी होना बयान फ़रमाया, फिर अपने मुकम्मल इख़्तियार वाला होने का ज़िक्र फ़रमाया, और इनके बीच में यह इरशाद फ़रमाया कि वह सिर्फ़ सज़ा या अ़ज़ाब ही नहीं देते बल्कि माफ़ भी फ़रमाते हैं, और उस माफ़ी और सज़ा का मदार उनकी हिक्मत पर है। क्योंकि वह जिस तरह हर चीज़ के मालिक और मुकम्मल इख़्तियार वाले हैं इसी तरह हकीमे मुतलक़ भी हैं, जिस तरह उनकी क़ुदरत व सल्तनत का इहाता कोई इनसानी ताक़त नहीं कर सकती, इसी तरह उनकी हिक्मतों का पूरा इहाता भी इनसानी अ़क़्ल व दिमाग़ नहीं कर सकते। और उसूल के साथ ग़ौर व फ़िक्र करने वालों को ज़रूरत के मुताबिक़ कुछ इल्म हो भी जाता है जिससे उनके दिल मुत्मईन हो जाते हैं।

इस्लामी सज़ाओं के बारे में यूरोप वालों और उनकी तालीम व तहज़ीब से प्रभावित लोगों का यह आ़म एतिराज़ है कि ये सज़ायें सख़्त हैं, और अन्जाम से नावाक़िफ़ कुछ लोग तो यह कहने से भी बाज़ नहीं रहते कि ये सज़ायें वहशियाना और इनसानी शराफ़त के ख़िलाफ़ हैं।

इसके बारे में पहले तो वह सामने रखिये जो इससे पहले बयान हो चुका है कि क़ुरआने करीम ने सिर्फ़ चार जुर्मों की सज़ायें ख़ुद मुक़र्रर और निर्धारित कर दी हैं, जिनको शरई परिभाषा में हद कहा जाता है। डाके की सज़ा दाहिना हाथ और बायाँ पैर, चोरी की सज़ा दाहिना हाथ

पहुँचे पर से काटना, ज़िना की सज़ा कुछ सूरतों में सौ कोड़े लगाना और कुछ में संगसार करके क़त्ल कर देना, ज़िना की झूठी तोहमत किसी पर लगाने की सज़ा अस्सी कोड़े। पाँचवीं शरई सज़ा शराब पीने की है, जो सहाबा किराम की सर्वसम्मति से अस्सी कोड़े मुक़र्रर किये गये हैं। इन पाँच अपराधों के अलावा तमाम जराईम की सज़ा हाकिमे वक़्त की मर्ज़ी और राय पर है, कि जुर्म, मुजरिम और उसके माहौल पर नज़र करके जितनी और जैसी चाहे सज़ा दे। इसमें यह भी हो सकता है कि सज़ाओं के निर्धारण और सीमित करने का कोई ख़ास निज़ाम इल्म व राय रखने वालों के मश्विरे से मुक़र्रर करके क़ाज़ी या जज को उनका पाबन्द कर दिया जाये, जैसा कि आजकल उमूमन विधान सभाओं और लोक सभाओं के ज़रिये ताज़ीरी क़वानीन मुतैयन किये जाते हैं, और क़ाज़ी या जज मुक़र्ररा हदों के अन्दर सज़ा जारी करते हैं। अलबत्ता इन पाँच अपराधों में जिनकी सज़ायें क़ुरआन या मुत्तफ़िक़ा राय से मुतैयन कर दी गयी हैं, और इनमें किसी व्यक्ति या समूह या लोकसभा को तब्दीली करने का कोई इख़्तियार नहीं है। मगर इनमें भी अगर जुर्म का सुबूत शरीअ़त के तय किये हुए गवाही के नियमों से न हो सके, या जुर्म का सुबूत तो मिले मगर उस जुर्म पर जिन शर्तों के साथ यह सज़ा जारी की जाती है वो शर्तें मुकम्मल न हों, और जुर्म क़ाज़ी या जज के नज़दीक साबित हो, तो इस सूरत में भी शरई सज़ा जारी न होगी बल्कि ताज़ीरी सज़ा दी जायेगी। इसी के साथ यह शरई उसूल और क़ानून भी मुक़र्रर और माना हुआ है कि शुब्हे का फ़ायदा मुजरिम को पहुँचता है, जुर्म के साबित होने या जुर्म की शर्तों में से किसी चीज़ में शुब्हा पड़ जाये तो शरई सज़ा ख़त्म हो जाती है, मगर ख़ाली जुर्म का सुबूत हो जाये तो ताज़ीरी सज़ा दी जायेगी।

इससे मालूम हुआ कि इन पाँच अपराधों में बहुत सी सूरतें ऐसी निकलेंगी कि उनमें शरई सज़ाओं का निफ़ाज़ नहीं होगा, बल्कि ताज़ीरी सज़ायें हाकिम जो बेहतर समझे उसके मुताबिक़ दी जायेंगी। ताज़ीरी सज़ायें चूँकि इस्लामी शरीअ़त ने मुतैयन नहीं कीं बल्कि हर ज़माने और हर माहौल के मुताबिक़ मुल्कों के आम क़वानीन की तरह उनमें तब्दीली व संशोधन और कमी-बेशी की जा सकती है, इसलिये उन पर तो किसी को किसी एतिराज़ की गुंजाईश नहीं। अब बहस सिर्फ़ पाँच जराईम की सज़ाओं में और उनकी भी मख़्सूस सूरतों में रह गयी। मिसाल के तौर पर चोरी को ले लीजिए और देखिये कि इस्लामी शरीअ़त में हाथ काटने की सज़ा बिना किसी शर्त के हर चोरी पर आयद नहीं, कि जिसको उर्फ़े आम में चोरी कहा जाता है, बल्कि वह चोरी जिस पर चोर का हाथ काटा जाता है उसकी एक मख़्सूस परिभाषा है, जिसकी तफ़सील ऊपर गुज़र चुकी है, कि किसी का माल महफ़ूज़ जगह से हिफ़ाज़त का सामान तोड़कर नाजायज़ तौर पर ख़ुफ़िया तरीक़े से निकाल लिया जाये। इस परिभाषा की रू से बहुत सी सूरतें जिनको आम बोल-चाल में चोरी कहा जाता है, वो चोरी की सज़ा की परिभाषा से निकल जाती हैं।

मिसाल के तौर पर सुरक्षित जगह की शर्त से मालूम हुआ कि आम सार्वजनिक मक़ामात जैसे मस्जिद, ईदगाह, पार्क, क्लब, स्टेशन, वेटिंग रूम, रेल, जहाज़ वग़ैरह में आम जगहों पर रखे हुए माल की कोई चोरी करे, या पेड़ों पर लगे हुए फल चुरा ले, या शहद की चोरी करे तो उस

पर चोरी की सज़ा जारी नहीं होगी, बल्कि आम मुल्की क़ानून की तरह ताज़ीरी सज़ा दी जायेगी। इसी तरह वह आदमी जिसको आपने अपने घर में दाख़िल होने की इजाज़त दे रखी है, चाहे वह आपका नौकर हो या मज़दूर व मिस्त्री हो, या कोई दोस्त अ़ज़ीज़ हो, वह अगर आपके मकान से कोई चीज़ ले जाये तो वह अगरचे आम बोलचाल में चोरी में दाख़िल और ताज़ीरी सज़ा का मुस्तहिक़ है, मगर हाथ काटने की शरई सज़ा उस पर जारी न होगी, क्योंकि वह आपके घर में आपकी इजाज़त से दाख़िल हुआ, उसके हक़ में हिफ़ाज़त मुकम्मल नहीं।

इसी तरह अगर किसी ने किसी के हाथ में से ज़ेवर या नक़दी छीन ली, या धोखा देकर कुछ वसूल कर लिया, या अमानत लेकर मुकर गया, ये सब चीज़ें हराम व नाजायज़ और आम बोलचाल में चोरी में ज़रूर दाख़िल हैं, मगर इन सब की सज़ा ताज़ीरी है, जो हाकिम की मर्ज़ी और बेहतर समझने पर मौक़ूफ़ है, शरई चोरी की परिभाषा में दाख़िल नहीं। इसलिये इस पर हाथ न काटा जायेगा।

इसी तरह कफ़न की चोरी करने वाले का हाथ न काटा जायेगा, क्योंकि अव्वल तो वह सुरक्षित जगह नहीं, दूसरे कफ़न मय्यित की मिल्कियत नहीं, हाँ उसका यह फ़ेल सख़्त हराम है, इस पर ताज़ीरी सज़ा हाकिम जो बेहतर समझे वह जारी की जायेगी। इसी तरह अगर किसी ने एक साझे के माल में चोरी कर ली जिसमें उसका भी कुछ हिस्सा है, चाहे मीरास का साझे का माल था या कारोबारी शिर्कत का माल था, तो इस सूरत में चूँकि लेने वाले की मिल्कियत का भी कुछ हिस्सा उसमें शामिल है, उस मिल्कियत की वजह से शरई सज़ा उसके ज़िम्मे से ख़त्म हो जायेगी, ताज़ीरी सज़ा दी जायेगी।

ये सब शर्तें तो जुर्म के मुकम्मल होने के तहत में हैं, जिनका मुख़्तसर सा ख़ाका आपने देखा है। अब दूसरी चीज़ यानी सुबूत का मुकम्मल होना है। सज़ाओं के नाफ़िज़ (लागू और जारी करने) में इस्लामी शरीअ़त ने गवाही का नियम भी आम मामलात से अलग और बहुत मोहतात बनाया है। ज़िना की सज़ा में तो दो गवाहों के बजाय चार गवाहों को शर्त क़रार दे दिया, और वह भी जबकि वे ऐसी आँखों देखी गवाही दें जिसमें कोई लफ़्ज़ संदिग्ध न रहे। चोरी वग़ैरह के मामले में अगरचे दो ही गवाह काफ़ी हैं मगर उन दो के लिये गवाही की आम शर्तों के अ़लावा कुछ और शर्तें आयद की गयी हैं। मसलन दूसरे मामलात में ज़रूरत के मौक़ों में क़ाज़ी को यह इख़्तियार दिया गया है कि किसी फ़ासिक़ (खुले तौर पर गुनाहों में मुब्तला) आदमी के बारे में अगर क़ाज़ी को यह इत्मीनान हो जाये कि अ़मली फ़ासिक़ होने के बावजूद यह झूठ नहीं बोलता तो क़ाज़ी उसकी गवाही को क़ुबूल कर सकता है, लेकिन हुदूद में क़ाज़ी को उसकी गवाही क़ुबूल करने का इख़्तियार नहीं। आम मामलात में एक मर्द और दो औरतों की गवाही पर फ़ैसला किया जा सकता है मगर हुदूद में दो मर्दों की गवाही ज़रूरी है। आम मामलात में इस्लामी शरीअ़त ने लम्बी मुद्दत गुज़र जाने को कोई उज़्र नहीं क़रार दिया, वाक़िए के कितने ही अ़रसे के बाद कोई गवाही दे तो क़ुबूल की जा सकती है, लेकिन हुदूद में अगर फ़ौरी गवाही न दी बल्कि एक महीने या इससे ज़ायद देर करके गवाही दी तो वह क़ाबिले क़ुबूल नहीं।

• चोरी की सज़ा के लागू और जारी करने की शर्तों का मुख़्तसर सा ख़ाका जो इस वक़्त बयान किया गया है यह सब हनफ़ी फ़िक़ा की बहुत ही मोतबर किताब 'बदाईउस्सनाए' से लिया गया है।

इन तमाम शर्तों का हासिल यह है कि शरई सज़ा सिर्फ़ उस सूरत में जारी होगी जबकि शरीअ़ते पाक के मुक़र्रर किये हुए ज़ाब्ते (नियम और उसूल) के मुताबिक़ जुर्म भी मुकम्मल हो और उसका सुबूत भी मुकम्मल, और मुकम्मल भी ऐसा कि उसका कोई पहलू संदिग्ध न रहे। इससे मालूम हुआ कि इस्लामी शरीअ़त ने जहाँ मस्लेहत के सबब इन अपराधों की सज़ायें सख़्त मुक़र्रर की हैं, वहीं शरई सज़ाओं के लागू और जारी करने में बहुत ही ज़्यादा एहतियात भी ध्यान में रखी है। सज़ाओं की गवाही का उसूल व नियम भी आ़म मामलात की गवाही के उसूल व नियम से अलग और इन्तिहाई एहतियात पर आधारित है। उसमें ज़रा सी कमी रह जाये तो शरई सज़ा ताज़ीरी सज़ा में तब्दील हो जाती है। इसी तरह जुर्म के मुकम्मल होने के सिलसिले में कोई कमी पाई जाये तब भी शरई सज़ा ख़त्म होकर ताज़ीरी सज़ा रह जाती है, जिसका अ़मली रुख़ यह होता है कि शरई सज़ाओं के लागू और जारी होने की नौबत बहुत ही कम और इत्तिफ़ाक़ ही से कभी पेश आती है। आ़म हालात में शरई सज़ाओं वाले जुर्मों में भी ताज़ीरी सज़ायें जारी की जाती हैं, लेकिन जब कहीं जुर्म का मुकम्मल होना पूरे सुबूत के साथ पाया जाये चाहे वह एक फ़ीसदी ही हो तो सज़ा बहुत ही सख़्त सबक़ लेने वाली दी जाती है, जिसका डर और ख़ौफ़ लोगों के दिल व दिमाग़ पर मुसल्लत हो जाये, और उस जुर्म के पास जाते हुए भी बदन पर कपकपी पड़ने लगे, जो हमेशा के लिये अपराधों को रोकने और उन पर बन्दिश आ़म शांति क़ायम होने का ज़रिया बनती है, बख़िलाफ़ रिवाजी ताज़ीरी क़वानीन के कि वो अपराध पेशा लोगों की नज़र में एक खेल हैं, जिसको वे बड़ी ख़ुशी से खेलते हैं। जेलख़ाने में बैठे हुए भी आईन्दा उस जुर्म को ख़ूबसूरती से करने के प्रोग्राम बनाते रहते हैं।

जिन मुल्कों में शरई सज़ाएँ नाफ़िज़ की जाती हैं उनके हालात का जायज़ा लिया जाये तो हक़ीक़त सामने आ जायेगी, कि वहाँ न आपको बहुत से लोग हाथ कटे हुए नज़र आयेंगे, न सालों साल में आपको कोई संगसारी का वाक़िआ़ नज़र पड़ता है। मगर इन शरई सज़ाओं की धाक (दहशत) दिलों पर ऐसी है कि वहाँ चोरी, डाके और बेहयाई का नाम नज़र नहीं आता। सऊदी अ़रब के हालात से आ़म मुसलमान डायरेक्ट वाक़िफ़ हैं, क्योंकि हज व उमरे के सिलसिले में हर तब्क़े और हर मुल्क के लोगों की वहाँ हाज़िरी रहती है, दिन में पाँच मर्तबा हर शख़्स यह देखता है कि दुकानें खुली हुई हैं, लाखों का सामान उनमें पड़ा हुआ है और उनका मालिक बग़ैर दुकान बन्द किये हुए नमाज़ के वक़्त हरम शरीफ़ में पहुँच जाता है, और बहुत ही इत्मीनान के साथ नमाज़ अदा करने के बाद आता है। उसको कभी यह वस्वसा (दिल में ख़्याल) भी पेश नहीं आता कि उसकी दुकान से कोई चीज़ ग़ायब हो गयी होगी। फिर यह एक दिन की बात नहीं, उम्र यूँ ही गुज़रती है। दुनिया के किसी सभ्य और विकसित मुल्क में ऐसा करके देखिये तो एक दिन में सैंकड़ों चोरियाँ और डाके पड़ जायेंगे। इनसानी तहज़ीब और मानव अधिकारों के दावेदार

अ़जीब हैं कि अपराध पेशा लोगों पर तो रहम खाते हैं मगर पूरी इनसानी दुनिया पर रहम नहीं खाते, जिनकी ज़िन्दगी उन अपराध पेशा लोगों ने अजीरन बना रखी है।

हक़ीक़त यह है कि एक मुजरिम पर तरस खाना पूरी इनसानियत पर ज़ुल्म करने के जैसा और आ़म शांति को भंग करने का सबसे बड़ा सबब है। यही वजह है कि रब्बुल-आ़लमीन जो नेकों, बदों, परहेज़गारों, औलिया और काफ़िरों व बदकारों सब को रिज़्क़ देता है, साँपों, बिच्छुओं, शेरों, भेड़ियों को रिज़्क़ देता है, और जिसकी रहमत सब पर फैली हुई है, उसने जब शरई सज़ाओं के अहकाम क़ुरआन में नाज़िल फ़रमाये तो साथ ही यह भी फ़रमायाः

وَلَا تَاْخُذْكُمْ بِهِمَا رَاْفَةٌ فِىْ دِيْنِ اللّٰهِ.

यानी अल्लाह की हुदूद (सज़ायें) जारी करने में उन मुजरिमों पर हरगिज़ तरस न खाना चाहिये। और दूसरी तरफ़ क़िसास (बदले और ख़ून के बदले ख़ून) को इनसानी दुनिया की ज़िन्दगी क़रार दिया। फ़रमायाः

وَلَكُمْ فِى الْقِصَاصِ حَيٰوةٌ يّٰاُولِى الْاَلْبَابِ.

मालूम होता है कि इस्लामी सज़ाओं के ख़िलाफ़ करने वाले यह चाहते ही नहीं कि अपराधों पर अंकुश लगे, वरना जहाँ तक रहमत व शफ़क़त का मामला है वह इस्लामी शरीअ़त (ख़ुदाई क़ानून) से ज़्यादा कौन सिखा सकता है। जिसने ऐन मैदाने जंग में अपने क़ातिल दुश्मनों का हक़ पहचाना और हुक्म दिया है कि औ़रत सामने आ जाये तो हाथ रोक लो, बच्चा सामने आ जाये तो हाथ रोक लो, बूढ़ा सामने आ जाये तो हाथ रोक लो, मज़हबी आ़लिम जो तुम्हारे मुक़ाबले पर जंग में शरीक न हो अपने तर्ज़ की इबादत में मशग़ूल हो तो उसको क़त्ल न करो।

और सबसे ज़्यादा अ़जीब बात यह है कि इन इस्लामी सज़ाओं पर एतिराज़ के लिये उन लोगों की ज़बानें उठती हैं जिनके हाथ अभी तक हिरोशिमा के लाखों बेगुनाह, बेक़सूर इनसानों के ख़ून से रंगे हुए हैं, जिनके दिल में शायद कभी जंग और मुक़ाबला करने का तसव्वुर भी न आया हो। उनमें औ़रतें, बच्चे, बूढ़े सब ही दाख़िल हैं। और जिनके ग़ुस्से की आग हिरोशिमा के हादसे से भी ठण्डी नहीं हुई बल्कि रोज़ किसी ख़तरनाक से ख़तरनाक नये बम के बनाने और तजुर्बा करने में मशग़ूल हैं। हम इसके अ़लावा क्या कहें कि अल्लाह तआ़ला उनकी आँखों से ख़ुदग़र्ज़ी के पर्दे हटा दे और दुनिया में अमन क़ायम करने के सही इस्लामी तरीक़ों की तरफ़ उनको हिदायत करे।

يٰٓاَيُّهَا الرَّسُوْلُ لَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِى الْكُفْرِ

مِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اٰمَنَّا بِاَفْوَاهِهِمْ وَلَمْ تُؤْمِنْ قُلُوْبُهُمْ ۛ وَمِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا ۛ سَمّٰعُوْنَ

لِلْكَذِبِ سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ لَمْ يَاْتُوْكَ ۗ يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ مِنْ بَعْدِ مَوَاضِعِهٖ ۚ يَقُوْلُوْنَ

اِنْ اُوْتِيْتُمْ هٰذَا فَخُذُوْهُ وَاِنْ لَّمْ تُؤْتَوْهُ فَاحْذَرُوْا ۗ وَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهٗ فَلَنْ تَمْلِكَ

لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا ؕ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُّطَهِّرَ قُلُوْبَهُمْ ؕ لَهُمْ فِى الدُّنْيَا خِزْىٌ ۚۖ وَّلَهُمْ فِى الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝ سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ ؕ فَاِنْ جَآءُوْكَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ عَنْهُمْ ۚ وَاِنْ تُعْرِضْ عَنْهُمْ فَلَنْ يَّضُرُّوْكَ شَيْـًٔا ؕ وَاِنْ حَكَمْتَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ ۝ وَكَيْفَ يُحَكِّمُوْنَكَ وَعِنْدَهُمُ التَّوْرٰىةُ فِيْهَا حُكْمُ اللّٰهِ ثُمَّ يَتَوَلَّوْنَ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ ؕ وَمَاۤ اُولٰٓئِكَ بِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝

या अय्युहर्रसूलु ला यह्ज़ुन्कल्लज़ी-न युसारिअ़ू-न फ़िल्कुफ़्रि मिनल्लज़ी-न क़ालू आमन्ना बिअफ़्वाहिहिम् व लम् तुअ्मिन् क़ुलूबुहुम् व मिनल्लज़ी-न हादू सम्माअ़ू-न लिल्कज़िबि सम्माअ़ू-न लिक़ौमिन् आख़री-न लम् यअ्तू-क, युहर्रिफ़ूनल्-कलि-म मिम्-बअ़्दि मवाज़िअ़िही यक़ूलू-न इन् ऊतीतुम् हाज़ा फ़ख़ुज़ूहु व इल्लम् तुअ्तौहु फ़ह्ज़रू, व मंय्युरिदिल्लाहु फ़ित्न-तहू फ़-लन् तम्लि-क लहू मिनल्लाहि शैअन्, उला-इकल्लज़ी-न लम् युरिदिल्लाहु अंय्युतह्हि-र क़ुलूबहुम्, लहुम् फ़िद्दुन्या ख़िज़्युंव्-व लहुम् फ़िल्-आख़ि-रति अज़ाबुन् अज़ीम (41) सम्माअ़ू-न लिल्कज़िबि अक्कालू-न लिस्सुह़्ति, फ़-इन् जाऊ-क फ़ह्कुम् बैनहुम् औ अअ़्रिज़् अन्हुम् व इन् तुअ़्रिज़्	ऐ रसूल ग़म न कर उनका जो दौड़कर गिरते हैं कुफ़्र में, वे लोग जो कहते हैं कि हम मुसलमान हैं अपने मुँह से और उनके दिल मुसलमान नहीं, और वे जो यहूदी हैं जासूसी करते हैं झूठ बोलने के लिये, वे जासूस हैं दूसरी जमाअ़त के जो तुझ तक नहीं आती, बदल डालते हैं बात को उसका ठिकाना छोड़कर, कहते हैं अगर तुमको यह हुक्म मिले तो क़ुबूल कर लेना और अगर यह हुक्म न मिले तो बचते रहना, और जिसको अल्लाह ने गुमराह करना चाहा सो तू उसके लिये कुछ नहीं कर सकता अल्लाह के यहाँ, ये वही लोग हैं जिनको अल्लाह ने न चाहा कि दिल पाक करे उनके, उनको दुनिया में ज़िल्लत है और उनको आख़िरत में बड़ा अज़ाब है। (41) जासूसी करने वाले झूठ बोलने के लिये और बड़े हराम खाने वाले सो अगर आयें वे तेरे पास तो फ़ैसला कर दे उनमें या मुँह फेर ले उनसे, और अगर तू मुँह फेर लेगा उनसे तो वे तेरा कुछ न बिगाड़ सकेगें, और अगर तू

अन्हुम् फ़-लंय्यज़ुर्रू-क शैअन्, व इन् हकम्-त फ़ह्कुम् बैनहुम् बिल्क़िस्ति, इन्नल्ला-ह युहिब्बुल् मुक़्सितीन (42) व कै-फ़ युहक्किमून-क व अिन्दहुमुत्तौरातु फ़ीहा हुक्मुल्लाहि सुम्-म य-तवल्लौ-न मिम्-बअ्दि ज़ालि-क, व मा उलाइ-क बिल्-मुअ्मिनीन (43) ❁	फ़ैसला करे तो फ़ैसला कर उनमें इन्साफ़ से, बेशक अल्लाह दोस्त रखता है इन्साफ़ करने वालों को। (42) और वे तुझको किस तरह न्याय करने वाला बनायेंगे और उनके पास तो तौरात है जिसमें हुक्म है अल्लाह का, फिर उसके पीछे फिरे जाते हैं, और वे हरगिज़ मानने वाले नहीं हैं। (43) ❁

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

सूरः मायदा के तीसरे रुकूअ़ से अहले किताब का ज़िक्र चला आ रहा था, बीच में ज़रूरत व मुनासबत के सबब थोड़ा सा ज़िक्र दूसरी चीज़ों और ख़ास-ख़ास मज़ामीन का आ गया था। अब आगे फिर अहले किताब ही का ज़िक्र दूर तक चला गया है। अहले किताब में यहूदियों व ईसाईयों के दो फ़िर्क़े तो थे ही, एक तीसरा फ़िर्क़ा और शामिल हो गया था, जो हक़ीक़त में यहूदी थे मगर झूठे तौर पर मुसलमान हो गये थे। मुसलमानों के सामने अपना इस्लाम ज़ाहिर करते थे और अपने मज़हब वाले यहूदियों में बैठते तो इस्लाम और मुसलमानों का मज़ाक़ उड़ाते थे। उक्त तीन आयतें इन्हीं तीनों फ़िर्क़ों के ऐसे आमाल और हालात से संबन्धित हैं जिनसे ज़ाहिर होता है कि ये लोग अल्लाह तआ़ला के अहकाम और हिदायतों के मुक़ाबले में अपनी इच्छाओं और रायों को आगे रखते हैं, और अहकाम व हिदायतों में उल्टा-सीधा मतलब बयान करके अपनी इच्छाओं के मुताबिक़ बनाने के फ़िक्र में रहते हैं। मज़कूरा आयतों में ऐसे लोगों की दुनिया व आख़िरत में रुस्वाई और बुरे अन्जाम का बयान है। इसी के साथ-साथ मुसलमानों के लिये चन्द उसूली हिदायतें और शरीअ़त के अहकाम का बयान है।

इन आयतों के नाज़िल होने का सबब व मौक़ा

ज़िक्र हुई आयतों के नाज़िल होने का सबब दो वाक़िए हैं, जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में मदीना के आस-पास में रहने वाले यहूदी क़बीलों में पेश आये। एक वाक़िआ़ क़त्ल व क़िसास का और दूसरा वाक़िआ़ ज़िना और उसकी सज़ा का है।

यह बात तो विश्व इतिहास के जानने वाले किसी शख़्स पर छुपी नहीं कि इस्लाम से पहले हर जगह, हर इलाक़े और हर तब्क़े में ज़ुल्म व ज़्यादती की हुकूमत थी। ताक़तवर कमज़ोर को, इज़्ज़त वाला बेइज़्ज़त को गुलाम बनाये रखता था, ताक़तवर और इज़्ज़त वाले के लिये क़ानून और था और कमज़ोर व बेइज़्ज़त के लिये क़ानून दूसरा था। जैसे कि आज भी अपने आपको

सभ्य और तरक़्क़ी याफ़्ता (विकसित) कहने वाले बहुत से मुल्कों में काले और गोरे का क़ानून अलग-अलग है। इनसानियत के मोहसिन रसूले अ़रबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ही आकर इन भेदभावों को मिटाया। इनसानों के हुक़ूक़ की बराबरी का ऐलान किया और इनसान को इनसानियत और आदमियत का सबक़ दिया।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मदीना तय्यिबा तशरीफ़ लाने से पहले मदीना के आस-पास के इलाक़ों में यहूदियों के दो क़बीले बनू क़ुरैज़ा और बनू नज़ीर आबाद थे। उनमें से बनू नज़ीर ताक़त व शौकत और दौलत व इज़्ज़त में बनू क़ुरैज़ा से ज़्यादा थे, ये लोग आये दिन बनू क़ुरैज़ा पर ज़ुल्म करते रहते थे और वे चाहे न चाहे इसको सहते थे, यहाँ तक कि बनू नज़ीर ने बनू क़ुरैज़ा को इस ज़िल्लत भरे समझौते पर मजबूर किया कि अगर बनू नज़ीर का कोई आदमी बनू क़ुरैज़ा के किसी शख़्स को क़त्ल कर दे तो उसका क़िसास यानी जान के बदले में जान लेने का उनको हक़ न होगा, बल्कि सिर्फ़ सत्तर वसक़ खजूरें उसके ख़ून बहा के तौर पर अदा की जायेंगी (वसक़ अ़रबी वज़न का एक पैमाना है जो हमारे वज़न के हिसाब से तक़रीबन पाँच मन दस सैर का होता है)। और अगर मामला इसके विपरीत हो कि बनू क़ुरैज़ा का कोई आदमी बनू नज़ीर के किसी शख़्स को क़त्ल कर दे तो क़ानून यह होगा कि उसके क़ातिल को क़त्ल भी किया जायेगा और उनसे ख़ून बहा भी लिया जायेगा, और वह भी बनू नज़ीर के ख़ून बहा से दो गुना, यानी एक सौ चालीस वसक़ खजूरें। और सिर्फ़ यही नहीं बल्कि इसके साथ यह भी कि उनका मक़्तूल अगर औरत होगी तो उसके बदले में बनू क़ुरैज़ा के एक मर्द को क़त्ल किया जाय़ेगा, और अगर मक़्तूल मर्द है तो उसके बदले में बनू क़ुरैज़ा के दो मर्दों को क़त्ल किया जायेगा, और अगर बनू नज़ीर के ग़ुलाम को क़त्ल किया है तो उसके बदले में बनू क़ुरैज़ा के आज़ाद को क़त्ल किया जायेगा, और अगर बनू नज़ीर के आदमी का किसी ने एक हाथ काटा है तो बनू क़ुरैज़ा के आदमी के दो हाथ काटे जायेंगे। एक कान काटा है तो उनके दो कान काटे जायेंगे। यह क़ानून था जो इस्लाम से पहले इन दोनों क़बीलों के बीच राईज था और बनू क़ुरैज़ा अपनी कमज़ोरी की बिना पर इसके मानने पर मजबूर थे।

जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हिजरत करके मदीना तशरीफ़ लाये और मदीना एक दारुल-इस्लाम बन गया। ये दोनों क़बीले न अभी तक इस्लाम में दाख़िल हुए थे न किसी समझौते की रू से इस्लामी अहकाम के पाबन्द थे, मगर इस्लामी क़ानून की न्यायपूर्ण और आ़म सहूलतों को दूर से देख रहे थे। इसी दौरान यह वाक़िआ पेश आया कि बनू क़ुरैज़ा के एक आदमी ने बनू नज़ीर के किसी आदमी को मार डाला, तो बनू नज़ीर ने उक्त समझौते के मुताबिक़ बनू क़ुरैज़ा से दोगुनी दियत यानी ख़ून बहा का मुतालबा किया। बनू क़ुरैज़ा अगरचे न इस्लाम में दाख़िल थे, न नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से उस वक़्त तक कोई समझौता था, लेकिन ये लोग यहूदी थे, इनमें बहुत से लिखे-पढ़े लोग भी थे, जो तौरात की भविष्यवाणियों के मुताबिक़ जानते थे कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही आख़िरी ज़माने के नबी हैं, जिनके आने की ख़ुशख़बरी तौरात ने दी है, मगर धार्मिक तास्सुब या दुनियावी

लालच की वजह से ईमान न लाये थे। और यह भी देख रहे थे कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मज़हब इनसानी बराबरी और अ़दल व इन्साफ़ का झण्डा उठाये हुए है, इसलिये बनू नज़ीर के ज़ुल्म से बचने के लिये उनको एक सहारा मिला और उन्होंने दोगुनी दियत देने से यह कहकर इनकार कर दिया कि हम तुम एक ही ख़ानदान से हैं, एक ही वतन के रहने वाले हैं, और हम दोनों का मज़हब भी एक यानी यहूदियत है, यह अन्याय पूर्ण मामला जो आज तक तुम्हारी ज़बरदस्ती और हमारी कमज़ोरी के सबब होता रहा, अब हम इसको गवारा न करेंगे।

इस जवाब पर बनू नज़ीर में आक्रोश व ग़ुस्सा पैदा हुआ, और क़रीब था कि जंग छिड़ जाये, मगर फिर कुछ बड़े बूढ़ों के मश्विरे से यह तय पाया कि इस मामले का फ़ैसला हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कराया जाये। बनू क़ुरैज़ा तो चाहते ही यह थे, क्योंकि वे जानते थे कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बनू नज़ीर के ज़ुल्म को बरक़रार न रखेंगे। बनू नज़ीर भी आपसी बातचीत और सलाह व मश्विरे और सुलह की बिना पर इसके लिये मजबूर तो हो गये, मगर इसमें यह साज़िश की कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास मुक़द्दिमा ले जाने से पहले कुछ ऐसे लोगों को आगे भेजा जो असल में तो उन्हीं के मज़हब वाले यहूदी थे, मगर मुनाफ़िक़ाना तौर पर इस्लाम का इज़हार करके रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आते जाते थे, और मतलब उनका यह था कि ये लोग किसी तरह मुक़द्दिमे और उसके फ़ैसले से पहले इस मामले में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इशारा और नज़रिया मालूम कर लें, और यही ताकीद उन लोगों को कर दी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमारे मुतालबे के मुवाफ़िक़ फ़ैसला फ़रमा दिया तो उसको क़ुबूल कर लेना और उसके ख़िलाफ़ कोई हुक्म आया तो मानने का वायदा न करना।

इन आयतों के उतरने का सबब यह वाक़िआ होने को तफ़सील के साथ अ़ल्लामा बग़वी ने नक़ल किया है, और मुस्नद अहमद व अबू दाऊद में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इसका ख़ुलासा मन्क़ूल है। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसी तरह एक दूसरा वाक़िआ ज़िना का है, जिसकी तफ़सील अ़ल्लामा बग़वी रह. ने इस तरह नक़ल की है कि ख़ैबर के यहूदियों में यह वाक़िआ पेश आया और तौरात की मुक़र्रर की हुई सज़ा के अनुसार उन दोनों को संगसार करना लाज़िम था, मगर वे दोनों किसी बड़े ख़ानदान के आदमी थे, यहूदियों ने अपनी पुरानी आ़दत के मुवाफ़िक़ यह चाहा कि उनके लिये सज़ा में नर्मी की जाये, और उनको यह मालूम था कि इस्लामी मज़हब में बड़ी सहूलतें दी गयी हैं। इस बिना पर अपने नज़दीक यह समझा कि इस्लाम में इस सज़ा में भी कमी और आसानी होगी। ख़ैबर के लोगों ने अपनी बिरादरी बनू क़ुरैज़ा के लोगों के पास पैग़ाम भेजा कि इस मामले का फ़ैसला मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) से करायें, और दोनों मुजरिमों को भी साथ भेज दिया। मन्शा उनका भी यह था कि अगर आप कोई हल्की सज़ा जारी कर दें तो मान लिया जाये वरना इनकार कर दिया जाये। बनू क़ुरैज़ा को पहले तो संकोच हुआ कि मालूम नहीं आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कैसा फ़ैसला करें और वहाँ जाने के बाद हमें मानना पड़े, मगर कुछ

देर गुफ़्तगू के बाद यही फ़ैसला रहा कि उनके चन्द सरदार हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में इन मुजरिमों को ले जायें और आप ही से उसका फ़ैसला करायें।

चुनाँचे कअ़ब इब्ने अशरफ़ वग़ैरह का एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) उनको साथ लेकर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और सवाल किया कि शादीशुदा मर्द व औरत अगर बदकारी में मुब्तला हों तो उनकी सज़ा क्या है? आपने फ़रमाया कि क्या तुम मेरा फ़ैसला मानोगे? उन्होंने इक़रार किया, उस वक़्त जिब्रीले अमीन अल्लाह तआ़ला का यह हुक्म लेकर नाज़िल हुए कि उनकी सज़ा संगसार करके क़त्ल कर देना है। उन लोगों ने जब यह फ़ैसला सुना तो बौखला गये और मानने से इनकार कर दिया।

हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मश्विरा दिया कि आप उन लोगों से यह कहें कि मेरे इस फ़ैसले को मानने या न मानने के लिये इब्ने सूरिया को जज बना लो और इब्ने सूरिया के हालात व सिफ़ात रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतला दिये। आपने आने वाले वफ़्द से कहा कि क्या तुम उस नौजवान को पहचानते हो जो सफ़ेद रंग का मगर एक आँख से माज़ूर है। फ़दक में रहता है जिसको इब्ने सूरिया कहा जाता है। सब ने इक़रार किया, आपने मालूम किया कि आप लोग उसको कैसा समझते हैं? उन्होंने कहा कि यहूदी उलेमा में पूरी दुनिया में उससे बड़ा कोई आ़लिम नहीं। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया उसको बुलाओ।

चुनाँचे वह आ गया। आपने उसको क़सम देकर पूछा कि इस सूरत में तौरात का हुक्म क्या है? वह बोला कि क़सम है उस ज़ात की जिसकी क़सम आपने मुझे दी है। अगर आप क़सम न देते और मुझे यह ख़तरा न होता कि ग़लत बात कहने की सूरत में तौरात मुझे जला डालेगी तो मैं यह हक़ीक़त ज़ाहिर न करता। हक़ीक़त यह है कि इस्लामी हुक्म की तरह तौरात में भी यही हुक्म है कि उन दोनों को संगसार करके क़त्ल कराया जाये।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि फिर तुम पर क्या आफ़त आई है कि तुम तौरात के हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करते हो। इब्ने सूरिया ने बतलाया कि असल बात यह है कि ज़िना की शरई सज़ा तो हमारे मज़हब में यही है, मगर हमारा एक शहज़ादा इस जुर्म में मुब्तला हो गया, हमने उसकी रियायत करके छोड़ दिया, संगसार नहीं किया। फिर यही जुर्म एक मामूली आदमी से हुआ और ज़िम्मेदारों ने उसको संगसार करना चाहा तो मुजरिम के जत्थे के लोगों ने एतिराज़ जताया और विरोध किया कि अगर शरई सज़ा इसको देनी है तो इससे पहले शहज़ादे को दो, वरना हम इस पर यह सज़ा जारी न होने देंगे। यह बात बढ़ी तो सब ने मिलकर सुलह कर ली कि सब के लिये एक ही हल्की सज़ा तजवीज़ कर दी जाये, और तौरात का हुक्म छोड़ दिया जाये। चुनाँचे हमने कुछ मारपीट और मुँह काला करके जुलूस निकालने की सज़ा तजवीज़ कर दी, और अब यही सब में रिवाज हो गया।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ रसूल! (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) जो लोग कुफ़्र (की बातों) में दौड़-दौड़ गिरते हैं (यानी बेतकल्लुफ़ रुचि के साथ उन बातों को करते हैं) आपको वे ग़मगीन न करें (यानी आप उनकी कुफ़्रिया बातों से रंजीदा और अफ़सोस करने वाले न हों) चाहे वे उन लोगों में से हों जो अपने मुँह से तो (झूठ-मूट) कहते हैं कि हम ईमान ले आए और उनके दिल यक़ीन (यानी ईमान) नहीं लाये (इससे मुराद मुनाफ़िक़ लोग हैं जो कि एक वाक़िए में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए थे), और चाहे वे उन लोगों में से हों जो यहूदी हैं (जैसा कि दूसरे वाक़िए में ये लोग हाज़िर हुए थे)। ये (दोनों क़िस्म के) लोग (पहले से दीन के बारे में अपने उन उलेमा से जो दीनी बातों में रद्दोबदल और कमी-बेशी करते हैं) ग़लत बातों के सुनने के आ़दी हैं (और उन्हीं ग़लत बातों की ताईद की जुस्तजू में यहाँ आकर) आपकी बातें दूसरी क़ौम की ख़ातिर कान धर-धर सुनते हैं। जिस क़ौम के ये हालात हैं कि (एक तो) वे आपके पास (तकब्बुर व अ़दावत की वजह से ख़ुद) नहीं आए (बल्कि दूसरों को भेजा, और दूसरों को भेजा भी तो हक़ की तलब के लिये नहीं बल्कि शायद अपने बदले हुए अहकाम के मुवाफ़िक़ कोई बात मिल जाये, क्योंकि पहले से अल्लाह के) कलाम को बाद इसके कि वह (कलाम) अपने (सही) मौक़े पर (क़ायम) होता है (लफ़्ज़ी एतिबार से या मायने के लिहाज़ से या दोनों तरह) बदलते रहते हैं। (चुनाँचे इसी आ़दत के मुवाफ़िक़ ख़ून बहा और संगसारी के हुक्म को भी अपने गढ़े हुए तरीक़े से बदल दिया, फिर इस संभावना से कि शायद इस्लामी शरीअ़त से इस रस्म को सहारा लग जाये, यहाँ अपने जासूसों को भेजा। तीसरे सिर्फ़ यही नहीं कि अपनी ख़ुद गढ़ी हुई रस्म के मुवाफ़िक़ बात की तलाश ही तक रहते बल्कि इस पर अतिरिक्त यह है कि जाने वालों से) कहते हैं कि अगर तुमको (वहाँ जाकर) यह (हमारा ख़ुद बदला हुआ) हुक्म मिले तब तो उसको क़ुबूल कर लेना (यानी उसके मुवाफ़िक़ अ़मल करने का इक़रार कर लेना) और अगर तुमको यह (बदला हुआ) हुक्म न मिले तो (उसके क़ुबूल करने से) एहतियात रखना। (पस इस भेजने वाली क़ौम में जिनकी जासूसी करने ये लोग आये हैं चन्द ख़राबियाँ हुईं- अव्वल तकब्बुर व दुश्मनी, जो सबब है ख़ुद हाज़िर न होने का। दूसरे हक़ की तलब न होना बल्कि हक़ को बदल कर उसकी ताईद की फ़िक्र होना। तीसरे औरों को भी हक़ के क़ुबूल करने से रोकना। यहाँ तक आने वालों और भेजने वालों की अलग-अलग बुराई और निंदा थी, आगे इन सब की बुराई है) और (असल यह है कि) जिसका ख़राब (और गुमराह) होना ख़ुदा तआ़ला ही को मन्ज़ूर हो (अगरचे यह तक़दीरी मन्ज़ूरी उस गुमराह के गुमराही के इरादे के बाद होती है) तो (ऐ आ़म मुख़ातब!) उसके लिए अल्लाह से तेरा कुछ ज़ोर नहीं चल सकता (कि उस गुमराही को न पैदा होने दे। यह तो एक आ़म क़ायदा हुआ, अब यह समझो कि) ये लोग ऐसे (ही) हैं कि अल्लाह को इनके दिलों का (कुफ़्रिया बातों और अ़क़ीदों से) पाक करना मन्ज़ूर नहीं हुआ, (क्योंकि ये इरादा और हिम्मत ही नहीं करते, इसलिये अल्लाह तआ़ला उनको पैदाईशी पवित्र नहीं फ़रमाते

बल्कि उनके गुमराही के इरादे की वजह से पैदाईशी और तक़दीरी तौर पर उनका ख़राब ही होना मन्ज़ूर है। पस उक्त क़ायदे के मुवाफ़िक़ कोई शख़्स उनको हिदायत नहीं कर सकता। मतलब यह है कि जब ये ख़ुद ख़राब रहने का इरादा रखते हैं और इरादे के बाद उस फ़ेल को वजूद में लाना अल्लाह की आ़दत है, और अल्लाह के किसी चीज़ को वजूद में लाने से कोई रोक नहीं सकता, फिर उनके ऊपर आने की क्या उम्मीद की जाये। इससे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ज़्यादा तसल्ली हो सकती है, जिससे कलाम शुरू भी हुआ था। पस कलाम का आग़ाज़ व अन्जाम तसल्ली के मज़मून से हुआ। आगे उन आमाल का फल बयान फ़रमाते हैं कि) इन (सब) लोगों के लिए दुनिया में रुस्वाई है और आख़िरत में उन (सब) के लिए बड़ी सज़ा है (यानी दोज़ख़। चुनाँचे मुनाफ़िक़ों की यह रुस्वाई हुई कि मुसलमानों को उनका निफ़ाक़ यानी दिल से मुसलमान न होना मालूम हो गया, और सब ज़िल्लत से देखते थे, और यहूदियों के क़त्ल होने, बन्दी बनने और देश निकाला दिये जाने का ज़िक्र रिवायतों में मशहूर है, और आख़िरत का अ़ज़ाब ज़ाहिर ही है)।

ये लोग (दीन के बारे में) ग़लत बातों के सुनने के आ़दी हैं (जैसा कि पहले आ चुका), बड़े हराम (माल) के खाने वाले हैं (इसी हिर्स ने इनको अहकाम में ग़लत-बयानी का जिसके बदले में कुछ नज़राना वग़ैरह मिलता है, आ़दी बना दिया। जब इन लोगों की यह हालत है) तो अगर ये लोग (अपना कोई मुक़द्दिमा लेकर) आपके पास (फ़ैसला कराने) आएँ तो (आप मुख़्तार हैं) चाहे आप उन (के मामले) में फ़ैसला कर दीजिए या उनको टाल दीजिए। और अगर आप (की यही राय क़रार पाये कि आप) उनको टाल दें तो (यह अन्देशा न कीजिए कि शायद नाराज़ होकर कोई दुश्मनी निकालें, क्योंकि) उनकी मजाल नहीं कि वे आपको ज़रा भी नुक़सान पहुँचा सकें (क्योंकि अल्लाह तआ़ला आपकी हिफ़ाज़त करने वाले हैं)।

और अगर (फ़ैसला करने पर राय क़रार पाये और) आप फ़ैसला करें तो उनमें इन्साफ़ (यानी इस्लामी क़ानून) के मुवाफ़िक़ फ़ैसला कीजिए। बेशक अल्लाह इन्साफ़ करने वालों से मुहब्बत करते हैं। (और अब वह इन्साफ़ सीमित हो गया है इस्लामी क़ानून में, पस वही लोग महबूब होंगे जो इस क़ानून के मुवाफ़िक़ फ़ैसला करें) और (ताज्जुब की बात है कि) वे (दीन के मामले में) आप से कैसे फ़ैसला कराते हैं हालाँकि उनके पास तौरात (मौजूद) है, जिसमें अल्लाह का हुक्म (लिखा) है, (जिसके मानने का उनको दावा है। अव्वल तो यही बात बहुत दूर की है) फिर (यह ताज्जुब इससे और पुख़्ता हो गया कि) उस (फ़ैसला लाने) के बाद (जब आपका फ़ैसला सुनते हैं तो उस फ़ैसले से भी) हट जाते हैं, (यानी अव्वल तो इस हाल में फ़ैसला लाने ही से ताज्जुब होता था, लेकिन इस संदेह से वह दूर हो सकता था कि शायद आपका हक़ पर होना उन पर स्पष्ट हो गया हो इसलिये आ गये हों, लेकिन जब उस फ़ैसले को न माना तो वह ताज्जुब फिर ताज़ा हो गया कि अब तो वह संदेह भी न रहा, फिर क्या बात हो गयी जिसके वास्ते ये फ़ैसला लाये हैं)। और (इसी से हर समझदार को अन्दाज़ा हो गया कि) ये लोग हरगिज़ एतिक़ाद वाले नहीं (यहाँ एतिक़ाद से नहीं आये, अपने मतलब के वास्ते आये थे, और जब न

मानना एतिक़ाद के न होने के दलील है तो इससे यह भी मालूम हुआ कि जैसे हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ उनको एतिक़ाद नहीं इसी तरह अपनी किताब के साथ भी पूरा एतिक़ाद नहीं, वरना उसको छोड़कर क्यों आते। ग़र्ज़ कि दोनों तरफ़ से गये, कि जिससे इनकार है उससे भी एतिक़ाद नहीं और जिससे एतिक़ाद व ईमान का दावा है उससे भी नहीं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ये तीन आयतें और इनके बाद की आयतें जिन कारणों और घटनाओं के मातहत नाज़िल हुई हैं उनका तफ़सीली बयान पहले आ चुका है। जिसका ख़ुलासा यह है कि यहूदियों की यह पुरानी ख़स्लत थी कि कभी अपनों को फ़ायदा पहुँचाने के लिये, कभी माल व इ़ज़्ज़त के लालच में लोगों की इच्छाओं के मुताबिक़ फ़तवा बना दिया करते थे। ख़ासकर सज़ाओं के मामले में यह आ़म रिवाज हो गया था कि जब किसी बड़े आदमी से जुर्म हो जाता तो तौरात की सख़्त सज़ा को मामूली सज़ा में तब्दील कर देते थे, उनके इसी हाल को मज़कूरा आयत में इन अलफ़ाज़ से बयान फ़रमाया है:

يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ مِنْ بَعْدِ مَوَاضِعِهٖ.

जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मदीना तय्यिबा तशरीफ़ ले गये और इस्लामी शरीअ़त का अ़जीब व ग़रीब निज़ाम उनके सामने आया, जिसमें सहूलत व आसानी की बड़ी रियायतें भी थीं और अपराधों की रोकथाम और ख़ात्मे के लिये सज़ाओं का एक माक़ूल इन्तिज़ाम भी। उस वक़्त उन लोगों को जो तौरात की सख़्त सज़ाओं को बदल कर आसान कर लिया करते थे, यह मौक़ा भी हाथ आया कि ऐसे मामलात में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हकम (फ़ैसला करने वाला) बना दें, ताकि आपकी शरीअ़त के आसान और नर्म अहकाम से फ़ायदा भी उठा लें, और तौरात के अहकाम में तब्दीली करने के मुजरिम भी न बनें। मगर इसमें भी यह शरारत रहती थी कि बाक़ायदा हकम बनाने से पहले किसी ज़रिये से अपने मामले का हुक्म बतौर फ़तवे के मालूम कर लें, फिर आपका वह हुक्म अगर अपनी इच्छाओं के मुवाफ़िक़ हो तो हकम (जज) बनाकर फ़ैसला करा लें वरना छोड़ दें। इस सिलसिले के जो वाक़िआ़त ज़िक्र किये गये हैं उनमें चूँकि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तकलीफ़ पहुँची थी इसलिये आयत के शुरू में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली दी कि इस पर आप ग़मगीन न हों, ये अन्जाम के एतिबार से आपके लिये ख़ैर है।

फिर यह इत्तिला दी कि ये लोग सच्चे दिल से आपको हकम (जज) नहीं बना रहे, बल्कि इनकी नीयतों में ख़राबी है। फिर बाद की आयत में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इख़्तियार दिया कि आप चाहें तो इनके मामले का फ़ैसला फ़रमा दें या टाल दें, आपको इख़्तियार है। और यह भी इत्तिला दे दी कि अगर आप टालना चाहें तो ये आपको कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकेंगे, आयतः

فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ عَنْهُمْ............... الخ

का यही मज़मून है। और इसके बाद की आयत में इरशाद है कि अगर आप फ़ैसला देना ही पसन्द करें तो उसमें आपको यह हिदायत दी गयी कि फ़ैसला अ़दल व इन्साफ़ के मुताबिक़ होना चाहिये। जिसका मतलब यह था कि फ़ैसला अपनी शरीअ़त के मुताबिक़ फ़रमायें, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनने के बाद तमाम पहली शरीअ़तें और उनके क़वानीन मन्सूख़ (रद्द और निरस्त) हो चुके हैं, सिवाय उनके जिनको क़ुरआने करीम और इस्लामी शरीअ़त में बाक़ी रखा गया है। इसी लिये बाद की आयतों में क़ानूने इलाही के ख़िलाफ़ किसी दूसरे क़ानून या रस्म व रिवाज पर फ़ैसला सादिर करने को ज़ुल्म और कुफ़्र व गुनाह क़रार दिया गया है।

इस्लामी हुकूमत में ग़ैर-मुस्लिमों के मुक़द्दिमों का क़ानून

यहाँ यह बात याद रखने के क़ाबिल है कि ये यहूदी जिन्होंने अपने मुक़द्दिमों को रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की अ़दालत में भेजा, न उनका रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आपकी शरीअ़त पर ईमान था, न यह कि मुसलमानों के हुक्म के ताबे ज़िम्मी थे, अलबत्ता रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से उनका जंग न करने का समझौता हो गया था, यही वजह है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इख़्तियार दिया गया कि चाहें टाल दें और चाहें फ़ैसला अपनी शरीअ़त के मुताबिक़ फ़रमा दें। क्योंकि इन लोगों की कोई ज़िम्मेदारी इस्लामी हुकूमत पर नहीं है, और अगर ये ज़िम्मी (यानी मुस्लिम हुकूमत की ज़िम्मेदारी में रहने वाले काफ़िर) होते और इस्लामी हुकूमत की तरफ़ रुजू करते तो मुस्लिम हाकिम पर फ़ैसला करना फ़र्ज़ होता, टाल देना जायज़ न होता, क्योंकि उनके हुक़ूक़ की निगरानी और उनको ज़ुल्म से बचाना इस्लामी हुकूमत की ज़िम्मेदारी है, जैसे कि मुसलमानों के हुक़ूक़ और उनसे ज़ुल्म को दूर करना इस्लामी हुकूमत का फ़र्ज़ है। इसी लिये आगे आने वाली एक आयत में यह भी इरशाद है:

وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ.

यानी अगर ये लोग अपना मामला आपके पास लायें तो आप उसका फ़ैसला अपनी शरीअ़त के मुताबिक़ फ़रमा दें।

इस आयत में इख़्तियार देने के बजाय एक मुतैयन फ़ैसला, हुक्म करने का इरशाद है। इमाम अबू बक्र जस्सास ने अहकामुल-क़ुरआन में इन दोनों में मुवाफ़क़त इसी तरह की है कि पहली आयत जिसमें इख़्तियार दिया गया है वह उन ग़ैर-मुस्लिमों के बारे में है जो हमारी हुकूमत के बाशिन्दे या ज़िम्मी नहीं बल्कि अपनी जगह रहते हुए उनसे कोई समझौता हो गया है, जैसे बनू क़ुरैज़ा व बनू नज़ीर का हाल था, कि इस्लामी हुकूमत से उनका इसके सिवा कोई ताल्लुक़ न था कि एक समझौते के ज़रिये वे जंग न करने के पाबन्द हो गये थे।

और दूसरी आयत उन ग़ैर-मुस्लिमों के बारे में है जो मुसलमानों के ज़िम्मी इस्लामी मुल्कों के शहरी और हुकूमत के ताबे रहते हैं।

अब यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि पहली इख़्तियार वाली आयत और दूसरी आयत दोनों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हिदायत यह है कि जब उन ग़ैर-मुस्लिमों के मामले में फ़ैसला करें तो अल्लाह तआ़ला के उतारे हुए हुक्म यानी अपनी शरीअ़त के मुताबिक़ करें, उन ग़ैर-मुस्लिमों की इच्छाओं या उनके मज़हब के मुताबिक़ फ़ैसला न दें।

इसकी तफ़सील यह है कि यह हुक्म उन मामलों के बारे में है जिनका ज़िक्र इन आयतों के उतरने के सबब में आप सुन चुके हैं कि एक क़त्ल की सज़ा और ख़ून-बहा का मामला था, दूसरा ज़िना और उसकी सज़ा का। इन जैसे मामलात यानी अपराधों की सज़ाओं में सारी दुनिया का यही दस्तूर है कि पूरे मुल्क का एक ही क़ानून होता है, जिसको आ़म क़ानून कहते हैं। उस आ़म क़ानून में वर्गों या धर्मों की वजह से कोई फ़र्क़ नहीं किया जाता। मसलन चोर की सज़ा हाथ काटना है, तो यह सिर्फ़ मुसलमानों के लिये मख़्सूस नहीं, बल्कि मुल्क में रहने वाले हर शख़्स के लिये यही सज़ा होगी। इसी तरह क़त्ल व ज़िना की सज़ायें भी सब के लिये आ़म होंगी, लेकिन इससे यह लाज़िम नहीं आता कि ग़ैर-मुस्लिमों के ज़ाती और ख़ालिस धार्मिक मामलों का फ़ैसला भी इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ करना ज़रूरी हो।

ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शराब और ख़िनज़ीर (सुअर) को मुसलमानों के लिये हराम क़रार दिया और इस पर सज़ा मुक़र्रर फ़रमाई, मगर ग़ैर-मुस्लिमों को इसमें आज़ाद रखा। ग़ैर-मुस्लिमों के निकाह, शादी वग़ैरह ज़ाती मामलात में कभी हस्तक्षेप नहीं फ़रमाया, उनके मज़हब के मुताबिक़ जो निकाह सही हैं उनको क़ायम रखा।

हिज्र मक़ाम के मजूसी और नजरान और वादी-ए-क़ुरा के यहूदी व ईसाई इस्लामी हुकूमत के ज़िम्मी बने और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह मालूम था कि मजूसियों के नज़दीक अपनी माँ-बहन से भी निकाह हलाल है, इसी तरह यहूदियों व ईसाईयों में बग़ैर इद्दत गुज़ारे या बग़ैर गवाहों के निकाह मोतबर है, मगर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके ज़ाती मामलात में कोई दख़ल-अन्दाज़ी नहीं फ़रमाई, और उनके निकाहों को बरक़रार तस्लीम किया।

ख़ुलासा यह है कि ग़ैर-मुस्लिम जो इस्लामी हुकूमत के नागरिक हैं उनके व्यक्तिगत व ज़ाती और मज़हबी मामलात का फ़ैसला उन्हीं के मज़हब व ख़्याल पर छोड़ा जायेगा, और अगर मुक़द्दिमों में फ़ैसला करने की ज़रूरत पेश आयेगी तो उन्हीं के मज़हब का हाकिम मुक़र्रर करके फ़ैसला कराया जायेगा।

अलबत्ता अगर ये लोग मुस्लिम हाकिम के पास रुजू हों और उसके फ़ैसले पर दोनों फ़रीक़ रज़ामन्द हों तो फिर मुस्लिम हाकिम फ़ैसला अपनी शरीअ़त के मुताबिक़ ही करेगा, क्योंकि अब वह दोनों फ़रीक़ों की तरफ़ से बनाये हुए मध्यस्थ का हुक्म रखता है। क़ुरआन पाक की आयत 'व अनिह्कुम् बैनहुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु' जो आगे आने वाली है, उसमें इस्लामी शरीअ़त के

मुताबिक़ फ़ैसला देने का हुक्म जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को दिया गया है या तो इस बिना पर कि मामला क़ानूने आम यानी सार्वजनिक क़ानून का है, जिसमें किसी फ़िर्क़े को कोई अलग रियायत नहीं दी जा सकती, और या इस बिना पर कि ये लोग ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को फ़ैसला करने वाला तस्लीम करके आप ही से फ़ैसला कराने के लिये आये तो ज़ाहिर है कि आपका फ़ैसला वही होना चाहिये जिस पर आपका ईमान और आपकी शरीअ़त का हुक्म है।

बहरहाल ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में अव्वल हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली दी गयी, उसके बाद यहूदियों की साज़िश से आपको बाख़बर किया गया। चुनाँचे आयत नम्बर 41-43 (जिन आयतों की यह तफ़सीर बयान हो रही है) में इसी का बयान है, जिससे इस राज़ से पर्दा उठाया गया है कि आपकी ख़िदमत में आने वाली जमाअ़त मुनाफ़िक़ों की है, जिनका ख़ुफ़िया गठजोड़ यहूदियों के साथ है और उन्हीं की भेजी हुई आ रही है। उसके बाद आने वाली जमाअ़त की चन्द बुरी ख़स्लतों का बयान फ़रमाकर मुसलमानों को उसकी बुराई पर चेताया गया और इसी के तहत यह हिदायत फ़रमा दी कि ये ख़स्लतें (आ़दतें और तौर-तरीक़े) काफ़िरों के हैं, इनसे बचने और दूर रहने का एहतिमाम किया जाये।

यहूदियों की एक बुरी ख़स्लत

पहली ख़स्लत (तरीक़ा और आ़दत) यह बतलाई 'सम्माऊ-न लिल्कज़िबि' यानी ये लोग झूठी और ग़लत बातें सुनने के आ़दी हैं। अपने को आ़लिम कहलाने वाले ग़द्दार यहूदियों के ऐसे अन्धे पैरोकार हैं कि तौरात के हुक्मों की खुली ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) देखने के बावजूद उनकी पैरवी करते रहते हैं और उनकी ग़लत-सलत बयान की हुई कहानियाँ सुनते रहते हैं।

अ़वाम के लिये उलेमा की पैरवी का उसूल

इसमें जिस तरह रद्दोबदल करने वालों और अल्लाह व रसूल के अहकाम में ग़लत चीज़ें शामिल करने वालों के लिये सज़ा का ऐलाना है, इसी तरह उन लोगों को भी सख़्त मुजरिम क़रार दिया है जो ऐसे लोगों को इमाम बनाकर ख़ुद गढ़ी हुई और ग़लत रिवायतें सुनने के आ़दी हो गये हैं। इसमें मुसलमानों के लिये एक अहम उसूली हिदायत यह है कि अगरचे जाहिल अ़वाम के लिये दीन पर अ़मल करने का रास्ता सिर्फ़ यही है कि उलेमा के फ़तवे और तालीम पर अ़मल करें, लेकिन इस ज़िम्मेदारी से अ़वाम भी बरी नहीं कि फ़तवा लेने और अ़मल करने से पहले अपने मुक़्तदाओं (यानी जिनकी ये पैरवी कर रहे हैं) के बारे में इतनी तहक़ीक़ तो कर लें जितनी कोई बीमार किसी डॉक्टर या हकीम से रुजू करने से पहले किया करता है, कि जानने वालों से तहक़ीक़ करता है कि इस बीमारी के लिये कौनसा डॉक्टर माहिर है, कौनसा हकीम अच्छा है, उसकी डिग्रियाँ क्या क्या हैं, उसकी क्लीनिक में जाने वाले और इलाज कराने वाले लोगों पर क्या गुज़रती है। अपनी संभव तहक़ीक़ के बाद भी अगर वह किसी ग़लत डॉक्टर या

हकीम के जाल में फंस गया या उसने कोई ग़लती कर दी तो समझदारों के नज़दीक वह क़ाबिले मलामत नहीं होता, लेकिन जो शख़्स बिना तहक़ीक़ किसी ग़ैर-माहिर और अ़ताई हकीम के जाल में जा फंसा और फिर किसी मुबीसत में गिरफ़्तार हुआ तो वह अ़क़्लमन्दों के नज़दीक ख़ुद अपने आपको तबाह करने का ज़िम्मेदार है।

यही हाल अ़वाम के लिये दीनी मामलों के बारे में है कि अगर उन्होंने अपनी बस्ती के इल्म व फ़न रखने वालों और तजुर्बेकार लोगों से तहक़ीक़े हाल करने के बाद किसी आ़लिम को अपना मुक़्तदा बनाया और उसके फ़तवे पर अ़मल किया तो वह लोगों की निगाह में भी माज़ूर समझा जायेगा और अल्लाह के यहाँ भी। ऐसे ही मामले के मुताल्लिक़ हदीस में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

فَاِنَّ اِثْمَهٗ عَلٰی مَنْ اَفْتٰی

यानी ऐसी सूरत में अगर आ़लिम और मुफ़्ती ने ग़लती कर ली और किसी मुसलमान ने उनके ग़लत फ़तवे पर अ़मल कर लिया तो उसका गुनाह इस पर नहीं बल्कि उस आ़लिम और मुफ़्ती पर है, और वह भी उस वक़्त जबकि इस आ़लिम ने जान-बूझकर ऐसी ग़लती की हो, या संभवतः तलाश व तहक़ीक़ और सोच-विचार में कमी की हो, या यह कि वह आ़लिम ही न था और लोगों को फ़रेब देकर इस पद पर मुसल्लत (क़ाबिज़) हो गया।

लेकिन अगर कोई शख़्स बिल्कुल बिना तहक़ीक़ किये अपने ख़्याल से किसी को आ़लिम व मुक़्तदा क़रार देकर उसके क़ौल पर अ़मल करे, और वह वास्तव में उसका अहल नहीं तो उसका वबाल अकेले उस मुफ़्ती और आ़लिम पर नहीं है बल्कि यह शख़्स भी बराबर का मुजरिम है जिसने तहक़ीक़ किये बग़ैर अपने ईमान की बागडोर किसी ऐसे शख़्स के हवाले कर दी, ऐसे ही लोगों के बारे में क़ुरआने करीम में यह इरशाद आया है 'सम्माऊ-न लिल्कज़िबि' यानी ये लोग झूठी बातें सुनने के आ़दी हैं। अपने मुक़्तदाओं (धर्मगुरुओं) के इल्म व अ़मल और अमानत व दीनदारी की तहक़ीक़ के बग़ैर उनके पीछे लगे हुए हैं, और उनसे बेबुनियाद और ग़लत रिवायतें सुनने और मानने के आ़दी हो गये हैं।

क़ुरआने करीम ने यह हाल यहूदियों का बयान किया है, और मुसलमानों को सुनाया है कि वे इससे बचकर रहें। लेकिन आजकी दुनिया में मुसलमानों की बहुत बड़ी बरबादी का एक सबब यह भी है कि वे दुनिया के मामलों में तो बड़े होशियार, चुस्त व चालाक हैं, बीमार होते हैं तो बेहतर से बेहतर डॉक्टर हकीम को तलाश करते हैं, कोई मुक़द्दिमा पेश आता है तो अच्छे से अच्छा वकील बेरिस्टर ढूँढ लाते हैं, कोई मकान बनाना है तो आला से आला इंजीनियर का सुराग़ लगा लेते हैं, लेकिन दीन के मामले में ऐसे सख़ी हैं कि जिसकी दाढ़ी और कुर्ता देखा और कुछ अलफ़ाज़ बोलते हुए सुन लिया, उसको मुक़्तदा, आ़लिम, मुफ़्ती, रहबर बना लिया, बग़ैर इस तहक़ीक़ के कि उसने बाक़ायदा किसी मदरसे में भी तालीम पाई है या नहीं? माहिर उलेमा की ख़िदमत में रहकर इल्मे दीन का कुछ ज़ौक़ पैदा किया है या नहीं, कुछ इल्मी ख़िदमात अन्जाम दी हैं या नहीं, सच्चे बुज़ुर्गों और अल्लाह वालों की सोहबत में रहकर कुछ तक़्वा व तहारत पैदा

की है या नहीं?

इसका यह नतीजा है कि मुसलमानों में जो लोग दीन की तरफ़ मुतवज्जह भी होते हैं उनका बहुत बड़ा हिस्सा जाहिल वाईज़ों और दुकानदार पीरों के जाल में फंसकर दीन के सही रास्ते से दूर जा पड़ता है। उनका इल्मे दीन सिर्फ़ वो कहानियाँ रह जाती हैं जिनमें नफ़्स की इच्छाओं पर चोट न पड़े। वे ख़ुश हैं कि हम दीन पर चल रहे हैं और बड़ी इबादत कर रहे हैं, मगर हक़ीक़त वह होती है जिसको क़ुरआने करीम ने इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया है:

اَلَّذِيْنَ ضَلَّ سَعْيُهُمْ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ يَحْسَبُوْنَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُوْنَ صُنْعًا.

यानी वे लोग हैं जिनकी कोशिश व अ़मल दुनिया ही में बरबाद हो चुकी है, और वे अपने नज़दीक यह समझ रहे हैं कि हमने बड़ा अच्छा अ़मल किया है।

ख़ुलासा यह है कि क़ुरआने करीम ने उन मुनाफ़िक़ यहूदियों का हाल 'सम्माऊ-न लिल्कज़िबि' के लफ़्ज़ों में बयान करके एक अहम और बड़ा उसूल बतला दिया कि जाहिल अ़वाम को उलेमा की पैरवी तो लाज़िमी और अनिवार्य है मगर उन पर लाज़िम है कि बिना तहक़ीक़ के किसी को आ़लिम व मुक़्तदा न बना लें, और नावाक़िफ़ लोगों से ग़लत-सलत बातें सुनने के आ़दी न हो जायें।

यहूदियों की एक दूसरी बुरी ख़स्लत

इन मुनाफ़िक़ों की दूसरी बुरी ख़स्लत यह बतलाई कि:

سَمّٰعُوْنَ لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ لَمْ يَاْتُوْكَ.

यानी ये लोग बज़ाहिर तो आप से एक दीनी मामले का हुक्म पूछने आये हैं लेकिन वास्तव में इनका मक़सद न दीन है, न दीनी मामले का हुक्म मालूम करना है, बल्कि ये एक ऐसी यहूदी क़ौम के जासूस हैं जो अपने तकब्बुर की वजह से आप तक ख़ुद नहीं आये। उनकी इच्छा के मुताबिक़ सिर्फ़ यह चाहते हैं कि ज़िना की सज़ा के बारे में आपका नज़रिया मालूम करके उनको बतला दें, फिर मानने न मानने का फ़ैसला ख़ुद करेंगे। इसमें मुसलमानों को इस पर तंबीह है कि किसी आ़लिमे दीन से फ़तवा मालूम करने के लिये ज़रूरी है कि मालूम करने वाले की नीयत अल्लाह और रसूल के हुक्म को मालूम करके उस पर अ़मल करना हो, महज़ मुफ़्तियों की राय मालूम करके अपनी इच्छा के मुवाफ़िक़ हुक्म तलाश करना नफ़्स व शैतान की खुली हुई पैरवी है, इससे बचना चाहिये।

तीसरी बुरी ख़स्लत

'अल्लाह की किताब में रद्दोबदल करना'

तीसरी बुरी ख़स्लत उन लोगों की यह बयान फ़रमाई कि ये लोग अल्लाह के कलाम को

उसके मौक़े से हटाकर ग़लत मायने पहनाते और ख़ुदा तआ़ला के अहकाम में तहरीफ़ (रद्दोबदल और कमी-बेशी) करते हैं। इसमें यह सूरत भी दाख़िल है कि तौरात के अलफ़ाज़ में कुछ रद्दोबदल कर दें, और यह भी कि अलफ़ाज़ तो वही रहें उनके मायने में ग़लत क़िस्म का हेर-फेर और असल मायनों से हटाकर बयान करें। यहूदी लोग इन दोनों क़िस्मों की तहरीफ़ (रद्दोबदल) के आ़दी हैं।

मुसलमानों के लिये इसमें यह तंबीह (चेतावनी) है कि क़ुरआने करीम की हिफ़ाज़त का अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद ज़िम्मा लिया है, इसमें लफ़्ज़ी कमी-बेशी की तो कोई जुर्रत नहीं कर सकता, कि लिखे हुए सहीफ़ों के अ़लावा लाखों इनसानों के सीनों में महफ़ूज़ कलाम में एक ज़ेर व ज़बर की ग़लती कोई करता है तो फ़ौरन पकड़ा जाता है। मायने के एतिबार से रद्दोबदल बज़ाहिर की जा सकती है और करने वालों ने की भी है, मगर उसकी हिफ़ाज़त के लिये अल्लाह तआ़ला ने यह इन्तिज़ाम फ़रमा दिया है कि इस उम्मत में क़ियामत तक एक ऐसी जमाअ़त क़ायम रहेगी जो क़ुरआन व सुन्नत के सही मफ़्हूम की हामिल होगी, और तहरीफ़ करने वालों की क़लई खोल देगी।

चौथी बुरी ख़स्लत रिश्वत ख़ोरी

दूसरी आयत में उनकी एक और बुरी ख़स्लत यह बयान फ़रमाई है:

اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ.

यानी ये लोग सुहत खाने के आ़दी हैं। सुहत के लफ़्ज़ी मायने किसी चीज़ को जड़ बुनियाद से खोदकर बरबाद करने के हैं, इसी मायने में क़ुरआने करीम ने फ़रमाया है:

فَيُسْحِتَكُمْ بِعَذَابٍ.

यानी अगर तुम अपनी हरकत से बाज़ न आओगे तो अल्लाह तआ़ला अपने अ़ज़ाब से तुम्हारा ख़ात्मा कर देगा, यानी तुम्हारी जड़ बुनियाद ख़त्म कर दी जायेगी। क़ुरआन मजीद में इस जगह लफ़्ज़ सुहत से मुराद रिश्वत है। हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू, इब्राहीम नख़ई रह., हसन बसरी रह., मुजाहिद रह., क़तादा रह., ज़स्हाक रह. वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने इसकी तफ़सीर रिश्वत से की है।

रिश्वत को सुहत कहने की वजह यह है कि वह न सिर्फ़ लेने-देने वालों को बरबाद करती है बल्कि पूरे मुल्क व मिल्लत की जड़-बुनियाद और आ़म शान्ति को तबाह करने वाली है। जिस मुल्क या जिस महकमे में रिश्वत चल जाये वहाँ क़ानून बेकार होकर रह जाता है, और मुल्क का क़ानून ही वह चीज़ है जिससे मुल्क व मिल्लत का अमन बरक़रार रखा जाता है, वह बेकार हो गया तो न किसी की जान महफ़ूज़ रहती है न आबरू न माल, इसलिये इस्लामी शरीअ़त में इसको सुहत फ़रमाकर सख़्त हराम क़रार दिया है, और इसके दरवाज़े को बन्द करने के लिये अमीरों और हाकिमों को जो हदिये और तोहफ़े पेश किये जाते हैं उनको भी सही हदीस में

रिश्वत क़रार देकर हराम कर दिया गया है। (तफ़सीरे जस्सास)

और एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि अल्लाह तआ़ला रिश्वत लेने वाले और देने वाले पर लानत करते हैं, और उस शख़्स पर भी जो उन दोनों के बीच दलाल और वास्ता बने। (तफ़सीरे जस्सास)

शरीअ़त में रिश्वत का मतलब यह है कि जिसका मुआ़वज़ा और बदला लेना शरअ़न दुरुस्त न हो उसका मुआ़वज़ा लिया जाये। मसलन जो काम किसी शख़्स के फ़राईज़ (ज़िम्मेदारी और ड्यूटी) में दाख़िल है और उसका पूरा करना उसके ज़िम्मे लाज़िम हो उस पर किसी फ़रीक़ से मुआ़वज़ा लेना। जैसे हुकूमत के अफ़सर और क्लर्क सरकारी नौकरी की रू से अपने फ़राईज़ अदा करने के ज़िम्मेदार हैं, वे मामले वाले से कुछ लें तो यह रिश्वत है। या लड़की के माँ-बाप उसकी शादी करने के ज़िम्मेदार हैं, किसी से उसका मुआ़वज़ा नहीं ले सकते, वे जिसको रिश्ता दें उससे कुछ मुआ़वज़ा लें तो वह रिश्वत है। या नमाज़, रोज़ा, हज और क़ुरआन की तिलावत इबादतें हैं जो मुसलमान के ज़िम्मे हैं, इन पर किसी से कोई मुआ़वज़ा लिया जाये तो वह रिश्वत है। क़ुरआन की तालीम देना और इमामत इस हुक्म से ख़ारिज हैं (जैसा कि बाद के उलेमा हज़रात ने इसी पर फ़तवा दिया है)।

फिर जो शख़्स रिश्वत लेकर किसी का काम हक़ के मुताबिक़ करता है वह रिश्वत लेने का गुनाहगार है, और यह माल उसके लिये सुहत और हराम है। और अगर रिश्वत की वजह से हक़ के ख़िलाफ़ काम किया तो यह दूसरा सख़्त जुर्म, हक़-तल्फ़ी और अल्लाह के हुक्म को बदल देने का उसके अ़लावा हो गया। अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को इससे बचाये। आमीन

إِنَّآ أَنزَلْنَا ٱلتَّوْرَىٰةَ فِيهَا هُدًى وَنُورٌ ۚ يَحْكُمُ بِهَا ٱلنَّبِيُّونَ ٱلَّذِينَ أَسْلَمُوا۟ لِلَّذِينَ هَادُوا۟ وَٱلرَّبَّـٰنِيُّونَ وَٱلْأَحْبَارُ بِمَا ٱسْتُحْفِظُوا۟ مِن كِتَـٰبِ ٱللَّهِ وَكَانُوا۟ عَلَيْهِ شُهَدَآءَ ۚ فَلَا تَخْشَوُا۟ ٱلنَّاسَ وَٱخْشَوْنِ وَلَا تَشْتَرُوا۟ بِـَٔايَـٰتِى ثَمَنًا قَلِيلًا ۚ وَمَن لَّمْ يَحْكُم بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلْكَـٰفِرُونَ ۝ وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيهَآ أَنَّ ٱلنَّفْسَ بِٱلنَّفْسِ وَٱلْعَيْنَ بِٱلْعَيْنِ وَٱلْأَنفَ بِٱلْأَنفِ وَٱلْأُذُنَ بِٱلْأُذُنِ وَٱلسِّنَّ بِٱلسِّنِّ وَٱلْجُرُوحَ قِصَاصٌ ۚ فَمَن تَصَدَّقَ بِهِۦ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهُۥ ۚ وَمَن لَّمْ يَحْكُم بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلظَّـٰلِمُونَ ۝ وَقَفَّيْنَا عَلَىٰٓ ءَاثَـٰرِهِم بِعِيسَى ٱبْنِ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ ٱلتَّوْرَىٰةِ ۖ وَءَاتَيْنَـٰهُ ٱلْإِنجِيلَ فِيهِ هُدًى وَنُورٌ وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ ٱلتَّوْرَىٰةِ وَهُدًى وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ ۝ وَلْيَحْكُمْ أَهْلُ ٱلْإِنجِيلِ بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ فِيهِ ۚ وَمَن لَّمْ يَحْكُم بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلْفَـٰسِقُونَ ۝ وَأَنزَلْنَآ إِلَيْكَ ٱلْكِتَـٰبَ بِٱلْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ ٱلْكِتَـٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ ۖ فَٱحْكُم بَيْنَهُم بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ

وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ الْحَقِّ ۚ لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ۚ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ
لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ۚ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا
فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۙ وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ
وَاحْذَرْهُمْ اَنْ يَّفْتِنُوْكَ عَنْۢ بَعْضِ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكَ ۚ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمْ اَنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ
اَنْ يُّصِيْبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوْبِهِمْ ۚ وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ لَفٰسِقُوْنَ ۝ اَفَحُكْمَ الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُوْنَ ۚ
وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكْمًا لِّقَوْمٍ يُّوْقِنُوْنَ ۝

इन्ना अन्ज़ल्नत्तौरा-त फ़ीहा हुदंव्-व नूरुन् यह्कुमु बिहन्नबिय्यूनल्लज़ी-न अस्लमू लिल्लज़ी-न हादू वर्रब्बानिय्यू-न वल्-अह्बारु बिमस्तुह्फ़िज़ू मिन् किताबिल्लाहि व कानू अ़लैहि शु-हदा-अ फ़ला तख़्शवुन्ना-स वख़्शौनि व ला तश्तरू बिआयाती स-मनन् क़लीलन्, व मल्लम् यह्कुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु फ़-उलाइ-क हुमुल-काफ़िरून (44) व कतब्ना अ़लैहिम् फ़ीहा अन्नन्-नफ़्-स बिन्नफ़्सि वल्अ़ै-न बिल्अ़ैनि वल्अन्-फ़ बिल्अन्फ़ि वल्उज़ु-न बिल्-उज़ुनि वस्सिन्-न बिस्सिन्नि वल्जुरू-ह क़िसासुन्, फ़मन् तसद्द-क़ बिही फ़हु-व कफ़्फ़ारतुल्लहू, व मल्लम् यह्कुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु फ़-उलाइ-क हुमुज़्ज़ालिमून (45) व क़फ़्फ़ैना अ़ला

हमने नाज़िल की तौरात कि उसमें हिदायत और रोशनी है, उस पर हुक्म करते थे पैग़म्बर जो कि हुक्म मानने वाले थे अल्लाह के यहूद को, और हुक्म करते थे दुर्वेश और आ़लिम इस वास्ते कि वे निगहबान ठहराये गये थे अल्लाह की किताब पर और उसकी ख़बरगीरी करने पर मुक़र्रर थे, सो तुम न डरो लोगों से और मुझसे डरो और मत ख़रीदो मेरी आयतों पर मोल थोड़ा, और जो कोई हुक्म न करे उसके मुवाफ़िक़ जो कि अल्लाह ने उतारा सो वही लोग हैं काफ़िर। (44) और लिख दिया हमने उन पर इस किताब में कि जी के बदले जी, और आँख के बदले आँख, और नाक के बदले नाक और कान के बदले कान और दाँत के बदले दाँत और ज़ख़्मों के बदला उनके बराबर, फिर जिसने माफ़ कर दिया तो वह गुनाह से पाक हो गया और जो कोई हुक्म न करे इसके मुवाफ़िक़ जो कि अल्लाह ने उतारा सो वही लोग हैं ज़ालिम। (45) और पीछे भेजा हमने उन्हीं

आसारिहिम् बिअ़ीसब्नि मर्य-म मुसद्दिकल्लिमा बै-न यदैहि मिनत्-तौराति व आतैनाहुल् इन्जी-ल फ़ीहि हुदंव्-व नूरुंव्-व मुसद्दिक़ल्-लिमा बै-न यदैहि मिनत्तौराति व हुदंव्-व मौअ़ि-ज़तल् लिल्मुत्तकीन (46) वल्यह्कुम् अह्लुल्-इन्जीलि बिमा अन्ज़लल्लाहु फ़ीहि व मल्लम् यह्कुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु फ़-उलाइ-क हुमुल्-फ़ासिक़ून (47) व अन्ज़ल्ना इलैकल्-किता-ब बिल्हक़्क़ि मुसद्दिकल्लिमा बै-न यदैहि मिनल्-किताबि व मुहैमिनन् अ़लैहि फ़ह्कुम् बैनहुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु व ला तत्तबिअ़् अह्वा-अहुम् अ़म्मा जाअ-क मिनल्-हक़्क़ि, लिकुल्लिन् जअ़ल्ना मिन्कुम् शिर्-अ़तंव्-व मिन्हाजन्, व लौ शाअल्लाहु ल-ज-अ़-लकुम् उम्मतंव्-वाहि-दतंव्-व लाकिल्--लियब्लु-वकुम् फ़ी मा आताकुम् फ़स्तबिक़ुल्-ख़ैराति, इलल्लाहि मर्जिअ़ुकुम् जमीअ़न् फ़युनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् फ़ीहि तख़्तलिफ़ून (48) व अनिह्कुम् बैनहुम् बिमा अन्ज़लल्लाहु व ला तत्तबिअ़्

के क़दमों पर ईसा मरियम के बेटे को तस्दीक़ करने वाला तौरात की जो आगे से थी, और उसको दी हमने इंजील जिसमें हिदायत और रोशनी थी और तस्दीक़ करती थी अपने से अगली किताब तौरात की, और राह बतलाने वाली और नसीहत थी डरने वालों को। (46) और चाहिए कि हुक्म करें इंजील वाले मुवाफ़िक़ उसके जो कि उतारा अल्लाह ने उसमें और जो कोई हुक्म न करे मुवाफ़िक़ उसके जो कि उतारा अल्लाह ने सो वही लोग हैं नाफ़रमान। (47) और तुझ पर उतारी हमने किताब सच्ची तस्दीक़ करने वाली पहली किताबों की और उनके मज़ामीन पर निगहबान, सो तू हुक्म कर उनमें मुवाफ़िक़ उसके जो कि उतारा अल्लाह ने और उनकी ख़ुशी पर मत चल छोड़कर सीधा रास्ता जो तेरे पास आया, हर एक को तुम में से दिया हमने एक दस्तूर और राह, और अल्लाह चाहता तो तुमको एक दीन पर कर देता लेकिन तुमको आज़माना चाहता है अपने दिये हुए हुक्मों में, सो तुम दौड़कर लो ख़ूबियाँ, अल्लाह के पास तुम सब को पहुँचना है, फिर जता देगा जिस बात में तुमको इख़्तिलाफ़ (विवाद) था। (48) और यह फ़रमाया कि हुक्म कर उनमें मुवाफ़िक़ उसके जो कि उतारा अल्लाह ने, और मत

अस्वा-अहुम् वह्ज़र्हुम् अंय्यफ़्तिनू-क अ़म्बअ़्ज़ि मा अन्ज़लल्लाहु इलै-क, फ़-इन् तवल्लौ फ़अ़्लम् अन्नमा युरीदुल्लाहु अंय्युसीबहुम् बि-बअ़्ज़ि ज़ुनूबिहिम्, व इन्-न कसीरम् मिनन्नासि लफ़ासिक़ून (49) अ-फ़हुक्मल् जाहिलिय्यति यब्ग़ू-न, व मन् अह्सनु मिनल्लाहि हुक्मल् लिक़ौमिंय्-यूक़िनून (50) ❁	चल उनकी ख़ुशी पर और बचता रह उनसे कि तुझको बहका न दें किसी ऐसे हुक्म से जो अल्लाह ने उतारा तुझ पर, फिर अगर न मानें तो जान ले कि अल्लाह ने यही चाहा है कि पहुँचा दे उनको कुछ सज़ा उनके गुनाहों की, और लोगों में बहुत हैं नाफ़रमान। (49) अब क्या हुक्म चाहते हैं कुफ़्र के वक़्त का? और अल्लाह से बेहतर कौन है हुक्म करने वाला यक़ीन करने वालों के वास्ते। (50) ❁

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

यह सूरः मायदा का सातवाँ रुकूअ़ है। इसमें हक़ तआ़ला ने यहूदियों, ईसाईयों और मुसलमानों को इकट्ठे तौर पर एक अहम और ख़ास शरीअ़त के हुक्म पर सचेत फ़रमाया है, जिसका ज़िक्र सूरः मायदा में अलग-अलग तौर पर ऊपर से चला आया है। और वह मामला है अल्लाह जल्ल शानुहू से किये हुए अ़हद व पैमान के ख़िलाफ़ करने का, और उसके भेजे हुए अहकाम में बदलाव और कमी-बेशी करने और अलफ़ाज़ या मायनों में हेर-फेर करने का, जो यहूदियों व ईसाईयों की हमेशा की ख़स्लत व आ़दत बन गया था।

इस रुकूअ़ में हक़ तआ़ला ने पहले तौरात वाले यहूदियों को मुख़ातब फ़रमा कर उनको इस टेढ़ी और ग़लत चाल और उसके बुरे अन्जाम पर शुरू की दो आयतों में सचेत फ़रमाया, और उसके ज़िमन में क़िसास के बारे में कुछ अहकाम भी इस मुनासबत से ज़िक्र फ़रमा दिये कि पिछली आयतों में जो यहूद की साज़िश के वाक़िए का ज़िक्र किया गया है वह क़िसास के मुताल्लिक़ था, कि बनू नज़ीर दियत और क़िसास में बराबरी के क़ायल न थे बल्कि बनू क़ुरैज़ा को अपने से कम दियत लेने पर मजबूर कर रखा था। इन दोनों आयतों में यहूदियों को अल्लाह तआ़ला के नाज़िल किये हुए क़ानून के ख़िलाफ़ अपना क़ानून जारी करने पर सख़्त चेतावनी दी, और ऐसा करने वालों को काफ़िर और ज़ालिम क़रार दिया।

उसके बाद तीसरी आयत में इंजील वाले ईसाईयों को इसी मज़मून का ख़िताब फ़रमाकर अल्लाह के नाज़िल किये हुए क़ानून के ख़िलाफ़ कोई क़ानून जारी करने पर सख़्त तंबीह फ़रमाई, और ऐसा करने वालों को सरकश व नाफ़रमान क़रार दिया।

उसके बाद चौथी, पाँचवीं और छठी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब बनाकर मुसलमानों को इसी मज़मून के बारे में हिदायतें दी गयीं कि वे अहले किताब

की इस बीमारी में मुब्तला न हो जायें, कि माल व पद के लालच में अल्लाह तआला के अहकाम को बदलने लगें, या उसके क़ानून के ख़िलाफ़ कोई क़ानून अपनी तरफ़ से जारी करने लगें।

इसके तहत में एक और अहम बुनियादी मसला यह भी बयान फ़रमा दिया कि अगरचे अक़ीदों के उसूल और अल्लाह तआला की इताअ़त के मामले में तमाम अम्बिया-ए-किराम एक ही अक़ीदे और एक ही तरीक़े के पाबन्द हैं, लेकिन हिक्मत के तक़ाज़े के सबब हर पैग़म्बर को उसके ज़माने के मुनासिब शरीअ़त दी गयी है, जिसमें बहुत से ऊपर के और आंशिक अहकाम भिन्न और अलग हैं। और यह बतलाया कि हर पैग़म्बर को जो शरीअ़त दी गयी, उसके ज़माने में वही हिक्मत व मस्लेहत का तक़ाज़ा और पैरवी के लिये ज़रूरी थी, और जब उसको मन्सूख़ (ख़त्म और निरस्त) करके दूसरी शरीअ़त लाई गयी तो उस वक़्त वही हिक्मत व मस्लेहत के पूरी तरह मुताबिक़ और अनुसरणीय हो गयी। इसमें शरीअ़तों के विभिन्न होते रहने और बदलते रहने की एक ख़ास हिक्मत की तरफ़ भी इशारा फ़रमा दिया।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हमने (मूसा अ़लैहिस्सलाम पर) तौरात नाज़िल फ़रमाई थी जिसमें (सही अ़क़ीदों की भी) हिदायत थी और (अ़मली अहकाम की भी) वज़ाहत थी। (बनी इस्राईल के) अम्बिया जो कि (बावजूद लाखों आदमियों के मुक़्तदा व पेशवा होने के) अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार थे, उस (तौरात) के मुवाफ़िक़ यहूदियों को हुक्म दिया करते थे, और (इसी तरह उनमें के) अल्लाह वाले और उलेमा भी (उसी के मुवाफ़िक़, कि वही उस वक़्त की शरीअ़त थी हुक्म देते थे) इस वजह से कि उन (अल्लाह वालों और उलेमा) को उस अल्लाह की किताब (पर अ़मल करने और कराने) की हिफ़ाज़त का हुक्म (अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के ज़रिये से) दिया गया था और वे उसके (यानी उस पर अ़मल करने कराने के) इक़रारी हो गये थे। (यानी चूँकि उनको उसका हुक्म हुआ था और उन्होंने उस हुक्म को क़ुबूल कर लिया था, इसलिये हमेशा उसके पाबन्द रहे) सो (ऐ इस ज़माने के सरदार और यहूद के उलेमा जब हमेशा से तुम्हारे सब मुक़्तदा तौरात को मानते आये हैं तो) तुम भी (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तस्दीक़ के बारे में जिसका हुक्म तौरात में है) लोगों से (यह) अन्देशा मत करो (कि हम तस्दीक़ कर लेंगे तो आ़म लोगों की नज़र में हमारे रुतबे में फ़र्क़ आयेगा) और (सिर्फ़) मुझसे डरो (कि तस्दीक़ न करने पर सज़ा दूँगा), और मेरे अहकाम के बदले में (दुनिया की) मता-ए-क़लील "यानी मामूली फ़ायदा" (जो कि तुमको अपने अ़वाम से वसूल होती है) मत लो, (कि यही माल व पद की मुहब्बत तुम्हारे लिये तस्दीक़ न करने की सबब बनती है) और (याद रखो कि) जो शख़्स अल्लाह के नाज़िल किए हुए के मुवाफ़िक़ हुक्म न करे (बल्कि शरई हुक्म के अ़लावा को जान-बूझकर शरई हुक्म बतलाकर उसके मुवाफ़िक़ हुक्म करे) सो ऐसे लोग बिल्कुल काफ़िर हैं (जैसा ऐ यहूदियो! तुम कर रहे हो कि अ़क़ीदों में भी, जैसे कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत के अ़क़ीदे में, और आमाल में भी जैसे रजम वग़ैरह के हुक्म में अपने बनाये और गढ़े हुए को

अल्लाह का हुक्म बतला कर गुमराह होने और दूसरों को गुमराह करने में मुब्तला हो रहे हो)।

और हमने उन (यहूदियों) पर उस (तौरात) में यह बात फ़र्ज़ की थी कि (अगर कोई किसी को नाहक़ जान-बूझकर क़त्ल या ज़ख़्मी करे और हक़ वाला दावा करे तो) जान बदले जान के, और आँख बदले आँख के, और नाक बदले नाक के, और कान बदले कान के, और दाँत बदले दाँत के, और (इसी तरह दूसरे) ख़ास ज़ख़्मों का भी बदला है। फिर जो शख़्स (इस क़िसास यानी बदला लेने का हक़दार होकर भी) उस (क़िसास) को माफ़ कर दे तो वह (माफ़ करना) उस (माफ़ करने वाले) के लिए (उसके गुनाहों का) कफ़्फ़ारा (यानी गुनाहों के दूर होने का सबब) हो जाएगा (यानी माफ़ करना सवाब का ज़रिया है)। और (चूँकि यहूदियों ने इन अहकाम को छोड़ रखा था इसलिये दोबारा फिर वईद सुनाते हैं कि) जो शख़्स ख़ुदा के नाज़िल किए हुए के मुवाफ़िक़ हुक्म न करे, (जिसके मायने ऊपर गुज़रे) तो ऐसे लोग बिल्कुल सितम कर रहे हैं (यानी बहुत बुरा काम कर रहे हैं)।

और हमने उन (नबियों) के बाद (जिनका ज़िक्र 'यह्कुमु बिहन्नबिय्यू-न' में आया है) ईसा इब्ने मरियम (अ़लैहिमस्सलाम) को इस हालत में (पैग़म्बर बनाकर) भेजा कि वह अपने से पहले की किताब यानी तौरात की तस्दीक़ फ़रमाते थे (जो कि रसूल होने की लाज़िमी सिफ़त है कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आई हुई तमाम किताबों की तस्दीक़ करे) और हमने उनको इन्जील दी जिसमें (तौरात ही की तरह सही अ़क़ीदों की भी) हिदायत थी और (अ़मली अहकाम की भी) वज़ाहत थी और (इन्जील) अपने से पहले की किताब यानी तौरात की तस्दीक़ (भी) करती थी, (कि यह भी अल्लाह की किताब की लाज़िमी सिफ़तों में से है) और वह (सरासर) हिदायत और नसीहत थी (ख़ुदा से) डरने वालों के लिए।

और (हमने इंजील देकर हुक्म किया था कि) इन्जील वालों को चाहिए कि अल्लाह तआ़ला ने जो कुछ उसमें नाज़िल फ़रमाया है उसके मुवाफ़िक़ हुक्म किया करें, और (ऐ इस ज़माने के ईसाईयो! सुन रखो कि) जो शख़्स ख़ुदा तआ़ला के नाज़िल किए हुए के मुवाफ़िक़ हुक्म न करे (और इसका मतलब ऊपर गुज़र चुका है) तो ऐसे लोग बिल्कुल नाफ़रमानी करने वाले हैं। (और इंजील हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रसूल होने की ख़बर दे रही है, तो तुम उसके ख़िलाफ़ क्यों चल रहे हो)।

और (तौरात व इंजील के बाद) हमने (यह) किताब (जिसको क़ुरआन कहा जाता है) आपके पास भेजी है जो (ख़ुद भी) सच्चाई (व रास्ती) वाली है और इससे पहले जो (आसमानी) किताबें (आ चुकी) हैं (जैसे तौरात, इंजील और ज़बूर) उनकी तस्दीक़ करती है, (कि वे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उतरी हुई हैं) और (चूँकि वह किताब जिसको क़ुरआन कहा जाता है, क़ियामत तक महफ़ूज़ व अ़मल की जाने वाली है, और उसमें उन आसमानी किताबों की तस्दीक़ मौजूद है, इसलिये वह किताब) उन (किताबों) (के सच्चा होने के मज़मून) की (हमेशा के लिये) मुहाफ़िज़ है। (क्योंकि क़ुरआन में हमेशा यह महफ़ूज़ रहेगा कि वे किताबें अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उतरी हुई हैं। जब क़ुरआन ऐसी किताब है) तो इन (अहले किताब) के आपसी मामलात में

(जबकि आपके सामने पेश हों) इस भेजी हुई (किताब) के मुवाफ़िक़ फ़ैसला फ़रमाया कीजिए। और यह जो सच्ची किताब आपको मिली है इससे दूर होकर उनकी (शरीअ़त के ख़िलाफ़) इच्छाओं (और फ़रमाईशों) पर (आईन्दा भी) अ़मल दरामद न कीजिए (जैसा कि अब तक बावजूद उनकी दरख़्वास्त व प्रार्थना के आपने साफ़ इनकार फ़रमाया। यानी यह आपकी राय निहायत ही दुरुस्त है, इसी पर हमेशा क़ायम रहिये। और ऐ अहले किताब! तुमको इस क़ुरआन को हक़ जानने से और इसके फ़ैसले को मानने से क्यों इनकार है? क्या नये दीन का आना कुछ ताज्जुब की बात है? आख़िर) तुम में से हर एक (उम्मत) के लिए (इससे पहले) हमने (ख़ास) शरीअ़त और (ख़ास) तरीक़ा तजवीज़ किया था। (जैसे यहूदियों की शरीअ़त व अ़मली तरीक़े की तालीम तौरात थी, और ईसाईयों की शरीअ़त और सही रास्ते की रहनुमाई इंजील थी। फिर अगर उम्मते मुहम्मदिया के लिये शरीअ़त व तरीक़त क़ुरआन मुक़र्रर किया गया, जिसका हक़ होना भी दलीलों से साबित है तो इनकार करने की वजह क्या है) और अगर अल्लाह तआ़ला को (सब का एक ही तरीक़े पर रखना) मन्ज़ूर होता तो (वह इस पर भी क़ुदरत रखते थे कि) तुम सब (यहूदियों व ईसाईयों और मुसलमानों) को (एक ही शरीअ़त देकर) एक ही उम्मत कर देते, (और नई शरीअ़त न आती, जिससे तुमको घबराहट होती है) लेकिन (अपनी हिक्मत से) ऐसा नहीं किया (बल्कि हर उम्मत को अलग-अलग तरीक़ा दिया) ताकि जो दीन तुमको (हर ज़माने में नया-नया) दिया है उसमें तुम सब का (तुम्हारे इताअ़त के इज़हार के लिये) इम्तिहान फ़रमाएँ (क्योंकि अक्सर यह तबई चीज़ है कि नये तरीक़े से घबराहट और मुख़ालफ़त की तरफ़ हरकत होती है, लेकिन जो शख़्स सही अ़क़्ल और इन्साफ़ से काम लेता है वह इस हक़ीक़त के सामने आने के बाद अपनी तबीयत को मुवाफ़क़त पर मजबूर कर देता है, और यह एक बड़ा इम्तिहान है। पस अगर सब की एक ही शरीअ़त होती तो उस शरीअ़त की शुरूआ़त के वक़्त जो लोग होते उनका इम्तिहान तो हो जाता, लेकिन दूसरे जो उनके पैरोकार और उस तरीक़े से जुड़े होते उनका इम्तिहान न होता। और अब हर उम्मत का इम्तिहान हो गया। और इम्तिहान की एक सूरत यह होती है कि इनसान को जिस चीज़ से रोका जाये चाहे उस पर उसका अ़मल हो या छोड़ी हुई यानी अ़मल से बाहर हो, उस पर हिर्स होती है। और यह इम्तिहान शरीअ़तों के अलग-अलग और भिन्न होने में ज़्यादा क़वी है, कि मन्सूख़ से रोका जाता है और शरीअ़त के एक होने की हालत में अगरचे गुनाहों से रोकते, लेकिन उनमें हक़ीक़त का तो शुब्हा नहीं होता, इसलिये इम्तिहान इस दर्जे का नहीं। इन दोनों इम्तिहानों का मजमूआ़ हर उम्मत के पहले वालों और बाद वालों सब को आ़म हो गया, जैसा कि पहली सूरत को सिर्फ़ पहले वाले और शुरू के लोगों के साथ विशेषता हासिल है। पस जब नयी शरीअ़त में यह हिक्मत है) तो (भेदभाव को छोड़कर) मुफ़ीद बातों की तरफ़ (यानी उन अ़क़ीदों, आमाल और अहकाम की तरफ़ जिन पर क़ुरआन मुश्तमिल है) दौड़ो, (यानी क़ुरआन पर ईमान लाकर इस पर चलो, एक दिन) तुम सब को ख़ुदा ही के पास जाना है, फिर वह तुम सब को जतला देगा, जिसमें तुम (बावजूद हक़ स्पष्ट होने के दुनिया में ख़्वाह-मख़्वाह) झगड़ा किया करते थे। (इसलिये इस बेजा झगड़े को छोड़कर

हक़ को जो कि अब सीमित है क़ुरआन में, क़ुबूल कर लो)।

और (चूँकि इन अहले किताब ने ऐसी ऊँची उड़ान उड़ी कि अपने मुवाफ़िक़ मुक़द्दिमे का फ़ैसला करने की आप से दरख़्वास्त करते हैं, जहाँ कि इसकी संभावना और शुब्हा ही नहीं, इसलिये उनके हौसले पस्त करने को और इसको सुनाकर हमेशा-हमेशा के लिये उनको नाउम्मीद कर देने को) हम (एक बार फिर) हुक्म देते हैं कि आप इन (अहले किताब) के आपसी मामलात में (जबकि आपके इजलास में पेश हों) इस भेजी हुई (किताब) के मुवाफ़िक़ फ़ैसला फ़रमाया कीजिए और उनकी (ख़िलाफ़े शरीअ़त) इच्छाओं (और फ़रमाईशों) पर (आईन्दा भी) अ़मल दरामद न कीजिए (जैसा कि अब तक भी नहीं किया)। और उनसे यानी उनकी इस बात से (आईन्दा भी अब तक की तरह) एहतियात रखिए कि वे आपको ख़ुदा तआ़ला के भेजे हुए किसी हुक्म से भी बिचला दें (यानी अगरचे इसकी संभावना और गुमान नहीं लेकिन इसका इरादा भी रहे तो सवाब का ज़रिया भी है) फिर (क़ुरआन के स्पष्ट होने और उसके फ़ैसले के हक़ होने के बावजूद भी) अगर ये लोग (क़ुरआन से और आपके फ़ैसले से जो क़ुरआन के मुवाफ़िक़ होगा) मुँह मोड़ें तो (यह) यक़ीन कर लीजिए कि बस ख़ुदा ही को मन्ज़ूर है कि उनके बाज़े जुर्मों पर (दुनिया ही में) उनको सज़ा दें (और वह बाज़े जुर्म फ़ैसला न मानना है, और क़ुरआन के हक़ और सच्चा होने को न मानने की पूरी सज़ा आख़िरत में मिलेगी। क्योंकि पहला जुर्म ज़िम्मी होने के ख़िलाफ़ है, और दूसरा जुर्म ईमान के ख़िलाफ़। मुक़ाबले पर आने और जंग की सज़ा दुनिया में होती है और कुफ़्र की सज़ा आख़िरत में। चुनाँचे यहूद की नाफ़रमानी और अ़हद तोड़ना जब हद से गुज़र गया तो उनको क़त्ल किये जाने, क़ैद करने और वतन से निकालने की सज़ा दी गयी)।

और (ऐ मुहम्मद! उनके ये हालात सुनकर आपको रंज ज़रूर होगा, लेकिन आप ज़्यादा ग़म न कीजिए, क्योंकि) ज़्यादा आदमी तो (दुनिया में हमेशा से) नाफ़रमान ही होते (आये) हैं। (क़ुरआनी फ़ैसले से जो कि पूरी तरह इन्साफ़ है मुँह मोड़कर) क्या ये लोग जाहिलीयत के ज़माने का फ़ैसला चाहते हैं (जिसको इन्होंने आसमानी शरीअ़तों के ख़िलाफ़ ख़ुद तैयार कर लिया था, जिसका ज़िक्र दो वाक़िओं के तहत में इस रुकूअ़ से पहले रुकूअ़ (या अय्युहर्रसूलु....) की तमहीद में गुज़र चुका है। हालाँकि वह पूरी तरह इन्साफ़ और दलील के ख़िलाफ़ है, लेकिन जानकार होकर इल्म से मुँह मोड़ना और जहल (अज्ञानता) का इच्छुक होना बहुत ही ताज्जुब की बात है)। और फ़ैसला करने में अल्लाह से अच्छा कौन (फ़ैसला करने वाला) होगा, (बल्कि अच्छा तो क्या कोई उसके बराबर भी नहीं। पस ख़ुदाई फ़ैसले को छोड़कर दूसरे के फ़ैसले का इच्छुक होना पूरी तरह जहालत नहीं तो क्या है, लेकिन यह बात भी) यक़ीन (व ईमान) रखने वालों (ही) के नज़दीक है (क्योंकि इसका समझना मौक़ूफ़ है अ़क़्ली क़ुव्वत के सही होने पर, और वे काफ़िर इससे मेहरूम हैं)।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में इरशाद फ़रमायाः

إِنَّآ أَنزَلْنَا ٱلتَّوْرَىٰةَ فِيهَا هُدًى وَنُورٌ.

यानी "हमने अपनी किताब तौरात भेजी जिसमें हक़ की तरफ़ रहनुमाई और एक ख़ास नूर था।" इसमें इस बात की तरफ़ इशारा कर दिया कि आज जो तौरात की शरीअ़त को मन्सूख़ (रद्द और ख़त्म) किया जा रहा है तो इसमें तौरात की कोई कमी या शान में फ़र्क़ आने वाली बात नहीं, बल्कि ज़माने की तब्दीली के कारण अहकाम में तब्दीली की ज़रूरत लाज़िमी होने के सबब ऐसा किया गया, वरना तौरात भी हमारी नाज़िल की हुई किताब है। उसमें बनी इस्राईल के लिये हिदायत के उसूल भी ज़िक्र हुए हैं और एक ख़ास नूर भी है, जो रूहानी तौर पर उनके दिलों पर असर-अन्दाज़ होता है।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

يَحْكُمُ بِهَا ٱلنَّبِيُّونَ ٱلَّذِينَ أَسْلَمُوا۟ لِلَّذِينَ هَادُوا۟ وَٱلرَّبَّـٰنِيُّونَ وَٱلْأَحْبَارُ.

यानी तौरात को हमने इसलिये नाज़िल किया था कि जब तक उसकी शरीअ़त को मन्सूख़ न किया जाये उस वक़्त तक आने वाले अम्बिया और उनके नायब (उत्तराधिकारी) अल्लाह वाले और उलेमा सब उसी तौरात के मुताबिक़ फ़ैसले किया करें। उसी क़ानून को दुनिया में चलाया करें। इसमें अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के नायब हज़रात को दो क़िस्मों में ज़िक्र फ़रमाया है, पहले 'रब्बानिय्यू-न' दूसरे 'अहबार'। लफ़्ज़ रब्बानी रब की तरफ़ मन्सूब है, जिसके मायने हैं अल्लाह वाला। और अहबार हिब्र की जमा (बहुवचन) है। यहूदियों के मुहावरे में आ़लिम को हिब्र कहा जाता था। अगरचे यह बात ज़ाहिर है कि जो अल्लाह वाला होगा ज़रूरी है कि उसको अल्लाह तआ़ला के ज़रूरी अहकाम का इल्म भी हो, वरना बग़ैर इल्म के अ़मल नहीं हो सकता, और अल्लाह तआ़ला के अहकाम की इताअ़त और उन पर अ़मल के बग़ैर कोई शख़्स अल्लाह वाला नहीं हो सकता। इसी तरह अल्लाह के नज़दीक आ़लिम उसी को कहा जाता है जो अपने इल्म पर अ़मल भी करता हो, वरना वह आ़लिम जो अल्लाह के अहकाम से वाक़िफ़ होने के बावजूद ज़रूरी फ़राईज़ व वाजिबात पर भी अ़मल नहीं करता, न इसकी तरफ़ कोई ध्यान देता है वह अल्लाह तआ़ला के नज़दीक जाहिल से बदतर है। इसका नतीजा यह हुआ कि हर अल्लाह वाला आ़लिम होता है, और हर आ़लिम अल्लाह वाला होता है, मगर इस जगह इन दोनों को अलग-अलग बयान फ़रमाकर इस बात पर आगाह फ़रमा दिया कि अगरचे अल्लाह वाले के लिये इल्म ज़रूरी और आ़लिम के लिये अ़मल ज़रूरी है, लेकिन जिस पर जिस रंग का ग़लबा हो उसके एतिबार से उसका नाम रखा जाता है। जिस शख़्स की तवज्जोह ज़्यादातर इबादत व अ़मल और ज़िक्रुल्लाह में मसरूफ़ है, और इल्मे दीन सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक़ हासिल कर लेता है वह रब्बानी यानी अल्लाह वाला कहलाता है, जिसको आजकल की बोलचाल में शैख़, मुर्शिद, पीर वग़ैरह के नाम दिये जाते हैं। और जो शख़्स इल्मी महारत पैदा करके लोगों को शरीअ़त के

अहकाम बतलाने और सिखलाने की ख़िदमत में ज़्यादा मशग़ूल है और फ़राईज़ व वाजिबात और मुअक्कदा सुन्नतों के अ़लावा दूसरी नफ़्ली इबादतों में ज़्यादा वक़्त नहीं लगा सकता उसको हिब्र या आ़लिम कहा जाता है।

ख़ुलासा यह है कि इसमें शरीअ़त व तरीक़त और उलेमा व बुज़ुर्गों की असली एकता को भी बतला दिया, और काम के तरीक़े और ग़ालिब मशग़ले के एतिबार से उनमें फ़र्क़ को भी स्पष्ट कर दिया, जिससे मालूम हो गया कि उलेमा और सूफ़िया कोई दो फ़िर्क़े या दो गिरोह नहीं, बल्कि दोनों की ज़िन्दगी का मक़सद अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त व फ़रमाँबरदारी है। अलबत्ता इस मक़सद के पाने के लिये उनके काम करने के तरीक़े देखने में अलग-अलग नज़र आते हैं।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ وَكَانُوْا عَلَيْهِ شُهَدَآءَ.

यानी ये अम्बिया (नबी हज़रात) और इनके दोनों क़िस्म के नायब हज़रात- उलेमा व बुज़ुर्ग, तौरात के अहकाम जारी करने के पाबन्द इसलिये थे कि अल्लाह तआ़ला ने तौरात की हिफ़ाज़त उनके ज़िम्मे लगा दी थी और उन्होंने उसकी हिफ़ाज़त का अ़हद व पैमान कर लिया था।

यहाँ तक तौरात के अल्लाह की किताब होने और हिदायत व नूर होने का और इसका ज़िक्र था कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके सच्चे नायब हज़रात- अल्लाह वालों और उलेमा ने उसकी हिफ़ाज़त फ़रमाई। उसके बाद मौजूदा ज़माने के यहूदियों को उनके ग़लत राह पर चलने पर और उस ग़लत और टेढ़ी राह चलने के असली सबब पर सचेत फ़रमाया गया कि तुमने बजाय इसके कि अपने बुज़ुर्गों और पूर्वजों के नक़्शे क़दम पर चलकर तौरात की हिफ़ाज़त करते, उसके अहकाम में तब्दीली और कमी-बेशी कर दी, कि तौरात में बड़ी वज़ाहत और तफ़सील के साथ आख़िरी ज़माने के नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के आने की ख़बर और यहूदियों को उनपर ईमान लाने की हिदायत बयान हुई थी। उन लोगों ने इसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी की और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाने के बजाय आपकी मुख़ालफ़त शुरू कर दी, और साथ ही उनकी इस भंयकर ग़लती का सबब भी बयान फ़रमा दिया, कि वे तुम्हारी माल व रुतबे की मुहब्बत है। तुम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सच्चा रसूल जानने के बावजूद आपकी पैरवी से इसलिये घबराते हो कि अब तो तुम अपनी क़ौम के मुक़्तदा माने जाते हो, यहूदी अ़वाम तुम्हारे पीछे चलते हैं, अगर तुमने इस्लाम क़ुबूल कर लिया तो तुम एक मुस्लिम फ़र्द की हैसियत में आ जाओगे, यह चौधराहट ख़त्म हो जायेगी।

दूसरे उन लोगों ने यह पेशा बना लिया था कि बड़े लोगों से रिश्वत लेकर उनके लिये तौरात के अहकाम में रद्दोबदल करके आसानियाँ पैदा कर दी थीं, इस पर चेताने के लिये मौजूदा ज़माने के यहूदियों को फ़रमाया किः

فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ وَلَا تَشْتَرُوْا بِاٰيٰتِىْ ثَمَنًا قَلِيْلًا.

यानी तुम लोगों से न डरो कि वे तुम्हारी पैरवी करना छोड़ देंगे या मुख़ालिफ़ हो जायेंगे, और तुम दुनिया का मामूली फ़ायदा लेकर उनके लिये अल्लाह के अहकाम में गड़बड़ न करो कि यह तुम्हारे लिये दीन व दुनिया की बरबादी है, क्योंकिः

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ.

यानी जो लोग अल्लाह के नाज़िल किये हुए अहकाम को वाजिब नहीं समझते और उन पर फ़ैसला नहीं देते, बल्कि उनके ख़िलाफ़ फ़ैसला करते हैं, वे काफ़िर व मुन्किर हैं, जिनकी सज़ा हमेशा के लिये जहन्नम का अ़ज़ाब है।

इसके बाद दूसरी आयत में क़िसास (बदले और ख़ून के बदले ख़ून) के अहकाम इस हवाले से बयान किये गये हैं कि हमने ये अहकाम तौरात में नाज़िल किये हैं। इरशाद हैः

وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيْهَآ اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ وَالْجُرُوْحَ قِصَاصٌ.

यानी हमने यहूदियों के लिये तौरात में यह क़िसास का हुक्म नाज़िल कर दिया था कि जान के बदले जान, आँख के बदले आँख, नाक के बदले नाक, कान के बदले कान, दाँत के बदले दाँत और ख़ास ज़ख़्मों का बदला है।

बनू क़ुरैज़ा और बनू नज़ीर का जो मुक़द्दिमा हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने पेश हुआ था कि बनू नज़ीर ने अपनी क़ुव्वत व दबदबे के बल बूते पर बनू क़ुरैज़ा को इस पर मजबूर कर रखा था कि बनू नज़ीर के किसी आदमी को उनका आदमी क़त्ल कर दे तो उसका क़िसास (बदला) भी जान के बदले जान से लिया जाये, और उसके अ़लावा ख़ून बहा यानी दियत भी ली जाये। और अगर मामला इसके उलट हो कि बनू नज़ीर का आदमी बनू क़ुरैज़ा के आदमी को मार डाले तो कोई क़िसास नहीं, सिर्फ़ दियत यानी ख़ून बहा दिया जाये, वह भी बनू नज़ीर से आधा।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने उन लोगों की इस चोरी का पर्दा चाक कर दिया कि ख़ुद तौरात में भी क़िसास और दियत की बराबरी के अहकाम मौजूद हैं। ये लोग जान-बूझकर उनसे मुँह मोड़ते हैं, और सिर्फ़ बहाना ढूँढने के लिये अपना मुक़द्दिमा हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास लाते हैं।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ.

यानी जो अल्लाह के नाज़िल किये हुए अहकाम पर हुक्म (फ़ैसला) न दें वे ज़ालिम हैं। क्योंकि अल्लाह के अहकाम के इनकारी और बाग़ी हैं। तीसरी आयत में पहले हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के भेजे जाने का ज़िक्र है कि वह पिछली किताब यानी तौरात की तस्दीक़ करने के लिये भेजे गये थे, फिर इंजील का ज़िक्र है कि वह भी तौरात की तरह हिदायत और नूर है।

चौथी आयत में इरशाद फ़रमाया कि इंजील वालों (यानी ईसाईयों) को चाहिये कि जो क़ानून

अल्लाह तआ़ला ने इंजील में नाज़िल फ़रमाया है उसके मुताबिक़ अहकाम नाफ़िज़ (लागू और जारी) करें, और जो लोग अल्लाह के नाज़िल किये हुए अहकाम के ख़िलाफ़ हुक्म जारी करें वे नाफ़रमान और सरकश हैं।

क़ुरआन तौरात और इंजील का भी मुहाफ़िज़ है

पाँचवीं और छठी आयतों में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है कि हमने आप पर क़ुरआन नाज़िल किया जो अपने से पहली किताबों तौरात व इंजील की तस्दीक़ भी करता है और उनका मुहाफ़िज़ (रक्षक) भी है, क्योंकि जब तौरात वालों ने तौरात में और इंजील वालों ने इंजील में रद्दोबदल और कमी-बेशी की तो क़ुरआन ही वह मुहाफ़िज़ व निगराँ साबित हुआ जिसने उनकी रद्दोबदल और तरमीमों का पर्दा चाक करके हक़ और हक़ीक़त को रोशन कर दिया और तौरात व इंजील की असल तालीमात आज भी क़ुरआन ही के ज़रिये दुनिया में बाक़ी हैं, जबकि उन किताबों के वारिसों और उनकी पैरवी के दावेदारों ने उनका हुलिया ऐसा बिगाड़ दिया है कि हक़ व बातिल का फ़र्क़ करना नामुम्किन हो गया।

आयत के आख़िर में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को वही हुक्म दिया गया जो तौरात और इंजील वालों को दिया गया था, कि आपके अहकाम और फ़ैसले सब अल्लाह के नाज़िल किये हुए अहकाम के मुताबिक़ होने चाहियें। और ये लोग जो आप से अपनी इच्छाओं के मुताबिक़ फ़ैसला कराना चाहते हैं इनके मक्र व फ़रेब से बाख़बर रहें। इस इरशाद की एक ख़ास वजह यह थी कि यहूद में के चन्द उलेमा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अ़र्ज़ किया कि आप जानते हैं कि हम यहूद के उलेमा और पेशवा हैं, अगर हम मुसलमान हो गये तो वे भी सब मुसलमान हो जायेंगे, लेकिन हमारी एक शर्त यह है कि हमारा एक मुक़द्दिमा आपकी क़ौम के लोगों के साथ है, हम वह मुक़द्दिमा आपके पास लायेंगे, आप उसमें फ़ैसला हमारे मुवाफ़िक़ फ़रमा दें तो हम मुसलमान हो जायेंगे। हक़ तआ़ला ने इस पर सचेत फ़रमाया कि आप उन लोगों के मुसलमान हो जाने को ध्यान में रखते हुए अ़दल व इन्साफ़ और अल्लाह तआ़ला के नाज़िल किये हुए क़ानून के ख़िलाफ़ फ़ैसला हरगिज़ न दें, और इसकी परवाह न करें कि ये मुसलमान होंगे या नहीं।

नबियों की शरीअ़तों में आंशिक भिन्नता और उसकी हिक्मत

इस आयत में दूसरी हिदायत के साथ एक अहम उसूली सवाल का जवाब भी बयान फ़रमाया गया है। वह यह कि जब तमाम नबी अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से भेजे हुए हैं, और उन पर नाज़िल होने वाली किताबें और सहीफ़ें और उनकी शरीअ़तें सब अल्लाह जल्ल शानुहू की ही तरफ़ से हैं, तो फिर उनकी किताबों और शरीअ़तों में भिन्नता क्यों है? और आने वाली शरीअ़त व किताब पिछली शरीअ़त व किताब को मन्सूख़ (ख़त्म और निरस्त) क्यों करती है। इसका जवाब मय हिक्मते ख़ुदावन्दी के इस आयत में बयान किया गया:

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا وَلَوْ شَاءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ أُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْمَا اٰتٰكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ.

यानी हमने तुम में से हर तब्क़े के लिये एक ख़ास शरीअ़त और अ़मल का ख़ास तरीक़ा बनाया है जिसमें संयुक्त उसूल और सर्वसम्मत होने के बावजूद ऊपर के अह्काम में मस्लेहत के सबब कुछ इख़्तिलाफ़ात (यानी कुछ अहकाम भिन्न और अलग) होते हैं। और अगर अल्लाह तआ़ला चाहता तो उसके लिये कुछ मुश्किल न था कि तुम सब को एक ही उम्मत, एक ही मिल्लत बना देता, सब की एक ही किताब एक ही शरीअ़त होती, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने इसको इसलिये पसन्द नहीं किया कि लोगों की आज़माईश मक़सूद थी, कि कौन लोग हैं जो इबादत की हक़ीक़त से वाक़िफ़ होकर हर वक़्त अ़मल के लिये तैयार रहते हैं कि जो हुक्म मिले उसकी तामील करें, जो नई किताब या शरीअ़त आये उसकी पैरवी करें, और पहली शरीअ़त व किताब उनको कितनी ही महबूब हो, और बाप-दादा का मज़हब होने के सबब उसका छोड़ना उन पर कितना ही भारी हो, मगर वे हर वक़्त फ़रमाँबरदारी के लिये तैयार रहते हैं। और कौन हैं जो इस हक़ीक़त से ग़ाफ़िल होकर किसी ख़ास शरीअ़त या किताब को मक़सद बना बैठे और उसको एक बाप-दादा के मज़हब की हैसियत से लिये हुए हैं, उसके ख़िलाफ़ अल्लाह के किसी हुक्म पर कान नहीं धरते।

शरीअ़तों के अलग-अलग और भिन्न होने में यह एक बड़ी हिक्मत है, जिसके ज़रिये हर ज़माने हर तब्क़े के लोगों को सही इबादत व बन्दगी की हक़ीक़त से आगाह किया जाता है कि दर हक़ीक़त इबादत नाम है बन्दगी और इताअ़त व पैरवी का, जो नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात या ज़िक्र व तिलावत में सीमित नहीं और न ये चीज़ें अपनी ज़ात में मक़ासिद हैं, बल्कि इन सब का मक़सद सिर्फ़ एक है यानी अल्लाह तआ़ला के हुक्म का पालन। यही वजह है कि जिन वक़्तों में नमाज़ की मनाही फ़रमाई गयी है, उनमें नमाज़ कोई सवाब का काम नहीं बल्कि उल्टा गुनाह का वाजिब करने वाला है। ईदों के दिन वग़ैरह जिनमें रोज़ा रखना मना (वर्जित) है, तो उस वक़्त रोज़ा रखना गुनाह है। ज़िलहिज्जा के महीने की नवीं तारीख़ के अ़लावा किसी दिन किसी महीने में मैदाने अ़रफ़ात में जमा होकर दुआ़ व इबादत करना सवाब का काम नहीं, जबकि नवीं ज़िलहिज्जा में सबसे बड़ी इबादत यही है। इसी तरह तमाम दूसरी इबादतों का हाल है, जब तक उनके करने का हुक्म है तो वे इबादत हैं और जब और जिस हद पर उनको रोक दिया जाये तो वे भी हराम व नाजायज़ हो जाती हैं।

जाहिल अ़वाम इस हक़ीक़त से आगाह नहीं होते, जो इबादात उनकी आ़दतें बन जाती हैं बल्कि जिन क़ौमी रस्मों को वे इबादतें समझकर इख़्तियार कर लेते हैं, ख़ुदा और रसूल के स्पष्ट अहकाम को भी उनके पीछे नज़र-अन्दाज़ कर देते हैं। यहीं से बिदअ़तों और दीन में निकाली हुई बेबुनियाद चीज़ें दीन का हिस्सा बन जाती हैं, जो पिछली शरीअ़तों और किताबों में रद्दोबदल किये जाने का सबब हुई हैं। अल्लाह जल्ल शानुहू ने मुख़्तलिफ़ पैग़म्बरों पर मुख़्तलिफ़ किताबें

और शरीअ़तें नाज़िल फ़रमाकर इनसानों को यही सिखलाया है कि किसी एक अ़मल या एक क़िस्म की इबादत को मक़सूद न बना लें, बल्कि सही मायने में अल्लाह के फ़रमाँबरदार बन्दे बनें। और जिस वक़्त पिछले अ़मल को छोड़ देने का हुक्म हो फ़ौरन छोड़ दें, और जिस अ़मल के करने का इरशाद हो फ़ौरन उस पर अ़मल करने वाले हो जायें।

इसके अ़लावा शरीअ़तों में फ़र्क़ और भिन्नता की एक बड़ी हिक्मत यह भी है कि दुनिया के हर दौर और हर तब्क़े के इनसानों के मिज़ाज और तबीयतें अलग-अलग और भिन्न होती हैं। ज़माने का बदलाव और भिन्नता इनसानी तबीयतों पर बहुत ज़्यादा असर-अन्दाज़ होती है, अगर सब के लिये ऊपर के अहकाम एक ही कर दिये जायें तो इनसान बड़ी मुश्किल में मुब्तला हो जाये। इसलिये अल्लाह की हिक्मत का तक़ाज़ा यह हुआ कि हर ज़माने और हर मिज़ाज की भावनाओं की रियायत रखकर ऊपर के अहकाम में मुनासिब तब्दीली की जाये। यहाँ नासिख़ व मन्सूख़ (पहले हुक्म को निरस्त करने वाले और निरस्त होने वाले) के यह मायने नहीं होते कि हुक्म देने वाले को पहले हालात मालूम न थे तो एक हुक्म दे दिया, फिर नये हालात सामने आये तो उसको मन्सूख़ कर दिया। या पहले ग़फ़लत व ग़लती से कोई हुक्म सादिर कर दिया था फिर एहसास हुआ तो बदल दिया। बल्कि शरीअ़तों में नासिख़ व मन्सूख़ की मिसाल बिल्कुल एक हकीम या डॉक्टर के नुस्ख़े की मिसाल है, कि जिसमें दवायें धीरे-धीरे बदल जाती हैं। हकीम व डॉक्टर को पहले से यह अन्दाज़ा होता है कि तीन रोज़ इस दवा का इस्तेमाल करने के बाद मरीज़ पर यह कैफ़ियतें तारी हो जायेंगी उस वक़्त फ़ुलाँ दवा दी जायेगी, जब वह पिछला नुस्ख़ा मन्सूख़ करके दूसरा देता है तो यह कहना सही नहीं होता कि पिछला नुस्ख़ा ग़लत था, इसलिये मन्सूख़ किया गया। बल्कि हक़ीक़त यह होती है कि पिछले दिनों में वही नुस्ख़ा सही और ज़रूरी था, और बाद के हालात में यही दूसरा नुस्ख़ा सही और ज़रूरी है।

मज़कूरा आयतों में आये हुए स्पष्ट और ज़िमनी अहकाम का ख़ुलासा

अव्वल शुरू की आयतों से मालूम हुआ कि यहूदियों का मुक़द्दिमा जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने पेश हुआ था और आपने उसका फ़ैसला फ़रमाया तो यह फ़ैसला तौरात के क़ानून के मुताबिक़ था। इससे साबित हुआ कि पिछली शरीअ़तों में अल्लाह के जो अहकाम नाफ़िज़ थे जब तक क़ुरआन या अल्लाह की वही ने उनको मन्सूख़ (निरस्त) न किया हो, वह बदस्तूर बाक़ी रहते हैं, जैसा कि यहूदी लोगों के मुक़द्दिमों में क़िसास में बराबरी और ज़िना की सज़ा में संगसारी का हुक्म तौरात में भी था, फिर क़ुरआन ने भी उसको उसी हालत में बाक़ी रखा।

इसी तरह दूसरी आयत में ज़ख़्मों के क़िसास (बदले) का हुक्म जो तौरात के हवाले से बयान किया गया है, इस्लाम में भी यही हुक्म हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जारी

फ़रमाया। इसी बिना पर उलेमा-ए-इस्लाम की अक्सरियत के नज़दीक ज़ाब्ता यह है कि पिछली शरीअ़तों के वो अहकाम जिनको क़ुरआन ने मन्सूख़ न किया हो, वो हमारी शरीअ़त में भी नाफ़िज़ और अ़मल किये जाने के लिये ज़रूरी हैं। यही वजह है कि उक्त आयतों में तौरात वालों को तौरात के मुताबिक़ और इंजील वालों को इंजील के मुताबिक़ हुक्म देने और अ़मल करने का हुक्म दिया गया है, हालाँकि ये दोनों किताबें और इनकी शरीअ़तें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तशरीफ़ लाने के बाद मन्सूख़ (नाक़ाबिले अ़मल और ख़त्म) हो चुकी हैं। मतलब यह है कि तौरात व इंजील के जो अहकाम क़ुरआन ने मन्सूख़ नहीं किये वे आज भी अ़मल के लिये ज़रूरी हैं।

तीसरा हुक्म इन आयतों में यह साबित हुआ कि अल्लाह तआ़ला के नाज़िल किये हुए अहकाम के ख़िलाफ़ हुक्म देना कुछ सूरतों में कुफ़्र है जबकि एतिक़ाद में भी उसको हक़ न जानता हो, और कुछ सूरतों में ज़ुल्म व गुनाह है जबकि अ़क़ीदे की रू से तो उन अहकाम को हक़ मानता है मगर अ़मली तौर पर उसके ख़िलाफ़ करता है।

चौथा हुक्म इन आयतों में यह आया है कि रिश्वत लेना हर हाल में हराम है, और ख़ुसूसन अ़दालती फ़ैसले पर रिश्वत लेना तो और भी ज़्यादा सख़्त जुर्म है।

पाँचवाँ हुक्म इन आयतों से यह वाज़ेह हुआ कि तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी शरीअ़तें उसूल (बुनियादी बातों) में तो बिल्कुल मुत्तफ़िक़ और एकजुट हैं, मगर आंशिक तौर पर और ऊपर के अहकाम उनमें भी भिन्नता और इख़्तिलाफ़ है, और यह भिन्नता बड़ी हिक्मतों पर आधारित है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَ النَّصٰرٰۤى

اَوْلِيَآءَ ۘ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰۤى اَنْ تُصِيْبَنَا دَآئِرَةٌ ؕ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰى مَاۤ اَسَرُّوْا فِيْۤ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝ وَيَقُوْلُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَهٰۤؤُلَآءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ ۙ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ ؕ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَاَصْبَحُوْا خٰسِرِيْنَ ۝ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗۤ ۙ اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ ۫ يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ ؕ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝ اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ ۝ وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَاِنَّ حِزْبَ

اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ۝ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَكُمْ هُزُوًا وَّ
لَعِبًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَالْكُفَّارَ اَوْلِيَآءَ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ
مُّؤْمِنِيْنَ ۝ وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْقِلُوْنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तत्तख़िज़ुल् यहू-द वन्नसारा औलिया-अ। बअ़्ज़ुहुम् औलिया-उ बअ़्ज़िन्, व मंय्य-तवल्लहुम् मिन्कुम् फ़-इन्नहू मिन्हुम्, इन्नल्ला-ह ला यह्दिल्-क़ौमज़्ज़ालिमीन (51) फ़-तरल्लज़ी-न फ़ी क़ुलूबिहिम् म-रज़ुंय्युसारिअ़ू-न फ़ीहिम् यक़ूलू-न नख़्शा अन् तुसीबना दा-इ-रतुन्, फ़-असल्लाहु अंय्यअ्ति-य बिल्फ़त्हि औ अम्रिम् मिन् अिन्दिही फ़युस्बिहू अ़ला मा असर्रू फ़ी अन्फ़ुसिहिम् नादिमीन (52) व यक़ूलुल्लज़ी-न आमनू अ-हाउला-इल्लज़ी-न अक़्समू बिल्लाहि जह्-द ऐमानिहिम् इन्नहुम् ल-म-अ़कुम्, हबितत् अअ़्मालुहुम् फ़अस्बहू ख़ासिरीन (53) ▲ या अय्युहल्लज़ी-न आमनू मंय्यर्तद्-द मिन्कुम् अ़न् दीनिही फ़सौ-फ़ यअ्तिल्लाहु बिक़ौमिंय्युहिब्बुहुम् व

ऐ ईमान वालो! मत बनाओ यहूदियों और ईसाईयों को दोस्त, वे आपस में दोस्त हैं एक दूसरे के, और जो कोई तुम में से दोस्ती करे उनसे तो वह उन्हीं में है। अल्लाह हिदायत नहीं करता ज़ालिम लोगों को। (51) अब तू देखेगा उनको जिनके दिल में बीमारी है, दौड़कर मिलते हैं उन में, कहते हैं कि हमको डर है कि न आ जाये हम पर गर्दिश ज़माने की, सो क़रीब है कि अल्लाह जल्द ज़ाहिर फ़रमा दे फ़तह या कोई हुक्म अपने पास से तो लगें अपने जी की छुपी बात पर पछताने। (52) और कहते हैं मुसलमान क्या ये वही लोग हैं जो कसमें खाते थे अल्लाह की ताकीद से, कि हम तुम्हारे साथ हैं, बरबाद गये उनके अमल, फिर रह गये नुक़सान में। (53) ▲ ऐ ईमान वालो! जो कोई तुम में फिरेगा अपने दीन से तो अल्लाह जल्द ही लायेगा ऐसी क़ौम को कि अल्लाह उनको चाहता है और वे उसको चाहते हैं, नर्म-दिल हैं मुसलमानों पर, ज़बरदस्त हैं काफ़िरों पर, लड़ते हैं अल्लाह की राह में, और डरते नहीं किसी के इल्ज़ाम से, यह फ़ज़्ल है अल्लाह का

युहिब्बूनहू अज़िल्लतिन् अ़लल्-मुअ्मिनी-न अअिज़्ज़तिन् अ़लल्-काफ़िरी-न युजाहिदू-न फ़ी सबीलिल्लाहि व ला यख़ाफ़ू-न लौम-त लाइमिन्, ज़ालि-क फ़ज़्लुल्लाहि युअ्तीहि मंय्यशा-उ, वल्लाहु वासिअुन् अ़लीम (54)	देगा जिसको चाहे, और अल्लाह कशाइश (आसानियाँ और वुस्अ़त) करने वाला है ख़बर रखने वाला। (54)
इन्नमा वलिय्युकुमुल्लाहु व रसूलुहू वल्लज़ी-न आमनुल्लज़ी-न युक़ीमूनस्सला-त व युअ्तूनज़्ज़का-त व हुम् राकिअ़ून (55)	तुम्हारा रफ़ीक़ (साथी) तो वही अल्लाह है और उसका रसूल और जो ईमान वाले हैं जो कि क़ायम हैं नमाज़ पर और देते हैं ज़कात और आ़जिज़ी करने वाले हैं। (55)
व मंय्य-तवल्लल्ला-ह व रसूलहू वल्लज़ी-न आमनू फ़-इन्-न हिज़्बल्लाहि हुमुल्-ग़ालिबून (56) ✿	और जो कोई दोस्त रखे अल्लाह और उसके रसूल को और ईमान वालों को तो अल्लाह की जमाअ़त सब पर ग़ालिब है। (56) ✿
या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तत्तख़िज़ुल्लज़ीनत्त-ख़ज़ू दीनकुम् हुज़ुवंव्-व लअिबम् मिनल्लज़ी-न ऊतुल्-किता-ब मिन् क़ब्लिकुम् वल्कुफ़्फ़ा-र औलिया-अ वत्तक़ुल्ला-ह इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (57)	ऐ ईमान वालो! मत बनाओ उन लोगों को (दोस्त) जो ठहराते हैं तुम्हारे दीन को हंसी और खेल, वे लोग जो किताब दिये गये तुम से पहले, और न काफ़िरों को अपना दोस्त (बनाओ), और डरो अल्लाह से अगर हो तुम ईमान वाले। (57)
व इज़ा नादैतुम् इलस्सलातित्त-ख़ज़ूहा हुज़ुवंव्-व लअिबन्, ज़ालि-क बिअन्नहुम् क़ौमुल्-ला यअ्क़िलून (58)	और जब तुम पुकारते हो नमाज़ के लिये तो वे ठहराते (बनाते) हैं उसको हंसी और खेल, यह इस वास्ते कि वे लोग बेअ़क़्ल हैं। (58)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बयान हुई आयतों में तीन अहम उसूली (बुनियादी) मज़ामीन का बयान है, जो मुसलमानों

की सामूहिक और मिल्ली एकता और एकजुट होने के बुनियादी उसूल हैं:

अव्वल यह कि मुसलमान ग़ैर-मुस्लिमों से रवादारी, हमदर्दी, ख़ैरख़्वाही, अदल व इन्साफ़ और एहसान व सुलूक सब कुछ कर सकते हैं, और ऐसा करना चाहिये कि उनको इसकी तालीम दी गयी है, लेकिन उनसे ऐसी गहरी दोस्ती और मेलजोल जिससे इस्लाम के विशेष और खुसूसी निशानात गड-मड हो जायें, इसकी इजाज़त नहीं। यही वह मसला है जो "तर्के मवालात" के नाम से परिचित है।

दूसरा मज़मून यह है कि अगर किसी वक़्त किसी जगह मुसलमान इसी बुनियादी उसूल से हटकर ग़ैर-मुस्लिमों से ऐसा मेलजोल कर लें तो यह न समझें कि इससे इस्लाम को कोई नुक़सान पहुँचेगा। क्योंकि इस्लाम की हिफ़ाज़त और बाक़ी रखने की ज़िम्मेदारी हक़ तआ़ला ने ली है, इसको कोई नहीं मिटा सकता। अगर कोई क़ौम बिरट जाये और मान लो कि शरीअ़त की हदों को तोड़कर इस्लाम ही को छोड़ बैठे तो अल्लाह तआ़ला किसी दूसरी क़ौम को खड़ा कर देंगे जो इस्लाम के उसूल व क़ानून को क़ायम करेगी।

तीसरा मज़मून यह है कि जब एक तरफ़ नकारात्मक पहलू मालूम हो गया तो मुसलमान की गहरी दोस्ती तो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल और उन पर ईमान लाने वालों ही के साथ हो सकती है। यह मुख़्तसर बयान है उन मज़ामीन का जो ऊपर ज़िक्र हुई पाँच आयतों में बयान हुए हैं। अब इन आयतों की मुख़्तसर तफ़सीर देखियेः

ऐ ईमान वालो! तुम (मुनाफ़िक़ों की तरह) यहूदियों और ईसाईयों को (अपना) दोस्त मत बनाना। वे (खुद ही) एक दूसरे के दोस्त हैं (यानी यहूदी यहूदी आपस में और ईसाई ईसाई आपस में। मतलब यह है कि दोस्ती होती है मुनासबत से, सो उनमें आपस में तो मुनासबत है, मगर तुम में और उनमें क्या मुनासबत) और (जब मज़कूरा जुमले से मालूम हुआ कि दोस्ती होती है मुनासबत और ताल्लुक़ होने से तो) जो शख़्स तुम में से उनके साथ दोस्ती करेगा बेशक वह (किसी ख़ास मुनासबत के एतिबार से) उन्हीं में से होगा, (और अगरचे यह बात ज़ाहिर है लेकिन) बेशक अल्लाह तआ़ला (इस बात की) समझ नहीं देते उन लोगों को जो (काफ़िरों से दोस्ती कर करके) अपना नुक़सान कर रहे हैं (यानी दोस्ती में मशग़ूल होने की वजह से यह बात उनकी समझ ही में नहीं आती, और चूँकि ऐसे लोग इस बात को नहीं समझते) इसी लिए (ऐ देखने वाले) तुम ऐसे लोगों को जिनके दिल में (निफ़ाक़ का) रोग है देखते हो कि दौड़-दौड़कर उन (काफ़िरों) में घुसते हैं (और कोई मलामत करे तो बहाने बाज़ी और बातें बनाने के लिये यूँ) कहते हैं कि (हमारा मिलना उनके साथ दिल से नहीं, बल्कि दिल से तो हम तुम्हारे साथ हैं, सिर्फ़ एक मस्लेहत से उनके साथ मिलते हैं, वह यह कि) हमको अन्देशा है कि (शायद ज़माने के बदलते हालात से) हम पर कोई हादसा पड़ जाए (जैसे सूखा है, तंगी है, और ये यहूदी हमारे साहूकार हैं, इनसे क़र्ज़ उधार मिल जाता है, अगर ज़ाहिरी मेलजोल ख़त्म कर देंगे तो वक़्त पर हमको तकलीफ़ होगी। दिखाने के लिये 'नख़्शा अन् तुसीबना दाइ-रतुन' का यह मतलब लेते थे, लेकिन दिल में दूसरा मतलब लेते कि शायद आख़िर में मुसलमानों पर काफ़िरों के ग़ालिब आ

जाने से फिर हमको उनकी ज़रूरत पड़े, इसलिये उनसे दोस्ती रखनी चाहिये)। सो क़रीब ही उम्मीद (यानी वायदा) है कि अल्लाह तआ़ला (मुसलमानों की) कामिल फ़तह (उन काफ़िरों के मुक़ाबले में जिनसे ये दोस्ती कर रहे हैं) फ़रमा दे (जिसमें मुसलमानों की कोशिश का भी दख़ल होगा) या किसी और बात का ख़ास अपनी तरफ़ से ज़हूर फ़रमा दे, यानी उनके निफ़ाक़ को मुतैयन करके वही के ज़रिये सार्वजनिक रूप से ज़ाहिर फ़रमा दें जिसमें मुसलमानों की तदबीर का बिल्कुल भी दख़ल नहीं। मतलब यह कि मुसलमानों की फ़तह और इनका पर्दा खुलना दोनों बातें क़रीब ही होने वाली हैं) फिर (उस वक़्त) अपने (पिछले) छुपे हुए दिली ख़्यालात पर शर्मिन्दा होंगे (कि हम क्या समझते थे कि काफ़िर ग़ालिब आयेंगे और यह क्या उल्टा हो गया। एक शर्मिन्दगी तो अपने ख़्याल की ग़लती पर जो कि एक तबई चीज़ है, दूसरी शर्मिन्दगी अपने निफ़ाक़ पर जिसकी बदौलत आज रुस्वा हुए। 'मा असर्रू' में ये दोनों दाख़िल हैं। और यह तीसरी शर्मिन्दगी कि काफ़िरों के साथ दोस्ती करना बेकार ही गया और मुसलमानों से भी बुरे बने, चूँकि दोस्ती 'मा असर्रू' (छुपी बात) पर आधारित थी, लिहाज़ा इन दो शर्मिन्दगियों के ज़िक्र से यह तीसरी शर्मिन्दगी बिना स्पष्ट ज़िक्र किये ख़ुद ही समझ में आ गयी)।

और (जब उस फ़तह के ज़माने में इन लोगों का निफ़ाक़ भी खुल जायेगा तो आपस में) मुसलमान लोग (ताज्जुब से) कहेंगे- (अरे) क्या ये वही लोग हैं कि बड़े मुबालग़े से "यानी बढ़-बढ़कर" (हमारे सामने) अल्लाह तआ़ला की क़समें खाया करते थे कि हम (दिल से) तुम्हारे साथ हैं, (यह तो कुछ और ही साबित हुआ। अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि) इन लोगों की सारी कार्यवाहियाँ (कि दोनों फ़रीक़ों का भला रहना चाहते थे) बेकार गईं, जिससे (दोनों तरफ़ से) नाकाम रहे (क्योंकि काफ़िर तो मग़लूब हो गये, उनका साथ देना बिल्कुल बेकार है और मुसलमानों के सामने इनकी क़लई खुल गयीं, उनसे अब भला बनना दुश्वार है, यह तो वही मिसाल हो गयी कि "न इधर के रहे और न उधर के"।

ऐ ईमान वालो! (यानी जो लोग इस आयत के नाज़िल होने के वक़्त ईमान वाले हैं) जो शख़्स तुममें से अपने (इस) दीन से फिर जाए तो (इस्लाम का कोई नुक़सान नहीं, क्योंकि इस्लामी ख़िदमात अन्जाम देने के लिये) अल्लाह बहुत जल्दी (उनकी जगह) ऐसी क़ौम पैदा कर देगा जिससे उसको (यानी अल्लाह तआ़ला को) मुहब्बत होगी और उनको उससे (यानी अल्लाह तआ़ला से) मुहब्बत होगी। वे मुसलमानों पर मेहरबान होंगे और काफ़िरों पर तेज़ होंगे (कि उनसे) जिहाद करते होंगे अल्लाह की राह में, और (दीन और जिहाद के मुक़द्दमे में) वे लोग किसी मलामत करने वाले की मलामत का अन्देशा न करेंगे (जैसे कि मुनाफ़िक़ीन का हाल है कि दबे-दबाये जिहाद के लिये जाते थे, मगर अन्देशा लगा रहता था कि काफ़िर जिनसे दिल में दोस्ती है मलामत करेंगे, या इत्तिफ़ाक़ से जिनके मुक़ाबले में जिहाद है वही अपने दोस्त और अज़ीज़ हों तो सब देखते सुनते बुरा-भला कहेंगे कि ऐसों को मारने गये थे)। ये (ज़िक्र हुई सिफ़ात) अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल है जिसको चाहें अ़ता फ़रमाएँ और अल्लाह तआ़ला बड़ी वुस्अ़त वाले हैं (कि अगर चाहें तो सब को ये सिफ़तें दे सकते हैं, लेकिन) बड़े इल्म वाले (भी)

हैं (उनके इल्म में जिसको देना मस्लेहत होता है उसको देते हैं)।

तुम्हारे दोस्त तो (जिनसे तुमको दोस्ती रखनी चाहिये) अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) और ईमान वाले लोग हैं जो कि इस हालत से नमाज़ की पाबन्दी रखते हैं और ज़कात देते हैं कि उन (के दिलों) में ख़ुशूअ़ "यानी आ़जिज़ी और गिड़गिड़ाना" होता है। (यानी अ़कीदे, अख़्लाक़ और बदनी व माली आमाल सब के जामे हैं) और जो शख़्स (ज़िक्र हुए मज़मून के मुवाफ़िक़) अल्लाह से दोस्ती रखेगा और उसके रसूल से और ईमान वाले लोगों से, सो (वह अल्लाह के गिरोह में दाख़िल हो गया और) अल्लाह का गिरोह निःसंदेह ग़ालिब है (और काफ़िर लोग मग़लूब हैं। ग़ालिब से मग़लूब का बनाकर रखना और दोस्ती की फ़िक्र करना पूरी तरह नामुनासिब है)।

ऐ ईमान वालो! जिन लोगों को तुमसे पहले (आसमानी) किताब (यानी तौरात व इंजील) मिल चुकी है (मुराद यहूदी व ईसाई हैं) जो ऐसे हैं कि जिन्होंने तुम्हारे दीन को हंसी और खेल बना रखा है (जो निशानी है झुठलाने की), उनको और (इसी तरह) दूसरे काफ़िरों को (भी जैसे मुश्रिक लोग वग़ैरह) दोस्त मत बनाओ, (क्योंकि असल सबब कुफ़्र व झुठलाना तो दोनों में मौजूद है) और अल्लाह तआ़ला से डरो अगर तुम ईमान वाले हो (यानी ईमान वाले तो हो ही पस जिस चीज़ से अल्लाह तआ़ला ने मना किया है उसको मत करो)। और (जैसे दीन के उसूल के साथ हंसी मज़ाक़ करते हैं इसी तरह अहकाम के साथ भी। चुनाँचे) जब तुम नमाज़ के लिए (अज़ान के ज़रिये से) ऐलान करते हो तो वे लोग (तुम्हारी) उस (इबादत) के साथ (जिसमें अज़ान और नमाज़ दोनों आ गयीं) हंसी और खेल करते हैं, (और) यह (हरकत) इस सबब से है कि वे लोग ऐसे हैं कि बिल्कुल अ़क्ल नहीं रखते (वरना हक़ बात को समझते और उसके साथ हंसी व दिल्लगी न करते)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में मुसलमानों को हुक्म दिया गया है कि वे यहूदियों व ईसाईयों से मवालात (यानी गहरी दोस्ती) न करें जैसा कि आ़म ग़ैर-मुस्लिमों का और यहूदियों व ईसाईयों का ख़ुद यही दस्तूर है कि वे गहरी दोस्ती को सिर्फ़ अपनी क़ौम के लिये मख़्सूस रखते हैं, मुसलमानों से यह मामला नहीं करते। फिर अगर किसी मुसलमान ने इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी करके किसी यहूदी या ईसाई से गहरी दोस्ती कर ली तो वह इस्लाम की नज़र में बजाय मुसलमान के उसी क़ौम का फ़र्द शुमार होने के क़ाबिल है।

शाने नुज़ूल

तफ़सीर के इमाम अ़ल्लामा इब्ने जरीर ने हज़रत इक्रिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान फ़रमाया है कि यह आयत एक ख़ास वाक़िए के बारे में नाज़िल हुई है। वह यह कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा में तशरीफ़ लाने के बाद उसके आस-पास के यहूदियों व ईसाईयों से एक समझौता इस पर कर लिया था कि वे मुसलमानों के ख़िलाफ़ न

खुद जंग करेंगे, न किसी जंग करने वाली क़ौम का सहयोग करेंगे, बल्कि मुसलमानों के साथ मिलकर उसका मुक़ाबला करेंगे। इसी तरह मुसलमान न उन लोगों से जंग करेंगे न उनके ख़िलाफ़ किसी क़ौम की इमदाद करेंगे बल्कि मुख़ालिफ़ का मुक़ाबला करेंगे। कुछ अ़रसे तक यह समझौता दोनों पक्षों की तरफ़ से क़ायम रहा, लेकिन यहूदी अपनी साज़िशी फ़ितरत और इस्लाम विरोधी तबीयत की वजह से इस समझौते पर ज़्यादा क़ायम न रह सके और मुसलमानों के ख़िलाफ़ मक्का के मुश्रिकों से साज़िश करके उनको अपने क़िले में बुलाने के लिये ख़त लिख दिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर जब इस साज़िश का भेद खुला तो आपने उनके मुक़ाबले के लिये मुजाहिदीन का एक दस्ता भेज दिया। बनू क़ुरैज़ा के ये यहूदी एक तरफ़ तो मक्का के मुश्रिकों से यह साज़िश कर रहे थे और दूसरी तरफ़ मुसलमानों में घुसे हुए बहुत से मुसलमानों से दोस्ती के समझौते किये हुए थे, और इस तरह मुसलमानों के ख़िलाफ़ मुश्रिकों के लिये जासूसी का काम अन्जाम देते थे। इसलिये यह मज़कूरा आयत नाज़िल हुई जिसने मुसलमानों को यहूदियों व ईसाईयों की गहरी दोस्ती से रोक दिया, ताकि मुसलमानों की ख़ास ख़बरें मालूम न कर सकें। उस वक़्त कुछ सहाबा-ए-किराम हज़रत उबादा बिन सामित वग़ैरह ने तो खुले तौर पर उन लोगों से अपना समझौता और दोस्ती का ताल्लुक़ ख़त्म करने का ऐलान कर दिया, और कुछ लोग जो मुनाफ़िक़ाना तौर पर मुसलमानों से मिले हुए थे या अभी ईमान उनके दिलों में अच्छी तरह जमा नहीं था, उन लोगों से ताल्लुक़ ख़त्म कर देने में यह ख़तरा महसूस करते थे कि मुम्किन है कि मुश्रिकों और यहूदियों की साज़िश कामयाब हो जाये और मुसलमान मग़लूब हो जायें तो हमें इन लोगों से भी ऐसा मामला रखना चाहिये कि उस वक़्त हमारे लिये मुसीबत न हो जाये। अ़ब्दुल्लाह बिन उबई बिन सलूल ने इसी बिना पर कहा कि उन लोगों से ताल्लुक़ तोड़ने में तो मुझे ख़तरा है, इसलिये मैं ऐसा नहीं कर सकता। इस पर दूसरी आयत नाज़िल हुईः

فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَآئِرَةٌ.

यानी दोस्ती ख़त्म करने का शरई हुक्म सुनकर वे लोग जिनके दिलों में निफ़ाक़ का रोग है अपने काफ़िर दोस्तों की तरफ़ दौड़ने लगे और कहने लगे कि उनसे ताल्लुक़ ख़त्म करने में तो हमारे लिये ख़तरे हैं।

अल्लाह जल्ल शानुहू ने उनके जवाब में फ़रमायाः

فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰى مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ.

यानी ये लोग तो इस ख़्याल में हैं कि मुश्रिक और यहूदी लोग मुसलमानों पर ग़ालिब आ जायेंगे, मगर अल्लाह तआ़ला फ़ैसला फ़रमा चुके हैं कि ऐसा नहीं होगा, बल्कि क़रीब है कि मक्का फ़तह हो जाये, या मक्का फ़तह होने से पहले अल्लाह तआ़ला इन मुनाफ़िक़ों के निफ़ाक़ (यानी दिल से मुसलमान न होने) का पर्दा चाक करके इनको रुस्वा कर दे। तो उस वक़्त ये लोग अपने छुपे ख़्यालात पर शर्मिन्दा होंगे।

तीसरी आयत में इसकी और अधिक तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई कि जब मुनाफ़िक़ों के निफ़ाक़ (दिल से मोमिन न होने) का पर्दा चाक होगा और उनकी दोस्ती के दावों और क़समों की हक़ीक़त खुलेगी तो मुसलमान हैरत में रह जायेंगे और कहेंगे कि क्या ये वही हैं जो हमसे अल्लाह तआ़ला की गाढ़ी क़समें खाकर दोस्ती का दावा करते थे और आज इनका यह हश्र हुआ कि इनके सब इस्लामी आमाल जो महज़ दिखलावे के लिये किया करते थे ज़ाया हो गये। और अल्लाह जल्ल शानुहू ने इन आयतों में जो मक्का के फ़तह होने और मुनाफ़िक़ों की रुस्वाई का ज़िक्र फ़रमाया है वह कुछ दिन के बाद सब ने आँखों से देख लिया।

चौथी आयत में यह बतलाया गया है कि ग़ैर-मुस्लिमों के साथ गहरी दोस्ती और ज़्यादा मेलजोल की जो मनाही की गयी है यह ख़ुद मुसलमानों ही की बेहतरी की ख़ातिर है, वरना इस्लाम वह दीने हक़ है जिसकी हिफ़ाज़त का ज़िम्मा हक़ तआ़ला ने ख़ुद लिया है, किसी फ़र्द या जमाअ़त की टेढ़ी चाल या नाफ़रमानी तो अपनी जगह है, अगर मुसलमानों का कोई फ़र्द या जमाअ़त सचमुच इस्लाम ही को छोड़ बैठे और बिल्कुल ही मुर्तद (बेदीन) होकर ग़ैर-मुस्लिमों में मिल जाये, इससे भी इस्लाम को कोई नुक़सान नहीं पहुँच सकता। क्योंकि क़ादिरे मुतलक़ जो इसकी हिफ़ाज़त का ज़िम्मेदार है, फ़ौरन कोई दूसरी क़ौम अ़मली मैदान में ले आयेगा जो अल्लाह तआ़ला के दीन की हिफ़ाज़त और प्रसार के फ़राईज़ अन्जाम देगी। उसके काम न किसी ज़ात पर निर्भर हैं न किसी बड़ी से बड़ी जमाअ़त या इदारे पर। वह जब चाहते हैं तो तिनकों से शहतीर का काम ले लेते हैं, वरना शहतीर पड़े खाद होते रहते हैं, किसी ने ख़ूब कहा है:

إِنَّ الْمَقَادِيرَ إِذَا سَاعَدَتْ أَلْحَقَتِ الْعَاجِزَ بِالْقَادِرِ

"यानी तक़दीरे इलाही जब किसी की मददगार हो जाती है तो एक आ़जिज़ व बेकार से क़ादिर व ताक़तवर का काम ले लेती है।"

इस आयत में जहाँ यह ज़िक्र फ़रमाया कि मुसलमान अगर मुर्तद हो जायें तो परवाह नहीं, अल्लाह तआ़ला एक दूसरी जमाअ़त खड़ी कर देगा, वहाँ इस पाकबाज़ जमाअ़त के कुछ गुण भी बयान फ़रमाते हैं कि यह जमाअ़त ऐसे गुणों वाली होगी, दीन की ख़िदमत करने वालों को इन गुणों का ख़्याल रखना चाहिये, क्योंकि आयत से मालूम हुआ कि इन गुणों व आ़दतों को अपने अन्दर रखने वाले लोग अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मक़बूल व महबूब हैं।

उनकी पहली सिफ़त (गुण) क़ुरआने करीम ने यह बयान फ़रमाई है कि अल्लाह तआ़ला उनसे मुहब्बत रखेगा और वे अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत रखेंगे। इस सिफ़त के दो हिस्से हैं- एक उन लोगों की मुहब्बत अल्लाह तआ़ला के साथ, यह तो किसी न किसी दर्जे में इनसान के इख़्तियार में समझी जा सकती है कि एक इनसान को किसी के साथ अगर तबई मुहब्बत न हो तो कम से कम अ़क़्ली मुहब्बत अपने अ़ज़्म व इरादे के ताबे रख सकता है, और तबई मुहब्बत भी अगरचे इख़्तियार में नहीं मगर उसके भी असबाब इख़्तियारी हैं। मिसाल के तौर पर अल्लाह तआ़ला की बड़ाई, जलाल, कामिल क़ुदरत और इनसान पर उसके इख़्तियारात व इनामात का ध्यान और तसव्वुर लाज़िमी तौर पर इनसान के दिल में अल्लाह तआ़ला की तबई मुहब्बत भी

पैदा कर देता है।

लेकिन दूसरा भाग यानी अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत उन लोगों के साथ होगी, इसमें तो बज़ाहिर यह मालूम होता है कि इनसान के इख़्तियार व अ़मल का कोई दख़ल इसमें नहीं, और जो चीज़ हमारी ताक़त व इख़्तियार से बाहर है उसे सुनाने और बतलाने का भी बज़ाहिर कोई हासिल नहीं निकलता। लेकिन क़ुरआने करीम की दूसरी आयतों में ग़ौर करें तो मालूम होगा कि मुहब्बत के इस हिस्से के असबाब भी इनसान के इख़्तियार में हैं, अगर वह उन असबाब का इस्तेमाल करे तो अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत उसके साथ लाज़िमी होगी। और वे असबाब क़ुरआन पाक की इस आयतः

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِیْ یُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ.

(सूरः आले इमरान की आयत 31) में ज़िक्र हुए हैं। यानी ऐ रसूल! आप लोगों को बतला दीजिए कि अगर तुमको अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत है तो मेरी पैरवी करो, इसका नतीजा यह होगा कि अल्लाह तआ़ला तुमसे मुहब्बत फ़रमाने लगेंगे।

इस आयत से मालूम हुआ कि जो शख़्स यह चाहे कि अल्लाह तआ़ला उससे मुहब्बत फ़रमायें उसको चाहिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत को अपनी ज़िन्दगी का ओढ़ना बिछौना बनाने और ज़िन्दगी के हर क्षेत्र और हर काम में सुन्नत की पैरवी की पाबन्दी करे, तो अल्लाह तआ़ला का वायदा है कि वह उससे मुहब्बत फ़रमायेंगे। और इसी आयत से यह भी मालूम हो गया कि कुफ़्र व बेदीनी का मुक़ाबला वही जमाअ़त कर सकेगी जो सुन्नत की पैरवी करने वाली हो। न शरीअ़त के अहकाम की तामील में कोताही करे और न अपनी तरफ़ से ख़िलाफ़े सुन्नत आमाल और बिद्अ़तों को जारी करे।

दूसरी सिफ़त इस जमाअ़त की यह बतलाई गयी है किः

اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ.

इसमें लफ़्ज़ अज़िल्लतुन लुग़त की किताब क़ामूस के मुताबिक़ ज़लील या ज़लूल दोनों की जमा (बहुवचन) हो सकती है। ज़लील के मायने अ़रबी ज़बान में वही हैं जो उर्दू वग़ैरह में परिचित हैं, और ज़लूल के मायने हैं नर्म और आसानी से क़ाबू में आने वाला। मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक इस जगह यही मायने मुराद हैं, यानी ये लोग मुसलमानों के सामने नर्म होंगे, अगर किसी मामले में इख़्तिलाफ़ (मतभेद व विवाद) भी हुआ तो आसानी से क़ाबू में आ जायेंगे, झगड़ा छोड़ देंगे, अगरचे वे अपने झगड़े में हक़ पर भी हों, जैसा कि एक सही हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया हैः

انا زعیم ببیت فی ربض الجنة لمن ترك المراء وهو محق.

यानी "मैं उस शख़्स को जन्नत के बीचों-बीच घर दिलवाने की ज़िम्मेदारी लेता हूँ जो हक़ पर होने के बावजूद झगड़ा छोड़ दे।"

तो हासिल इस लफ़्ज़ का यह हुआ कि ये लोग मुसलमानों से अपने हुक़ूक़ और मामलात में

कोई झगड़ा न रखेंगे। दूसरा लफ़्ज़ 'अअ़िज़्ज़तिन अ़लल् काफ़िरी-न' आया। इसमें भी अ-इज़्ज़त अ़ज़ीज़ की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने ग़ालिब, ताक़तवर और सख़्त के आते हैं। मुराद यह है कि ये लोग अल्लाह और उसके दीन के मुख़ालिफ़ों के मुक़ाबले में सख़्त और मज़बूत हैं और वे इन पर क़ाबू न पा सकेंगे।

और दोनों जुमलों को मिलाने का हासिल यह निकल आया कि यह एक ऐसी क़ौम होगी जिसकी मुहब्बत व नफ़रत और दोस्ती व दुश्मनी अपनी ज़ात और ज़ाती हुक़ूक़ व मामलात के बजाय सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल और उसके दीन की ख़ातिर होगी। इसी लिये उनकी लड़ाई का रुख़ अल्लाह व रसूल के फ़रमाँबरदारों की तरफ़ नहीं बल्कि उसके दुश्मनों और नाफ़रमानों की तरफ़ होगा। यही मज़मून है सूरः फ़तह की इस आयत काः

اَشِدَّآءُ عَلَى الْكُفَّارِ رُحَمَآءُ بَيْنَهُمْ

कि वे काफ़िरों पर सख़्त और आपस में मेहरबान व नर्म हैं।

पहली सिफ़त का हासिल हुक़ूक़ की तकमील (पूरा करना) था, और दूसरी सिफ़त का हासिल बन्दों के हुक़ूक़ और मामलात में एक दरमियानी रास्ता इख़्तियार करना है। तीसरी सिफ़त इस जमाअ़त की यह बयान फ़रमाईः

يُجَاهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

यानी ये लोग दीने हक़ के फैलाने और उसको बुलन्द करने के लिये जिहाद करते रहेंगे। इसका हासिल यह है कि कुफ़्र व बेदीनी (इस्लाम से फिरने) के मुक़ाबले के लिये सिर्फ़ परिचित क़िस्म की इबादत-गुज़ारी और नर्म व सख़्त होना काफ़ी नहीं, बल्कि यह भी ज़रूरी है कि दीन को मज़बूत करने का जज़्बा भी हो। इसी जज़्बे की तकमील के लिये चौथी सिफ़त यह बतलाई गयीः

وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ

यानी दीन को क़ायम करने और हक़ के कलिमे को ऊँचा करने की कोशिश में ये लोग किसी मलामत (किसी के बुरा-भला कहने) की परवाह न करेंगे।

ग़ौर किया जाये तो मालूम होगा कि किसी तहरीक को चलाने वाले की राह में दो क़िस्म की चीज़ें बाधा हुआ करती हैं- एक मुख़ालिफ़ क़ुव्वत का ज़ोर, दूसरे अपनों के लान-तान और बुरा-भला कहना। और तजुर्बा गवाह है कि जो लोग तहरीक चलाने के लिये इरादा लेकर खड़े होते हैं और अक्सर हालात में मुख़ालिफ़ क़ुव्वत से तो मग़लूब नहीं होते, क़ैद व बन्द और ज़ख़्म व ख़ून सब कुछ बरदाश्त कर लेते हैं, लेकिन अपनों के तानों और बुरा-भला कहने से बड़े-बड़े पुख़्ता इरादे वालों के क़दमों में लड़खड़ाहट आ जाती है। शायद इसी लिये हक़ तआ़ला ने इस जगह इसकी अहमियत ज़ाहिर करने के लिये इस पर बस फ़रमाया, कि ये लोग किसी की मलामत की परवाह किये बग़ैर अपना जिहाद जारी रखते हैं।

आयत के आख़िर में यह भी बतला दिया कि ये सिफ़तें और अच्छे गुण अल्लाह तआ़ला ही

के इनाम हैं, वही जिसको चाहते हैं अता फ़रमाते हैं, इनसान सिर्फ़ अपनी कोशिश व अमल से अल्लाह के फ़ज़्ल व मेहरबानी के बग़ैर इनको हासिल नहीं कर सकता।

आयत के अलफ़ाज़ की वज़ाहत से यह स्पष्ट हो चुका कि अगर मुसलमानों में कुछ लोग मुर्तद भी हो (इस्लाम से फिर) जायें तो दीने इस्लाम को कोई नुक़सान न पहुँचेगा, बल्कि इसकी हिफ़ाज़त व हिमायत के लिये अल्लाह जल्ल शानुहू एक बुलन्द अख़्लाक़ व आमाल वाली जमाअत को खड़ा कर देंगे।

मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने फ़रमाया है कि यह आयत दर हक़ीक़त आने वाले फ़ितने की भविष्यवाणी और उसका हिम्मत के साथ मुक़ाबला करके कामयाब होने वाली जमाअत के लिये ख़ुशख़बरी है। आने वाला वह फ़ितना-ए-इर्तिदाद (यानी जो सच्चे दिल से इस्लाम नहीं लाये थे उनका इस्लाम से फिर जाना) है जिसके कुछ जरासीम तो हुज़ूरे पाक के दौर के बिल्कुल आख़िरी दिनों में फैलने लगे थे, और फिर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद आम होकर पूरे अरब ख़ित्ते में इसका तूफ़ान खड़ा हो गया। और ख़ुशख़बरी पाने वाली वह जमाअत सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम की है, जिसने पहले ख़लीफ़ा हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अन्हु के साथ मिलकर इस फ़ितना-ए-इर्तिदाद का मुक़ाबला किया।

वाक़िआत ये थे कि सबसे पहले तो मुसैलमा-ए-कज़्ज़ाब ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नुबुव्वत में शरीक होने का दावा किया, और यहाँ तक जुर्रत की कि आपके क़ासिदों को यह कहकर वापस कर दिया कि अगर तब्लीग़ व सुधार की मस्लेहत के सबब यह दस्तूर आम न होता कि क़ासिदों और नुमाईन्दों को क़त्ल नहीं किया जाता, तो मैं तुम्हें क़त्ल कर देता। मुसैलमा अपने दावे में कज़्ज़ाब (झूठा) था, फिर आपको उसके ख़िलाफ़ जिहाद का मौक़ा नहीं मिला, यहाँ तक कि आपकी वफ़ात हो गयी।

इसी तरह यमन में क़बीला मुज़्जज के सरदार अस्वद अनसी ने अपनी नुबुव्वत का ऐलान कर दिया। रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी तरफ़ से मुक़र्रर किये हुए यमन के हाकिम को उसका मुक़ाबला करने का हुक्म दे दिया, मगर जिस रात में उसको क़त्ल किया गया उसके अगले दिन ही हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात हो गयी। सहाबा-ए-किराम को इसकी ख़बर रबीउल-अव्वल के आख़िर में पहुँची। इसी तरह का वाक़िआ क़बीला बनू असद में पेश आया, कि उनका सरदार तलीहा बिन ख़ुवैलद ख़ुद अपनी नुबुव्वत का दावेदार बन गया।

ये तीन क़बीलों की जमाअतें तो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात की बीमारी ही में मुर्तद हो (इस्लाम से फिर) चुकी थीं। आपकी वफ़ात की ख़बर ने इस फ़ितना-ए-इर्तिदाद (इस्लाम को छोड़ने और बेदीन होने की वबा) को एक तूफ़ानी शक्ल में मुन्तक़िल कर दिया। अरब के सात क़बीले विभिन्न स्थानों पर इस्लाम और उसकी हुकूमत से विमुख हो गये और ख़लीफ़ा-ए-वक़्त हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु को इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ ज़कात अदा करने से इनकार कर दिया।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद मुल्क व मिल्लत की ज़िम्मेदारी ख़लीफ़ा-ए-अव्वल हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु पर आन पड़ी। एक तरफ़ इन हज़रात पर इस ज़बरदस्त हादसे (यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात और जुदाई) का जान को घुला देने वाला सदमा और दूसरी तरफ़ ये फ़ितनों और बग़ावतों के सैलाब। हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद जो सदमा मेरे वालिद हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ पर पड़ा अगर वह मज़बूत पहाड़ों पर भी पड़ जाता तो वे टुकड़े-टुकड़े हो जाते। मगर अल्लाह तआ़ला ने आपको सब्र व जमाव का वह आला मुक़ाम अ़ता फ़रमाया था कि तमाम आफ़तों व मुसीबतों का पूरी मज़बूती व हिम्मत के साथ मुक़ाबला किया और आख़िरकार कामयाब हुए।

बग़ावतों का मुक़ाबला ज़ाहिर है कि ताक़त इस्तेमाल करके ही किया जा सकता है, मगर हालात की नज़ाकत इस हद को पहुँच गयी थी कि सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने सहाबा-ए-किराम से मश्विरा किया तो किसी की राय न हुई कि इस वक़्त बग़ावतों के मुक़ाबले में कोई सख़्त क़दम उठाया जाये। ख़तरा यह था कि सहाबा हज़रात अगर अन्दरूनी जंग में मशग़ूल हो जायें तो बाहरी ताक़तें इस नये वजूद में आने वाले इस्लामी मुल्क पर दौड़ पड़ेंगी। लेकिन अल्लाह तआ़ला ने अपने सिद्दीक़ के दिल को इस जिहाद के लिये मज़बूत फ़रमा दिया और आपने एक ऐसा बलीग़ (दिलों में उतर जाने वाला) ख़ुतबा सहाबा किराम के सामने दिया कि इस जिहाद के लिये उनको भी दिली इत्मीनान हो गया। उस ख़ुतबे (भाषण और संबोधन) में अपने पूरे इरादे व हिम्मत को इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया कि:

> "जो लोग मुसलमान होने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दिये हुए अहकाम और इस्लामी क़ानून का इनकार करें तो मेरा फ़र्ज़ है कि मैं उनके ख़िलाफ़ जिहाद करूँ। अगर मेरे मुक़ाबले पर तमाम इनसान व जिन्नात और दुनिया के पेड़-पत्थर सब को जमा कर लायें और कोई मेरा साथी न हो, तब भी मैं तन्हा अपनी गर्दन से इस जिहाद को अन्जाम दूँगा।"

और यह फ़रमाकर घोड़े पर सवार हुए और चलने लगे। उस वक़्त सहाबा-ए-किराम आगे आये और सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को अपनी जगह बैठाकर विभिन्न मोर्चों पर विभिन्न हज़रात की रवानगी का नक़्शा बन गया।

इसी लिये हज़रत अ़ली मुर्तज़ा, हज़रत हसन बसरी, इमामे ज़ह्हाक, इमाम क़तादा वग़ैरह तफ़सीर के बड़े इमामों ने बयान फ़रमाया है कि यह आयत हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके साथियों के बारे में आई है। वही सबसे पहले उस क़ौम का मिस्दाक़ साबित हुए जिनके अल्लाह की ओर से अ़मल के मैदान में लाये जाने का उक्त आयत में इरशाद है।

मगर यह इसके विरुद्ध नहीं कि कोई दूसरी जमाअ़त भी इस आयत की मिस्दाक़ हो। इसलिये जिन हज़रात ने इस आयत का मिस्दाक़ हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु या दूसरे सहाबा-ए-किराम को क़रार दिया है, वह भी इसका मुख़ालिफ़ नहीं। बल्कि सही यही है कि

ये सब हज़रात बल्कि क़ियामत तक आने वाला वह मुसलमान जो क़ुरआनी हिदायतों के मुताबिक़ कुफ़्र व बेदीनी का मुक़ाबला करे इसी आयत के मिस्दाक़ में दाख़िल होंगे।

बहरहाल सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की एक जमाअ़त हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नेतृत्व में इस फ़ितना-ए-इर्तिदाद (इस्लाम से फिर जाने वालों) के मुक़ाबले के लिये खड़ी हो गयी। हज़रत ख़ालिद बिन वलीद को एक बड़ा लश्कर देकर मुसैलमा-ए-कज़्ज़ाब के मुक़ाबले पर यमामा की तरफ़ रवाना किया गया। वहाँ मुसैलमा-ए-कज़्ज़ाब की जमाअ़त ने अच्छी ख़ासी ताक़त इकट्ठा कर ली थी, सख़्त लड़ाईयाँ हुईं, आख़िरकार मुसैलमा-ए-कज़्ज़ाब हज़रत वहशी रज़ियल्लाहु अ़न्हु के हाथ से मारा गया, और उसकी जमाअ़त तौबा करके फिर मुसलमानों में मिल गयी। इसी तरह तलीहा बिन ख़ुवैलद के मुक़ाबले पर भी हज़रत ख़ालिद रज़ियल्लाहु अ़न्हु ही तशरीफ़ ले गये, वह फ़रार होकर कहीं बाहर चला गया, फिर अल्लाह तआ़ला ने उनको ख़ुद बख़ुद ही इस्लाम की दोबारा तौफ़ीक़ बख़्शी और मुसलमान होकर लौट आये।

ख़िलाफ़ते सिद्दीक़ी के पहले महीने रबीउल-अव्वल के आख़िर में अस्वद अ़नसी के क़त्ल और उसकी क़ौम के ताबेदार व फ़रमाँबरदार हो जाने की ख़बर पहुँच गयी, और यही ख़बर सबसे पहली फ़तह की ख़बर थी जो हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को उन हालात में पहुँची थी। इसी तरह दूसरे क़बीले जो ज़कात देने से मना कर रहे थे, के मुक़ाबले में भी हर मोर्चे पर अल्लाह तआ़ला ने सहाबा-ए-किराम को खुली फ़तह नसीब फ़रमाई।

इस तरह अल्लाह तआ़ला का यह इरशाद जो तीसरी आयत के आख़िर में ज़िक्र हुआ है:

فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ.

यानी अल्लाह वालों की जमाअ़त ही ग़ालिब आकर रहेगी। इसकी अ़मली तफ़सीर दुनिया ने आँखों से देख ली, और जबकि तारीख़ी और वाक़िआ़ती रंग में यह बात आसानी से और स्पष्ट रूप से साबित है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद अ़रब के क़बीलों में फ़ितना-ए-इर्तिदाद (इस्लाम से फिर जाने का फ़ितना) फैला और अल्लाह तआ़ला ने उसका मुक़ाबला करने के लिये जो क़ौम खड़ी फ़रमाई वह सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके साथी सहाबा-ए-किराम ही थे, तो इस आयत ही से यह भी साबित हो गया कि जो गुण इस जमाअ़त के क़ुरआने करीम ने बयान फ़रमाये हैं वो सब सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके साथी सहाबा-ए-किराम में मौजूद थे, यानी:

अव्वल यह कि अल्लाह तआ़ला उनसे मुहब्बत करते हैं।

दूसरे यह कि वे अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत करते हैं।

तीसरे यह कि ये सब हज़रात मुसलमानों के मामलात में बहुत ही नर्म हैं और काफ़िरों के मामले में तेज़।

चौथे यह कि उनका जिहाद ठीक अल्लाह की राह में था, जिसमें उन्होंने किसी की मलामत वग़ैरह की परवाह नहीं की।

आयत के आख़िर में तमाम हक़ीक़तों की इस हक़ीक़त को स्पष्ट फ़रमा दिया कि कमाल व ख़ूबी की ये तमाम सिफ़ात फिर इनका हर वक़्त इस्तेमाल, फिर इनके ज़रिये इस्लामी मुहिम में कामयाबी, ये सब चीज़ें केवल तदबीर, ताक़त या जमाअ़त के बल-बूते पर हासिल नहीं हुआ करतीं, बल्कि यह तो सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल है, वही जिसको चाहते हैं यह नेमत अ़ता फ़रमाते हैं।

ऊपर बयान हुई चार आयतों में मुसलमानों को काफ़िरों के साथ गहरी दोस्ती रखने से मना फ़रमाया गया। पाँचवीं आयत में सकारात्मक तौर पर यह बतलाया गया कि मुसलमानों को गहरी दोस्ती और ख़ास ताल्लुक़ जिनसे हो सकता है वे कौन हैं। उनमें सबसे पहले अल्लाह तआ़ला और फिर उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ज़िक्र है, कि दर हक़ीक़त मोमिन का दोस्त और साथी हर वक़्त हर हाल में अल्लाह तआ़ला ही है, और वही हो सकता है, और उसके ताल्लुक़ के सिवा हर ताल्लुक़ और हर दोस्ती फ़ानी है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ताल्लुक़ भी दर हक़ीक़त अल्लाह तआ़ला का ताल्लुक़ है, उससे अलग नहीं। तीसरे नम्बर में मुसलमानों के साथी और मुख़्लिस दोस्त उन मुसलमानों को क़रार दिया है जो सिर्फ़ नाम के मुसलमान नहीं, बल्कि सच्चे मुसलमान हैं। जिनकी तीन सिफ़तें और निशानियाँ ये बतलाई हैं:

اَلَّذِیْنَ یُقِیْمُوْنَ الصَّلٰوۃَ وَیُؤْتُوْنَ الزَّکٰوۃَ وَھُمْ رٰکِعُوْنَ.

अव्वल यह कि वे नमाज़ को उसके पूरे आदाब और शर्तों के साथ पाबन्दी से अदा करते हैं। दूसरे यह कि अपने माल में से ज़कात अदा करते हैं। तीसरे यह कि वे लोग तवाज़ो और आ़जिज़ी करने वाले हैं, अपने नेक आमाल पर नाज़ और तकब्बुर नहीं करते।

इस आयत का तीसरा जुमला 'व हुम् राकिऊन' में लफ़्ज़ रुकूअ़ के कई मफ़्हूम (मायने) हो सकते हैं। इसी लिये तफ़सीर के इमामों में से कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि रुकूअ़ से मुराद इस जगह परिचित रुकूअ़ है, जो नमाज़ का एक रुक्न (हिस्सा) है। और 'युक़ीमूनस्सला-त' के बाद 'व हुम् राकिऊन' का जुमला इस मक़सद से लाया गया कि मुसलमानों की नमाज़ को दूसरे फ़िर्क़ों की नमाज़ से अलग कर देना मक़सूद है। क्योंकि नमाज़ तो यहूदी व ईसाई भी पढ़ते हैं, मगर उसमें रुकूअ़ नहीं होता, रुकूअ़ सिर्फ़ इस्लामी नमाज़ की विशेष ख़ूबी है। (तफ़सीरे मज़हरी)

मगर मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने फ़रमाया कि लफ़्ज़ रुकूअ़ से इस जगह परिचित रुकूअ़ मुराद नहीं, बल्कि इसके लुग़वी मायने मुराद हैं, यानी झुकना, तवाज़ो और आ़जिज़ी व इन्किसारी करना। तफ़सीर बहरे मुहीत में अबू हय्यान ने और तफ़सीरे कश्शाफ़ में ज़मख़्शरी ने इसी को इख़्तियार किया है। और तफ़सीरे मज़हरी व तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन वग़ैरह में भी इसी को लिया गया है। तो मायने इस जुमले के ये हो गये कि उन लोगों को अपने नेक आमाल पर नाज़ नहीं, बल्कि विनम्रता और इन्किसारी उनकी ख़स्लत है।

और कुछ रिवायतों में है कि यह जुमला हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू के बारे में एक ख़ास

वाक़िए के मुताल्लिक़ नाज़िल हुआ है। वह यह कि एक दिन हज़रत अ़ली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु नमाज़ में मशग़ूल थे। जब आप रुकूअ़ में गये तो किसी साईल (माँगने वाले) ने आकर सवाल किया, आपने उसी रुकूअ़ की हालत में अपनी एक उंगली से अंगूठी निकाल कर उसकी तरफ़ फेंक दी। ग़रीब फ़क़ीर की ज़रूरत पूरी करने में इतनी देर करना भी पसन्द नहीं फ़रमाया कि नमाज़ से फ़ारिग़ होकर उसकी ज़रूरत पूरी करें। नेक काम में यह आगे बढ़ना अल्लाह तआ़ला के नज़दीक पसन्द आया और इस जुमले के ज़रिये इसकी तारीफ़ फ़रमाई गयी।

इस रिवायत की सनद में उलेमा व मुहद्दिसीन को कलाम है, लेकिन रिवायत को सही क़रार दिया जाये तो इसका हासिल यह होगा कि मुसलमानों की गहरी दोस्ती के लायक़ नमाज़ व ज़कात के पाबन्द आ़म मुसलमान हैं, और उनमें ख़ुसूसियत के साथ हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू उस दोस्ती के ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं, जैसा कि एक दूसरी सही हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اَللّٰهُمَّ وَالِ مَنْ وَالَاهُ وَعَادِمَنْ عَادَاهُ.

यानी या अल्लाह! आप महबूब बना लें उस शख़्स को जो मुहब्बत रखता है अ़ली से, और दुश्मन क़रार दें उस शख़्स को जो दुश्मनी करे अ़ली से।

हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू को इस ख़ास सम्मान के साथ ग़ालिबन इसलिये नवाज़ा गया है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर आगे चलकर पेश आने वाला फ़ितना ज़ाहिर हो गया था, कि कुछ लोग हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से अ़दावत व दुश्मनी रखेंगे, और उनके मुक़ाबले पर बग़ावत का झण्डा उठायेंगे जैसा कि ख़ारजियों के फ़ितने में इसका ज़हूर हुआ।

बहरहाल उक्त आयत का नुज़ूल (उतरना) चाहे इसी वाक़िए के मुताल्लिक़ हुआ हो मगर आयत के अलफ़ाज़ आ़म हैं, जो तमाम सहाबा-ए-किराम और सब मुसलमानों को शामिल हैं। हुक्म के एतिबार से किसी व्यक्ति विशेष की ख़ुसूसियत नहीं, इसी लिये जब किसी ने हज़रत इमाम बाक़िर रह. से पूछा कि इस आयत में 'अल्लज़ी-न आमनू' से क्या हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू मुराद हैं? तो आपने फ़रमाया कि वह भी मोमिनों में दाख़िल होने की हैसियत से इस आयत का मिस्दाक़ हैं।

इसके बाद दूसरी आयत में उन लोगों को फ़तह व मदद और दुनिया पर ग़ालिब आने की ख़ुशख़बरी दी गयी है जो ज़िक्र की हुई क़ुरआनी आयत के अहकाम की तामील करके ग़ैरों की गहरी दोस्ती से बाज़ आ जायें और सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और ईमान वालों को अपना दोस्त बनायें। इरशाद फ़रमायाः

وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ.

इसमें इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह के इन अहकाम की तामील करने वाले मुसलमान अल्लाह का गिरोह हैं, और फिर यह ख़ुशख़बरी सुना दी कि अल्लाह का गिरोह ही आख़िरकार (परिणाम स्वरूप) सब पर ग़ालिब आकर रहेगा।

आने वाले वाक़िआत ने इसकी ऐसी तस्दीक़ (पुष्टि) कर दी कि हर आँखों वाले ने देख लिया कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम सब पर ग़ालिब आकर रहे। जो ताक़त उनसे टकराई टुकड़े-टुकड़े हो गयी। पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु के मुक़ाबले पर अन्दरूनी फ़ितने और बग़ावतें खड़ी हुईं तो अल्लाह तआ़ला ने उनको सब पर ग़ालिब फ़रमाया। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के मुक़ाबले पर दुनिया की सबसे बड़ी ताक़तें क़ैसर व किसरा (रूम व ईरान) की आ गयीं तो अल्लाह तआ़ला ने उनका नाम व निशान मिटा दिया। और फिर उनके बाद के ख़लीफ़ाओं और मुसलमानों में जब तक इन अहकाम की पाबन्दी रही कि मुसलमानों ने ग़ैरों के साथ घुलने-मिलने और गहरी दोस्ती के ताल्लुक़ात क़ायम नहीं किये वे हमेशा कामयाब व विजयी नज़र आये।

छठी आयत में फिर बतौर ताकीद के इस हुक्म को दोहराया गया है जो रुकूअ़ के शुरू में बयान हुआ था। जिसका मफ़्हूम यह है कि ऐ ईमान वालो! तुम उन लोगों को अपना साथी या गहरा दोस्त न बनाओ जो तुम्हारे दीन को हंसी-खेल क़रार देते हैं। और ये दो गिरोह हैं- एक अहले किताब (यहूदी व ईसाई) दूसरे आम काफ़िर व मुश्रिक लोग।

इमाम अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे मुहीत में फ़रमाया कि लफ़्ज़ **काफ़िर** में तो अहले किताब भी दाख़िल थे फिर ख़ास तौर पर अहले किताब का मुस्तक़िल ज़िक्र इस जगह ग़ालिबन इसलिये फ़रमाया गया कि अहले किताब अगरचे ज़ाहिर में दूसरे काफ़िरों की तुलना में इस्लाम के साथ क़रीब थे, मगर तजुर्बे ने यह बतलाया कि उनमें से बहुत कम लोगों ने इस्लाम को क़ुबूल किया। यही वजह है कि हुज़ूरे पाक के ज़माने के बाद ईमान लाने वाले लोगों के आंकड़े देखे जायें तो उनमें अधिकता आम काफ़िरों की निकलेगी, अहले किताब में से मुसलमान होने वालों की तायदाद बहुत कम होगी।

और वजह इसकी यह है कि अहले किताब को इस पर नाज़ है कि हम ख़ुदाई दीन और आसमानी किताब के पाबन्द हैं। इस फ़ख़्र व नाज़ ने उनको हक़ क़ुबूल करने से बाज़ रखा, और मुसलमानों के साथ हंसी उड़ाने और मज़ाक़ बनाने का मामला भी ज़्यादातर उन्होंने किया। इसी शरारत-पसन्दी का एक वाक़िआ वह है जो सातवीं आयत में इस तरह बयान फ़रमाया गया हैः

وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا هُزُوًا وَّلَعِبًا.

यानी जब मुसलमान नमाज़ के लिये अज़ान देते हैं तो ये लोग उनका मज़ाक़ उड़ाते हैं।

इसका वाक़िआ इब्ने अबी हातिम के हवाले से तफ़सीरे मज़हरी में यह नक़ल किया है कि मदीना तय्यिबा में एक ईसाई था, वह जब अज़ान में 'अश्हदु अन्-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह' का लफ़्ज़ सुनता तो यह कहा करता था 'अह्रक़ल्लाहुल् काज़ि-ब' यानी झूठे को अल्लाह तआ़ला जला दे।

आख़िरकार उसका यह कलिमा ही उसके पूरे ख़ानदान के जलकर ख़ाक हो जाने का सबब बन गया। जिसका वाक़िआ यह पेश आया कि रात को जब यह सो रहा था इसका नौकर किसी

ज़रूरत से आग लेकर घर में आया, उसकी चिंगारी उड़कर किसी कपड़े पर गिर पड़ी और सब के सो जाने के बाद वह भड़क उठी, और सब के सब जलकर ख़ाक हो गये।

इस आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْقِلُوْنَ.

यानी दीने हक़ के साथ इस हंसी-मज़ाक़ उड़ाने की वजह इसके सिवा नहीं हो सकती कि ये लोग बेअ़क़्ल हैं।

तफ़सीरे मज़हरी में क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने उनको बेअ़क़्ल फ़रमाया है, हालाँकि दुनिया के मामलात में उनकी अ़क़्ल व समझ मशहूर व परिचित है। इससे मालूम हुआ कि ऐसा हो सकता है कि कोई इनसान एक क़िस्म के कामों में होशियार अ़क़्लमन्द हो मगर दूसरी क़िस्म में या तो वह अ़क़्ल से काम नहीं लेता या उसकी अ़क़्ल उस तरफ़ चलती नहीं, इसलिये उसमें बेवक़ूफ़ और बेअ़क़्ल होना साबित होता है। क़ुरआने करीम ने इसी मज़मून को एक दूसरी आयत में इस तरह बयान फ़रमाया हैः

يَعْلَمُوْنَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْاٰخِرَةِ هُمْ غٰفِلُوْنَ.

यानी ये लोग दुनियावी ज़िन्दगी के हल्के और मामूली मामलात को तो ख़ूब जानते हैं मगर अन्जाम और आख़िरत से ग़ाफ़िल हैं।

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّاۤ اِلَّاۤ اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَاۤ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ ۙ وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ فٰسِقُوْنَ ۝ قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكَ مَثُوْبَةً عِنْدَ اللّٰهِ ۗ مَنْ لَّعَنَهُ اللّٰهُ وَغَضِبَ عَلَيْهِ وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ وَعَبَدَ الطَّاغُوْتَ ۗ اُولٰٓئِكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنْ سَوَآءِ السَّبِيْلِ ۝ وَاِذَا جَآءُوْكُمْ قَالُوْۤا اٰمَنَّا وَقَدْ دَّخَلُوْا بِالْكُفْرِ وَهُمْ قَدْ خَرَجُوْا بِهٖ ۗ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوْا يَكْتُمُوْنَ ۝

क़ुल् या अह्लल्-किताबि हल् तन्क़िमू-न मिन्ना इल्ला अन् आमन्ना बिल्लाहि व मा उन्ज़ि-ल इलैना व मा उन्ज़ि-ल मिन् क़ब्लु व अन्-न अक्स-रकुम् फ़ासिक़ून (59) क़ुल् हल् उनब्बिउकुम् बि-शर्रिम् मिन् ज़ालि-क मसू-बतन् अिन्दल्लाहि,	तू कह- ऐ किताब वालो! क्या ज़िद है तुमको हमसे मगर यही कि हम ईमान लाये अल्लाह पर और जो नाज़िल हुआ हम पर और जो नाज़िल हो चुका पहले, और यही कि तुम में अक्सर नाफ़रमान हैं। (59) तू कह- मैं तुमको बतलाऊँ उनमें किसकी बुरी जज़ा है अल्लाह के यहाँ, वही जिस पर अल्लाह ने लानत की

मल्ल-अ़-नहुल्लाहु व ग़ज़ि-ब अ़लैहि व ज-अ़-ल मिन्हुमुल् क़ि-र-द-त वल्ख़नाज़ी-र व अ़-बदत्ताग़ू-त, उलाइ-क शर्रुम् मकानंव्-व अज़ल्लु अ़न् सवा-इस्सबील (60) व इज़ा जाऊकुम् क़ालू आमन्ना व क़द्-द-ख़लू बिल्कुफ़्रि व हुम् क़द् ख़-रजू बिही, वल्लाहु अअ़्लमु बिमा कानू यक्तुमून (61)	और उस पर ग़ज़ब नाज़िल किया, और उनमें से कुछ को बन्दर कर दिया और कुछ को सुअर, और जिन्होंने बन्दगी की शैतान की वही लोग बदतर हैं दर्जे में, और बहुत बहके हुए हैं सीधी राह से। (60) और जब तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं कि हम ईमान लाये हैं और हालत यह है कि काफ़िर ही आये थे और काफ़िर ही चले गये, और अल्लाह ख़ूब जानता है जो कुछ छुपाये हुए थे। (61)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिये कि ऐ अहले किताब! तुम हम में कौनसी बात ऐब वाली और बुरी पाते हो, सिवाय इसके कि हम ईमान लाए हैं अल्लाह पर और उस किताब पर जो हमारे पास भेजी गई है (यानी क़ुरआन) और उस किताब पर (भी) जो (हमसे) पहले भेजी जा चुकी है (यानी तुम्हारी किताब तौरात व इंजील), इसके बावजूद कि तुममें अक्सर लोग ईमान से ख़ारिज हैं (कि न क़ुरआन पर उनका ईमान है, जिसका ख़ुद उनको भी इक़रार है, और न तौरात व इंजील पर ईमान है, क्योंकि उन पर ईमान होता तो उनमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन पर ईमान लाने की हिदायत मौजूद है, इस पर भी ज़रूर ईमान होता। क़ुरआन का इनकार इस पर सुबूत है कि तौरात व इंजील पर भी उनका ईमान नहीं है। यह हाल तो तुम लोगों का हुआ और हम इसके विपरीत सब किताबों पर ईमान रखते हैं, तो ऐब हम में नहीं ख़ुद तुम में है, ग़ौर करो)।

आप (उनसे) कह दीजिये कि (अगर इस पर भी तुम हमारे तरीक़े को बुरा समझते हो तो आओ) क्या मैं (अच्छे-बुरे में तुलना और फ़र्क़ करने के लिये) तुमको ऐसा तरीक़ा बतलाऊँ जो (हमारे) इस (तरीक़े) से भी (जिसको तुम बुरा समझ रहे हो) ख़ुदा के यहाँ पादाश "यानी नतीजा और बदला" मिलने में ज़्यादा बुरा हो। वह उन लोगों का तरीक़ा है जिनको (इस तरीक़े की वजह से) अल्लाह तआ़ला ने अपनी रहमत से दूर कर दिया हो और उन पर ग़ज़ब फ़रमाया हो और उनको बन्दर और सुअर बना दिया हो, और उन्होंने शैतान की पूजा की हो, (अब देख लो कि इनमें कौनसा तरीक़ा बुरा है, आया वह तरीक़ा जिसमें ग़ैरुल्लाह की इबादत और उस पर यह वबाल हों, या वह तरीक़ा जो पूरी तरह तौहीद और नबियों की नुबुव्वत की तस्दीक़ हो। यक़ीनन

तुलना करने का नतीजा यही है कि) ऐसे लोग (जिनका तरीक़ा अभी ज़िक्र किया गया है आख़िरत में) मकान के एतिबार से भी (जो उनको सज़ा के तौर पर मिलेगा) बहुत बुरे हैं (क्योंकि यह मकान दोज़ख़ है) और (दुनिया में) सही रास्ते से भी बहुत दूर हैं (इशारा यह है कि तुम लोग हम पर हंसते हो, हालाँकि मज़ाक़ उड़ाये जाने के क़ाबिल तुम्हारा तरीक़ा है। क्योंकि ये सब ख़स्लतें तुममें पाई जाती हैं। क्योंकि यहूदियों ने बछड़े की पूजा की और ईसाईयों ने हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम को ख़ुदा बना लिया, फिर अपने उलेमा व धर्मगुरुओं को ख़ुदाई के अधिकार सौंप दिये। इसी लिये यहूदियों ने जब हफ़्ते (शनिवार) के दिन के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी की तो अल्लाह का अ़ज़ाब आया, वे बन्दर बना दिये गये। और ईसाईयों की दरख़्वास्त पर आसमानी दस्तरख़्वान नाज़िल होने लगा, उन्होंने फिर भी नाशुक्री की तो उनको बन्दर और सुअर बना दिया गया। आगे उनकी एक ख़ास जमाअ़त का ज़िक्र है जो मुनाफ़िक़ थे कि मुसलमानों के सामने इस्लाम का इज़्हार करते थे और अन्दरूनी तौर पर यहूदी ही थे) और जब ये (मुनाफ़िक़) लोग तुम लोगों के पास आते हैं तो कहते हैं कि हम ईमान ले आए, हालाँकि वे कुफ़्र को ही लेकर (मुसलमानों की मज्लिस में) आए थे और कुफ़्र को ही लेकर चले गये। और अल्लाह तआ़ला तो ख़ूब जानते हैं जिसको यह (अपने दिल में) छुपाते हैं (इसलिये इनका निफ़ाक़ (दिल में कुफ़्र रखना और ज़ाहिर में इस्लाम ज़ाहिर करना) अल्लाह तआ़ला के सामने काम नहीं देगा, और कुफ़्र की बहुत बुरी सज़ा से साबक़ा पड़ेगा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

'अक्सरकुम् फ़ासिक़ून' (तुम में अधिकतर नाफ़रमान हैं) में हक़ तआ़ला ने यहूदियों व ईसाईयों के ख़िताब में सब के बजाय अक्सर को ईमान से ख़ारिज फ़रमाया है। इसकी वजह यह है कि उनमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो हर हाल में मोमिन ही रहे, जब तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नबी बनकर तशरीफ़ नहीं लाये थे वे तौरात व इंजील के हुक्मों के ताबे और उन पर ईमान रखते थे, जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये और क़ुरआन नाज़िल हुआ तो आप पर भी ईमान लाये और क़ुरआन के ताबे होकर अ़मल करने लगे।

दावत व तब्लीग़ में मुख़ातब की रियायत

यहाँ 'क़ुल् हल् उनब्बिउकुम्' में एक मिसाल के अन्दाज़ में जो हाल ऐसे लोगों का बयान किया है जिन पर अल्लाह की लानत व ग़ज़ब है, इसके मिस्दाक़ दर हक़ीक़त ख़ुद यहीं मुख़ातब थे। मक़ाम इसका था कि उन पर ही यह इल्ज़ाम लगाया जाता कि तुम ऐसे हो, मगर क़ुरआने करीम ने बयान का अन्दाज़ बदलकर इसको एक मिसाल की सूरत दे दी। जिसमें पैग़म्बराना दावत का एक ख़ास अन्दाज़ व ढंग बतलाया गया कि बयान का उनवान ऐसा इख़्तियार करना चाहिये जिससे मुख़ातब (जिसको संबोधित किया जा रहा है) में उत्तेजना पैदा न हो।

وَتَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يُسَارِعُوْنَ فِى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ لَوْلَا يَنْهٰىهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ۝

व तरा कसीरम् मिन्हुम् युसारिअ़ू-न फ़िल्इस्मि वल्अ़ुद्वानि व अक्लिहिमुस्सुह्-त, लबिअ्-स मा कानू यअ़्मलून (62) लौ ला यन्हाहुमुर्रब्बानिय्यू-न वल्-अह्बारु अ़न् क़ौलिहिमुल्-इस्-म व अक्लिहिमुस्सुह्-त, लबिअ्-स मा कानू यस्नअ़ून (63)	और तू देखेगा बहुतों को उनमें से कि दौड़ते हैं गुनाह पर और ज़ुल्म और हराम खाने पर, बहुत बुरे काम हैं जो कर रहे हैं। (62) क्यों नहीं मना करते उनके नेक लोग और उलेमा गुनाह की बात कहने से और हराम खाने से, बहुत ही बुरे अ़मल हैं जो कर रहे हैं। (63)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आप उन (यहूदियों) में बहुत आदमी ऐसे देखते हैं जो दौड़-दौड़कर गुनाह (यानी झूठ) और ज़ुल्म और हराम (माल) खाने पर गिरते हैं, वाक़ई उनके ये काम (बहुत) बुरे हैं। (यह तो अ़वाम का हाल था, आगे ख़्वास का हाल है कि) उनको नेक लोग और उलेमा गुनाह की बात कहने से (इसके बावजूद कि उनको मसले का इल्म और वास्तविकता की ख़बर है) और हराम माल खाने से क्यों नहीं मना करते, वाक़ई उनकी यह आ़दत बुरी है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यहूदियों की अख़्लाक़ी हालत की तबाही

ज़िक्र की गयी आयतों में से पहली आयत में अधिकतर यहूदियों की अख़्लाक़ी गिरावट और अ़मली बरबादी का ज़िक्र है, ताकि सुनने वालों को नसीहत हो कि इन कामों और इनके असबाब से बचते रहें।

अगरचे आ़म तौर पर यहूदियों का यही हाल था लेकिन उनमें कुछ अच्छे लोग भी थे, क़ुरआने करीम ने उनको अलग करने के लिये लफ़्ज़ "कसीरन" इस्तेमाल फ़रमाया, और ज़ुल्म व ज़्यादती और हरामख़ोरी दोनों अगरचे लफ़्ज़ "इस्म" (यानी गुनाह) के मफ़्हूम में दाख़िल हैं, लेकिन इन दोनों क़िस्म के गुनाहों की तबाहकारी और इनकी वजह से पूरे अमन व इत्मीनान की

बरबादी स्पष्ट करने के लिये ख़ुसूसियत के साथ इनका ज़िक्र अलग से कर दिया। (बहरे मुहीत)

और तफ़सीर रूहुल-मआनी वग़ैरह में है कि उन लोगों के मुताल्लिक़ दौड़-दौड़कर गुनाहों पर गिरने का उनवान इख़्तियार करके क़ुरआने करीम ने इसकी तरफ़ इशारा फ़रमाया कि ये लोग इन बुरी ख़स्लतों के आदी मुजरिम हैं, और ये बुरे आमाल उनके मिज़ाज का एक हिस्सा बनकर उनकी रग व ख़ून में इस तरह जम गये हैं कि बिना इरादे के भी ये लोग उसी तरफ़ चलते हैं।

इससे मालूम हुआ कि नेक अमल हो या बुरा, जब कोई इनसान उसको ख़ूब ज़्यादा करता है तो धीरे-धीरे वह एक पुख़्ता आदत और मिज़ाज बन जाता है, फिर उसके करने में उसको कोई मशक़्क़त और तकल्लुफ़ बाक़ी नहीं रहता। बुरी ख़स्लतों में यहूदी इसी हद पर पहुँचे हुए थे, इसको ज़ाहिर करने के लिये इरशाद फ़रमायाः

يُسَارِعُوْنَ فِى الْاِثْمِ

और इसी तरह अच्छी ख़स्लतों में नबियों और वलियों का हाल है, उनके बारे में भी क़ुरआने करीम नेः

يُسَارِعُوْنَ فِى الْخَيْرٰتِ.

के अलफ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये।

आमाल को सुधारने का तरीक़ा

आमाल को सही करने और सुधारने का सबसे ज़्यादा एहतिमाम करने वाले हज़रात सूफ़िया-ए-किराम और औलिया-अल्लाह हैं। इन हज़रात ने क़ुरआन के इन्हीं इरशादात से यह अहम उसूल हासिल किया है कि जितने बुरे या भले आमाल इनसान करता है, असल में उनका असल सरचश्मा (स्रोत) वह छुपी सलाहियत, सिफ़ात और अख़्लाक़ होते हैं जो इनसान की तबीयत का एक हिस्सा बन जाते हैं। इसी लिये बुरे आमाल और अपराधों की रोकथाम के लिये उनकी नज़र उन्हीं छुपी सलाहियतों और सिफ़ात पर होती है और वे उनकी इस्लाह कर देते हैं। वह इसके नतीजे में रिश्वत भी लेता है, सूद भी खाता है, और मौक़ा मिले तो चोरी और डाके तक भी नौबत पहुँच जाती है। हज़राते सूफ़िया-ए-किराम (बुज़ुर्ग हज़रात) इन अपराधों का अलग-अलग इलाज करने के बजाय वह नुस्ख़ा इस्तेमाल करते हैं जिससे इन सब जुर्मों की बुनियाद ध्वस्त हो जाये, और वह है दुनिया की नापायेदारी (बाक़ी न रहने) और इसके ऐश व आराम के ज़हर भरा होने का ध्यान और पुख़्ता ख़्याल।

इसी तरह किसी के दिल में तकब्बुर व ग़ुरूर है, या वह ग़ुस्से में मग़लूब है, और दूसरों का अपमान व तौहीन करता है, दोस्तों और पड़ोसियों से लड़ता है। ये हज़रात आख़िरत की फ़िक्र और ख़ुदा तआ़ला के सामने जवाबदेही को ध्यान में लाने वाला नुस्ख़ा इस्तेमाल करते हैं, जिससे ये बुरे आमाल ख़ुद-बख़ुद ख़त्म हो जाते हैं।

ख़ुलासा यह है कि इस क़ुरआनी इशारे से मालूम हुआ कि इनसान में कुछ सलाहियतें और

सिफ़ात होती हैं जो तबीयत का एक लाज़िमी हिस्सा बन जाती हैं। ये सलाहियतें और सिफ़ात ख़ैर और भलाई की हैं तो नेक अमल ख़ुद-बख़ुद होने लगते हैं, इसी तरह सलाहियतें और सिफ़ात बुरी हैं तो बुरे आमाल की तरफ़ इनसान ख़ुद-बख़ुद दौड़ने लगता है। मुकम्मल इस्लाह (सुधार) के लिये इन सिफ़ात की इस्लाह ज़रूरी है।

उलेमा पर अ़वाम के आमाल की ज़िम्मेदारी

दूसरी आयत में यहूदियों के बुज़ुर्गों और उलेमा को इस पर सख़्त तंबीह की गयी कि वे उन लोगों को बुरे आमाल से क्यों नहीं रोकते। क़ुरआन में इस जगह दो लफ़्ज़ इस्तेमाल किये गये हैं एक "रब्बानिय्यून" जिसका तर्जुमा है अल्लाह वाले, यानी आ़बिद, ज़ाहिद, जिनको हमारी बोलचाल में दुर्वेश या पीर या मशाईख़ कहा जाता है। और दूसरा लफ़्ज़ "अहबार" इस्तेमाल फ़रमाया। यहूदियों के उलेमा को अहबार कहा जाता है, जिससे मालूम हुआ कि अच्छे कामों का हुक्म करने और बुरे कामों से रोकने की असल ज़िम्मेदारी इन दो तबक़ों पर है- एक बुज़ुर्ग, दूसरे उलेमा। और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि रब्बानिय्यून से मुराद वे उलेमा हैं जो हुकूमत की तरफ़ से नियुक्त और ओ़हदे व इख़्तियार वाले हों, और अहबार से मुराद आ़म उलेमा हैं। इस सूरत में अपराधों और बुराईयों से रोकने की ज़िम्मेदारी हाकिमों और उलेमा दोनों पर आयद हो जाती है। और कुछ दूसरी आयतों में यह स्पष्टता के साथ बयान भी हुआ है।

उलेमा व बुज़ुर्गों के लिये एक चेतावनी

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ.

यानी उन मशाईख़ (बुज़ुर्गों) और उलेमा की यह बहुत ही बुरी आ़दत है कि अपना फ़र्ज़े मन्सबी (कर्तव्य) यानी अच्छे कामों का हुक्म करना और बुरे कामों से रोकना छोड़ बैठे, क़ौम को हलाकत की तरफ़ जाता हुआ देखते हैं और उनको नहीं रोकते।

उलेमा-ए-मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि पहली आयत जिसमें अ़वाम के ग़लत काम करने का ज़िक्र था, उसके आख़िर में तो 'ल-बिअ्-स मा कानू यअ्मलून' इरशाद फ़रमाया गया, और दूसरी आयत जिसमें बुज़ुर्गों और उलेमा की ग़लती पर तंबीह की गयी है उसके आख़िर में 'ल-बिअ्-स मा कानू यस्नऊन' का लफ़्ज़ इरशाद फ़रमाया गया। वजह यह है कि अ़रबी लुग़त के एतिबार से लफ़्ज़ 'फ़ेल' तो हर काम को शामिल है, चाहे इरादे से हो या बिना इरादे के, और लफ़्ज़ 'अ़मल' सिर्फ़ उस काम के लिये बोला जाता है जो क़स्द व इरादे से किया जाये, और लफ़्ज़ 'सनअ्' और 'सनुअ़त' को ऐसे काम के लिये बोला जाता है जिसमें इरादा व इख़्तियार भी हो और उसको बार-बार बतौर आ़दत और मक़सद के दुरुस्त करके किया जाये। इसलिये अ़वाम की बद-अ़मली के नतीजे में तो सिर्फ़ लफ़्ज़ अ़मल इख़्तियार फ़रमायाः

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ.

और ख़्वास (यानी बुज़ुर्गों व उलेमा) की ग़लती करने के नतीजे में लफ़्ज़ 'सनअ्' इख़्तियार फ़रमायाः

لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ.

इसमें उसकी तरफ़ इशारा हो सकता है कि उनके उलेमा व मशाईख़ (बुज़ुर्गों और बड़ों) का यह ग़लत चलन कि ये जानते-बूझते हुए कि अगर हम इनको मना करेंगे तो ये हमारा कहना सुनेंगे और बाज़ आ जायेंगे, फिर भी उन लोगों के नज़रानों के लालच या अपने से कट जाने और विमुख हो जाने के ख़ौफ़ से उनके दिलों में हक़ की हिमायत का कोई जज़्बा पैदा नहीं होता। ये उन बदकारों के बुरे आमाल से भी ज़्यादा सख़्त और संगीन है।

जिसका हासिल यह हुआ कि जिस क़ौम के लोग अपराधों और गुनाहों में मुब्तला होंगे और उनके बुज़ुर्गों व उलेमा को यह भी अन्दाज़ हो कि हम इनको रोकेंगे तो ये बाज़ आ जायेंगे, ऐसे हालात में अगर ये किसी लालच या ख़ौफ़ की वजह से उन अपराधों और गुनाहों को नहीं रोकते तो उनका जुर्म असल मुजरिमों, बदकारों के जुर्म से भी ज़्यादा सख़्त है। इसलिये हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि बुज़ुर्गों व उलेमा के लिये पूरे क़ुरआन में इस आयत से ज़्यादा कड़ी चेतावनी कहीं नहीं, और इमामे तफ़सीर ज़ह्हाक ने फ़रमाया कि मेरे नज़दीक बुज़ुर्गों व उलेमा के लिये यह आयत सबसे ज़्यादा ख़ौफ़नाक है।

(तफ़सीर इब्ने जरीर व तफ़सीर इब्ने कसीर)

वजह यह है कि इस आयत के मुताबिक़ उनका जुर्म तमाम चोरों, डाकुओं और हर तरह के बदकारों के जुर्म से भी ज़्यादा सख़्त हो जाता है (अल्लाह की पनाह)। मगर याद रहे कि यह सख़्ती और चेतावनी उसी सूरत में हैं जबकि बुज़ुर्गों व उलेमा को अन्दाज़ा भी हो कि उनकी बात सुनी और मानी जायेगी, और जिस जगह अन्दाज़े या तजुर्बे से यह गुमान ग़ालिब हो कि कोई सुनेगा नहीं, बल्कि उसके मुक़ाबले में उनको तकलीफ़ें दी जायेंगी तो वहाँ हुक्म यह है कि उनकी ज़िम्मेदारी तो ख़त्म हो जाती है, लेकिन अफ़ज़ल व आला फिर भी यही रहता है कि कोई माने या न माने ये हज़रात अपना फ़र्ज़ अदा करें, और इसमें किसी की मलामत (बुरा-भला कहने) या तकलीफ़ देने की फ़िक्र न करें, जैसा कि पहले चन्द आयतों में अल्लाह तआ़ला के मक़बूल मुजाहिदीन की सिफ़ात में गुज़र चुका हैः

وَلَا يَخَافُوْنَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ.

यानी ये लोग अल्लाह के रास्ते में और हक़ ज़ाहिर करने में किसी मलामत करने वाले की मलामत की परवाह नहीं करते।

ख़ुलासा यह है कि जिस जगह बात सुनने और मानने का ग़ालिब गुमान हो वहाँ बुज़ुर्गों व उलेमा पर बल्कि हर मुसलमान पर जिसको उस काम का जुर्म व गुनाह होना मालूम हो, फ़र्ज़ है कि गुनाह को रोकने और मना करने में अपनी ताक़त भर कोशिश करे, चाहे हाथ से या ज़बान से, या कम से कम अपने दिल की नफ़रत और मुँह फेरने से। और जिस जगह ग़ालिब गुमान

यह हो कि उसकी बात न सुनी जायेगी, या यह कि उसके ख़िलाफ़ दुश्मनी भड़क उठेगी, तो ऐसी हालत में मना करना और रोकना फ़र्ज़ तो नहीं रहता, मगर अफ़ज़ल व आला बहरहाल है।

अच्छे आमाल का हुक्म करने और बुरे कामों से रोकने के बारे में ये तफ़सीलात सही हदीसों से ली गयी हैं, ख़ुद नेक अ़मल इख़्तियार करने और बुरे आमाल से बचने के साथ दूसरों को भी नेकी की तरफ़ हिदायत और बुराई से रोकने का फ़रीज़ा आ़म मुसलमानों पर और ख़ासकर उलेमा व बुज़ुर्गों पर डालकर इस्लाम ने दुनिया में अमन व इत्मीनान पैदा करने का एक ऐसा सुनहरा उसूल बना दिया है कि इस पर अ़मल होने लगे तो पूरी क़ौम बहुत आसानी के साथ तमाम बुराईयों से पाक हो सकती है।

उम्मत के सुधार का तरीक़ा

इस्लाम के शुरू के ज़मानों में और बाद के ज़मानों में भी जब तक इस पर अ़मल होता रहा मुसलमानों की पूरी क़ौम इल्म व अ़मल, अख़्लाक़ व किरदार के एतिबार से पूरी दुनिया में सरबुलन्द और नुमायाँ रही। और जब से मुसलमानों ने इस फ़रीज़े को नज़र-अन्दाज़ कर दिया और अपराधों की रोकथाम को सिर्फ़ हुकूमत और उसकी पुलिस का फ़र्ज़ समझकर ख़ुद उससे अलग हो बैठे तो इसका नतीजा वही हुआ जो आज हर जगह सामने है, कि माँ-बाप और पूरा ख़ानदान दीनदार और शरीअ़त का पाबन्द है मगर औलाद और संबन्धित लोग इसके उलट हैं। उनके सोचने और विचार का रुख़ भी और है, और अ़मली तरीक़े भी अलग हैं। इसी लिये मिल्लत के सामूहिक सुधार के लिये क़ुरआन व हदीस में 'अमर बिलमारूफ़' और 'नही अ़निल् मुन्कर' (नेकियों का हुक्म करने और बुराईयों से रोकने) पर ख़ास तौर से ज़ोर दिया गया है। क़ुरआन ने इस काम को उम्मते मुहम्मदिया की ख़ुसूसियात (विशेषताओं) में शुमार फ़रमाया है और इसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने को सख़्त गुनाह और अ़ज़ाब का सबब क़रार दिया है। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब किसी क़ौम में गुनाह के काम किये जायें और कोई (नेक) आदमी उस क़ौम में रहता है और उनको मना नहीं करता तो क़रीब है कि अल्लाह तआ़ला उन सब लोगों पर अ़ज़ाब भेज दे। (बहरे मुहीत)

गुनाहों पर नफ़रत का इज़हार न करने पर सज़ा की धमकी

मालिक बिन दीनार रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि एक जगह अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि फ़ुलाँ बस्ती को तबाह कर दो। फ़रिश्तों ने अ़र्ज़ किया कि उस बस्ती में तो आपका फ़ुलाँ इबादत-गुज़ार बन्दा भी है। हुक्म हुआ कि उसको भी अ़ज़ाब चखाओ, क्योंकि हमारी नाफ़रमानियों और गुनाहों को देखकर उसको भी गुस्सा नहीं आया, और उसका चेहरा गुस्से से कभी नहीं बदला।

हज़रत यूशा इब्ने नून अ़लैहिस्सलाम पर अल्लाह तआ़ला ने वही भेजी कि आपकी क़ौम के एक लाख आदमी अ़ज़ाब से हलाक किये जायेंगे, जिनमें चालीस हज़ार नेक लोग हैं और साठ

हज़ार बुरे अ़मल वाले। हज़रत यूशा अ़लैहिस्सलाम ने अ़र्ज़ किया कि रब्बुल-आ़लमीन बुरे किरदार वालों की हलाकत की वजह तो ज़ाहिर है, लेकिन नेक लोगों को क्यों हलाक किया जा रहा है? इरशाद हुआ कि ये नेक लोग भी उन बुरे किरदारों वालों के साथ दोस्ताना ताल्लुक़ात रखते थे, उनके साथ खाने पीने और हंसी दिल्लगी में शरीक रहते थे। मेरी नाफ़रमानियाँ और गुनाह देखकर कभी उनके चेहरों पर कोई नागवारी का असर तक न आया (ये सब रिवायतें तफ़सीर बहरे मुहीत से नक़ल की गयी हैं)।

وَقَالَتِ الْيَهُودُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُولَةٌ ۚ غُلَّتْ أَيْدِيهِمْ وَلُعِنُوا بِمَا قَالُوا ۘ بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَاءُ ۚ وَلَيَزِيدَنَّ كَثِيرًا مِنْهُمْ مَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ طُغْيَانًا وَكُفْرًا ۚ وَأَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاءَ إِلَىٰ يَوْمِ الْقِيَامَةِ ۚ كُلَّمَا أَوْقَدُوا نَارًا لِلْحَرْبِ أَطْفَأَهَا اللّٰهُ ۚ وَيَسْعَوْنَ فِي الْأَرْضِ فَسَادًا ۚ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِينَ ۝ وَلَوْ أَنَّ أَهْلَ الْكِتَابِ آمَنُوا وَاتَّقَوْا لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّئَاتِهِمْ وَلَأَدْخَلْنَاهُمْ جَنَّاتِ النَّعِيمِ ۝ وَلَوْ أَنَّهُمْ أَقَامُوا التَّوْرَاةَ وَالْإِنْجِيلَ وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْهِمْ مِنْ رَبِّهِمْ لَأَكَلُوا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ أَرْجُلِهِمْ ۚ مِنْهُمْ أُمَّةٌ مُقْتَصِدَةٌ ۖ وَكَثِيرٌ مِنْهُمْ سَاءَ مَا يَعْمَلُونَ ۝ يَا أَيُّهَا الرَّسُولُ بَلِّغْ مَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ ۖ وَإِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهُ ۚ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ۗ إِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ۝

व क़ालतिल्-यहूदु यदुल्लाहि मग़्लूलतुन्, ग़ुल्लत् ऐदीहिम् व लुअ़िनू बिमा क़ालू। बल् यदाहु मब्सूततानि युन्फ़िक़ु कै-फ़ यशा-उ, व ल-यज़ीदन्-न कसीरम् मिन्हुम् मा उन्ज़ि-ल इलै-क मिर्रब्बि-क तुग़्यानंव्-व कुफ़रन्, व अल्क़ैना बैनहुमुल्-अ़दाव-त वल्बग़्ज़ा-अ इला यौमिल्-क़ियामति, कुल्लमा औक़दू नारल्-लिल्-हर्बि अत्-फ़-अहल्लाहु व यस्औ़-न फ़िल्अर्ज़ि फ़सादन्, वल्लाहु ला	और यहूद कहते हैं- अल्लाह का हाथ बन्द हो गया। उन्हीं के हाथ बन्द हो जायें, और लानत है उनको इस कहने पर, बल्कि उसके तो दोनों हाथ खुले हुए हैं, ख़र्च करता है जिस तरह चाहे और उनमें बहुतों को बढ़ेगी इस कलाम से जो तुझ पर उतरा तेरे रब की तरफ़ से, शरारत और इनकार, और हमने डाल रखी है उनमें दुश्मनी और बैर क़ियामत के दिन तक, जब कभी आग सुलगाते हैं लड़ाई के लिये अल्लाह उसको बुझा देता है, और दौड़ते हैं मुल्क में फ़साद करते हुए, और अल्लाह पसन्द नहीं करता

युहिब्बुल् मुफ़्सिदीन (64) व लौ अन्-न अह्लल्-किताबि आमनू वत्तक़ौ ल-कफ़्फ़र्ना अन्हुम् सय्यिआतिहिम् व ल-अद्ख़ल्नाहुम् जन्नातिन्-नअ़ीम (65) व लौ अन्नहुम् अक़ामुत्तौरा-त वल्-इन्जी-ल व मा उन्ज़ि-ल इलैहिम् मिर्रब्बिहिम् ल-अ-कलू मिन् फ़ौक़िहिम् व मिन् तह्ति अर्जुलिहिम्, मिन्हुम् उम्मतुम्-मुक़्तसि-दतुन्, व कसीरुम् मिन्हुम् सा-अ मा यअ्मलून (66) ✿	फ़साद करने वालों को। (64) और अगर अहले किताब ईमान लाते और डरते तो हम दूर कर देते उनसे उनकी बुराईयाँ और उनको दाख़िल कर देते नेमत के बाग़ों में। (65) और अगर वे क़ायम रखते तौरात और इंजील को और उसको जो कि नाज़िल हुआ उन पर उनके रब की तरफ़ से तो खाते अपने ऊपर से और अपने पाँव के नीचे से, कुछ लोग हैं उनमें सीधी राह पर, और बहुत से उनमें बुरे काम कर रहे हैं। (66) ✿
या अय्युहर्रसूलु बल्लिग़् मा उन्ज़ि-ल इलै-क मिर्रब्बि-क व इल्लम् तफ़्अ़ल् फ़मा बल्लग़्-त रिसाल-तहू, वल्लाहु यअ़्सिमु-क मिनन्नासि, इन्नल्ला-ह ला यह्दिल् क़ौमल्-काफ़िरीन (67)	ऐ रसूल पहुँचा दे जो तुझ पर उतरा तेरे रब की तरफ़ से, और अगर ऐसा न किया तो तूने कुछ न पहुँचाया उसका पैग़ाम, और अल्लाह तुझको बचा लेगा लोगों से, बेशक अल्लाह रास्ता नहीं दिखाता काफ़िरों की क़ौम को। (67)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

पहले गुज़री आयतों में यहूदियों के कुछ हालात का ज़िक्र था, अब इन आयतों से भी मज़ीद कुछ ख़ास हालात बयान किये गये हैं, जिनका किस्सा यह हुआ कि नबाश बिन कैस और कैनुक़ा के यहूदियों के सरदार फ़ख़ास ने हक़ तआ़ला की जनाब में गुस्ताख़ाना अलफ़ाज़ कन्जूसी वग़ैरह के कहे, जिसका बयान आगे आता है। इस पर अगली आयत नाज़िल हुई, जैसा कि तबरानी के हवाले और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से लुबाब में नक़ल किया गया है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और यहूदियों ने कहा कि अल्लाह तआ़ला का हाथ बन्द हो गया है (यानी अल्लाह की पनाह वह कन्जूसी करने लगा है। दर हक़ीक़त) उन्हीं के हाथ बन्द हैं (यानी वास्तव में वे ख़ुद

कन्जूसी के ऐब में मुब्तला हैं, और ख़ुदा पर ऐब धरते हैं) और अपने इस कहने से ये (अल्लाह की) रहमत से दूर कर दिये गये, (जिसका असर दुनिया में ज़िल्लत और क़ैद और क़त्ल वग़ैरह हुआ और आख़िरत में जहन्नम का अ़ज़ाब। और हरगिज़ नहीं कि ख़ुदा तआ़ला में इसका गुमान भी हो) बल्कि अल्लाह तआ़ला के तो दोनों हाथ खुले हुए हैं (यानी बड़े सख़ी व करीम हैं, लेकिन चूँकि हकीम भी हैं इसलिये) जिस तरह चाहते हैं ख़र्च करते हैं (पस यहूदियों पर जो तंगी हुई उसका सबब हिक्मत है कि उनके कुफ़्र का वबाल उनको चखाना मक़सूद है, न यह कि कन्जूसी इसका कारण हो)। और (यहूदियों के कुफ़्र और नाफ़रमानी का यह हाल है कि उनको यह तौफ़ीक़ न होगी कि मसलन अपने क़ौल का बातिल व ग़लत होना दलील के साथ सुन लिया तो उससे तौबा कर लें, नहीं बल्कि) जो (मज़मून) आपके पास आपके परवर्दिगार की तरफ़ से भेजा जाता है वह उनमें से बहुतों की नाफ़रमानी और कुफ़्र की तरक़्क़ी का सबब हो जाता है, (इस तरह से कि वे उसका भी इनकार करते हैं, तो कुछ तो पहली सरकशी और कुफ़्र था फिर और बढ़ गया) और (उनके कुफ़्र से जो उन पर लानत यानी रहमत से दूरी वाक़े की गयी है इसके दुनियावी आसार में से एक यह है कि) हमने उनमें आपस में (दीन के बारे में) क़ियामत तक दुश्मनी और आपसी नफ़रत डाल दी। (चुनाँचे उनमें विभिन्न फ़िर्क़े हैं, और हर फ़िर्क़ा दूसरे का दुश्मन, चुनाँचे आपसी दुश्मनी व नफ़रत की वजह से) जब कभी (मुसलमानों के साथ) लड़ाई की आग भड़काना चाहते हैं (यानी लड़ने का इरादा करते हैं) अल्लाह तआ़ला उसको ख़त्म कर देते हैं (और बुझा देते हैं, यानी मरऊब हो जाते हैं, या लड़कर मग़लूब हो जाते हैं, या आपस के झगड़े और विवाद की वजह से सहमति की नौबत नहीं आती) और (जब लड़ाई से रह जाते हैं तो अपनी दुश्मनी दूसरी तरह निकालते हैं कि) मुल्क में (ख़ुफ़िया) फ़साद "यानी बिगाड़ और ख़राबी" करते फिरते हैं, (जैसे नौ-मुस्लिमों को बहकाना, लगाई बुझाई करना, अ़वाम को तौरात के बदले हुए मज़ामीन सुनाकर इस्लाम से रोकना) और अल्लाह (चूँकि) फ़साद करने वालों को महबूब नहीं रखते (यानी नापसन्द रखते हैं, इसलिये इस फ़साद की उनको ख़ूब सज़ा होगी चाहे दुनिया में भी वरना आख़िरत में तो ज़रूर)।

और अगर ये अहले किताब (यहूदी व ईसाई जिन हक़ बातों के इनकारी हैं, जैसे हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत और क़ुरआन का हक़ होना, इन सब पर) ईमान ले आते और (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वास्ते से जिन बातों का कुफ़्र व नाफ़रमानी होना बतलाया गया है उन सबसे) तक़्वा (यानी परहेज़) इख़्तियार करते तो हम ज़रूर उनकी (पिछली) तमाम बुराईयाँ (जिनमें कुफ़्र व शिर्क और नाफ़रमानी व गुनाह, सब अक़्वाल व अहवाल आ गये) माफ़ कर देते और (माफ़ करके) ज़रूर उनको चैन (और आराम) के बाग़ों (यानी जन्नत) में दाख़िल करते (तो ये आख़िरत की बरकतें और फल हुए)।

और अगर ये लोग (ईमान और ज़िक्र हुई परहेज़गारी इख़्तियार करते जिसको दूसरे तरीक़े से यूँ कहा जाता है कि) तौरात और इन्जील की और जो (किताब) उनके परवर्दिगार की तरफ़ से (अब) उनके पास (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के माध्यम से) भेजी गई है (यानी

क़ुरआन) उसकी पूरी पाबन्दी करते (यानी इनमें जिस-जिस बात पर अ़मल करने को लिखा है सब पर पूरा अ़मल करते, इसमें हुज़ूरे पाक के रसूल होने की तस्दीक़ भी आ गयी, और इससे बदले हुए और निरस्त हो चुके अहकाम निकल गये, क्योंकि इन किताबों का मजमूआ़ उन पर अ़मल करने को नहीं बतलाता बल्कि मना करता है) तो ये लोग (इस वजह से कि) ऊपर से (यानी आसमान से पानी बरसता) और नीचे से (यानी ज़मीन से पैदावार होती) ख़ूब फ़रागत से खाते (बरतते। यह ईमान की दुनियावी बरकतों का ज़िक्र हुआ, लेकिन कुफ़्र पर अड़े रहे, इसलिये तंगी में पकड़े गये। जिस पर कुछ ने हक़ तआ़ला की शान में कन्जूसी की निस्बत करके गुस्ताख़ी की, मगर फिर भी सब यहूदी व ईसाई बराबर नहीं, चुनाँचे) उन (ही) में (एक जमाअ़त सही रास्ते पर चलने वाली (भी) है, (जैसे यहूदियों में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम और उनके साथी, और ईसाईयों में हज़रत नजाशी और उनके साथी। लेकिन ऐसे बहुत कम ही हैं) और (बाक़ी) ज़्यादा उनमें ऐसे ही हैं कि उनके किरदार बहुत बुरे हैं (क्योंकि कुफ़्र व दुश्मनी से बदतर क्या किरदार होगा)।

ऐ रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! जो-जो कुछ आपके रब की तरफ़ से आप पर नाज़िल किया गया है आप (लोगों को) सब पहुँचा दीजिए। और अगर (मान लो जबकि यह असंभव है) आप ऐसा न करेंगे तो (ऐसा समझा जायेगा जैसे) आपने अल्लाह तआ़ला का एक पैग़ाम भी नहीं पहुँचाया, (क्योंकि यह मजमूआ़ फ़र्ज़ है, तो जैसे पूरे को छुपाने से यह फ़र्ज़ छूट जाता है इसी तरह कुछ के छुपाने से भी वह फ़र्ज़ रह जाता है) और (तब्लीग़ के बारे में काफ़िरों का कुछ ख़ौफ़ न कीजिए, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला आपको लोगों से (यानी इससे कि आपके मुक़ाबिल होकर क़त्ल व हलाक कर डालें) महफ़ूज़ रखेगा, (और) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला उन काफ़िर लोगों को (इस तरह क़त्ल व हलाक कर डालने के वास्ते आप तक) राह न देंगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

यहूदियों की एक गुस्ताख़ी का जवाब

ऊपर दर्ज हुई पहली आयत (यानी आयत नम्बर 64) में यहूदियों का एक संगीन जुर्म और एक बदतरीन कलिमा यह ज़िक्र किया गया कि वे कमबख़्त यह कहने लगे कि (अल्लाह की पनाह) अल्लाह तआ़ला तंगदस्त (ग़रीब) हो गया।

वाक़िआ़ यह था कि अल्लाह तआ़ला ने मदीना के यहूदियों को मालदार और गुंजाईश वाला बनाया था, मगर जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मदीना तशरीफ़ लाये और आपकी दावत उनको पहुँची तो उन ज़ालिमों ने अपनी क़ौमी चौधराहट और अपनी जाहिल रस्मों से हासिल होने वाले नज़रानों की ख़ातिर इस हक़ की दावत से मुँह फेर लिया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़ालफ़त की, तो इसकी सज़ा में अल्लाह तआ़ला ने उन पर दुनिया भी तंग कर दी, ये तंगदस्त हो गये। इस पर उन नालायक़ों की ज़बान से ऐसे कलिमात

निकलने लगे कि (अल्लाह की पनाह) ख़ुदाई ख़ज़ाने में कमी आ गयी, या अल्लाह तआ़ला ने कन्जूसी इख़्तियार कर ली। इसके जवाब में इस आयत में इरशाद फ़रमाया कि हाथ तो उन्हीं कहने वालों के बंधेंगे और उन पर लानत होगी। जिसका असर आख़िरत में अ़ज़ाब और दुनिया में ज़िल्लत व रुस्वाई की सूरत में ज़ाहिर होगा। अल्लाह तआ़ला के हाथ तो हमेशा खुले हुए हैं, उसकी सख़ावत और अ़ता करना तो हमेशा से है और हमेशा रहेगा। मगर जिस तरह वह ग़नी और वुस्अ़त वाले हैं इसी तरह हिक्मत वाले भी हैं। हिक्मत के साथ उसके तक़ाज़े के मुताबिक़ ख़र्च फ़रमाते हैं, जिस पर मुनासिब समझते हैं वुस्अ़त फ़रमाते हैं और जिस पर मुनासिब समझते हैं तंगी और तंगदस्ती मुसल्लत फ़रमा देते हैं।

फिर फ़रमाया कि ये नाफ़रमान लोग हैं, आप पर जो क़ुरआनी बयानात और स्पष्ट अहकाम उतरे हैं उनसे फ़ायदा उठाने के बजाय इनका कुफ़्र व इनकार और सख़्त होता जाता है, और अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को इनकी बुराई से बचाने के लिये ख़ुद इनके फ़िर्क़ों में झगड़ा और सख़्त विवाद डाल दिया है, जिसकी वजह से मुसलमानों के ख़िलाफ़ न उनको खुली जंग करने का हौसला हो सकता है और न उनकी कोई साज़िश चल सकती है। 'कुल्लमा औक़दू नारल् लिल्हर्बि अत्फ़-अहल्लाहु' (जब कभी वे आग सुलगाते हैं लड़ाई के लिये अल्लाह उसको बुझा देता है) में ज़ाहिरी जंग की नाकामी और 'यस्औ़-न फ़िल्अर्ज़ि फ़सादन्' (दौड़ते हैं मुल्क में फ़साद करते हुए) में ख़ुफ़िया साज़िशों की नाकामी का ज़िक्र है।

अल्लाह के अहकाम पर पूरा अ़मल दुनिया में भी बरकतों का सबब है

आयत नम्बर 64 में यहूदियों को हिदायत दी गयी कि तौरात और इंजील के अहकामात और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के इरशादात से उन लोगों ने कोई फ़ायदा न उठाया। दुनिया की हिर्स और लालच में मुब्तला होकर सब को भुला बैठे, जिसके नतीजे में दुनिया में भी तंगदस्ती का शिकार हुए। लेकिन अगर अब भी ये लोग ईमान और परहेज़गारी व नेकी के तरीक़े को इख़्तियार कर लें तो हम इनकी सब पिछली ख़तायें माफ़ कर दें, और इनको नेमतों से भरे हुए बाग़ अ़ता कर दें।

अल्लाह के अहकाम पर पूरा अ़मल किस तरह होता है

आयत नम्बर 66 यानीः

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ.................الخ

में उसी ईमान और तक़्वे की कुछ तफ़सील ज़िक्र की गयी है जिस पर दुनियावी बरकतें, आराम व राहत का वायदा पिछली आयत में किया गया है। और तफ़सील यह है कि तौरात व इंजील और उनके बाद जो आख़िरी किताब क़ुरआन भेजी गयी उसको क़ायम करें। यहाँ अ़मल

करने के बजाय लफ़्ज़ "इक़ामत" यानी क़ायम करने का लाया गया, मुराद यह है कि उनकी तालीमात पर पूरा-पूरा सही अ़मल जब होगा कि न उसमें कोताही और कमी हो और न ज़्यादती, जिस तरह किसी सुतून को क़ायम उस वक़्त कहा जा सकता है जब वह किसी तरफ़ को झुका हुआ न हो, सीधा खड़ा हो।

इसका हासिल यह हुआ कि यहूदी अगर आज भी तौरात व इंजील और क़ुरआने करीम की हिदायतों पर ईमान ले आयें और हिदायतों के मुताबिक़ उन पर पूरा-पूरा अ़मल करें, न अ़मली कोताही में मुब्तला हों न हद से निकलने और ज़्यादती में, कि अपनी बनाई हुई चीज़ों को दीन क़रार दे दें, तो आख़िरत की वायदा की हुई नेमतों के पात्र और मुस्तहिक़ होंगे, और दुनिया में भी उन पर रिज़्क़ के दरवाज़े इस तरह खोल दिये जायेंगे कि ऊपर से रिज़्क़ बरसेगा और नीचे से उबलेगा। नीचे ऊपर से मुराद बज़ाहिर यह है कि आसानी के साथ लगातार रिज़्क़ अ़ता होगा। (तफ़सीरे कबीर)

ऊपर की आयत में तो सिर्फ़ आख़िरत की नेमतों का वायदा था, इस आयत में दुनियावी आराम व राहत का वायदा भी बड़ी तफ़सील के साथ बयान फ़रमाया गया। इसकी वजह शायद यह हो कि यहूदियों की बद-अ़मली (बुरे आमाल) और तौरात व इंजील के अहकाम में रद्दोबदल, कमी-बेशी और तोड़-मरोड़ की बड़ी वजह उनकी दुनिया परस्ती और माल का लालच था, और यह वह आफ़त थी जिसने उनको क़ुरआने करीम और रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की स्पष्ट निशानियाँ देखने के बावजूद इनकी इताअ़त से रोका हुआ था। उनको ख़तरा यह था कि अगर हम मुसलमान हो जायेंगे तो हमारी यह चौधराहट ख़त्म हो जायेगी, और धर्मगुरू होने की हैसियत से जो नज़राने और हदिये मिलते हैं उनका सिलसिला बन्द हो जायेगा। अल्लाह तआ़ला ने उनके इस ख़्याल को दूर करने के लिये यह भी वायदा फ़रमा लिया कि अगर वे सच्चे दिल से ईमान और नेक अ़मल इख़्तियार कर लें तो उनकी दुनियावी दौलत व राहत में भी कोई कमी नहीं होगी, बल्कि ज़्यादती हो जायेगी।

एक शुब्हा और उसका जवाब

इस तफ़सील से यह भी मालूम हो गया कि यह ख़ास वायदा उन यहूदियों के साथ किया गया था जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में मौजूद और आपके मुख़ातब थे। वे अगर इन अहकाम को मान लेते तो दुनिया में भी उनको हर तरह की नेमत व राहत दे दी जाती। चुनाँचे उस वक़्त जिन हज़रात ने ईमान और नेक अ़मल इख़्तियार कर लिया उनको ये नेमतें पूरी मिलीं, जैसे हब्शा के बादशाह नजाशी और अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा, इससे यह लाज़िम नहीं आता कि जब कोई ईमान व नेक अ़मल का पाबन्द हो जाये तो दुनिया में उसके लिये रिज़्क़ की वुस्अ़त ज़रूर होगी, और जो न हो तो उसके लिये रिज़्क़ की तंगी ज़रूर होगी। क्योंकि यहाँ कोई आ़म क़ायदा और उसूल बयान फ़रमाना मक़सद नहीं, एक ख़ास जमाअ़त से ख़ास हालात में वायदा किया गया है।

अलबत्ता ईमान और नेक अ़मल पर आ़म क़ायदे और ज़ाब्ते की सूरत से पाकीज़ा ज़िन्दगी अ़ता होने का वायदा आ़म है, मगर वह रिज़्क़ में फैलाव और कसरत की सूरत में भी हो सकती है और ज़ाहिरी तंगदस्ती की सूरत में भी, जैसा कि अम्बिया व औलिया के हालात इस पर गवाह और सुबूत हैं कि सब को हमेशा रिज़्क़ की वुस्अ़त और फ़राख़ी तो नहीं मिली, लेकिन पाकीज़ा ज़िन्दगी सब को अ़ता हुई।

आयत के आख़िर में अ़दल व इन्साफ़ के तक़ाज़े के सबब यह भी फ़रमा दिया कि जो टेढ़ी चाल और बुरे आमाल यहूदियों के बयान किये गये हैं, यह सारे यहूदियों का हाल नहीं, बल्कि उनमें एक थोड़ी सी जमाअ़त सही रास्ते पर भी है, लेकिन उनकी अक्सरियत बदकार, बुरे आमाल वाली है। सही रास्तों पर होने वालों से मुराद वे लोग हैं जो पहले यहूदी या ईसाई थे फिर क़ुरआने करीम और रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान ले आये। इन दोनों आयतों में और इनसे पहले के निरन्तर दो रुकूअ़ में यहूदियों व ईसाईयों की टेढ़ी और ग़लत चाल, ज़िद व हठधर्मी और इस्लाम विरोधी साज़िशों का ज़िक्र चला आ रहा था।

तब्लीग़ की ताकीद और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली

इसका एक असर तबई तौर पर इनसानी तक़ाज़े के सबब यह भी हो सकता था कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से, मायूस होकर या मजबूर होकर तब्लीग़ व रिसालत में कुछ कमी हो जाये। और दूसरा असर यह भी हो सकता था कि आप मुख़ालफ़त व दुश्मनी और तकलीफ़ें पहुँचाने की परवाह किये बग़ैर रिसालत की तब्लीग़ में लगे रहें और इसके परिणाम स्वरूप आपको दुश्मनों के हाथ से तकलीफ़ों व मुसीबतों का सामना हो। इसलिये तीसरी आयत में एक तरफ़ तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह ताकीदी हुक्म दे दिया गया कि जो कुछ आप पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल किया जाये वह सब का सब बग़ैर किसी झिझक के आप लोगों को पहुँचा दें, कोई बुरा माने या भला, और मुख़ालफ़त करे या क़ुबूल करे। और दूसरी तरफ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह ख़ुशख़बरी देकर मुत्मईन भी कर दिया गया कि रिसालत की तब्लीग़ के सिलसिले में ये काफ़िर लोग आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे, अल्लाह तआ़ला ख़ुद आपकी हिफ़ाज़त फ़रमायेंगे।

इस आयत में एक जुमला (वाक्य) तो यह क़ाबिले ग़ौर है कि:

فَإِنْ لَّمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ.

मुराद इसकी यह है कि अगर अल्लाह का एक हुक्म भी आपने उम्मत को न पहुँचाया तो आप अपने पैग़म्बरी के फ़र्ज़ और ज़िम्मेदारी से भार-मुक्त नहीं होंगे। यही वजह थी कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तमाम उम्र इस फ़रीज़े की अदायेगी में अपनी पूरी हिम्मत व क़ुव्वत लगा दी और हज्जतुल-विदा का मशहूर ख़ुतबा (संबोधन) जो एक हैसियत से इस्लाम

का क़ानून और दस्तूर था और दूसरी हैसियत से एक मेहरबान और माँ-बाप से ज़्यादा शफ़ीक़ पैग़म्बर की आख़िरी वसीयत थी।

हज्जतुल-विदा के मौक़े पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की एक नसीहत

इस ख़ुतबे में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम के एक भारी मजमे के सामने अहम हिदायतें इरशाद फ़रमाने के बाद मजमे से सवाल फ़रमायाः

اَلَا هَلْ بَلَّغْتُ.

देखो! क्या मैंने आपको दीन पहुँचा दिया?

सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने इक़रार फ़रमाया कि ज़रूर पहुँचाया। इस पर इरशाद फ़रमाया कि आप लोग इस पर गवाह रहो। इसी के साथ यह भी इरशाद फ़रमाया किः

فَلْيُبَلِّغِ الشَّاهِدُ الْغَآئِبَ.

यानी जो लोग इस मजमे में हाज़िर हैं वे अनुपस्थित लोगों तक मेरी बात पहुँचा दें।

ग़ायब और अनुपस्थित लोगों में वे लोग भी दाख़िल हैं जो उस वक़्त दुनिया में मौजूद थे मगर मजमे में हाज़िर न थे, और वे लोग भी दाख़िल हैं जो अभी पैदा नहीं हुए। उनको पैग़ाम पहुँचाने का तरीक़ा इल्मे दीन का प्रचार व प्रसार था जिसको हज़राते सहाबा किराम और ताबिईन ने पूरी कोशिश से अन्जाम दिया।

इसी का यह असर था कि आ़म हालात में सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात व कलिमात को अल्लाह की एक भारी अमानत की तरह महसूस फ़रमाया, और अपनी हिम्मत भर इसकी कोशिश की कि आपकी ज़बाने मुबारक से सुना हुआ कोई जुमला (बात और वाक्या) ऐसा न रह जाये जो उम्मत को न पहुँचे। अगर किसी ख़ास सबब या मजबूरी से किसी ने किसी ख़ास हदीस को लोगों से बयान नहीं किया तो अपनी मौत से पहले दो-चार आदमियों को ज़रूर सुना दिया, ताकि वह इस अमानत से भारमुक्त हो जायें। बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु की एक हदीस के बारे में ऐसा ही वाक़िआ़ बयान हुआ है किः

اخبربه معاذ عند موته تاثما.

यानी हज़रत मुआ़ज़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह हदीस अपनी मौत के वक़्त बयान फ़रमाई, ताकि इस अमानत के न पहुँचाने की वजह से गुनाहगार न हो जायें।

आयत के दूसरे जुमले 'वल्लाहु यअ़्सिमु-क मिनन्नासि' में ख़ुशख़बरी दी गयी है कि हज़ारों मुख़ालफ़तों के बावजूद दुश्मन आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे।

हदीस में है कि इस आयत के नाज़िल होने से पहले चन्द सहाबा-ए-किराम हुज़ूरे पाक

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिफ़ाज़त के लिये आम तौर पर साथ लगे रहते थे, और सफ़र व वतन में आपकी हिफ़ाज़त करने थे, इस आयत के उतरने के बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन सब को रुख़्सत कर दिया, कि अब किसी पहरे और हिफ़ाज़त की ज़रूरत नहीं रही, अल्लाह तआ़ला ने यह काम खुद अपने ज़िम्मे ले लिया है।

एक हदीस में हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब मुझे तब्लीग़ व रिसालत के अहकाम मिले तो मेरे दिल में इसकी बड़ी हैबत (डर और घबराहट) थी कि हर तरफ़ से लोग मेरी मुख़ालफ़त करेंगे और मुझको झुठलायेंगे, फिर जब यह आयत नाज़िल हुई तो सुकून व इत्मीनान हासिल हो गया। (तफ़सीरे कबीर)

चुनाँचे इस आयत के उतरने के बाद किसी की मजाल नहीं हुई कि तब्लीग़ व रिसालत के मुक़ाबले में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को कोई तकलीफ़ व नुक़सान पहुँचा सके। जंग व जिहाद में वक़्ती तौर से कोई तकलीफ़ पहुँच जाना इसके ख़िलाफ़ नहीं।

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰى شَیْءٍ حَتّٰى تُقِيْمُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ ۚ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ مَّاۤ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۚ فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۶۸﴾ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِئُوْنَ وَالنَّصٰرٰى مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿۶۹﴾

क़ुल् या अस्लल्-किताबि लस्तुम् अ़ला शैइन् हत्ता तुक़ीमुत्तौरा-त वल्इन्जी-ल व मा उन्ज़ि-ल इलैकुम् मिर्रब्बिकुम्, व ल-यज़ीदन्-न कसीरम्-मिन्हुम् मा उन्ज़ि-ल इलै-क मिर्रब्बि-क तुग़्यानंव्-व कुफ़्रन् फ़ला तअ्-स अ़लल् क़ौमिल्-काफ़िरीन (68) इन्नल्लज़ी-न आमनू वल्लज़ी-न हादू वस्साबिऊ-न वन्नसारा मन् आम-न बिल्लाहि वल्यौमिल्-आख़िरि व	कह दे- ऐ किताब वालो! तुम किसी राह पर नहीं जब तक न क़ायम करो तौरात और इंजील को और जो तुम पर उतरा तुम्हारे रब की तरफ़ से, और उनमें बहुतों को बढ़ेगी इस कलाम से जो तुझ पर उतरा तेरे रब की तरफ़ से शरारत और कुफ़्र, सो तू अफ़सोस न कर इस काफ़िरों की क़ौम पर। (68) बेशक जो मुसलमान हैं और जो यहूदी हैं और साबी फ़िर्क़ा और ईसाई जो कोई ईमान लाये अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर और अ़मल

अ़मि-ल सालिहन् फ़ला ख़ौफ़ुन् अ़लैहिम् व ला हुम् यह़्ज़नून (69)	करे नेक, न उन पर डर है और न वे ग़मगीन होंगे। (69)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

ऊपर अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) को इस्लाम की तरफ़ तवज्जोह और रुचि दिलायी गयी थी, आगे उनके मौजूदा तरीक़े का जिसके हक़ होने के वे दावेदार थे अल्लाह के नज़दीक नाकारा और निजात में नाकाफ़ी होना और निजात का इस्लाम पर मौक़ूफ़ (निर्भर) होना मज़कूर है। और इसके बाद भी उनके कुफ़्र पर जमे और अड़े रहने पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये तसल्ली का मज़मून इरशाद फ़रमाया है, और बीच में एक ख़ास मुनासबत और ज़रूरत से तब्लीग़ का मज़मून आ गया था।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन यहूदियों व ईसाईयों से) कहिए कि ऐ अहले किताब! तुम किसी भी (सही) चीज़ पर नहीं (क्योंकि ग़ैर-मक़बूल रास्ते पर होना बेराह होने की तरह है) जब तक कि तौरात की और इन्जील की और जो किताब (अब) तुम्हारे पास (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के माध्यम से) तुम्हारे रब की तरफ़ से भेजी गई है (यानी क़ुरआन) उसकी भी पूरी पाबन्दी न करोगे, (जिसका मतलब, तरग़ीब और बरकतें ऊपर बयान हुई हैं)। और (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! चूँकि उनमें अक्सर लोग बुरे पक्षपात में मुब्तला हैं इसलिये ये) ज़रूर (है कि) जो (मज़मून) आपके पास आपके रब की तरफ़ से भेजा जाता है वह उनमें से बहुतों की नाफ़रमानी और कुफ़्र की तरक़्क़ी का सबब बन जाता है, (और इसमें मुम्किन है कि आपको रंज व ग़म हो, लेकिन जब यह मालूम हो गया कि ये लोग ग़लत पक्षपात रखने वाले हैं) तो आप इन काफ़िर लोगों (की इस हालत) पर ग़म न किया कीजिए। यह तहक़ीक़ी बात है कि मुसलमान और यहूदी और साबिईन का फ़िर्क़ा और ईसाईयों (इन सब में) में से जो शख़्स यक़ीन रखता हो अल्लाह तआ़ला (की ज़ात व सिफ़ात) पर और क़ियामत के दिन पर, और कारगुज़ारी अच्छी करे (यानी शरीअ़त के क़ानून के मुवाफ़िक़ तो) ऐसों पर (आख़िरत में) न किसी तरह का अन्देशा (डर और ख़ौफ़) है और न वे ग़मगीन होंगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अहले किताब को अल्लाह की शरीअ़त की पैरवी की हिदायत

पहली आयत में अहले किताब (यानी यहूदियों व ईसाईयों) को अल्लाह की शरीअ़त (यानी इस्लामी क़ानून) की पैरवी और उस पर अ़मल करने की हिदायत इस उनवान से फ़रमाई गयी थी

कि अगर तुमने शरीअ़त के अहकाम की पाबन्दी न की तो तुम कुछ नहीं। मतलब यह है कि इस्लामी शरीअ़त की पाबन्दी के बग़ैर तुम्हारे सारे कमालात और आमाल सब बेकार हैं, तुमको अल्लाह तआ़ला ने एक फ़ितरी (यानी पैदाईशी और बिना किसी मेहनत के) कमाल यह अ़ता फ़रमाया है कि तुम नबियों की औलाद हो। दूसरे तौरात व इंजील के इल्मी कमालात भी तुम्हें हासिल हैं, तुम में से बहुत से आदमी बुज़ुर्ग क़िस्म के भी हैं, मुजाहदे और तपस्यायें करते हैं, मगर इन सब चीज़ों की क़ीमत और वज़न अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सिर्फ़ इस पर टिका है कि तुम अल्लाह की शरीअ़त (यानी इस्लामी क़ानून) का पालन करो, उसके बग़ैर न कोई नसबी फ़ज़ीलत काम आयेगी न इल्मी तहक़ीक़ात तुम्हारी निजात का सामान बनेंगी, न तुम्हारे मुजाहदे, मेहनतें और तपस्यायें।

इस इरशाद में मुसलमानों को भी यह हिदायत मिल गयी कि कोई दुर्वेशी और बुज़ुर्गी, मुजाहदे व रियाज़तें और कश्फ़ व इल्हाम उस वक़्त तक अल्लाह के नज़दीक फ़ज़ीलत और निजात की चीज़ नहीं जब तक कि शरीअ़त की पूरी पाबन्दी न हो।

इस आयत में अल्लाह की शरीअ़त की पैरवी के लिये तीन चीज़ों की पैरवी की हिदायत की गयी है- अव्वल तौरात, दूसरे इंजील (जो यहूदियों व ईसाईयों के लिये पहले नाज़िल हो चुकी थीं) तीसरे 'व मा उन्ज़ि-ल इलैकुम मिर्रब्बिकुम' यानी जो कुछ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तुम्हारे पास भेजा गया।

सहाबा किराम, ताबिईन हज़रात और मुफ़स्सिरीन साहिबान की अक्सरियत का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि इससे मुराद क़ुरआने करीम है, जो तमाम उम्मते दावत के लिये जिसमें यहूदी व ईसाई भी शामिल हैं, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वास्ते से भेजा गया। इसलिये आयत के मायने यह होंगे कि जब तक तुम तौरात, इंजील और क़ुरआन के लाये हुए अहकाम पर सही-सही और पूरा-पूरा अ़मल न करोगे तुम्हारा कोई नसबी या इल्मी कमाल अल्लाह के नज़दीक मक़बूल व मोतबर नहीं होगा।

यहाँ एक बात क़ाबिले ग़ौर है कि इस आयत में तौरात व इंजील की तरह क़ुरआन का मुख़्तसर नाम ज़िक्र कर देने के बजाय एक लम्बा जुमला 'व मा उन्ज़ि-ल इलैकुम मिर्रब्बिकुम' इस्तेमाल फ़रमाया गया है। इसमें क्या हिक्मत है? हो सकता है कि इसमें उन हदीसों के मज़मून की तरफ़ इशारा हो जिनमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस तरह मुझे इल्म व हिक्मत का ख़ज़ाना क़ुरआने करीम दिया गया, इसी तरह दूसरे उलूम व मआ़रिफ़ भी अ़ता किये गये हैं, जिनको एक हैसियत से क़ुरआने करीम की तशरीह (व्याख्या और तफ़सीर) भी कहा जा सकता है। हदीस के अलफ़ाज़ ये हैं:

الا انّی اوتیت القران ومثله معه الا یوشك رجل شبعان علٰی اریکته یقول علیکم بهذا القران فما وجدتم فیه من حلال فاحلّوه وما وجدتم فیه من حرام فحرموه وان ماحرّم رسول الله (صلّی الله علیه وسلم) کما حرّم الله. (ابوداود،ابن ماجة،دارمی وغیره)

"याद रखो कि मुझे क़ुरआन दिया गया और उसके साथ उसी के जैसे और भी उलूम दिये गये। आने वाले ज़माने में ऐसा होने वाला है कि कोई पेट भरा, राहत व आराम में मस्त यह कहने लगे कि तुमको सिर्फ़ क़ुरआन काफ़ी है, जो इसमें हलाल है सिर्फ़ उसको हलाल समझो, और जो इसमें हराम है सिर्फ़ उसको हराम समझो। हालाँकि हक़ीक़त यह है कि जिस चीज़ को अल्लाह के रसूल ने हराम ठहराया है वह भी ऐसी ही हराम है जैसी अल्लाह तआ़ला के कलाम के ज़रिये हराम की हुई चीज़ें हराम हैं।"

(अबू दाऊद, इब्ने माजा, दारमी वग़ैरह)

अहकाम की तीन क़िस्में

और खुद क़ुरआन भी इसी मज़मून का गवाह है। चुनाँचे इरशाद है:

وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى. اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْيٌ يُّوْحٰى.

यानी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कोई बात अपनी तरफ़ से नहीं कहते, जो कुछ आप फ़रमाते हैं वह सब अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वही होता है।

और जिन हालात में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कोई बात अपने इज्तिहाद और क़ियास के ज़रिये फ़रमाते हैं और वही के ज़रिये फिर उसके ख़िलाफ़ आपको कोई हिदायत नहीं मिलती तो अन्जामकार वह क़ियास और इज्तिहाद भी वही के हुक्म में हो जाता है।

जिसका ख़ुलासा यह हुआ कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो अहकाम उम्मत को दिये उनमें एक तो वो हैं जो क़ुरआने करीम में स्पष्ट रूप से बयान हुए हैं, दूसरे वो हैं जो स्पष्ट रूप से क़ुरआन में बयान नहीं हुए बल्कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर अलग से वही के ज़रिये नाज़िल हुए। तीसरे वो जो आपने अपने इज्तिहाद व क़ियास (अन्दाज़े और ग़ौर व फ़िक्र) से कोई हुक्म दिया और फिर अल्लाह तआ़ला ने उसके ख़िलाफ़ कोई हुक्म नाज़िल नहीं फ़रमाया, वह भी वही (अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आये हुए पैग़ाम) के हुक्म में हो गया। ये तीनों क़िस्म के अहकाम पैरवी व अ़मल के लिये लाज़िमी हैं, और 'व मा उन्ज़ि-ल इलैकुम मिर्रब्बिकुम' (और जो कुछ तुम्हारे रब की तरफ़ से नाज़िल किया गया) में दाख़िल हैं।

शायद ज़िक्र की गयी आयत में क़ुरआन का मुख़्तसर नाम छोड़कर यह लम्बा जुमलाः

وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ.

इसी तरफ़ इशारा करने के लिये लाया गया हो कि उन तमाम अहकाम पर अ़मल करना लाज़िम व वाजिब है जो स्पष्ट रूप से क़ुरआन में ज़िक्र किये गये हों, या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वो अहकाम दिये हों।

दूसरी बात इस आयत में यह क़ाबिले ग़ौर है कि इसमें यहूदियों व ईसाईयों को तौरात, इंजील और क़ुरआन तीनों के अहकाम पर अ़मल करने की हिदायत की गयी है, हालाँकि उनमें से कुछ कुछ के लिये नासिख़ (निरस्त और रद्द करने वाले) हैं। इंजील ने तौरात के कुछ

अहकाम को मन्सूख़ (निरस्त और ख़त्म हो चुके) ठहराया और क़ुरआन ने तौरात और इंजील के बहुत से अहकाम को मन्सूख़ क़रार दिया। तो फिर तीनों के मजमूए पर अमल कैसे हो?

जवाब स्पष्ट है कि हर आने वाली किताब ने पिछली किताब के जिन अहकाम को बदल दिया, तो बदले हुए तरीक़े पर अमल करना ही उन दोनों किताबों पर अमल करना है। मन्सूख़ हुए (निरस्त और बदले हुए) अहकाम पर अमल करना दोनों किताबों के तक़ाज़े के ख़िलाफ़ है।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को एक तसल्ली

आख़िर में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तसल्ली के लिये इरशाद फ़रमाया कि अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) के साथ हमारी इस रियायत व इनायत के बावजूद उनमें बहुत से लोग ऐसे होंगे कि अल्लाह की इस इनायत से कोई फ़ायदा न उठायेंगे, बल्कि उनका कुफ़्र व दुश्मनी और बढ़ जायेंगे। आप इससे ग़मगीन न हों, और ऐसे लोगों पर तरस न खायें।

चार क़ौमों को ईमान और नेक अमल की तरग़ीब और आख़िरत में निजात का वायदा

दूसरी आयत में हक़ तआ़ला शानुहू ने चार क़ौमों को संबोधित करके ईमान और नेक अमल की तरग़ीब (शौक़ व प्रेरणा) और उस पर आख़िरत की कामयाबी का वायदा फ़रमाया। उनमें से पहले **मुसलमान** हैं, दूसरे **यहूदी** तीसरे **साबिऊन** और चौथे **ईसाई**। उनमें तीन क़ौमें मुसलमान, यहूदी और ईसाई तो परिचित, मशहूर और दुनिया के अक्सर ख़ित्तों में मौजूद हैं। साबिऊन या साबिआ के नाम से आजकल कोई क़ौम मशहूर व परिचित नहीं। इसी लिये इसके मुतैयन करने में उलेमा व इमामों के अक़वाल भिन्न और अलग-अलग हैं। इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर ने क़तादा रहमतुल्लाहि अलैहि के हवाले से एक क़ौल यह भी नक़ल किया है कि साबिऊन वे लोग हैं जो फ़रिश्तों की इबादत करते हैं और क़िब्ले के ख़िलाफ़ नमाज़ पढ़ते हैं, और आसमानी किताब ज़बूर की तिलावत करते है (जो हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई थी)।

क़ुरआने करीम के इस मज़मून से बज़ाहिर इसी की ताईद होती है कि चार आसमानी किताबें जिनका क़ुरआन मजीद में ज़िक्र आया है- तौरात, ज़बूर, इंजील और क़ुरआन, इसमें उन चार किताबों के मानने वालों का ज़िक्र आ गया।

इसी मज़मून की एक आयत तक़रीबन इन्हीं अलफ़ाज़ के साथ सूरः ब-क़रह के सातवें रुकूअ़ में गुज़र चुकी है:

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا وَالنَّصَارَىٰ وَالصَّابِئِينَ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ.

इसमें मौक़े की मुनासबत से कुछ अलफ़ाज़ के आगे या पीछे (पहले या बाद में) होने के

अ़लावा कोई फ़र्क़ नहीं है।

अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सम्मान व विशेषता का मदार नेक आमाल पर है

इन दोनों आयतों के मज़मून का ख़ुलासा यह है कि हमारे दरबार में किसी की नसबी, वतनी और क़ौमी ख़ुसूसियत कुछ नहीं, जो शख़्स पूरी इताअ़त, एतिक़ाद और नेक अ़मल इख़्तियार करेगा, चाहे वह पहले से कैसा ही हो, हमारे यहाँ मक़बूल और उसकी ख़िदमत क़ाबिले क़द्र है। और यह ज़ाहिर है कि क़ुरआन के नाज़िल होने के बाद पूरी इताअ़त मुसलमान होने में सीमित है, क्योंकि पहली आसमानी किताबें तौरात व इंजील में भी इसकी हिदायतें मौजूद हैं, और क़ुरआने करीम तो सरासर इसी के लिये नाज़िल हुआ। इसी लिये क़ुरआन के उतरने और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनने के बाद क़ुरआन और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाये बग़ैर न तौरात व इंजील की पैरवी सही हो सकती है न ज़बूर की। तो आयत का मतलब यह होगा कि इन तमाम क़ौमों में से जो मुसलमान हो जायेगा आख़िरत में निजात व सवाब का मुस्तहिक़ होगा। इसमें उस ख़्याल का जवाब हो गया कि ये कुफ़्र व नाफ़रमानी और इस्लाम व मुसलमानों के ख़िलाफ़ शरारतें जो अब तक करते रहे हैं, मुसलमान हो जाने के बाद उनका क्या अन्जाम होगा। मालूम हुआ कि पिछले सब गुनाह और ख़तायें माफ़ कर दी जायेंगी और आख़िरत में न उन लोगों को अन्देशा रहेगा न कोई रंज व ग़म पेश आयेगा।

मज़मून पर ग़ौर करने से बज़ाहिर यह मालूम होता है कि यहाँ मुसलमानों का ज़िक्र न होना चाहिये, क्योंकि वे तो ईमान व इताअ़त के उस मक़ाम पर हैं जिसको आयत चाहती है। यहाँ ज़िक्र सिर्फ़ उन लोगों का करना चाहिये जिनको इस मक़ाम की तरफ़ बुलाना है। मगर इस ख़ास अन्दाज़ में कि मुसलमानों का ज़िक्र भी उनके साथ मिला दिया गया एक ख़ास बलाग़त (कलाम में ख़ूबी) पैदा हो गयी। इसकी ऐसी मिसाल है कि कोई हाकिम या बादशाह किसी ऐसे मौक़े पर यूँ कहे कि हमारा क़ानून आ़म है, चाहे कोई मुवाफ़िक़ हो या मुख़ालिफ़, जो शख़्स इताअ़त करेगा वह मेहरबानी व इनाम पायेगा। अब ज़ाहिर है कि मुवाफ़िक़ तो इताअ़त कर ही रहा है, सुनाना तो असल में उसको है जो मुख़ालफ़त कर रहा है। लेकिन इस जगह मुवाफ़िक़ को भी ज़िक्र करने में हिक्मत यह है कि हमारी जो मुवाफ़िक़ लोगों के साथ इनायत व मेहरबानी है वह किसी नसबी या क़ौमी ख़ुसूसियत की बिना पर नहीं बल्कि उनकी इताअ़त की सिफ़त पर तमाम इनायत व इनाम का मदार है। अगर मुख़ालिफ़ भी इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) इख़्तियार करेगा वह भी इस लुत्फ़ व इनायत का पात्र होगा।

ऊपर बयान हुई चार क़ौमों को ख़िताब करके जिस बात की हिदायत की गयी उसके तीन हिस्से और भाग हैं- अल्लाह पर ईमान लाना, आख़िरत के दिन पर ईमान लाना और नेक अ़मल।

रिसालत पर ईमान लाये बग़ैर निजात नहीं

ज़ाहिर है कि इस आयत में तमाम ईमानी बातों और इस्लामी अ़क़ीदों की तफ़सीलात बयान करना मन्ज़ूर नहीं, न इसका कोई मौक़ा है। इस्लाम के चन्द बुनियादी अ़क़ीदों को ज़िक्र करके तमाम इस्लामी अ़क़ीदों की तरफ़ इशारा करना और उसकी तरफ़ दावत देना मक़सूद है। और न यह कोई ज़रूरी बात है कि हर आयत में जहाँ ईमान का ज़िक्र आये उसकी सारी तफ़सीलात वहीं ज़िक्र की जायें, इसलिये इस जगह रसूल पर ईमान लाने या नुबुव्वत पर ईमान लाने का ज़िक्र स्पष्ट रूप से न होने से किसी मामूली समझ व अ़क़्ल और इन्साफ़ व दानिश रखने वाले को किसी शुब्हे की गुंजाईश न थी, ख़ुसूसन जबकि पूरा क़ुरआन और उसकी सैंकड़ों आयतें रिसालत पर ईमान लाने के स्पष्ट तज़किरों से भरी पड़ी हैं। जिनमें यह वज़ाहत स्पष्ट रूप से मौजूद है कि रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और रसूले पाक के इरशादात पर मुकम्मल ईमान लाये बग़ैर निजात नहीं, और कोई ईमान व अ़मल बग़ैर इसके मक़बूल व मोतबर नहीं। लेकिन बेदीन लोगों का एक गिरोह जो किसी न किसी तरह क़ुरआन में अपने बुरे नज़रियों को ठूँसना चाहता है, और उन्होंने इस आयत में स्पष्ट तरीक़े से रिसालत का ज़िक्र न होने से एक नया नज़रिया क़ायम कर लिया, जो क़ुरआन व सुन्नत की बेशुमार स्पष्ट वज़ाहतों के क़तई ख़िलाफ़ है। वह यह कि हर शख़्स अपने-अपने मज़हब वाला यहूदी, ईसाई यहाँ तक कि हिन्दू बुत-परस्त (मूर्ति पूजक) रहते हुए भी अगर सिर्फ़ अल्लाह पर और क़ियामत के दिन पर ईमान रखता हो और नेक काम करे तो आख़िरत की निजात का मुस्तहिक़ हो सकता है, आख़िरत की निजात के लिये इस्लाम में दाख़िल होना ज़रूरी नहीं। (नऊज़ु बिल्लाहि मिन्हा)

जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन की तिलावत की तौफ़ीक़ और उस पर सही ईमान अ़ता फ़रमाया है, उनके लिये क़ुरआनी वज़ाहतों से इस मुग़ालते का दूर कर देना किसी बड़े इल्म और गहरे विचार का मोहताज नहीं। क़ुरआने करीम का उर्दू तर्जुमा जानने वाले हज़रात भी इस फ़िक्र व ख़्याल की ग़लती को आसानी से समझ सकते हैं। चन्द आयतें मिसाल के तौर पर ये हैं:

क़ुरआन करीम ने जिस जगह ईमाने मुफ़स्सल का बयान फ़रमाया उसके अलफ़ाज़ सूरः ब-क़रह के आख़िर में ये हैं:

كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ.

"सब ईमान लाये अल्लाह पर और उसके फ़रिश्तों पर और उसकी किताबों पर और उसके रसूलों पर इस तरह कि उसके रसूलों के बीच कोई तफ़रीक़ (फ़र्क़) नहीं करते।"

इस आयत में स्पष्ट तौर पर ईमान की जो तफ़सीलात बयान फ़रमाई हैं उनमें यह भी वाज़ेह कर दिया कि किसी एक या चन्द रसूलों पर ईमान ले आना क़तई निजात के लिये काफ़ी नहीं, बल्कि तमाम रसूलों पर ईमान शर्त है। अगर किसी एक रसूल पर भी ईमान न लाया तो उसका ईमान अल्लाह के नज़दीक मोतबर और मक़बूल नहीं।

दूसरी जगह इरशाद है:

اِنَّ الَّذِيْنَ يَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيُرِيْدُوْنَ اَنْ يُّفَرِّقُوْا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيَقُوْلُوْنَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَّنَكْفُرُ بِبَعْضٍ وَّيُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّتَّخِذُوْا بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا. اُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ حَقًّا.

"जो लोग अल्लाह और उसके रसूलों का इनकार करते हैं और यह चाहते हैं कि अल्लाह और उसके रसूलों के बीच तफ़रीक़ कर दें (कि अल्लाह पर तो ईमान लायें मगर उसके रसूलों पर ईमान न हो) और वे कहते हैं कि हम मानते हैं बाज़ों को और नहीं मानते बाज़ों को और वे चाहें कि कुफ़्र व इस्लाम के बीच बीच का एक रास्ता निकाल लें तो समझ लो कि वही असल में काफ़िर हैं।"

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

لَوْ كَانَ مُوْسٰى حَيًّا لَمَا وَسِعَهٗٓ اِلَّا اتِّبَاعِیْ.

"यानी अगर मान लो आज हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम भी ज़िन्दा होते तो उनको मेरे इत्तिबा (पैरवी) के सिवा कोई चारा न होता।"

तो अब किसी का यह कहना कि हर मज़हब वाले अपने-अपने मज़हब पर अ़मल करें तो बग़ैर हुज़ूर पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाये और बग़ैर मुसलमान हुए वे जन्नत और आख़िरत की कामयाबी और भलाई पा सकते हैं, क़ुरआने करीम की ज़िक्र की हुई आयतों की खुली मुख़ालफ़त है।

इसके अ़लावा अगर हर मज़हब व मिल्लत ऐसी चीज़ है कि उस पर हर ज़माने में अ़मल कर लेना निजात और कामयाबी के लिये काफ़ी है, तो फिर ख़ातिमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भेजना और क़ुरआन को नाज़िल करना ही बेमानी हो जाता है। और एक शरीअ़त के बाद दूसरी शरीअ़त भेजना फ़ुज़ूल हो जाता है। सबसे पहला रसूल एक शरीअ़त एक किताब ले आता, वह काफ़ी थी, दूसरे रसूलों, किताबों शरीअ़तों के भेजने की क्या ज़रूरत थी। ज़्यादा से ज़्यादा ऐसे लोगों का वजूद काफ़ी होता जो उस शरीअ़त व किताब को बाक़ी रखने और उस पर अ़मल करने और कराने का एहतिमाम करते, जो आ़म तौर पर हर उम्मत के उलेमा का फ़रीज़ा रहा है, और इस सूरत में क़ुरआने करीम का यह इरशाद किः

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا.

यानी हमने तुम में से हर उम्मत के लिये एक ख़ास शरीअ़त और ख़ास रास्ता बनाया है, यह सब बेमानी हो जाता है।

और फिर इसका क्या जवाज़ (औचित्य) रह जाता है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने ऊपर और अपनी किताब क़ुरआन पर ईमान न रखने वाले तमाम यहूदियों व ईसाईयों से और दूसरी क़ौमों से न सिर्फ़ तब्लीग़ी जिहाद किया बल्कि क़त्ल व क़िताल और तलवारों की जंगें भी लड़ीं। और अगर इनसान के मोमिन और अल्लाह के यहाँ मक़बूल होने के लिये सिर्फ़ अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान ले आना काफ़ी हो तो बेचारा इब्लीस

(शैतान) किस जुर्म में मर्दूद होता, क्या उसको अल्लाह पर ईमान न था, या वह आख़िरत के दिन और क़ियामत का इनकारी था? उसने तो ऐन ग़ुस्से की हालत में भी 'इला यौमि युब्अ़सून' कहकर आख़िरत पर ईमान का इक़रार किया है।

हक़ीक़त यह है कि यह मुग़ालता सिर्फ़ इस नज़रिये की पैदावार है कि मज़हब को बिरादरी के न्यौते की तरह किसी को तोहफ़े में दिया जा सकता है, और उसके ज़रिये दूसरी क़ौमों से रिश्ते जोड़े जा सकते हैं। हालाँकि क़ुरआने करीम ने खोल-खोलकर वाज़ेह कर दिया है कि ग़ैर-मुस्लिमों के साथ रवादारी, हमदर्दी, एहसान व सुलूक और मुरव्वत सब कुछ करना चाहिये लेकिन मज़हब की हदों की पूरी हिफ़ाज़त और उसकी सरहदों की पूरी निगरानी के साथ।

क़ुरआने करीम की ज़िक्र की हुई आयत में अगर फ़र्ज़ कर लो रसूल पर ईमान का ज़िक्र बिल्कुल न होता तो क़ुरआन की दूसरी आयतें जिनका ऊपर ज़िक्र किया गया है, जिनमें इसकी बहुत सख़्ती के साथ ताकीद मौजूद है, वे काफ़ी थीं। लेकिन अगर ग़ौर किया जाये तो ख़ुद इस आयत में भी रसूल पर ईमान की तरफ़ स्पष्ट इशारा है, क्योंकि क़ुरआनी इस्तिलाह में अल्लाह पर ईमान वही मोतबर है जिसमें अल्लाह तआ़ला की बतलाई हुई सारी चीज़ों पर ईमान हो। क़ुरआने करीम ने अपनी इस इस्तिलाह को इन अलफ़ाज़ में वाज़ेह फ़रमा दियाः

فَاِنْ اٰمَنُوْا بِمِثْلِ مَآ اٰمَنْتُمْ بِهٖ فَقَدِ اهْتَدَوْا.

यानी जिस तरह का ईमान सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का था सिर्फ़ वही अल्लाह पर ईमान लाना कहलाने का मुस्तहिक़ है। और ज़ाहिर है कि उनके ईमान का बहुत बड़ा रुक्न (हिस्सा) रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाना था। इसलिये 'मन् आम-न बिल्लाहि' के लफ़्ज़ों में ख़ुद रसूल पर ईमान लाना दाख़िल है।

لَقَدْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ وَاَرْسَلْنَآ اِلَيْهِمْ رُسُلًا ۭ كُلَّمَا جَاۗءَهُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ ۙ فَرِيْقًا كَذَّبُوْا وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ ۝ وَحَسِبُوْٓا اَلَّا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ فَعَمُوْا وَصَمُّوْا ثُمَّ تَابَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ ثُمَّ عَمُوْا وَصَمُّوْا كَثِيْرٌ مِّنْهُمْ ۭ وَاللّٰهُ بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ۝

ल-क़द् अख़ज़्ना मीसा-क़ बनी इस्राई-ल व अर्सल्ना इलैहिम् रुसुलन्, कुल्लमा जाअहुम् रसूलुम् बिमा ला तह्वा अन्फ़ुसुहुम् फ़रीक़न् कज़्ज़बू व फ़रीक़ंय्यक़्तुलून (70) व	हमने लिया था पुख़्ता क़ौल बनी इस्राईल से और भेजे उनकी तरफ़ रसूल, जब लाया उनके पास कोई रसूल वह हुक्म जो पसन्द न आया उनके जी को तो बहुतों को झुठलाया और बहुतों को क़त्ल कर डालते थे। (70) और ख़्याल किया कि

हसिबू अल्ला तकू-न फ़ित्नतुन् फ़-अमू व सम्मू सुम्-म ताबल्लाहु अ़लैहिम् सुम्-म अ़मू व सम्मू कसीरुम्-मिन्हुम्, वल्लाहु बसीरुम् बिमा यअ़्मलून (71)	कुछ ख़राबी न होगी सो अंधे हो गये और बहरे, फिर तौबा क़ुबूल की अल्लाह ने उनकी, फिर अंधे और बहरे हुए उनमें से बहुत, और अल्लाह देखता है जो कुछ वे करते हैं। (71)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हमने बनी इस्राईल से (अव्वल तौरात में तमाम पैग़म्बरों की तस्दीक़ व इताअ़त का) अ़हद लिया और (इस अ़हद को याद दिलाने को) हमने उनके पास (बहुत-से) पैग़म्बर भेजे। (लेकिन उनकी यह हालत थी कि) जब कभी उनके पास कोई पैग़म्बर वह (हुक्म) लाया जिसको उनका जी न चाहता था (तब ही उनके साथ मुख़ालफ़त से पेश आये) तो उन्होंने बाज़ों को (तो) झूठा बतलाया और बाज़ों को (बेधड़क) क़त्ल ही कर डालते थे, और (हमेशा हर शरारत पर जब चन्द दिन सज़ा से मोहलत दी गयी) (यही) गुमान किया कि कुछ सज़ा न होगी, इस (गुमान) से (और भी) अन्धे और बहरे (की तरह) बन गये, (कि न नबियों के सच्चा होने की दलीलों को देखा न उनके कलाम को सुना) फिर (एक मुद्दत के बाद) अल्लाह तआ़ला ने उन पर (रहमत के साथ) तवज्जोह फ़रमाई (कि और किसी पैग़म्बर को भेजा कि अब भी राह पर आयें, मगर) फिर भी (इसी तरह) उनमें के बहुत-से अन्धे और बहरे बने रहे, यानी (सब तो नहीं मगर) उनमें के बहुत से, और अल्लाह तआ़ला उनके (इन) आमाल को ख़ूब देखने वाले हैं (यानी उनका गुमान ग़लत था, चुनाँचे उनको वक़्त वक़्त पर सज़ा भी होती रही, मगर उनका यही चलन रहा, यहाँ तक कि अब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ इसी तरह झुठलाने और मुख़ालफ़त का बर्ताव किया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बनी इस्राईल का अ़हद तोड़ना

كُلَّمَا جَآءَهُمْ رَسُوْلٌ ۢبِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ

यानी जब नबी इस्राईल के पास उनका रसूल कोई हुक्म लाता जो उनकी दिली चाहत और मर्ज़ी के मुताबिक़ न होता तो अ़हद व पैमान तोड़कर ख़ुदा से ग़द्दारी करते फिरते। अल्लाह तआ़ला के पैग़म्बरों में से किसी को झुठलाया, किसी को क़त्ल किया, यह तो उनके "अल्लाह पर ईमान और नेक अ़मल" का हाल था, "आख़िरत के दिन पर ईमान" का अन्दाज़ा इससे कर लो कि इस क़द्र सख़्त ज़ुल्मों, अत्याचारों और बाग़ियाना अपराधों को करके बिल्कुल बेफ़िक्र हो बैठे,

जैसे कि इन हरकतों का कोई ख़मियाज़ा भुगतना नहीं पड़ेगा, और ज़ुल्म व बग़ावत के ख़राब परिणाम कभी सामने न आयेंगे। यह ख़्याल करके ख़ुदाई निशानियों और ख़ुदाई कलाम की तरफ़ से बिल्कुल ही अन्धे और बहरे हो गये। और जो काम न करने के थे वो किये, यहाँ तक कि कुछ अम्बिया को क़त्ल और कुछ को क़ैद किया, आख़िर ख़ुदा तआ़ला ने उन पर बुख़्ते नस्सर को मुसल्लत किया, फिर एक लम्बी मुद्दत के बाद फ़ारस (प्राचीन ईरान) के कुछ बादशाहों ने बुख़्ते नस्सर की ज़िल्लत व रुस्वाई की क़ैद से छुड़ाकर बाबिल से बैतुल-मुक़द्दस को वापस किया। उस वक़्त लोगों ने तौबा की और अपनी हालत के सुधार की तरफ़ मुतवज्जह हुए। ख़ुदा तआ़ला ने तौबा क़ुबूल की, लेकिन कुछ ज़माने के बाद फिर वही शरारतें सूझीं और बिल्कुल अन्धे बहरे होकर हज़रत ज़करिया और हज़रत यहया अ़लैहिमस्सलाम के क़त्ल की जुर्रत की, और हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के क़त्ल पर तैयार हो गये। (फ़वाइदे-उस्मानी)

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۭ وَقَالَ الْمَسِيْحُ
يٰبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ ۭ اِنَّهٗ مَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ
الْجَنَّةَ وَمَاْوٰىهُ النَّارُ ۭ وَمَا لِلظّٰلِمِيْنَ مِنْ اَنْصَارٍ ۝ لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ
ثَلٰثَةٍ ۘ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّآ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ ۭ وَاِنْ لَّمْ يَنْتَهُوْا عَمَّا يَقُوْلُوْنَ لَيَمَسَّنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا
مِنْهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝ اَفَلَا يَتُوْبُوْنَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُوْنَهٗ ۭ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝
مَا الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ اِلَّا رَسُوْلٌ ۚ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ ۭ وَاُمُّهٗ صِدِّيْقَةٌ ۭ كَانَا
يَاْكُلٰنِ الطَّعَامَ ۭ اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْاٰيٰتِ ثُمَّ انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ۝ قُلْ اَتَعْبُدُوْنَ
مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَّلَا نَفْعًا ۭ وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝

ल-क़द् क-फ़रल्लज़ी-न क़ालू इन्नल्ला-ह हुवल्-मसीहुब्नु मर्य-म, व क़ालल्मसीहु या बनी इस्राईलअ़्-बुदुल्ला-ह रब्बी व रब्बकुम्, इन्नहू मंय्युश्रिक् बिल्लाहि फ़-क़द् हर्रमल्लाहु अ़लैहिल्-जन्न-त व मअ्वाहुन्नारु, व मा लिज़्ज़ालिमी-न मिन् अन्सार (72) ल-क़द् क-फ़रल्लज़ी-न क़ालू	बेशक काफ़िर हुए जिन्होंने कहा अल्लाह वही मसीह है मरियम का बेटा, और मसीह ने कहा है कि ऐ बनी इस्राईल! बन्दगी करो अल्लाह की, रब है मेरा और तुम्हारा, बेशक जिसने शरीक ठहराया अल्लाह का सो हराम की अल्लाह ने उस पर जन्नत और उसका ठिकाना दोज़ख़ है, और कोई नहीं गुनाहगारों की मदद करने वाला। (72) बेशक काफ़िर हुए जिन्होंने

इन्नल्ला-ह सालिसु सलासतिन्। व मा मिन् इलाहिन् इल्ला इलाहुंव्-वाहिदुन्, व इल्लम् यन्तहू अ़म्मा यक़ूलू-न ल-यमस्सन्नल्लज़ी-न क-फ़रू मिन्हुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (73) अ-फ़ला यतूबू-न इलल्लाहि व यस्तग़्फ़िरूनहू, वल्लाहु ग़फ़ूरुर्रहीम (74) मल्मसीहुब्नु मर्-य-म इल्ला रसूलुन् क़द् ख़ा-लत् मिन् क़ब्लिहिर्रुसुलु, व उम्मुहू सिद्दीक़तुन्, काना यअ्कुलानित्तआ-म, उन्ज़ुर् कै-फ़ नुबय्यिनु लहुमुल्-आयाति सुम्मन्ज़ुर् अन्ना युअ्फ़कून (75) क़ुल अ-तअ़्बुदू-न मिन् दूनिल्लाहि मा ला यम्लिकु लकुम् ज़र्रंव्-व ला नफ़अ़न्, वल्लाहु हुवस्समीअ़ुल् अ़लीम (76)

कहा अल्लाह है तीन का एक, हालाँकि कोई माबूद नहीं सिवाय एक माबूद के, और अगर न बाज़ आयेंगे इस बात से कि कहते हैं तो बेशक पहुँचेगा उनमें से कुफ़्र पर क़ायम रहने वालों को दर्दनाक अज़ाब। (73) क्यों नहीं तौबा करते अल्लाह के आगे और गुनाह बख़्शवाते उससे और अल्लाह है बख़्शने वाला मेहरबान। (74) नहीं है मसीह मरियम का बेटा मगर रसूल, गुज़र चुके उससे पहले बहुत रसूल, और उसकी माँ वली (अल्लाह की नेक बन्दी) है, दोनों खाते थे खाना, देख हम कैसे बतलाते हैं उनको दलीलें फिर देख वे कहाँ उल्टे जा रहे हैं। (75) तू कह दे- क्या तुम ऐसी चीज़ की बन्दगी करते हो अल्लाह को छोड़कर जो मालिक नहीं तुम्हारे बुरे की और न भले की, और अल्लाह वही है सुनने वाला जानने वाला। (76)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक वे लोग काफ़िर हो चुके जिन्होंने (यह) कहा कि अल्लाह तआ़ला मरियम के बेटे मसीह ही हैं (यानी दोनों में कोई अलगाव नहीं) हालाँकि (हज़रत) मसीह ने ख़ुद फ़रमाया (था) कि ऐ बनी इस्राईल! तुम अल्लाह तआ़ला की इबादत करो जो मेरा भी और तुम्हारा भी रब है। (और इस क़ौल में अपने बन्दा होने का स्पष्ट बयान है। फिर उनको इलाह और माबूद कहना वही बात है कि मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त) बेशक जो शख़्स अल्लाह तआ़ला के साथ (ख़ुदाई में या ख़ुदाई सिफ़ात में) शरीक क़रार देगा, सो उस पर अल्लाह तआ़ला जन्नत को हराम कर देगा और उसका ठिकाना (हमेशा के लिये) दोज़ख़ है, और (ऐसे) ज़ालिमों का कोई मददगार न होगा, (कि दोज़ख़ से बचाकर जन्नत में पहुँचा सके। और जैसे एक होने का अ़क़ीदा कुफ़्र है इसी तरह तीन

ख़ुदा होने का अ़क़ीदा भी कुफ़्र है, पस) बिला शुब्हा वे लोग भी काफ़िर हैं जो कहते हैं कि अल्लाह तआ़ला तीन (माबूदों) में का एक है, हालाँकि सिवाय एक (सच्चे) माबूद के और कोई माबूद (हक़) नहीं, (न दो और न तीन। जब यह अ़क़ीदा भी कुफ़्र व शिर्क है तो 'इन्नहू मंय्युश्रिक...... "बेशक जो शिर्क करेगा....." में जो सज़ा बयान हुई है वह इस पर भी मुरत्तब होगी) और अगर ये (दोनों अ़क़ीदे के) लोग अपने इन (कुफ़्रिया) क़ौलों से बाज़ न आए तो (समझ लें कि) जो लोग उनमें काफ़िर रहेंगे उन पर (आख़िरत में) दर्दनाक अ़ज़ाब होगा।

(इन तौहीद व सज़ा की धमकियों के मज़ामीन को सुनकर) क्या फिर भी (अपने इन अ़क़ीदों व क़ौलों से) अल्लाह तआ़ला के सामने तौबा नहीं करते और उससे माफ़ी नहीं चाहते? हालाँकि अल्लाह तआ़ला (जब कोई तौबा करता है तो) बड़ी मग़फ़िरत करने वाले (और) बड़ी रहमत फ़रमाने वाले हैं। (हज़रत) मरियम के बेटे मसीह (जो ख़ुदा या ख़ुदा का हिस्सा) कुछ भी नहीं, सिर्फ़ एक पैग़म्बर हैं, जिनसे पहले (और) भी पैग़म्बर (मोजिज़ों वाले) गुज़र चुके हैं, (जिनको ईसाई ख़ुदा नहीं मानते, पस अगर पैग़म्बरी या अ़जीब व ग़रीब चमत्कारिक बातें ख़ुदाई की दलील हैं तो सब को इलाह "ख़ुदा" मानना चाहिये, और अगर ये चीज़ें ख़ुदाई की दलील नहीं हैं तो हज़रत मसीह को क्यों इलाह कहा जाये। ग़र्ज़ कि जब औरों को इलाह नहीं कहते तो ईसा अ़लैहिस्सलाम को भी मत कहो) और (इसी तरह) उनकी वालिदा सिद्दीक़ा (भी ख़ुदा या ख़ुदा का हिस्सा नहीं बल्कि वह) एक वली बीबी हैं (जैसी और बीबियाँ भी वली हो चुकी हैं, और दोनों हज़रात के ख़ुदा और माबूद न होने की दलीलों में से एक आसान दलील यह है कि) दोनों (हज़रात) खाना खाया करते थे (और जो शख़्स खाना खाता है वह उसका मोहताज होता है, और खाना खाना माद्दी चीज़ों की ख़ासियत से है, और ज़रूरत और माद्दी होना यह ख़ास्सा है किसी चीज़ के मुम्किनुल-वजूद होने का, जिसका वजूद ज़रूरी न हो, और मुम्किन यानी जिसका वजूद ही ज़रूरी न हो वह ख़ुदा नहीं हो सकता)। देखिए तो (सही) हम उनसे कैसी (कैसी) दलीलें बयान कर रहे हैं, फिर देखिए वे उल्टे किधर जा रहे हैं। आप (उनसे) फ़रमाईये क्या ख़ुदा के सिवा ऐसी (मख़्लूक़) की इबादत करते हो जो कि तुमको न कोई नुक़सान पहुँचाने का इख़्तियार रखता हो और न नफ़ा पहुँचाने का (इख़्तियार रखता हो, और आ़जिज़ होना ख़ुद ख़ुदाई के ख़िलाफ़ है) हालाँकि अल्लाह तआ़ला सब सुनते हैं, सब जानते हैं (फिर भी ख़ुदा से नहीं डरते और अपने कुफ़्र व शिर्क से बाज़ नहीं आते)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आयत 73 में जो यह इरशाद हुआ है:

اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ

यानी हज़रत मसीह, रूहुल-क़ुदुस और अल्लाह, या मसीह, मरियम और अल्लाह तीनों ख़ुदा हैं (अल्लाह की पनाह) इनमें का एक हिस्सेदार अल्लाह हुआ, फिर वे तीनों एक और वह एक तीन हैं, ईसाईयों का आ़म अ़क़ीदा यह है। और इस ख़िलाफ़े अ़क़्ल व हिदायत अ़क़ीदे को गोल

मोल और पैचदार इबारतों से अदा करते हैं, और जब किसी की समझ में नहीं आता तो इसको अ़क्ल में न आने वाली दिमाग़ों से ऊपर की हक़ीक़त क़रार देते हैं। (फ़वाईदे उस्मानी)

हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम के ख़ुदा होने की तरदीद

आयत में बयान हुआ है:

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ

यानी जिस तरह और अम्बिया दुनिया में आये और कुछ दिन रहकर चल बसे, उनको हमेशा के लिये यहाँ रहना और बक़ा हासिल न थी जो कि ख़ुदा होने की शान है, इसी तरह हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम (जो उन्हीं की तरह एक इनसान हैं) को हमेशगी और बक़ा हासिल नहीं, लिहाज़ा वह इलाह (ख़ुदा) नहीं हो सकते।

ज़रा ग़ौर कीजिए तो मालूम होगा कि जो शख़्स खाने पीने का मोहताज है वह तक़रीबन दुनिया की हर चीज़ का मोहताज है। ज़मीन, हवा, पानी, सूरज और हैवानात से उसे इस्तिग़ना नहीं हो सकता। ग़ल्ले के पेट में पहुँचने और हज़्म होने तक ख़्याल करो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कितनी चीज़ों की ज़रूरत है, फिर खाने से जो प्रभाव और नतीजे पैदा होंगे उनका सिलसिला कहाँ तक जाता है। ज़रूरत व आवश्यकता के इस लम्बे सिलसिले को ध्यान में रखते हुए हम हज़रत मसीह व मरियम के ख़ुदा होने के बातिल होने को तर्क की शक्ल में यूँ बयान कर सकते हैं कि मसीह व मरियम खाने पीने की ज़रूरतों से बेज़रूरत न थे, जो देखने और निरन्तर रिवायतों से साबित है, और जो खाने और पीने की ज़रूरत से बेनियाज़ न हो वह दुनिया की किसी चीज़ से बेपरवाह नहीं हो सकता। फिर तुम ही कहो जो ज़ात तमाम इनसानों की तरह अपने बाक़ी रहने में असबाब की दुनिया से बेपरवाह (यानी ज़रूरत से ख़ाली) न हो वह ख़ुदा क्योंकर बन सकती है। यह ऐसी मज़बूत और स्पष्ट दलील है जिसे आ़लिम व जाहिल बराबर तौर पर समझ सकते हैं, यानी खाना पीना ख़ुदा होने के विरुद्ध है, अगरचे न खाना भी कोई ख़ुदा होने की दलील नहीं, वरना सारे फ़रिश्ते ख़ुदा बन जायें। (अल्लाह की पनाह) (फ़वाईदे उस्मानी)

हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम नबी थीं या वली?

हज़रत मरियम की विलायत और नुबुव्वत के बारे में मतभेद है। बयान हुई आयत में तारीफ़ के मक़ाम में लफ़्ज़ "सिद्दीक़ा" से बज़ाहिर इशारा इसी तरफ़ मालूम होता है कि आप "वली" थीं, नबी नहीं। क्योंकि तारीफ़ की जगह में आला दर्जे को ज़िक्र किया जाता है, अगर आपको नुबुव्वत हासिल होती तो यहाँ "नबिया" कहा जाता, हालाँकि यहाँ "सिद्दीक़ा" कहा गया है, जो विलायत का मक़ाम है। (रूहुल-मआ़नी, संक्षिप्त तौर पर)

उम्मत की अक्सरियत की तहक़ीक़ यही है कि औरतों में नुबुव्वत नहीं आई, यह पद मर्दों ही के लिये मख़्सूस रहा है। जैसा कि सूरः यूसुफ़ के रुकूअ़ बारह में आया है:

وَمَآ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُّوْحِیْٓ اِلَيْهِمْ مِّنْ اَهْلِ الْقُرٰى.

(फ़वाइदे उस्मानी)

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِیْ دِيْنِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَآءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا وَّضَلُّوْا عَنْ سَوَآءِ السَّبِيْلِ ۝ لُعِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْۢ بَنِیْٓ اِسْرَآءِيْلَ عَلٰى لِسَانِ دَاوٗدَ وَعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۭ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ۝ كَانُوْا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُّنْكَرٍ فَعَلُوْهُ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ۝ تَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ لَبِئْسَ مَا قَدَّمَتْ لَهُمْ اَنْفُسُهُمْ اَنْ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَفِی الْعَذَابِ هُمْ خٰلِدُوْنَ ۝ وَلَوْ كَانُوْا يُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِیِّ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مَا اتَّخَذُوْهُمْ اَوْلِيَآءَ وَلٰكِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝

क़ुल या अह्लल्-किताबि ला तग़्लू फ़ी दीनिकुम् ग़ैरल्-हक़्क़ि व ला तत्तबिअू अह्वा-अ क़ौमिन् क़द् ज़ल्लू मिन् क़ब्लु व अज़ल्लू कसीरंव्-व ज़ल्लू अन् सवा-इस्सबील (77) ❁ लुअिनल्लज़ी-न क-फ़रू मिम्-बनी इस्राई-ल अ़ला लिसानि दावू-द व अीसब्नि मर्य-म, ज़ालि-क बिमा अ़सव्-व कानू यअ़्तदून (78) कानू ला य-तनाहौ-न अम्-मुन्करिन् फ़-अ़लूहु, लबिअ्-स मा कानू यफ़्अ़लून (79) तरा कसीरम्-मिन्हुम् य-तवल्लौनल्लज़ी-न क-फ़रू, लबिअ्-स मा क़द्द-मत् लहुम् अन्फ़ुसुहुम् अन्

तू कह- ऐ अहले किताब मत मुबालग़ा करो अपने दीन की बात में नाहक़ का, और मत चलो ख़्यालात पर उन लोगों के जो गुमराह हो चुके पहले, और गुमराह कर गये बहुतों को, और बहक गये सीधी राह से। (77) ❁
लानत का शिकार हुए काफ़िर बनी इस्राईल में के दाऊद की और ईसा बेटे मरियम की ज़बान पर ये इसलिए कि वे नाफ़रमान थे, और हद से गुज़र गये थे। (78) आपस में मना न करते बुरे काम से जो वे कर रहे थे, क्या ही बुरा काम है जो करते थे। (79) तू देखता है उनमें कि बहुत से लोग दोस्ती करते हैं काफ़िरों से, क्या ही बुरा सामान भेजा उन्होंने अपने वास्ते, वह यह कि अल्लाह का

सख़ितल्लाहु अ़लैहिम् व फ़िल्-अ़ज़ाबि हुम् ख़ालिदून (80) व लौ कानू युअ्मिनू-न बिल्लाहि वन्नबिय्यि व मा उन्ज़ि-ल इलैहि मत्त-ख़ज़ूहुम् औलिया-अ व लाकिन्-न कसीरम्-मिन्हुम् फ़ासिक़ून (81)	ग़ज़ब हुआ उन पर और वे हमेशा अ़ज़ाब में रहने वाले हैं। (80) और अगर वे यक़ीन रखते अल्लाह पर और नबी पर और जो नबी पर उतरा (उस पर) तो काफ़िरों को दोस्त न बनाते, लेकिन उनमें बहुत से लोग नाफ़रमान हैं। (81)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन ईसाईयों से) फ़रमाइये कि ऐ अहले किताब! तुम अपने दीन (के मामले) में नाहक़ का ग़ुलू (और इफ़रात) मत करो "यानी हद से मत गुज़रो" और इस (इफ़रात के बारे) में लोगों के ख़्यालात (यानी बेसनद बातों) पर मत चलो जो (उस वक़्त से) पहले (ख़ुद भी) ग़लती में पड़ चुके हैं और (अपने साथ) बहुतों को (लेकर डूबे हैं, और) ग़लती में डाल चुके हैं, और (वह उनकी ग़लती इस वजह से नहीं हुई कि हक़ मौजूद न रहा हो उसका पता न लगता हो, बल्कि) वे लोग सीधे रास्ते (के होते हुए जान-बूझकर उस) से बहक गए (यानी दूर हो गए) थे। (यानी जब उनकी ग़लती दलीलों से साबित हो गयी फिर उनकी पैरवी क्यों नहीं छोड़ते)।

बनी इस्राईल में जो लोग काफ़िर थे उन पर (अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से सख़्त) लानत की गई थी (ज़बूर और इंजील में, जिसका ज़हूर हज़रत) दाऊद (अ़लैहिस्सलाम) और (हज़रत) ईसा इब्ने मरियम (अ़लैहिस्सलाम) की ज़बान से (हुआ, यानी ज़बूर और इंजील में काफ़िरों पर लानत लिखी थी, जैसे क़ुरआन मजीद में भी है 'फ़-लअ़्नतुल्लाहि अ़लल्-काफ़िरीन'। चूँकि ये किताबें हज़रत दाऊद और हज़रत ईसा अ़लैहिमस्सलाम पर नाज़िल हुईं, इसलिये यह मज़मून उनकी ज़बान से ज़ाहिर हुआ और) यह (लानत) इस सबब से हुई कि उन्होंने हुक्म की (एतिक़ाद के तौर पर) मुख़ालफ़त की (जो कि कुफ़्र है) और (उस मुख़ालफ़त में) हद से (बहुत दूर) निकल गए (यानी कुफ़्र भी सख़्त था, फिर सख़्त होने के साथ लम्बा भी था, यानी उस पर बराबर जमे रहे, चुनाँचे) जो बुरा काम (यानी कुफ़्र) उन्होंने (इख़्तियार) कर रखा था उससे (आईन्दा को) एक-दूसरे को मना न करते थे (बल्कि उस पर जमे और अड़े हुए थे। पस उनके सख़्त कुफ़्र और लम्बे समय तक उस पर जमे और अड़े रहने के सब उन पर सख़्त लानत हुई) वाक़ई उनका (यह ज़िक्र हुआ) फ़ेल (यानी कुफ़्र फिर वह भी सख़्त और लम्बे समय तक, बेशक) बुरा था। (कि उस पर यह सज़ा मुरत्तब हुई)।

आप इन (यहूदियों) में बहुत से आदमी देखेंगे कि (मुश्रिक) काफ़िरों से दोस्ती करते हैं। (चुनाँचे मदीना के यहूदियों और मक्का के मुश्रिकों में मुसलमानों की दुश्मनी के ताल्लुक़ से

जिसका मन्शा उनका कुफ़्र में मुत्तहिद होना था, आपस में ख़ूब ताल-मेल था) जो (काम) उन्होंने आगे (भुगतने) के लिए किया है (यानी कुफ़्र, जो सबब था काफ़िरों से दोस्ती और मोमिनों से दुश्मनी का) वह बेशक बुरा है कि (उसके सबब) अल्लाह तआ़ला उनसे (हमेशा के लिये) नाख़ुश हुआ और (उस हमेशा की नाख़ुशी का परिणाम यह होगा कि) ये लोग अ़ज़ाब में हमेशा रहेंगे। और अगर ये (यहूदी) लोग अल्लाह तआ़ला पर ईमान रखते और पैग़म्बर (यानी मूसा अ़लैहिस्सलाम) पर (ईमान रखते जिसका इनको दावा है) और उस (किताब) पर (ईमान रखते) जो उन (पैग़म्बर) के पास भेजी गई (यानी तौरात) तो उन (मुश्रिकों) को कभी दोस्त न बनाते, लेकिन उनमें ज़्यादा लोग ईमान (के दायरे) से ख़ारिज ही हैं (इसलिये काफ़िरों के साथ उनकी एकजुटता और दोस्ती हो गयी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बनी इस्राईल के ग़लत चलन का एक दूसरा पहलू

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لَا تَغْلُوْا فِىْ دِيْنِكُمْ.

पिछली आयात में बनी इस्राईल की सरकशी और उनके ज़ुल्म व सितम को बयान किया गया था, कि अल्लाह के भेजे हुए रसूल जो उनके लिये हमेशा की ज़िन्दगी का पैग़ाम और उनकी दुनिया व आख़िरत संवारने का दस्तूरुल-अ़मल (संविधान) लेकर आये थे, उनकी क़द्र व क़ीमत पहचानने और इ़ज़्ज़त व सम्मान करने के बजाय उन्होंने उनके साथ बुरा सुलूक किया। जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया हैः

فَرِيْقًا كَذَّبُوْا وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ.

यानी कुछ नबियों को झुठलाया और कुछ को क़त्ल ही कर डाला।

उक्त आयतों से उन्हें बनी इस्राईल की टेढ़ी चाल का दूसरा रुख़ बतलाया गया है, कि ये जाहिल या तो सरकशी और नाफ़रमानी के उस किनारे पर थे कि अल्लाह के रसूलों को झूठा कहा और कुछ को क़त्ल कर डाला, और या गुमराही और ग़लत चलन के इस किनारे पर पहुँच गये कि रसूलों के सम्मान में ग़ुलू (हद से बढ़) करके उनको ख़ुदा ही बना दियाः

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِيْنَ قَالُوْۤا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيْحُ ابْنُ مَرْيَمَ.

यानी वे बनी इस्राईल काफ़िर हो गये जिन्होंने यह कहा कि अल्लाह तो ईसा इब्ने मरियम ही का नाम है।

यहाँ तो यह क़ौल सिर्फ़ ईसाईयों का ज़िक्र किया गया है, दूसरी जगह यही ग़ुलू (हद से बढ़ना) और गुमराही यहूदियों की भी बयान फ़रमाई गयी हैः

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ.

यानी यहूदियों ने तो यह कह दिया कि हज़रत उज़ैर अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के बेटे हैं, और ईसाईयों ने यह कह दिया कि ईसा इब्ने मरियम अ़लैहिस्सलाम अल्लाह के बेटे हैं।

ग़ुलू के मायने हद से निकल जाने के हैं। दीन में ग़ुलू का मतलब यह है कि एतिक़ाद व अ़मल में दीन ने जो हदें मुक़र्रर की हैं उनसे आगे बढ़ जायें। मसलन नबियों के सम्मान की हद यह है कि उनको अल्लाह की मख़्लूक़ में सबसे अफ़ज़ल समझे, इस हद से आगे बढ़कर उन्हीं को ख़ुदा या ख़ुदा का बेटा कह देना एतिक़ादी ग़ुलू है।

बनी इस्राईल की इफ़रात व तफ़रीत

नबियों और रसूलों के मामले में बनी इस्राईल के ये दो एक-दूसरे के विपरीत अ़मल, कि या तो उनको झूठा कहें और क़त्ल तक से न मानें, और या यह ज़्यादती कि उनको ख़ुद ही ख़ुदा या ख़ुदा का बेटा क़रार दे दें, यह वही इफ़रात व तफ़रीत है जो जहालत की निशानियों में से है। अ़रब वालों की मशहूर कहावत हैः

اَلْجَاهِلُ اِمَّامُفْرِطٌ اَوْمُفَرِّطٌ.

यानी जाहिल आदमी कभी एतिदाल और दरमियानी चाल पर नहीं रहता, बल्कि या तो इफ़रात में मुब्तला होता है या तफ़रीत में।

इफ़रात के मायने हद से आगे बढ़ने के हैं और **तफ़रीत** के मायने हैं फ़र्ज़ की अदायेगी में कोताही और कमी करने के। और यह इफ़रात व तफ़रीत यह भी मुम्किन है कि बनी इस्राईल की दो अलग-अलग जमाअ़तों की तरफ़ से अ़मल में आई हो, और यह भी मुम्किन है कि एक ही जमाअ़त के ये दो अलग-अलग अ़मल अलग-अलग नबियों के साथ हुए हों, कि कुछ को झुठलाने और क़त्ल तक नौबत पहुँच जाये, और कुछ को ख़ुदा के बराबर बना दिया जाये।

इन आयतों में अहले किताब को मुख़ातब करके जो हिदायतें उनको और क़ियामत तक आने वाली नस्लों को दी गयी हैं वो दीन व मज़हब और उसकी पैरवी में एक बुनियादी उसूल की हैसियत रखती हैं, कि उससे ज़रा इधर-उधर होना इनसान को गुमराहियों के गढ़े में धकेल देता है। इसलिये इसकी कुछ तफ़सील समझ लें।

अल्लाह जल्ल शानुहू तक पहुँचने का तरीक़ा

हक़ीक़त यह है कि सारे जहान और इसमें मौजूद चीज़ों का ख़ालिक़ व मालिक सिर्फ़ एक अल्लाह तआ़ला है। उसी का मुल्क है और उसी का हुक्म है, उसी की इताअ़त हर इनसान पर लाज़िम है। लेकिन बेचारा मिट्टी का पुतला इनसान अपनी माद्दी अंधेरियों और पस्तियों में घिरा हुआ है। इसकी सारी पहुँच उस पाक ज़ात तक या उसके अहकाम व हिदायतें मालूम करने तक किस तरह हो। अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल से इसके लिये दो माध्यम मुक़र्रर कर दिये, जिनके ज़रिये इनसान को हक़ तआ़ला की पसन्द व नापसन्द और अहकाम व मना की हुई बातों का इल्म हो सके, एक अपनी किताबें जो इनसान के लिये क़ानून और हिदायत नामे की हैसियत

रखती हैं, दूसरे अपने ऐसे मख़्सूस व मक़बूल बन्दे जिनको अल्लाह तआ़ला ने इनसानों में से चुन लिया है, और उनको अपनी पसन्द व नापसन्द का अ़मली नमूना और अपनी किताब की अ़मली शरह बनाकर भेजा है, जिनको दीनी इस्तिलाह में रसूल या नबी कहा जाता है। क्योंकि तजुर्बा गवाह है कि कोई किताब चाहे कितनी ही मुकम्मल और विस्तृत क्यों न हो किसी इनसान की इस्लाह व तरबियत के लिये काफ़ी नहीं होती, बल्कि फ़ितरी तौर पर इनसान का मुरब्बी व मुस्लेह (तरबियत करने वाला और सुधारक) सिर्फ़ इनसान ही हो सकता है, इसलिये हक़ तआ़ला ने इनसान की इस्लाह व तरबियत के लिये दो सिलसिले रखे- एक किताबुल्लाह (अल्लाह की किताब और क़ानून) और दूसरे रिजालुल्लाह (अल्लाह वाले), जिनमें अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और फिर उनके नायब उलेमा व बुज़ुर्ग सब दाख़िल हैं। रिजालुल्लाह (अल्लाह वालों) के इस सिलसिले के मुताल्लिक़ पुराने ज़माने से दुनिया इफ़रात व तफ़रीत की ग़लतियों में मुब्तला रही है, और धर्मों में जितने विभिन्न फ़िर्क़े पैदा हुए वे सब इसी एक ग़लती की पैदावार हैं, कि कहीं उनको हद से बढ़ाकर रिजाल परस्ती तक नौबत पहुँचा दी गयी, और कहीं उनको बिल्कुल नज़र-अन्दाज़ करके 'हस्बुना किताबुल्लाहि' (हमको सिर्फ़ अल्लाह की किताब काफ़ी है) को ग़लत मायने पहना कर अपना चलन बना लिया गया। एक तरफ़ रसूल को बल्कि पीरों को भी आ़लिमुल-ग़ैब और ख़ास ख़ुदाई सिफ़ात का मालिक समझ लिया गया, और पीर-परस्ती बल्कि क़ब्र-परस्ती तक पहुँच गये। दूसरी तरफ़ अल्लाह के रसूल को भी सिर्फ़ एक क़ासिद और चिट्ठी पहुँचाने वाले की हैसियत दे दी गयी। ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में रसूलों की तौहीन करने वालों को भी काफ़िर क़रार दिया गया और उनको हद से बढ़ाकर ख़ुदा तआ़ला के बराबर कहने वालों को भी काफ़िर क़रार दिया गया। आयत 'ला तग़लू फ़ी दीनिकुम' (यानी ऊपर बयान हुई आयत 77) इसी मज़मून की तम्हीद है। जिसने वाज़ेह कर दिया कि दीन असल में चन्द सीमाओं और पाबन्दियों ही का नाम है, उन हदों के अन्दर कोताही करना और कमी करना जिस तरह जुर्म है इसी तरह उनसे आगे बढ़ना और ज़्यादती करना भी जुर्म है। जिस तरह रसूलों और उनके नायबों की बात न मानना उनकी तौहीन करना ज़बरदस्त गुनाह है, इसी तरह उनको अल्लाह तआ़ला की ख़ास सिफ़ात का मालिक या बराबरी वाला समझना इससे ज़्यादा बड़ा गुनाह है।

इल्मी तहक़ीक़ और गहन अध्ययन ग़ुलू नहीं

मज़कूरा आयत में 'ला तग़लू फ़ी दीनिकुम' के साथ लफ़्ज़ 'ग़ैरल्-हक़्क़ि' लाया गया है। जिसके मायने यह हैं कि नाहक़ का ग़ुलू मत करो। यह लफ़्ज़ मुहक़्क़िक़ उलेमा-ए-तफ़सीर के नज़दीक ताकीद के लिये इस्तेमाल हुआ है, क्योंकि दीन में ग़ुलू (हद से बढ़ना या उसके हुक़ूक़ की अदायेगी में कोताही करना) हमेशा नाहक़ होता है। इसमें हक़ होने की संभावना व गुमान ही नहीं, और अ़ल्लामा ज़मख़्शरी वग़ैरह ने इस जगह ग़ुलू की दो क़िस्में क़रार दी हैं- एक नाहक़ और बातिल जिसकी मनाही इस जगह की गयी है, दूसरे हक़ और जायज़ जिसकी मिसाल में उन्होंने इल्मी तहक़ीक़ और गहरे अध्ययन को पेश किया है, जैसा कि अ़क़ीदों के मसाईल में

मुतकल्लिमीन हज़रात का और फ़िक़ही मसाईल में फ़ुक़हा हज़रात का तरीक़ा रहा है। उनके नज़दीक यह भी अगरचे ग़ुलू (हद से बढ़ना) है मगर यह ग़ुलू हक़ और जायज़ है। और उलेमा की अक्सरियत की तहक़ीक़ यह है कि यह ग़ुलू की तारीफ़ (परिभाषा) में दाख़िल ही नहीं, क़ुरआन व सुन्नत के मसाईल में गहरी नज़र और उसकी बारीकी में जाना जिस हद तक रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा व ताबिईन से साबित है वह ग़ुलू नहीं, और जो ग़ुलू की हद तक पहुँचे वह इसमें भी बुरा और नापसन्दीदा है।

बनी इस्राईल को दरमियानी रास्ते की हिदायत

ज़िक्र हुई आयत के आख़िर में मौजूदा बनी इस्राईल को मुख़ातब करके इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَتَّبِعُوْٓا اَهْوَآءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوْا مِنْ قَبْلُ وَاَضَلُّوْا كَثِيْرًا.

यानी उस क़ौम के ख़्यालात की पैरवी न करो जो तुमसे पहले ख़ुद भी गुमराह हो चुके थे और दूसरों को भी उन्होंने गुमराह कर रखा था।

इसके बाद उनकी गुमराही की हक़ीक़त और वजह को इन अलफ़ाज़ से बयान फ़रमायाः

ضَلُّوْا عَنْ سَوَآءِ السَّبِيْلِ.

यानी ये लोग सीधे और सही रास्ते से हट गये थे जो इफ़रात व तफ़रीत के बीच की दरमियानी राह थी। इसी तरह इस आयत में ग़ुलू और इफ़रात व तफ़रीत की घातक ग़लती का बयान भी आ गया, और दरमियानी राह 'सिराते मुस्तक़ीम' पर क़ायम रहने का भी।

बनी इस्राईल का बुरा अन्जाम

दूसरी आयत में उन बनी इस्राईल का बुरा अन्जाम ज़िक्र किया गया है, जो इस इफ़रात व तफ़रीत की गुमराही में मुब्तला थे, कि उन पर अल्लाह तआ़ला की लानत हुई, पहले दाऊद अ़लैहिस्सलाम की ज़बान से, जिसके नतीजे में उनकी सूरतें बदलकर ख़िन्ज़ीर (सुअर) बन गये, फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम की ज़बान से यह लानत उन पर मुसल्लत हुई, जिसका असर दुनिया में यह हुआ कि सूरतें बिगड़कर बन्दर बन गये। और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इस जगह मौक़े की मुनासबत से ज़रूरत के मुताबिक़ सिर्फ़ दो पैग़म्बरों की ज़बान से उन पर लानत होने का ज़िक्र किया गया है, मगर हक़ीक़त यह है कि उन पर लानत की शुरूआ़त हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से हुई और इन्तिहा हज़रत ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर हुई। इस तरह लगातार चार पैग़म्बरों की ज़बानी उन लोगों पर निरन्तर लानत हुई, जिन्होंने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की मुख़ालफ़त की, या जिन्होंने उनको हद से आगे बढ़ाकर ख़ुदा तआ़ला की सिफ़ात का शरीक बना दिया।

आख़िरी दोनों आयतों में काफ़िरों के साथ गहरी दोस्ती और दिली ताल्लुक़ की मनाही और उसके विनाशकारी परिणामों का बयान फ़रमाया गया, जिसमें इसकी तरफ़ भी इशारा हो सकता

है कि बनी इस्राईल की यह सारी कजरवी (टेढ़ी चाल, नाफ़रमानी) और गुमराही नतीजा थी उनके ग़लत किस्म के माहौल और काफ़िरों के साथ दिली दोस्ती करने का, जिसने उनको तबाही के गड्ढे से धकेल दिया था।

لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الْيَهُوْدَ وَالَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا ۚ وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى ۚ ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ قِسِّيْسِيْنَ وَرُهْبَانًا وَّاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ ۝

وَاِذَا سَمِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَى الرَّسُوْلِ تَرٰٓى اَعْيُنَهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوْا مِنَ الْحَقِّ ۚ يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اٰمَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشّٰهِدِيْنَ ۝ وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَآءَنَا مِنَ الْحَقِّ ۙ وَنَطْمَعُ اَنْ يُّدْخِلَنَا رَبُّنَا مَعَ الْقَوْمِ الصّٰلِحِيْنَ ۝ فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۚ وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ۝

ل-तजिदन्-न अशद्दन्नासि अ़दा-वतल्-लिल्लज़ी-न आमनुल्-यहू-द वल्लज़ी-न अशरकू व ल-तजिदन्-न अक़्र-बहुम् मवद्दतल्-लिल्लज़ी-न आमनुल्लज़ी-न क़ालू इन्ना नसारा, ज़ालि-क बिअन्-न मिन्हुम् क़िस्सीसी-न व रुह्बानंव्-व अन्नहुम् ला यस्तक्बिरून (82)

तू पायेगा सब लोगों से ज़्यादा दुश्मन मुसलमानों का यहूदियों को और मुश्रिकों को, और तू पायेगा सबसे नज़्दीक मुहब्बत में मुसलमानों के उन लोगों को जो कहते हैं कि हम नसारा (यानी ईसाई) हैं या इस वास्ते कि ईसाईयों में आ़लिम हैं और दुर्वेश (नेक लोग) हैं और इस वास्ते कि वे तकब्बुर नहीं करते। (82)

पारा (7) व इज़ा समिअ़ू

पारा (7) व इज़ा समिअ़ू

व इज़ा समिअ़ू मा उन्ज़ि-ल इलर्रसूलि तरा अअ़्युनहुम् तफ़ीज़ु मिनद्दम्अ़ि मिम्मा अ़-रफ़ू मिनल्-हक़्क़ि यक़ूलू-न रब्बना आमन्ना फ़क्तुब्ना मअ़श्-शाहिदीन (83) व मा लना ला

और जब सुनते हैं उसको जो उतरा रसूल पर तो देखे तू उनकी आँखों को कि उबलती हैं आसुँओं से, इस वजह से कि उन्होंने पहचान लिया हक़ बात को, कहते हैं ऐ हमारे रब! हम ईमान लाये, सो तू लिख हमको मानने वालों के साथ। (83)

नुअ्मिनु बिल्लाहि व मा जा-अना मिनल्हक़्क़ि व नत्मअु अंय्युद्ख़ि-लना रब्बुना मअ़ल्-क़ौमिस्सालिहीन (84) फ़-असाबहुमुल्लाहु बिमा क़ालू जन्नातिन् तज्री मिन् तह़्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा, व ज़ालि-क जज़ाउल् मुह़्सिनीन (85) वल्लज़ी-न क-फ़रू व कज़्ज़बू बिआयातिना उलाइ-क अस्हाबुल् जहीम (86) ✿	और हमको क्या हुआ कि यक़ीन न लायें अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो पहुँची हमको हक़ से और उम्मीद रखें इसकी कि दाख़िल करे हमको हमारा रब साथ नेक बख़्तों के। (84) फिर उनको बदले में दिये अल्लाह ने इस कहने पर ऐसे बाग़ कि जिनके नीचे बहती हैं नहरें, रहा करें उनमें ही, और यह है बदला नेकी करने वालों का। (85) और जो लोग इनकारी हुए और झुठलाने लगे हमारी आयतों को वे हैं दोज़ख़ के रहने वाले। (86) ✿

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

ऊपर यहूदियों का मुश्रिक लोगों से दोस्ती रखना ज़िक्र हुआ था, आगे उनका मय मुश्रिकों के मुसलमानों से दुश्मनी रखना बयान हुआ है, जो इस दोस्ती का असली सबब था। और चूँकि हर मामले में क़ुरआन मजीद अ़दल व इन्साफ़ का सबसे बड़ा दाओ़ी (दावत देने वाला) है, इसलिये यहूदियों व ईसाईयों में भी सब को एक दर्जे में शुमार नहीं किया, जिसमें कोई ख़ूबी थी उसका भी इज़्हार किया गया। मसलन ईसाईयों की एक ख़ास जमाअ़त में उन यहूदियों के मुक़ाबले में तास्सुब का कम होना, और उन ईसाईयों में जिन्होंने हक़ क़ुबूल कर लिया था उनका बेहतरीन बदले और प्रशंसा का पात्र होना। और यह ख़ास जमाअ़त हब्शा के ईसाईयों की है, जिन्होंने मुसलमानों को जबकि मदीना की हिजरत से पहले वे अपना वतन मक्का छोड़कर हब्शा चले गये थे, कुछ तकलीफ़ नहीं दी, और जो और ईसाई ऐसा ही हो वह भी इन्हीं के हुक्म में दाख़िल है। और उनमें से जिन्होंने हक़ क़ुबूल कर लिया था वह नजाशी बादशाह और उनके साथी हैं, जो कि हब्शा में भी क़ुरआन सुनकर रोये और मुसलमान हो गये। फिर तीस आदमी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और क़ुरआन सुनकर रोये और इस्लाम क़ुबूल किया, यही इस आयत का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(मोमिनों के अ़लावा में) तमाम आदमियों से ज़्यादा मुसलमानों से दुश्मनी रखने वाले आप इन यहूदियों और इन मुश्रिकों को पाएँगे। और उन (मोमिनों के अ़लावा आदमियों) में मुसलमानों के साथ दोस्ती रखने के ज़्यादा क़रीब (औरों के मुक़ाबले में) उन लोगों को पाईएगा

जो अपने को ईसाई कहते हैं (ज़्यादा क़रीब का यह मतलब है कि दोस्त तो वे भी नहीं, मगर दूसरे ज़िक्र किये गये काफ़िरों से ग़नीमत हैं)। यह (दोस्ती से ज़्यादा क़रीब होना और दुश्मनी में कम होना) इस सबब से है कि उन (ईसाईयों) में बहुत-से (इल्म से दोस्ती रखने वाले) आलिम हैं, और बहुत-से दुनिया से बेताल्लुक़ (दुर्वेश), (और जब किसी क़ौम में ऐसे लोग ख़ूब अधिक होते हैं तो अ़वाम में भी हक़ के साथ ज़्यादा बैर व विरोध नहीं रहता चाहे ख़्वास व अ़वाम हक़ को क़ुबूल भी न करें)। और (यह इस सबब से है कि) ये (ईसाई) लोग तकब्बुर करने वाले नहीं हैं। (क़िस्सीसीन व रुहबान से जल्दी मुतास्सिर हो जाते हैं, और साथ ही तवाज़ो का ख़ास्सा है हक़ बात के सामने नर्म हो जाना, इसलिये उनको दुश्मनी ज़्यादा नहीं। पस क़िस्सीसीन व रुहबान यानी उलेमा व बुज़ुर्गों का वजूद इशारा है असल काम करने वाले सबब की तरफ़, और तकब्बुर न करना उनकी क़ाबलियत की तरफ़, जबकि इसके विपरीत यहूदियों व मुश्रिकों के अन्दर दुनिया की मुहब्बत है और वे घमण्डी हैं। और अगरचे यहूदियों में भी कुछ सच्चे और अल्लाह वाले उलेमा थे जो मुसलमान हो गये थे, लेकिन उनकी तायदाद कम होने की वजह से अ़वाम में उनका असर नहीं पहुँचा था, इसलिये उनमें दुश्मनी व बैर है, जो सबब हो जाता है सख़्त दुश्मनी का, इसी लिये यहूदी तो मोमिन ही कम हुए और मुश्रिकों में से जब दुश्मनी व बैर निकल गया तब मोमिन होना शुरू हुए)।

सातवाँ पारा (व इज़ा समिअ़ू)

और (बाज़े उनमें जो कि आख़िर में मुसलमान हो गये थे ऐसे हैं कि) जब वे उस (कलाम) को सुनते हैं जो कि रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की तरफ़ भेजा गया है (यानी क़ुरआन) तो आप उनकी आँखें आँसुओं से बहती हुई देखते हैं, इस सबब से कि उन्होंने हक़ (दीन, यानी इस्लाम) को पहचान लिया (मतलब यह कि हक़ को सुनकर मुतास्सिर होते हैं और) (यूँ) कहते हैं कि ऐ हमारे रब! हम मुसलमान हो गये, तो हमको भी उन लोगों के साथ लिख लीजिए (यानी उनमें शुमार कर लीजिए) जो (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन के हक़ होने की) तस्दीक़ करते हैं। और हमारे पास कौनसा उज़्र (मजबूरी और बहाना) है कि हम अल्लाह पर (मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शरीअ़त की तालीम के अनुसार) और जो हक़ (दीन) हमको (अब) पहुँचा है उस पर ईमान न लाएँ, और (फिर) इस बात की उम्मीद (भी) रखें कि हमारा रब हमको नेक (मक़बूल) लोगों के साथ दाख़िल कर देगा (बल्कि यह उम्मीद इस्लाम पर मौक़ूफ़ है, इसलिये मुसलमान होना ज़रूरी है)। सो उन (लोगों) को अल्लाह तआ़ला उनके (इस एतिक़ाद रखने और) क़ौल के बदले में (जन्नत के) ऐसे बाग़ देंगे जिनके (महलों के) नीचे नहरें जारी होंगी, (और) ये उनमें हमेशा-हमेशा को रहेंगे, और नेक काम करने वालों की यही जज़ा (बदला) है। और (इनके विपरीत) जो लोग काफ़िर रहे और हमारी आयतों (और अहकाम) को झूठा कहते रहे वे लोग दोज़ख़ (में रहने) वाले हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

यहूदियों व ईसाईयों में से कुछ लोगों की हक़-परस्ती

इन आयतों में मुसलमानों के साथ दुश्मनी या दोस्ती के मेयार से उन अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) का ज़िक्र फ़रमाया गया है जो अपनी हक़-परस्ती और ख़ुदा से डरने की वजह से मुसलमानों से बुग़ज़ व दुश्मनी नहीं रखते थे, मगर इन गुणों वाले लोग यहूदियों में बहुत कम (यानी न होने के बराबर) थे, जैसे हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम वग़ैरह। ईसाईयों में तुलनात्मक ऐसे लोगों की संख्या ज़्यादा थी, ख़ुसूसन हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में मुल्क हब्शा का बादशाह नजाशी और वहाँ के सरदारों व अ़वाम में ऐसे लोगों की बड़ी तायदाद थी, और इसी सबब से जब मक्का मुकर्रमा के मुसलमान क़ुरैश के ज़ुल्मों से तंग आ गये तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको हब्शा की तरफ़ हिजरत कर जाने का मश्विरा दिया, और फ़रमाया कि मैंने सुना है कि हब्शा का बादशाह न ख़ुद ज़ुल्म करता है न किसी को किसी पर ज़ुल्म करने देता है, इसलिये मुसलमान कुछ समय के लिये वहाँ चले जायें।

इस मश्विरे पर अ़मल करते हुए पहली मर्तबा ग्यारह हज़रात हब्शा की तरफ़ निकले, जिनमें हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनकी बीवी साहिबा (यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बेटी) हज़रत रुक़ैया रज़ियल्लाहु अ़न्हा भी शामिल थीं। उसके बाद हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नेतृत्व में मुसलमानों का एक बड़ा क़ाफ़िला जो औरतों के अ़लावा बयासी मर्दों पर मुश्तमिल था, हब्शा पहुँच गया। हब्शा के बादशाह और वहाँ के रहने वालों ने उनका शरीफ़ाना स्वागत किया और ये लोग अमन व सुकून से वहाँ रहने लगे।

मक्का के क़ुरैश के ग़ुस्से व आक्रोश ने उनको इस पर भी न रहने दिया कि ये लोग किसी दूसरे मुल्क में अपनी ज़िन्दगी सुकून से गुज़ार लें। उन्होंने अपना एक वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) बहुत से तोहफ़े देकर हब्शा के बादशाह के पास रवाना किया, और यह दरख़्वास्त की कि इन मुसलमानों को अपने मुल्क से निकाल दें। मगर हब्शा के बादशाह ने हालात की तहक़ीक़ की और हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ियल्लाहु अ़न्हु और उनके साथियों से इस्लाम और पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हालात मालूम किये। उन हालात और इस्लाम की तालीमात को हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और इंजील की पेशीनगोई के पूरी तरह मुताबिक़ पाया, जिसमें हज़रत ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने का ज़िक्र और उनकी तालीमात का मुख़्तसर ख़ाका, और उनका और उनके सहाबा का हुलिया वग़ैरह ज़िक्र हुआ था। इससे मुतास्सिर होकर हब्शा के बादशाह ने क़ुरैशी वफ़्द के हदिये-तोहफ़े (उपहार) वापस कर दिये और उनको साफ़ जवाब दे दिया कि मैं ऐसे लोगों को अपने मुल्क से निकलने का कभी हुक्म नहीं दे सकता।

हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब की तक़रीर का हब्शा के बादशाह पर असर

हज़रत जाफ़र बिन अबी तालिब रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने नजाशी के दरबार में इस्लाम और उसकी तालीमात का एक मुख़्तसर मगर जामे ख़ाका खींच दिया था, और फिर इन हज़रात के वहाँ रहने ने न सिर्फ़ उसके दिल में बल्कि वहाँ के हाकिमों, सरदारों और अ़वाम सबके दिल में इस्लाम और पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सच्ची मुहब्बत व सम्मान पैदा कर दिया, जिसका नतीजा यह हुआ कि जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मदीना तय्यिबा की तरफ़ हिजरत फ़रमाई और वहाँ आपका और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का मुत्मईन हो जाना मालूम हुआ और हब्शा के मुहाजिरीन ने मदीना तय्यिबा जाने का इरादा किया तो हब्शा के बादशाह नजाशी ने उनके साथ अपने मज़हब के ईसाईयों के बड़े-बड़े उलेमा, बुज़ुर्गों का एक वफ़्द (जमाअ़त) हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में भेजा, जो सत्तर आदमियों पर मुश्तमिल था, जिनमें बासठ हज़रात हब्शा के और आठ मुल्क शाम के थे।

हब्शा के बादशाह के वफ़्द की दरबारे नबी में हाज़िरी

यह वफ़्द (जमाअ़त और प्रतिनिधि मण्डल) रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक दुर्वेशाना और राहिबाना लिबास में हाज़िर हुआ। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इनको सूरः यासीन पढ़कर सुनाई। ये लोग सुनते जाते थे और इनकी आँखों से आँसू जारी थे। सब ने कहा कि यह कलाम उस कलाम से कितना मिलता-जुलता है जो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर नाज़िल होता था, और ये सब के सब मुसलमान हो गये।

इनकी वापसी के बाद हब्शा के बादशाह नजाशी ने भी इस्लाम का ऐलान कर दिया और अपना एक ख़त देकर अपने बेटे को एक दूसरे वफ़्द का सरदार बनाकर भेजा, मगर बद-क़िस्मती देखिये कि यह कश्ती दरिया में ग़र्क़ हो गयी। ग़र्ज़ कि हब्शा के बादशाह और हाकिमों व अ़वाम ने इस्लाम और मुसलमानों के साथ न सिर्फ़ शरीफ़ाना और न्यायपूर्ण सुलूक किया बल्कि आख़िरकार ख़ुद भी मुसलमान हो गये।

मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने फ़रमाया कि ये आयतें इन्हीं हज़रात के बारे में नाज़िल हुई हैं:

وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَّوَدَّةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اِنَّا نَصٰرٰى.

और बाद की आयतों में उनका अल्लाह तआ़ला के ख़ौफ़ से रोना और हक़ को क़ुबूल करना बयान फ़रमाया गया है। इस पर भी मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत की सहमति है कि अगरचे ये आयतें नजाशी और उसके भेजे हुए वफ़्द (प्रतिनिधि मण्डल) के बारे में नाज़िल हुई हैं लेकिन अलफ़ाज़ में उमूम है, इसलिये इसका हुक्म उन तमाम ईसाईयों के लिये आ़म और शामिल है जो अहले हब्शा की तरह हक़-परस्त और इन्साफ़-पसन्द हों। यानी इस्लाम से पहले इंजील पर अ़मल

करने वाले थे और इस्लाम आने के बाद इस्लाम की पैरवी करने लगे।

यहूदियों में भी अगरचे चन्द हज़रात इसी शान के मौजूद थे जो हज़रत मूसा के दौर में तौरात पर आमिल रहे, फिर इस्लाम आने के बाद इस्लाम के दायरे में शामिल हो गये, लेकिन यह इतनी कम तायदाद थी कि उम्मतों और क़ौमों के ज़िक्र के वक़्त उसको ज़िक्र नहीं किया जा सकता है। बाक़ी यहूदियों का हाल खुला हुआ था, वे मुसलमानों की दुश्मनी और जड़ काटने में सबसे आगे थे, इसी लिये आयत के शुरू में यहूदियों का यह हाल ज़िक्र फ़रमायाः

لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوا الْيَهُوْدَ.

यानी मुसलमानों की दुश्मनी में सबसे ज़्यादा सख़्त यहूदी हैं।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह हुआ कि इस आयत में ईसाईयों की एक ख़ास जमाअ़त की तारीफ़ फ़रमाई गयी है, जो अल्लाह से डरने और हक़-परस्ती की हामिल थी, इसमें नजाशी और उसके साथी व मददगार भी दाख़िल हैं, और दूसरे ईसाई भी जो इन गुणों और सिफ़तों वाले थे, या आने वाले ज़माने में दाख़िल हों। लेकिन इसके यह मायने न आयतों से निकलते हैं और न हो सकते हैं कि ईसाई चाहे कैसे भी गुमराह हो जायें और इस्लाम-दुश्मनी में कितने ही सख़्त क़दम उठायें उनको बहरहाल मुसलमानों का दोस्त समझा जाये, और मुसलमान उनकी दोस्ती की तरफ़ हाथ बढ़ायें, क्योंकि यह तो पूरी तरह ग़लत और वाक़िआ़त के क़तई ख़िलाफ़ है, इसी लिये इमाम अबू बक्र जस्सास रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि कुछ जाहिल लोग जो यह ख़्याल करते हैं कि इन आयतों में बिना किसी क़ैद के ईसाईयों की तारीफ़ है और वे हर हाल में यहूदियों से बेहतर हैं, यह सरासर जहालत है, क्योंकि अगर आ़म तौर पर दोनों जमाअ़तों के मज़हबी अ़क़ीदों की तुलना की जाये तो ईसाईयों का मुश्रिक होना ज़्यादा स्पष्ट है, और मुसलमानों के साथ मामलात को देखा जाये तो आजकल के आ़म ईसाईयों ने भी इस्लाम की दुश्मनी में यहूदियों से कम हिस्सा नहीं लिया, हाँ यह सही है कि ईसाईयों में ऐसे लोगों की अधिकता हुई है जो अल्लाह से डरने वाले और हक़-परस्त थे, इसी के नतीजे में उनको इस्लाम क़ुबूल करने की तौफ़ीक़ हुई, और ये आयतें उन दोनों जमाअ़तों के बीच इसी फ़र्क़ को ज़ाहिर करने के लिये नाज़िल हुई हैं। ख़ुद इसी आयत के आख़िर में क़ुरआन ने इस हक़ीक़त को इन अलफ़ाज़ में स्पष्ट फ़रमा दिया हैः

ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ قِسِّيْسِيْنَ وَرُهْبَانًا وَّاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُوْنَ.

यानी जिन ईसाईयों की तारीफ़ इन आयतों में की गयी है इसकी वजह यह है कि उनमें उलेमा और ख़ुदा से डरने वाले, दुनिया से अलग-थलग रहने वाले हज़रात हैं, और उनमें तकब्बुर नहीं कि दूसरों की बात पर ग़ौर करने के लिये तैयार न हों। मुक़ाबले से मालूम हुआ कि यहूदियों के ये हालात न थे, उनमें ख़ुदा से डरना और हक़-परस्ती न थी, उनके उलेमा ने भी बजाय दुनिया को छोड़ने के अपने इल्म को सिर्फ़ रोज़गार और दुनिया कमाने का ज़रिया बना लिया था, और दुनिया समेटने में ऐसे मस्त हो गये थे कि हक़ व नाहक़ और हलाल व हराम की भी परवाह न रही थी।

क़ौम व मिल्लत की असली रूह हक़-परस्त उलेमा और बुज़ुर्ग हज़रात हैं

ज़िक्र हुई आयत के बयान से एक अहम बात यह भी मालूम हुई कि क़ौम व मिल्लत की असली रूह हक़-परस्त, ख़ुदा से डरने वाले उलेमा व बुज़ुर्ग हैं। उनका वजूद पूरी क़ौम की ज़िन्दगी है, जब तक किसी क़ौम में ऐसे उलेमा व बुज़ुर्ग मौजूद हों जो दुनियावी इच्छाओं के पीछे न चलें, ख़ुदा से डरना उनका मक़ाम हो तो वह क़ौम ख़ैर व बरकत से मेहरूम नहीं होती।

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ مَآ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝ وَكُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۠ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तुहर्रिमू तय्यिबाति मा अ-हल्लल्लाहु लकुम् व ला तअ्तदू, इन्नल्ला-ह ला युहिब्बुल्-मुअ्तदीन (87) व कुलू मिम्मा र-ज़-क़कुमुल्लाहु हलालन् तय्यिबंव्-वत्तक़ुल्लाहल्लज़ी अन्तुम् बिही मुअ्मिनून (88)	**ऐ ईमान वालो! मत हराम ठहराओ वे मज़ेदार चीज़ें जो अल्लाह ने तुम्हारे लिये हलाल कर दीं और हद से न बढ़ो, बेशक अल्लाह पसन्द नहीं करता हद से बढ़ने वालों को। (87) और खाओ अल्लाह के दिये हुए में से जो चीज़ हलाल पाकीज़ा हो, और डरते रहो अल्लाह से जिस पर तुम ईमान रखते हो। (88)**

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

यहाँ तक अहले किताब के बारे में गुफ़्तगू थी, आगे फिर कुछ ऊपर के अहकाम की तरफ़ वापसी है जिनका ज़िक्र कुछ शुरू सूरत में और कुछ बीच में भी हुआ है। और इस मक़ाम की ख़ुसूसियत के एतिबार से एक ख़ास ताल्लुक़ भी मन्क़ूल है, वह यह कि ऊपर तारीफ़ के मक़ाम में रहबानियत (दुनिया से किनारा कर लेने) का ज़िक्र है, अगरचे वह इस एतिबार से दुनिया की मुहब्बत को छोड़ देने का एक ख़ास हिस्सा है, लेकिन संदेह था कि कोई रहबानियत की बराबर की ख़ुसूसियात (जैसे आजकल के जोग और लिबास व आबादी वग़ैरह से आज़ाद होने) को क़ाबिले तारीफ़ न समझ ले, इसलिये इस जगह पर इस हलाल चीज़ों के हराम कर लेने की मनाही ज़्यादा मुनासिब मालूम हुई। (बयानुल-क़ुरआन, संक्षिप्त रूप से)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला ने जो चीज़ें तुम्हारे वास्ते हलाल की हैं (चाहे वो खाने-पीने और पहनने की क़िस्म से हों या निकाह करने की क़िस्म से हों) उनमें मज़ेदार (और पसन्दीदा) चीज़ों को (क़सम व अ़हद करके अपने नफ़्सों पर) हराम मत करो, और (शरीअ़त की) हदों से (जो कि हलाल व हराम करने के बारे में मुक़र्रर हैं) आगे मत निकलो, बेशक अल्लाह तआ़ला (शरीअ़त की) हद से निकलने वालों को पसन्द नहीं करते। और ख़ुदा तआ़ला ने जो चीज़ें तुमको दी हैं उनमें से हलाल पसन्दीदा चीज़ें खाओ (बरतो), और अल्लाह तआ़ला से डरो जिस पर तुम ईमान रखते हो (यानी हलाल चीज़ को हराम करना अल्लाह की रज़ा के ख़िलाफ़ है, इससे डरो और यह अपराध मत करो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

दुनिया से बेताल्लुक़ी अगर अल्लाह की बताई हुई हदों के अन्दर हो तो जायज़, वरना हराम है

ज़िक्र हुई आयतों में यह बतलाया गया है कि अगरचे दुनिया को छोड़ देना और लज़्ज़तों व इच्छाओं से किनारा करना एक दर्जे में महबूब व पसन्दीदा है, मगर इसमें अल्लाह की तय की हुई हदों (सीमाओं) से बढ़ना नापसन्दीदा और हराम है, जिसकी तफ़सील यह हैः

किसी हलाल चीज़ को हराम क़रार देने के तीन दर्जे

किसी हलाल चीज़ को हराम क़रार देने के तीन दर्जे हैं- एक यह कि एतिक़ाद के तौर पर उसको हराम समझ लिया जाये। दूसरे यह कि ज़बान से किसी चीज़ को अपने लिये हराम करे, जैसे क़सम खा ले कि ठण्डा पानी न पियूँगा या फ़ुलाँ क़िस्म का हलाल खाना न खाऊँगा, या फ़ुलाँ जायज़ काम न करूँगा। तीसरे यह कि एतिक़ाद और ज़बान तो कुछ न हो सिर्फ़ अ़मली तौर पर हमेशा के लिये किसी हलाल चीज़ को छोड़ देने का इरादा करे।

पहली सूरत में अगर उस चीज़ का हलाल होना निश्चित और यक़ीनी दलीलों से साबित हो तो उसको हराम समझने वाला अल्लाह के क़ानून की खुली मुख़ालफ़त की वजह से काफ़िर हो जायेगा।

दूसरी सूरत में अगर क़सम के अलफ़ाज़ खाकर उस चीज़ को अपने ऊपर हराम क़रार दिया है तो क़सम हो जायेगी। क़सम के अलफ़ाज़ बहुत हैं, जो मसाईल की किताबों में विस्तृत तौर पर मज़कूर हैं। उनमें से एक मिसाल यह है कि स्पष्ट तौर पर कहे कि मैं अल्लाह की क़सम खाता हूँ कि फ़ुलाँ चीज़ न खाऊँगा, या फ़ुलाँ काम न करूँगा। या यह कहे कि मैं फ़ुलाँ चीज़ या फ़ुलाँ काम को अपने ऊपर हराम करता हूँ। इसका हुक्म यह है कि बिना ज़रूरत ऐसी क़सम खाना गुनाह है, उस पर लाज़िम है कि इस क़सम को तोड़ दे और क़सम का कफ़्फ़ारा अदा करे

जिसकी तफ़सील आगे आयेगी।

तीसरी क़िस्म जिसमें एतिक़ाद और क़ौल से किसी हलाल को हराम न किया हो, बल्कि अमल में ऐसा मामला करे जैसा हराम के साथ किया जाता है, कि हमेशा के लिये उसके छोड़ने का इरादा और पाबन्दी करे। इसका हुक्म यह है कि अगर हलाल को छोड़ना सवाब समझता है तो यह बिदअ़त और रहबानियत है, जिसका बड़ा गुनाह होना क़ुरआन व सुन्नत में बयान हुआ है, उसके ख़िलाफ़ करना वाजिब और ऐसी पाबन्दी पर क़ायम रहना गुनाह है। हाँ अगर ऐसी पाबन्दी सवाब की नीयत से न हो बल्कि किसी दूसरी वजह से हो, जैसे किसी जिस्मानी या रूहानी बीमारी के सबब से किसी ख़ास चीज़ को हमेशा के लिये छोड़ दे तो इसमें कोई गुनाह नहीं, कुछ सूफ़िया-ए-किराम और बुज़ुर्गों से हलाल चीज़ों के छोड़ने की जो रिवायतें मन्क़ूल हैं वो सब इसी क़िस्म में दाख़िल हैं कि उन्होंने अपने नफ़्स के लिये उन चीज़ों को नुक़सानदेह समझा, या किसी बुज़ुर्ग ने नुक़सानदेह बतलाया, इसलिये इलाज के तौर पर छोड़ दिया, इसमें कोई हर्ज नहीं।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَلَا تَعْتَدُوْا. اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ.

यानी अल्लाह की हदों (सीमाओं) से आगे न बढ़ो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ऐसे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करते।

हद से बढ़ने का मतलब यही है कि किसी हलाल चीज़ को बिना किसी उज़्र (मजबूरी) के सवाब समझकर छोड़ दे, जिसको नावाक़िफ़ आदमी तक़्वा समझता है, और अल्लाह तआ़ला के नज़दीक वह हद से बढ़ना और नाजायज़ है। इसलिये दूसरी आयत में इरशाद हैः

وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِیْٓ اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ.

यानी जो हलाल पाक रिज़्क़ अल्लाह तआ़ला ने आपको दिया है उसको खाओ और अल्लाह तआ़ला से जिस पर तुम्हारा ईमान है, डरते रहो।

इस आयत में स्पष्ट फ़रमा दिया कि हलाल पाक चीज़ों का सवाब समझकर छोड़ देना तक़्वा नहीं, बल्कि तक़्वा इसमें है कि उनको अल्लाह तआ़ला की नेमत समझकर इस्तेमाल करे और शुक्र अदा करे, हाँ किसी जिस्मानी या रूहानी बीमारी की वजह से बतौर इलाज किसी चीज़ को छोड़े तो वह इसमें दाख़िल नहीं।

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ بِمَا عَقَّدْتُّمُ الْاَيْمَانَ ۚ فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ ۭ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ ۭ ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ ۭ وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ ۭ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝

ला युआख़िज़ुकुमुल्लाहु बिल्लग़्वि फ़ी ऐमानिकुम् व लाकिंय्युआख़िज़ुकुम् बिमा अ़क़्क़त्तुमुल्-ऐमा-न फ़-कफ़्फ़ारतुहू इत्आ़मु अ़-श-रति मसाकी-न मिन् औ-सति मा तुत्ज़िमू-न अह्लीकुम् औ किस्वतुहुम् औ तह्रीरु र-क़-बतिन्, फ़-मल्लम् यजिद् फ़सियामु सलासति अय्यामिन्, ज़ालि-क कफ़्फ़ारतु ऐमानिकुम् इज़ा हलफ़्तुम् वह्फ़ज़ू ऐमानकुम्, कज़ालि-क युबय्यिनुल्लाहु लकुम् आयातिही लअ़ल्लकुम् तश्कुरून (89)	नहीं पकड़ता तुमको अल्लाह तुम्हारी बेहूदा क़समों पर लेकिन पकड़ता है उस पर जिस क़सम को तुमने मज़बूत बाँधा सो उसका कफ़्फ़ारा खाना देना है दस मोहताजों को औसत दर्जे का खाना, जो देते हो अपने घर वालों को या कपड़ा पहना देना दस मोहताजों को, या एक गर्दन आज़ाद करनी, फिर जिसको मयस्सर न हो तो रोज़े रखने हैं तीन दिन के, यह कफ़्फ़ारा है तुम्हारी क़समों का जब क़सम खा बैठो, और हिफ़ाज़त रखो अपनी क़समों की, इसी तरह बयान करता है अल्लाह तुम्हारे लिये अपने हुक्म ताकि तुम एहसान मानो। (89)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

ऊपर हलाल और पाक चीज़ों का ज़िक्र था, चूँकि यह हराम करना कई बार क़सम के ज़रिये होता है इसलिये आगे क़सम खाने का हुक्म बयान हुआ है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अल्लाह तआ़ला तुम्हारी (दुनियावी) पकड़ नहीं फ़रमाते (यानी कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं करते) तुम्हारी क़समों में लग्व "यानी बेअसर" क़सम (तोड़ने) पर, लेकिन (ऐसी) पकड़ इस पर फ़रमाते हैं कि तुम क़समों को (आगे की बात पर) मज़बूत करो (और फिर तोड़ दो), सो उस (क़सम के तोड़ने) का कफ़्फ़ारा (यह है कि) दस मोहताजों को खाना देना है दरमियानी दर्जे का जो अपने घर वालों को (मामूली तौर पर) खाने को दिया करते हो, या उन (दस मोहताजों) को कपड़ा देना (औसत दर्जे का) या एक गर्दन (यानी एक ग़ुलाम या बाँदी) आज़ाद करना (यानी तीनों में से जिसको चाहे इख़्तियार कर ले) और जिसको (इन तीनों में से एक भी) हासिल न हो तो (उसका कफ़्फ़ारा) तीन दिन के (लगातार) रोज़े हैं। यह (जो मज़कूर हुआ) कफ़्फ़ारा है तुम्हारी (ऐसी) क़समों का, जबकि तुम क़सम खा लो (और फिर उसको तोड़ दो), और (चूँकि यह कफ़्फ़ारा वाजिब है इसलिये) अपनी क़समों का ख़्याल रखा करो (कभी ऐसा न हो कि क़सम को तोड़ दो और कफ़्फ़ारा न दो, और अल्लाह तआ़ला ने जिस तरह तुम्हारी दुनियावी व दीनी मस्लेहतों की

रियायत करके बयान फ़रमाया है) इसी तरह अल्लाह तआ़ला तुम्हारे वास्ते अपने (दूसरे) अहकाम (भी) बयान फ़रमाते हैं ताकि तुम (इस नेमत यानी मख़्लूक़ की मस्लेहतों की रियायत का) शुक्र अदा करो।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़सम खाने की चन्द सूरतें और उनसे संबन्धित अहकाम

इस आयत में क़सम खाने की चन्द सूरतों का बयान है। कुछ का बयान सूरः ब-क़रह में भी गुज़र चुका है, और ख़ुलासा सब का यह है कि अगर किसी पहले गुज़रे वाक़िए पर जान-बूझकर झूठी क़सम खाये, इसको फ़ुक़हा की इस्तिलाह में **यमीन-ए-ग़मूस** कहते हैं। मसलन एक शख़्स ने कोई काम कर लिया है, और वह जानता है कि मैंने यह काम किया है, और फिर जान-बूझकर क़सम खा ले कि मैंने यह काम नहीं किया, यह झूठी क़सम सख़्त गुनाहे कबीरा और दुनिया व आख़िरत के वबाल का सबब है, मगर इस पर कोई कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होता, तौबा व इस्तिग़फ़ार लाज़िम है। इसी लिये इसको फ़ुक़हा की इस्तिलाह में यमीन-ए-ग़मूस कहा जाता है, क्योंकि ग़मूस के मायने डुबा देने वाले के हैं, यह क़सम इनसान को गुनाह और वबाल में ग़र्क़ कर देने वाली है।

दूसरी सूरत यह है कि किसी गुज़रे वाक़िए पर अपने नज़दीक सच्चा समझकर क़सम खाये और वास्तव में वह ग़लत हो। मसलन किसी माध्यम से यह मालूम हुआ कि फ़ुलाँ शख़्स आ गया है, उस पर भरोसा करके उसने क़सम खा ली कि वह आ गया है, फिर मालूम हुआ कि यह असलियत के ख़िलाफ़ है, इसको **यमीन-ए-लग़्व** कहते हैं। इसी तरह बिना इरादे के ज़बान से लफ़्ज़ क़सम निकल जाये तो इसको भी यमीन-ए-लग़्व कहा जाता है। इसका हुक्म यह है कि न इस पर कफ़्फ़ारा है न गुनाह।

तीसरी सूरत क़सम की यह है कि आने वाले ज़माने में किसी काम के करने या न करने की क़सम खाये इसको **यमीन-ए-मुन्अ़क़िदा** कहा जाता है। इसका हुक्म यह है कि इस क़सम को तोड़ने की सूरत में कफ़्फ़ारा वाजिब होता है, और कुछ सूरतों में इस पर गुनाह भी होता है, कुछ में नहीं होता।

इस जगह क़ुरआने करीम की उक्त आयत में बज़ाहिर लग़्व से वही क़सम मुराद है, जिस पर कफ़्फ़ारा नहीं, चाहे गुनाह हो या न हो। क्योंकि 'अ़क़्क़त्तुमुल-ऐमा-न' (जिस क़सम को तुमने मज़बूत बाँधा हो) के मुक़ाबिले में मज़कूर है, जिससे मालूम हुआ कि यहाँ पकड़ से मुराद सिर्फ़ दुनिया की पकड़ है, जो कफ़्फ़ारे की सूरत में होती है।

और सूरः ब-क़रह की आयत में इरशाद है:

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ بِمَا كَسَبَتْ قُلُوْبُكُمْ.

इसमें लग़्व से मुराद वह क़सम है जो बिना इरादे के ज़बान से निकल जाये, या अपने

नज़दीक सच्ची बात समझकर क़सम खा ले मगर वह हक़ीक़त में ग़लत निकले। इसके मुक़ाबले में वह क़सम बयान हुई है जिसमें जान-बूझकर झूठ बोला गया हो, जिसको यमीन-ए-ग़मूस कहते हैं। इसलिये इस आयत का हासिल यह हुआ कि यमीन-ए-लग़्व पर तो कोई गुनाह नहीं, बल्कि गुनाह यमीन-ए-ग़मूस पर है, जिसमें इरादा करके झूठ बोला गया हो। तो सूरः ब-क़रह में आख़िरत के गुनाह का हुक्म बयान है, और सूरः मायदा की उक्त आयत में दुनियावी हुक्म यानी कफ़्फ़ारे का। जिसका हासिल यह हुआ कि यमीन-ए-लग़्व पर अल्लाह तआ़ला तुमसे पूछगछ और पकड़ नहीं करता, यानी कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं करता, बल्कि कफ़्फ़ारा सिर्फ़ उस क़सम पर लाज़िम करता है जो आने वाले ज़माने में किसी काम के करने या न करने के बारे में आयोजित की हो और फिर उसको तोड़ दिया हो। इसके बाद कफ़्फ़ारे (बदले) की तफ़सील इस तरह इरशाद फ़रमाई है:

فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ.

यानी तीन कामों में से कोई एक अपने इख़्तियार से कर लिया जाये- अव्वल यह कि दस मिस्कीनों को दरमियानी दर्जे का खाना सुबह व शाम दो वक़्त खिला दिया जाये, या यह कि दस मिस्कीनों को सतर ढाँपने के बक़द्र कपड़ा दे दिया जाये। मसलन एक पाजामा या तहबन्द या लम्बा कुर्ता। या किसी गुलाम को आज़ाद कर दिया जाये।

इसके बाद इरशाद है:

فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ.

यानी अगर किसी क़सम तोड़ने वाले को इस माली कफ़्फ़ारे के अदा करने पर क़ुदरत (ताक़त व गुंजाईश) न हो कि न दस मिस्कीनों को खाना खिला सके न कपड़ा दे सके और न गुलाम आज़ाद कर सके तो फिर उसका कफ़्फ़ारा यह है कि तीन दिन रोज़े रखे। कुछ रिवायतों में इस जगह तीन रोज़े लगातार रखने का हुक्म आया है, इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि और कुछ दूसरे इमामों के नज़दीक क़सम के कफ़्फ़ारे के तीन रोज़े लगातार होने ज़रूरी हैं।

उक्त आयत में क़सम के कफ़्फ़ारे के बारे में अव्वल लफ़्ज़ इतआ़म आया है, और इतआ़म के मायने अ़रबी लुग़त के एतिबार से खाना खिलाने के भी आते हैं और किसी को खाना दे देने के भी, इसलिये फ़ुक़हा हज़रात ने इस आयत का यह मफ़्हूम क़रार दिया है कि कफ़्फ़ारा देने वाले को दोनों बातों का इख़्तियार है, कि दस मिस्कीनों की दावत करके खाना खिलाये, या खाना उनकी मिल्कियत में दे दे। मगर पहली सूरत में यह ज़रूरी है औसत दर्जे का खाना जो वह आ़म तौर पर अपने घर खाता है दस मिस्कीनों को दोनों वक़्त पेट भरकर खिला दे, और दूसरी सूरत में एक मिस्कीन को एक फ़ितरे के बराबर दे दे। मसलन पौने दो सैर गेहूँ या उसकी क़ीमत, तीनों में से जो चाहे इख़्तियार करे, लेकिन रोज़ा रखना सिर्फ़ उस सूरत में काफ़ी हो सकता है जबकि इन तीनों में से किसी पर क़ुदरत (ताक़त व गुंजाईश) न हो।

क़सम टूटने से पहले कफ़्फ़ारे की अदायेगी मोतबर नहीं

आयत के आख़िर में तंबीह के लिये दो बातें इरशाद फ़रमायी गयी हैं। पहली:

ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْ

यानी यह है कफ़्फ़ारा तुम्हारी क़सम का जब तुमने क़सम खाई।

इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि और दूसरे ज़्यादातर इमामों के नज़दीक इसका मतलब यह है कि जब तुम किसी आगे आने वाले वक़्त में काम करने या न करने पर हलफ़ करो (क़सम खाओ) और फिर उसके ख़िलाफ़ हो जाये तो उसका कफ़्फ़ारा वह है जो ऊपर ज़िक्र किया गया है। इसका हासिल यह है कि कफ़्फ़ारे की अदायेगी क़सम टूटने के बाद होनी चाहिये, क़सम तोड़ने से पहले अगर कफ़्फ़ारा दे दिया जाये तो वह मोतबर न होगा। वजह यह है कि कफ़्फ़ारा लाज़िम होने का सबब क़सम तोड़ना है, जब तक क़सम नहीं टूटी तो कफ़्फ़ारा वाजिब ही नहीं हुआ। तो जैसे वक़्त से पहले नमाज़ नहीं होती, रमज़ान से पहले रमज़ान का रोज़ा नहीं होता, इसी तरह क़सम टूटने से पहले क़सम का कफ़्फ़ारा भी अदा नहीं होता।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ

यानी अपनी क़समों की हिफ़ाज़त करो।

मतलब यह है कि अगर किसी चीज़ की क़सम खा ली है तो बिना शरई या तबई ज़रूरत के क़सम को न तोड़ो। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद यह है कि क़सम खाने में जल्द-बाज़ी से काम न लो, अपनी क़सम की हिफ़ाज़त करो, जब तक सख़्त मजबूरी न हो क़सम न खाओ। (तफ़सीर-ए-मज़हरी)

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝ اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ ۝ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू इन्नमल्-ख़म्रु वल्-मैसिरु वल्-अन्साबु वल्-अज़्लामु रिज्सुम्-मिन् अ़-मलिश्-शैतानि फ़ज्तनिबूहु लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून (90) इन्नमा युरीदुश्शैतानु	ऐ ईमान वालो! यह जो है शराब और जुआ और बुत और पाँसे सब गन्दे काम हैं शैतान के, सो इनसे बचते रहो ताकि तुम निजात पाओ। (90) शैतान तो यही चाहता है कि डाले तुम में दुश्मनी और

अंय्यूक़ि-अ बैनकुमुल्-अ़दा-व-त वल्-बग़्ज़ा-अ फ़िल्ख़म्रि वल्मैसिरि व यसुद्दकुम् अ़न् ज़िक्रिल्लाहि व अ़निस्सलाति फ़-हल् अन्तुम् मुन्तहून (91) व अतीअुल्ला-ह व अतीअुर्-रसू-ल वह्ज़रू फ़-इन् तवल्लैतुम् फ़अ़्लमू अन्नमा अ़ला रसूलिनल् बलाग़ुल्-मुबीन (92)	बैर शराब और जुए के द्वारा, और रोके तुमको अल्लाह की याद से और नमाज़ से, सो अब भी तुम बाज़ आओगे। (91) और हुक्म मानो अल्लाह का और हुक्म मानो रसूल का और बचते रहो, फिर अगर तुम फिर जाओगे तो जान लो कि हमारे रसूल का ज़िम्मा सिर्फ़ पहुँचा देना है खोलकर। (92)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से जोड़

ऊपर हलाल चीज़ों के विशेष तौर पर छोड़ देने की मनाही थी, आगे कुछ हराम चीज़ों के इस्तेमाल की मनाही है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! (बात यही है कि) शराब और जुआ और बुत (वग़ैरह) और क़ुर्आ डालने के तीर (ये सब) गन्दे शैतानी काम हैं, सो इनसे बिल्कुल अलग रहो ताकि तुमको (इनके नुक़सानात से बचने की वजह से जो आगे बयान हुए हैं) कामयाबी हो। (और वह नुक़सानात दुनियावी भी हैं और दीनी भी, जिनका बयान यह है कि) शैतान तो यूँ चाहता है कि शराब और जुए के ज़रिये से तुम्हारे आपस (के बर्ताव) में दुश्मनी और (दिलों में) बुग़ज़ पैदा कर दे (चुनाँचे ज़ाहिर है कि शराब में तो अ़क्ल नहीं रहती, गाली-गलोज दंगा-फ़साद हो जाता है, जिससे बाद में भी तबई तौर पर नासज़गी बाक़ी रहती है, और जुए में जो शख़्स मग़लूब होता है उसको ग़ालिब आने वाले पर रंज व ग़ुस्सा आता है, और जब उसको रंज होगा दूसरे पर भी उसका असर पहुँचेगा। यह तो दुनियावी नुक़सान हुआ) और (शैतान यूँ चाहता है कि इसी शराब और जुए के ज़रिये से) अल्लाह तआ़ला की याद से और नमाज़ से (जो कि अल्लाह की याद का सबसे बेहतर तरीक़ा है) तुमको रोक दे। (चुनाँचे यह भी ज़ाहिर है, क्योंकि शराब में तो उसके होश ही अपनी जगह नहीं होते और जुए में ग़ालिब यानी ऊपर रहने वाले को तो सुरूर व नशा इस क़द्र होता है कि वह उसमें डूबा रहता है, और मग़लूब को हारने और पस्त होने का रंज व ग़म और फिर ग़ालिब आने की कोशिश इस दर्जा होती है कि उससे छुटकारा नहीं होता, यह दीनी नुक़सान हुआ। जब ये ऐसी बुरी चीज़ें हैं) सो (बतलाओ) अब भी बाज़ (नहीं) आओगे? और तुम (तमाम अहकाम में) अल्लाह तआ़ला की इताअ़त करते रहो और रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की इताअ़त

करते रहो और (हुक्म की मुख़ालफ़त व उल्लंघन से) एहतियात रखो। और अगर (फ़रमाँबरदारी से) मुँह मोड़ोगे तो यह जान रखो कि हमारे रसूल के ज़िम्मे (हुक्म का) सिर्फ़ साफ़-साफ़ पहुँचा देना था (और वह इसको बख़ूबी अन्जाम दे चुके और तुमको अहकाम पहुँचा चुके, अब तुम्हारे पास किसी उज़्र की गुंजाईश नहीं रही)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

कायनात की पैदाईश इनसान के लाभ उठाने के लिये है

इन आयतों में बतलाना यह मन्ज़ूर है कि मालिके कायनात ने सारी कायनात को इनसान की ख़िदमत के लिये पैदा फ़रमाया और हर एक चीज़ को इनसान की ख़ास-ख़ास ख़िदमत पर लगा दिया है, और इनसान को कायनात का मख़्दूम बनाया है। इनसान पर सिर्फ़ एक पाबन्दी लगा दी कि हमारी मख़्लूक़ात से नफ़ा उठाने की जो हदें हमने मुक़र्रर कर दी हैं उनसे आगे न बढ़ना। जिन चीज़ों को तुम्हारे लिये हलाल और पाक बना दिया है उनसे परहेज़ करना बेअदबी और नाशुक्री है, और जिन चीज़ों के किसी ख़ास इस्तेमाल को हराम क़रार दे दिया है उसमें ख़िलाफ़वर्ज़ी (हुक्म के ख़िलाफ़) करना नाफ़रमानी और बग़ावत है। बन्दे का काम यह है कि मालिक की हिदायत के मुताबिक़ उसकी मख़्लूक़ात (बनाई हुई और पैदा की हुई चीज़ों) का इस्तेमाल करे, इसी का नाम बन्दगी है।

पहली आयत में शराब, जुआ, बुत, और जुए के तीर, चार चीज़ों का हराम होना बयान है। इसी मज़मून की एक आयत तक़रीबन ऐसे ही अलफ़ाज़ के साथ सूरः ब-क़रह में भी आ चुकी है, जो यह है:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ

इसमें इन चार चीज़ों को **रिजूस** फ़रमाया। रिजूस अ़रबी भाषा में ऐसी गन्दी चीज़ को कहा जाता है जिससे इनसान की तबीयत को घिन और नफ़रत पैदा हो। ये चारों चीज़ें ऐसी हैं कि अगर इनसान ज़रा भी सही अ़क़्ल और सलामती वाली तबीअ़त रखता हो तो ख़ुद-बख़ुद ही इन चीज़ों से उसको घिन और नफ़रत होगी।

'अज़्लाम' की वज़ाहत

उन चार चीज़ों में से एक अज़्लाम है जो ज़लम् की जमा (बहुवचन) है। अज़्लाम उन तीरों को कहा जाता है जिन पर क़ुर्आ डालकर अ़रब में जुआ खेलने की रस्म जारी थी, जिसकी सूरत यह थी कि दस आदमी साझे में एक ऊँट ज़िबह करते थे, फिर उसका गोश्त तक़सीम करने के लिये बजाय इसके कि दस हिस्से बराबर करके तक़सीम करते, उसमें इस तरह जुआ खेलते कि दस अ़दद तीरों में सात तीरों पर कुछ मुक़र्ररा हिस्सों के निशानात बना लेते थे, किसी पर एक किसी पर दो या तीन और तीन तीरों को सादा रखा होता था। उन तीरों को तरकश में डालकर

हिलाते थे, फिर एक-एक साझी के लिये एक-एक तीर तरकश में से निकालते और जितने हिस्सों का तीर किसी के नाम पर निकल आये वह उन हिस्सों का हक़दार समझा जाता था, और जिसके नाम पर सादा (ख़ाली) तीर निकल आये वह हिस्से से मेहरूम रहता था। जैसे आजकल बाज़ारों में लॉटरी के तरीक़े पर बहुत सी क़िस्में जारी हैं, इस तरह की क़ुर्आ-अन्दाज़ी क़िमार यानी जुआ है, जो क़ुरआने करीम की हिदायत के अनुसार हराम है।

क़ुर्आ डालने की जायज़ सूरत

हाँ एक तरह की क़ुर्आ-अन्दाज़ी जायज़ और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है। वह यह कि जब हुक़ूक़ सब के बराबर हों और हिस्से भी बराबर तक़सीम कर दिये गये हों, फिर उनमें से हिस्सों का निर्धारण क़ुर्आ-अन्दाज़ी के द्वारा कर लिया जाये। मसलन एक मकान चार साझियों में तक़सीम करना है तो क़ीमत के लिहाज़ से चार हिस्से बराबर लगा लिये गये, अब यह मुतैयन करना कि कौनसा हिस्सा किस साझी के पास रहे, इसको मुतैयन करना अगर आपस में समझौते और रज़ामन्दी से न हो तो यह भी जायज़ है कि क़ुर्आ-अन्दाज़ी करके जिसके नाम पर जिस तरफ़ का हिस्सा निकल आये उसको दे दिया जाये। या किसी चीज़ के इच्छुक एक हज़ार हैं और सब के हुक़ूक़ बराबर हैं, मगर जो चीज़ तक़सीम करनी है वो कुल सौ हैं, तो इसमें क़ुर्आ-अन्दाज़ी (लॉटरी) से फ़ैसला किया जा सकता है।

अज़लाम की क़ुर्आ-अन्दाज़ी के ज़रिये गोश्त तक़सीम करने की जाहिलाना रस्म की हुर्मत (हराम होना) सूरः मायदा ही की एक आयत में पहले आ चुकी हैः

وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوْا بِالْاَزْلَامِ.

खुलासा यह है कि उक्त आयत में जिन चार चीज़ों का हराम होना मज़कूर है उनमें से दो यानी "मैसिर" और "अज़लाम" नतीजे के एतिबार से एक ही हैं, बाक़ी दो में एक "अनसाब" है जो "नुसुब" की जमा (बहुवचन) है। ऐसी चीज़ को नुसुब कहा जाता है जो इबादत के लिये खड़ी की गयी हो, चाहे बुत हो या कोई पेड़, पत्थर वग़ैरह।

शराब और जुए की जिस्मानी और रूहानी ख़राबियाँ

आयत के शाने नुज़ूल (उतरने के मौक़े और सबब) और इसके बाद वाली आयत से मालूम होता है कि इस आयत में असल मक़सूद दो चीज़ों की हुर्मत (हराम होना) और ख़राबियों का बयान करना है, यानी शराब और जुआ। **अनसाब** यानी बुतों का ज़िक्र उसके बाद इसलिये मिला दिया गया है कि सुनने वाले समझ लें कि शराब और जुए का मामला ऐसा सख़्त जुर्म है जैसे बुतों को पूजना।

हदीस की किताब इब्ने माजा की एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

شَارِبُ الْخَمْرِ كَعَابِدِ الْوَثَنِ.

"यानी शराब पीने वाला ऐसा मुजरिम है जैसे बुत को पूजने वाला।"

और कुछ रिवायतों में है:

شَارِبُ الْخَمْرِ كَعَابِدِ اللَّاتِ وَالْعُزّٰى.

"यानी शराब पीने वाला ऐसा है जैसा लात व उज़्ज़ा की पूजा करने वाला।"

ख़ुलासा-ए-कलाम यह हुआ कि यहाँ शराब और जुए की सख़्त हुर्मत और उनकी रूहानी और जिस्मानी ख़राबियों का बयान है। पहले रूहानी और मानवी ख़राबियाँ 'रिजसुम मिन अ़-मलिश्शैतानि' के अलफ़ाज़ में बयान कीं, जिनका मफ़्हूम यह है कि ये चीज़ें सही फ़ितरत के नज़दीक गन्दी, क़ाबिले नफ़रत चीज़ें और शैतानी जाल हैं, जिनमें फंस जाने के बाद इनसान बेशुमार बुराईयों और घातक ख़राबियों के गड्ढ़े में जा गिरता है। ये रूहानी ख़राबियाँ बयान फ़रमाने के बाद हुक्म दिया गयाः

فَاجْتَنِبُوْهُ.

कि जब ये चीज़ें ऐसी हैं तो इनसे परहेज़ करो और बचो।

आख़िर में फ़रमायाः

لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ.

जिसमें बतला दिया गया कि तुम्हारी दुनिया व आख़िरत की फ़लाह और कामयाबी इसी पर निर्भर है कि इन चीज़ों से परहेज़ करते रहो।

इसके बाद दूसरी आयत में शराब और जुए के दुनियावी और ज़ाहिरी नुक़सानात व ख़राबियों का बयान इस तरह बयान फ़रमाया गयाः

اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ فِى الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ.

"यानी शैतान यह चाहता है कि तुम्हें शराब और जुए में मुब्तला करके तुम्हारे बीच बुग़ज़ व दुश्मनी की बुनियादें डाल दे।"

इन आयतों का नुज़ूल (अल्लाह की तरफ़ से उतरना) भी कुछ ऐसे ही वाक़िआ़त के बारे में हुआ है कि शराब के नशे में ऐसी हरकतें सादिर हुईं जो आपसी नाराज़गी व ग़ुस्से और फिर लड़ाई-झगड़े का सबब बन गयीं, और यह कोई इत्तिफ़ाक़ी घटना नहीं थी बल्कि शराब के नशे में जब आदमी अ़क़्ल खो बैठता है तो उससे ऐसी हरकतों का हो जाना लाज़िमी जैसा हो जाता है।

इसी तरह जुए का मामला है कि हारने वाला अगरचे अपनी हार मानकर उस वक़्त नुक़सान उठा लेता है, मगर अपने मुक़ाबिल पर नाराज़गी व ग़ुस्से और नफ़रत व दुश्मनी उसके लाज़िमी असरात में से है। हज़रत क़तादा रह. इस आयत की तफ़सीर में फ़रमाते हैं कि कुछ अ़रब वालों की आ़दत थी कि जुए में अपने बाल-बच्चों, घर वालों और माल व सामान सब को हार कर इन्तिहाई दुख व परेशानी की ज़िन्दगी गुज़ारते थे।

आयत के आख़िर में फिर इन चीज़ों की एक और ख़राबी इन अलफ़ाज़ में इरशाद फ़रमाईः

وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ.

"यानी ये चीज़ें तुम्हें अल्लाह की याद और नमाज़ से ग़ाफ़िल कर देती हैं।"

यह ख़राबी बज़ाहिर रूहानी और आख़िरत की ख़राबी है, जिसको दुनियावी ख़राबी के बाद दोबारा ज़िक्र फ़रमाते हैं। इसमें इशारा हो सकता है कि असल क़ाबिले ग़ौर और विचारनीय वह ज़िन्दगी है जो हमेशा रहने वाली है, अक़्लमन्द के नज़दीक उसी की बेहतरी वांछित और पसन्दीदा होनी चाहिये, और उसी के ख़राब होने से डरना चाहिये। दुनिया की चन्द दिन की ज़िन्दगी की ख़ूबी न कोई क़ाबिले फ़ख़्र चीज़ है, न ख़राबी ज़्यादा क़ाबिले रंज व ग़म है, क्योंकि इसकी दोनों हालतें चन्द दिन में ख़त्म हो जाने वाली हैं।

और यह भी कहा जा सकता है कि अल्लाह के ज़िक्र और नमाज़ से ग़फ़लत यह दुनिया व आख़िरत और जिस्म व रूह दोनों के लिये नुक़सानदेह है। आख़िरत और रूह के लिये नुक़सानदेह होना तो ज़ाहिर है कि अल्लाह से ग़ाफ़िल, बेनमाज़ी की आख़िरत तबाह और रूह मुर्दा है, और ज़रा ग़ौर से देखा जाये तो अल्लाह से ग़ाफ़िल की दुनिया भी वबाले जान होती है कि जब अल्लाह से ग़ाफ़िल होकर उसका सबसे बड़ा और अहम मक़सद माल व दौलत और इज़्ज़त व रुतबा हो जाये तो वे इतने बखेड़े अपने साथ लाते हैं कि वे ख़ुद अपनी जगह एक मुस्तक़िल ग़म होते हैं जिसमें मुब्तला होकर इनसान अपने असल मक़सद यानी राहत व आराम और इत्मीनान व सुकून से मेहरूम हो जाता है, और राहत व आराम के उन असबाब में ऐसा मस्त हो जाता है कि ख़ुद राहत को भी भूल जाता है। और अगर किसी वक़्त यह माल व दौलत या इज़्ज़त व रुतबा जाते रहें या इनमें कमी आ जाये तो इनके ग़म और रंज की इन्तिहा नहीं रहती। ग़र्ज़ कि यह ख़ालिस दुनियादार इनसान दोनों हालतों में रंज व फ़िक्र और ग़म व परेशानी में घिरा रहता है:

अगर दुनिया नबाशद दर्द-मन्देम
वगर बाशद ब-मेहरश पा-ए-बन्देम

यानी अगर दुनिया न हो तो एक ही ग़म है उसके न होने का, और अगर दुनिया हो तो वह मुस्तक़िल एक अज़ाब, फंदा और बेड़ी है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

बख़िलाफ़ उस शख़्स के जिसका दिल अल्लाह की याद से रोशन और नमाज़ के नूर से मुनव्वर है। दुनिया के माल व दौलत और रुतबे व पद उसके क़दमों पर गिरते हैं, और उनको सही राहत व आराम पहुँचाते हैं, और अगर ये चीज़ें जाती रहें तो उनके दिल इससे मुतास्सिर नहीं होते। उनका यह जाल होता है:

न शादी दाद सामाने न ग़म आवुर्द नुक़साने
ब-पेशे हिम्मते मा हर चे आमद बूद महमाने

यानी न कोई फ़ायदा हमें ख़ुशी में मस्त कर सकता है और न कोई नुक़सान रंज व ग़म का कारण बन सकता है। हम अपनी हिम्मत व जुर्रत से हर पेश आने वाली हालत का ज़िन्दा दिली से सामना करते हैं। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

ख़ुलासा यह है कि अल्लाह के ज़िक्र और नमाज़ से ग़फ़लत अगर ग़ौर से देखा जाये तो आख़िरत और दुनिया दोनों के एतिबार से ख़राबी है, इसलिये मुम्किन है कि 'रिजूसुम मिन् अ़-मलिश्शैतानि' से ख़ालिस आख़िरत का और रूहानी नुक़सान बयान करना मक़सूद हो, और 'यूक़ि-अ़ बैनकुमुल-अ़दाव-त वल्बग़ज़ा-अ' से ख़ालिस दुनियावी और जिस्मानी ख़राबी बतलाना हो, और 'यसुद्दकुम् अ़न् ज़िक्रिल्लाहि व अ़निस्सलाति' से दीन व दुनिया की संयुक्त तबाही व बरबादी का ज़िक्र करना मक़सूद हो।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि अल्लाह के ज़िक्र में तो नमाज़ भी दाख़िल है, फिर नमाज़ को अलग से बयान करने में क्या हिक्मत है? वजह यह है कि इसमें नमाज़ की अहमियत और अल्लाह के ज़िक्र की तमाम क़िस्मों में अफ़ज़ल व बेहतर होने की तरफ़ इशारा करने के लिये नमाज़ को मुस्तक़िल तौर पर ज़िक्र फ़रमाया गया है।

और तमाम दीनी और दुनियावी, जिस्मानी और रूहानी ख़राबियों की तफ़सील बतलाने के बाद उन चीज़ों से बाज़ रखने की हिदायत एक अ़जीब दिल को छू लेने वाले अन्दाज़ से फ़रमाई है। इरशाद होता है:

فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ.

यानी जब ये सारी ख़राबियाँ तुम्हारे इल्म में आ गयीं तो अब भी इनसे बाज़ आओगे।

इन दोनों आयतों में शराब और जुए वग़ैरह की हुर्मत (हराम होना) और सख़्त मनाही का बयान था, जो अल्लाह के क़ानून की एक धारा है। तीसरी आयत में इस हुक्म को आसान करने और इस पर अ़मल को आसान बनाने के लिये क़ुरआने करीम ने अपने बयान के ख़ास अन्दाज़ के तहत इरशाद फ़रमायाः

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاحْذَرُوْا، فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ.

जिसका हासिल यह है कि अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) का हुक्म तुम्हारे फ़ायदे के लिये है, अगर तुम न मानो तो न अल्लाह जल्ल शानुहू का कोई नुक़सान है न उसके रसूल का। अल्लाह तआ़ला का इस नफ़े व नुक़सान से ऊपर होना तो ज़ाहिर था, रसूल के बारे में किसी को यह ख़्याल हो सकता था कि जब उनकी बात न मानी गयी तो उनके अज्र व सवाब या क़द्र व मक़ाम में शायद कुछ फ़र्क़ आ जाये, इस शुब्हे को दूर करने के लिये इरशाद फ़रमायाः

فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا عَلٰى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ.

यानी अगर तुम में से कोई भी हमारे रसूल की बात न माने तब भी उनकी क़द्र व रुतबे में कोई फ़र्क़ नहीं आता। क्योंकि जितना काम उनके सुपुर्द था वह कर चुके, यानी साफ़-साफ़ तौर पर वाज़ेह करके अल्लाह तआ़ला के अहकाम पहुँचा देना। उसके बाद जो शख़्स नहीं मानता वह अपना नुक़सान करता है, हमारे रसूल का इससे कुछ नहीं बिगड़ता।

لَيْسَ عَلَى الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ جُنَاحٌ فِيْمَا طَعِمُوْٓا اِذَا مَا اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ
ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاٰمَنُوْا ثُمَّ اتَّقَوْا وَّاَحْسَنُوْا ؕ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ۝ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَيَبْلُوَنَّكُمُ
اللّٰهُ بِشَيْءٍ مِّنَ الصَّيْدِ تَنَالُهٗٓ اَيْدِيْكُمْ وَرِمَاحُكُمْ لِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَّخَافُهٗ بِالْغَيْبِ ۚ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ
ذٰلِكَ فَلَهٗ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ۝ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ ؕ وَمَنْ قَتَلَهٗ مِنْكُمْ مُّتَعَمِّدًا
فَجَزَآءٌ مِّثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ يَحْكُمُ بِهٖ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ هَدْيًۢا بٰلِغَ الْكَعْبَةِ اَوْ كَفَّارَةٌ طَعَامُ مَسٰكِيْنَ
اَوْ عَدْلُ ذٰلِكَ صِيَامًا لِّيَذُوْقَ وَبَالَ اَمْرِهٖ ؕ عَفَا اللّٰهُ عَمَّا سَلَفَ ؕ وَمَنْ عَادَ فَيَنْتَقِمُ اللّٰهُ مِنْهُ ؕ وَ
اللّٰهُ عَزِيْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ۝ اُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ الْبَحْرِ وَطَعَامُهٗ مَتَاعًا لَّكُمْ وَلِلسَّيَّارَةِ ۚ وَحُرِّمَ عَلَيْكُمْ
صَيْدُ الْبَرِّ مَا دُمْتُمْ حُرُمًا ؕ وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝

लै-स अ़लल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति जुनाहुन् फ़ीमा तअ़िमू इज़ा मत्तक़ौ व आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति सुम्मत्तक़ौ व आमनू सुम्मत्तक़ौ व अह्सनू, वल्लाहु युहिब्बुल्-मुह्सिनीन (93) ✿
या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ल-यब्लुवन्नकुमुल्लाहु बिशैइम् मिनस्सैदि तनालुहू ऐदीकुम् व रिमाहुकुम् लि-यअ्-लमल्लाहु मंय्यख़ाफ़ुहू बिल्ग़ैबि फ़-मनिअ्तदा बअ्-द ज़ालि-क फ़-लहू अ़ज़ाबुन् अलीम (94) या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तक़्तुलुस्सै-द व अन्तुम् हुरुमुन्, व मन् क़-त-लहू मिन्कुम्

जो लोग ईमान लाये और नेक काम किये उन पर गुनाह नहीं उसमें जो कुछ पहले खा चुके जबकि आईन्दा को डर गये और ईमान लाये और नेक अ़मल किये, फिर डरते रहे और यक़ीन किया फिर डरते रहे और नेकी की, और अल्लाह दोस्त रखता है नेकी करने वालों को। (93) ✿
ऐ ईमान वालो! अलबत्ता तुम को आज़मायेगा अल्लाह एक बात से उस शिकार में कि जिस पर पहुँचे हैं हाथ तुम्हारे और नेज़े तुम्हारे, ताकि मालूम करे अल्लाह कि कौन उससे डरता है बिन देखे, फिर जिसने ज़्यादती की उसके बाद तो उसके लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है। (94) ऐ ईमान वालो! न मारो शिकार जिस वक़्त तुम हो एहराम में, और जो कोई तुम में उसको मारे जानकर तो उस पर

मु-तअ़म्मिदन् फ़-जज़ाउम्-मिस्लु मा क़-त-ल मिनन्न-अ़मि यस्कुमु बिही ज़वा अ़द्लिम्-मिन्कुम् हद्यम् बालिग़ल्-कअ्-बति औ कफ़्फ़ारतुन् तआ़मु मसाकी-न औ अ़द्लु ज़ालि-क सियामल्-लियज़ू-क़ व बा-ल अम्रिही, अ़फ़ल्लाहु अ़म्मा स-लफ़, व मन् अ़ा-द फ़-यन्तक़िमुल्लाहु मिन्हु, वल्लाहु अ़ज़ीज़ुन् ज़ुन्तिक़ाम (95) उहिल्-ल लकुम् सैदुल्बह्रि व तआ़मुहू मताअ़ल्-लकुम् व लिस्सय्या-रति व हुर्रि-म अ़लैकुम् सैदुल्बर्रि मा दुम्तुम् हुरुमन्, वत्तक़ुल्लाहल्लज़ी इलैहि तुह्शरून (96)	बदला है उस मारे हुए के बराबर जानवरों में से, जो तजवीज़ करें दो मोतबर आदमी तुम में से, इस तरह से कि वह बदले का जानवर नियाज़ के तौर पर पहुँचाया जाये काबे तक, या उस पर कफ़्फ़ारा है चन्द मोहताजों को खिलाना या उसके बराबर रोज़े ताकि चखे सज़ा अपने काम की, अल्लाह ने माफ़ किया जो कुछ हो चुका और जो कोई फिर करेगा उससे बदला लेगा अल्लाह, और अल्लाह ज़बरदस्त है बदला लेने वाला। (95) हलाल हुआ तुम्हारे लिए दरिया का शिकार और दरिया का खाना, तुम्हारे फ़ायदे के वास्ते और सब मुसाफ़िरों के, और हराम हुआ तुम पर जंगल का शिकार जब तक तुम एहराम में रहो, और डरते रहो अल्लाह से जिसके पास तुम जमा होगे। (96)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

तफ़सीर लुबाब में मुस्नद अहमद से हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि जब ऊपर की आयत में शराब व जुए के हराम होने का हुक्म नाज़िल हो चुका तो कुछ लोगों ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! बहुत से आदमी जो कि शराब पीते थे और जुए का माल खाते थे, और इनके हराम होने से पहले मर गये, और अब मालूम हुआ कि ये चीज़ें हराम हैं, उनका क्या हाल होगा? इस पर आयत नम्बर 93 नाज़िल हुई।

और पीछे आयतः

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ.

(यानी आयत 87) में पाक व हलाल चीज़ों को हराम करने की मनाही का ज़िक्र था। अब आयतः

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَيَبْلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَيْءٍ...... الخ.

(यानी आयत 94) से बयान फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआ़ला को मुकम्मल इख़्तियार हासिल

है कि ख़ास हालात में ख़ास-ख़ास चीज़ों को हराम क़रार दे दें। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐसे लोगों पर जो कि ईमान रखते हों और नेक काम करते हों, उस चीज़ में कोई गुनाह नहीं जिसको वे खाते-पीते हों (और इस वक़्त वह हलाल हो अगरचे बाद में हराम हो जाये, और उनको गुनाह कैसे होता) जबकि (गुनाह को चाहने वाली कोई चीज़ मौजूद न हो बल्कि एक रोकने वाली चीज़ मौजूद हो, वह यह कि) वे लोग (ख़ुदा के ख़ौफ़ से उस वक़्त की नाजायज़ चीज़ों से) परहेज़ रखते हों, और (दलील इस ख़ौफ़ की यह हो कि वे लोग) ईमान रखते हों (जो कि ख़ुदा से डरने का सबब है) और नेक काम करते हों (जो कि अल्लाह के ख़ौफ़ की निशानी है, और इसी हालत पर वे उम्र भर रहें। चुनाँचे अगर वह हलाल चीज़ जिसको पहले खाते-पीते थे आगे कभी चलकर हराम हो जाये तो) फिर (उससे भी इसी ख़ौफ़े ख़ुदा के सबब) परहेज़ करने लगते हों और (उस ख़ौफ़ की भी दलील पहले की तरह यही हो कि वे लोग) ईमान रखते हों, फिर परहेज़ करने लगते हों और ख़ूब नेक अ़मल करते हों (जो कि मौक़ूफ़ हैं ईमान पर। पस यहाँ भी सबब और निशानी ख़ौफ़े ख़ुदा की इकट्ठी हैं। मतलब यह कि हर बार के दोबारा-तिबारा हराम होने में उनका यही अ़मल दरामद हो, कुछ दो-तीन बार की ख़ुसूसियत नहीं। पस बावजूद रुकावट और निरन्तर बाधा के हमारे फ़ज़्ल से बहुत दूर की बात है कि वे गुनाहगार हों) और (उनका फ़रमाँबरदारी और नेकी इख़्तियार करने का यह ख़ास तरीक़ा सिर्फ़ गुनाह के लाज़िम होने से रुकावट ही नहीं बल्कि सवाब मिलने और अल्लाह के महबूब हो जाने को भी चाहता है, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला ऐसे नेक काम करने वालों से मुहब्बत रखते हैं (पस उनमें नापसन्दीदा होने का शुब्हा व गुमान तो कब हो सकता है, ये तो नापसन्दीदगी की हालत के बजाय महबूब होने का दर्जा रखते हैं)।

ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला किसी क़द्र शिकार से तुम्हारा इम्तिहान करेगा जिन तक (तुमसे दूर-दूर न भागने के सबब) तुम्हारे हाथ और तुम्हारे नेज़े पहुँच सकेंगे (इम्तिहान का मतलब यह कि एहराम की हालत में जंगली और ग़ैर-पालतू जानवरों के शिकार करने को तुम पर हराम करके जैसा कि आगे इसकी वज़ाहत आ रही है, उन ग़ैर-पालतू जानवरों को तुम्हारे आस-पास फिराते रहेंगे) ताकि अल्लाह तआ़ला (ज़ाहिरी तौर पर भी) मालूम करें कि कौन शख़्स उससे (यानी उसके अ़ज़ाब से) बिन देखे डरता है (और हराम काम करने से जो कि अ़ज़ाब का सबब है, बचता है। इसी से आंशिक तौर पर यह भी मालूम हो गया कि यह शिकार हराम है) तो जो शख़्स इस (हराम होने) के बाद (जिस पर इम्तिहान व परीक्षा होना भी दलालत कर रहा है, शरीअ़त की) हद से निकलेगा (यानी मना किये हुए शिकार का अपराधी होगा) उसके वास्ते दर्दनाक सज़ा (मुक़र्रर) है। (चुनाँचे शिकारी जानवर इसी तरह आस-पास लगे फिरते थे, चूँकि सहाबा में बहुत से शिकार के आ़दी थे इसमें उनकी इताअ़त का इम्तिहान हो रहा था, जिसमें वे पूरे उतरे। आगे मनाही को और स्पष्ट रूप से बयान किया है कि) ऐ ईमान वालो! (जंगली)

शिकार को (उनको छोड़कर जिनको शरीअ़त ने इस हुक्म से अलग कर दिया) क़त्ल मत करो, जबकि तुम एहराम की हालत में हो (इसी तरह जबकि वह शिकार हरम में हो चाहे शिकारी एहराम में न हो, उसका भी यही हुक्म है)। और जो शख़्स तुम में से उसको जान-बूझकर क़त्ल करेगा तो उस पर (उसके फ़ेल की) सज़ा और जुर्माना वाजिब होगा, जो कि (क़ीमत के एतिबार से) बराबर होगा उस जानवर (की क़ीमत) के जिसको उसने क़त्ल किया है, जिस (के अनुमान) का फ़ैसला तुम में से दो मोतबर शख़्स कर दें (जो कि दीनदारी में भी क़ाबिले एतिबार हों और समझदारी व अनुभव में भी। फिर उस क़ातिल को अनुमानित क़ीमत के बाद इख़्तियार है) चाहे (उस क़ीमत का कोई ऐसा ही जानवर ख़रीद ले कि) वह जुर्माने (का जानवर) ख़ास चौपायों में से हो (यानी ऊँट, गाय भैंस, भेड़, बकरी। नर हो या मादा) शर्त यह है कि नियाज़ के तौर पर काबा (शरीफ़ के पास) तक (यानी हरम के अन्दर) पहुँचाई जाए, और चाहे (उस क़ीमत के बराबर ग़ल्ला) कफ़्फ़ारा (अदा करने के तौर पर जो) कि ग़रीबों को दे दिया जाये, (यानी एक मिस्कीन को एक सदक़ा-ए-फ़ित्र के बराबर दिया जाये) चाहे उस (ग़ल्ले) के बराबर रोज़े रख लिए जाएँ, (बराबरी की सूरत यह है कि हर मिस्कीन के हिस्से यानी फ़ितरे के बदले में एक रोज़ा और यह जुर्माना व सज़ा इसलिये मुक़र्रर की है) ताकि अपने किए की शामत का मज़ा चखे। (बख़िलाफ़ उस शख़्स के जिसने जान-बूझकर इरादे से शिकार न किया हो, कि अगरचे उस पर भी बदला तो यही वाजिब है मगर वह फ़ेल की सज़ा नहीं, बल्कि मौक़े और मक़ाम के सम्मानीय यानी हरम का शिकार, जो कि हरम की वजह से सम्मानीय या एहराम की वजह से सम्मानित हो गया है, उसका ज़िमान और बदला है, और उस बदले के अदा कर देने से) जो गुज़र गया अल्लाह ने उसको माफ़ कर दिया। और जो शख़्स फिर ऐसी ही हरकत करेगा (चूँकि ज़्यादातर किसी काम को दोबारा करने में पहली बार की तुलना में ज़्यादा जुर्रत पाई जाती है) तो (इस वजह से उक्त बदले व जुर्माने के अलावा जो कि असल फ़ेल या मक़ाम का बदला है, आख़िरत में) अल्लाह उससे (इस जुर्रत का) इन्तिक़ाम लेंगे, (अलबत्ता अगर तौबा कर ले तो इन्तिक़ाम की वजह ख़त्म हो जायेगी) और अल्लाह तआ़ला ज़बरदस्त हैं, इन्तिक़ाम ले सकते हैं।

तुम्हारे लिए (एहराम की हालत में) दरिया (यानी पानी) का शिकार पकड़ना और उसका खाना (सब) हलाल किया गया है, तुम्हारे फ़ायदा उठाने के वास्ते (और तुम्हारे) और मुसाफ़िरों के (लाभान्वित होने के) वास्ते, (कि सफ़र में इसी को तोशा बनायें) और ख़ुश्की का शिकार (अगरचे कुछ सूरतों में खाना हलाल हो मगर) पकड़ना (या उसमें सहयोगी बनना) तुम्हारे लिए हराम किया गया, जब तक कि तुम एहराम की हालत में हो। और अल्लाह तआ़ला (की मुख़ालफ़त यानी नाफ़रमानी करने) से डरो, जिसके पास जमा (करके हाज़िर) किए जाओगे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

गहरी नज़र रखने वाले उलेमा ने लिखा है कि तक़वा (यानी दीनी एतिबार से नुक़सान देने वाली चीज़ों से बचने और परहेज़ करने के) कई दर्जे हैं, और ईमान व यक़ीन के दर्जे भी क़ुव्वत

व कमज़ोरी के लिहाज़ से अलग-अलग हैं। तजुर्बे और शरई अहकामात से साबित है कि जिस क़द्र आदमी ज़िक्र व फ़िक्र, नेक अ़मल और अल्लाह के रास्ते में जिहाद में तरक़्क़ी करता है उसी क़द्र ख़ुदा के ख़ौफ़ और उसकी बड़ाई व जलाल के तसव्वुर से दिल पुर होता और ईमान व यक़ीन मज़बूत होता रहता है। अल्लाह तआ़ला की तरफ़ बढ़ने के दर्जों की इसी तरक़्क़ी व बुलन्दी की तरफ़ इस आयत में तक़वा और ईमान को दोहराकर इशारा फ़रमाया और अल्लाह से ताल्लुक़ क़ायम करने के आख़िरी मक़ाम "एहसान" और उसके फल व परिणाम पर भी तंबीह फ़रमा दी। (तफ़सीरे उस्मानी)

मसलाः शिकार जो कि हरम और एहराम में हराम है, आ़म है, चाहे खाया जाने वाला यानी हलाल जानवर हो या न खाया जाने वाला यानी हराम (आयत में बिना किसी क़ैद और शर्त के होने की वजह से)।

मसलाः 'शिकार' उन जानवरों को कहा जाता है जो वहशी (जंगली और ग़ैर-पालतू) हों, आ़दतन इनसानों के पास न रहते हों। पस जो पैदाईशी तौर पर घरेलू और पालतू हों जैसे भेड़, बकरी, गाय, ऊँट, इनका ज़िबह करना और खाना दुरुस्त है।

मसलाः अलबत्ता जो दलील से अलग और बाहर हो गये हैं और उनको पकड़ना, क़त्ल करना हलाल है, जैसे दरियाई जानवर का शिकार, अल्लाह तआ़ला के क़ौल के मुताबिक़ः

أُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ الْبَحْرِ

(हलाल हुआ तुम्हारे लिये पानी का शिकार) और बाज़े ख़ुश्की के जानवर जैसे कौआ और चील और भेड़िया और साँप और बिच्छू और काटने वाला कुत्ता, इसी तरह जो दरिन्दा ख़ुद हमला करे उसका क़त्ल भी जायज़ है। हदीस में इनको इस हुक्म से बाहर रखने का ज़िक्र है।

मसलाः जो हलाल शिकार हरम से बाहर और एहराम की हालत के अ़लावा किया जाये उसका खाना एहराम वाले को जायज़ है, जब यह उसके क़त्ल वग़ैरह में सहयोगी या सलाहकार या बतलाने वाला न हो। हदीस में ऐसा ही इरशाद है, और आयत के अलफ़ाज़ 'ला तक़्तुलू' (मत क़त्ल करो) में भी इसकी तरफ़ इशारा है। क्योंकि यहाँ 'ला तक़्तूलू' (मत क़त्ल करो) फ़रमाया है 'ला तअ्कुलू' (मत खाओ) नहीं फ़रमाया।

मसलाः हरम के शिकार को जिस तरह जान-बूझकर क़त्ल करने पर जज़ा (बदला) वाजिब है इसी तरह ग़लती से या भूल में भी वाजिब है। (रूहुल-मआ़नी)

मसलाः जैसे पहली बार में जज़ा (बदला) वाजिब है इसी तरह दूसरी तीसरी बार क़त्ल करने में भी वाजिब है।

मसलाः जज़ा (बदले) का हासिल यह है कि जिस ज़माने और जिस जगह में यह जानवर क़त्ल हुआ है बेहतर तो यह है कि दो आ़दिल शख़्सों से और जायज़ यह भी है कि एक ही आ़दिल (इन्साफ़ करने वाले और अनुभवी) शख़्स से उस जानवर की क़ीमत का अन्दाज़ा और अनुमान कराये, फिर उसमें यह तफ़सील है कि वह मक़्तूल जानवर अगर न खाया जाने वाला (यानी हराम) है तब तो यह क़ीमत एक बकरी की क़ीमत से ज़्यादा वाजिब न होगी, और अगर

वह जानवर खाया जाने वाला (यानी हलाल) था तो जिस क़द्र तख़मीना होगा वह सब वाजिब होगा। और दोनों हाल में आगे उसको तीन सूरतों में इख़्तियार है- चाहे तो उस क़ीमत का कोई जानवर क़ुरबानी की शर्तों के मुताबिक़ ख़रीद ले और हरम की सीमाओं के अन्दर ज़िबह करके ग़रीबों को बाँट दे। या उस क़ीमत के बराबर ग़ल्ला सदक़ा-ए-फ़ित्र की शर्तों के मुताबिक़ हर मिस्कीन (ग़रीब व ज़रूरत मन्द) को आधा साअ़ के बराबर दे दे, और या हर ग़रीब व ज़रूरत मन्द को आधा साअ़ के हिसाब से जितने ग़रीबों को वह ग़ल्ला पहुँच सकता हो उतने गिनती करके रोज़े रख ले। और ग़ल्ला तक़सीम करने और रोज़ों में हरम की क़ैद नहीं, और अगर क़ीमत आधा साअ़ से भी कम वाजिब हुई है तो इख़्तियार है चाहे एक ग़रीब को दे दे या एक रोज़ा रख ले।

नोटः- आधा साअ़ का वज़न हमारे वज़न के एतिबार से पौने दो सैर होता है।

मसलाः उक्त तख़मीने में जितने मिस्कीनों (ग़रीबों और खाने तक के ज़रूरत मन्दों) का हिस्सा क़रार पाये अगर उनको दो वक़्त पेट भरकर खाना खिलाये तब भी जायज़ है।

मसलाः अगर इस क़ीमत के बराबर ज़िबह के लिये जानवर तजवीज़ किया, मगर कुछ क़ीमत बच गयी तो उस बाक़ी बची में इख़्तियार है चाहे दूसरा जानवर ख़रीद ले, या उसका ग़ल्ला दे दे, या ग़ल्ले के हिसाब से रोज़े रख ले। जिस तरह क़त्ल में जज़ा (बदला) वाजिब है इसी तरह ऐसे जानवर को ज़ख़्मी करने में भी अन्दाज़ा कराया जायेगा कि इससे जानवर की किस क़द्र क़ीमत कम हो गयी, उस क़ीमत की मिक़्दार में फिर वही ज़िक्र हुई तीन सूरतें जायज़ होंगी।

मसलाः एहराम वाले को जिस जानवर का शिकार करना हराम है उसका ज़िबह करना भी हराम है, अगर उसको ज़िबह करेगा तो उसका हुक्म मुर्दार के जैसा होगा।

मसलाः अगर जानवर के क़त्ल होने की जगह जंगल है तो जो आबादी उससे क़रीब हो वहाँ के एतिबार से तख़मीना (क़ीमत व नुक़सान का अनुमान) किया जायेगा।

मसलाः इशारा करना, बताना और शिकार में मदद करना भी शिकार करने की तरह हराम है। (यानी हरम में या एहराम वाले के लिये। हिन्दी अनुवादक)

جَعَلَ اللّٰهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيٰمًا لِّلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَآئِدَ ۚ ذٰلِكَ لِتَعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝ اِعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ مَا عَلَى الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ ۚ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ ۝ قُلْ لَّا يَسْتَوِي الْخَبِيْثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيْثِ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ يٰٓاُولِي الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝

ज-अ़लल्लाहुल् कअ़्-बतल् बैतल्-हरा-म क़ियामल् लिन्नासि वश्शह्रल्-हरा-म वल्हद्-य वल्क़लाइ-द, ज़ालि-क लितअ़्लमू अन्नल्ला-ह यअ़्लमु मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्अर्ज़ि व अन्नल्ला-ह बिकुल्लि शैइन् अ़लीम (97) इअ़्लमू अन्नल्ला-ह शदीदुल्-अ़िक़ाबि व अन्नल्ला-ह ग़फ़ूरुर्रहीम (98) मा अ़लर्रसूलि इल्लल्-बलाग़ु, वल्लाहु यअ़्लमु मा तुब्दू-न व मा तक्तुमून (99) क़ुल् ला यस्तविल्-ख़बीसु वत्तय्यिबु व लौ अअ़्ज-ब-क कस्रतुल्-ख़बीसि फ़त्तक़ुल्ला-ह या उलिल्-अल्बाबि लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून (100) ❁

अल्लाह ने कर दिया काबे को जो कि घर है बुज़ुर्गी वाला क़ियाम का सबब लोगों के लिये, और बड़ाई वाले महीनों को और क़ुरबानी को जो कि काबे की नियाज़ हो, और जिनके गले में पट्टा डालकर ले जायें काबे को, यह इसलिए ताकि तुम जान लो बेशक अल्लाह को मालूम है जो कुछ है आसमान और ज़मीन में, अल्लाह हर चीज़ से ख़ूब वाक़िफ़ है। (97) जान लो बेशक अल्लाह का अ़ज़ाब सख़्त है और बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है। (98) रसूल के ज़िम्मे नहीं मगर पहुँचा देना, और अल्लाह को मालूम है जो तुम ज़ाहिर में करते हो और जो छुपाकर करते हो। (99) तू कह दे कि बराबर नहीं नापाक और पाक अगरचे तुझको भली लगे नापाक की अधिकता, सो डरते रहो अल्लाह से ऐ अ़क़्लमन्दो ताकि तुम्हारी निजात हो। (100) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ख़ुदा तआ़ला ने काबा को जो कि अदब का मकान है, लोगों (की मस्लेहतों) के क़ायम रहने का सबब क़रार दे दिया और (इसी तरह) इज़्ज़त वाले महीने को भी, और (इसी तरह) हरम में क़ुरबानी होने वाले जानवर को भी, और (इसी तरह) उन (जानवरों) को भी जिनके गले में (इस निशानी के लिये) पट्टे हों (कि ये अल्लाह की नियाज़ हैं, हरम में ज़िबह होंगे) यह (क़रारदाद अ़लावा और दुनियावी मस्लेहतों के) इस (दीनी मस्लेहत के) लिये (भी) है ताकि (तुम्हारा एतिक़ाद दुरुस्त और पुख़्ता हो इस तरह से कि तुम उन मस्लेहतों से दलील हासिल करके) इस बात का यक़ीन (शुरूआ़ती या आख़िरी दर्जे में) कर लो कि बेशक अल्लाह तआ़ला तमाम आसमानों और ज़मीन के अन्दर की चीज़ों का (पूरा) इल्म रखते हैं, (क्योंकि ऐसा हुक्म मुक़र्रर करना जिसमें आईन्दा की ऐसी मस्लेहतों की रियायत रखी गयी हो कि जिनको इनसानी अ़क़्लें न सोच सकें दलील है इल्मी सिफ़त के कामिल होने की) और (इन ज़िक्र की गयी मालूमात के

साथ कामिल इल्म के ताल्लुक़ से दलील लेकर यक़ीन कर लो कि) बेशक अल्लाह तआ़ला सब चीज़ों को ख़ूब जानते हैं (क्योंकि इन मालूमात की जानकारी पर किसी चीज़ ने बाख़बर नहीं किया। मालूम हुआ कि ज़ाती इल्म का ताल्लुक़ तमाम मालूम चीज़ों के साथ बराबर होता है) तुम यक़ीन जान लो कि अल्लाह तआ़ला सज़ा भी सख़्त देने वाले हैं, और अल्लाह तआ़ला बड़े मग़फ़िरत वाले (और) रहमत वाले भी हैं (तो उनके अहकाम के ख़िलाफ़ मत किया करो और जो कभी-कभार हो गया हो तो शरई क़ायदे के मुताबिक़ उससे तौबा कर लो)।

रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के ज़िम्मे तो सिर्फ़ पहुँचाना है (सो वह ख़ूब पहुँचा चुके, अब तुम्हारे पास कोई उज़्र व बहाना नहीं रहा) और अल्लाह सब जानते हैं जो कुछ तुम (ज़बान या अपने बदनी अंगों से) ज़ाहिर करते हो, और जो कुछ (दिल में) छुपाकर रखते हो (सो तुमको चाहिये कि फ़रमाँबरदारी ज़ाहिर व बातिन दोनों से करो)। आप (ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनसे यह भी) फ़रमा दीजिए कि नापाक और पाक (यानी गुनाह और इताअ़त या गुनाह करने वाला और इताअ़त करने वाला) बराबर नहीं, (बल्कि बुरा नापसन्दीदा है और अच्छा मक़बूल है। पस इताअ़त करके मक़बूल बनना चाहिये, नाफ़रमानी करके नापसन्दीदा न होना चाहिये) अगरचे (ऐ देखने वाले) तुझको नापाक की कसरत "यानी ज़्यादा होना" (जैसा कि दुनिया में अक्सर यही उत्पन्न होता है) ताज्जुब में डालती हो (कि बावजूद नापसन्दीदा होने के यह अधिक क्यों है, मगर यह समझ लो कि अधिकता जो किसी हिक्मत से है अच्छा और पसन्दीदा होने की दलील नहीं, जब अधिकता पर मदार नहीं, या यह कि जब अल्लाह तआ़ला के इल्म व सज़ा पर भी बाख़बर हो गये) तो (उसको मत देखो बल्कि) ख़ुदा तआ़ला (के हुक्म के ख़िलाफ़ करने) से डरते रहो ऐ अ़क़्लमन्दो! ताकि तुम (पूरे तौर से) कामयाब हो जाओ (और यह कामयाबी जन्नत और अल्लाह तआ़ला की रज़ा है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अमन व इत्मीनान के चार असबाब

पहली आयत में हक़ तआ़ला ने चार चीज़ों को लोगों के बाक़ी व क़ायम रहने और अमन व इत्मीनान का सबब बतलाया है।

अव्वल काबा। लफ़्ज़ काबा अ़रबी भाषा में ऐसे मकान (घर) को कहते हैं जो चौकोर हो। अ़रब में क़बीला-ए-ख़सूअ़म का बनाया हुआ एक और मकान भी इसी नाम से नामित था, जिसको काबा-ए-यमानिया कहा जाता था, इसी लिये बैतुल्लाह को उस काबे से अलग और फ़र्क़ करने के लिये लफ़्ज़ काबा के साथ **अलबैतुल-हराम** का लफ़्ज़ बढ़ाया गया।

लफ़्ज़ **क़ियाम** और **क़ुव्वाम** इस्मे मस्दर है। यह उस चीज़ को कहा जाता है जिस पर किसी चीज़ का ठहराव और बाक़ी रहना निर्भर हो। इसलिये 'क़ियामल् लिन्नासि' के मायने यह हुए कि काबा और उससे संबन्धित चीज़ें लोगों के क़ियाम व बक़ा (बाक़ी व क़ायम रहने) का सबब और

ज़रिया हैं।

और लफ़्ज़ "नासुन" लुग़त में आम इनसानों के लिये बोला जाता है। इस जगह मौक़े की ज़रूरत की वजह से ख़ास मक्का वाले या अरब वाले भी मुराद हो सकते हैं और आम दुनिया के इनसान भी। और ज़ाहिर यही है कि पूरे जहान के इनसान इसमें दाख़िल हैं, अलबत्ता मक्का और अरब वाले एक ख़ास विशेषता रखते हैं, इसलिये आयत का मतलब यह हो गया कि अल्लाह तआला ने काबा बैतुल्लाह और जिन चीज़ों का ज़िक्र आगे आता है, उनको पूरी इनसानी दुनिया के लिये बाक़ी व ठहराव और अमन व सुकून का ज़रिया बना दिया है। जब तक दुनिया का हर मुल्क, हर ख़ित्ते और हर दिशा के लोग इस बैतुल्लाह की तरफ़ मुतवज्जह होकर नमाज़ अदा करते रहें और बैतुल्लाह का हज होता रहे, यानी जिन पर हज फ़र्ज़ हो वे हज अदा करते रहें उस वक़्त तक यह पूरी दुनिया क़ायम और महफ़ूज़ रहेगी। और अगर एक साल भी ऐसा हो जाये कि कोई हज न करे या कोई शख़्स बैतुल्लाह की तरफ़ मुतवज्जह होकर नमाज़ अदा न करे तो पूरी दुनिया पर सार्वजनिक अ़ज़ाब आ जायेगा।

बैतुल्लाह पूरे आ़लम का सुतून है

इसी मज़मून को तफ़सीर के इमाम हज़रत अ़ता रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया है:

لوتركوه عامًا واحدًا لم ينظروا ولم يؤخروا. (بحرمحيط)

इससे मालूम हुआ कि मानवी (बातिनी और रूहानी) तौर पर बैतुल्लाह इस पूरे आ़लम का सुतून और स्तंभ है, जब तक इसकी तरफ़ तवज्जोह और इसका हज होता रहेगा दुनिया क़ायम रहेगी, और अगर किसी वक़्त बैतुल्लाह का यह एहतिराम (इज़्ज़त व सम्मान) ख़त्म हुआ तो दुनिया भी ख़त्म कर दी जायेगी। रहा यह मामला कि दुनिया के निज़ाम और बैतुल्लाह में जोड़ और ताल्लुक़ क्या है? सो इसकी हक़ीक़त मालूम होनी ज़रूरी नहीं, जिस तरह मक़नातीस और लोहे और कहरबा (एक किस्म का गोंद जो रगड़ने पर लकड़ी को अपनी तरफ़ खींचता है) और तिनके के आपसी संबन्ध की हक़ीक़त किसी को मालूम नहीं, मगर वह एक ऐसी हक़ीक़त है जो देखने और अनुभव में आती है, उसका कोई इनकार नहीं कर सकता। बैतुल्लाह और दुनिया के निज़ाम (व्यवस्था) के आपसी ताल्लुक़ की हक़ीक़त का समझना भी इनसान के क़ब्ज़े में नहीं, वह कायनात के पैदा करने वाले के बतलाने ही से मालूम हो सकती है। बैतुल्लाह का पूरे आ़लम के बाक़ी रहने के लिये सबब होना तो एक रूहानी चीज़ है, ज़ाहिरी नज़रें इसको नहीं पा सकतीं, लेकिन अ़रब और मक्का वालों के लिये इसका अमन व सलामती का ज़रिया होना लम्बे तजुर्बात और आँखों देखे वाक़िआ़त से साबित है।

बैतुल्लाह का वजूद विश्व-शांति का सबब है

आ़म दुनिया में अमन स्थापित करने की सूरत हुकूमतों के क़ानून और उनकी पकड़ होती

है। उसकी वजह से डाकू, चोर और क़त्ल व ग़ारतगरी करने वाले की जुर्रत नहीं होती, लेकिन अ़रब के जाहिली (इस्लाम ज़ाहिर होने से पहले दौर) में न कोई बाक़ायदा हुकूमत क़ायम थी और न आ़म अमन के लिये कोई सार्वजनिक क़ानून था। सियासी निज़ाम सिर्फ़ क़बाईली बुनियादों पर क़ायम था, एक क़बीला दूसरे क़बीले की जान व माल इ़ज़्ज़त व आबरू सब ही चीज़ों पर जब चाहे हमला कर सकता था, इसलिये किसी क़बीले के लिये किसी वक़्त अमन व इत्मीनान का मौक़ा न था। अल्लाह तआ़ला ने अपनी कामिल क़ुदरत से मक्का मुकर्रमा में बैतुल्लाह को हुकूमत के क़ायम-मक़ाम अमन का सबब बना दिया। जिस तरह हुकूमत के क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) करने की जुर्रत कोई समझदार इनसान नहीं कर सकता, इसी तरह बैतुल्लाह शरीफ़ की इ़ज़्ज़त व सम्मान हक़ तआ़ला ने जाहिलीयत के ज़माने में भी आ़म लोगों के दिलों में इस तरह जमा दिया था कि इसके एहतिराम (इ़ज़्ज़त व सम्मान) के लिये अपनी सारी भावनाओं और इच्छाओं को पीछे डाल देते थे।

ज़माना-ए-जाहिलीयत (इस्लाम से पहले ज़माने) के अ़रब वाले जो अपनी लड़ाई-भिड़ाई और क़बाईली तास्सुब में पूरी दुनिया में मशहूर थे, अल्लाह तआ़ला ने बैतुल्लाह और उससे जुड़ी चीज़ों की इतनी इ़ज़्ज़त व सम्मान उनके दिलों में जमा दी थी कि उनका कैसा भी जानी दुश्मन या सख़्त से सख़्त मुजरिम हो अगर वह हरम शरीफ़ में दाख़िल हो जाये तो हद से ज़्यादा ग़म व गुस्से के बावजूद उसको कुछ न कहते। बाप का क़ातिल हरम में बेटे को मिलता तो बेटा नीची नज़रें करके गुज़र जाता था।

इसी तरह जो शख़्स हज व उमरा के लिये निकला हो या जानवर हरम शरीफ़ में क़ुरबानी के लिये लाया गया हो उसका भी इतना ही एहतिराम अ़रब में आ़म था कि कोई बुरे से बुरा शख़्स भी उसको कोई तकलीफ़ न पहुँचाता था, और अगर वह जानी दुश्मन भी है तो ऐसी हालत में जबकि उसने हज व उमरे की कोई निशानी एहराम या पट्टा बाँधा हुआ हो, उसको बिल्कुल भी कुछ न कहते थे।

सन् 6 हिजरी में यानी जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा-ए-किराम की एक ख़ास जमाअ़त के साथ उमरे का एहराम बाँधकर बैतुल्लाह के इरादे से रवाना हुए और हरम की सीमाओं के क़रीब हुदैबिया के मक़ाम पर पड़ाव डालकर हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु को चन्द साथियों के साथ मक्का भेजा कि मक्का के सरदारों से कह दें कि मुसलमान इस वक़्त किसी जंग की नीयत से नहीं बल्कि उमरा अदा करने के लिये आये हैं, इसलिये उनकी राह में कोई रुकावट न होनी चाहिये।

क़ुरैश के सरदारों ने बहुत बहस-मुबाहसे और आपस की लम्बी वार्ता के बाद अपना एक नुमाईन्दा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में भेजा। हुज़ूरे पाक ने उसको देखा तो फ़रमाया कि यह शख़्स बैतुल्लाह से संबन्धित चीज़ों का ख़ास लिहाज़ रखने वाला है इसलिये अपने क़ुरबानी के जानवर जिन पर क़ुरबानी की निशानी लगा रखी है इसके सामने कर दो। उसने जब ये क़ुरबानी के जानवर देखे तो इक़रार किया कि बेशक उन लोगों को बैतुल्लाह

से हरगिज़ नहीं रोकना चाहिये।

ख़ुलासा यह है कि सम्मानित हरम का एहतिराम ज़माना-ए-जाहिलीयत में भी अल्लाह तआ़ला ने उनके दिलों में ऐसा रख दिया था कि उसकी वजह से अमन व अमान क़ायम रहता था। इस एहतिराम के नतीजे में सिर्फ़ हरम शरीफ़ के अन्दर आने जाने वाले और वे लोग सुरक्षित हो जाते थे जो हज व उमरा के लिये निकले हैं, और हज की कोई निशानी उनपर मौजूद है। बाहरी दुनिया के लोगों को इससे कोई नफ़ा अमन व इत्मीनान का हासिल न होता था लेकिन अ़रब में जिस तरह बैतुल्लाह के मकान और उसके आस-पास के सम्मानित हरम का एहतिराम आ़म था इसी तरह हज के महीनों का भी ख़ास एहतिराम (सम्मान) था कि इन महीनों को 'अश्हुर-ए-हुरुम' (इज़्ज़त व सम्मान वाले महीने) कहते थे। इनके साथ **रजब** (इस्लामी कैलेंडर के सातवें महीने) को भी कुछ लोगों ने शामिल कर लिया था, इन महीनों में हरम से बाहर भी क़त्ल व क़िताल को सारा अ़रब हराम समझता और परहेज़ करता था।

इसी लिये क़ुरआने करीम ने 'क़ियामल् लिन्नासि' होने में काबे के साथ तीन और चीज़ों को शामिल फ़रमाया है- अव्वल 'अश्शहरल् हरा-म' यानी इज़्ज़त व सम्मान का महीना। यहाँ चूँकि लफ़्ज़ "शह्र" मुफ़रद (यानी एक महीने के लिये) लाया गया है इसलिये आ़म मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया है कि इस जगह "शह्रे हराम" से मुराद ज़िलहिज्जा का महीना है, जिसमें हज के अरकान व आमाल अदा किये जाते हैं। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि लफ़्ज़ अगरचे मुफ़रद (यानी एक वचन वाला) है मगर इससे मुराद जिन्स है, इसलिये सब ही अश्हुरे हुरुम (इज़्ज़त के महीने) इसमें दाख़िल हैं।

दूसरी चीज़ "हद्यु" है। "हद्यु" उस जानवर को कहा जाता है जिसकी क़ुरबानी हरम शरीफ़ में की जाये। ऐसे जानवर जिस शख़्स के साथ हों अ़रब वालों का मामूल था कि उसको कुछ न कहते थे, वह अमन व इत्मीनान के साथ सफ़र करता और अपना मक़सद पूरा कर सकता था। इसलिये हद्यु भी अमन व शांति के क़ायम करने का एक सबब हुई।

तीसरी चीज़ "क़लाईद" हैं। क़लाईद क़लादा की जमा (बहुवचन) है। गले के हार को क़लाईद कहा जाता है। अ़रब के जाहिली ज़माने की रस्म यह थी कि जो शख़्स हज के लिये निकलता तो अपने गले में एक हार बतौर पहचान के डाल लेता था, ताकि उसको देखकर लोग समझ लें कि यह हज के लिये जा रहा है, कोई तकलीफ़ न पहुँचायें। इसी तरह क़ुरबानी के जानवरों के गले में भी इस तरह के हार डाले जाते थे उनको भी क़लाईद कहते हैं। इसलिये क़लाईद भी अमन व सुकून के क़ायम करने का एक ज़रिया बन गये।

और अगर ग़ौर किया जाये तो ये तीनों चीज़ें- शह्रे हराम, हद्यु और क़लाईद सबके सब बैतुल्लाह के मुताल्लिक़ात (संबन्धित चीज़ों) में से हैं। इनका एहतिराम भी बैतुल्लाह के एहतिराम का एक हिस्सा है। ख़ुलासा यह है कि बैतुल्लाह और उससे संबन्धित चीज़ों को अल्लाह तआ़ला ने पूरे इनसानी जगत के लिये उमूमन और अ़रब और मक्का वालों के लिये ख़ास तौर पर उनके तमाम दीनी व दुनियावी मामलों के लिये जमाव और मज़बूती क़ायम करने वाला बना दिया है।

قِيٰمًا لِّلنَّاسِ.

"क़ियामल् लिन्नासि" (लोगों के लिये क़ायम रहने का सबब) की तफ़सीर में कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया है कि इससे मुराद यह है कि बैतुल्लाह और सम्मानित हरम सब के लिये अमन की जगह बनाया गया है। कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इससे मुराद मक्का वालों के लिये रिज़्क़ की फ़रावानी है, कि बावजूद इसके कि उस ज़मीन में कोई चीज़ पैदा नहीं होती मगर अल्लाह तआ़ला दुनिया भर की चीज़ें वहाँ पहुँचाते रहते हैं।

कुछ ने कहा कि मक्का वाले जो कि बैतुल्लाह के ख़ादिम और मुहाफ़िज़ कहलाते थे उनको लोग अल्लाह वाले समझकर हमेशा उनके साथ ताज़ीम (सम्मान) का मामला करते थे, 'क़ियामल् लिन्नासि' से उनका यह ख़ास सम्मान मुराद है।

इमाम अ़ब्दुल्लाह राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इन सब अक़वाल में कोई टकराव और भिन्नता नहीं, लफ़्ज़ 'क़ियामल् लिन्नासि' के मफ़्हूम में ये सब चीज़ें दाख़िल हैं, कि अल्लाह तआ़ला ने बैतुल्लाह को सब लोगों की बक़ा व क़ियाम और ज़िन्दगी व आख़िरत की बेहतरी व कामयाबी का ज़रिया बनाया है, और अ़रब व मक्का वालों को विशेष रूप से उसकी ज़ाहिरी व रूहानी बरकतों से नवाज़ा है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

ذٰلِكَ لِتَعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ.

यानी हमने बैतुल्लाह को और उससे जुड़ी हुई चीज़ों को लोगों के लिये अमन व अमान और क़ायम व बाक़ी रहने का ज़रिया बना दिया है, जिसको अ़रब वाले ख़ास तौर पर अपनी खुली आँखों देखते रहते हैं। यह इसलिये कहा गया कि सब लोग यह जान लें कि अल्लाह तआ़ला ज़मीन व आसमान की हर चीज़ को पूरा-पूरा जानते हैं और वही उसका इन्तिज़ाम कर सकते हैं।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया गयाः

اِعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ.

यानी समझ लो कि अल्लाह तआ़ला सख़्त अ़ज़ाब वाले हैं और यह कि अल्लाह तआ़ला बहुत मग़फ़िरत करने वाले रहम फ़रमाने वाले हैं।

इसमें बतला दिया कि जो अहकाम हलाल व हराम के दिये गये हैं वो पूरी तरह हिक्मत व मस्लेहत के मुताबिक़ हैं, उनके पालन ही में तुम्हारे लिये ख़ैर (भलाई) है, उनके ख़िलाफ़ करने में सख़्त वबाल व अ़ज़ाब है। साथ ही यह भी बतला दिया कि इनसानी भूल और ग़फ़लत से कोई गुनाह हो जाये तो अल्लाह तआ़ला फ़ौरन अ़ज़ाब नहीं देते, बल्कि तौबा करने वालों और शर्मिन्दा होने वालों के लिये मग़फ़िरत का दरवाज़ा खुला हुआ है।

तीसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

مَا عَلَى الرَّسُوْلِ اِلَّا الْبَلٰغُ. وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ وَمَا تَكْتُمُوْنَ.

यानी "हमारे रसूल के ज़िम्मे तो इतना ही काम है कि हमारे अहकाम मख़्लूक़ को पहुँचा दें,

फिर वे मानें न मानें, इसका नफ़ा व नुक़सान उन्हीं को पहुँचता है। उनकी नाफ़रमानी से हमारे रसूल का कुछ नुक़सान नहीं। और यह भी समझ लो कि अल्लाह तआ़ला को कोई फ़रेब नहीं दिया जा सकता, वह तुम्हारे ज़ाहिर व बातिन और खुले और छुपे हर काम से वाक़िफ़ हैं।

चौथी आयत में इरशाद फ़रमायाः

قُلْ لَّا يَسْتَوِى الْخَبِيْثُ وَالطَّيِّبُ.

अ़रबी भाषा में **तय्यिब** और **ख़बीस** दो एक दूसरे के मुक़ाबले के लफ़्ज़ हैं। तय्यिब हर चीज़ के उम्दा और बेहतरीन को और ख़बीस हर चीज़ के रद्दी और ख़राब को कहा जाता है। इस आयत में अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक ख़बीस से मुराद हराम या नापाक है, और तय्यिब से मुराद हलाल और पाक। आयत के मायने यह हो गये कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक बल्कि हर सलीम अ़क्ल वाले के नज़दीक पाक व नापाक या हलाल व हराम बराबर नहीं हो सकते।

इस जगह लफ़्ज़ ख़बीस और तय्यिब अपने आ़म होने के एतिबार से हराम व हलाल माल व दौलत को भी शामिल है और अच्छे बुरे इनसानों को भी, और भले बुरे आमाल व अख़्लाक़ को भी। आयत का मतलब स्पष्ट है कि किसी सही व सलीम अ़क्ल के नज़दीक नेक व बद और भला बुरा बराबर नहीं होता, इसी फ़ितरी क़ानून के मुताबिक़ अल्लाह तआ़ला के नज़दीक हलाल व हराम या पाक व नापाक चीज़ें बराबर नहीं। इसी तरह अच्छे और बुरे आमाल व अख़्लाक़ बराबर नहीं, इसी तरह नेक व बद इनसान बराबर नहीं।

आगे इरशाद फ़रमायाः

وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيْثِ.

यानी अगरचे देखने वालों को कई बार ख़राब और ख़बीस चीज़ों की अधिकता मरऊब कर देती है, और अपने आस-पास ख़बीस व ख़राब चीज़ों के फैल जाने और ग़ालिब आ जाने के सबब उन्हीं को अच्छा समझने लगते हैं, मगर यह इनसानी इल्म व शऊर की बीमारी और एहसास का क़ुसूर होता है।

आयत के उतरने का मौक़ा व सबब

आयत के शाने नुज़ूल (उतरने के मौक़े और सबब) के मुताल्लिक़ कुछ रिवायतों में है कि जब इस्लाम में शराब को हराम और उसकी ख़रीद व फ़रोख़्त को भी वर्जित क़रार दे दिया गया तो एक शख़्स ने जिसका कारोबार शराब बेचने का था, और इसकी कमाई से उसने कुछ माल जमा कर रखा था, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया कि या रसूलल्लाह! यह माल जो शराब की तिजारत से मेरे पास जमा हुआ है अगर मैं इसको किसी नेक काम में ख़र्च करूँ तो क्या वह मेरे लिये मुफ़ीद होगा? हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर तुम इसको हज या जिहाद वग़ैरह में ख़र्च करोगे तो वह अल्लाह के नज़दीक मच्छर के एक पर के बराबर भी क़ीमत न रखेगा, अल्लाह तआ़ला पाक और हलाल चीज़ के सिवा किसी चीज़ को क़ुबूल नहीं फ़रमाते।

हराम माल की यह बेक़द्री तो आख़िरत के एतिबार से हुई और अगर गहरी नज़र से देखा जाये और सब कामों के आख़िरी अन्जाम को सामने रखा जाये तो मालूम होगा कि दुनिया के कारोबार में भी हलाल व हराम माल बराबर नहीं होते। हलाल से जितने फ़ायदे, अच्छे परिणाम और सही मायनों में आराम व राहत नसीब होती है वह कभी हराम से नहीं होती।

तफ़सीर दुर्रे मन्सूर में इब्ने अबी हातिम के हवाले से नक़ल किया है कि ताबिईन (सहाबा किराम की ज़ियारत करने वालों) के ज़माने के ख़लीफ़ा-ए-राशिद हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने जब पूर्व के शासकों के ज़माने के लगाये हुए नाजायज़ टैक्स बन्द किये, और जिन लोगों से नाजायज़ तौर पर माल लिये गये थे वो वापस किये और सरकारी बैतुल-माल ख़ाली हो गया और आमदनी बहुत सीमित हो गयी तो एक राज्य के गवर्नर ने उनकी ख़िदमत में ख़त लिखा कि बैतुल-माल की आमदनी बहुत घट गयी है, फ़िक्र है कि हुकूमत के काम-धंधे किस तरह चलेंगे। हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल-अ़ज़ीज़ रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने जवाब में यही आयत तहरीर फ़रमा दी:

لَا يَسْتَوِى الْخَبِيْثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيْثِ.

और लिखा कि तुमसे पहले लोगों ने ज़ुल्म व ज़्यादती के ज़रिये जितना ख़ज़ाना भरा था तुम उसके मुक़ाबले में अ़दल व इन्साफ़ क़ायम करके अपने ख़ज़ाने को कम कर लो और कोई परवाह न करो, हमारी हुकूमत के काम इसी कम मात्रा से पूरे होंगे।

यह आयत अगरचे एक ख़ास वाकिए के बारे में नाज़िल हुई है कि आंकड़ों की कमी ज़्यादती कोई चीज़ नहीं, अधिकता व क़िल्लत से किसी चीज़ की अच्छाई या बुराई को नहीं जाँचा जा सकता, इनसानों के सर पर हाथ गिन करके 51 हाथों को 49 के मुक़ाबले में हक़ व सच्चाई का मेयार नहीं कहा जा सकता।

बल्कि अगर दुनिया के हर तब्क़े के हालात पर ज़रा भी नज़र डाली जाये तो सारे आ़लम में भलाई की मिक़्दार (मात्रा) और तायदाद कम और बुराई की तायदाद में अधिकता नज़र आयेगी। ईमान के मुक़ाबले में कुफ़्र, नेकी व पाकीज़गी और ईमानदारी व सच्चाई के मुक़ाबले में गुनाह व बदकारी, अ़दल व इन्साफ़ के मुक़ाबले में ज़ुल्म व सितम, इल्म के मुक़ाबले में जहालत, अ़क़्ल के मुक़ाबले में बेअ़क़्ली की अधिकता दिखाई देगी, जिससे इसका यक़ीन लाज़िमी हो जाता है कि किसी जमाअ़त की अ़ददी अधिकता उसके अच्छे या हक़ पर होने की क़तई दलील नहीं हो सकती, बल्कि किसी चीज़ की अच्छाई और बेहतरी उस चीज़ और उस जमाअ़त के ज़ाती हालात व कैफ़ियात पर दायर होती है, हालात व कैफ़ियात अच्छी हैं तो वह अच्छी और बुरी हैं तो बुरी है। क़ुरआने करीम ने इसी हक़ीक़त को 'व लौ अअ़्ज-ब-क कस्रतुल-ख़बीसि' के अलफ़ाज़ में स्पष्ट फ़रमा दिया है।

हाँ अ़दद (संख्या व मात्रा) की अधिकता को इस्लाम ने भी कुछ मौक़ों में निर्णायक क़रार दिया है। वह उस जगह जहाँ दलील की क़ुव्वत और ज़ाती ख़ूबियों की तुलना का फ़ैसला करने

वाला कोई ताक़त व इख़्तियार का मालिक हाकिम न हो, ऐसे मौक़ों पर अवाम का झगड़ा चुकाने के लिये अददी कसरत (बहुसंख्या) को तरजीह दे दी जाती है। जैसे इमाम (मुसलमानों के अमीर व हाकिम) को मुक़र्रर करने का मसला है, वहाँ कोई इमाम व अमीर फ़ैसला करने वाला मौजूद नहीं, इसलिये कई बार झगड़ा ख़त्म करने के लिये बहुमत को तरजीह दे दी गयी। यह हरगिज़ नहीं कि जिस चीज़ को ज़्यादा तायदाद (संख्या) के लोगों ने इख़्तियार कर लिया वही चीज़ हलाल, जायज़ और हक़ है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया:

فَاتَّقُوا اللّٰهَ يٰٓاُولِي الْاَلْبَابِ.

यानी ऐ अक़्ल वालो! अल्लाह से डरो। जिसमें इशारा फ़रमा दिया कि किसी चीज़ की अददी (गिनती और मात्रा) की अधिकता का पसन्दीदा होना या कसरत को क़िल्लत के मुक़ाबले में हक़ व सही का मेयार क़रार देना अक़्लमन्दों का काम नहीं। इसी लिये अक़्लमन्दों को ख़िताब करके उनको इस ग़लत रवैये से रोकने के लिये 'फ़त्तक़ुल्ला-ह' (यानी अल्लाह से डरने) का हुक्म दिया गया।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَسْـَٔلُوْا عَنْ اَشْيَآءَ اِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ ۚ وَاِنْ تَسْـَٔلُوْا عَنْهَا حِيْنَ يُنَزَّلُ الْقُرْاٰنُ تُبْدَ لَكُمْ ۚ عَفَا اللّٰهُ عَنْهَا ۚ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ۝ قَدْ سَاَلَهَا قَوْمٌ مِّنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ اَصْبَحُوْا بِهَا كٰفِرِيْنَ ۝ مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنْۢ بَحِيْرَةٍ وَّلَا سَآئِبَةٍ وَّلَا وَصِيْلَةٍ وَّلَا حَامٍ ۙ وَّلٰكِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يَفْتَرُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ ۚ وَاَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُوْنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू ला तस्अलू अ़न् अश्या-अ इन् तुब्-द लकुम् तसुअ्कुम् व इन् तस्अलू अ़न्हा ही-न युनज़्ज़लुल्-क़ुरआनु तुब्-द लकुम्, अ़फ़ल्लाहु अ़न्हा, वल्लाहु ग़फ़ूरुन् हलीम (101) क़द् स-अ-लहा क़ौमुम् मिन् क़ब्लिकुम् सुम्-म अस्बहू बिहा काफ़िरीन (102) मा ज-अ़लल्लाहु मिम्-बही-रतिंव्-व ला साइ-बतिंव्-व ला वसीलतिंव्-व ला हामिंव्-व	ऐ ईमान वालो! मत पूछो ऐसी बातें कि अगर तुम पर खोली जायें तो तुमको बुरी लगें, और अगर पूछोगे ये बातें ऐसे वक़्त में कि क़ुरआन नाज़िल हो रहा है तो तुम पर ज़ाहिर कर दी जायेंगी, अल्लाह ने उनसे दरगुज़र की है और अल्लाह बख़्शने वाला बरदाश्त करने वाला है। (101) ऐसी बातें पूछ चुकी है एक जमाअ़त तुमसे पहले, फिर हो गये उन बातों से इनकार करने वाले। (102) नहीं मुक़र्रर किया अल्लाह ने बहीरा और न सायबा

लाकिन्नल्लज़ी-न क-फ़रू यफ़्तरू-न अ़लल्लाहिल्-कज़ि-ब, व अक्सरुहुम् ला यअ़्किलून (103)	और न वसीला और न हामी, व लेकिन काफ़िर बाँधते हैं अल्लाह पर बोहतान, और उनमें अक्सरों को अ़क्ल नहीं। (103)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! ऐसी (फ़ुज़ूल) बातें मत पूछो (जिनमें यह संदेह व गुमान हो कि) अगर तुमसे ज़ाहिर कर दी जाएँ तो तुम्हारी नागवारी का सबब हो (यानी यह शुब्हा हो कि जवाब तुम्हारी मन्शा के ख़िलाफ़ आया तो तुम्हें बुरा लगेगा) और (जिनमें यह शुब्हा व गुमान हो कि) अगर तुम (वही और) क़ुरआन के नाज़िल होने के ज़माने में (कारामद बातें) पूछो तो तुमसे ज़ाहिर कर दी जाएँ (यानी सवाल करने में तो यह दूसरा शुब्हा व गुमान हो कि जवाब मिल जाये और जवाब मिलने में वह पहला शुब्हा हो कि बुरा लगे, और ये दोनों गुमान व शुब्हे जो मजमूई तौर पर सवाल करने से रोकने की वजह हैं, वास्तविक हैं, पस ऐसा सवाल मना है। ख़ैर) गुज़रे हुए सवालात (जो इस वक़्त तक कर चुके हो वो तो) अल्लाह ने माफ़ कर दिये (मगर आईन्दा मत करना) और अल्लाह तआ़ला बड़ी मग़फ़िरत वाले हैं (इसलिये पहले के गुज़रे हुए सवालात माफ़ कर दिये और) बड़े बरदाश्त करने वाले हैं (इसलिये अगर आईन्दा हुक्म के ख़िलाफ़ करने पर दुनिया में सज़ा न दें तो धोखे में मत पड़ जाना कि आगे भी कोई अ़ज़ाब और सज़ा न होगी)। ऐसी बातें तुमसे पहले (ज़माने में) अन्य (उम्मतों के) लोगों ने भी (अपने पैग़म्बरों से) पूछी थीं, फिर (उनको जवाब मिला तो) उन बातों का हक़ पूरा न किया (यानी उन जवाबों में जो अहकाम से संबन्धित थे उनके मुवाफ़िक़ अ़मल न किया, और जो वाक़िआ़त से संबन्धित थे उनसे मुतास्सिर न हुए, पस कहीं तुमको भी ऐसी ही नौबत न पेश आये, इसलिये बेहतरी इसी में है कि ऐसे सवालात छोड़ दो) अल्लाह तआ़ला ने न बहीरा को मशरूअ़ "यानी जायज़ और मुक़र्रर" किया है और न सायबा को और न वसीला को और न हामी को, लेकिन जो लोग काफ़िर हैं वे (इन रस्मों के बारे में) अल्लाह तआ़ला पर झूठ लगाते हैं (कि ख़ुदा तआ़ला इन आमाल से ख़ुश हैं), और उनमें के अक्सर (काफ़िर) (दीन की) अ़क्ल नहीं रखते (और उससे काम नहीं लेते, बल्कि केवल अपने बड़ों की देखा-देखी ऐसी जहालतें करते हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बेज़रूरत सवाल करने की मनाही

इन आयतों में इस बात पर तंबीह की गयी है कि कुछ लोगों को अल्लाह के अहकाम में बिना ज़रूरत खोद-कुरेद करने और बाल की खाल निकालने का शौक़ होता है, और जो अहकाम नहीं दिये गये उनके बारे में बग़ैर किसी तक़ाज़े और ज़रूरत के सवालात किया करते हैं। इस

आयत में उनको यह हिदायत दी गयी कि वे ऐसे सवालात न करें जिनके परिणाम में उन पर कोई मशक़्क़त पड़ जाये या उनको ख़ुफ़िया राज़ों के इज़हार से रुस्वाई हो।

शाने नुज़ूल

इन आयतों का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) मुस्लिम शरीफ़ की रिवायत के मुताबिक़ यह है कि जब हज के फ़र्ज़ होने का हुक्म नाज़िल हुआ तो अक़रा बिन हाबिस रज़ियल्लाहु अन्हु ने सवाल किया कि क्या हर साल हमारे ज़िम्मे हज फ़र्ज़ है? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके सवाल का जवाब न दिया, उन्होंने फिर दोबारा सवाल किया। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फिर भी ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई। उन्होंने तीसरी मर्तबा फिर सवाल किया तो उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नाराज़गी के साथ तंबीह फ़रमाई कि अगर मैं तुम्हारे जवाब में यह कह देता कि हाँ हर साल हज फ़र्ज़ है तो ऐसा ही हो जाता, और फिर तुम उसको पूरा न कर सकते। इसके बाद इरशाद फ़रमाया कि जिन चीज़ों के बारे में मैं तुम्हें कोई हुक्म न दूँ उनको इसी तरह रहने दो, उनमें खोद-कुरेद करके सवालात न करो। तुमसे पहले कुछ उम्मतें इसी ज़्यादा सवालात करने के ज़रिये हलाक हो चुकी हैं, कि जो चीज़ें अल्लाह और उसके रसूल ने फ़र्ज़ नहीं की थीं सवाल कर-करके उनको फ़र्ज़ करा लिया, और फिर उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) में मुब्तला हो गये। तुम्हारा तरीक़ा और मामूल यह होना चाहिये कि जिस काम का मैं हुक्म दूँ उसको अपनी हिम्मत भर पूरा करो और जिस चीज़ से मना कर दूँ उसको छोड़ दो (मुराद यह है कि जिन चीज़ों के बारे में कोई हुक्म न दिया जाये उनके बारे में खोद-कुरेद न करो)।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद नुबुव्वत और वही का सिलसिला ख़त्म है

इस आयत में बयान हो रहे हुक्म के तहत यह भी इरशाद फ़रमाया गया कि:

وَاِنْ تَسْئَلُوْا عَنْهَا حِيْنَ يُنَزَّلُ الْقُرْاٰنُ تُبْدَلَكُمْ

यानी क़ुरआन उतरने के ज़माने में अगर तुम ऐसे सवालात करोगे तो वही (अल्लाह की तरफ़ से आने वाले पैग़ाम व अहकामात) से उनका जवाब आ जायेगा। इसमें क़ुरआन नाज़िल होने के ज़माने के साथ शर्त लगाकर इसकी तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि क़ुरआन उतरने के अमल के पूरा होने के बाद नुबुव्वत और वही का सिलसिला बन्द कर दिया जायेगा।

ख़त्म-ए-नुबुव्वत और वही के सिलसिले के बन्द हो जाने के बाद ऐसे सवालात का अगरचे यह असर न होगा कि नये अहकाम आ जायें या जो चीज़ें फ़र्ज़ नहीं हैं वो फ़र्ज़ हो जायें, या वही के ज़रिये किसी का ख़ुफ़िया राज़ ज़ाहिर हो जाये, लेकिन ज़रूरत के सबब सवालात तैयार कर-करके उनकी तहक़ीक़ात और खोजबीन में पड़ना या बेज़रूरत चीज़ों के मुताल्लिक़ सवालात

करना नुबुव्वत के सिलसिले के ख़त्म होने के बाद भी बुरा, नापसन्दीदा और मना ही रहेगा, क्योंकि इसमें अपना और दूसरों का वक़्त बरबाद करना है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

مِنْ حُسْنِ اِسْلَامِ الْمَرْءِ تَرْكُهٗ مَالَا يَعْنِيْهِ.

यानी मुसलमान होने की एक ख़ूबी यह है कि आदमी फ़ुज़ूल बातों को छोड़ देता है।

इससे मालूम हुआ कि बहुत से मुसलमान जो बिल्कुल फ़ुज़ूल चीज़ों की तहक़ीक़ (खोद-कुरेद) में लगे रहते हैं कि मूसा अ़लैहिस्सलाम की वालिदा (माँ) का क्या नाम था, और नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती की लम्बाई-चौड़ाई कितनी थी, जिनका कोई असर इनसान के अ़मल पर नहीं, ऐसे सवालात करना बुरा और नापसन्दीदा है, ख़ास तौर पर जबकि यह भी मालूम हो कि ऐसे सवालात करने वाले हज़रात अक्सर ज़रूरी और दीन के अहम मसाईल से बेख़बर होते हैं। फ़ुज़ूल कामों में पड़ने का नतीजा यही होता है कि आदमी ज़रूरी कामों से मेहरूम हो जाता है। रहा यह मामला कि फ़ुक़हा (क़ुरआन व हदीस से मसाईल व अहकाम निकालकर उम्मत के सामने पेश करने वाले) हज़रात ने ख़ुद ही बहुत सी ज़ेहनी और फ़र्ज़ की हुई सूरतें मसाईल की निकाल कर और सवालात क़ायम करके उनके अहकाम बयान कर दिये हैं, सो यह बेज़रूरत चीज़ न थी, आने वाले वाक़िआ़त ने बतला दिया कि आने वाली नस्लों को उनकी ज़रूरत थी, इसलिये वो फ़ुज़ूल और बेमक़सद सवालात न थे। इस्लाम की तालीमात में यह भी एक तालीम है कि इल्म हो या अ़मल, कोई काम हो या कलाम जब तक उसमें कोई दीनी या दुनियावी फ़ायदा सामने न हो उसमें लगकर वक़्त बरबाद न करें।

बहीरा, सायबा वग़ैरह की तफ़सील

बहीरा, सायबा, वसीला, हामी, ये सब जाहिलीयत (इस्लाम आने से पहले) ज़माने की रस्मों और निशानात से संबन्धित हैं। मुफ़स्सिरीन (क़ुरआन के व्याख्यापकों) ने इनकी तफ़सीर में बहुत इख़्तिलाफ़ किया है, मुम्किन है इनमें से हर एक लफ़्ज़ का हुक्म मुख़्तलिफ़ सूरतों पर होता हो, हम सिर्फ़ सईद बिन मुसैयब रह. की तफ़सीर सही बुख़ारी से नक़ल करते हैं।

बहीराः जिस जानवर का दूध बुतों के नाम पर वक़्फ़ (समर्पित) कर देते थे, कोई अपने काम में न लाता था।

सायबाः जो जानवर बुतों के नाम पर हमारे ज़माने के साँड की तरह छोड़ दिया जाता था।

हामीः नर ऊँट जो एक ख़ास गिनती के बराबर जुफ़्ती (ऊँटनियों से संभोग) कर चुका हो, उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ देते थे।

वसीलाः जो ऊँटनी निरन्तर मादा बच्चा जने बीच में नर बच्चा पैदा न हो उसे भी बुतों के नाम पर छोड़ देते थे।

इसके अ़लावा यह कि ये चीज़ें शिर्क की निशानियों में से थीं-

जिस जानवर के गोश्त या दूध या सवारी वग़ैरह से लाभान्वित होने को हक़ तआ़ला ने

जायज़ रखा उसके हलाल व हराम होने में अपनी तरफ़ से क़ैदें और शर्तें लगाना गोया अपने लिये शरीअ़त व क़ानून बनाने के पद को तजवीज़ करना था, और एक बड़ा ज़ुल्म यह था कि अपनी इन मुश्रिकाना रस्मों को हक़ तआ़ला की रज़ा और निकटता का ज़रिया तसव्वुर करते थे। इसका जवाब दिया गया कि अल्लाह तआ़ला ने हरगिज़ ये रस्में मुक़र्रर नहीं कीं, इनके बड़ों ने ख़ुदा पर यह बोहतान बाँधा, और अक्सर बेअ़क़्ल अ़वाम ने इसे क़ुबूल कर लिया। ग़र्ज़ कि यहाँ यह तंबीह की गयी कि जिस तरह फ़ुज़ूल व बेकार सवालात करके शरई अहकाम में तंगी और सख़्ती करना जुर्म है, इससे कहीं बढ़कर यह जुर्म है कि शरई हुक्म के बग़ैर महज़ अपनी राय और इच्छा से हलाल व हराम तजवीज़ कर लिये जायें। (फ़वाईदे उस्मानी)

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا إِلَىٰ مَا أَنزَلَ اللَّهُ وَإِلَى الرَّسُولِ قَالُوا حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا ۚ أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٠٤﴾ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا عَلَيْكُمْ أَنفُسَكُمْ ۖ لَا يَضُرُّكُم مَّن ضَلَّ إِذَا اهْتَدَيْتُمْ ۚ إِلَى اللَّهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُم بِمَا كُنتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٠٥﴾

व इज़ा क़ी-ल लहुम् तआ़लौ इला मा अन्ज़लल्लाहु व इलर्रसूलि क़ालू हस्बुना मा वजद्ना अ़लैहि आबा-अना, अ-व लौ का-न आबाउहुम् ला यअ़्लमू-न शैअंव्-व ला यह्तदून (104) या अय्युहल्लज़ी-न आमनू अ़लैकुम् अन्फ़ु-सकुम् ला यज़ुर्रुकुम् मन् ज़ल्-ल इज़ह्तदैतुम्, इलल्लाहि मर्जिअ़ुकुम् जमीअ़न् फ़युनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् तअ़्मलून (105)	और जब कहा जाता है उनको कि आओ उसकी तरफ़ जो कि अल्लाह ने नाज़िल किया और रसूल की तरफ़, तो कहते हैं हमको काफ़ी है वह जिस पर पाया हमने अपने बाप-दादाओं को, भला अगर उनके बाप-दादे न कुछ इल्म रखते हों और न राह जानते हों तो भी ऐसा ही करेंगे? (104) ऐ ईमान वालो! तुम पर लाज़िम है फ़िक्र अपनी जान का, तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ता जो कोई गुमराह हुआ जबकि तुम हुए राह पर, अल्लाह के पास लौटकर जाना है तुम सब को, फिर वह जतला देगा तुमको जो कुछ तुम करते थे। (105)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

ऊपर रस्मों के पुजारी काफ़िरों की एक जहालत का ज़िक्र था, और ऐसी-ऐसी जहालतें उनकी बहुत सारी थीं, जिनको सुनकर मोमिनों को रंज और अफ़सोस होता था, इसलिये आगे मोमिनों को इसके बारे में इरशाद है कि तुम क्यों इस ग़म में पड़े हो, तुमको अपनी इस्लाह (सुधार) का और दूसरे की इस्लाह में जहाँ तक हिम्मत व वुस्अ़त हो कोशिश करने का हुक्म है,

बाक़ी कोशिश पर फल और परिणाम सामने लाना तुम्हारे इख़्तियार से ख़ारिज है, इसलिये "कारे ख़ुद कुन कारे बेगाना मकुन" (अपना काम करते रहो और दूसरों के काम में मत पड़ो) पर अमल करो।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जब उनसे कहा जाता है कि अल्लाह तआ़ला ने जो अहकाम नाज़िल फ़रमाए हैं उनकी तरफ़ और रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की तरफ़ (जिन पर वो अहकाम नाज़िल हुए हैं) रुजू करो, (जो बात उससे हक़ साबित हो हक़ समझो और जो बातिल हो बातिल समझो) तो कहते हैं कि हमको (उन अहकाम और रसूल की ज़रूरत नहीं, हमको) वही (तरीक़ा) काफ़ी है जिस पर हमने अपने बड़ों को देखा है। (हक़ तआ़ला फ़रमाते हैं कि) क्या (वह तरीक़ा उनके लिये हर हाल में काफ़ी है) चाहे उनके बड़े (दीन की) न कुछ समझ रखते हों और न (किसी आसमानी किताब की) हिदायत रखते हों? ऐ ईमान वालो! अपनी (इस्लाह की) फ़िक्र करो, (असल काम तुम्हारे ज़िम्मे यह है, बाक़ी दूसरों की इस्लाह के मुताल्लिक़ यह है कि जब तुम अपनी तरफ़ से अपनी ताक़त व गुंजाईश के मुताबिक़ इस्लाह की कोशिश कर रहे हो मगर दूसरे पर असर नहीं होता तो तुम असर पैदा होने और परिणाम सामने आने की फ़िक्र में न पड़ो क्योंकि) जब तुम (दीन की) राह पर चल रहे हो (और दीन की ज़रूरी चीज़ों को अदा कर रहे हो इस तरह कि अपनी इस्लाह कर रहे हो और दूसरों की इस्लाह में भी कोशिश कर रहे हो) तो जो शख़्स (तुम्हारी सुधारक कोशिश के बावजूद भी) गुमराह रहे तो उस (के गुमराह रहने) से तुम्हारा कोई नुक़सान नहीं, (और जैसा कि इस्लाह वग़ैरह में हद से ज़्यादा फ़िक्र व ग़म से मना किया जाता है ऐसे ही हिदायत से नाउम्मीद होने की सूरत में गुस्से में आकर दुनिया ही में उन पर सज़ा नाज़िल होने की तमन्ना करना भी मना है, क्योंकि हक़ व बातिल का मुकम्मल फ़ैसला तो आख़िरत में होगा, चुनाँचे) अल्लाह ही के पास तुम सब को जाना है, फिर वह तुम सब को जतला देंगे जो-जो तुम सब किया करते थे (और जतलाकर हक़ पर सवाब और बातिल पर अ़ज़ाब का हुक्म नाफ़िज़ फ़रमा देंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों के उतरने का मौक़ा और सबब

जाहिलीयत (इस्लाम आने से पहले ज़माने) की रस्मों में एक अपने बाप-दादा की पैरवी (अनुसरण) भी थी, जिसने उनको हर बुराई में मुब्तला और हर भलाई से मेहरूम रखा था। तफ़सीर दुर्रे मन्सूर में इब्ने अबी हातिम के हवाले से नक़ल किया है कि उनमें से कोई ख़ुश नसीब अगर हक़ बात को मानकर मुसलमान हो जाता तो उसको यूँ शर्म दिलाई जाती थी कि तूने अपने बाप-दादों को बेवक़ूफ़ ठहराया, कि उनके तरीक़े को छोड़कर दूसरा तरीक़ा (दीन और रास्ता) इख़्तियार कर लिया, उनकी इस गुमराही दर गुमराही पर यह आयत नाज़िल हुईः

وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُوْلِ قَالُوْا حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَآءَنَا.

यानी जब उनको कहा जाता कि तुम अल्लाह तआ़ला की नाज़िल की हुई सच्चाईयों और अहकाम और रसूल की तरफ़ रुजू करो जो हर हैसियत से हिक्मत व मस्लेहत और तुम्हारे लिये बेहतरी व फ़लाह की गारंटी देने वाले हैं तो उनके पास इसके सिवा कोई जवाब नहीं होता कि हमको तो वही तरीक़ा काफ़ी है जिस पर हमने अपने बाप-दादा को देखा है।

यह वह शैतानी दलील पकड़ना है जिसने लाखों इनसानों को मामूली समझ-बूझ और इल्म व हुनर रखने के बावजूद गुमराह किया। क़ुरआने करीम ने इसके जवाब में इरशाद फ़रमायाः

اَوَلَوْ كَانَ اٰبَآؤُهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ شَيْئًا.

ग़ौर करने वालों के लिये क़ुरआन के इस एक जुमले ने किसी शख़्स या जमाअ़त की इक़्तिदा (पैरवी) करने का एक सही उसूल बयान करके अन्धों के लिये बीनाई का और जाहिल व ग़ाफ़िल के लिये हक़ीक़त को ज़ाहिर करने का मुकम्मल सामान उपलब्ध करा दिया है, वह यह कि यह बात तो माक़ूल है कि न जानने वाले जानने वालों की, नावाक़िफ़ लोग वाक़िफ़ लोगों की पैरवी करें, जाहिल आदमी आ़लिम की पैरवी करे, लेकिन यह कोई माक़ूल बात नहीं कि इल्म व अ़क़्ल और हिदायत के मेयार से हटकर अपने बाप-दादा या किसी भाई-बन्धु की पैरवी को अपना तरीक़ा-ए-कार बना लिया जाये, और बग़ैर यह जाने हुए कि यह मुक़्तदा (जिसकी पैरवी की जा रही है) ख़ुद कहाँ जा रहा है, और हमें कहाँ पहुँचायेगा, उसके पीछे लग लिया जाये।

इसी तरह कुछ लोग किसी की पैरवी और अनुसरण का मेयार लोगों की भीड़ को बना लेते हैं, जिस तरफ़ यह भीड़ देखी उसी तरफ़ चल पड़े। यह भी एक अनुचित हरकत है, क्योंकि अक्सरियत तो हमेशा दुनिया में बेवक़ूफ़ों या कम-अ़क़्लों की और अ़मल के लिहाज़ से बुरे आमाल वालों की रहती है, इसलिये लोगों की भीड़ हक़ व नाहक़ या भले-बुरे की तमीज़ का मेयार नहीं हो सकती।

ना-अहल को मुक़्तदा बनाना तबाही को दावत देना है

क़ुरआन-ए-करीम के इस जुमले ने सब को एक वाज़ेह हिक्मत का सबक़ दिया कि इनमें से कोई चीज़ मुक़्तदा व पेशवा बनाने के लिये हरगिज़ काफ़ी नहीं, बल्कि हर इनसान पर सबसे पहले तो यह लाज़िम है कि अपनी ज़िन्दगी का मक़सद और अपने सफ़र का रुख़ मुतैयन करे, फिर उस मक़सद को हासिल करने के लिये यह देखे कि कौन ऐसा इनसान है जो उस मक़सद का रास्ता जानने वाला भी हो और उस रास्ते पर चल भी रहा हो। जब कोई ऐसा इनसान मिल जाये तो बेशक उसके पीछे लग लेना उसको मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचा सकता है। यही हक़ीक़त है मुज्तहिद इमामों की तक़लीद (पैरवी) की, कि वे दीन को जानने वाले भी हैं और उस पर अ़मल करने वाले भी। इसलिये न जानने वाले उनकी पैरवी करके दीन के मक़सद यानी अल्लाह व रसूल के अहकाम की पैरवी को हासिल कर सकते हैं, और जो रास्ते से भटका हुआ हो,

मन्ज़िले मक्सूद को ख़ुद ही न जानता हो, या जान-बूझकर मन्ज़िल की विपरीत दिशा में चल रहा हो उसके पीछे चलना हर अ़क्लमन्द के नज़दीक अपनी कोशिश व अ़मल को ज़ाया करना, बल्कि अपनी तबाही को दावत देना है। इस इल्म व हिक्मत और रोशन-ख़्याली के ज़माने में भी अफ़सोस है कि लिखे-पढ़े और होश व अ़क्ल वाले लोग इस हक़ीक़त को नज़र-अन्दाज़ किये हुए हैं, और आजकी बरबादी और तबाही का सबसे बड़ा सबब ना-अहल (अयोग्य) और ग़लत मुक़्तदाओं और लीडरों के पीछे चलना है।

पैरवी करने का मेयार

क़ुरआने करीम के इस जुमले ने किसी की पैरवी करने का निहायत माक़ूल और स्पष्ट मेयार दो चीज़ों को बनाया है, इल्म और इह्तिदा। इल्म से मुराद मन्ज़िले मक्सूद और उस तक पहुँचने के तरीक़ों का जानना है और इह्तिदा से मुराद उस मक़सद की राह पर चलना, यानी सही इल्म पर सीधा अ़मल।

ख़ुलासा यह हुआ कि जिस शख़्स को मुक़्तदा बनाओ तो पहले यह देखो कि जिस मक़सद के लिये उसको मुक़्तदा बनाया है वह उस मक़सद और उसके तरीक़े से पूरी तरह वाक़िफ़ भी है या नहीं? फिर यह देखो कि वह उसकी राह पर चल भी रहा है? और उसका अ़मल अपने इल्म के मुताबिक़ है भी या नहीं?

ग़र्ज़ कि किसी को मुक़्तदा बनाने के लिये सही इल्म और सीधे अ़मल के मेयार से जाँचना ज़रूरी है, सिर्फ़ बाप-दादा होना या बहुत से लोगों का लीडर होना, या माल व दौलत वाला होना या हुकूमत व सल्तनत वाला होना, इनमें से कोई चीज़ भी ऐसी नहीं जिसको पैरवी का मेयार समझा जाये।

किसी की आलोचना करने का असरदार तरीक़ा

क़ुरआने करीम ने इस जगह बाप-दादा की पैरवी के आ़दी लोगों की ग़लती को वाज़ेह फ़रमाया और इसके साथ ही किसी दूसरे पर तन्क़ीद (आलोचना) और उसकी ग़लती ज़ाहिर करने का एक ख़ास असरदार तरीक़ा भी बतला दिया, जिससे सामने वाले के दिल को तकलीफ़ या उसको गुस्सा व नाराज़गी न हो। क्योंकि बाप-दादा के दीन की पैरवी करने वालों के जवाब में यूँ नहीं फ़रमाया कि तुम्हारे बाप-दादा जाहिल या गुमराह हैं, बल्कि एक सवालिया उनवान बनाकर इरशाद फ़रमाया कि क्या बाप-दादा की पैरवी उस हालत में भी कोई माक़ूल बात हो सकती है जबकि बाप-दादा न इल्म रखते हों न अ़मल।

मख़्लूक़ के सुधार की फ़िक्र करने वालों को एक तसल्ली

दूसरी आयत में मख़्लूक़ के सुधार की फ़िक्र में सब कुछ क़ुरबान करने वाले मुसलमानों को तसल्ली दी गयी है कि जब तुमने हक़ की तब्लीग़ व तालीम में अपनी हिम्मत भर कोशिश कर

ली और नसीहत व ख़ैरख़्वाही का हक़ अदा कर दिया तो फिर भी अगर कोई गुमराही पर जमा रहे तो तुम उसकी फ़िक्र में न पड़ो। उस हालत में दूसरों की गुमराही या ग़लत काम करने से तुम्हारा कोई नुक़सान न होगा। इरशाद फ़रमायाः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ لَا يَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ اِذَا اهْتَدَيْتُمْ.

यानी ऐ मुसलमानो! तुम अपनी फ़िक्र करो, जब तुम राह पर चल रहे हो तो जो शख़्स गुमराह रहे तो उससे तुम्हारा कोई नुक़सान नहीं।

इस आयत के ज़ाहिरी अलफ़ाज़ से चूँकि यह समझा जाता है कि हर इनसान को सिर्फ़ अपने अ़मल और अपनी इस्लाह (सुधार) की फ़िक्र काफ़ी है, दूसरे कुछ भी करते रहें उस पर ध्यान देने की ज़रूरत नहीं, और यह बात क़ुरआने करीम की बेशुमार स्पष्टताओं के ख़िलाफ़ है, जिन में नेक और अच्छे काम का हुक्म करने और बुरे कामों से रोकने को इस्लाम का अहम फ़रीज़ा और इस उम्मत की दूसरों से अलग ख़ुसूसियत क़रार दिया है, इसी लिये इस आयत के नाज़िल होने पर कुछ लोगों को शुब्हे पेश आये, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवालात किये गये, आपने वज़ाहत फ़रमाई कि यह आयत नेक और अच्छे कामों का हुक्म करने के विरुद्ध नहीं, अच्छे कामों का हुक्म करना और बतलाना छोड़ दोगे तो मुजरिमों के साथ तुम भी पकड़ लिये जाओगे। इसी लिये तफ़सीर **बहर-ए-मुहीत** में हज़रत सईद इब्ने ज़ुबैर रह. से आयत की यह तफ़सीर नक़ल की है कि तुम अपने शरई वाजिबात को अदा करते रहो जिनमें जिहाद और अच्छे कामों का हुक्म करना भी दाख़िल है। यह सब कुछ करने के बाद भी जो लोग गुमराह रहें तो तुम पर कोई नुक़सान नहीं। क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़ 'इज़्हतदैतुम' में ग़ौर करें तो यह तफ़सीर ख़ुद वाज़ेह हो जाती है। क्योंकि इसके मायने यह हैं कि जब तुम राह पर चल रहे हो तो दूसरों की गुमराही तुम्हारे लिये नुक़सान देने वाली नहीं, और ज़ाहिर है कि जो शख़्स नेक काम का हुक्म करने के फ़रीज़े को छोड़ दे वह राह पर नहीं चल रहा है।

तफ़सीर दुर्रे-मन्सूर में हरज़त अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का वाक़िआ़ नक़ल किया है कि उनके सामने किसी ने यह सवाल किया कि फ़ुलाँ-फ़ुलाँ हज़रात में आपस में सख़्त झगड़ा है, एक दूसरे को मुश्रिक कहते हैं, तो हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि क्या तुम्हारा यह ख़्याल है कि मैं तुम्हें कह दूँगा कि जाओ उन लोगों से जंग करो, हरगिज़ नहीं! जाओ उनको नर्मी के साथ समझाओ, क़ुबूल करें तो बेहतर और न करें तो उनकी फ़िक्र छोड़कर अपनी फ़िक्र में लग जाओ। फिर यही आयत आपने जवाब के सुबूत में तिलावत फ़रमाई।

गुनाहों की रोक-थाम के बारे में

हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का एक ख़ुतबा

आयत के ज़ाहिरी अलफ़ाज़ से ऊपरी नज़र में जो शुब्हा हो सकता था उसको देखते हुए हज़रत सिद्दीक़े अकबर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने एक ख़ुतबे में इरशाद फ़रमाया कि तुम लोग इस आयत को पढ़ते हो और इसको बेमौक़ा इस्तेमाल करते हो, कि अच्छे काम का हुक्म करने की

ज़रूरत नहीं, ख़ूब समझ लो कि मैंने ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि जो लोग कोई गुनाह होता हुआ देखें और (अपनी हिम्मत व ताक़त के मुताबिक़) उसको रोकने की कोशिश न करें तो क़रीब है कि अल्लाह तआ़ला मुजरिमों के साथ उन दूसरे लोगों को भी अ़ज़ाब में पकड़ ले।

यह रिवायत तिर्मिज़ी, इब्ने माजा में मौजूद है और अबू दाऊद के अलफ़ाज़ में इस तरह है कि जो लोग किसी ज़ालिम को ज़ुल्म करते हुए देखें और उसको ज़ुल्म से (अपनी ताक़त के मुताबिक़) न रोकें तो अल्लाह तआ़ला सब को अ़ज़ाब में पकड़ लेंगे।

मारूफ़ और मुन्कर के मायने

पीछे गुज़री तफ़सील से यह बात मालूम हो चुकी कि हर मुसलमान पर यह लाज़िम है कि वह **मुन्कर** यानी नाजायज़ कामों और बातों की रोक-थाम करे या कम से कम उनसे नफ़रत का इज़हार करे। अब यह मालूम कीजिए कि **मारूफ़** और **मुन्कर** किसको कहते हैं।

लफ़्ज़ **मारूफ़** मारिफ़ा से और **मुन्कर** इनकार से लिया गया है। मारिफ़ा कहते हैं किसी चीज़ को ग़ौर व फ़िक्र करके समझने या पहचानने को, इसके मुक़ाबले में इनकार कहते हैं न समझने या न पहचानने को। ये दोनों लफ़्ज़ एक-दूसरे के सामने और मुक़ाबले के समझे जाते हैं। क़ुरआने करीम में एक जगह इरशाद है:

يَعْرِفُوْنَ نِعْمَتَ اللّٰهِ ثُمَّ يُنْكِرُوْنَهَا.

यानी अल्लाह की कामिल क़ुदरत की निशानियाँ और नज़ारे देखकर उसकी नेमतों को पहचानते हैं, मगर फिर दुश्मनी व बैर के सबब इनकार करते हैं। गोया उन नेमतों को जानते नहीं।

इससे मालूम हुआ कि लुग़त के मायने के एतिबार से **मारूफ़** के मायने पहचानी हुई चीज़ के हैं, और **मुन्कर** के मायने न पहचानी हुई चीज़ के। इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने मुफ़रदातुल-क़ुरआन में इसी की मुनासबत से शरई परिभाषा में मारूफ़ व मुन्कर के यह मायने बयान फ़रमाये हैं कि मारूफ़ हर उस फ़ेल (काम) को कहा जाता है जिसका अच्छा होना अ़क्ल या शरीअ़त से पहचाना हुआ हो, और मुन्कर हर उस फ़ेल का नाम है जो अ़क्ल व शरीअ़त के हिसाब से ओपरा और न पहचाना हुआ हो, यानी बुरा समझा जाता हो। इसलिये 'अमर बिल्मारूफ़' के मायने अच्छे काम की तरफ़ बुलाने के और 'नही अ़निल-मुन्कर' के मायने बुरे काम से रोकने के हो गये।

क़ुरआन व हदीस में ग़ौर व फ़िक्र करने वालों के विभिन्न अक़वाल में कोई शरई बुराई नहीं होती

लेकिन इस जगह गुनाह व सवाब या फ़रमाँबरदारी व नाफ़रमानी के बजाय मारूफ़ व

मुन्कर का लफ़्ज़ इस्तेमाल करने में शायद इस तरफ़ इशारा हो कि वो बारीक, गहरे और इज्तिहादी मसाईल जिनमें क़ुरआन व सुन्नत के संक्षिप्त या ग़ैर-स्पष्ट होने की वजह से दो रायें हो सकती हैं, और इसी बिना पर उनमें उम्मत के फ़ुक़हा के अक़वाल अलग-अलग और भिन्न हैं, वो इस दायरे से ख़ारिज हैं। इज्तिहाद करने वाले इमाम जिनकी इज्तिहाद की सलाहियत व मर्तबा उम्मत के उलेमा में मानी हुई है, अगर किसी मसले में उनके दो अलग-अलग क़ौल हों तो उनमें से किसी को भी शरीअ़त के ख़िलाफ़ नहीं कहा जा सकता, बल्कि उस मसले के दोनों पक्ष मारूफ़ (अच्छाई) में दाख़िल हैं। ऐसे मसाईल में एक राय को वरीयता प्राप्त समझने वाले के लिये यह हक़ नहीं है कि दूसरे पर ऐसा इनकार (एतिराज़ व बुराई) करे जैसा गुनाह पर किया जाता है। यही वजह है कि सहाबा व ताबिईन में बहुत से वैचारिक मतभेद और एक-दूसरे के विपरीत अक़वाल (रायों) के बावजूद यह कहीं मन्क़ूल नहीं कि वे एक-दूसरे पर फ़ासिक़ या गुनाहगार होने का फ़तवा लगाते हों। बहस व खोजबीन और मुनाज़रे व मुकालमे सब कुछ होते थे, और हर एक अपनी राय के बेहतर व वरीयता प्राप्त होने की वजह बयान करता और दूसरे पर एतिराज़ करता था, लेकिन कोई किसी को इस इख़्तिलाफ़ (मतभेद) की वजह से गुनाहगार न समझता था।

ख़ुलासा यह है कि इज्तिहादी इख़्तिलाफ़ (वैचारिक मतभेद) के मौक़ों पर यह तो हर इल्म रखने वाले को इख़्तियार है कि जिस जानिब को बेहतर और वरीयता प्राप्त समझे उसे इख़्तियार करे, लेकिन दूसरे के फ़ेल को मुन्कर (बुरा और गुनाह) समझकर उस पर इनकार करने (यानी उसको ग़लत कहने) का किसी को हक़ नहीं है। इससे वाज़ेह हुआ कि ग़ौर व फ़िक्र वाले मसाईल में लड़ाई-झगड़े या आपसी नफ़रत फैलाने वाले लेख और मज़ामीन 'अमर बिलमारूफ़' या 'नही अ़निल-मुन्कर' में दाख़िल नहीं। इन मसाईल को जंग का मोर्चा बनाना सिर्फ़ नावाक़फ़ियत या जहालत ही की वजह से होता है।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ
الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ اَوْ اٰخَرٰنِ مِنْ غَيْرِكُمْ اِنْ اَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَاَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةُ
الْمَوْتِ ۭ تَحْبِسُوْنَهُمَا مِنْ بَعْدِ الصَّلٰوةِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ اِنِ ارْتَبْتُمْ لَا نَشْتَرِيْ بِهٖ ثَمَنًا وَّلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۙ وَلَا
نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللّٰهِ اِنَّآ اِذًا لَّمِنَ الْاٰثِمِيْنَ ۝ فَاِنْ عُثِرَ عَلٰٓى اَنَّهُمَا اسْتَحَقَّآ اِثْمًا فَاٰخَرٰنِ يَقُوْمٰنِ مَقَامَهُمَا
مِنَ الَّذِيْنَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيٰنِ فَيُقْسِمٰنِ بِاللّٰهِ لَشَهَادَتُنَآ اَحَقُّ مِنْ شَهَادَتِهِمَا وَمَا اعْتَدَيْنَآ ڮ اِنَّآ
اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَنْ يَّاْتُوْا بِالشَّهَادَةِ عَلٰي وَجْهِهَآ اَوْ يَخَافُوْٓا اَنْ تُرَدَّ اَيْمَانٌۢ بَعْدَ اَيْمَانِهِمْ ۭ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاسْمَعُوْا ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۝

या अय्युहल्लज़ी-न आमनू शहादतु बैनिकुम् इज़ा ह-ज़-र अ-ह-दकुमुल्-मौतु हीनल्-वसिय्यतिस्नानि ज़वा अद्लिम् मिन्कुम् औ आख़रानि मिन् ग़ैरिकुम् इन् अन्तुम् ज़रब्तुम् फ़िल्अर्ज़ि फ-असाबत्कुम् मुसीबतुल्-मौति, तह्बिसूनहुमा मिम्-बअ्दिस्-सलाति फ़युक़्सिमानि बिल्लाहि इनिर्तब्तुम् ला नश्तरी बिही स-मनंव्-व लौ का-न ज़ा क़ुर्बा व ला नक्तुमु शहा-दतल्लाहि इन्ना इज़ल्-लमिनल्-आसिमीन (106) फ़-इन् अुसि-र अ़ला अन्नहुमस्तहक़्क़ा इस्मन् फ़-आख़रानि यक़ूमानि मक़ा-महुमा मिनल्लज़ीनस्तहक़्-क़ अ़लैहिमुल्-औलयानि फ़युक़्सिमानि बिल्लाहि ल-शहादतुना अहक़्क़ु मिन् शहादतिहिमा व मअ्तदैना इन्ना इज़ल् लमिनज़्ज़ालिमीन (107) ज़ालि-क अद्ना अंय्यअ्तू बिश्शहा-दति अ़ला वज्हिहा औ यख़ाफ़ू अन् तुरद्-द ऐमानुम् बअ्-द ऐमानिहिम्, वत्तक़ुल्ला-ह वस्मअ़ू, वल्लाहु ला यह्दिल् क़ौमल् फ़ासिक़ीन (108) ❁

ऐ ईमान वालो! जबकि पहुँचे किसी को तुम में मौत, तो वसीयत के वक़्त तुम्हारे दरमियान दो शख़्स मोतबर गवाह होने चाहियें तुम में से, या दो गवाह और हों तुम्हारे अ़लावा। अगर तुमने सफ़र किया हो मुल्क में फिर पहुँचे तुमको मुसीबत मौत की, तो खड़ा करो उन दोनों को नमाज़ के बाद, वे दोनों क़सम खायें अल्लाह की, अगर तुमको शुब्हा पड़े कहें कि हम नहीं लेते क़सम के बदले माल अगरचे किसी की हमसे रिश्तेदारी भी हो, और हम नहीं छुपाते अल्लाह की गवाही, नहीं तो हम बेशक गुनाहगार हैं। (106) फिर अगर ख़बर हो जाये कि वे दोनों हक़ बात दबा गये तो दो गवाह और खड़े हों उनकी जगह उनमें से कि जिनका हक़ दबा है, जो सबसे ज़्यादा क़रीब हों मृतक के, फिर क़सम खायें अल्लाह की कि हमारी गवाही ज़्यादा हक़ और सही है पहलों की गवाही से, और हमने ज़्यादती नहीं की, नहीं तो हम बेशक ज़ालिम हैं। (107) इसमें उम्मीद है कि अदा करें गवाही को ठीक तरह और डरें कि उल्टी पड़ेगी क़सम हमारी उनकी क़सम के बाद, और डरते रहो अल्लाह से और सुन रखो, और अल्लाह नहीं चलाता सीधी राह पर नाफ़रमानों को। (108) ❁

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

ऊपर दीनी मस्लेहतों से संबन्धित अहकाम थे, आगे दुनियावी मस्लेहतों सें संबन्धित कुछ अहकाम का ज़िक्र किया गया है, और इसमें इशारा कर दिया कि हक़ तआ़ला अपनी रहमत से अन्जाम व आख़िरत की इस्लाह (सुधार व बेहतरी) की तरह अपने बन्दों की दुनियावी ज़िन्दगी की इस्लाह भी फ़रमाते हैं। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

इन आयतों के नाज़िल होने का मौक़ा व सबब

ज़िक्र हुई आयतों के नुज़ूल (उतरने) का वाक़िआ़ यह है कि 'बुदैल' नाम का एक शख़्स जो मुसलमान था, दो शख़्सों तमीम व अ़दी के साथ जो उस वक़्त ईसाई थे, व्यापार के मक़सद से मुल्के शाम की तरफ़ गया। शाम पहुँचकर बुदैल बीमार हो गया, उसने अपने माल की सूची बनाकर सामान में रख दी, और अपने दोनों साथियों को इत्तिला न की। बीमारी जब ज़्यादा बढ़ी तो उसने दोनों ईसाई साथियों को वसीयत की कि मेरा सारा सामान मेरे वारिसों को पहुँचा देना। उन्होंने सारा सामान लाकर वारिसों के हवाले कर दिया, मगर चाँदी का एक प्याला जिस पर सोने का मुलम्मा या फूल-बूटे थे, उसमें से निकाल लिया। वारिसों को सूची सामान में से मिली, उन्होंने इन दोनों से पूछा कि मरने वाले ने कुछ माल फ़रोख़्त किया था या कुछ ज़्यादा बीमार रहा कि इलाज वग़ैरह में ख़र्च हुआ हो? इन दोनों ने इसका जवाब नफ़ी में दिया। आख़िर मामला नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की अ़दालत में पेश हुआ।

चूँकि वारिसों के पास गवाह न थे तो इन दोनों ईसाईयों से क़सम ली गयी कि हमने मृतक के माल में किसी तरह की ख़ियानत (चोरी) नहीं की, न कोई चीज़ उसकी छुपाई। आख़िर क़सम पर फ़ैसला उनके हक़ में कर दिया गया। कुछ समय के बाद ज़ाहिर हुआ कि वह प्याला उन दोनों ने मक्का में किसी सुनार के हाथ बेचा है, जब सवाल हुआ तो कहने लगे कि हमने मरने वाले से ख़रीद लिया था। चूँकि ख़रीदारी के गवाह मौजूद न थे इसलिये हमने पहले इसका ज़िक्र नहीं किया, कि कहीं हमें झूठा न बना दिया जाये।

मय्यित के वारिसों ने फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ रुजू किया। अब पहली सूरत के विपरीत ये दोनों जिनको मरने वाले ने माल पहुँचाने की वसीयत की थी, ख़रीदारी के दावेदार और वारिस इसके इनकारी थे। गवाही मौजूद न होने की वजह से वारिसों में से दो शख़्सों ने जो मरने वाले से ज़्यादा क़रीब थे क़सम खाई कि प्याला मय्यित की मिल्क था, और ये दोनों ईसाई अपनी क़सम में झूठे हैं। चुनाँचे जिस क़ीमत पर उन्होंने फ़रोख़्त किया था (यानी एक हज़ार दिरहम पर) वह वारिसों को दिलाई गयी।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ ईमान वालो! तुम्हारे आपस (के मामलात) में (जैसे वारिसों को माल सुपुर्द करने के लिये) दो शख़्सों का वसी "यानी जिसको वसीयत की गई हो, वसीयत पर अ़मल करने वाला" होना

मुनासिब है (अगरचे बिल्कुल वसी न बनाना भी जायज़ है), जबकि तुममें से किसी को मौत आने लगे (यानी) जब वसीयत करने का वक़्त हो (और) वे दो शख़्स ऐसे हों कि दीनदार हों और तुममें से (यानी मुसलमानों में से) हों या ग़ैर-क़ौम के दो शख़्स हों, अगर (मुसलमान न मिलें, जैसे) तुम कहीं सफ़र में गए हो फिर तुम पर मौत का वाक़िआ पड़ जाए, (और ये सब चीज़ें वाजिब नहीं, मगर मुनासिब और बेहतर हैं, वरना जिस तरह बिल्कुल वसी न बनाना जायज़ है इसी तरह अगर एक वसी हो या आ़दिल न हो या वतन में होने की हालत में ग़ैर-मुस्लिम को बनाये सब जायज़ है। फिर इन वसी बनाये गये लोगों का यह हुक्म है कि) अगर (ऐ वारिसो! किसी वजह से) तुमको (उन पर) शुब्हा हो तो (ऐ मुक़द्दिमे के फ़ैसला करने वालो! इस तरह फ़ैसला करो कि पहले वारिसों से चूँकि वे दावा करने वाले (वादी) हैं इस बात पर गवाह तलब कर लो कि उन्होंने फ़ुलाँ चीज़ मसलन जाम "यानी प्याला" ले लिया है। और अगर वे गवाह न ला सकें तो उन वसी लोगों से चूँकि उन पर दावा किया गया है, इस तरह क़सम लो कि) उन दोनों (वसीयों) को नमाज़ के बाद (मसलन अ़सर की नमाज़ के बाद) रोक लो, (क्योंकि अक्सर उस वक़्त मजमा ज़्यादा होता है, तो झूठी क़सम खाने वाला कुछ न कुछ शर्माता है, और वक़्त भी सम्मानित है, कुछ इसका भी ख़्याल होता है, और इस बरकत वाले वक़्त और लोगों की अधिकता से मक़सूद क़सम में मज़बूती लाना है) फिर दोनों (इस तरह) ख़ुदा की क़सम खाएँ कि (क़सम के अलफ़ाज़ के साथ यह कहें कि) हम इस क़सम के बदले में (दुनिया का) कोई नफ़ा नहीं लेना चाहते (कि दुनिया का नफ़ा हासिल करने के लिये क़सम में सच बोलने को छोड़ दें) अगरचे (इस वाक़िए में हमारा) कोई रिश्तेदार भी (क्यों न) होता, (जिसकी मस्लेहत को अपनी मस्लेहत समझकर हम झूठी क़सम खाते और अब तो कोई ऐसा भी नहीं, जब दोहरी मस्लेहतों की वजह से भी हम झूठ न बोलते तो एक मस्लेहत के लिये तो हम क्यों ही झूठ बोलेंगे) और अल्लाह की (तरफ़ से जिस) बात (के कहने का हुक्म है उस) को हम छुपाकर न रखेंगे (वरना) हम (अगर ऐसा करें तो) इस हालत में सख़्त गुनाहगार होंगे। (यह क़ौली एतिबार से क़सम में सख़्ती व मज़बूती लाना है और इससे उद्देश्य इस बात को ध्यान में लाना और इस तरफ़ तवज्जोह दिलाना है कि झूठ बोलना हराम और सच से काम लेना वाजिब है, साथ ही अल्लाह तआ़ला की बड़ाई की तरफ़ ध्यान करना जिससे इनसान झूठ बोलने से बाज़ रहे। अब दोनों तरह के गाढ़े और मज़बूत इक़रार के बाद अगर हाकिम की राय हो तो सिर्फ़ असल मज़मून की क़सम खायें, मसलन यह कहें कि मरने वाले ने हमको प्याला नहीं दिया और इसी पर मुक़द्दिमे का फ़ैसला कर देना चाहिये। चुनाँचे इस आयत के वाक़िए में ऐसा ही हुआ)।

फिर (उसके बाद) अगर (किसी माध्यम से ज़ाहिरी तौर पर) इसकी इत्तिला हो कि वे दोनों (वसी) किसी गुनाह के करने वाले हुए हैं (मसलन आयत वाले वाक़िए में जिसको पहले ज़िक्र कर दिया गया है, जब प्याला मक्का में मिला और दोनों वसीयों ने मालूम करने पर मृतक से ख़रीदने का दावा किया जिससे मृतक से ले लेने का इक़रार लाज़िम आता है, और वह उनके पहले क़ौल के ख़िलाफ़ है जिसमें लेने ही से बिल्कुल इनकार किया था, चूँकि नुक़सान पहुँचाने

का इक़रार हुज्जत है, इसलिये ज़ाहिरन उनका चोर और झूठा होना मालूम हुआ) तो (ऐसी सूरत में मुक़द्दिमे का रुख़ बदल जायेगा। वसी जो कि पहले मुद्दआ-अ़लैह थे अब ख़रीदने के दावेदार हो गये, और वारिस जो कि पहले चोरी करने के दावेदार थे अब मुद्दआ-अ़लैह "यानी जिस पर दावा किया जाये" हो गये, इसलिये अब फ़ैसले की यह सूरत हो गयी कि पहले वसीयों से ख़रीदने के गवाह तलब किये जायें, और जब वे गवाह पेश न कर सकें तो) उन (वारिस) लोगों में से जिनके मुक़ाबले में (उन वसीयों की तरफ़ से उक्त) गुनाह का काम हुआ था और (जो कि शरई तौर पर मीरास के हक़दार हों, जैसे आयत वाले वाक़िए की सूरत में) दो शख़्स (थे) जो सब (वारिसों) में (मीरास के हक़दार होने के एतिबार से) ज़्यादा क़रीब हैं, जहाँ (क़सम खाने के लिये) वे दोनों (वसी) खड़े हुए थे (अब) ये दोनों (हलफ़ उठाने के लिये) खड़े हों, फिर दोनों (इस तरह) ख़ुदा की क़सम खाएँ कि (हलफ़ के अलफ़ाज़ के साथ यह कहें कि) यक़ीनन हमारी यह क़सम (जो कि ज़ाहिरी व बातिनी तौर पर शक व शुब्हे से बिल्कुल पाक है) इन दोनों (वसीयों) की उस क़सम से ज़्यादा सच्ची और दुरुस्त है (क्योंकि इसकी हक़ीक़त का अगरचे हमको इल्म नहीं, लेकिन ज़ाहिरन तो वह संदिग्ध हो गयी) और हम (हक़ बात में) ज़रा भी हद से नहीं बढ़े, (वरना) हम (अगर ऐसा करें तो) उस हालत में सख़्त ज़ालिम होंगे (क्योंकि पराया माल जान-बूझकर बिना मालिक की इजाज़त के ले लेना ज़ुल्म है, यह भी एक तरह की सख़्ती है जो हाकिम की राय पर है। फिर असल मज़मून पर क़सम ली जाये, जिसके अलफ़ाज़ इस वजह से कि ये दूसरे के फ़ेल पर क़सम खा रहे हैं ये होंगे कि ख़ुदा की क़सम हमारे इल्म में मृतक ने इन दावेदारों के हाथ प्याला फ़रोख़्त नहीं किया, और चूँकि इल्म के सही या ग़लत होने पर कोई ज़ाहिरी सबील नहीं हो सकती इसलिये उसके सही और वास्तविक होने पर ज़्यादा ताकीद के साथ क़सम ली गयी, जैसे लफ़्ज़ "अहक़्क़ु" इसकी तरफ़ इशारा कर रहा है। जिसका हासिल यह हुआ कि इसका मदार चूँकि मेरे ही ऊपर है इसलिये मैं क़सम खाता हूँ कि जैसे इसमें ज़ाहिरी झूठ का सुबूत नहीं हो सकता इसी तरह हक़ीक़त में झूठ भी नहीं है। और इससे यह मालूम हुआ कि यहाँ हलफ़ उठाना इल्म पर है, और चूँकि इसका झूठ बिना इक़रार के कभी साबित नहीं हो सकता इसलिये इसमें जो हक़-तलफ़ी होगी वह सख़्त दर्जे का ज़ुल्म होगा, हो सकता है कि यहाँ ज़ालिमीन "यानी ज़ुल्म करने वाले" इसी लिये कहा गया हो)।

यह (क़ानून जो आयतों के मजमूए में बयान हुआ है) बहुत क़रीब ज़रिया है इस बात का कि वे (वसी) लोग वाक़िए को ठीक तौर पर ज़ाहिर कर दें (अगर ज़ायद माल उनको नहीं सौंपा गया है तो क़सम खा लें, और अगर सौंपा गया है तो गुनाह से डरकर इनकार कर दें। यह हिक्मत तो वसी लोगों से क़सम व हलफ़ लेने में है) या इस बात से डर (कर क़सम खाने से रुक) जाएँ कि उनसे क़समें लेने के बाद (वारिसों पर) क़समें मुतवज्जह की जाएँगी (फिर हमको शर्मिन्दा और हल्का होना पड़ेगा। यह हिक्मत है वारिसों से क़सम लेने और हलफ़ दिलाने में, और इन सब सूरतों में हक़दार को उसका हक़ पहुँचाया है जो कि शरीअ़त का हुक्म और मक़सद है। क्योंकि अगर वसीयों को हलफ़ दिलाने का शरीअ़त में न होता और वसी लोग माल के सुपुर्द करने में सच्चे होते तो उनसे तोहमत दूर करने का कोई तरीक़ा न होता, और अगर वे

झूठे होते तो वारिसों के हक़ को साबित करने का कोई तरीक़ा न होता, और अब सच्चे होने के वक़्त वे बरी हो जाते, और झूठे होने के वक़्त शायद झूठी क़सम से डरकर इनकार कर जायें तो वारिसों का हक़ साबित हो जाता है। और अगर शरीअ़त में वारिसों से हलफ़ व क़सम लेने का हुक्म न होता और शरअ़न उनका हक़ होता तो हक़ के साबित करने की कोई सूरत न थी। और अगर शरअ़न उनका हक़ न होता तो वसीयों का हक़ साबित होने का कोई तरीक़ा न था। और अब वारिसों का हक़ होने के वक़्त उनका हक़ साबित हो सकता है और हक़ न होने के वक़्त क़सम खाने का इनकार करने से वसीयों का हक़ साबित हो जायेगा। पस दो सूरतें वसीयों से हलफ़ व क़सम लेने की हिक्मत में हैं, और "यअ्तू बिश्शहादति" (पेश करें गवाही) दोनों को शामिल है, और दो सूरतें वारिसों के हलफ़ दिलाने और क़सम खाने की हिक्मत में हैं, जिनमें की दूसरी सूरत तो वसीयों के हलफ़ उठाने की पहली सूरत में दाख़िल है, और पहली सूरत "औ यख़ाफ़ू" (यानी क़सम के उल्टे पड़ने) में दाख़िल है। पस दोनों फ़रीक़ों से क़समें लेने और हलफ़ उठवाने में तमाम हालतों की रियायत हो गयी)। और अल्लाह तआ़ला से डरो (और मामलात व हुक़ूक़ में झूठ मत बोलो) और (उनके अहकाम को) सुनो (यानी मानो), और (अगर ख़िलाफ़ करोगे तो गुनाहगार हो जाओगे) अल्लाह तआ़ला गुनाहगार लोगों की (क़ियामत के दिन नेक और फ़रमाँबरदारों के दर्जों की तरफ़) रहनुमाई न करेंगे (बल्कि निजात पाने के वक़्त भी उनसे कम रहेंगे, तो ऐसा घाटा और नुक़सान क्यों गवारा करते हो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मसला 1. मृतक (मरने वाला) जिस शख़्स को माल सुपुर्द करके उसके मुतअ़ल्लिक़ किसी को देने-दिलाने के लिये कह जाये वह वसी है, और वसी एक शख़्स भी हो सकता है और एक से ज़्यादा भी।

मसला 2. वसी का मुसलमान और आ़दिल (मोतबर व इन्साफ़ पसन्द) होना चाहे सफ़र की हालत हो या वतन में रहने की, अफ़ज़ल है, लाज़िम नहीं।

मसला 3. नज़अ़ (मरने के क़रीब वक़्त) में जो किसी ज़ायद चीज़ को साबित करने वाला हो वह मुद्दई (दावेदार) और दूसरा मुद्दआ़-अ़लैह (जिस पर दावा किया गया हो) कहलाता है।

मसला 4. अव्वल मुद्दई (दावा करने वाले) से गवाह लिये जाते हैं, अगर शरई क़ानून के मुवाफ़िक़ वह पेश कर दे तो मुक़द्दिमा वह पाता है, और अगर पेश न कर सके तो मुद्दआ़-अ़लैह से क़सम ली जाती है और मुक़द्दिमा वह पाता है। अलबत्ता अगर वह क़सम से इनकार कर जाये तो फिर मुद्दई (दावेदार) मुक़द्दिमा पा लेता है।

मसला 5. क़सम को किसी ख़ास वक़्त या जगह के साथ पाबन्द करने या उसमें सख़्ती से काम लेने, जैसा कि ज़िक्र हुई आयत में किया गया है, हाकिम की राय पर है, लाज़िम नहीं। इस आयत से भी इस चीज़ का अनिवार्य होना साबित नहीं होता और दूसरी आयतों व रिवायतों से भी इसका मुतलक़ (बिना किसी शर्त व क़ैद के) होना साबित है।

मसला 6. अगर मुद्दआ़-अ़लैह (जिस पर दावा किया गया है) किसी ग़ैर के फ़ेल के बारे में

क़सम खाये तो अलफ़ाज़ ये होते हैं कि मुझको इस फ़ेल (काम) की ख़बर व सूचना नहीं।

मसला 7. अगर मीरास के मुक़द्दिमे में वारिस मुद्दआ-अ़लैह हों तो जिनको शरअ़न मीरास पहुँचती है उन पर क़सम आयेगी, चाहे वह एक हो या अनेक, और जो वारिस नहीं उन पर क़सम न होगी। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

एक काफ़िर की गवाही दूसरे काफ़िर के मामले में माननीय है

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ حِيْنَ الْوَصِيَّةِ اثْنٰنِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ اَوْ اٰخَرٰنِ مِنْ غَيْرِكُمْ.......

इस आयत में मुसलमानों को हुक्म दिया गया है कि जब तुम में से किसी को मौत आने लगे तो दो ऐसे आदमियों को वसी बनाओ जो तुम में से हों और नेक हों। और अगर अपनी क़ौम के आदमी (यानी मुसलमान) नहीं हैं तो ग़ैर क़ौम (यानी काफ़िरों में) से बनाओ।

इससे इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने यह मसला निकाला है कि काफ़िरों की गवाही उनमें से एक-दूसरे के हक़ में जायज़ है, क्योंकि इस आयत में काफ़िरों की गवाही मुसलमानों पर जायज़ क़रार दी है, जैसा कि 'औ आख़रानि मिन् ग़ैरिकुम' से ज़ाहिर है, तो काफ़िरों की गवाही उनमें से एक की दूसरे पर और भी ज़्यादा जायज़ है, लेकिन बाद में आयतः

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ..........وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ.

से काफ़िरों की गवाही मुसलमानों पर ख़त्म और निरस्त हो गयी, लेकिन काफ़िरों की एक-दूसरे पर इसी तरह बाक़ी है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी, अहकामुल-क़ुरआन, इमाम जस्सास की)

इमाम साहिब के मस्लक की ताईद इस हदीस से भी होती है कि एक यहूदी ने ज़िना कर लिया तो उसके लोगों ने उसका चेहरा काला करके हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दरबार में पेश किया। आपने उसकी हालत देखकर वजह मालूम फ़रमाई तो उन्होंने कहा कि इसने ज़िना किया है। आप सल्ल. ने गवाहों की गवाही के बाद उसको रजम (पत्थरों से मार-मारकर ख़त्म) करने का हुक्म दिया। (जस्सास)

जिस शख़्स पर किसी का हक़ हो वह उसको क़ैद करा सकता है

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

تَحْبِسُوْنَهُمَا.

"तहबिसूनहुमा" (तो खड़ा करो उन दोनों को) इस आयत से एक उसूल मालूम हुआ कि जिस आदमी पर किसी का कोई हक़ वाजिब हो उसको उस हक़ की ख़ातिर ज़रूरत के वक़्त क़ैद किया जा सकता है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

अल्लाह तआ़ला के क़ौल "मिम्-बअ़्दिस्सलाति" में सलात से अ़सर की नमाज़ मुराद है।

इस वक़्त को इख़्तियार करने की वजह यह है कि उस वक़्त का अहले किताब (यहूदी व ईसाई) बहुत सम्मान करते थे, झूठ बोलना ऐसे वक़्त में ख़ुसूसन उनके यहाँ मना था। इससे मालूम हुआ कि क़सम में किसी ख़ास वक़्त या ख़ास जगह वग़ैरह की क़ैद लगाकर उसको मज़बूत और पुख़्ता करना जायज़ है। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُوْلُ مَاذَآ اُجِبْتُمْ ۚ قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا ۚ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ ۞ اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰى وَالِدَتِكَ ۘ اِذْ اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ۣ تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۚ وَاِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ ۚ وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًاۢ بِاِذْنِيْ وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِيْ ۚ وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ عَنْكَ اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَآ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ ۞

यौ-म यज्मअुल्लाहुर्रुसु-ल फ़-यक़ूलु मा ज़ा उजिब्तुम्, क़ालू ला अ़िल्-म लना, इन्न-क अन्-त अ़ल्लामुल्-ग़ुयूब (109) इज़् क़ालल्लाहु या अ़ीसब्-न मर्यमज़्कुर् निअ़्मती अ़लै-क व अ़ला वालिदति-क। इज़् अय्यत्तु-क बिरूहिल्क़ुदुसि, तुकल्लिमुन्ना-स फ़िल्मह्दि व कह्लन् व इज़् अ़ल्लम्तुकल्-किता-ब वल्-हिक्म-त वत्तौरा-त वल्इन्जी-ल व इज़् तख़्लुक़ु मिनत्तीनि कहै-अतित्तैरि बि-इज़्नी फ़तन्फ़ुख़ु फ़ीहा फ़-तकूनु तैरम् बि-इज़्नी व तुब्रिउल्-अक्म-ह वल्अब्र-स बि-इज़्नी व इज़् तुख़्रिजुल्

जिस दिन अल्लाह जमा करेगा सब पैग़म्बरों को फिर कहेगा- तुमको क्या जवाब मिला था? वे कहेंगे हमको ख़बर नहीं तू ही है छुपी बातों को जानने वाला। (109) जब कहेगा अल्लाह ऐ ईसा मरियम के बेटे! याद कर मेरा एहसान जो हुआ है तुझ पर और तेरी माँ पर, जब मदद की मैंने तेरी पाक रूह से, तू कलाम करता था लोगों से गोद में और बड़ी उम्र में, और जब सिखाई मैंने तुझको किताब और गहराई की बातें और तौरात और इन्जील, और जब तू बनाता था गारे से जानवर की सूरत मेरे हुक्म से फिर फूँक मारता था उसमें तो वह हो जाता उड़ने वाला मेरे हुक्म से, और अच्छा करता था माँ के पेट से पैदा होने वाले अंधे को, और कोढ़ी को मेरे हुक्म से, और जब

-मौता बि-इज़्नी व इज़् कफ़फ़्तु बनी इस्राई-ल अ़न्-क इज़् जिअ्तहुम् बिल्बय्यिनाति फ़क़ालल्लज़ी-न क-फ़रू मिन्हुम् इन् हाज़ा इल्ला सिह्रुम्-मुबीन (110)	निकाल खड़ा करता था मुर्दों को मेरे हुक्म से, और जब रोका मैंने बनी इस्राईल को तुझसे, जब तू लेकर आया उनके पास निशानियाँ तो उनमें जो काफ़िर थे कहने लगे- और कुछ नहीं यह तो खुला जादू है। (110)

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

ऊपर विभिन्न अहकाम का ज़िक्र हुआ और बीच में उन पर अ़मल की तरग़ीब और उनके ख़िलाफ़ करने पर डराया गया। इसी की ताकीद के लिये अगली आयत में क़ियामत के हौलनाक वाक़िआत याद दिलाते हैं ताकि इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) का ज़्यादा सबब और मुख़ालफ़त से ज़्यादा रोक बने। और क़ुरआन मजीद का अक्सर यही अन्दाज़ है। फिर सूरत के ख़त्म में अहले किताब की एक गुफ़्तगू और बातचीत ज़िक्र फ़रमायी है जो पहले गुज़री अनेक आयतों में ज़िक्र हो चुका, जिससे अहले किताब को हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के मुताल्लिक़ कुछ मज़ामीन सुनाना मक़सद है, जिनसे उनकी अ़ब्दियत (बन्दा होने) को साबित करना और ख़ुदा होने की नफ़ी करना है (अगरचे इस गुफ़्तगू का मौक़ा क़ियामत में पेश आयेगा)।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(वह दिन भी कैसा हौलनाक होगा) जिस दिन अल्लाह तआ़ला पैग़म्बरों को (मय उनकी उम्मतों के) जमा करेंगे, फिर (उन उम्मतों में जो नाफ़रमान होंगे तो उनको डाँट-डपट सुनाने को उन पैग़म्बरों से) इरशाद फ़रमाएँगे कि तुमको (इन उम्मतों की तरफ़ से) क्या जवाब मिला था? वे अ़र्ज़ करेंगे कि (ज़ाहिरी जवाब तो हमें मालूम है, लेकिन इनके दिल की) हमको कुछ ख़बर नहीं, (उसको आप ही जानते हैं, क्योंकि) आप बेशक छुपी बातों के जानने वाले हैं। (मतलब यह कि एक दिन ऐसा होगा और आमाल व हालात की तफ़्तीश होगी, इसलिये तुमको मुख़ालफ़त व नाफ़रमानी से डरते रहना चाहिये, और उसी रोज़ ईसा अ़लैहिस्सलाम से एक ख़ास गुफ़्तगू होगी) जबकि अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाएँगे कि ऐ मरियम के बेटे ईसा! मेरा इनाम याद करो (ताकि उसकी लज़्ज़त ताज़ा हो) जो तुम पर और तुम्हारी माँ पर (विभिन्न वक़्तों में विभिन्न सूरतों से हुआ है, जैसे) जबकि मैंने तुमको रूहुल-क़ुदुस (यानी जिब्रील अ़लैहिस्सलाम) से इमदाद और ताईद दी। (और) तुम आदमियों से (दोनों हालतों में बराबर) कलाम करते थे (माँ की) गोद में भी और बड़ी उम्र में भी (दोनों कलामों में कुछ फ़र्क़ न था) और जबकि मैंने तुमको (आसमानी) किताबें और समझ की बातें और (ख़ासकर) तौरात और इन्जील तालीम कीं। और जबकि तुम मेरे हुक्म से गारे से एक शक्ल बनाते थे जैसे परिन्दे की शक्ल होती है, फिर तुम

उस (बनाई हुई शक्ल) के अन्दर मेरे हुक्म से फूँक मार देते थे जिससे वह (सचमुच का जानदार) परिन्दा बन जाता था, और तुम मेरे हुक्म से अच्छा कर देते थे जन्म के अन्धे को और कोढ़ (जुज़ाम) के बीमार को, और जबकि तुम मेरे हुक्म से मुर्दों को (क़ब्रों से) निकाल (और ज़िन्दा करके) खड़ा कर लेते थे, और जबकि मैंने बनी इस्राईल (में से जो आपके मुख़ालिफ़ थे उन) को तुमसे (यानी तुम्हारे क़त्ल और हलाक करने से) बाज़ रखा, जब (उन्होंने तुमको नुक़सान पहुँचाना चाहा जबकि) तुम उनके पास (अपनी नुबुव्वत की) दलीलें (यानी मोजिज़े) लेकर आए थे। फिर उनमें जो काफ़िर थे उन्होंने कहा था कि ये (मोजिज़े) सिवाय खुले जादू के और कुछ भी नहीं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

क़ियामत में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से सबसे पहले सवाल होगा

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ.

(जिस दिन अल्लाह तआ़ला पैग़म्बरों को जमा करेगा) क़ियामत में अगरचे शुरू से आख़िर तक पैदा होने वाले तमाम इनसान एक खुले मैदान में खड़े होंगे, और किसी ख़ित्ते, किसी मुल्क और किसी ज़माने का इनसान हो वह उस मैदान में हाज़िर होगा, और सबसे उनके उम्र भर के आमाल का हिसाब लिया जायेगा, लेकिन बयान में ख़ास तौर पर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का ज़िक्र किया गयाः

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ.

यानी उस दिन को याद करो जिस दिन अल्लाह तआ़ला सब रसूलों को हिसाब के लिये जमा फ़रमायेंगे।

मुराद यह है कि जमा तो सारे आ़लम को किया जायेगा मगर सबसे पहले सवाल अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से होगा, ताकि पूरी मख़्लूक़ देख ले कि आजके दिन कोई हिसाब और सवाल व जवाब से अलग नहीं। फिर रसूलों से जो सवाल किया जायेगा वह यह है कि 'मा ज़ा उजिबतुम' यानी जब आप लोगों ने अपनी-अपनी उम्मतों को अल्लाह तआ़ला और उसके दीने हक़ की तरफ़ बुलाया तो उन लोगों ने आपको क्या जवाब दिया था? और क्या उन्होंने आपके बतलाये हुए अहकाम पर अ़मल किया? या इनकार व मुख़ालफ़त की?

इस सवाल के मुख़ातब अगरचे अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम होंगे लेकिन वास्तव में उनकी उम्मतों को सुनाना मक़सद होगा, कि उम्मतों ने जो आमाल नेक या बुरे किये हैं उनकी गवाही सबसे पहले उनके रसूलों से ली जायेगी। उम्मतों के लिये यह वक़्त बड़ा नाज़ुक होगा, कि वह तो इस होश खो देने वाले हंगामे में अपने नबियों की शफ़ाअ़त की अपेक्षा कर रहे होंगे, उधर अम्बिया-ए-किराम ही से उनके बारे में यह सवाल हो जायेगा तो ज़ाहिर है कि अम्बिया-ए-किराम कोई ग़लत या वास्तविकता के ख़िलाफ़ बात तो कह नहीं सकते, इसलिये मुजरिमों और

गुनाहगारों को अन्देशा यह होगा कि जब ख़ुद नबी ही हमारे अपराधों के गवाह बनेंगे तो अब कौन है जो कोई शफ़ाअ़त (सिफ़ारिश) या मदद कर सके।

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम इस सवाल का जवाब यह देंगेः

قَالُوْا لَا عِلْمَ لَنَا. اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ.

यानी हमें उनके ईमान व अ़मल का कोई इल्म नहीं, आप ख़ुद ही तमाम ग़ैब की चीज़ों से पूरे बाख़बर हैं।

एक शुब्हा और उसका जवाब

यहाँ सवाल यह है कि हर रसूल की उम्मत के वे लोग जो उनकी वफ़ात के बाद पैदा हुए उनके बारे में तो नबियों का यह जवाब सही और साफ़ है, कि उनके ईमान व अ़मल से वे बाख़बर नहीं, क्योंकि ग़ैब का इल्म अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी को नहीं, लेकिन एक बहुत बड़ी तायदाद उम्मत में उन लोगों की भी तो है जो ख़ुद नबियों की अनथक कोशिशों से उन्हीं के हाथ पर मुसलमान हुए, और फिर उनके अहकाम की पैरवी उनके सामने करते रहे। इसी तरह वे काफ़िर जिन्होंने अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की बात न मानी और मुख़ालफ़त व दुश्मनी से पेश आये, उनके बारे में यह कहना कैसे सही होगा कि हमें उनके ईमान व अ़मल का इल्म नहीं।

तफ़सीर बहर-ए-मुहीत में है कि इमाम अबू अ़ब्दुल्लाह राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इसके जवाब में फ़रमाया कि यहाँ दो चीज़ें अलग-अलग हैं- एक इल्म, जिसके मायने कामिल यक़ीन के हैं और दूसरे ग़ालिब गुमान, और ज़ाहिर है कि एक इनसान किसी दूसरे इनसान के सामने होने के बावजूद उसके ईमान व अ़मल की गवाही अगर दे सकता है तो सिर्फ़ ग़लबा-ए-गुमान के एतिबार से दे सकता है, वरना दिलों का राज़ और असल ईमान जिसका ताल्लुक़ दिल से है वह तो किसी को यक़ीनी तौर पर बग़ैर अल्लाह तआ़ला की वही के मालूम नहीं हो सकता। हर उम्मत में मुनाफ़िक़ों के गिरोह रहे हैं, जो ज़ाहिर में ईमान भी लाते थे और अहकाम की पैरवी भी करते थे, मगर उनके दिलों में ईमान न था, और न पैरवी का कोई जज़्बा। वहाँ जो कुछ था सब दिखावा था, हाँ दुनिया के तमाम अहकाम उनकी ज़ाहिरी हालत के हिसाब से जारी होते थे। जो शख़्स अपने आपको मुसलमान कहे और अल्लाह के अहकाम की पैरवी करे, और इस्लाम व ईमान के ख़िलाफ़ उससे कोई क़ौल व फ़ेल साबित न हो, अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतें उसको सच्चा और नेक मोमिन कहने पर मजबूर थे, चाहे वह दिल में सच्चा मोमिन हो या मुनाफ़िक़। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

نَحْنُ نَحْكُمُ بِالظَّوَاهِرِ وَاللّٰهُ مُتَوَلِّى السَّرَآئِرِ.

"यानी हम तो आमाल की ज़ाहिरी हालत पर हुक्म जारी करते हैं, दिलों के छुपे राज़ों का निगराँ व वाक़िफ़ ख़ुद अल्लाह जल्ल शानुहू है।"

इसी उसूल के तहत दुनिया में तो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी जगह लेने वाले

उनके ख़ुलफ़ा और उलेमा ज़ाहिरी आमाल पर अच्छा गुमान रखते हुए किसी के नेक मोमिन होने की गवाही दे सकते थे, लेकिन आज वह दुनिया का जहान जिसका सारा मदार गुमान पर था ख़त्म हो चुका, यह मेहशर का मैदान है जहाँ बाल की खाल निकाली जायेगी, असलियतों और सच्चाईयों को ज़ाहिर किया जायेगा। मुजरिमों के मुक़ाबले में पहले दूसरे लोगों से गवाहियाँ ली जायेंगी, उनसे अगर मुजरिम मुत्मईन न हुआ और अपने जुर्म को क़ुबूल न किया तो ख़ास क़िस्म के सरकारी गवाह सामने लाये जायेंगे, उनके मुँह और ज़बान पर तो ख़ामोशी की मोहर लगा दी जायेगी और मुजरिम के हाथ, पाँव और खाल से गवाही ली जायेगी। वे हर फ़ेल की पूरी हक़ीक़त बयान कर देंगे। जैसा कि क़ुरआन पाक में फ़रमाया है:

اَلْيَوْمَ نَخْتِمُ عَلٰٓى اَفْوَاهِهِمْ وَتُكَلِّمُنَآ اَيْدِيْهِمْ وَتَشْهَدُ اَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ.

उस वक़्त इनसानों को मालूम होगा कि मेरे तमाम आज़ा (बदनी हिस्से और अंग) रब्बुल-आलमीन की ख़ुफ़िया पुलिस थे। उनके बयान के बाद इनकार की कोई सूरत बाक़ी न रहेगी।

ख़ुलासा यह कि उस जहान का कोई हुक्म केवल गुमान और अन्दाज़े पर नहीं चलेगा बल्कि इल्म व यक़ीन पर हर चीज़ का मदार होगा। और यह अभी मालूम हो चुका कि किसी शख़्स के ईमान व अ़मल का असली और यक़ीनी इल्म सिवाय अल्लाह तआ़ला के कोई नहीं जानता, इसलिये अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम से जब मेहशर में यह सवाल होगा कि 'मा ज़ा उजिबतुम' (यानी जब आप लोगों ने अपनी-अपनी उम्मतों को अल्लाह तआ़ला और उसके दीने हक़ की तरफ़ बुलाया तो उन लोगों ने आपको क्या जवाब दिया था?) तो वे इस सवाल की हक़ीक़त को पहचान लेंगे कि यह सवाल दुनिया में नहीं हो रहा जिसका जवाब गुमान की बुनियाद पर दिया जा सके, बल्कि यह सवाल मेहशर में हो रहा है, जहाँ यक़ीन के सिवा कोई बात चलने वाली नहीं, इसलिये उनका यह जवाब कि हमें उनके मुताल्लिक़ कोई इल्म नहीं, यानी यक़ीनी इल्म नहीं, बिल्कुल बजा और दुरुस्त है।

एक सवाल और उसका जवाब

अम्बिया हज़रात की इन्तिहाई शफ़क़त का ज़हूर

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि उम्मतों के मानने और न मानने, फ़रमाँबरदारी या नाफ़रमानी के जो वाक़िआ़त उनके सामने पेश आये उनसे जिस तरह का इल्म ग़ालिब गुमान के मुताबिक़ उनको हासिल हुआ, इस सवाल के जवाब में वह तो बयान कर देना चाहिये था, सिर्फ़ उस इल्म के यक़ीन के दर्जे को अल्लाह तआ़ला के हवाले किया जा सकता है। मगर यहाँ अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम ने अपनी मालूमात और पेश आये वाक़िआ़त का कोई ज़िक्र ही नहीं किया, सब कुछ अल्लाह के इल्म के हवाले करके ख़ामोश हो गये।

हिक्मत इसमें यह थी कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम अपनी उम्मतों और अल्लाह की आ़म मख़्लूक़ पर बेइन्तिहा मेहरबान होते हैं, उनके मुताल्लिक़ ऐसी कोई बात अपनी ज़बान से कहना

नहीं चाहेंगे जिससे ये लोग पकड़ में आ जायें। हाँ कोई मजबूरी ही होती तो कहना पड़ता, यहाँ यक़ीनी इल्म न होने का उज़्र मौजूद था, इस उज़्र से काम लेकर अपनी ज़बानों से अपनी उम्मतों के ख़िलाफ़ कुछ कहने से बच सकते थे, इस तरह इससे बच गये।

मेहशर में पाँच चीज़ों का सवाल

खुलासा यह कि इस आयत में क़ियामत के घबराहट वाले मन्ज़र की एक झलक सामने कर दी गयी है कि हिसाब के कटहरे में अल्लाह तआ़ला के सबसे ज़्यादा नेक व मक़बूल रसूल खड़े हैं और काँप रहे हैं तो दूसरों का क्या हाल होगा। इसलिये उस दिन की फ़िक्र आज से करनी चाहिये और उम्र के इन फ़ुर्सत वाले लम्हात को उस हिसाब की तैयारी के लिये ग़नीमत समझना चाहिये। तिर्मिज़ी शरीफ़ की एक हदीस में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

لَا تَزُوْلُ قَدَمَا ابْنِ اٰدَمَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ حَتّٰى يُسْئَلَ عَنْ خَمْسٍ. عَنْ عُمُرِهٖ فِيْمَآ اَفْنَاهُ وَعَنْ شَبَابِهٖ فِيْمَآ اَبْلَاهُ وَعَنْ مَالِهٖ مِنْ اَيْنَ اِكْتَسَبَهٗ وَاَيْنَ اَنْفَقَهٗ وَمَاذَا عَمِلَ بِمَا عَلِمَ.

"यानी किसी आदमी के क़दम मेहशर में उस वक़्त तक आगे न सरक सकेंगे जब तक उससे पाँच सवालों का जवाब न ले लिया जाये- एक यह कि उसने अपनी उम्र के बड़े हिस्से और उसके रात-दिन को किस काम में ख़र्च किया। दूसरे यह कि ख़ास तौर पर जवानी का ज़माना जो अ़मल की ताक़त का ज़माना था, उसको किन कामों में ख़र्च किया। तीसरे यह कि सारी उम्र में जो माल उसको हासिल हुआ वह कहाँ और किन हलाल या हराम तरीक़ों से कमाया। चौथे यह कि माल को किन जायज़ या नाजायज़ कामों में ख़र्च किया। पाँचवें यह कि अपने इल्म पर क्या अ़मल किया?"

अल्लाह तआ़ला ने अपनी बेहिसाब रहमत व शफ़क़त से इस इम्तिहान के सवालात का पर्चा भी पहले ही नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये उम्मत को बतला दिया, अब उनका काम सिर्फ़ इतना रह गया कि इन सवालात का हल सीख लें और उसे महफ़ूज़ रखें। इम्तिहान से पहले ही सवालात बतला देने के बाद भी कोई उनमें फ़ेल हो जाये तो उससे ज़्यादा मेहरूम कौन हो सकता है।

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से विशेष सवाल व जवाब

पहली आयत में तो आ़म नबियों का हाल और उनसे सवाल व जवाब का तज़किरा था, दूसरी आयत में और उसके बाद सूरत के ख़त्म तक की नौ आयतों में विशेष तौर पर बनी इस्राईल के आख़िरी पैग़म्बर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का तज़किरा और उन पर अल्लाह तआ़ला के ख़ुसूसी इनामों की कुछ तफ़सील का बयान है, और मेहशर में उनसे एक ख़ुसूसी सवाल और उसके जवाब का ज़िक्र है, जो अगली आयतों में आ रहा है।

इस सवाल व जवाब का हासिल भी बनी इस्राईल और तमाम मख़्लूक़ को यह हौलनाक मन्ज़र दिखलाना है कि उस मैदान में जब रूहुल्लाह और कलिमतुल्लाह (यानी हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम) से सवाल होता है कि आपकी उम्मत ने जो आपको ख़ुदा का शरीक बनाया, तो वह सारी इ़ज़्ज़त व अ़ज़मत वाले और मासूम व नबी होने के बावजूद किस क़द्र घबराकर अपनी बराअत (बेगुनाही) अल्लाह की बारगाह में पेश फ़रमाते हैं कि एक मर्तबा नहीं बार-बार विभिन्न और अलग-अलग उनवानात से इसकी नफ़ी करते हैं कि मैंने उनको यह तालीम न दी थी। पहले अ़र्ज़ किया:

سُبْحٰنَكَ مَا يَكُوْنُ لِيْٓ اَنْ اَقُوْلَ مَا لَيْسَ لِيْ بِحَقٍّ.

"यानी पाक हैं आप, मेरी क्या मजाल थी कि मैं ऐसी बात कहता जिसका मुझे हक़ न था।"

अपनी बराअत (बरी होने) का दूसरा पहलू इस तरह इख़्तियार फ़रमाते हैं कि ख़ुद हक़ तआ़ला को अपना गवाह बनाकर कहते हैं कि अगर मैं ऐसा कहता तो आपको ज़रूर इसका इल्म होता, क्योंकि आप तो मेरे दिल के भेद से भी वाक़िफ़ हैं, क़ौल व फ़ेल का तो क्या कहना, आप तो ग़ैब की चीज़ों के ख़ूब जानने वाले हैं।

अल्लाह की बारगाह में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का जवाब

इस सारी तम्हीद (भूमिका) के बाद असल सवाल का जवाब देते हैं:

यानी यह कि मैंने उनको वही तालीम दी थी जिसका आपने मुझे हुक्म फ़रमाया था:

اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبَّكُمْ.

यानी अल्लाह तआ़ला की इबादत करो जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी।

फिर इस तालीम के बाद जब तक मैं उन लोगों के अन्दर रहा तो मैं उनके कामों और बातों का गवाह था (उस वक़्त तक इनमें कोई ऐसा न कहता था) फिर जब आपने मुझे उठा लिया तो फिर ये लोग आप ही की निगरानी में थे, आप ही इनके कामों और बातों से पूरे वाक़िफ़ हैं।

हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर कुछ विशेष इनामों का ज़िक्र

उन आयतों में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के जिस सवाल व जवाब का ज़िक्र किया गया है उससे पहले उन विशेष इनामों का भी ज़िक्र है जो ख़ुसूसी तौर पर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर अल्लाह की तरफ़ से हुए और मोजिज़ों की शक्ल में उनको अ़ता फ़रमाये गये। इस पूरे के पूरे बयान में एक तरफ़ ख़ुसूसी इनामों का और दूसरी तरफ़ जवाब-तलबी का मन्ज़र दिखलाकर बनी इस्राईल की उन दोनों क़ौमों को तंबीह की गयी है जिनमें से एक ने तो उनकी तौहीन की और तरह-तरह की तोहमतें लगायीं और सताया, और दूसरी क़ौम ने उनको ख़ुदा या ख़ुदा का बेटा बना दिया। इनामों का ज़िक्र करके पहली क़ौम को और सवाल व जवाब का ज़िक्र करके दूसरी क़ौम को तंबीह की गयी। यहाँ जिन इनामों का तफ़सीली ज़िक्र कई आयतों में किया गया उनमें

से एक जुमला ज़्यादा क़ाबिले ग़ौर है, जिसमें इरशाद हुआ हैः

تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا.

यानी एक ख़ुसूसी मोजिज़ा जो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को दिया गया वह यह है कि आप लोगों से बच्चा होने की हालत में भी कलाम करते हैं, और अधेड़ उम्र होने की हालत में भी।

इसमें पहली बात का मोजिज़ा (करिश्मा) और ख़ुसूसी इनाम होना तो ज़ाहिर है, पैदाईश के शुरू के दौर में बच्चे कलाम करने के क़ाबिल नहीं हुआ करते, कोई बच्चा माँ की गोद या पालने में बोलने लगे तो यह उसकी ख़ास विशेषता होगी। अधेड़ उम्र में बोलना या कलाम करना जो बयान हुआ है वह तो कोई क़ाबिले ज़िक्र चीज़ नहीं, हर इनसान उस उम्र में बोला ही करता और कलाम करता है। लेकिन हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के ख़ुसूसी हाल पर ग़ौर करें तो इसका भी मोजिज़ा (करिश्मा) होना वाज़ेह हो जायेगा। क्योंकि ईसा अ़लैहिस्सलाम अधेड़ उम्र को पहुँचने से पहले ही दुनिया से उठा लिये गये, अब यहाँ के इनसानों से उनका कलाम करना अधेड़ उम्र को पहुँचने के बाद तब ही हो सकता है जब वह दोबारा इस दुनिया में तशरीफ़ लायें, जैसा कि मुसलमानों का मुत्तफ़िक़ा अ़क़ीदा है, और क़ुरआन व सुन्नत की वज़ाहतों से साबित है। इससे मालूम हुआ कि जिस तरह हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम का बचपन में कलाम करना मोजिज़ा था इसी तरह अधेड़ उम्र में कलाम करना भी, इस दुनिया में दोबारा आने की वजह से मोजिज़ा (अल्लाह की एक निशानी और करिश्मा) ही है।

وَإِذْ أَوْحَيْتُ إِلَى الْحَوَارِيِّينَ أَنْ آمِنُوا بِي وَبِرَسُولِي قَالُوا آمَنَّا وَاشْهَدْ بِأَنَّنَا مُسْلِمُونَ ۝ إِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّونَ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيعُ رَبُّكَ أَنْ يُنَزِّلَ عَلَيْنَا مَائِدَةً مِنَ السَّمَاءِ قَالَ اتَّقُوا اللَّهَ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ۝ قَالُوا نُرِيدُ أَنْ نَأْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَئِنَّ قُلُوبُنَا وَنَعْلَمَ أَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا وَنَكُونَ عَلَيْهَا مِنَ الشَّاهِدِينَ ۝ قَالَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللَّهُمَّ رَبَّنَا أَنْزِلْ عَلَيْنَا مَائِدَةً مِنَ السَّمَاءِ تَكُونُ لَنَا عِيدًا لِأَوَّلِنَا وَآخِرِنَا وَآيَةً مِنْكَ وَارْزُقْنَا وَأَنْتَ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ۝ قَالَ اللَّهُ إِنِّي مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ فَمَنْ يَكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ فَإِنِّي أُعَذِّبُهُ عَذَابًا لَا أُعَذِّبُهُ أَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ ۝

व इज़् औहैतु इलल्-हवारिय्यी-न अन् आमिनू बी व बि-रसूली क़ालू आमन्ना वश्हद् बिअन्नना मुस्लिमून (111) इज़् क़ालल्-हवारिय्यू-न या ज़ीसब्-न मर्य-म हल् यस्ततीज़ु	और जब मैंने दिल में डाल दिया हवारियों के कि ईमान लाओ मुझ पर और मेरे रसूल पर तो कहने लगे- हम ईमान लाये और तू गवाह रह कि हम फ़रमाँबरदार हैं। (111) जब कहा हवारियों ने ऐ ईसा

रब्बु-क अंय्युनज़्ज़ि-ल अलैना माइ-दतम्-मिनस्समा-इ, कालत्तक़ुल्ला-ह इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (112) क़ालू नुरीदु अन् नअ्कु-ल मिन्हा व तत्मइन्-न क़ुलूबुना व नअ्ल-म अन् क़द् सदक़्तना व नकू-न अ़लैहा मिनश्शाहिदीन। (113) ❖ क़ा-ल अ़ीसब्नु मर्‌यमल्लाहुम्-म रब्बना अन्ज़िल् अ़लैना माइ-दतम् मिनस्समा-इ तकूनु लना अ़ीदल् लि-अव्वलिना व आख़िरिना व आयतम्-मिन्-क वर्‌ज़ुक़्ना व अन्-त ख़ैरुर्राज़िक़ीन (114) क़ालल्लाहु इन्नी मुनज़्ज़िलुहा अ़लैकुम् फ़-मंय्यक्फ़ुर् बअ्दु मिन्कुम् फ़-इन्नी उअ़ज़्ज़िबुहू अ़ज़ाबल्-ला उअ़ज़्ज़िबुहू अ-हदम् मिनल्-आलमीन (115) ✿	मरियम के बेटे! तेरा रब कर सकता है कि उतारे हम पर ख़्वान भरा हुआ आसमान से, बोला डरो अल्लाह से अगर हो तुम ईमान वाले। (112) बोले कि हम चाहते हैं कि खायें उसमें से और मुत्मईन हो जायें हमारे दिल, और हम जान लें कि तूने हम से सच कहा, और रहें हम उस पर गवाह। (113) ❖ कहा ईसा मरियम के बेटे ने ऐ अल्लाह रब हमारे! उतार हम पर ख़्वान भरा हुआ आसमान से कि वह दिन ईद रहे हमारे लिये पहलों और पिछलों के वास्ते, और निशानी हो तेरी तरफ़ से, और रोज़ी दे हमको और तू ही है सबसे बेहतर रोज़ी देने वाला। (114) कहा अल्लाह ने- मैं बेशक उतारूँगा वह ख़्वान तुम पर फिर जो कोई तुममें नाशुक्री करेगा उसके बाद तो मैं उसको वह अ़ज़ाब दूँगा जो किसी को न दूँगा जहान में। (115) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और जबकि मैंने हवारियों को (इंजील में तुम्हारी ज़बानी) हुक्म दिया कि तुम मुझ पर और मेरे रसूल (ईसा अ़लैहिस्सलाम) पर ईमान लाओ। उन्होंने (जवाब में तुमसे) कहा कि हम (ख़ुदा और रसूल यानी आप पर) ईमान लाये, आप गवाह रहिये कि हम (ख़ुदा के और आपके) पूरे फ़रमाँबरदार हैं। (वह वक़्त याद करने के क़ाबिल है) जबकि हवारियों ने (हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से) अ़र्ज़ किया कि ऐ ईसा इब्ने मरियम! क्या आपके रब ऐसा कर सकते हैं (यानी ऐसा होने में कोई बात ख़िलाफ़े हिक्मत होने वग़ैरह की इससे बाधा तो नहीं) कि हम पर आसमान से दस्तरख़्वान (यानी कुछ खाना पका पकाया) नाज़िल फ़रमा दें? आपने फ़रमाया ख़ुदा तआ़ला से डरो अगर तुम ईमान वाले हो (मतलब यह कि तुम तो ईमान वाले हो इसलिये ख़ुदा

से डरो और मोजिज़ों की फ़रमाईश से जो कि बिना ज़रूरत होने की वजह से ख़िलाफ़े अदब है बचो)। वे बोले कि (हमारा मक़सद बेज़रूरत फ़रमाईश करना नहीं है, बल्कि एक मस्लेहत से इसकी दरख़्वास्त करते हैं, वह यह कि) हम (एक तो) यह चाहते हैं कि (बरकत हासिल करने को) उसमें से खाएँ और (दूसरे यह चाहते हैं कि) हमारे दिलों को (ईमान पर) पूरा इत्मीनान हो जाये। और (मतलब इत्मीनान का यह है कि) हमारा यह यक़ीन और बढ़ जाए कि आपने (अपने रसूल होने के दावे में) हमसे सच बोला है (क्योंकि जिस क़द्र दलीलें बढ़ती जाती हैं दावे का यक़ीन बढ़ता जाता है)। और (तीसरे यह चाहते हैं कि) हम (उन लोगों के सामने जिन्होंने यह मोजिज़ा नहीं देखा) गवाही देने वालों में से हो जाएँ (कि हमने ऐसा मोजिज़ा देखा है ताकि उनके सामने रिसालत को साबित कर सकें, और उनकी हिदायत का यह ज़रिया बन जाये)।

ईसा इब्ने मरियम (अ़लैहिस्सलाम) ने (जब देखा कि इस दरख़्वास्त में उनका मक़सद सही है तो हक़ तआ़ला से) दुआ़ की- ऐ अल्लाह! ऐ हमारे परवर्दिगार! हम पर आसमान से दस्तरख़्वान (यानी खाना) नाज़िल फ़रमाईये कि वह (दस्तरख़्वान) हमारे लिए यानी हम में जो अव्वल (यानी मौजूदा ज़माने में) हैं और जो बाद (के ज़माने में आने वाले) हैं सब के लिए ईद (यानी एक ख़ुशी की बात) हो जाए। (हाज़िरीन की ख़ुशी तो खाने से और दरख़्वास्त क़ुबूल होने से और बाद वालों की ख़ुशी अपने पूर्वजों पर इनाम होने से, और यह मक़सद तो ख़ास है मोमिनों के साथ) और (मेरी पैग़म्बरी पर) आपकी तरफ़ से एक निशानी हो जाये (कि मोमिनों का यक़ीन बढ़ जाये और उपस्थित व ग़ैर-उपस्थित इनकार करने वालों पर हुज्जत हो जाये, और यह मक़सद मोमिनों वग़ैरह सब के लिये आ़म है)। और आप हमको (वह दस्तरख़्वान यानी खाना) अ़ता फ़रमाईये, और आप सब अ़ता करने वालों से अच्छे हैं (क्योंकि सब का देना अपने फ़ायदे के लिये और आपका देना मख़्लूक़ के फ़ायदे के लिये है, इसलिये हम अपने नफ़े और फ़ायदे को सामने करके आपसे दस्तरख़्वान की दरख़्वास्त करते हैं)। हक़ तआ़ला ने (जवाब में) इरशाद फ़रमाया कि (आप लोगों से कह दीजिए कि) मैं वह खाना (आसमान से) तुम लोगों पर नाज़िल करने वाला हूँ, फिर जो शख़्स तुम में से हक़ न पहचानने का जुर्म करेगा (यानी उसके वाजिब हुक़ूक़ को अ़क़्ली और अ़मली तौर पर अदा न करेगा) तो मैं उसको ऐसी सज़ा दूँगा कि वह सज़ा (इस वक़्त के) दुनिया जहान वालों में से किसी को न दूँगा।

मआ़रिफ़ व मसाईल

मोमिन को मोजिज़ों का मुतालबा नहीं करना चाहिये

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ.

जब हवारियों (हज़रत ईसा के सहाबा और उनके मददगारों) ने ईसा अ़लैहिस्सलाम से आसमान से मायदा (दस्तरख़्वान) के उतरने का मुतालबा किया तो आपने जवाब में फ़रमाया कि

अगर तुम ईमान वाले हो तो अल्लाह तआ़ला से डरते रहो। इससे मालूम हुआ कि ईमान वाले बन्दे को यह मुनासिब नहीं कि वह इस क़िस्म की फ़रमाईश करके ख़ुदा तआ़ला को आज़माये, और उससे करिश्मों और चमत्कारों का मुतालबा करे, बल्कि उसको चाहिये कि रोज़ी वग़ैरह को उन्हीं साधनों और माध्यमों से तलब करे जो क़ुदरत ने मुक़र्रर कर रखे हैं।

जब नेमत असाधारण और बड़ी हो तो नाशुक्री का वबाल भी बड़ा होता है

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

فَإِنِّىٓ أُعَذِّبُهُۥ عَذَابًا لَّآ أُعَذِّبُهُۥٓ أَحَدًا مِّنَ ٱلْعَٰلَمِينَ.

इस आयत से मालूम हुआ कि जब नेमत ग़ैर-मामूली (असाधारण) और निराली होगी तो उसकी शुक्रगुज़ारी की ताकीद भी मामूली से बहुत बढ़कर होनी चाहिये, और नाशुक्री पर अ़ज़ाब भी ग़ैर-मामूली और निराला आयेगा।

मायदा (खाने से भरा दस्तरख़्वान) आसमान से नाज़िल हुआ था या नहीं? इस बारे में मुफ़स्सिरीन हज़रात का मतभेद है। अक्सरियत की राय है कि नाज़िल हुआ था। चुनाँचे तिर्मिज़ी शरीफ़ की हदीस में हज़रत अ़म्मार बिन यासिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है कि मायदा आसमान से नाज़िल हुआ, उसमें रोटी और गोश्त था। और इस हदीस में यह भी है कि उन लोगों ने (यानी उनमें से कुछ ने) ख़ियानत (बद-दियानती) की और अगले दिन के लिये उठाकर रखा, पस बन्दर और सुअर की सूरत में बदल गये। (अल्लाह तआ़ला हमें अपने ग़ज़ब से अपनी पनाह में रखे)

और इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि वे उसमें से खाते भी थे, जैसा कि "नअ्कुलु" (हम उसमें से खायें) में उनकी यह ग़र्ज़ भी ज़िक्र हुई है, अलबत्ता आगे के लिये रख लेना मना (वर्जित) था। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

وَإِذْ قَالَ ٱللَّهُ يَٰعِيسَى ٱبْنَ مَرْيَمَ ءَأَنتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ ٱتَّخِذُونِى وَأُمِّىَ إِلَٰهَيْنِ مِن دُونِ ٱللَّهِ ۖ قَالَ سُبْحَٰنَكَ مَا يَكُونُ لِىٓ أَنْ أَقُولَ مَا لَيْسَ لِى بِحَقٍّ ۚ إِن كُنتُ قُلْتُهُۥ فَقَدْ عَلِمْتَهُۥ ۚ تَعْلَمُ مَا فِى نَفْسِى وَلَآ أَعْلَمُ مَا فِى نَفْسِكَ ۚ إِنَّكَ أَنتَ عَلَّٰمُ ٱلْغُيُوبِ ﴿١١٦﴾ مَا قُلْتُ لَهُمْ إِلَّا مَآ أَمَرْتَنِى بِهِۦٓ أَنِ ٱعْبُدُوا۟ ٱللَّهَ رَبِّى وَرَبَّكُمْ ۚ وَكُنتُ عَلَيْهِمْ شَهِيدًا مَّا دُمْتُ فِيهِمْ ۖ فَلَمَّا تَوَفَّيْتَنِى كُنتَ أَنتَ ٱلرَّقِيبَ عَلَيْهِمْ ۚ وَأَنتَ عَلَىٰ كُلِّ شَىْءٍ شَهِيدٌ ﴿١١٧﴾ إِن تُعَذِّبْهُمْ فَإِنَّهُمْ عِبَادُكَ ۖ وَإِن تَغْفِرْ لَهُمْ فَإِنَّكَ أَنتَ ٱلْعَزِيزُ ٱلْحَكِيمُ ﴿١١٨﴾

قف النبي صلى الله عليه وسلم

व इज़् क़ालल्लाहु या ओसब्-न मर्य-म अ-अन्-त क़ुल्-त लिन्नासित्-तख़िज़ूनी व उम्मि-य इलाहैनि मिन् दूनिल्लाहि, क़ा-ल सुब्हान-क मा यकूनु ली अन् अक़ू-ल मा लै-स ली बिहक़्क़िन्, इन् कुन्तु क़ुल्तुहू फ़-क़द् अ़लिम्तहू तअ़्लमु मा फ़ी नफ़्सी व ला अअ़्लमु मा फ़ी नफ़्सि-क, इन्न-क अन्-त अ़ल्लामुल्-ग़ुयूब (116) मा क़ुल्तु लहुम् इल्ला मा अमर्तनी बिही अनिअ़्बुदुल्ला-ह रब्बी व रब्बकुम् व कुन्तु अ़लैहिम् शहीदम् मा दुम्तु फ़ीहिम् फ़-लम्मा तवफ़्फ़ैतनी कुन्-त अन्तर्रक़ी-ब अ़लैहिम्, व अन्-त अ़ला कुल्लि शैइन् शहीद (117) इन् तुअ़ज़्ज़िब्हुम् फ़-इन्नहुम् अ़िबादु-क व इन् तग़्फ़िर् लहुम् फ़-इन्न-क अन्तल् अ़ज़ीज़ुल्-हकीम (118)

और जब कहेगा अल्लाह ऐ ईसा मरियम के बेटे! क्या तूने कहा लोगों को कि ठहरा लो मुझको और मेरी माँ को दो माबूद सिवाय अल्लाह के? कहा तू पाक है मुझको यह लायक़ नहीं कि कहूँ ऐसी बात जिसका मुझको हक़ नहीं। अगर मैंने यह कहा होगा तो तुझको ज़रूर मालूम होगा, तू जानता है जो मेरे जी में है और मैं नहीं जानता जो तेरे जी में है, बेशक तू ही है जानने वाला छुपी बातों का। (116) मैंने कुछ नहीं कहा उनको मगर जो तूने हुक्म किया कि बन्दगी करो अल्लाह की जो रब है मेरा और तुम्हारा, और मैं उनकी ख़बर रखने वाला था जब तक उनमें रहा, फिर जब तूने मुझको उठा लिया तो तू ही था ख़बर रखने वाला उनकी, और तू हर चीज़ से ख़बरदार है। (117) अगर तू उनको अ़ज़ाब दे तो वे बन्दे हैं तेरे, और अगर तू उनको माफ़ कर दे तो तू ही है ज़बरदस्त हिक्मत वाला। (118)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त भी ज़िक्र के क़ाबिल है) जबकि अल्लाह तआ़ला (क़ियामत में हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम से काफ़िर ईसाईयों को सुनाने के लिये) फ़रमाएँगे कि ऐ ईसा इब्ने मरियम! (इन लोगों में जिनका अ़क़ीदा तस्लीस का था, यानी अल्लाह तआ़ला के साथ ईसा अ़लैहिस्सलाम और हज़रत मरियम अ़लैहस्सलाम को ख़ुदाई में शरीक मानते थे) क्या तुमने इन लोगों से कह दिया था कि ख़ुदा के अ़लावा मुझको (यानी ईसा अ़लैहिस्सलाम को) और मेरी माँ (यानी हज़रत मरियम) को भी दो माबूद क़रार दे लो? (ईसा अ़लैहिस्सलाम) अ़र्ज़ करेंगे कि (तौबा-तौबा मैं) तो

(ख़ुद अपने अ़क़ीदे में) आप (को शरीक से पाक समझता हूँ और हैं जैसा कि आप वास्तव में भी) पाक हैं (तो ऐसी हालत में) मुझको किसी तरह मुनासिब न था कि मैं ऐसी बात कहता जिस (के कहने) का मुझको कोई हक़ नहीं, (न अपने अ़क़ीदे के लिहाज़ से क्योंकि मैं एक ख़ुदा का क़ायल हूँ और न अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाने के एतिबार से क्योंकि मुझको ऐसा कोई पैग़ाम नहीं दिया गया था। और इस न कहने की मेरी दलील यह है कि) अगर मैंने (वास्तव में) यह कहा होगा तो आपको इसका (यक़ीनन) इल्म होगा, (मगर जब आपके इल्म में भी मैंने नहीं कहा तो वास्तव में भी नहीं कहा, और कहने की सूरत में आपको इसका इल्म होना इसलिये ज़रूरी है क्योंकि) आप तो मेरे दिल के अन्दर की बात भी जानते हैं (तो जो ज़बान से कहता उसका इल्म तो क्यों न होता) और मैं (तो दूसरी मख़्लूक़ात की तरह इतना आ़जिज़ हूँ कि) आपके इल्म में जो कुछ है उसको (बिना आपके बतलाये हुए) नहीं जानता, (जैसे दूसरी मख़्लूक़ात का भी यही हाल है, पस) तमाम ग़ैबों के जानने वाले आप ही हैं (सो जब अपना इस क़द्र बेबस होना और आपका कामिल होना मुझको मालूम है तो ख़ुदा होने में शिर्कत का दावा कैसे कर सकता हूँ। यहाँ तक तो इस बात के कहने की नफ़ी हुई, आगे इसके उलट कहने को साबित करने का बयान है कि) मैंने तो इनसे और कुछ नहीं कहा मगर सिर्फ़ वही (बात) जो आपने मुझसे कहने को फ़रमाया था, कि तुम अल्लाह की बन्दगी (इख़्तियार) करो, जो मेरा भी रब है और तुम्हारा भी रब है।

(यहाँ तक तो ईसा अ़लैहिस्सलाम ने अपनी हालत के मुताल्लिक़ अ़र्ज़ किया, आगे उन लोगों की हालत के मुताल्लिक़ अ़र्ज़ करते हैं। क्योंकि 'क्या तूने कहा कि ठहरा लो मुझे और मेरी माँ को माबूद' में अगरचे ज़ाहिर में तो सवाल इसका है कि आपने ऐसा कलिमा कहा है या नहीं? लेकिन इशारे के तौर पर इसका भी सवाल मालूम होता है कि यह अ़क़ीदा-ए-तस्लीस "तीन ख़ुदाओं के मानने का अ़क़ीदा" कहाँ से पैदा हुआ। पस ईसा अ़लैहिस्सलाम इस बारे में यूँ अ़र्ज़ करेंगे कि) और मैं उन (की हालत) पर बा-ख़बर (अवगत) रहा जब तक उनमें (मौजूद) रहा, (सो उस वक़्त तक का हाल तो मैंने ख़ुद देखा है उसके बारे में बयान कर सकता हूँ) फिर जब आपने मुझको उठा लिया (यानी पहली बार में तो ज़िन्दा आसमान की तरफ़ और दूसरी बार में वफ़ात के तौर पर) तो (उस वक़्त सिर्फ़) आप इन (के हालात) पर मुत्तला रहे, (उस वक़्त की मुझको ख़बर नहीं कि इनकी गुमराही का सबब क्या हुआ और क्योंकर हुआ) और आप हर चीज़ की पूरी ख़बर रखते हैं। (यहाँ तक तो अपना और उनका मामला अ़र्ज़ किया आगे उनके और हक़ तआ़ला के मामलात के मुताल्लिक़ अ़र्ज़ करते हैं कि) अगर आप इनको (इस अ़क़ीदे पर) सज़ा दें तो (तब भी आप मुख़्तार हैं, क्योंकि) ये आपके बन्दे हैं, (और आप इनके मालिक, और मालिक को हक़ है कि बन्दों को उनके जराईम पर सज़ा दे) और अगर आप इनको माफ़ फ़रमा दें तो (तब भी आप मुख़्तार हैं, क्योंकि) आप ज़बरदस्त (क़ुदरत वाले) हैं, (तो माफ़ी पर भी क़ादिर हैं और) हिक्मत वाले (भी) हैं (तो आपकी माफ़ी भी हिक्मत के मुवाफ़िक़ होगी, इसलिये इसमें भी कोई बुराई नहीं हो सकती। मतलब यह है कि दोनों हाल में आप मुख़्तार हैं,

मैं कुछ दख़ल नहीं देता। ग़र्ज़ कि हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम ने पहली अ़र्ज़ी "पाक है तू मुझको लायक़ नहीं............" में उन तीन ख़ुदाओं के मानने वालों के अ़क़ीदे और इसकी तालीम देने से अपना बरी और बेताल्लुक़ होना, दूसरी अ़र्ज़ी 'जब तक मैं इनमें रहा इनकी ख़बर रखने वाला था.........' में उनके इस तीन ख़ुदाओं वाले अ़क़ीदे के सबब को तफ़सील से जानने से बरी और बेख़बर होने तक से, और तीसरी अ़र्ज़ी 'अगर तू इनको अ़ज़ाब दे तो ये तेरे बन्दे हैं...........' में अपनी कोई राय और इच्छा तक ज़ाहिर करने से बरी और अलग होना ज़ाहिर कर दिया, और यही उद्देश्य था हक़ तआ़ला का ईसा अ़लैहिस्सलाम के साथ इन बातों और गुफ़्तगू के करने से। पस इससे उन काफ़िरों को अपनी नादानी पर पूरी सख़्ती व डाँट-डपट और अपनी नाकामी पर हसरत व मायूसी होगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों से मालूम होने वाली चन्द अहम बातें

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

وَإِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسٰى............ الخ.

"और जब कहेगा अल्लाह तआ़ला ऐ ईसा मरियम के बेटे! ...."

अल्लाह तआ़ला हर चीज़ को जानने वाले हैं, लिहाज़ा ईसा अ़लैहिस्सलाम से सवाल इसलिये नहीं फ़रमा रहे कि उनको मालूम नहीं है, बल्कि इससे मक़सद उनकी ईसाई क़ौम की मलामत और उन्हें फटकार लगाना है कि जिसको तुम ख़ुदा और माबूद मान रहे हो वह ख़ुद तुम्हारे अ़क़ीदे के ख़िलाफ़ अपनी बन्दगी का इक़रार कर रहा है, और तुम्हारे बोहतान (इल्ज़ाम) से वह बरी है। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

فَلَمَّا تَوَفَّيْتَنِيْ كُنْتَ اَنْتَ الرَّقِيْبَ عَلَيْهِمْ.

हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम की मौत या आसमान पर उठाने वग़ैरह की बहस सूरः आले इमरान में आयत नम्बर 55 के तहत गुज़र चुकी है, वहाँ देख लिया जाये।

"फ़लम्मा तवफ़्फ़ैतनी......" इस आयत से ईसा अ़लैहिस्सलाम की मौत और आसमान पर उठाने के इनकार पर दलील पकड़ना सही नहीं है, इसलिये कि यह गुफ़्तगू क़ियामत के दिन होगी, और उस वक़्त आसमान से उतरने के बाद आपको असली मौत हासिल हो चुकी होगी। चुनाँचे इमाम इब्ने कसीर ने हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से एक हदीस नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब क़ियामत का दिन होगा तो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतें बुलाई जायेंगी। फिर हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को बुलाया जायेगा, फिर अल्लाह तआ़ला उनको अपनी नेमतें याद दिलायेगा और उनको नज़दीक करके फ़रमायेगा कि ऐ ईसा मरियम के बेटे!

اُذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَعَلٰى وَالِدَتِكَ.

(याद कर मेरा एहसान जो हुआ है तुझ पर और तेरी माँ पर......) यहाँ तक कि फ़रमायेगाः

يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَ اَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوْنِىْ وَاُمِّىَ اِلٰهَيْنِ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ.

(क्या तूने कहा लोगों को कि ठहरा लो मुझको और मेरी माँ को दो माबूद अल्लाह के अ़लावा?) हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम इनकार करेंगे कि परवर्दिगार मैंने नहीं कहा है। फिर ईसाईयों से सवाल होगा तो ये लोग कहेंगे कि हाँ इसने हमको यही हुक्म दिया था। उसके बाद उनको दोज़ख़ की तरफ़ हाँका जायेगा।

अल्लाह तआ़ला का क़ौलः

اِنْ تُعَذِّبْهُمْ فَاِنَّهُمْ عِبَادُكَ.

यानी आप अपने बन्दों पर ज़ुल्म और बेजा सख़्ती नहीं कर सकते, इसलिये अगर इनको सज़ा देंगे तो यह पूरी तरह इन्साफ़ व हिक्मत पर आधारित होगा, और मान लीजिये कि माफ़ कर दें तो यह माफ़ी भी किसी मजबूरी या बेबसी की वजह से न होगी क्योंकि आप ज़बरदस्त और ग़ालिब हैं, इसलिये कोई मुजरिम आपकी पकड़ और क़ब्ज़े से निकलकर भाग नहीं सकता, कि उस पर आप क़ाबू न पा सकें। और चूँकि हकीम (हिक्मत वाले) हैं, इसलिये यह भी मुम्किन नहीं कि किसी मुजरिम को यूँही बेमौक़ा छोड़ दें। बहरहाल जो फ़ैसला आप इन मुजरिमों के हक़ में करेंगे वह बिल्कुल हकीमाना और क़ादिराना होगा।

हज़रत मसीह अ़लैहिस्सलाम का यह कलाम चूँकि मेहशर में होगा जहाँ काफ़िरों के हक़ में कोई शफ़ाअ़त और रहम वग़ैरह की फ़रियाद नहीं हो सकती, इसलिये हज़रत मसीह ने "अ़ज़ीज़ुन हकीम" की जगह "ग़फ़ूरुर्रहीम" वग़ैरह सिफ़ात को इख़्तियार नहीं फ़रमाया, जबकि इसके विपरीत हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने दुनिया में अपने परवर्दिगार से अ़र्ज़ किया थाः

رَبِّ اِنَّهُنَّ اَضْلَلْنَ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ فَمَنْ تَبِعَنِىْ فَاِنَّهٗ مِنِّىْ وَمَنْ عَصَانِىْ فَاِنَّكَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ.

(ऐ परवर्दिगार इन बुतों ने बहुत से आदमियों को गुमराह कर दिया, तो जो उनमें से मेरे ताबे हुआ वह मेरा आदमी है और जिसने मेरी नाफ़रमानी की तो फिर तू ग़फ़ूरुर्रहीम है) यानी अभी मौक़ा है कि तू अपनी रहमत से आगे चलकर उनको तौबा और हक़ की तरफ़ लौटने की तौफ़ीक़ देकर पिछले गुनाहों को माफ़ फ़रमा दे। (फ़वाइदे उस्मानी)

इमाम इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक मर्तबा पूरी रात एक ही आयत पढ़ते रहे, और वह आयत 'इन तुअ़ज़्ज़िब्हुम् फ़इन्नहुम् इबादु-क......' है (यानी यही आयत नम्बर 118 थी जिसकी यह तफ़सीर बयान हो रही है)। फिर जब सुबह हुई तो मैंने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! आप यही आयत पढ़ते रहे, रुकूअ़ इसी से और सज्दे इसी से करते रहे, यहाँ तक कि सुबह हो गयी, तो फ़रमाया कि मैंने अपने परवर्दिगार से अपने वास्ते शफ़ाअ़त की दरख़्वास्त की तो मुझे अ़ता फ़रमाई, और वह इन्शा-अल्लाह तआ़ला मिलने वाली है ऐसे शख़्स के वास्ते जिसने अल्लाह तआ़ला के साथ किसी चीज़ को शरीक न किया हो।

दूसरी रिवायत में आता है कि आपने यह आयत (नम्बर 118) पढ़कर आसमान की तरफ़ हाथ उठाये और कहा "अल्लाहुम्-म उम्मती" यानी मेरे पाक परवर्दिगार मेरी उम्मत की तरफ़ रहमत की नज़र फ़रमा, और आप रोने लगे। इस पर अल्लाह तआ़ला ने हज़रत जिब्रील के ज़रिये रोने की वजह मालूम फ़रमाई, तो आपने जिब्रील अमीन को अपनी उम्मत के बारे में सवाल से आगाह किया, इस पर अल्लाह तआ़ला ने हज़रत जिब्रील से फ़रमाया कि फिर जाओ और (हज़रत) मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) से कह दो कि हम जल्द ही तुम्हारी उम्मत के बारे में तुमको रज़ामन्द कर देंगे, और तुमको नाख़ुश न करेंगे।

قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰدِقِيْنَ صِدْقُهُمْ ۚ لَهُمْ جَنّٰتٌ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۚ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ ۚ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ ۞ لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فِيْهِنَّ ۚ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۞

क़ालल्लाहु हाज़ा यौमु यन्फ़अुस्-सादिक़ी-न सिद्क़ुहुम्, लहुम् जन्नातुन् तज्री मिन् तह्तिहल्-अन्हारु ख़ालिदी-न फ़ीहा अ-बदन्, रज़ियल्लाहु अ़न्हुम् व रज़ू अ़न्हु, ज़ालिकल् फ़ौज़ुल् अ़ज़ीम (119) लिल्लाहि मुल्कुस्समावाति वल्अर्ज़ि व मा फ़ीहिन्-न, व हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (120) ❁	फ़रमाया अल्लाह ने यह दिन है कि काम आएगा सच्चों के उनका सच, उनके लिये हैं बाग़ जिनके नीचे बहती हैं नहरें, रहा करेंगे उन्हीं में हमेशा, अल्लाह राज़ी हुआ उनसे और वे राज़ी हुए उससे, यही है बड़ी कामयाबी। (119) अल्लाह ही के लिये सल्तनत है आसमानों की और ज़मीन की और जो कुछ उनके बीच में है, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। (120) ❁

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

ऊपर दोनों रुकूअ़ में क़ियामत के दिन आमाल व अहवाल का हिसाब व किताब और सवाल व जवाब का ज़िक्र है, अब आगे उस तफ़्तीश व जाँच का नतीजा ज़िक्र किया जाता है।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ज़िक्र हुई इस तमाम बातचीत और गुफ़्तगू के बाद) अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाएँगे कि यह (क़ियामत का दिन) वह दिन है कि जो लोग (दुनिया में अ़क़ीदों, आमाल और अपने अक़वाल के) सच्चे थे (कि वह सच्चा होना अब ज़ाहिर हो रहा है, जिनमें नबी हज़रात जिनसे

ख़िताब हो रहा है और मोमिन लोग जिनके ईमान की नबी व फ़रिश्ते सब गवाही देंगे, सब दाख़िल हैं। और इसमें रसूलों और हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम की तस्दीक़ की तरफ़ भी इन गुफ़्तगुओं में इशारा हो गया। ग़र्ज़ कि ये सब हज़रात जो दुनिया में सच्चे थे) इनका सच्चा होना (आज) इनके काम आएगा (और वह काम आना यह है कि) इनको (जन्नत के) बाग़ (रहने को) मिलेंगे जिनके (महलों के) नीचे नहरें जारी होंगी, जिनमें वे हमेशा-हमेशा के लिये रहेंगे। (और ये नेमतें उनको क्यों न मिलें क्योंकि) अल्लाह उनसे राज़ी और ख़ुश और वे अल्लाह तआ़ला से राज़ी और ख़ुश हैं (और जो शख़्स राज़ी और पसन्दीदा हो उसको ऐसी ही नेमतें मिलती हैं)। यह (जो कुछ ज़िक्र हुआ) बड़ी भारी कामयाबी है (कि दुनिया की कोई कामयाबी इसके बराबर नहीं हो सकती। अब सूरत ख़त्म होने को है। पूरी सूरत में कुछ बुनियादी और ऊपर के अहकाम बयान हुए हैं, इसलिये आख़िर में यह बयान फ़रमाया गया है कि चूँकि अल्लाह तआ़ला पूरी कायनात का मालिक है, इसलिये उसे ये अहकाम देने का हक़ है और बन्दों को ये अहकाम पूरी तरह मानने चाहियें। क्योंकि अल्लाह तआ़ला हर चीज़ पर क़ुदरत रखते हैं, वह नाफ़रमानी की सूरत में सज़ा और फ़रमाँबरदारी की सूरत में इनाम देने पर क़ादिर हैं। चुनाँचे फ़रमाया गया) अल्लाह ही की हुकूमत है आसमानों की और ज़मीन की, और उन चीज़ों की जो इन (आसमानों और ज़मीन) में मौजूद हैं, और वह हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

फ़ायदा

قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصّٰدِقِيْنَ صِدْقُهُمْ.

आ़म तौर पर हक़ीक़त के मुताबिक़ क़ौल को सच्चाई और ख़िलाफ़े हक़ीक़त को झूठ समझा जाता है, लेकिन क़ुरआन व सुन्नत से मालूम होता है कि सच और झूठ आ़म है यानी क़ौल और अ़मल दोनों को शामिल है। चुनाँचे इस हदीस में ख़िलाफ़े हक़ीक़त अ़मल को झूठ कहा गया है:

مَنْ تَحَلّٰى بِمَالَمْ يُعْطَ كَانَ كَلَابِسِ ثَوْبَىْ زُوْرٍ.

"यानी अगर कोई अपने आपको ऐसे ज़ेवर से सजाये जो उसको नहीं दिया गया, यानी किसी ऐसी सिफ़त या अ़मल का दावा करे जो उसमें नहीं है तो गोया उसने झूठ के दो कपड़े पहने।" (मिश्कात शरीफ़)

एक दूसरी हदीस में ज़ाहिर में और तन्हाई में अच्छी तरह नमाज़ पढ़ने वाले को सच्चा बन्दा कहा गया है। इरशाद है:

اِنَّ الْعَبْدَ اِذَا صَلّٰى فِى الْعَلَانِيَةِ فَاَحْسَنَ وَصَلّٰى فِى السِّرِّ فَاَحْسَنَ قَالَ اللّٰهُ تَعَالٰى هٰذَا عَبْدِىْ حَقًّا (مشكوة)

"यानी जो आदमी ऐलानिया (सबके सामने) अच्छी तरह नमाज़ पढ़ता है और वह तन्हाई में भी इसी तरह अदा करता है तो ऐसे आदमी के बारे में अल्लाह फ़रमाते हैं कि यह मेरा सचमुच बन्दा है।"

رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوْا عَنْهُ.

यानी अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वे अल्लाह से। एक हदीस में आता है कि जन्नत मिलने के बाद अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि बड़ी नेमत यह है कि मैं तुमसे राज़ी हुआ, अब कभी तुम पर नाराज़ न हूँगा।

ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيْمُ.

यानी यही बड़ी कामयाबी है। ज़ाहिर है कि इससे बढ़कर और क्या कामयाबी होगी कि मालिक व ख़ालिक़ राज़ी हैं। बस अल्लाह ही के लिये है शुरू और आख़िर की तमाम तारीफ़ें।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूरः मायदा की तफ़सीर पूरी हुई)

، الاسماء الحسنى فادعوه بها . .

Wa lilahl asma ulhusna fad uhu biha

यह सूरत मदनी है। इसमें 165 आयतें
और 20 रुकूअ़ हैं।

" Twakkaltu 'alā Khāliqī "

सूरः अन्आम
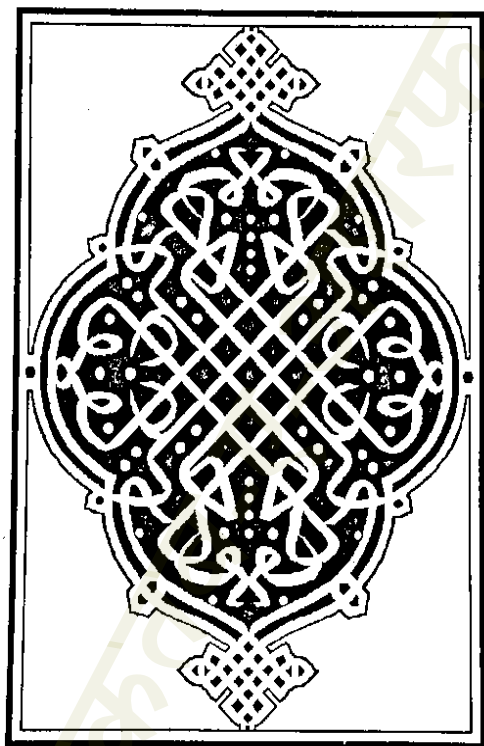
اٰیاتها ١٦٥ (٦) سُوْرَةُ الْاَنْعَامِ مَكِّيَّةٌ (٥٥) رکوعاتها ٢٠

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ ۝

الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَجَعَلَ الظُّلُمٰتِ وَالنُّوْرَ ثُمَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ یَعْدِلُوْنَ ۝ هُوَ الَّذِیْ خَلَقَكُمْ مِّنْ طِیْنٍ ثُمَّ قَضٰۤی اَجَلًا ؕ وَاَجَلٌ مُّسَمًّی عِنْدَهٗ ثُمَّ اَنْتُمْ تَمْتَرُوْنَ ۝ وَهُوَ اللّٰهُ فِی السَّمٰوٰتِ وَفِی الْاَرْضِ ؕ یَعْلَمُ سِرَّكُمْ وَجَهْرَكُمْ وَیَعْلَمُ مَا تَكْسِبُوْنَ ۝ وَمَا تَاْتِیْهِمْ مِّنْ اٰیَةٍ مِّنْ اٰیٰتِ رَبِّهِمْ اِلَّا كَانُوْا عَنْهَا مُعْرِضِیْنَ ۝ فَقَدْ كَذَّبُوْا بِالْحَقِّ لَمَّا جَآءَهُمْ ؕ فَسَوْفَ یَاْتِیْهِمْ اَنْۢبٰٓؤُا مَا كَانُوْا بِهٖ یَسْتَهْزِءُوْنَ ۝

सूरः अन्आम मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 165 आयतें और 20 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी ख़-लक़स्-समावाति वल्अर्-ज़ व ज-अ़लज़्-ज़ुलुमाति वन्नू-र, सुम्मल्लज़ी-न क-फ़रू बिरब्बिहिम् यअ़्दिलून (1) हुवल्लज़ी ख़-ल-क़कुम् मिन् तीनिन् सुम्-म क़ज़ा अ-जलन्, व अ-जलुम् मुसम्मन् अ़िन्दहू सुम्-म अन्तुम् तम्तरून (2) व हुवल्लाहु फ़िस्समावाति व फ़िल्अर्ज़ि, यअ़्लमु सिर्रकुम् व जह्रकुम् व यअ़्लमु मा तक्सिबून (3) व मा तअ्तीहिम् मिन् आयतिम् मिन् आयाति रब्बिहिम् इल्ला कानू	सब तारीफ़ें अल्लाह के लिये हैं जिसने पैदा किये आसमान और ज़मीन और बनाया अंधेरा और उजाला, फिर भी ये काफ़िर अपने रब के साथ औरों को बराबर किए देते हैं। (1) वही है जिसने पैदा किया तुमको मिट्टी से फिर मुक़र्रर कर दिया एक वक़्त और एक मुद्दत मुक़र्रर है अल्लाह के नज़दीक, फिर भी तुम शक करते हो। (2) और वही है अल्लाह आसमानों में और ज़मीन में, जानता है तुम्हारा छुपा और खुला और जानता है जो कुछ तुम करते हो। (3) और नहीं आई उनके पास कोई निशानी

अन्हा मुअ्रिज़ीन (4) फ़-क़द् कज़्ज़बू बिल्हक़्क़ि लम्मा जा-अहुम् फ़सौ-फ़ यअ्तीहिम् अम्बा-उ मा कानू बिही यस्तह्ज़िऊन (5)	उनके रब की निशानियों में से मगर करते हैं उससे बेपरवाही। (4) सो बेशक झुठलाया उन्होंने हक़ को जब उन तक पहुँचा, सो अब आई जाती है उनके आगे हक़ीक़त उस बात की जिस पर हंसते थे। (5)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तमाम तारीफ़ें अल्लाह ही के लायक़ हैं जिसने आसमानों को और ज़मीन को पैदा किया और अंधेरियों को और नूर को बनाया। फिर भी काफ़िर लोग (इबादत में दूसरों को) अपने रब के बराबर क़रार देते हैं। वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम (सब) को (आदम अलैहिस्सलाम के माध्यम से) मिट्टी से बनाया, फिर (तुम्हारे मरने का) एक वक़्त मुक़र्रर किया, और (दोबारा ज़िन्दा होकर उठने का) मुक़र्ररा वक़्त ख़ास उसी के (यानी अल्लाह ही के) नज़दीक (मालूम) है, फिर भी तुम (में से कुछ) शक रखते हो (कि क़ियामत को असंभव समझते हो हालाँकि जिसने पहली ज़िन्दगी बख़्शी दोबारा ज़िन्दगी देना उसके लिये क्या मुश्किल है) और वही है अल्लाह (सच्चा माबूद) आसमानों में भी और ज़मीन में भी, (यानी और सब माबूद बातिल हैं) वह तुम्हारे छुपे हालात को भी और ज़ाहिरी हालात को भी (बराबर तौर पर) जानते हैं, और (विशेष तौर पर तुम जो कुछ ज़ाहिर में या बातिन में) अमल करते हो (जिस पर जज़ा व सज़ा का मदार है) उसको जानते हैं। और उन (काफ़िरों) के पास कोई निशानी भी उनके रब की निशानियों में से नहीं आती, मगर वे उससे मुँह ही मोड़ लेते हैं। सो (चूँकि यह उनकी आदत बनी हुई है) उन्होंने उस सच्ची किताब (यानी क़ुरआन) को भी झूठा बतलाया जबकि वह उनके पास पहुँची। सो (उनका यह झुठलाना ख़ाली न जायेगा बल्कि) जल्दी ही उनको ख़बर मिल जाएगी उस चीज़ की जिसके साथ ये लोग मज़ाक़-ठट्ठा किया करते थे (इससे मुराद अ़ज़ाब है जिसकी ख़बर क़ुरआन में सुनकर हंसते थे, और इसकी ख़बर मिलने का मतलब यह है कि जब अ़ज़ाब नाज़िल होगा तो इस ख़बर का सच और सही होना आँखों से देख लेंगे)।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि सूरः अन्आम की एक ख़ुसूसियत यह है कि वह पूरी सूरत सिवाय चन्द आयतों के एक ही बार में मक्का में इस तरह नाज़िल हुई है कि सत्तर हज़ार फ़रिश्ते उसके साथ में तस्बीह पढ़ते हुए आये थे। तफ़सीर के इमामों में से इमाम मुजाहिद, कलबी, क़तादा रहमतुल्लाहि अ़लैहिम वग़ैरह का भी तक़रीबन यही क़ौल है।

अबू इस्हाक़ अस्फ़राईनी ने फ़रमाया कि यह सूरत तौहीद (अल्लाह के अकेला माबूद और

ख़ुदा होने) के तमाम उसूल व नियम पर मुश्तमिल है। इस सूरत को कलिमा **अल्हम्दु लिल्लाहि** से शुरू किया गया, जिसमें यह ख़बर दी गयी है कि सब तारीफ़ें अल्लाह तआ़ला के लिये हैं, और इस ख़बर से मक़सद लोगों को हम्द (तारीफ़) की तालीम देना है, और तालीम के इस ख़ास तरीक़े में इस तरफ़ इशारा है कि वह किसी की हम्द व तारीफ़ का मोहताज नहीं, कोई तारीफ़ करे या न करे वह अपने ज़ाती कमाल के एतिबार से ख़ुद-बख़ुद क़ाबिले तारीफ़ है। इस जुमले के बाद आसमान व ज़मीन और अंधेरे, उजाले के पैदा करने का ज़िक्र फ़रमाकर उसके महमूद (तारीफ़ का हक़दार) होने की दलील भी बतला दी कि जो ज़ात इस अ़ज़ीम क़ुदरत व हिक्मत वाली है वही हम्द व तारीफ़ की मुस्तहिक़ हो सकती है।

इस आयत में "समावात" (यानी आसमानों) को जमा (बहुवचन) और "अर्ज़" (ज़मीन) को मुफ़रद (एक वचन) ज़िक्र फ़रमाया है। अगरचे दूसरी आयत में आसमान की तरह ज़मीन के भी सात होने का ज़िक्र मौजूद है, शायद इसमें इस तरफ़ इशारा हो कि सात आसमान अपनी शक्ल व सूरत और दूसरी सिफ़ात के एतिबार से आपस में बहुत विशेषता रखते हैं, और सातों ज़मीनें एक दूसरे की हमशक्ल और एक तरह की हैं, इसलिये उनको एक अ़दद के जैसा क़रार दिया गया। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसी तरह "ज़ुलुमात" (अंधेरियों) को जमा (बहुवचन) और "नूर" (रोशनी और उजाले) को मुफ़रद (एक वचन) ज़िक्र फ़रमाने में इस तरफ़ इशारा है कि नूर का मतलब है सही रास्ता और सिराते मुस्तक़ीम, और वह एक ही है, और ज़ुलुमात से इशारा है ग़लत रास्ते की तरफ़, और वो हज़ारों हैं। (तफ़सीरे मज़हरी व बहरे मुहीत)

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि आसमानों और ज़मीन के बनाने को लफ़्ज़ 'ख़-ल-क़' (पैदा किया) से ताबीर किया गया है और अंधेरे व उजाले के बनाने को लफ़्ज़ "ज-अ़-ल" (बनाने) से। इसमें इस तरफ़ इशारा है कि अन्धेरे और उजाले, आसमान व ज़मीन की तरह मुस्तक़िल अपनी ज़ात से क़ायम रहने वाली चीज़ें नहीं, बल्कि पेश आने वाली हालतों और सिफ़ात में से हैं, और 'ज़ुलुमात' (अंधेरों) को 'नूर' से पहले शायद इसलिये ज़िक्र फ़रमाया गया कि इस जहान में असल 'ज़ुलुमात' हैं, और नूर ख़ास-ख़ास चीज़ों से जुड़ा हुआ है। जब वो चीज़ें सामने होती हैं रोशनी पैदा होती है, जब नहीं होतीं तो अन्धेरा रहता है।

मक़सद इस आयत का तौहीद की हक़ीक़त और उसकी स्पष्ट दलील को बयान फ़रमाकर दुनिया की उन तमाम क़ौमों को तंबीह करना है जो या तो सिरे से तौहीद (कायनात का एक माबूद होने) की क़ायल नहीं, या क़ायल होने के बावजूद तौहीद की हक़ीक़त को छोड़ बैठी हैं।

मजूस (आग को पूजने वाले) दुनिया के दो ख़ालिक़ (पैदा करने वाले) मानते हैं- यज़दान और अहरमन। यज़दान को ख़ैर का पैदा करने वाला और अहरमन को बुराई का पैदा करने वाला क़रार देते हैं, और इन्हीं दोनों को नूर व ज़ुल्मत का भी नाम देते हैं।

हिन्दुस्तान के मुश्रिक तैंतीस करोड़ देवताओं को ख़ुदा का शरीक बनाते हैं। आर्य समाज वाले तौहीद (एक ख़ुदा के होने और उसी के लायक़े इबादत होने) के क़ायल होने के बावजूद

रूह और माद्दे को क़दीम (न ख़त्म होने वाला) और ख़ुदा तआ़ला को क़ुदरत व ख़ल्कत (ताक़त व इख़्तियार और पैदा करने वाला होने) से आज़ाद क़रार देकर तौहीद की हक़ीक़त से हट गये। इसी तरह ईसाई तौहीद के क़ायल होने के साथ हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम और उनकी वालिदा को ख़ुदा तआ़ला का शरीक व साझी बनाने लगे, और फिर तौहीद के अ़क़ीदे को थामने के लिये उनको एक तीन और तीन एक का ग़ैर-माक़ूल नज़रिया इख़्तियार करना पड़ा। और अ़रब के मुश्रिक लोग तो ख़ुदाई की तक़सीम में यहाँ तक आगे बढ़े कि हर पहाड़ का हर पत्थर उनके नज़दीक इनसानी मख़्लूक़ का माबूद बन सकता था। ग़र्ज़ कि इनसान जिसको अल्लाह तआ़ला ने तमाम कायनात का मख़दूम और तमाम मख़्लूक़ात से बेहतर बनाया था, यह जब राह से भटका तो इसने न सिर्फ़ चाँद, सूरज और सितारों को बल्कि आग, पानी और पेड़, पत्थर यहाँ तक कि कीड़ों-मकोड़ों को अपना मस्जूद व माबूद (सज्दे और इबादत के लायक़), ज़रूरतों को पूरा करने वाला और मुश्किलों को हल करने वाला बना लिया।

क़ुरआने करीम ने इस आयत में अल्लाह तआ़ला को आसमान व ज़मीन का ख़ालिक़ और अंधेरे उजाले का बनाने वाला बतलाकर इन सब ग़लत ख़्यालात को नकार दिया, कि नूर व ज़ुल्मत (रोशनी व अंधेरा) और आसमान व ज़मीन और उनमें पैदा होने वाली तमाम चीज़ें अल्लाह तआ़ला की पैदा की हुई और बनाई हुई हैं, तो फिर उनको कैसे ख़ुदा तआ़ला का शरीक व साझी किया जा सकता है।

पहली आयत में बड़े जहान यानी पूरी दुनिया की बड़ी-बड़ी चीज़ों को अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ व मोहताज बतलाकर इनसान को तौहीद के अ़क़ीदे का सही सबक़ दिया गया है। उसके बाद दूसरी आयतों में इनसान को बतलाया है कि तेरा वजूद ख़ुद एक छोटी सी दुनिया है, अगर उसी की शुरूआ़त और अंत और रहने-सहने पर नज़र करे तो अ़क़ीदा-ए-तौहीद एक खुली हक़ीक़त बनकर सामने आ जाये। इसमें इरशाद फ़रमायाः

هُوَالَّذِیْ خَلَقَكُمْ مِّنْ طِیْنٍ ثُمَّ قَضٰۤی اَجَلًا.

यानी अल्लाह ही वह ज़ात है जिसने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, कि आदम अ़लैहिस्सलाम को मिट्टी के ख़मीर से पैदा फ़रमाकर उनमें जान डाल दी, और आ़म इनसानों की ग़िज़ा मिट्टी से निकलती है, ग़िज़ा से नुत्फ़ा (वीर्य का क़तरा) और नुत्फ़े से इनसान की तख़्लीक़ (पैदाईश) अ़मल में आती है।

हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुना है कि अल्लाह तआ़ला ने आदम अ़लैहिस्सलाम को मिट्टी की एक ख़ास मात्रा से पैदा फ़रमाया, जिसमें पूरी ज़मीन के हिस्से शामिल किये गये हैं। यही वजह है कि आदम की औलाद रंग व रूप और अख़्लाक़ व आ़दात में भिन्न और अलग-अलग हैं, कोई काला कोई गोरा, कोई सुर्ख़, कोई सख़्त कोई नर्म, कोई अच्छी ख़स्लत व आ़दत वाला, कोई बुरी तबीयत वाला होता है। (तफ़सीरे मज़हरी, इब्ने अ़दी की रिवायत से, हसन सनद के साथ)

यह तो इनसान की शुरूआती पैदाईश का ज़िक्र था, इसके बाद इन्तिहा की दो मन्ज़िलों का ज़िक्र है- एक इनसान की व्यक्तिगत इन्तिहा (आख़िरी हद और अंत) जिसको मौत कहा जाता है, दूसरी पूरी इनसानी बिरादरी और उसके कायनाती सेवकों सब के मजमूए की इन्तिहा, जिसको क़ियामत कहा जाता है। इनसान की व्यक्तिगत इन्तिहा के लिये फ़रमायाः

ثُمَّ قَضٰى اَجَلًا.

यानी इनसान की पैदाईश के बाद अल्लाह तआला ने उसकी बक़ा व ज़िन्दगी के लिये एक मियाद निर्धारित कर दी है। उस मियाद पर पहुँचने का नाम मौत है, जिसको अगरचे इनसान नहीं जानता मगर अल्लाह के फ़रिश्ते जानते हैं, बल्कि ख़ुद इनसान भी इस हैसियत से अपनी मौत को जानता है कि हर वक़्त हर जगह अपने आस-पास इनसानों को मरते देखता है।

इसके बाद पूरे आलम की इन्तिहा यानी क़ियामत का ज़िक्र इस तरह फ़रमायाः

وَاَجَلٌ مُّسَمًّى عِنْدَهٗ.

यानी एक और मियाद मुक़र्रर है, जिसका इल्म सिर्फ़ अल्लाह तआला के पास है, उसकी मियाद का पूरा इल्म न किसी फ़रिश्ते को है न किसी इनसान को।

कलाम का ख़ुलासा यह है कि पहली आयत में 'आलम-ए-अक्बर' यानी पूरी दुनिया का हाल यह बतलाया गया कि वह अल्लाह तआला की पैदा की हुई और बनाई हुई है, और दूसरी आयत में इसी तरह 'आलम-ए-असग़र' यानी इनसान का अल्लाह की मख़्लूक़ होना बयान फ़रमाया। फिर इनसान को ग़फ़लत से जगाने के लिये यह बतलाया कि हर इनसान की एक ख़ास उम्र है जिसके बाद उसकी मौत यक़ीनी है और यह ऐसी चीज़ है जिसका देखना और अनुभव हर इनसान को अपने आस-पास में हर वक़्त होता रहता है। "व अ-जलुम् मुसम्मन् इन्दहू" में यह हिदायत दी गयी है कि इनसान की व्यक्तिगत मौत से पूरे आलम की उमूमी मौत यानी क़ियामत पर दलील लेना एक वैचारिक और तबई चीज़ है, इसलिये क़ियामत के आने में किसी शक की गुंजाईश नहीं। इसलिये आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ثُمَّ اَنْتُمْ تَمْتَرُوْنَ.

यानी ऐसी स्पष्ट दलीलों के बावजूद तुम क़ियामत के बारे में शक और शुब्हात निकालते हो।

तीसरी आयत में पहली दो आयतों के मज़मून का नतीजा बयान फ़रमाया है कि अल्लाह ही वह ज़ात है जो आसमानों और ज़मीन में इबादत व फ़रमाँबरदारी के लायक़ है, और वही तुम्हारे ज़ाहिर व बातिन के हर हाल और हर क़ौल व फ़ेल से पूरा वाक़िफ़ है।

चौथी आयत में ग़फ़लत में पड़े इनसान की हठधर्मी और ख़िलाफ़े हक़ ज़िद की शिकायत इस तरह फ़रमाई गयी है किः

وَمَا تَاْتِيْهِمْ مِّنْ اٰيَةٍ مِّنْ اٰيٰتِ رَبِّهِمْ اِلَّا كَانُوْا عَنْهَا مُعْرِضِيْنَ.

यानी अल्लाह तआला की तौहीद की स्पष्ट दलीलों और खुली निशानियों के बावजूद इनकारी इनसानों ने यह तरीक़ा इख़्तियार कर रखा है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से जो भी निशानी उनकी हिदायत के लिये भेजी जाती है वे उससे मुँह फेर लेते हैं, उसमें ज़रा ग़ौर नहीं करते।

पाँचवीं आयत में इसी ग़फ़लत से काम लेने की और अधिक तफ़सील कुछ वाक़िआत की तरफ़ इशारा करके बयान फ़रमाई है कि:

فَقَدْ كَذَّبُوْا بِالْحَقِّ لَمَّا جَآءَهُمْ.

यानी जब हक़ उनके सामने आया तो उन्होंने हक़ को झुठला दिया। हक़ से मुराद क़ुरआन भी हो सकता है और नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पवित्र ज़ात भी।

क्योंकि हुज़ूरे पुर नूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम शुरू उम्र से आख़िर तक उन्हीं अरब के क़बीलों के बीच रहे। बचपन से जवानी और जवानी से बुढ़ापा उन्हीं की आँखों के सामने आया। उनको यह भी पूरी तरह मालूम था कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किसी इनसान से बिल्कुल कोई तालीम हासिल नहीं की, यहाँ तक कि अपना नाम भी ख़ुद न लिखते थे। पूरे अरब में आपका लक़ब (उपनाम) उम्मी मशहूर था। चालीस साल की उम्र इसी हाल में उनके बीच गुज़री कि न कभी शे'र व शायरी से दिलचस्पी हुई न कभी कोई इल्म व तालीम से लगाव हुआ। फिर चालीस साल पूरे होते ही अचानक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बाने मुबारक से वो हक़ाईक़ (सच्चाईयाँ और हक़ीक़तें) व मआरिफ़ और उलूम व फ़ुनून जारी हो गये कि दुनिया के बड़े-बड़े माहिर फ़लॉस्फ़र (बुद्धिमान और विज्ञानी) भी उनके सामने आजिज़ नज़र आये। अरबी भाषा व साहित्य के तमाम माहिर लोगों को अपने लाये हुए कलाम का मुक़ाबला करने के लिये चुनौती दे दी। ये लोग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को शिकस्त देने के लिये अपनी जान व माल, इज़्ज़त व आबरू, औलाद व ख़ानदान सब कुछ क़ुरबान करने के लिये हर वक़्त तुले रहते थे, उनमें से किसी की यह जुर्रत न हुई कि इस चुनौती को क़ुबूल करके क़ुरआन की एक आयत की मिसाल ही पेश कर देते।

इसी तरह नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और क़ुरआन का अपना वजूद ख़ुद हक़्क़ानियत (सच्चाई) की बहुत बड़ी निशानी थी। इसके अलावा हुज़ूरे पाक के हाथों हज़ारों मोजिज़े (अल्लाह की तरफ़ से ज़ाहिर होने वाले करिश्मे) और खुली-खुली निशानियाँ ऐसी ज़ाहिर हुईं जिनका इनकार कोई अक़्लमन्द और इन्साफ़ पसन्द इनसान नहीं कर सकता, मगर उन लोगों ने इन सारी निशानियों को पूरी तरह झुठला दिया। इसी लिये इस आयत में इरशाद फ़रमायाः

فَقَدْ كَذَّبُوْا بِالْحَقِّ لَمَّا جَآءَهُمْ.

आयत के आख़िर में उनके कुफ़्र व इनकार और झुठलाने के बुरे अन्जाम की तरफ़ इशारा करने के लिये इरशाद फ़रमायाः

فَسَوْفَ يَاْتِيْهِمْ اَنْبٰٓؤُا مَا كَانُوْا بِهٖ يَسْتَهْزِءُوْنَ.

यानी आज तो ये अन्जाम से ग़ाफ़िल लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मोजिज़ों और आपकी लाई हुई हिदायतों और क़ियामत व आख़िरत सब का मज़ाक़ उड़ाते हैं, लेकिन बहुत जल्द वह वक़्त आने वाला है जब ये सारे तथ्य और हक़ीक़तें इनकी आँखों के सामने आ जायेंगी, क़ियामत क़ायम होगी, ईमान व अ़मल का हिसाब देना होगा और हर शख़्स अपने किये की जज़ा व सज़ा पायेगा। मगर उस वक़्त का यक़ीन व इक़रार उनके काम न आयेगा, क्योंकि वह अ़मल का दिन नहीं बल्कि बदले का दिन होगा। अभी ग़ौर व फ़िक्र की फ़ुर्सत ख़ुदा तआ़ला ने दे रखी है इसको ग़नीमत समझकर अल्लाह की आयतों (और निशानियों) पर ईमान लाने ही में दुनिया व आख़िरत की कामयाबी है।

أَلَمْ يَرَوْا كَمْ أَهْلَكْنَا مِن قَبْلِهِم مِّن قَرْنٍ مَّكَّنَّاهُمْ فِي الْأَرْضِ مَا لَمْ نُمَكِّن لَّكُمْ وَأَرْسَلْنَا السَّمَاءَ عَلَيْهِم مِّدْرَارًا وَجَعَلْنَا الْأَنْهَارَ تَجْرِي مِن تَحْتِهِمْ فَأَهْلَكْنَاهُم بِذُنُوبِهِمْ وَأَنشَأْنَا مِن بَعْدِهِمْ قَرْنًا آخَرِينَ ۝ وَلَوْ نَزَّلْنَا عَلَيْكَ كِتَابًا فِي قِرْطَاسٍ فَلَمَسُوهُ بِأَيْدِيهِمْ لَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا إِنْ هَٰذَا إِلَّا سِحْرٌ مُّبِينٌ ۝ وَقَالُوا لَوْلَا أُنزِلَ عَلَيْهِ مَلَكٌ ۖ وَلَوْ أَنزَلْنَا مَلَكًا لَّقُضِيَ الْأَمْرُ ثُمَّ لَا يُنظَرُونَ ۝ وَلَوْ جَعَلْنَاهُ مَلَكًا لَّجَعَلْنَاهُ رَجُلًا وَلَلَبَسْنَا عَلَيْهِم مَّا يَلْبِسُونَ ۝ وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِّن قَبْلِكَ فَحَاقَ بِالَّذِينَ سَخِرُوا مِنْهُم مَّا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِئُونَ ۝ قُلْ سِيرُوا فِي الْأَرْضِ ثُمَّ انظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِينَ ۝

ع

अलम् यरौ कम् अह्लक्ना मिन् क़ब्लिहिम् मिन् क़र्निम् मक्कन्नाहुम् फ़िल्अर्ज़ि मा लम् नुमक्किल्लकुम् व अर्सल्नस्समा-अ अ़लैहिम् मिद्रारंव्-व जअ़ल्नल्-अन्हा-र तज्री मिन् तह्तिहिम् फ़-अह्लक्नाहुम् बिज़ुनूबिहिम् व अन्शअ्ना मिम्-बअ़्दिहिम् क़र्नन् आख़रीन (6) व लौ नज़्ज़ल्ना अ़लै-क किताबन् फ़ी क़िर्तासिन् फ़-ल-मसूहु बिऐदीहिम्	क्या देखते नहीं कि कितनी हलाक कर दीं हमने उनसे पहले उम्मतें जिनको जमा दिया था हमने मुल्क में इतना कि जितना तुमको नहीं जमाया, और छोड़ दिया हमने उन पर आसमान को लगातार बरसता हुआ, और बना दीं हमने नहरें बहतीं हुईं उनके नीचे, फिर हलाक किया हमने उनको उनके गुनाहों पर और पैदा किया हमने उनके बाद और उम्मतों को। (6) और अगर उतारें हम तुझ पर लिखा हुआ काग़ज़ फिर छू लें वे उसको अपने हाथों से तो ज़रूर कहेंगे काफ़िर- यह नहीं है

लक़ालल्लज़ी-न क-फ़रू इन् हाज़ा इल्ला सिह्रुम् मुबीन (7) व क़ालू लौ ला उन्ज़ि-ल अ़लैहि म-लकुन्, व लौ अन्ज़ल्ना म-लकल् लक़ुज़ियल्-अम्रु सुम्-म ला युन्ज़रून (8) व लौ जअ़ल्नाहु म-लकल् ल-जअ़ल्नाहु रजुलंव्-व ल-लबस्ना अ़लैहिम् मा यल्बिसून (9) व ल-क़दिस्तुह्ज़ि-अ बिरुसुलिम्-मिन् क़ब्लि-क फ़हा-क़ बिल्लज़ी-न सख़िरू मिन्हुम् मा कानू बिही यस्तह्ज़िऊन (10) ❁	मगर खुला जादू। (7) और कहते हैं- क्यों नहीं उतरा इस पर कोई फ़रिश्ता और अगर हम उतारें फ़रिश्ता तो तय हो जाये क़िस्सा, फिर उनको मोहलत भी न मिले। (8) और अगर हम रसूल बनाकर भेजते किसी फ़रिश्ते को तो वह भी आदमी ही की सूरत में होता, और उनको इसी शुब्हे में डालते जिसमें अब पड़ रहे हैं। (9) और बिला शुब्हा हंसी करते रहे हैं रसूलों से तुझसे पहले, फिर घेर लिया उनसे हंसी करने वालों को उस चीज़ ने कि जिस पर हंसा करते थे। (10) ❁
क़ुल् सीरू फ़िल्अर्ज़ि सुम्मन्ज़ुरू कै-फ़ का-न आ़क़ि-बतुल् मुकज़्ज़िबीन (11)	तू कह दे कि सैर करो (घूमो-फिरो) मुल्क में, फिर देखो क्या अन्जाम हुआ झुठलाने वालों का। (11)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

क्या उन्होंने देखा नहीं कि हम उनसे पहले कितनी जमाअ़तों को (अ़ज़ाब से) हलाक कर चुके हैं, जिनको हमने ज़मीन (यानी दुनिया) में ऐसी (जिस्मानी और माली) ताक़त दी थी कि तुमको वह ताक़त नहीं दी। और हमने उन पर ख़ूब बारिशें बरसाईं, और हमने उनके (खेत और बाग़ों के) नीचे से नहरें जारी कीं, (जिससे खेती और फलों की ख़ूब तरक़्क़ी हुई और वे ख़ुशहाली की ज़िन्दगी बसर करने लगे) फिर (इस ताक़त व क़ुदरत और सामान व साधनों के होते हुए) हमने उनको उनके गुनाहों के सबब (तरह-तरह के अ़ज़ाब से) हलाक कर डाला, और उनके बाद दूसरी जमाअ़तों को पैदा कर दिया। (तो अगर तुम पर भी अ़ज़ाब नाज़िल कर दें तो ताज्जुब क्या है? और इन लोगों के बैर व दुश्मनी की यह हालत है कि) अगर हम काग़ज़ पर लिखी हुई कोई तहरीर आप पर नाज़िल फ़रमाते फिर उसको ये लोग अपने हाथों से छू भी लेते (जैसा कि इनका मुतालबा था कि लिखी हुई किताब आसमान से आ जाये, और हाथों से छू लेने का ज़िक्र करके नज़र बन्दी के शुब्हे को भी दूर कर दिया) तब भी ये काफ़िर लोग यही कहते कि यह कुछ भी नहीं, मगर खुला जादू है (क्योंकि जब बात मानने का इरादा ही नहीं तो हर दलील में कोई न कोई नई बात निकाल लेना क्या मुश्किल है)।

और ये लोग यूँ कहते हैं कि इन (पैग़म्बर) के पास कोई फ़रिश्ता (जिसको हम देखें और बातें सुनें) क्यों नहीं भेजा गया? (हक़ तआला फ़रमाते हैं) और अगर हम कोई फ़रिश्ता (इसी तरह) भेज देते तो सारा क़िस्सा ही ख़त्म हो जाता, फिर (फ़रिश्ते के नाज़िल होने के बाद) इनको ज़रा भी मोहलत न दी जाती। (क्योंकि अल्लाह की आदत यह है कि जिन लोगों का मुँह माँगा मोजिज़ा दिखला दिया गया अगर फिर भी उन्होंने ईमान से इनकार किया तो फ़ौरन बिना मोहलत के अ़ज़ाब से हलाक कर दिया जाता है, और जब तक ऐसा मतलूबा मोजिज़ा न देखें तो दुनिया में मोहलत मिलती रहती है) और अगर हम इस (पैग़ाम पहुँचाने वाले) को फ़रिश्ता ही क़रार देते (कि उसको फ़रिश्ते की शक्ल में भेजें तो उसकी हैबत इनसानों से बरदाश्त न हो) तो (इसलिये) हम उस (फ़रिश्ते) को आदमी ही (की शक्ल) बनाते, और हमारे इस फ़ेल से फिर उन पर वही शुब्हा और एतिराज़ होता जो शुब्हा व एतिराज़ अब कर रहे हैं (यानी उस फ़रिश्ते को इनसान समझकर फिर भी एतिराज़ करते, ग़र्ज़ कि फ़रिश्ते का नाज़िल होना जिसका ये मुतालबा करते हैं अगर इसको पूरा कर दिया जाये तो इनको इससे कोई फ़ायदा तो इसलिये नहीं हो सकता कि फ़रिश्ते को फ़रिश्ते की शक्ल में देखने पर इनको क़ुदरत नहीं, और इनसान की शक्ल में भेजने से इनका शुब्हा और एतिराज़ दूर नहीं होगा। और दूसरी तरफ़ इनको नुक़सान यह पहुँचेगा कि न मानने पर ख़ुद ही अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ हो जायेंगे)।

और (आप इनके बेहूदा मुतालबों से ग़म न करें क्योंकि) वाक़ई आप से पहले जो पैग़म्बर हुए हैं उनका भी (मुख़ालिफ़ों की तरफ़ से) हंसी और मज़ाक़ उड़ाया गया है, फिर जिन लोगों ने उनसे हंसी-मज़ाक़ किया था उनको उस अ़ज़ाब ने आ घेरा जिसका वे मज़ाक़ उड़ाते थे (जिससे मालूम हुआ कि इनके इस व्यवहार से अम्बिया को कोई नुक़सान नहीं पहुँचता, बल्कि ये ख़ुद इन्हीं के लिये अ़ज़ाब और मुसीबत है)।

(और अगर ये लोग पहली उम्मतों पर आये अ़ज़ाब का इनकार करने लगें तो) आप (इनसे) फ़रमा दीजिए कि ज़रा ज़मीन में चलो-फिरो, फिर देख लो कि झुठलाने वालों का क्या अन्जाम हुआ।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह के अहकाम और रसूलों की तालीमात से मुँह मोड़ने वालों या मुख़ालफ़त करने वालों पर सख़्त सज़ा की धमकी का ज़िक्र था, इन आयतों में उन्हीं इनकारियों का रुख़ अपने आस-पास के हालात और पहले ज़माने के ऐतिहासिक वाक़िआ़त की तरफ़ फेरकर उनको इब्रत व नसीहत हासिल करने का मौक़ा दिया गया है। बिला शुब्हा दुनिया की तारीख़ इब्रतों (सीख लेने) की एक किताब है, जिसको अगर समझ से काम लेकर देखा जाये तो वह हज़ारों नसीहतों से ज़्यादा असरदार नसीहत है। एक अ़क्लमन्द का यह जुमला बहुत ही पसन्दीदा है कि "दुनिया एक बेहतरीन किताब है और ज़माना बेहतरीन शिक्षक।"

यही वजह है कि क़ुरआने करीम का एक बहुत बड़ा हिस्सा क़िस्से और तारीख़ है, लेकिन

आम तौर पर ग़फ़लत में डूबे इनसान ने दुनिया की तारीख़ को भी एक तफ़रीही मश्ग़ले की हैसियत से ज़्यादा अहमियत नहीं दी, बल्कि इस नसीहत व हिक्मत की बेहतरीन किताब को भी अपनी ग़फ़लत व नाफ़रमानी का एक ज़रिया बना लिया। पिछले क़िस्सों और कहानियों का या तो सिर्फ़ यह काम रह गया कि नींद से पहले उनको नींद लाने वाली दवा की जगह इस्तेमाल किया जाये, और या फिर ख़ाली समय में दिल बहलाने और वक़्त गुज़ारने का मश्ग़ला बना दिया जाये।

शायद इसी लिये क़ुरआने करीम ने दुनिया की तारीख़ की रूह को इब्रत व नसीहत के लिये लिया है, मगर आम दुनिया की तारीख़ी और अफ़सानवी किताबों की तरह नहीं, जिनमें क़िस्सा बयान करना या तारीख़ पेश करना ख़ुद ही एक मक़सद होता है, इसी लिये तारीख़ी वाक़िआत को निरन्तर क़िस्से की सूरत से बयान नहीं फ़रमाया, बल्कि क़िस्से का जितना टुकड़ा जिस मामले और जिस हाल से सम्बन्धित था वहाँ उतना ही टुकड़ा ज़िक्र कर दिया, फिर किसी दूसरी जगह उस क़िस्से का दूसरा टुकड़ वहाँ की मुनासबत से बयान फ़रमा दिया। इसमें इस हक़ीक़त की तरफ़ इशारा हो सकता है कि कोई ख़बर या क़िस्सा कभी ख़ुद मक़सूद नहीं होता, बल्कि हर ख़बर से कोई हुक्म या किसी काम की मनाही और हर वाक़िए के इज़हार से कोई अमली नतीजा निकालना मक़सद होता है, इसलिये उस वाक़िए का जितना हिस्सा इस मक़सद के लिये ज़रूरी है उसको पढ़ो, आगे बढ़ो, अपने हालात का जायज़ा लो और गुज़रे वाक़िआत से सबक़ हासिल करके अपनी इस्लाह (सुधार) करो।

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के डायरेक्ट मुख़ातब यानी मक्का वालों के बारे में यह इरशाद फ़रमाया कि क्या इन लोगों ने अपने से पहले गुज़रने वाली क़ौमों का हाल नहीं देखा, जिससे इनको सीख व नसीहत हासिल होती। और देखने से मुराद उनके हाल पर ग़ौर व फ़िक्र करना है, क्योंकि वे क़ौमें इस वक़्त तो उनके सामने नहीं थीं जिनको वे देख सकते। इसके बाद पहली क़ौमों की हलाकत व बरबादी का ज़िक्र फ़रमायाः

كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِّنْ قَرْنٍ.

– यानी हमने इनसे पहले कितने क़र्नों (ज़मानों) को हलाक कर दिया।

लफ़्ज़ **क़र्न** उस जमाअ़त को भी कहा जाता है जो एक वक़्त और एक ज़माने में इकट्ठी मौजूद हो, और ज़माने के एक लम्बे हिस्से को भी, जिसके बारे में दस साल से लेकर सौ साल तक के विभिन्न अक़वाल हैं। मगर कुछ वाक़िआत और हदीस की रिवायतों से ताईद इसकी होती है कि लफ़्ज़ **क़र्न** सौ साल के लिये बोला जाता है, जैसा कि एक हदीस में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अ़ब्दुल्लाह बिन बिश्र माज़नी को फ़रमाया था कि तुम एक क़र्न ज़िन्दा रहोगे, और वह पूरे एक सौ साल ज़िन्दा रहे। और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक बच्चे को दुआ़ दी कि क़र्न भर ज़िन्दा रहो तो वह पूरे सौ साल ज़िन्दा रहा।

उलेमा की अक्सरियत ने हदीसः

خَيْرُ الْقُرُوْنِ قَرْنِىْ ثُمَّ الَّذِيْنَ يَلُوْنَهُمْ ثُمَّ الَّذِيْنَ يَلُوْنَهُمْ.

का यही मतलब बयान किया है कि हर क़र्न को सौ साल माना गया है।

इस आयत में पहले गुज़री क़ौमों के बारे में अव्वल यह बतलाया गया कि उनको हक़ तआ़ला ने ज़मीन में वह वुस्अ़त व क़ुव्वत (ख़ुशहाली और ताक़त) और ज़िन्दगी गुज़ारने के सामान व साधन अ़ता फ़रमाये थे, जो बाद के लोगों को नसीब भी नहीं हुए। लेकिन जब उन्हीं ने रसूलों को झुठलाया और अल्लाह के अहकाम का उल्लंघन किया तो यह सारा मक़ाम व मर्तबा और माल व दौलत अल्लाह के अ़ज़ाब के सामने बेकार साबित हुआ, और सब के सब नेस्त व नाबूद होकर रह गये। तो आज के मुख़ातब मक्का वाले जिनको न आ़द व समूद क़ौमों जैसी ताक़त व क़ुव्वत हासिल है, न शाम व यमन मुल्कों वालों जैसी ख़ुशहाली, उनको पहले गुज़री क़ौमों के वाक़िआ़त से सबक़ हासिल करना और अपने आमाल का जायज़ा लेना चाहिये, कि मुख़ालफ़त व नाफ़रमानी करके इनका क्या अन्जाम होगा।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَاَنْشَاْنَا مِنْۢ بَعْدِهِمْ قَرْنًا اٰخَرِيْنَ.

यानी अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत का सिर्फ़ यही तसर्रुफ़ नहीं था कि बड़ी-बड़ी दबदबे व शान और हुकूमत व सल्तनत की मालिक और डीलडोल व ताक़त वाली क़ौमों को आँख झपकते में हलाक व बरबाद कर दिया, बल्कि उनको हलाक करते ही उनकी जगह दूसरी क़ौमें पैदा करके ऐसी तरह बसा दिया कि देखने वालों को यह भी महसूस न हो सका कि यहाँ से कोई इनसान कम भी हुआ है।

और हक़ तआ़ला की इस क़ुदरत व हिक्मत को वैसे तो हर ज़माने में हर वक़्त में देखा जाता रहता है कि रोज़ाना हज़ारों लाखों इनसान हलाक होते रहते हैं, मगर कहीं ख़ालीपन नज़र नहीं आता, कहीं यह महसूस नहीं होता कि यहाँ के आदमी हलाक हो गये तो इसमें बसने वाले न रहेः

ख़ुदा जाने यह दुनिया जलवा-गाहे नाज़ है किसकी?
हज़ारों उठ गये रौनक़ वही बाक़ी है मज्लिस की

एक मर्तबा अ़रफ़ात के मैदान में जहाँ तक़रीबन दस लाख इनसानों का मजमा था, इस तरफ़ नज़र गयी कि आज से तक़रीबन सत्तर-अस्सी साल पहले इस सारे मजमे में से किसी इनसान का वजूद न था, और इस जगह पर तक़रीबन इतने ही इनसान दूसरे मौजूद थे, जिनका आज नाम व निशान नहीं है। इस तरह इनसानों के हर इज्तिमे (भीड़) और लोगों के हर झुरमुट को जब उसके अतीत व भविष्य के साथ मिलाकर देखा जाये तो एक बहुत ही असरदार नसीहत करने वाला नज़र आता है। सो कैसी शान है अल्लाह की जो तमाम बनाने वालों से बढ़कर बनाने वाला है।

दूसरी आयत एक ख़ास वाकिए में नाज़िल हुई, कि अ़ब्दुल्लाह बिन अबी उमैया ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने एक मुख़ालफ़त भरा मुतालबा पेश किया और कहा कि मैं आप पर उस वक़्त तक ईमान नहीं ला सकता जब तक कि मैं यह वाक़िआ़ न देख लूँ कि आप आसमान में चढ़ जायें, और वहाँ से हमारे सामने एक किताब लेकर आयें, जिसमें मेरा नाम लेकर यह हो कि मैं आपकी तस्दीक़ करूँ। और यह सब कहकर यह भी कह दिया कि अगर आप यह सब कुछ कर भी दिखायें मैं तो तब भी मुसलमान होता नज़र नहीं आता।

और अ़जीब इत्तिफ़ाक़ यह है कि फिर यही सज्जन मुसलमान हुए और ऐसे हुए कि इस्लाम के ग़ाज़ी (मुजाहिद) बनकर ग़ज़्वा-ए-ताईफ़ में शहीद हुए।

क़ौम के ऐसे बेजा मुख़ालफ़त भरे मुतालबे और मज़ाक़ उड़ाने के रंग में गुफ़्तगू व बातचीत ने माँ-बाप से ज़्यादा मेहरबान रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दिल पर क्या असर किया होगा, इसका सही अन्दाज़ा हम नहीं कर सकते, सिर्फ़ वह शख़्स महसूस कर सकता है जिसको क़ौम की बेहतरी व कामयाबी की फ़िक्र रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरह लगी हो।

इसी लिये इस आयत में आपको तसल्ली देने के लिये इरशाद फ़रमाया गया कि इनके ये मुतालबे किसी ग़र्ज़ और मक़सद के लिये नहीं, न इनको अ़मल करना मक़सूद है। इनका हाल तो यह है कि जो कुछ ये तलब कर रहे हैं अगर इससे भी ज़्यादा आपकी सच्चाई की स्पष्ट सूरतें इनके सामने आ जायें तब भी ये क़ुबूल न करें। मसलन हम उनकी फ़रमाईश के मुताबिक़ आसमान से काग़ज़ पर लिखी हुई किताब उतार दें और सिर्फ़ यही नहीं कि वे आँखों से देख लें जिसमें नज़र-बन्दी या जादू वग़ैरह का शुब्हा रहे, बल्कि वे उस किताब को अपने हाथों से छूकर भी देख लें कि सिर्फ़ ख़्याल नहीं, हक़ीक़त है। मगर चूँकि उनकी सारी बातें सिर्फ़ दुश्मनी व मुख़ालफ़त की वजह से हैं तो फिर भी यही कहेंगे किः

إِنْ هٰذَآ إِلَّا سِحْرٌ مُّبِينٌ.

"यानी यह तो खुला हुआ जादू है।"

तीसरी आयत के उतरने का भी एक वाक़िआ़ है कि यही अ़ब्दुल्लाह बिन अबी उमैया, नज़र बिन हारिस और नौफ़ल बिन ख़ालिद एक मर्तबा इकट्ठे होकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और यह मुतालबा पेश किया कि हम तो आप पर तब ईमान लायेंगे जबकि आप आसमान से एक किताब लेकर आयें और उसके साथ चार फ़रिश्ते आयें जो इसकी गवाही दें कि यह किताब अल्लाह ही की तरफ़ से आई है, और यह कि आप अल्लाह के रसूल हैं।

'इसका जवाब हक़ तआ़ला ने एक तो यह दिया कि ये ग़ाफ़िल लोग ऐसे मुतालबे करके अपनी मौत व तबाही को दावत दे रहे हैं, क्योंकि अल्लाह का क़ानून यह है कि जब कोई क़ौम किसी पैग़म्बर से किसी ख़ास मोजिज़े का मुतालिबा करे, और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से

उनका माँगा हुआ मोजिज़ा दिखला दिया जाये, तो अगर वे फिर भी मानने और इस्लाम लाने में ज़रा सी भी देरी करें तो फिर उनको सार्वजनिक अ़ज़ाब के ज़रिये हलाक कर दिया जाता है। यह क़ौम (यानी मक्का वाले) भी यह मुतालबा किसी नेक नीयती से तो कर न रही थी, जिससे मान लेने की उम्मीद की जाती, इसलिये फ़रमायाः

لَوْ اَنْزَلْنَا مَلَكًا لَّقُضِيَ الْاَمْرُ ثُمَّ لَا يُنْظَرُوْنَ.

यानी अगर हम इनका माँगा हुआ मोजिज़ा दिखला दें कि फ़रिश्ते भेज दें और यह क़ौम मानने वाली तो है नहीं, तो उस मोजिज़े को देखने के बाद भी जब यह ख़िलाफ़वर्ज़ी करेगी तो अल्लाह का हुक्म इनके हलाक करने के लिये जारी हो जायेगा, और उसके बाद इनको ज़रा सी भी मोहलत न दी जायेगी। इसलिये इनको समझना चाहिये कि इनकी माँगी हुई कोई निशानी अगर ज़ाहिर नहीं की गयी तो इसमें इनकी ख़ैर (भलाई) है।

इसी बात का एक दूसरा जवाब चौथी आयत में दूसरे अन्दाज़ से यह दिया गया कि ये सवाल करने वाले अ़जीब बेवक़ूफ़ हैं कि फ़रिश्तों के नाज़िल करने का मुतालबा करते हैं, क्योंकि फ़रिश्तों के नाज़िल होने की दो सूरतें हैं- एक तो यह कि फ़रिश्ता अपनी असली शक्ल व सूरत में सामने आ जाये तो उसकी हैबत (डर और दहशत) को तो कोई इनसान बरदाश्त नहीं कर सकता, बल्कि दहशत के मारे फ़ौरन मर जाने का ख़तरा है।

दूसरी सूरत यह है कि फ़रिश्ता इनसानी शक्ल में आये, जैसे जिब्रीले अमीन नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास बहुत मर्तबा इनसानी शक्ल में आये हैं, तो उस सूरत में इस सवाल करने वाले को जो एतिराज़ आप सल्ल. पर है वही उस फ़रिश्ते पर भी होगा, कि यह उसको एक इनसान ही समझेगा।

इन तमाम दुश्मनी भरे और मुख़ालफ़त पर आधारित सवालात के जवाब देने के बाद पाँचवीं आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तसल्ली के लिये इरशाद फ़रमाया कि यह मज़ाक़ उड़ाने और तकलीफ़ पहुँचाने का मामला जो आपकी क़ौम आपके साथ कर रही है कुछ आप ही के साथ ख़ास नहीं, आप से पहले भी सब रसूलों को ऐसे दिल दुखाने वाले और हिम्मत तोड़ने वाले वाक़िआ़त से साबक़ा पड़ा है, मगर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी, और अन्जाम यह हुआ कि मज़ाक़ उड़ाने वाली क़ौम को उस अ़ज़ाब ने आ पकड़ा जिसका वे मज़ाक़ उड़ाया करते थे।

ख़ुलासा यह है कि आपका काम अहकाम की तब्लीग़ है, वह करके आप अपने दिल को फ़ारिग़ फ़रमा लें, उसका असर किसी ने कुछ लिया या नहीं इसकी निगरानी आपके ज़िम्मे नहीं, इसलिये इसमें मशग़ूल होकर आप अपने दिल को रन्जीदा और दुखी न करें।

قُلْ لِّمَنْ مَّا فِى السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضِ ؕ قُلْ لِّلّٰهِ ؕ كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ؕ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيْهِ ؕ اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْٓا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝ وَلَهٗ مَا سَكَنَ فِى الَّيْلِ وَ النَّهَارِ ؕ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَتَّخِذُ وَلِيًّا فَاطِرِ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضِ وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ ؕ قُلْ اِنِّىْٓ اُمِرْتُ اَنْ اَكُوْنَ اَوَّلَ مَنْ اَسْلَمَ وَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝

क़ुल्-लिमम्-मा फ़िस्समावाति वल्अर्ज़ि क़ुल्-लिल्लाहि, क-त-ब अ़ला नफ़्सिहिर्रह्म-त, ल-यज्मअ़न्नकुम् इला यौमिल्-क़ियामति ला रै-ब फ़ीहि, अल्लज़ी-न ख़सिरू अन्फ़ु-सहुम् फ़हुम् ला युअ्मिनून (12) व लहू मा स-क-न फ़िल्लैलि वन्नहारि, व हुवस्समीअ़ुल् अ़लीम (13) क़ुल् अग़ैरल्लाहि अत्तख़िज़ु वलिय्यन् फ़ातिरिस्समावाति वल्अर्ज़ि व हु-व युत्अिमु व ला युत्अ़मु, क़ुल् इन्नी उमिर्तु अन् अकू-न अव्व-ल मन् अस्ल-म व ला तकूनन्-न मिनल्-मुश्रिकीन (14)	पूछ कि किसका है जो कुछ कि है आसमानों और ज़मीन में, कह दे अल्लाह का है। उसने लिखी है अपने ज़िम्मे मेहरबानी, अलबत्ता तुमको इकट्ठा कर देगा कियामत के दिन तक कि उसमें कुछ शक नहीं, जो लोग नुकसान में डाल चुके अपनी जानों को वही ईमान नहीं लाते। (12) और अल्लाह ही का है जो कुछ कि आराम पकड़ता है रात में और दिन में, और वही है सब कुछ सुनने वाला जानने वाला। (13) तू कह दे क्या और किसी को बनाऊँ अपना मददगार अल्लाह के अलावा, जो बनाने वाला है आसमानों और ज़मीन का और वह सबको खिलाता है और उसको कोई नहीं खिलाता। कह दे कि मुझको हुक्म हुआ है कि सबसे पहले हुक्म मानूँ और तू हरगिज़ न हो शिर्क वाला। (14)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन मुख़ालिफ़ों से हुज्जत पूरी करने के तौर पर) कहिये कि जो कुछ आसमानों और ज़मीन में मौजूद है, यह सब किसकी मिल्क है? (अव्वल तो वे भी यही जवाब देंगे जिससे तौहीद साबित होगी, और अगर किसी वजह से जैसे मग़लूब होने के डर से जवाब न दें तो) आप कह दीजिए कि सब अल्लाह ही की मिल्क है, (और उनसे यह भी कह दीजिए कि) उसने (यानी अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल से तौबा करने वालों के साथ) मेहरबानी फ़रमाना अपने ऊपर

लाज़िम फ़रमा लिया है। (और यह भी कह दीजिए कि अगर तुमने तौहीद को क़ुबूल न किया तो फिर सज़ा भी भुगतनी पड़ेगी, क्योंकि) तुमको ख़ुदा तआ़ला क़ियामत के दिन (क़ब्रों से ज़िन्दा उठाकर मैदाने हश्र में) जमा करेंगे (और क़ियामत की हालत यह है कि) उसमें कोई शक नहीं, (मगर) जिन लोगों ने अपने को (यानी अपनी अ़क्ल व नज़र को) ज़ाया (यानी बेकार) कर दिया है सो वे ईमान न लाएँगे। (और उनसे हुज्जत पूरी करने के तौर पर यह भी कहिये कि) और उसी की (यानी अल्लाह ही की मिल्क) है सब जो कुछ रात और दिन में रहते हैं। (इसके और इससे पहली आयत 'क़ुल्-लिमम्-मा फ़िस्समावाति.......' के मजमूए का हासिल यह निकाला कि जितनी चीज़ें किसी जगह में हैं या किसी ज़माने में हैं सब अल्लाह की मम्लूक हैं) और वही है बड़ा सुनने वाला, बड़ा जानने वाला।

(फिर तौहीद यानी अल्लाह के एक और तन्हा माबूद होने को साबित करने के बाद उनसे) आप कहिए कि क्या अल्लाह के सिवा जो कि आसमानों और ज़मीन के पैदा करने वाले हैं और जो (सब को) खाने को देते हैं और उनको कोई खाने को नहीं देता, (क्योंकि वह खाने पीने की आवश्यकता से बालातर हैं, तो क्या ऐसे अल्लाह के सिवा) किसी को अपना माबूद क़रार दूँ? (आप इनकार के इस सवालिया अन्दाज़ की वज़ाहत में ख़ुद) फ़रमा दीजिए (कि मैं ग़ैरुल्लाह को माबूद कैसे क़रार दे सकता हूँ जो अ़क्ल व किताबी हुक्म के ख़िलाफ़ है) कि मुझको यह हुक्म हुआ है कि सबसे पहले मैं इस्लाम क़ुबूल करूँ (जिसमें तौहीद का अ़क़ीदा भी आ गया) और (मुझको यह कहा गया है कि) तुम मुश्रिकों में से हरगिज़ न होना।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आयत 'क़ुल्-लिमम्-मा फ़िस्समावाति.......' (यानी आयत नम्बर 12) में काफ़िरों से सवाल किया गया है कि आसमान व ज़मीन और उनकी तमाम कायनात का मालिक कौन है? फिर ख़ुद ही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़बाने मुबारक से यह जवाब इरशाद फ़रमाया कि सब का मालिक अल्लाह है। काफ़िरों के जवाब का इन्तिज़ार करने के बजाय ख़ुद ही जवाब देने की वजह यह है कि यह जवाब मक्का के काफ़िरों के नज़दीक भी मुसल्लम (माना हुआ) है, वे अगरचे शिर्क व बुत-परस्ती में मुब्तला थे मगर ज़मीन व आसमान और तमाम कायनात का मालिक अल्लाह तआ़ला ही को मानते थे।

لَيَجْمَعَنَّكُمْ إِلَى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ.

में लफ़्ज़ "इला" या तो "फ़ी" (में) के मायने में है, और मुराद यह है कि अल्लाह तआ़ला तमाम पहलों और बाद वालों को क़ियामत के दिन में जमा फ़रमा देंगे, और या क़ब्रों में जमा करना मुराद है, तो मतलब यह होगा कि क़ियामत तक सब इनसानों को क़ब्रों में जमा करते रहेंगे, यहाँ तक कि क़ियामत के दिन में सब को ज़िन्दा करेंगे। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ.

सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला ने मख़्लूक़ात को पैदा फ़रमाया तो एक तहरीर अपने ज़िम्मे वायदे के तौर पर लिख ली, जो अल्लाह तआ़ला ही के पास है, जिसका मज़मून यह है:

إِنَّ رَحْمَتِي تَغْلِبُ عَلَى غَضَبِي.

यानी मेरी रहमत मेरे ग़ज़ब पर ग़ालिब रहेगी। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْٓا اَنْفُسَهُمْ.

इसमें इशारा है कि आयत के शुरू में जो अल्लाह तआ़ला की रहमत आ़म होने का ज़िक्र है काफ़िर व मुश्रिक अगर उससे मेहरूम हुए तो वे ख़ुद अपने अ़मल से मेहरूम हुए, उन्होंने रहमत के हासिल करने का यक़ीनी तरीक़ा यानी ईमान इख़्तियार नहीं किया। (तफ़सीरे क़ुर्तुबी)

وَلَهٗ مَا سَكَنَ فِي الَّيْلِ وَالنَّهَارِ.

यहाँ या तो सुकून से मुराद जमाव और ठहराव है, यानी जो चीज़ जहान के रात और दिन में मौजूद है वह सब अल्लाह ही की मिल्क है, और यह भी हो सकता है कि मुराद सुकून व हरकत का मजमूआ़ हो, यानी 'मा स-क-न व मा तहर्र-क' और ज़िक्र सिर्फ़ सुकून का किया गया हरकत जो उसके मुक़ाबिल है वह ख़ुद-बख़ुद समझ में आ सकती है।

قُلْ اِنِّيْٓ اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبِّيْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ ۝ مَنْ يُّصْرَفْ عَنْهُ يَوْمَئِذٍ فَقَدْ رَحِمَهٗ ۭ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْمُبِيْنُ ۝ وَاِنْ يَّمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهٗٓ اِلَّا هُوَ ۭ وَاِنْ يَّمْسَسْكَ بِخَيْرٍ فَهُوَ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِهٖ ۭ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ ۝ قُلْ اَيُّ شَيْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً ۭ قُلِ اللّٰهُ ڐ شَهِيْدٌۢ بَيْنِيْ وَبَيْنَكُمْ ۣ وَاُوْحِيَ اِلَيَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ ۭ اَىِٕنَّكُمْ لَتَشْهَدُوْنَ اَنَّ مَعَ اللّٰهِ اٰلِهَةً اُخْرٰي ۭ قُلْ لَّآ اَشْهَدُ ۚ قُلْ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ وَّاِنَّنِيْ بَرِيْۗءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ ۝ اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا يَعْرِفُوْنَ اَبْنَاۗءَهُمْ ۘ اَلَّذِيْنَ خَسِرُوْٓا اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝ۧ وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰي عَلَي اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰيٰتِهٖ ۭ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

وقف لازم — ع ٢/٨

क़ुल् इन्नी अख़ाफ़ु इन् अ़सैतु रब्बी अ़ज़ा-ब यौमिन् अ़ज़ीम (15) मंय्युस्रफ़् अ़न्हु यौमइज़िन् फ़-क़द्	तू कह मैं डरता हूँ अगर नाफ़रमानी करूँ अपने रब की एक बड़े दिन के अ़ज़ाब से। (15) जिस पर से टल गया वह अ़ज़ाब उस दिन तो उस पर रहम कर दिया

रहि-मह्, व ज़ालिकल् फ़ौज़ुल्-मुबीन (16) व इंय्यम्सस्कल्लाहु बिज़ुर्रिन् फ़ला काशि-फ़ लहू इल्ला हु-व, व इंय्यम्सस्-क बिख़ैरिन् फ़हु-व अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर (17) व हुवल्-क़ाहिरु फ़ौ-क़ अ़िबादिही, व हुवल् हकीमुल्-ख़बीर (18) क़ुल् अय्यु शैइन् अक्बरु शहा-दतन्, क़ुलिल्लाहु, शहीदुम् बैनी व बैनकुम्, व ऊहि-य इलय्-य हाज़ल् क़ुर्आनु लिउन्ज़ि-रकुम् बिही व मम्-ब-ल-ग़, अइन्नकुम् ल-तश्हदू-न अन्-न मअ़ल्लाहि आलि-हतन् उख़्रा, क़ुल् ला अश्हदु क़ुल् इन्नमा हु-व इलाहुंव्-वाहिदुंव्-व इन्ननी बरीउम् मिम्मा तुश्रिकून। (19) अल्लज़ी-न आतैनाहुमुल् किता-ब यअ़्रिफ़ूनहू कमा यअ़्रिफ़ू-न अब्नाअहुम्। अल्लज़ी-न ख़सिरू अन्फ़ु-सहुम् फ़हुम् ला युअ्मिनून (20) ❁ व मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबन् औ कज़्ज़-ब बिआयातिही, इन्नहू ला युफ़्लिहुज़्-ज़ालिमून (21)	अल्लाह ने, और यही है बड़ी कामयाबी। (16) और अगर पहुँचा दे तुझको अल्लाह कुछ सख़्ती तो कोई उसको दूर करने वाला नहीं सिवाय उसके, और अगर तुझको पहुँचा दे भलाई तो वह हर चीज़ पर क़ादिर है। (17) और उसी का ज़ोर है अपने बन्दों पर और वही है बड़ी हिक्मत वाला, सब की ख़बर रखने वाला। (18) तू पूछ सबसे बड़ा गवाह कौन है, कह दे अल्लाह गवाह है मेरे और तुम्हारे बीच और उतरा है मुझ पर यह क़ुरआन ताकि तुमको इससे ख़बरदार कर दूँ और जिसको यह पहुँचे, क्या तुम गवाही देते हो कि अल्लाह के साथ माबूद और भी हैं? तू कह दे मैं तो गवाही न दूँगा। कह दे वही है माबूद एक, और मैं बेज़ार हूँ तुम्हारे शिर्क से। (19) जिनको हमने दी है किताब वे पहचानते हैं उसको जैसे पहचानते हैं अपने बेटों को। जो लोग नुक़सान में डाल चुके अपनी जानों को वही ईमान नहीं लाते। (20) ❁ और उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन है जो बोहतान बाँधे अल्लाह पर या झुठला दे उसकी आयतों को, बेशक भलाई नसीब नहीं होती ज़ालिमों को। (21)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिए कि मैं अगर अपने रब का कहना न मानूँ (कि इस्लाम व ईमान के हुक्म की तामील न करूँ या शिर्क में मुब्तला हो जाऊँ) तो मैं एक बड़े दिन (यानी क़ियामत) के

अ़ज़ाब से डरता हूँ। (यह ज़ाहिर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मासूम हैं, इस्लाम व ईमान के ख़िलाफ़ शिर्क व नाफ़रमानी का सादिर होना आप से मुम्किन नहीं, मगर यहाँ सुनाना आ़म उम्मत को है, कि मासूम नबी भी अल्लाह के अ़ज़ाब से ख़ौफ़ रखते हैं। फिर फ़रमाया कि वह अ़ज़ाब ऐसा है कि) जिस शख़्स से उस दिन वह अ़ज़ाब हटाया जाएगा तो उस पर अल्लाह तआ़ला ने बड़ा रहम किया और यह (अ़ज़ाब का हट जाना और अल्लाह की रहमत का मुतवज्जह हो जाना) खुली कामयाबी है (इसमें उस रहमत का बयान भी हो गया जिसका ज़िक्र इससे पहले 'क-त-ब अ़ला नफ़्सिहिर्रह-म-त' में आया है)। और (आप उनको यह भी सुना दीजिए कि ऐ इनसान) अगर अल्लाह तआ़ला तुझको कोई तकलीफ़ (दुनिया या आख़िरत में) पहुँचा दें तो उसका दूर करने वाला सिवाय अल्लाह तआ़ला के कोई नहीं (वही चाहें तो दूर करें या न करें और जल्द करें या देर में करें)। और अगर तुझको (इसी तरह) वह (यानी अल्लाह तआ़ला) कोई नफ़ा पहुँचा दें (तो उसका भी कोई हटाने वाला नहीं, जैसा कि दूसरी जगह है 'ला राद्-द लिफ़ज़्लिही' क्योंकि) वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखने वाले हैं।

(और उक्त मज़मून की ताकीद के लिये यह भी फ़रमा दीजिए कि) और वही अल्लाह तआ़ला (क़ुदरत के एतिबार से) अपने बन्दों के ऊपर ग़ालिब (व बरतर) हैं, और (इल्म के एतिबार से) वही बड़ी हिक्मत वाले (और) पूरी ख़बर रखने वाले हैं। (पस वह इल्म से सब का हाल जानते हैं और क़ुदरत से सब को जमा कर लेंगे और हिक्मत से मुनासिब जज़ा व सज़ा देंगे) आप (तौहीद व रिसालत के इन इनकारियों से) कहिए कि (अच्छा यह तो बतलाओ कि) गवाही देने के लिए सबसे बढ़कर चीज़ कौन है? (जिसकी गवाही देने पर सब का झगड़ा ख़त्म हो जाये। इसका जवाब ज़ाहिर है यही होगा कि अल्लाह तआ़ला सबसे बढ़कर हैं, फिर) आप कहिए कि मेरे और तुम्हारे बीच (जिस मसले में विवाद व मतभेद है उसमें वही) अल्लाह तआ़ला गवाह है, (जिसकी गवाही सबसे बढ़कर है) और (उनकी गवाही यह है कि) मेरे पास यह क़ुरआन वही के तौर पर (अल्लाह की तरफ़ से) भेजा गया है ताकि मैं इस क़ुरआन के ज़रिये से तुमको और जिस-जिसको यह क़ुरआन पहुँचे उन सब को (उन सज़ाओं से) डराऊँ (जो तौहीद व रिसालत के इनकार पर इसमें मज़कूर हैं, क्योंकि क़ुरआन मजीद के मोजिज़ा होने और इसके जैसा बनाने से सारी दुनिया का आ़जिज़ होना अल्लाह तआ़ला की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चा होने पर फ़ितरी गवाही हो गयी, और क़ुरआनी मज़ामीन से इसकी क़ानूनी गवाही हो गयी) क्या तुम (इस बड़ी गवाही के बाद भी जो कि तौहीद को शामिल है) तौहीद के बारे में सचमुच यही गवाही दोगे कि अल्लाह तआ़ला के साथ (इबादत के लायक़ होने में) कुछ और माबूद भी (शरीक) हैं? (और अगर वे हठधर्मी से इस पर भी कह दें कि हाँ हम तो यही गवाही देंगे तो उस वक़्त उनसे बहस करना फ़ुज़ूल है, बल्कि सिर्फ़) आप (अपने अ़क़ीदे को ज़ाहिर करने के लिये) कह दीजिए कि मैं तो गवाही नहीं देता। आप कह दीजिए कि बस वह तो एक ही माबूद है, और बेशक मैं तुम्हारे शिर्क से बेज़ार हूँ। (और आपकी रिसालत के बारे में जो ये लोग कहते हैं कि हमने यहूदियों व ईसाईयों से पूछकर देख लिया तो इस मामले की तहक़ीक़ यह है कि)

जिन लोगों को हमने किताब (तौरात व इंजील) दी है वे सब लोग (इस) रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को इस तरह पहचानते हैं जिस तरह अपने बेटों को पहचानते हैं। (लेकिन जब इतनी बड़ी गवाही के होते हुए अहले किताब की गवाही पर मदार ही नहीं तो उसके न होने से भी कोई दलील नहीं पकड़ी जा सकती, और ऐसी बड़ी गवाही के होते हुए भी) जिन लोगों ने अपने को ज़ाया कर लिया है सो वे ईमान न लाएँगे (अ़क्ल को ज़ाया करने से मतलब यह है कि उसको बेकार कर दिया, अ़क्ल से काम नहीं लिया)।

और उससे ज़्यादा और कौन ज़ालिम होगा जो अल्लाह तआ़ला पर झूठ बोहतान बाँधे या अल्लाह तआ़ला की आयतों को झूठा बतलाए। ऐसे बेइन्साफ़ों का (हाल यह होगा कि) उनको (क़ियामत के दिन) छुटकारा न मिलेगा (बल्कि हमेशा के अ़ज़ाब में गिरफ़्तार रहेंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत का ज़िक्र करके उस पर ईमान लाने और शिर्क से बचने का हुक्म दिया गया था। ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में इस हुक्म के ख़िलाफ़ करने का अ़ज़ाब एक ख़ास अन्दाज़ से बयान फ़रमाया गया है, कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया गया कि आप लोगों से कह दीजिए कि अगर मान लो मैं भी अपने रब के हुक्म की मुख़ालफ़त करूँ तो मुझे भी क़ियामत के अ़ज़ाब का ख़ौफ़ है। यह ज़ाहिर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हर गुनाह से मासूम (सुरक्षित) हैं, आप से नाफ़रमानी हो ही नहीं सकती, लेकिन आपकी तरफ़ मन्सूब करके उम्मत को यह बतलाना है कि इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी पर जब तमाम नबियों के सरदार को माफ़ नहीं किया जा सकता तो और किसी की क्या मजाल है।

इसके बाद फ़रमायाः

مَنْ يُّصْرَفْ عَنْهُ يَوْمَئِذٍ فَقَدْ رَحِمَهٗ.

यानी मेहशर के दिन का अ़ज़ाब हद से ज़्यादा हौलनाक और सख़्त है, जिस शख़्स से यह अ़ज़ाब टल गया तो समझिये कि उस पर अल्लाह की बड़ी रहमत हो गयीः

وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْمُبِيْنُ.

यानी यही बड़ी और खुली कामयाबी है।

यहाँ कामयाबी से मुराद जन्नत में दाख़िल होना है। इससे मालूम हुआ कि अ़ज़ाब से निजात और जन्नत का दाख़िला एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं।

दूसरी आयत में इस्लाम का एक बुनियादी अ़क़ीदा बयान किया गया है कि हर नफ़े और नुक़सान का मालिक दर हक़ीक़त सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू है, कोई शख़्स किसी को हक़ीक़त के एतिबार से न मामूली सा भी नफ़ा पहुँचा सकता है न ज़रा सा भी नुक़सान, और ज़ाहिर में जो किसी को किसी के हाथ से नफ़ा या नुक़सान पहुँचता नज़र आता है वह सिर्फ़ एक ज़ाहिरी सूरत और हक़ीक़त के सामने एक आड़ से ज़ायद कोई हैसियत नहीं रखताः

कारे ज़ुल्फ़े तुस्त मुश्क अफ़शानी अम्मा आशिक़ाँ
मस्लेहत रा तोहमते बर आहू-ए-चीं बस्ता अन्द

मुश्क से ख़ुशबू बिखेरना यह तेरी क़ुदरत की कारीगरी है मगर कुछ कम-नज़र और हक़ीक़त से नावाक़िफ़ लोग चीन के हिरण की तरफ़ इसकी निस्बत करते हैं।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

यह अ़क़ीदा भी इस्लाम के उन क्रांतिकारी अ़क़ीदों में से है जिसने मुसलमानों को सारी मख़्लूक़ से बेनियाज़ और सिर्फ़ ख़ालिक़ का नियाज़-मन्द बनाकर उनकी एक ऐसी बेमिसाल अलबेली जमाअ़त तैयार कर दी जो फ़क्र व फ़ाक़े और तंगदस्ती में भी सारे जहान पर भारी है, किसी के सामने सर झुकाना नहीं जानतीः

फ़क्र में भी सर-बसर फ़ख़्र व ग़ुरूर व नाज़ हूँ
किसका नियाज़ मन्द हूँ सबसे जो बेनियाज़ हूँ

क़ुरआन मजीद में जगह-जगह यह मज़मून विभिन्न उनवानों के साथ बयान फ़रमाया गया है। एक आयत में इरशाद हैः

مَا يَفْتَحِ اللّٰهُ لِلنَّاسِ مِنْ رَّحْمَةٍ فَلَا مُمْسِكَ لَهَا وَمَا يُمْسِكْ فَلَا مُرْسِلَ لَهُ مِنْ بَعْدِهِ.

"यानी अल्लाह तआ़ला ने जो रहमत लोगों के लिये खोल दी उसको कोई रोकने वाला नहीं और जिसको रोक दे उसको कोई खोलने वाला नहीं।"

सही हदीसों में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी दुआ़ओं में अक्सर यह कहा करते थेः

اَللّٰهُمَّ لَا مَانِعَ لِمَآ اَعْطَيْتَ وَلَا مُعْطِيَ لِمَا مَنَعْتَ. وَلَا يَنْفَعُ ذَاالْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ.

"यानी ऐ अल्लाह! जो आपने दिया उसको कोई रोकने वाला नहीं और जो आपने रोक दिया उसका कोई देने वाला नहीं, और किसी कोशिश वाले की कोशिश आपके मुक़ाबले में नफ़ा नहीं दे सकती।"

इमाम बग़वी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस आयत के तहत हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक सवारी पर सवार हुए और मुझे अपने पीछे बैठा लिया। कुछ दूर चलने के बाद मेरी तरफ़ मुतवज्जह होकर फ़रमाया कि ऐ लड़के! मैंने अ़र्ज़ किया हाज़िर हूँ, क्या हुक्म है? आपने फ़रमाया कि तुम अल्लाह को याद रखो! अल्लाह तुमको याद रखेगा। तुम अल्लाह को याद रखोगे तो उसको हर हाल में अपने सामने पाओगे। तुम अमन व आ़फ़ियत और आराम के वक़्त अल्लाह तआ़ला को पहचानो तो तुम्हारी मुसीबत के वक़्त अल्लाह तआ़ला तुमको पहचानेगा। जब तुमको सवाल करना हो तो सिर्फ़ अल्लाह से सवाल करो, और मदद माँगनी हो तो सिर्फ़ अल्लाह से मदद माँगो। जो कुछ दुनिया में होने वाला है तक़दीर का क़लम उसको लिख चुका है, अगर सारी मख़्लूक़ात मिलकर इसकी कोशिश करें कि तुमको ऐसा नफ़ा पहुँचा दें जो अल्लाह तआ़ला

ने तुम्हारे हिस्से में नहीं रखा तो वे हरगिज़ ऐसा न कर सकेंगे, और अगर वे सब मिलकर इसकी कोशिश करें कि तुमको ऐसा नुक़सान पहुँचायें जो तुम्हारी क़िस्मत में नहीं है तो हरगिज़ इस पर क़ुदरत न पायेंगे। अगर तुम कर सकते हो कि यक़ीन के साथ सब्र पर अ़मल करो तो ऐसा ज़रूर कर लो, अगर इस पर क़ुदरत नहीं तो सब्र करो, क्योंकि अपनी तबीयत के ख़िलाफ़ चीज़ों पर सब्र करने में बड़ी ख़ैर व बरकत है। और ख़ूब समझ लो कि अल्लाह तआ़ला की मदद सब्र के साथ है, और मुसीबत के साथ राहत और तंगी के साथ फ़राख़ी है (यह हदीस तिर्मिज़ी और मुस्नद अहमद में भी सही सनद के साथ बयान हुई है)।

अफ़सोस है कि क़ुरआन के इस स्पष्ट ऐलान और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्रभर की तालीमात के बावजूद यह उम्मत फिर इस मामले में भटकने लगी। सारे ख़ुदाई इख़्तियारात मख़्लूक़ात को बाँट दिये। आज ऐसे मुसलमानों की बहुत बड़ी तायदाद है जो मुसीबत के वक़्त बजाय ख़ुदा तआ़ला को पुकारने के और उससे दुआ़ माँगने के, अनेक नामों की दुहाई देते और उन्हीं से मदद माँगते हैं। ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ ध्यान तक नहीं होता। अम्बिया व औलिया के वसीले से दुआ़ माँगना दूसरी बात है, वह जायज़ है, और ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात में इसके सुबूत मौजूद हैं, लेकिन डायरेक्ट किसी मख़्लूक़ को अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिये पुकारना, उससे अपनी हाजतें माँगना, इस क़ुरआनी हुक्म के ख़िलाफ़ खुली बग़ावत है। अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को सही रास्ते पर क़ायम रखे।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِهِ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ.

यानी अल्लाह तआ़ला ही अपने सब बन्दों पर ग़ालिब व क़ादिर है, और सब उसके मोहताज और उसकी क़ुदरत के अधीन हैं।

यही वजह है कि दुनिया का कोई बड़े से बड़ा इनसान चाहे अल्लाह का ख़ास रसूल हो या दुनिया का बड़े से बड़ा बादशाह हो, अपने हर इरादे में कामयाब नहीं होता, और उसकी हर मुराद पूरी नहीं होती।

वह हकीम भी है कि उसके तमाम काम पूरी तरह हिक्मत हैं, और हर चीज़ को जानने वाला भी है। इसमें लफ़्ज़ "क़ाहिर" से अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत का और लफ़्ज़ "हकीम" से उसके बेइन्तिहा इल्म का बयान करके बतला दिया कि कमाल की तमाम सिफ़ात इल्म व क़ुदरत में सीमित हैं और अल्लाह तआ़ला इन दोनों में बेमिसाल हैं।

पाँचवीं आयत के नाज़िल होने का एक ख़ास वाक़िआ़ आ़म मुफ़स्सिरीन ने नक़ल किया है, कि एक मर्तबा मक्का वालों का एक प्रतिनिधि मण्डल नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आया और कहने लगा कि आप जो अल्लाह का रसूल होने का दावा करते हैं इस पर आपका गवाह कौन है? क्योंकि हमें कोई आदमी ऐसा नहीं मिला जो आपकी तस्दीक़ करता हो, हालाँकि हमने यहूदियों से और ईसाईयों से इसकी तहक़ीक़ में पूरी कोशिश की।

इस पर यह आयत नाज़िल हुई कि:

قُلْ اَیُّ شَیْءٍ اَکْبَرُ شَهَادَةً.

यानी आप कह दीजिए कि अल्लाह से बढ़कर किसकी गवाही होगी, जिसके क़ब्ज़े में तमाम जहान और सब का नफ़ा व नुक़सान है। फिर आप कह दीजिए कि मेरे और तुम्हारे बीच अल्लाह गवाह है, और अल्लाह की गवाही से मुराद वो मोजिज़े और खुली निशानियाँ हैं जो अल्लाह तआ़ला ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सच्चा रसूल होने के मुताल्लिक़ ज़ाहिर फ़रमाईं। इसी लिये इसके बाद मक्का वालों को ख़िताब करके यह इरशाद फ़रमायाः

اَئِنَّکُمْ لَتَشْهَدُوْنَ اَنَّ مَعَ اللّٰهِ اٰلِهَةً اُخْرٰی.

यानी क्या अल्लाह तआ़ला की इस गवाही के बाद भी तुम उसके ख़िलाफ़ इसकी गवाही देते हो कि अल्लाह तआ़ला के साथ दूसरे माबूद भी हैं, अगर ऐसा है तो अपने अन्जाम को तुम समझो, मैं तो ऐसी गवाही नहीं दे सकताः

قُلْ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَّاحِدٌ.

यानी आप कह दीजिए कि अल्लाह तआ़ला यक्ता (बेमिस्ल) माबूद है जिसका कोई शरीक नहीं।

और इरशाद फ़रमायाः

وَاُوْحِیَ اِلَیَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَکُمْ بِهٖ وَمَنْۢ بَلَغَ.

यानी मुझ पर वही (अल्लाह के पैग़ाम) के तौर पर क़ुरआन भेजा गया, ताकि इसके ज़रिये मैं तुमको अल्लाह के अ़ज़ाब से डराऊँ, और उन लोगों को डराऊँ जिनको क़ियामत तक यह क़ुरआन पहुँचेगा।

इससे साबित हुआ कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ातमुन्नबिय्यीन और आख़िरी पैग़म्बर हैं, और क़ुरआने करीम अल्लाह तआ़ला की आख़िरी किताब है, क़ियामत तक इसकी तालीम और तिलावत बाक़ी रहेगी, और लोगों पर इसकी पैरवी लाज़िम रहेगी।

हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जिस शख़्स को क़ुरआन पहुँच गया वह ऐसा हो गया जैसे उसने मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत कर ली, और एक हदीस में है कि जिस शख़्स को क़ुरआन पहुँच गया मैं उसका नज़ीर (यानी डराने वाला) हूँ।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को ताकीद फ़रमाईः

بَلِّغُوْا عَنِّیْ وَلَوْ اٰیَةً.

यानी मेरे अहकाम व तालीमात लोगों तक पहुँचाओ अगरचे एक ही आयत हो।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला उस शख़्स को तरोताज़ा और सेहतमन्द रखे जिसने मेरा कोई मक़ाला (हदीस और बात) सुना फिर उसको याद रखा फिर उसको उम्मत तक

पहुँचा दिया। क्योंकि कई बार ऐसा होता है कि एक आदमी ख़ुद किसी कलाम के मफ़्हूम को इतना नहीं समझता जितना बाद में आने वाला समझता है जिसको यह कलाम उसने पहुँचाया है।

आख़िरी आयत में उन लोगों के इस क़ौल की तरदीद (रद्द किया गया) है कि हमने यहूदियों व ईसाईयों से सबसे तहक़ीक़ कर ली, कोई भी आपकी सच्चाई और नुबुव्वत की गवाही नहीं देता। इसके बारे में इरशाद फ़रमायाः

اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا يَعْرِفُوْنَ اَبْنَآءَهُمْ.

यानी यहूदी व ईसाई तो मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ऐसा पहचानते हैं जैसे अपनी औलाद को पहचानते हैं।

वजह यह है कि तौरात व इंजील में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पूरा हुलिया शरीफ़, आपके असली वतन फिर हिजरत के मक़ाम का, और आपकी आ़दतों व अख़्लाक़ और आपके कारनामों का ऐसा तफ़सीली ज़िक्र है कि उसके बाद किसी शक व शुब्हे की गुंजाईश नहीं रहती, बल्कि सिर्फ़ हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही का ज़िक्र नहीं, आपके सहाबा-ए-किराम के हालात का विस्तृत तज़किरा तक तौरात व इंजील में मौजूद है। इसलिये इसकी कोई संभावना नहीं कि जो शख़्स तौरात व इंजील को पढ़ता और उन पर ईमान रखता हो वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को न पहचाने।

इस जगह हक़ तआ़ला ने मिसाल देते हुए यह इरशाद फ़रमाया कि जैसे लोग अपने बच्चों को पहचानते हैं। यह नहीं फ़रमाया कि जैसे बच्चे अपने माँ-बाप को पहचानते हैं। वजह यह है कि माँ-बाप की पहचान अपने बच्चों के लिये सबसे ज़्यादा तफ़सीली और यक़ीनी होती है, बच्चों के बदन का हर हिस्सा माँ-बाप के सामने आता और रहता है, वे बचपन से लेकर जवानी तक उनके हाथों और गोद में परवरिश पाते हैं, इसलिये वे जितना अपनी औलाद को पहचान सकते हैं उतना औलाद उनको नहीं पहचान सकती।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु जो पहले यहूदियों में दाख़िल थे, फिर मुसलमान हो गये। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने उनसे सवाल किया कि अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन में ख़बर दी है कि तुम लोग हमारे रसूल को ऐसा पहचानते हो जैसे अपनी औलाद को, इसकी क्या वजह है? हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने सलाम रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि हाँ हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह तआ़ला की बयान की हुई सिफ़ात और निशानियों के साथ जानते हैं जो अल्लाह तआ़ला ने तौरात में नाज़िल फ़रमाई हैं, इसलिये इसका इल्म हमें यक़ीनी और क़तई तौर पर है, बख़िलाफ़ अपनी औलाद के कि उसमें शुब्हा हो सकता है कि यह हमारी औलाद है भी या नहीं।

हज़रत ज़ैद बिन सअ़्ना जो अहले किताब में से हैं, इन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तौरात व इंजील की बयान की हुई सिफ़ात ही के ज़रिये पहचाना था, सिर्फ़ एक वस्फ़ (सिफ़त और गुण) ऐसा था जिसकी इनको पहले तस्दीक़ नहीं हो सकी थी, इम्तिहान के बाद

तस्दीक़ हुई। वह यह कि आपका संयम व बरदाश्त आपके गुस्से पर ग़ालिब होगा। फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुँचकर तजुर्बा किया तो यह सिफ़त भी पूरी तरह आप में पाई, उसी वक़्त मुसलमान हो गये।

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि ये अहले किताब (यानी यहूदी व ईसाई) जो पूरी तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पहचानने के बावजूद मुसलमान नहीं होते, ये अपने हाथों अपने आपको बरबाद कर रहे और ख़सारे में पड़ रहे हैं। यही मतलब है इस इरशाद का "अल्लज़ी-न ख़सिरू अन्फ़ुसहुम् फ़हुम् ला युअ्मिनून"।

وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِيعًا ثُمَّ نَقُولُ لِلَّذِينَ أَشْرَكُوا أَيْنَ شُرَكَاؤُكُمُ الَّذِينَ كُنْتُمْ تَزْعُمُونَ ۝ ثُمَّ لَمْ تَكُنْ فِتْنَتُهُمْ إِلَّا أَنْ قَالُوا وَاللَّهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِينَ ۝ انْظُرْ كَيْفَ كَذَبُوا عَلَىٰ أَنْفُسِهِمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ۝ وَمِنْهُمْ مَنْ يَسْتَمِعُ إِلَيْكَ ۚ وَجَعَلْنَا عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ أَكِنَّةً أَنْ يَفْقَهُوهُ وَفِي آذَانِهِمْ وَقْرًا ۚ وَإِنْ يَرَوْا كُلَّ آيَةٍ لَا يُؤْمِنُوا بِهَا ۚ حَتَّىٰ إِذَا جَاءُوكَ يُجَادِلُونَكَ يَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوا إِنْ هَٰذَا إِلَّا أَسَاطِيرُ الْأَوَّلِينَ ۝ وَهُمْ يَنْهَوْنَ عَنْهُ وَيَنْأَوْنَ عَنْهُ ۚ وَإِنْ يُهْلِكُونَ إِلَّا أَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ۝

व यौ-म नह्शुरुहुम् जमीअ़न् सुम्-म नक़ूलु लिल्लज़ी-न अश्रकू ऐ-न शु-रकाउ-कुमुल्लज़ी-न कुन्तुम् तज़्अुमून (22) सुम्-म लम् तकुन् फ़ित्नतुहुम् इल्ला अन् क़ालू वल्लाहि रब्बिना मा कुन्ना मुश्रिकीन (23) उन्ज़ुर् कै-फ़ क-ज़बू अ़ला अन्फ़ुसिहिम् व ज़ल्-ल अ़न्हुम् मा कानू यफ़्तरून (24) व मिन्हुम् मंय्यस्तमिअु इलै-क व जअ़ल्ना अ़ला क़ुलूबिहिम् अकिन्नतन् अंय्यफ़्क़हूहु व फ़ी आज़ानिहिम् वक़रन्, व इंय्यरौ	और जिस दिन हम जमा करेंगे उन सब को फिर कहेंगे उन लोगों को जिन्होंने शिर्क किया था- कहाँ हैं तुम्हारे शरीक जिनका तुमको दावा था। (22) फिर न रहेगा उनके पास कोई फ़रेब मगर यही कि कहेंगे- क़सम है अल्लाह की जो हमारा रब है, हम न थे शिर्क करने वाले। (23) देखो तो कैसा झूठ बोले अपने ऊपर और खोई गयीं उनसे वे बातें जो बनाया करते थे। (24) और बाज़े उनमें कान लगाये रहते हैं तेरी तरफ़ और हमने उनके दिलों पर डाल रखे हैं पर्दे, ताकि उसको न समझें और रख दिया उनके कानों में

कुल्-ल आयतिल् ला युअ्मिनू बिहा, हत्ता इज़ा आऊ-क युजादिलून-क यक़ूलुल्लज़ी-न क-फ़रू इन् हाज़ा इल्ला असातीरुल् अव्वलीन (25) व हुम् यन्हौ-न अ़न्हु व यन्औ-न अ़न्हु व इंय्युह्लिकू-न इल्ला अन्फ़ु-सहुम् व मा यश्अुरून (26)	बोझ, और अगर देख लें तमाम निशानियाँ तो भी ईमान न लायें उन पर यहाँ तक कि जब आते हैं तेरे पास तुझसे झगड़ने को तो कहते हैं वे काफ़िर- नहीं है यह मगर कहानियाँ पहले लोगों की। (25) और ये लोग रोकते हैं उससे और भागते हैं उससे और नहीं हलाक (व तबाह) करते मगर अपने आपको, और नहीं समझते। (26)

खुलासा-ए-तफ़सीर

मुश्रिक लोगों के कामयाब न होने की कैफ़ियत

और (वह वक़्त भी याद करने के क़ाबिल है) जिस दिन हम उन तमाम मख़्लूक़ों को (मैदाने हश्र में) जमा करेंगे, फिर हम मुश्रिकों से (किसी माध्यम से या बिना माध्यम के धमकी और झिड़की के तौर पर) कहेंगे कि (बतलाओ) तुम्हारे वे साझी जिनके माबूद होने का तुम दावा करते थे कहाँ गये? (कि तुम्हारी सिफ़ारिश नहीं करते जिस पर तुमको भरोसा था) फिर उनके शिर्क का अन्जाम इसके सिवा कुछ भी (ज़ाहिर) न होगा कि वे (उस शिर्क से ख़ुद बेज़ारी और नफ़रत का इज़्हार करेंगे और घबराहट के आ़लम में) यूँ कहेंगे कि अल्लाह की अपने परवर्दिगार की क़सम! हम मुश्रिक न थे। (हक़ तआ़ला ने फ़रमाया ताज्जुब की नज़र से) ज़रा देखो तो किस तरह (खुला) झूठ बोला अपनी जानों पर, और जिन चीज़ों को तराशा करते थे (यानी उनके बुत और जिनको वे ख़ुदा का शरीक ठहराते थे) वे सब उनसे ग़ायब हो गईं।

(इसी तरह क़ुरआन का इनकार करने पर उनको इस तरह बुरा-भला कहा गयाः)

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّسْتَمِعُ اِلَيْكَ

और इन (मुश्रिकों) में बाज़े ऐसे हैं कि (आपके क़ुरआन पढ़ने के वक़्त उसके सुनने के लिये) आपकी तरफ़ कान लगाते हैं और (चूँकि यह सुनना हक़ की इच्छा के लिये नहीं महज़ तमाशे या मज़ाक़ उड़ाने की नीयत से होता है इसलिये इससे उनको कुछ नफ़ा नहीं होगा, चुनाँचे) हमने इनके दिलों पर पर्दे डाल रखे हैं इस (क़ुरआन के मक़सद) से, कि वे उसको समझें और उनके कानों में डाट दे रखी है (कि वे इसको हिदायत के लिये नहीं सुनते।

यह तो उनके दिलों और कानों की हालत थी, अब उनकी बीनाई और निगाह को देखो) और अगर वे लोग (आपकी नुबुव्वत के सच्चा होने की) तमाम दलीलों को (भी) देख लें तो भी उन पर भी ईमान न लाएँ। (इनकी दुश्मनी की नौबत) यहाँ तक (पहुँची है) कि जब ये लोग

आपके पास आते हैं तो आप से ख़्वाह-मख़्वाह झगड़ते हैं (इस तौर पर कि) ये लोग जो काफ़िर हैं यूँ कहते हैं कि यह (क़ुरआन) तो कुछ भी नहीं, सिर्फ़ बे-सनद बातें हैं जो पहलों से (मन्क़ूल) चली आ रही हैं (यानी मज़हब वाले पहले से ऐसी बातें करते चले आये हैं कि माबूद एक ही है और यह कि इनसान ख़ुदा का पैग़म्बर हो सकता है, क़ियामत में फिर ज़िन्दा होना है, जिसका हासिल दुश्मनी और झुठलाना है। आगे इससे भी आगे बढ़कर झगड़ने और दूसरों को भी हिदायत से रोकने का काम शुरू किया) और ये लोग इस (क़ुरआन) से औरों को भी रोकते हैं और ख़ुद भी (नफ़रत ज़ाहिर करने के लिये) इससे दूर रहते हैं, और (इन हरकतों से) ये लोग अपने ही को तबाह कर रहे हैं और (अपनी बेवक़ूफ़ी और हद से बढ़ी हुई नफ़रत के सबब) कुछ ख़बर नहीं रखते (कि हम किसका नुक़सान कर रहे हैं, हमारे इस फ़ेल से रसूल और क़ुरआन का तो कुछ बिगड़ता नहीं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत में यह बयान हुआ था कि ज़ालिमों और काफ़िरों को फ़लाह नसीब न होगी। उपर्युक्त आयतों में इसकी तफ़सील व तशरीह है। पहली और दूसरी आयत में उस सबसे बड़े इम्तिहान का ज़िक्र है जो मेहशर में रब्बुल-आ़लमीन के सामने होने वाला है। इरशाद फ़रमायाः

وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا.

यानी वह दिन याद रखने के क़ाबिल है जिसमें हम इन सब को यानी इन मुश्रिकों को और इनके बनाये हुए माबूदों को इकट्ठा करेंगेः

ثُمَّ نَقُوْلُ لِلَّذِيْنَ اَشْرَكُوْآ اَيْنَ شُرَكَآؤُكُمُ الَّذِيْنَ كُنْتُمْ تَزْعُمُوْنَ.

यानी फिर हम उनसे यह सवाल करेंगे कि तुम जिन माबूदों को हमारा साझी व शरीक और अपनी ज़रूरतों को पूरी करने वाला और मुश्किल-कुशा समझा करते थे आज वे कहाँ हैं? तुम्हारी मदद क्यों नहीं करते?

इसमें लफ़्ज़ "सुम्-म" इख़्तियार फ़रमाया गया है जो बाद के और देर के लिये इस्तेमाल होता है। इससे मालूम हुआ कि मेहशर में जमा होने के बाद फ़ौरन ही सवाल जवाब नहीं होगा, बल्कि लम्बे समय तक हैरत व कश्मकश के आ़लम में खड़े रहेंगे, मुद्दत के बाद हिसाब किताब और सवालात शुरू होंगे।

एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि उस वक़्त तुम्हारा क्या हाल होगा जबकि अल्लाह तआ़ला तुमको मैदाने हश्र में ऐसी तरह जमा कर देंगे जैसे तीरों को तर्कश में जमा कर दिया जाता है। और पचास हज़ार साल इसी तरह रहोगे। और एक रिवायत में है कि क़ियामत के दिन एक हज़ार साल सब अन्धेरे में रहेंगे, आपस में बातचीत भी न कर सकेंगे। (यह रिवायत हाकिम ने मुस्तद्रक में और बैहक़ी ने ज़िक्र की है)

इस रिवायत में जो पचास हज़ार और एक हज़ार का फ़र्क़ है यही फ़र्क़ क़ुरआन की दो

आयतों में भी बयान हुआ है। एक जगह इरशाद है:

كَانَ مِقْدَارُهٗ خَمْسِيْنَ اَلْفَ سَنَةٍ.

"यानी उस दिन की मिक़्दार पचास हज़ार साल होगी।" और दूसरी जगह इरशाद है:

اِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ.

"यानी एक दिन तुम्हारे रब के पास एक हज़ार साल का होगा।"

और वजह इस फ़र्क़ की यह है कि यह दिन तकलीफ़ की सख़्ती व मशक़्क़त के एतिबार से लम्बा होगा, और मेहनत व मशक़्क़त के दर्जे अलग-अलग होंगे, इसलिये बाज़ों के लिये यह दिन पचास हज़ार साल का और बाज़ों के लिये एक हज़ार साल का महसूस होगा।

ख़ुलासा यह है कि इस सबसे बड़ी इम्तिहान गाह (परीक्षालय) में अव्वल तो एक लम्बा समय ऐसा गुज़रेगा कि इम्तिहान शुरू ही न होगा, यहाँ तक कि ये लोग तमन्ना करने लगेंगे कि किसी तरह इम्तिहान और हिसाब जल्द हो जाये, अन्जाम कुछ भी हो, यह असमंजस और दुविधा की तकलीफ़ तो जाये। इसी बड़े ठहरने और लम्बे समय की तरफ़ इशारा करने के लिये लफ़्ज़ "सुम्-म" के साथ फ़रमाया "सुम्-म नक़ूलु"। इसी तरह दूसरी आयत में मुश्रिकों की तरफ़ से जो जवाब ज़िक्र किया गया है वह भी लफ़्ज़ "सुम्-म" के साथ आया है, जिससे मालूम हुआ कि वे लोग भी बड़े अन्तराल के बाद बहुत ग़ौर व फ़िक्र और सोच-विचार करके यह जवाब देंगे:

وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِيْنَ.

"यानी अल्लाह रब्बुल-आलमीन की क़सम खाकर कहेंगे कि हम तो मुश्रिक न थे।"

इस आयत में उनके जवाब को लफ़्ज़ 'फ़ित्नतुन' से ताबीर फ़रमाया है, और यह लफ़्ज़ इम्तिहान व आज़माईश के लिये भी बोला जाता है, और किसी पर आशिक़ व फ़िदा हो जाने के लिये भी, और यहाँ दोनों मायने मुराद हो सकते हैं। पहली सूरत में उनके इम्तिहान के जवाब को इम्तिहान से ताबीर कर दिया गया है, और दूसरी सूरत में मुराद यह होगी कि ये लोग दुनिया में उन बुतों और ख़ुद अपने बनाये हुए माबूदों पर फ़िदा थे, अपने जान व माल उन पर क़ुरबान करते थे, मगर आज वह सारी मुहब्बत व दीवानगी ख़त्म हो गयी, और इनका जवाब सिवाय इसके कुछ न हुआ कि उनसे अपने बरी और बेताल्लुक़ होने का दावा करें।

उनके जवाब में एक अजीब चीज़ यह है कि मैदाने क़ियामत के हौलनाक मनाज़िर और रब्बुल-आलमीन की कामिल क़ुदरत के अजीब व ग़रीब वाक़िआत देखने के बाद उनको यह जुर्रत कैसे हुई कि रब्बुल-आलमीन के सामने खड़े होकर झूठ बोलें और वह भी इस ढिटाई के साथ कि उसी की बुलन्द ज़ात की क़सम भी खाकर कह रहे हैं कि हम मुश्रिक नहीं थे।

आम मुफ़स्सिरीन ने इसके जवाब में फ़रमाया कि उनका यह जवाब कुछ अक़्ल व होश और अन्जाम को ध्यान में रखकर नहीं बल्कि घबराहट में बोखलाहट की बिना पर है, और ऐसी हालत में आदमी जो कुछ मुँह में आये बोला करता है। लेकिन मैदाने हश्र के आम वाक़िआत व हालात में ग़ौर करने के बाद यह भी कहा जा सकता है कि अल्लाह तआ़ला ने ही उनकी पूरी कैफ़ियत

और हालत को सामने लाने के लिये उनको यह क़ुदरत भी दे दी कि वे आज़ादाना जो चाहें कहें जिस तरह दुनिया में कहा करते थे, ताकि कुफ़्र व शिर्क के ज़बरदस्त गुनाह के साथ उनका यह ऐब भी मेहशर वालों के सामने आ जाये कि ये झूठ बोलने में भी अपना जवाब नहीं रखते, कि इस हौलनाक मौक़े पर भी झूठ बोलने से नहीं झिझकते। क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयतः

فَيَحْلِفُوْنَ لَهٗ كَمَا يَحْلِفُوْنَ لَكُمْ.

से इसी की तरफ़ इशारा होता है। जिसके मायने यह हैं कि ये लोग जिस तरह मुसलमानों के सामने झूठी क़समें खा जाते हैं इसी तरह ख़ुद रब्बुल-आलमीन के सामने भी झूठी क़सम खाने से न चूकेंगे।

मेहशर में जब ये क़समें खाकर अपने शिर्क व कुफ़्र से इनकारी हो जायेंगे तो उस वक़्त अल्लाह तआला उनके मुँहों पर ख़ामोशी की मोहर लगा देंगे और उनके बदनी हिस्सों व अंगों, हाथ-पाँव को हुक्म देंगे कि तुम गवाही दो कि ये लोग क्या-क्या करते थे। उस वक़्त साबित होगा कि हमारे हाथ-पाँव, आँख, कान ये सब के सब ख़ुदा तआला की ख़ुफ़िया पुलिस थी। वे तमाम आमाल और कामों को एक-एक करके सामने रख देंगे, इसी के बारे में सूरः यासीन में इरशाद हैः

اَلْيَوْمَ نَخْتِمُ عَلٰٓى اَفْوَاهِهِمْ وَتُكَلِّمُنَآ اَيْدِيْهِمْ وَتَشْهَدُ اَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ.

क़ुदरत के इस मन्ज़र को देखने के बाद किसी को यह जुर्रत न रहेगी कि फिर कोई बात छुपाये या झूठ बोले।

क़ुरआन मजीद में दूसरी जगह इरशाद हैः

وَلَا يَكْتُمُوْنَ اللّٰهَ حَدِيْثًا.

"यानी उस दिन वे अल्लाह से कोई बात न छुपा सकेंगे।"

इसका मतलब हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यही बतलाया कि पहले पहले तो ख़ूब झूठ बोलेंगे और झूठी क़समें खायेंगे, लेकिन जब ख़ुद उनके हाथ-पाँव उनके ख़िलाफ़ गवाही देंगे तो उस वक़्त कोई ग़लत बात कहने की जुर्रत न रहेगी।

ग़र्ज़ कि अहकमुल-हाकिमीन (यानी अल्लाह तआ़ला) की अ़दालत में मुजरिम को अपना बयान देने का पूरा मौक़ा आज़ादी के साथ दिया जायेगा, और जिस तरह वह दुनिया में झूठ बोलता था उस वक़्त भी उसका यह इख़्तियार उससे न छीना जायेगा, क्योंकि अल्लाह तआ़ला उसके झूठ का पर्दा ख़ुद उसके हाथ-पाँव के हवाले से खोल देंगे।

यही वजह है कि मौत के बाद जो पहला इम्तिहान क़ब्र में मुन्कर-नकीर फ़रिश्तों के सामने होगा, जिसको दाख़िला इम्तिहान (प्रवेश परीक्षा) कहा जा सकता है, उसके बारे में हदीस में है कि मुन्कर-नकीर जब काफ़िर से सवाल करेंगे 'मन् रब्बु-क व मा दीनु-क' यानी तेरा रब कौन है और तेरा दीन क्या है? तो काफ़िर कहेगा 'हाह् हाह् ला अदरी' यानी हाय-हाय मैं कुछ नहीं जानता। इसके उलट मोमिन 'रब्बियल्लाहु व दीनियल् इस्लामु' से जवाब देगा (यानी मेरा रब

अल्लाह है और मेरा दीन इस्लाम है)। मालूम होता है कि इस इम्तिहान में किसी को झूठ बोलने की जुर्रत न होगी, वरना काफ़िर भी वही जवाब दे सकता था जो मुसलमान ने दिया। वजह यह है कि ये इम्तिहान लेने वाले फ़रिश्ते होंगे, न वे ग़ैब का इल्म रखते हैं और न ऐसी क़ुदरत कि हाथ-पाँव की गवाही ले लें। अगर वहाँ झूठ बोलने का इख़्तियार इनसान को होता तो फ़रिश्ते तो उसके जवाब के मुंताबिक़ ही अमल करते और वह निज़ाम बिगड़ जाता, जबकि मैदाने हश्र के इम्तिहान का मामला इसके विपरीत है कि वहाँ सवाल व जवाब डायरेक्ट अलीम व ख़बीर और क़ादिरे मुतलक़ (यानी अल्लाह तआ़ला) के साथ होगा, वहाँ कोई झूठ बोले भी तो चल नहीं सकेगा।

तफ़सीर बहरे-मुहीत और तफ़सीरे-मज़हरी में कुछ हज़रात का यह क़ौल भी नक़ल किया है कि झूठी क़समें खाकर अपने शिर्क से इनकार करने वाले वे लोग होंगे जो खुले तौर पर किसी मख़्लूक़ को ख़ुदा या ख़ुदा का नाइब नहीं कहते थे, मगर उनका अमल यह था कि ख़ुदाई के सारे इख़्तियारात मख़्लूक़ को बाँट रखे थे, और उन्हीं से अपनी हाजतें माँगते, उन्हीं के नाम की नज़्र व नियाज़ करते, उन्हीं से रोज़ी, तन्दुरुस्ती, औलाद और सारी मुरादें माँगा करते थे। ये लोग अपने आपको मुश्रिक न समझते थे, इसलिये मैदाने हश्र में भी क़सम खाकर यही कहेंगे कि हम मुश्रिक न थे, फिर अल्लाह तआ़ला उनकी रुस्वाई को वाज़ेह फ़रमायेंगे।

दूसरा सवाल इस आयत में यह होता है कि क़ुरआन पाक की कुछ आयतों से मालूम होता है कि अल्लाह जल्ल शानुहू काफ़िर व बदकार लोगों से कलाम न फ़रमायेंगे, और इस आयत से साफ़ यह मालूम हो रहा है कि उनसे ख़िताब और कलाम होगा।

जवाब यह है कि ख़िताब व कलाम इ़ज़्ज़त व सम्मान के तौर पर या दुआ़ की क़ुबूलियत के लिये न होगा, डाँट-डपट के ख़िताब की नफ़ी इस आयत में मुराद नहीं। और यह भी कहा जा सकता है कि यह ख़िताब जो इस आयत में मज़कूर है फ़रिश्तों के माध्यम से हो, और जिस आयत में ख़िताब और अल्लाह के कलाम करने की नफ़ी की गई है उसमें मुराद डायरेक्ट कलाम करना है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

اُنْظُرْ كَيْفَ كَذَبُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ.

इसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है कि आप देखिये कि उन लोगों ने अपनी जानों पर कैसा झूठ बोला है, और जो कुछ वह अल्लाह पर बोहतान बाँधा करते थे आज सब ग़ायब हो गया। अपनी जानों पर झूठ बोलने से मुराद यह है कि वबाल उस झूठ का उन्हीं की जानों पर पड़ने वाला है, और बोहतान बाँधने से मुराद यह भी हो सकता है कि दुनिया में उनको अल्लाह का साझी व शरीक ठहराना एक इल्ज़ाम धरना और बोहतान बाँधना था, आज हक़ीक़त सामने आकर उस झूठ बोलने और बोहतान लगाने की क़लई खुल गयी। और यह भी हो सकता है कि बोहतान बाँधने से मुराद झूठी क़सम है जो मेहशर में खाई थी, फिर हाथों पैरों और बदनी अंगों की गवाही से वह झूठ खुल गया।

और कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि इफ़्तिरा (झूठ बोलने) से मुराद मुश्रिकों की वो तावीलें (उल्टी-सीधी बातें बनाना) हैं जो अपने झूठे माबूदों के बारे में दुनिया में किया करते थे। मिसाल के तौर परः

مَانَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُوْنَآ اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى.

"यानी हम इन बुतों को ख़ुदा समझकर इनकी इबादत नहीं करते, बल्कि इसलिये करते हैं कि ये हमें अल्लाह तआ़ला से सिफ़ारिश करके क़रीब कर देंगे।"

मेहशर में यह झूठ इस तरह खुल गया कि उनकी सबसे बड़ी मुसीबत के वक़्त किसी ने न उनकी सिफ़ारिश की, न उनके अ़ज़ाब में कुछ कमी का ज़रिया बने।

यहाँ एक सवाल यह है कि इस आयत से तो यह मालूम होता है कि जिस वक़्त ये सवाल व जवाब होंगे उस वक़्त झूठे माबूद ग़ायब होंगे, कोई सामने न होगा, और क़ुरआन मजीद की एक आयत में इरशाद हैः

اُحْشُرُوا الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا وَاَزْوَاجَهُمْ وَمَا كَانُوْا يَعْبُدُوْنَ.

"यानी क़ियामत में हक़ तआ़ला का हुक्म यह होगा कि जमा कर दो ज़ालिमों को और उनके साथियों को और उनको जिनकी ये लोग इबादत किया करते थे।"

इससे मालूम होता है कि मेहशर में बातिल और झूठे माबूद भी हाज़िर व मौजूद होंगे।

जवाब यह है कि इस आयत में उनके ग़ायब होने से मुराद यह है कि मददगार व शरीक या सिफ़ारिश करने वाले की हैसियत से ये ग़ायब होंगे कि उन लोगों को कोई नफ़ा न पहुँचा सकेंगे, वैसे हाज़िर व मौजूद होंगे। इस तरह दोनों आयतों में कोई टकराव न रहा। और यह भी हो सकता है कि एक वक़्त में ये सब एक जगह जमा कर दिये जायें फिर अलग-अलग हो जायें, और यह सवाल अलग और जुदा होने के बाद किया जाये।

इन दोनों आयतों में यह बात ख़ुसूसियत के साथ याद रखने की है कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने मुश्रिकों को हश्र के हौलनाक मैदान में जो यह इख़्तियार दिया कि वे आज़ादाना जो चाहें कह सकें, यहाँ तक कि झूठी क़सम खाकर उन्होंने शिर्क से इनकार कर दिया। इसमें शायद इस तरफ़ भी इशारा है कि झूठ बोलने की आ़दत एक ऐसी ख़बीस आ़दत है जो छूटती नहीं, यहाँ तक कि ये लोग जो दुनिया में मुसलमानों के सामने झूठी क़समें खा लिया करते थे यहाँ भी बाज़ न आये और अल्लाह की पूरी मख़्लूक़ के सामने इनकी रुस्वाई हुई। इसी लिये क़ुरआन व हदीस में झूठ बोलने पर सख़्त सज़ा की धमकी और निंदा फ़रमाई गयी है। क़ुरआन में जगह-जगह झूठे पर लानत के अलफ़ाज़ आये हैं, और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि झूठ से बचो, क्योंकि झूठ फ़ुजूर (गुनाह) का साथी है, और झूठ और फ़ुजूर दोनों जहन्नम में जायेंगे। (सही इब्ने हिब्बान)

और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया गया कि वह अ़मल क्या है जिससे आदमी दोज़ख़ में जाये? आपने फ़रमाया कि वह अ़मल झूठ है। (मुस्नद अहमद) और

मेराज की रात में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक शख़्स को देखा कि उसकी दोनों बाँछें चीर दी जाती हैं, वो फिर ठीक हो जाती हैं, फिर चीर दी जाती हैं, इसी तरह यह अ़मल उसके साथ क़ियामत तक होता रहेगा। आपने हज़रत जिब्रील-ए-अमीन से मालूम किया कि यह कौन है? तो उन्होंने फ़रमाया कि यह झूठ बोलने वाला है।

और मुस्नद अहमद की एक रिवायत में है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि आदमी पूरा मोमिन उस वक़्त तक नहीं हो सकता जब तक झूठ को बिल्कुल न छोड़ दे, यहाँ तक कि मज़ाक़ दिल्लगी में भी झूठ न बोले।

और बैहक़ी वग़ैरह में सही सनद से नक़ल किया गया है कि मुसलमान की तबीयत में और बुरी ख़स्लतें तो हो सकती हैं मगर ख़ियानत (चोरी व बददियानती) और झूठ नहीं हो सकता। और एक हदीस में है कि झूठ इनसान के रिज़्क़ को घटा देता है।

وَهُمْ يَنْهَوْنَ عَنْهُ.................الخ

"और ये लोग रोकते हैं उससे........." आ़म मुफ़स्सिरीन इमाम ज़ह्हाक, क़तादा, मुहम्मद बिन हनफ़िया रहमतुल्लाहि अ़लैहिम के नज़दीक यह आयत मक्का के आ़म काफ़िरों के बारे में नाज़िल हुई है, जो लोगों को क़ुरआन सुनने और उस पर अ़मल करने से रोकते थे, और ख़ुद भी उससे दूर-दूर रहते थे। और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह भी मन्क़ूल है कि यह आयत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा अबू तालिब और दूसरे उन चचाओं के बारे में है जो लोगों को आप सल्ल. को तकलीफ़ पहुँचाने से रोकते और आपकी हिमायत करते थे। मगर न क़ुरआन पर ईमान लाते न इस पर अ़मल करते। इस सूरत में 'यन्हौ-न अ़न्हु' (रोकते थे उस से) में उस से मुराद क़ुरआने करीम के बजाय नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम होंगे।

(तफ़सीरे मज़हरी, इब्ने अबी हातिम की सईद बिन अबी हिलाल वाली रिवायत के हवाले से)

وَلَوْ تَرٰۤى اِذْ وُقِفُوْا عَلَى النَّارِ فَقَالُوْا يٰلَيْتَنَا نُرَدُّ وَلَا نُكَذِّبَ بِاٰيٰتِ رَبِّنَا وَنَكُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝ بَلْ بَدَا لَهُمْ مَّا كَانُوْا يُخْفُوْنَ مِنْ قَبْلُ ؕ وَلَوْ رُدُّوْا لَعَادُوْا لِمَا نُهُوْا عَنْهُ وَاِنَّهُمْ لَكٰذِبُوْنَ ۝ وَقَالُوْۤا اِنْ هِىَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا وَمَا نَحْنُ بِمَبْعُوْثِيْنَ ۝ وَلَوْ تَرٰۤى اِذْ وُقِفُوْا عَلٰى رَبِّهِمْ ؕ قَالَ اَلَيْسَ هٰذَا بِالْحَقِّ ؕ قَالُوْا بَلٰى وَرَبِّنَا ؕ قَالَ فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ۝ قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِلِقَآءِ اللّٰهِ ؕ حَتّٰۤى اِذَا جَآءَتْهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً قَالُوْا يٰحَسْرَتَنَا عَلٰى مَا فَرَّطْنَا فِيْهَا ۙ وَهُمْ يَحْمِلُوْنَ اَوْزَارَهُمْ عَلٰى ظُهُوْرِهِمْ ؕ اَلَا سَآءَ مَا يَزِرُوْنَ ۝ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَاۤ اِلَّا لَعِبٌ وَّلَهْوٌ ؕ وَلَلدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِّلَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ ؕ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ ۝

ع ٣ ٩

व लौ तरा इज़् वुक़िफ़ू अ़लन्नारि फ़क़ालू या-लैतना नुरद्दु व ला नुकज़्ज़ि-ब बिआयाति रब्बिना व नकू-न मिनल् मुअ्मिनीन (27) बल् बदा लहुम् मा कानू युख़्फ़ू-न मिन् क़ब्लु, व लौ रुद्दू लअ़ादू लिमा नुहू अ़न्हु व इन्नहुम् लकाज़िबून (28) व क़ालू इन् हि-य इल्ला हयातुनद्-दुन्या व मा नह़्नु बिमब्अूसीन (29) व लौ तरा इज़् वुक़िफ़ू अ़ला रब्बिहिम्, क़ा-ल अलै-स हाज़ा बिल्हक़्क़ि, क़ालू बला व रब्बिना, क़ा-ल फ़ज़ूक़ुल्-अ़ज़ा-ब बिमा कुन्तुम् तक्फ़ुरून (30) ❁	और अगर तू देखे जिस वक़्त कि खड़े किए जायेंगे वे दोज़ख़ पर, पस कहेंगे ऐ काश हम फिर भेज दिये जायें और हम न झुठलायें अपने रब की आयतों को और हो जायें हम ईमान वालों में। (27) कोई नहीं! बल्कि ज़ाहिर हो गया जो छुपाते थे पहले, और अगर फिर भेजे जायें तो फिर भी वही काम करें जिससे मना किये गये थे, और वे बेशक झूठे हैं। (28) और कहते हैं कि हमारे लिये ज़िन्दगी नहीं मगर यही दुनिया की, और हमको फिर नहीं ज़िन्दा होना। (29) और काश कि तू देखे जिस वक़्त वे खड़े किये जायेंगे अपने रब के सामने, फ़रमायेगा- क्या यह सच नहीं? कहेंगे क्यों नहीं, क़सम है अपने रब की। फ़रमायेगा तो चखो अ़ज़ाब बदले में अपने कुफ़्र के। (30) ❁
क़द् ख़सिरल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिलिक़ा-इल्लाहि, हत्ता इज़ा जाअत्हुमुस्-सा-अ़तु बग़्-ततन् क़ालू या हस्र-तना अ़ला मा फ़र्रत्ना फ़ीहा व हुम् यह़्मिलू-न औज़ारहुम् अ़ला ज़ुहूरिहिम्, अला सा-अ मा यज़िरून (31) व मल्हयातुद्दुन्या इल्ला लअ़िबुंव्-व लह़्वुन्, व लद्दारुल्-आख़ि-रतु ख़ैरुल् लिल्लज़ी-न यत्तक़ू-न, अ-फ़ला तअ़्क़िलून (32)	तबाह हुए वे लोग जिन्होंने झूठ जाना मिलना अल्लाह का, यहाँ तक कि जब आ पहुँचेगी उन पर क़ियामत अचानक तो कहेंगे ऐ अफ़सोस! कैसी कोताही हमने उसमें की और वे उठायेंगे अपने बोझ अपनी पीठों पर, ख़बरदार हो जाओ कि बुरा बोझ है जिसको वे उठायेंगे। (31) और नहीं है ज़िन्दगानी दुनिया की मगर खेल और जी बहलाना, और आख़िरत का घर बेहतर है परहेज़गारों के लिये, क्या तुम नहीं समझते। (32)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और अगर आप (इनको) उस वक़्त देखें (तो बढ़ा हौलनाक वाक़िआ नज़र आये) जबकि ये (इनकारी लोग) दोज़ख़ के पास खड़े किए जाएँगे (और क़रीब होगा कि जहन्नम में डाल दिये जायें) तो (हज़ारों तमन्नाओं के साथ) कहेंगे- क्या अच्छी बात हो कि हम (दुनिया में) फिर वापस भेज दिए जाएँ। और (अगर ऐसा हो जाए तो) हम (फिर) अपने परवर्दिगार की आयतों (जैसे क़ुरआन वग़ैरह) को झूठा न बताएँ और हम (ज़रूर) ईमान वालों में से हो जाएँ। (हक़ तआ़ला फ़रमाते हैं कि इनकी यह तमन्ना और वायदा सच्ची दिलचस्पी और फ़रमाँबरदारी के इरादे से नहीं) बल्कि (इस वक़्त एक मुसीबत में फंस रहे हैं कि) जिस चीज़ को इससे पहले (दुनिया में) दबाया (और मिटाया) करते थे वह इनके सामने आ गई है। (मुराद उस चीज़ से आख़िरत का अ़ज़ाब है, जिसकी धमकी और सज़ा की चेतावनी कुफ़्र व नाफ़रमानी पर दुनिया में इनको दी जाती थी। और दबाने से मुराद इनकार है, मतलब यह है कि इस वक़्त जान को बन रही है इसलिये जान बचाने को ये सारे वायदे हो रहे हैं, और दिल से हरगिज़ वायदा पूरा करने का इरादा नहीं, यहाँ तक कि) अगर (मान लो) ये लोग फिर वापस भी भेज दिए जाएँ तब भी ये वही काम करें जिससे इनको मना किया गया था (यानी कुफ़्र व नाफ़रमानी) और यक़ीनन ये लोग (इन वायदों में) बिल्कुल झूठे हैं (यानी न इस वक़्त वायदा पूरा करने का इरादा न दुनिया में जाकर वायदा पूरा करने की इनसे संभावना और अपेक्षा है)। और ये (इनकारी लोग) कहते हैं कि जीना और कहीं नहीं सिर्फ़ यही फ़िलहाल का जीना है, और हम (इस ज़िन्दगी के ख़त्म होने के बाद भी) ज़िन्दा न किए जाएँगे (जैसा कि नबी हज़रात फ़रमाते हैं)। और अगर आप (उनको) उस वक़्त देखें (तो बड़ा अ़जीब वाक़िआ नज़र आये) जबकि वे अपने रब के सामने खड़े किए जाएँगे और अल्लाह तआ़ला फ़रमाएगा कि (कहो) क्या यह (क़ियामत के दिन दोबारा ज़िन्दा होना) हक़ीक़त और वास्तविक चीज़ नहीं है? वे कहेंगे बेशक (हक़ीक़त है) क़सम अपने रब की! अल्लाह तआ़ला फ़रमाएगा तो अब अपने कुफ़्र के बदले अ़ज़ाब चखो (उसके बाद दोज़ख़ में भेज दिये जायेंगे)।

बेशक (सख़्त) घाटे में पड़े वे लोग जिन्होंने अल्लाह तआ़ला से मिलने को (यानी क़ियामत के दिन ज़िन्दा होकर ख़ुदा तआ़ला के सामने पेशी को) झुठलाया, (और यह झुठलाना थोड़े दिनों रहेगा) यहाँ तक कि जब वह मुक़र्ररा वक़्त (यानी क़ियामत का दिन अपने से संबन्धित मामलात के साथ) उन पर अचानक (बिना सूचना के) आ पहुँचेगा (उस वक़्त सारे दावे और झुठलाना ख़त्म हो जायेंगे और) कहने लगेंगे कि हाय अफ़सोस हमारी उस कोताही (और ग़फ़लत) पर जो इस (क़ियामत) के बारे में (हम से) हुई। और हालत उनकी यह होगी कि वे अपने (कुफ़्र व नाफ़रमानी का) बोझ अपनी कमर पर लादे होंगे। ख़ूब सुन लो कि बुरी होगी वह चीज़ जिसको अपने ऊपर लादेंगे। और दुनियावी ज़िन्दगानी तो कुछ भी नहीं सिवाय खेल-कूद और तमाशे के (इस वजह से कि न यह बाक़ी रहने वाली है और न कोई मुस्तक़िल नफ़ा देने वाली) और पिछला घर (यानी आख़िरत) मुत्तक़ियों के लिए बेहतर है। क्या तुम सोचते समझते नहीं हो?

मआरिफ़ व मसाईल

इस्लाम के तीन बुनियादी उसूल हैं- तौहीद (अल्लाह को एक माबूद मानने पर यक़ीन व ईमान), रिसालत (हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अल्लाह का नबी व रसूल होने पर ईमान), आख़िरत के अ़क़ीदे पर ईमान। बाक़ी सब अ़क़ीदे इन्हीं तीनों के अन्दर दाख़िल हैं। और ये वो उसूल हैं जो इनसान को उसकी अपनी हक़ीक़त और ज़िन्दगी के मक़सद से परिचित कराके उसकी ज़िन्दगी में बदलाव पैदा करते हैं और उसको एक सीधी और साफ़ राह पर खड़ा कर देते हैं। इनमें भी अ़मली तौर पर आख़िरत का अ़क़ीदा और उसमें हिसाब, जज़ा व सज़ा का अ़क़ीदा एक ऐसा इन्क़िलाबी अ़क़ीदा है जो इनसान के हर अ़मल का रुख़ एक ख़ास अन्दाज़ पर फेर देता है। यही वजह है कि क़ुरआने करीम के तमाम मज़ामीन इन्हीं तीन में घूमते रहते हैं। ज़िक्र की हुई आयत में ख़ुसूसियत के साथ आख़िरत का सवाल व जवाब, वहाँ के सख़्त और लम्बे समय तक रहने वाले सवाब व अ़ज़ाब का और फ़ानी दुनिया की हक़ीक़त का बयान है।

पहली आयत में इनकार करने वाले मुजरिमों का यह हाल बयान फ़रमाया गया है कि आख़िरत में जब उनको दोज़ख़ के किनारे खड़ा किया जायेगा और वे अपने गुमान व ख़्याल से भी ज़्यादा हौलनाक अ़ज़ाब को देखेंगे तो वे यह तमन्ना ज़ाहिर करेंगे कि काश हमें फिर दुनिया में भेज दिया जाता तो हम अपने रब की भेजी हुई आयतों और अहकाम को न झुठलाते बल्कि उन पर ईमान लाते और मोमिनों में दाख़िल हो जाते।

दूसरी आयत में अ़लीम व ख़बीर अह्कमुल-हाकिमीन (यानी अल्लाह तआ़ला) ने उनकी इस घबराई हुई तमन्ना की पोल इस तरह खोली कि इरशाद फ़रमाया- ये लोग जैसे हमेशा से झूठ के आ़दी थे ये अपने इस क़ौल और तमन्ना में भी झूठे हैं, और बात इसके अ़लावा नहीं है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के ज़रिये जो तथ्य इनके सामने लाये गये थे और ये लोग उनको जानने पहचानने के बावजूद महज़ हठधर्मी से या दुनिया के लालच की वजह से उन तथ्यों और सच्चाईयों पर पर्दा डालने की कोशिश किया करते थे आज वो सब एक-एक करके इनके सामने आ गये। अल्लाह जल्ल शानुहू के बेमिस्ल होने और उसकी कामिल क़ुदरत के सुबूत और निशानियाँ आँखों से देखे, नबियों की सच्चाई को देखा, आख़िरत में दोबारा ज़िन्दा होने का मसला जिसका हमेशा इनकार रहता था अब हक़ीक़त बनकर सामने आ गया, जज़ा व सज़ा का मामला देखा, दोज़ख़ को देखा तो अब इनके पास इनकार व मुख़ालफ़त की कोई हुज्जत और दलील बाक़ी न रही, इसलिये यूँ ही कहने लगे कि काश हम फिर दुनिया में वापस हो जाते तो मोमिन होकर लौटते।

लेकिन इनके पैदा करने वाले अ़लीम व ख़बीर (सब कुछ जानने वाले और हर चीज़ की ख़बर रखने वाले) मालिक ने फ़रमाया कि अब तो ये ऐसा कह रहे हैं, लेकिन मान लो इनको दोबारा दुनिया में भेज दिया जाये तो ये फिर अपने इस क़ौल व क़रार को भूल जायेंगे, और फिर सब कुछ वही करेंगे जो पहले किया था, और जिन हराम चीज़ों से इनको रोका गया था ये फिर

उनमें मुब्तला हो जायेंगे। इसलिये इनका यह कहना भी एक झूठ और फ़रेब है।

उनके इस क़ौल को झूठ फ़रमाना परिणाम के लिहाज़ से भी हो सकता है कि ये जो वायदा अब कर रहे हैं कि अगर दोबारा दुनिया में लौटाये जायें तो झुठलायेंगे नहीं, मगर ऐसा होगा नहीं, ये वहाँ जाकर फिर भी झुठलायेंगे ही। और इस झुठलाने का यह मतलब भी हो सकता है कि इस वक़्त भी जो कुछ ये लोग कह रहे हैं सच्चे इरादे से नहीं बल्कि केवल वक़्ती मुसीबत को टालने के तौर पर अ़ज़ाब से बचने के लिये कह रहे हैं, दिल में अब भी इनका इरादा नहीं।

तीसरी आयत में जो यह इरशाद फ़रमायाः

وَقَالُوْٓا اِنْ هِيَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا

(और कहते हैं कि हमारे लिये सिर्फ़ यही दुनिया की ज़िन्दगी है) इसका ताल्लुक़ "आ़दू" के साथ है, जिसके मायने यह हैं कि अगर इनको दोबारा भी दुनिया में लौटा दिया जाये तो फिर दुनिया में पहुँचकर यही कहेंगे कि हम तो इस दुनिया की ज़िन्दगी के सिवा किसी दूसरी ज़िन्दगी को नहीं मानते, बस यहीं की ज़िन्दगी ज़िन्दगी है, दोबारा हम को ज़िन्दा नहीं किया जायेगा।

यहाँ एक सवाल यह होता है कि जब क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने को और फिर हिसाब किताब और जज़ा व सज़ा को आँखों से देख चुकेंगे, तो यह कैसे मुम्किन होगा कि फिर यहाँ आकर उसका इनकार कर दें।

जवाब यह है कि इनकार करने के लिये यह लाज़िम नहीं है कि वास्तव में उनको इन वाक़िआत और हक़ीक़तों का यक़ीन न रहे, बल्कि जिस तरह आज बहुत से काफ़िर व मुजरिम लोग इस्लामी सच्चाईयों का पूरा यक़ीन रखते हुए सिर्फ़ अपने बैर व दुश्मनी के सबब इनकार व झुठलाने पर जमे हुए हैं, इसी तरह ये लोग दुनिया में वापस आने के बाद क़ियामत क़ायम होने और दोबारा ज़िन्दा और आख़िरत के तमाम हालात का पूरा यक़ीन रखने के बावजूद सिर्फ़ शरारत और दुश्मनी से फिर झुठलाने पर उतर आयेंगे, जैसा कि क़ुरआने करीम ने इसी मौजूदा ज़िन्दगी में कुछ काफ़िरों के बारे में इरशाद फ़रमाया हैः

وَجَحَدُوْا بِهَا وَاسْتَيْقَنَتْهَآ اَنْفُسُهُمْ ظُلْمًا وَّعُلُوًّا

"यानी ये लोग हमारी आयतों का इनकार तो कर रहे हैं मगर इनके दिलों में उनके हक़ होने का पूरा यक़ीन है।"

जैसे यहूदियों के बारे में इरशाद फ़रमाया है कि वे ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इस तरह पहचानते हैं जैसे ये लोग अपने बेटों को पहचाना करते हैं, मगर इसके बावजूद आपकी मुख़ालफ़त पर तुले हुए हैं।

ख़ुलासा यह है कि कायनात के ख़ालिक़ (यानी अल्लाह तआ़ला) अपने हमेशा से मौजूद ज़ाती इल्म से जानते हैं कि इन लोगों का यह कहना कि दोबारा दुनिया में भेज दिये जायें तो नेक मोमिन हो जायेंगे, बिल्कुल झूठ और फ़रेब है। अगर इनके कहने के मुताबिक़ दोबारा दुनिया को पैदा करके इनको उसमें छोड़ दिया जाये तो ये फिर वही सब कुछ करेंगे जो पहली ज़िन्दगी

में किया था।

तफ़सीरे मज़हरी में तबरानी के हवाले से यह रिवायत नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से नक़्ल की है कि हिसाब किताब के वक़्त हक़ तआ़ला हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम को इन्साफ़ की तराज़ू के पास खड़ा करके फ़रमायेंगे कि अपनी औलाद के आमाल का ख़ुद मुआ़यना करें और जिस शख़्स के नेक आमाल उसके गुनाहों से एक ज़र्रा भी बढ़ जायें तो उसको आप जन्नत में पहुँचा सकते हैं। और हक़ तआ़ला का इरशाद होगा कि मैं जहन्नम के अ़ज़ाब में सिर्फ़ उसी शख़्स को दाख़िल करूँगा जिसके बारे में मैं जानता हूँ कि वह अगर दोबारा दुनिया में भेज दिया जाये तो फिर भी वही हरकतें करेगा जो पहले कर गया है।

وَهُمْ يَحْمِلُوْنَ اَوْزَارَهُمْ.

हदीस की रिवायतों में है कि क़ियामत के दिन नेक लोगों के आमाल उनकी सवारी बन जायेंगी, और बदकारों के बुरे आमाल भारी बोझ की शक्ल में उनके सरों पर लादे जायेंगे।

यहाँ यह बात ख़ास तौर से क़ाबिले ज़िक्र है कि काफ़िर व गुनाहगार मैदाने हश्र में अपनी जान बचाने के लिये बोखलाहट के साथ विभिन्न और अनेक बातें करेंगे, कहीं झूठी क़समें खा जायेंगे, कहीं यह तमन्ना करेंगे कि दोबारा दुनिया में लौटा दिये जायें, मगर यह कोई न कहेगा कि हम अब ईमान ले आये और अब नेक अ़मल किया करेंगे। क्योंकि यह हक़ीक़त बहुत आसानी और स्पष्टता के साथ उनके सामने आ जायेगी कि आख़िरत का जहान अ़मल की जगह नहीं, और यह कि ईमान का सही होना उसी वक़्त तक है जब तक ईमान ग़ैब के साथ हो, देखने के बाद की तस्दीक़ तो अपने देखने पर अ़मल है, ख़ुदा और रसूल की तस्दीक़ नहीं। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला की रज़ा, उसके फल और इनामात यानी हमेशा का ऐश व राहत, दुनिया में अमन व इत्मीनान की उम्दा ज़िन्दगी और आख़िरत में जन्नत का परवाना हासिल करना सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी के ज़रिये हो सकता है, न इससे पहले रूहों के आ़लम में इसका हासिल करना मुम्किन है और न इससे गुज़रने के बाद आख़िरत के जहान में इसको हासिल किया जाना मुम्किन है।

इससे वाज़ेह हो गया कि दुनिया की ज़िन्दगी बहुत बड़ी नेमत ओर सबसे ज़्यादा क़ीमती चीज़ है, जिसमें यह अ़ज़ीमुश्शान सौदा ख़रीदा जा सकता है। इसी लिये इस्लाम में ख़ुदकुशी हराम और मौत की दुआ़ या तमन्ना करना मना है। इसमें ख़ुदा तआ़ला की एक भारी नेमत की नाशुक्री है। कुछ बुज़ुर्गों के हालात में है कि वफ़ात के क़रीब मौलाना जामी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का यह शे'र उनकी ज़बान पर थाः

बा दो रोज़े ज़िन्दगी जामी नशुद सैरे ग़मत्
वह चे ख़ुश बूदे कि उम्रे जावेदानी दाशतेम

यानी दो दिन की ज़िन्दगी तेरे ग़म में शरीक होने के लिये काफ़ी नहीं। क्या ही अच्छा होता हमें एक लम्बी ज़िन्दगी नसीब होती। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

इससे यह भी वाज़ेह हो गया कि उक्त आयतों में से आख़िरी आयत में और दूसरी अनेक क़ुरआनी आयतों में जो दुनिया की ज़िन्दगी को खेल-तमाशा फ़रमाया है, या बहुत सी हदीसों में दुनिया की जो बुराई आई है इससे मुराद दुनियावी ज़िन्दगी के वो लम्हात और घड़ियाँ हैं जो अल्लाह तआ़ला के ज़िक्र से ग़फ़लत में गुज़रें, वरना जो वक़्त अल्लाह तआ़ला की फ़रमाँबरदारी व ज़िक्र में गुज़रता है उसके बराबर दुनिया की कोई नेमत व दौलत नहीं:

दिन वही दिन है शब वही शब है
जो तेरी याद में गुज़र जाये

एक हदीस से भी इसकी ताईद होती है जिसमें इरशाद है:

اَلدُّنْيَا مَلْعُوْنٌ وَمَلْعُوْنٌ مَّافِيْهَا اِلَّا ذِكْرُ اللّٰهِ اَوْعَالِمٌ اَوْمُتَعَلِّمٌ.

"यानी दुनिया भी मलऊन (यानी अल्लाह की रहमत से दूर) है, और जो कुछ इसमें है सब मलऊन है, मगर अल्लाह की याद और आ़लिम या तालिबे इल्म।"

और अगर ग़ौर से देखा जाये तो आ़लिम और तालिबे इल्म भी ज़िक्रुल्लाह ही में दाख़िल हो जाते हैं, क्योंकि इल्म से वही इल्म मुराद है जो अल्लाह तआ़ला की रज़ा का सबब बने। तो ऐसे इल्म का सीखना और सिखाना दोनों ही ज़िक्रुल्लाह में दाख़िल हैं, बल्कि इमाम जज़री रह. की वज़ाहत के मुताबिक़ दुनिया का हर वह काम जो अल्लाह तआ़ला की इताअ़त यानी शरीअ़त के अहकाम की तालीम के मुताबिक़ किया जाये वह सब ज़िक्रुल्लाह ही में दाख़िल है। इससे मालूम हुआ कि दुनिया के सब ज़रूरी काम, रोज़ी कमाने के तमाम जायज़ तरीक़े और दूसरी ज़रूरतें जो शरीअ़त की हदों और सीमाओं से बाहर न हों, वे सब ज़िक्रुल्लाह में दाख़िल हैं। बाल-बच्चे, घर वाले, रिश्तेदार, यार-दोस्त, पड़ोसी और मेहमान वग़ैरह के हुक़ूक़ की अदायेगी को सही हदीसों में सदक़े और इबादत से ताबीर फ़रमाया गया है।

हासिल यह हुआ कि इस दुनिया में हक़ तआ़ला की इताअ़त और ज़िक्रुल्लाह के सिवा कोई चीज़ अल्लाह तआ़ला के नज़दीक पसन्दीदा नहीं। उस्ताज़े मोहतरम हज़रत मौलाना अनवर शाह साहिब क़ुद्दि-स सिर्रुहू ने ख़ूब फ़रमाया है:

बगुज़र अज़् यादे गुल व गुलबन कि हेचम याद नेस्त
दर ज़मीन व आसमाँ जुज़ ज़िक्रे हक़ आबाद नेस्त

कि फूल और चमन का तज़किरा फ़ुज़ूल है क्योंकि मुझे अब कुछ याद नहीं। ज़मीन व आसमान (यानी पूरे जहान) में सिवाय हक़ तआ़ला के ज़िक्र के कोई भी क़ाबिले तवज्जोह और बाक़ी रहने वाली चीज़ नहीं है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि इस दुनिया में ऐसी चीज़ जो हर इनसान को हासिल है और सबसे ज़्यादा क़ीमती और प्यारी है, वह उसकी ज़िन्दगी है। और यह भी मालूम है कि हर इनसान की ज़िन्दगी का एक सीमित वक़्त है, और यह भी मालूम है कि अपनी ज़िन्दगी की सही हद किसी को मालूम नहीं कि सत्तर साल होगी या सत्तर घण्टे, या एक साँस की भी मोहलत न मिलेगी।

दूसरी तरफ़ यह मालूम हो गया कि अल्लाह की रज़ा की क़ीमती दौलत जो दुनिया व आख़िरत की राहत व ऐश और हमेशा के आराम की ज़ामिन (गारंटी देने वाली) है, वह सिर्फ़ इसी सीमित दुनियावी ज़िन्दगी में हासिल की जा सकती है। अब हर इनसान जिसको अल्लाह तआ़ला ने अ़क्ल व होश दिया है, ख़ुद फ़ैसला कर सकता है कि ज़िन्दगी के इन सीमित लम्हात और घड़ियों को किस काम में ख़र्च करना चाहिये, बिला शुब्हा अ़क्ल का तक़ाज़ा यही होगा कि इन क़ीमती वक़्तों को ज़्यादा से ज़्यादा उस काम में ख़र्च किया जाये जिससे अल्लाह तआ़ला की रज़ा हासिल हो, बाक़ी काम जो इस ज़िन्दगी को बरक़रार रखने के लिये ज़रूरी हैं उनको ज़रूरत के मुताबिक़ ही इख़्तियार किया जाये।

एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اَلْكَيِّسُ مَنْ دَانَ نَفْسَهٗ وَرَضِيَ بِالْكَفَافِ وَعَمِلَ لِمَابَعْدَ الْمَوْتِ.

"यानी अ़क्लमन्द होशियार वह आदमी है जो अपने नफ़्स की निगरानी और जायज़ा लेता रहे और ज़रूरत पूरी होने के बराबर रोज़ी कमाने पर राज़ी हो जाये और मौत के बाद की ज़िन्दगी के लिये सारा अ़मल (यानी काम करने की ताक़त) वक़्फ़ कर दे।"

قَدْ نَعْلَمُ اِنَّهٗ لَيَحْزُنُكَ الَّذِيْ يَقُوْلُوْنَ فَاِنَّهُمْ لَا يُكَذِّبُوْنَكَ وَلٰكِنَّ
الظّٰلِمِيْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ يَجْحَدُوْنَ ۝ وَلَقَدْ كُذِّبَتْ رُسُلٌ مِّنْ قَبْلِكَ فَصَبَرُوْا عَلٰى مَا كُذِّبُوْا وَاُوْذُوْا حَتّٰى
اَتٰىهُمْ نَصْرُنَا ۚ وَلَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِ اللّٰهِ ۚ وَلَقَدْ جَآءَكَ مِنْ نَّبَاِى الْمُرْسَلِيْنَ ۝ وَاِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكَ
اِعْرَاضُهُمْ فَاِنِ اسْتَطَعْتَ اَنْ تَبْتَغِيَ نَفَقًا فِى الْاَرْضِ اَوْ سُلَّمًا فِى السَّمَآءِ فَتَاْتِيَهُمْ بِاٰيَةٍ ۚ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ
لَجَمَعَهُمْ عَلَى الْهُدٰى فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْجٰهِلِيْنَ ۝ اِنَّمَا يَسْتَجِيْبُ الَّذِيْنَ يَسْمَعُوْنَ ۘ وَالْمَوْتٰى يَبْعَثُهُمُ
اللّٰهُ ثُمَّ اِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ۝ وَقَالُوْا لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ ۚ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ قَادِرٌ عَلٰٓى اَنْ يُّنَزِّلَ اٰيَةً
وَّلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ۝ وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِى الْاَرْضِ وَلَا طٰٓئِرٍ يَّطِيْرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّآ اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ ۚ مَا فَرَّطْنَا
فِى الْكِتٰبِ مِنْ شَيْءٍ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ يُحْشَرُوْنَ ۝ وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا صُمٌّ وَّبُكْمٌ فِى الظُّلُمٰتِ ۗ مَنْ يَّشَاِ اللّٰهُ
يُضْلِلْهُ ۗ وَمَنْ يَّشَاْ يَجْعَلْهُ عَلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ قُلْ اَرَءَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰىكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ اَوْ اَتَتْكُمُ السَّاعَةُ
اَغَيْرَ اللّٰهِ تَدْعُوْنَ ۚ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝ بَلْ اِيَّاهُ تَدْعُوْنَ فَيَكْشِفُ مَا تَدْعُوْنَ اِلَيْهِ اِنْ شَآءَ وَ
تَنْسَوْنَ مَا تُشْرِكُوْنَ ۝

क़द् नअ्लमु इन्नहू ल-यह़्ज़ुनुकल्लज़ी यक़ूलू-न फ़-इन्नहुम् ला युकज़्ज़िबून-क	हमको मालूम है कि तुझको ग़म में डालती हैं उनकी बातें सो वे तुझको नहीं झुठलाते लेकिन ये ज़ालिम तो अल्लाह की

व लाकिन्नज़्ज़ालिमी-न बिआयाति-ल्लाहि यज्हदून (33) व ल-क़द् कुज़्ज़िबत् रुसुलुम् मिन् क़ब्लि-क फ़-स-बरू अ़ला मा कुज़्ज़िबू व ऊज़ू हत्ता अताहुम् नस्रुना व ला मुबद्दि-ल लि-कलिमातिल्लाहि व ल-क़द् जाअ-क मिन् न-बइल् मुर्सलीन (34) व इन् का-न कबु-र अ़लै-क इअ़्राज़ुहुम् फ़-इनिस्-ततअ्-त अन् तब्तगि-य न-फ़क़न् फ़िल्अर्ज़ि औ सुल्लमन् फ़िस्समा-इ फ़-तअ्तियहुम् बिआयतिन्, व लौ शाअल्लाहु ल-ज-म-अ़हुम् अ़लल्हुदा फ़ला तकूनन्-न मिनल्-जाहिलीन (35) ● इन्नमा यस्तजीबुल्लज़ी-न यस्मअ़ू-न, वल्मौता यब्अ़सुहुमुल्लाहु सुम्-म इलैहि युर्जअ़ून (36) व क़ालू लौ ला नुज़्ज़ि-ल अ़लैहि आयतुम् मिर्रब्बिही, क़ुल् इन्नल्ला-ह क़ादिरुन् अ़ला अंय्युनज़्ज़ि-ल आयतंव्-व लाकिन्-न अक्स-रहुम् ला यअ़्लमून (37) व मा मिन् दाब्बतिन् फ़िल्अर्ज़ि व ला ताइरिंय्यतीरु बि-जनाहैहि इल्ला उ-ममुन् अम्सालुकुम्, मा फ़र्रत्ना

आयतों का इनकार करते हैं। (33) और झुठलाये गये हैं बहुत से रसूल तुझसे पहले, पस सब्र करते रहे झुठलाने पर और तकलीफ़ पहुँचाने पर यहाँ तक कि पहुँची उनको हमारी मदद, और कोई नहीं बदल सकता अल्लाह की बातें, और तुझको पहुँच चुके हैं कुछ हालात रसूलों के। (34) और अगर तुझ पर गराँ (भारी और नागवार) है उनका मुँह फेरना तो अगर तुझसे हो सके कि ढूँढ निकाले कोई सुरंग ज़मीन में या कोई सीढ़ी आसमान में, फिर ला दे उनके पास एक मोजिज़ा, और अगर अल्लाह चाहता तो जमा कर देता सब को सीधी राह पर सो तू मत हो नादानों में। (35) ● मानते वही हैं जो सुनते हैं, और मुर्दों को ज़िन्दा करेगा अल्लाह, फिर उसकी तरफ़ लाये जायेंगे। (36) और कहते हैं- क्यों नहीं उतरी उस पर कोई निशानी उसके रब की तरफ़ से, कह दे कि अल्लाह को क़ुदरत है इस बात पर कि उतारे निशानी लेकिन उनमें अक्सर नहीं जानते। (37) और नहीं है कोई चलने वाला ज़मीन में और न कोई परिन्दा कि उड़ता है अपने दो बाज़ुओं से मगर हर एक उम्मत है तुम्हारी तरह, हमने नहीं छोड़ी लिखने में कोई चीज़,

फ़िल्किताबि मिन् शैइन् सुम्-म इला रब्बिहिम् युह्शरून (38) वल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना सुम्मुंव्-व बुक्मुन् फ़िज़्ज़ुलुमाति, मंय्य-शइल्लाहु युज़्लिल्हु, व मंय्यशअ् यजअ़ल्हु अ़ला सिरातिम् मुस्तक़ीम (39) क़ुल् अ-रऐ-तकुम् इन् अताकुम् अ़ज़ाबुल्लाहि औ अतत्कुमुस्सा-अ़तु अग़ैरल्लाहि तद्अ़ू-न इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (40) बल् इय्याहु तद्अ़ू-न फ़-यक्शिफ़ु मा तद्अ़ू-न इलैहि इन् शा-अ व तन्सौ-न मा तुश्रिकून (41) ❁	फिर सब अपने रब के सामने जमा होंगे। (38) और जो झुठलाते हैं हमारी आयतों को वे बहरे और गूँगे हैं अंधेरों में, जिस को चाहे अल्लाह गुमराह करे और जिस को चाहे डाल दे सीधी राह पर। (39) तू कह- देखो तो अगर आये तुम पर अ़ज़ाब अल्लाह का, या आये तुम पर क़ियामत, क्या अल्लाह के सिवा किसी और को पुकारोगे? बताओ अगर तुम सच्चे हो। (40) बल्कि उसी को पुकारते हो, फिर दूर कर देता है उस मुसीबत को जिसके लिये उसको पुकारते हो अगर चाहता है, और तुम भूल जाते हो (उनको) जिनको शरीक करते थे। (41) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

काफ़िरों की बेहूदा बातों पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अल्लाह की तरफ़ से तसल्ली

हम ख़ूब जानते हैं कि आपको इन (काफ़िरों) की बातें ग़मगीन करती हैं। सो (आप ग़म में न पड़िये बल्कि इनका मामला अल्लाह के सुपुर्द कीजिए, क्योंकि) ये लोग (डायरेक्ट) आपको झूठा नहीं कहते, लेकिन ये ज़ालिम तो अल्लाह तआ़ला की आयतों का (जान-बूझकर) इनकार करते हैं (अगरचे इससे आपको झुठलाना भी लाज़िम आता है मगर इनका असल मक़सद अल्लाह की आयतों को झुठलाना है, जैसा कि इनमें के कुछ लोग मसलन अबू जहल इसके इक़रारी भी हैं। और जब इनका असल मक़सद अल्लाह की आयतों को झुठलाना है तो इनका यह मामला ख़ुद अल्लाह तआ़ला के साथ हुआ, वह ख़ुद ही इनको समझ लेंगे, आप क्यों ग़म में मुब्तला हों) और (काफ़िरों का यह झुठलाना कोई नई बात नहीं, बल्कि) बहुत-से पैग़म्बर जो आप से पहले हुए हैं उनको भी झुठलाया जा चुका है, सो उन्होंने इस पर सब्र ही किया कि उनको झुठलाया गया, और उनको (तरह-तरह की) तकलीफ़ें पहुँचाई गईं, यहाँ तक कि हमारी

मदद उनको पहुँची (जिससे मुख़ालिफ़ मग़लूब हो गये, उस वक़्त तक वे सब्र ही करते रहे) और (इसी तरह सब्र करने के बाद आपको भी अल्लाह की मदद पहुँचेगी, क्योंकि) अल्लाह तआ़ला की बातों (यानी वायदों) को कोई बदलने वाला नहीं (और इमदाद का वायदा आप से हो चुका है, जैसा कि फ़रमाया- 'ल-अग़्लिबन्-न अ-न व रुसुली') और आपके पास कुछ पैग़म्बरों के बाज़े क़िस्से (क़ुरआन में) पहुँच चुके हैं (जिनसे अल्लाह की इमदाद और मुख़ालिफ़ों का आख़िरकार मग़लूब होना साबित हो जाता है। और हासिल इस तसल्ली का यह है कि अल्लाह तआ़ला का वायदा है कि शुरू के चन्द दिन के सब्र के बाद वह अपने रसूलों को इमदाद भेज देते हैं, जिससे दुनिया में भी हक़ का ग़लबा होता है और बातिल मग़लूब हो जाता है, और आख़िरत में भी उनको इज़्ज़त व कामयाबी मिलती है। आपके साथ भी यही मामला होने वाला है, आप दुखी व रंजीदा न हों। और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को चूँकि तमाम इनसानों के साथ शफ़क़त व मुहब्बत हद से ज़्यादा थी, आप बावजूद इस तसल्ली के यह चाहते थे कि ये मुश्रिक लोग अगर मौजूदा मोजिज़ों और नुबुव्वत की दलीलों पर संतुष्ट होकर ईमान नहीं लाते तो जिस क़िस्म के मोजिज़ों का ये मुतालबा करते हैं वही मोजिज़े ज़ाहिर हो जायें, शायद ये ईमान ले आयें, और इस एतिबार से उनका कुफ़्र देखकर सब्र न आता था, इसलिये अगली आयतों में अल्लाह तआ़ला ने बतला दिया कि अल्लाह की हिक्मत के तक़ाज़े के सबब उनके फ़रमाईशी मोजिज़े ज़ाहिर न किये जायेंगे, आप थोड़ा सा सब्र करें, उनके ज़ाहिर होने की फ़िक्र में न पड़ें। चुनाँचे फ़रमाया- 'व इन का-न कबु-र अ़लै-क' कि) और अगर आपको (इनकार करने वालों का) मुँह मोड़ना (व इनकार) नागवार गुज़रता है (और इसलिये जी चाहता है कि उनके फ़रमाईशी मोजिज़े ज़ाहिर हो जायें) तो अगर आपको यह ताक़त है कि ज़मीन में (जाने को) कोई सुरंग या आसमान में (जाने को) कोई सीढ़ी ढूँढ लो, (फिर उसके ज़रिये ज़मीन या आसमान में जाकर वहाँ से) कोई मोजिज़ा (फ़रमाईशी मोजिज़ों में से) ले आओ तो (बेहतर है आप ऐसा) कर लो, (यानी हम तो उनकी ये फ़रमाईशें ज़रूरत न होने और हिक्मत के तक़ाज़े के सबब पूरी नहीं करते, अगर आप यही चाहते हैं कि किसी न किसी तरह ये मुसलमान ही हो जायें तो आप ख़ुद इसका इन्तिज़ाम कीजिए) और अगर अल्लाह को (तक़दीरी तौर पर) मन्ज़ूर होता तो इन सब को सही रास्ते पर जमा कर देता (लेकिन चूँकि ये ख़ुद ही अपना भला नहीं चाहते इसलिये तक़दीरी तौर पर अल्लाह तआ़ला को यह मन्ज़ूर नहीं हुआ, फिर आपके चाहने से क्या होता है) सो आप (इस फ़िक्र को छोड़िये और) नादानों में से न होईए (हक़ व हिदायत की बात को तो) वही लोग क़ुबूल करते हैं जो (हक़ बात को हक़ की तलब के इरादे से) सुनते हैं, और (अगर इस इनकार व मुँह मोड़ने की पूरी सज़ा उनको दुनिया में न मिली तो क्या हुआ आख़िर एक दिन) मुर्दों को अल्लाह तआ़ला ज़िन्दा करके उठाएँगे, फिर वे सब अल्लाह ही की तरफ़ (हिसाब के लिये) लाए जाएँगे।

और ये (इनकारी) लोग (दुश्मनी के तौर पर) कहते हैं कि इन पर (हमारे फ़रमाईशी मोजिज़ों में से) कोई मोजिज़ा क्यों नाज़िल नहीं किया गया? आप फ़रमा दीजिए कि अल्लाह

तआ़ला को बेशक इस पर पूरी क़ुदरत है कि वह (ऐसा ही) मोजिज़ा नाज़िल फ़रमाएँ, लेकिन उनमें अक्सर (इसके अन्जाम से) बेख़बर हैं (इसलिये ऐसी दरख़्वास्त कर रहे हैं। और वह अन्जाम यह है कि अगर फिर भी ईमान न लायेंगे तो सब फ़ौरन हलाक कर दिये जायेंगे, जैसा कि अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है:

وَلَوْ اَنْزَلْنَا مَلَكًا لَّقُضِيَ الْاَمْرُ.

हासिल यह है कि उनका फ़रमाईशी मोजिज़ा ज़ाहिर करने की ज़रूरत तो इसलिये नहीं कि पहले मोजिज़े काफ़ी हैं। जैसा कि अल्लाह तआ़ला का क़ौल है:

اَوَلَمْ يَكْفِهِمْ اَنَّآ اَنْزَلْنَا.........الخ.

और हम जानते हैं कि ये फ़रमाईशी मोजिज़ों पर भी ईमान न लायेंगे, जिससे फ़ौरी अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ हो जायेंगे, इसलिये हिक्मत का तक़ाज़ा यह है कि इनका फ़रमाईशी मोजिज़ा ज़ाहिर न किया जाये। और आयत के आख़िर में 'व ला तकूनन्‌-न मिनल्‌-जाहिलीन' फ़रमाना मुहब्बत व शफ़क़त के तौर पर है। लफ़्ज़ जहालत अ़रबी भाषा में इस आ़म मायने के लिये भी इस्तेमाल होता है, बख़िलाफ़ उर्दू भाषा के। इसलिये इसका तर्जुमा लफ़्ज़ जहल या जहालत से करना अदब के ख़िलाफ़ है। अगली आयतों में तंबीह के लिये क़ियामत और तमाम मख़्लूक़ के दोबारा ज़िन्दा होकर जमा होने का ज़िक्र है) और जितने क़िस्म के जानदार ज़मीन पर (चाहे ख़ुश्की में या पानी में) चलने वाले हैं और जितने क़िस्म के परिन्दे (जानवर) हैं कि अपने दोनों बाज़ुओं से उड़ते हैं उनमें कोई क़िस्म ऐसी नहीं जो कि (क़ियामत के दिन ज़िन्दा होकर उठने में) तुम्हारी ही तरह के गिरोह न हों, और (अगरचे ये सब अपनी अधिकता की वजह से आ़म बोलचाल में बेइन्तिहा हों लेकिन हमारे हिसाब में सब चढ़े हुए हैं क्योंकि) हमने (अपने) दफ़्तर (लौह-ए-महफ़ूज़) में कोई चीज़ (जो क़ियामत तक होने वाली है बिना लिखे) नहीं छोड़ी (अगरचे अल्लाह तआ़ला को लिखने की कोई ज़रूरत न थी, उनका हमेशा का और हर चीज़ को अपने घेरे में लेने वाला इल्म ही काफ़ी है लेकिन लिखने के ज़रिये दर्ज कर लेना आ़म लोगों की समझ के ज़्यादा क़रीब है)। फिर (उसके बाद अपने निर्धारित वक़्त पर) सब (इनसान और जानवर) अपने परवर्दिगार के पास जमा किए जाएँगे।

(आगे फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तसल्ली का मज़मून है) और जो लोग हमारी आयतों को झुठलाते हैं वे तो (हक़ सुनने से) बहरे (जैसे) और (हक़ कहने से) गूँगे (जैसे) हो रहे हैं, (और इसकी वजह से) तरह-तरह की अंधेरियों में (गिरफ़्तार) हैं (क्योंकि हर कुफ़्र एक अंधेरी है और इनमें मुख़्तलिफ़ क़िस्म के कुफ़्र जमा हैं, फिर कुफ़्र की उन क़िस्मों को बार-बार दोहराना अलग-अलग अंधेरियाँ हैं)। अल्लाह तआ़ला जिसको चाहें (हक़ से मुँह मोड़ने की वजह से) बेराह कर दें और जिसको चाहें (अपने फ़ज़्ल से) सीधी राह पर लगा दें। आप (इन मुश्रिकों से) कहिए कि (अच्छा) अपना हाल तो बतलाओ कि अगर तुम पर ख़ुदा का कोई अ़ज़ाब आ पड़े या तुम पर क़ियामत ही आ पहुँचे तो क्या (उस अ़ज़ाब और क़ियामत की

दहशत को हटाने के वास्ते) ख़ुदा के सिवा किसी और को पुकारोगे? अगर तुम (शिर्क के दावे में) सच्चे हो (तो चाहिये कि उस वक़्त भी ग़ैरुल्लाह ही को पुकारो, लेकिन ऐसा हरगिज़ न होगा) बल्कि (उस वक़्त तो) ख़ास उसी को पुकारने लगो। फिर जिस (आफ़त) के (हटाने) के लिए तुम (उसको) पुकारो अगर वह चाहे तो उसको हटा भी दे (और न चाहे तो न भी हटाये)। और जिन-जिन को तुम (अब अल्लाह का) शरीक ठहराते हो (उस वक़्त) उन सब को भूल-भाल जाओ।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में जो यह फ़रमाया है:

فَاِنَّهُمْ لَا يُكَذِّبُوْنَكَ

यानी ये काफ़िर दर हक़ीक़त आपको नहीं झुठलाते बल्कि अल्लाह की आयतों को झुठलाते हैं। इसका वाक़िआ तफ़सीरे मज़हरी में इमाम सुद्दी रहमतुल्लाहि अलैहि की रिवायत से यह नक़ल किया है कि एक मर्तबा क़ुरैश के काफ़िरों में के दो सरदार अख़्नस बिन शुरैक़ और अबू जहल की मुलाक़ात हुई, तो अख़्नस ने अबू जहल से पूछा कि ऐ अबुल-हिकम (अरब में अबू जहल अबुल-हिकम के नाम से पुकारा जाता था, इस्लाम में उसके कुफ़्र व दुश्मनी के सबब उसे अबू जहल का लक़ब दिया गया) यह तन्हाई का मौक़ा है, मेरे और तुम्हारे कलाम को कोई तीसरा नहीं सुन रहा है, मुझे मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह (यानी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) के बारे में अपना ख़्याल सही-सही बतलाओ कि उनको सच्चा समझते हो या झूठा?

अबू जहल ने अल्लाह की क़सम खाकर कहा कि बिला शुब्हा मुहम्मद सच्चे हैं, उन्होंने उम्रभर में कभी झूठ नहीं बोला, लेकिन बात यह है कि क़ुरैश क़बीले की एक शाखा बनू क़ुसई में सारी ख़ूबियाँ और कमालात जमा हो जायें, बाक़ी क़ुरैश ख़ाली रह जायें इसको हम कैसे बरदाश्त करें? झण्डा बनी क़ुसई (क़ुसई की औलाद) के हाथ में है, हरम में हाजियों को पानी पिलाने की अहम ख़िदमत उनके हाथ में है, बैतुल्लाह की दरबानी और उसकी चाबी उनके हाथ में है, अब अगर नुबुव्वत भी हम उन्हीं के अन्दर तस्लीम कर लें तो बाक़ी क़ुरैश के पास क्या रह जायेगा।

एक दूसरी रिवायत नाजिया इब्ने कअ़ब से मन्क़ूल है कि अबू जहल ने एक मर्तबा ख़ुद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कहा कि हमें आप पर झूठ का कोई गुमान नहीं, और न हम आपको झुठलाते हैं, हाँ हम उस किताब या दीन को झुठलाते हैं जिसको आप लाये हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इन रिवायतों की बिना पर आयत को अपने असली मफ़्हूम में भी लिया जा सकता है कि ये काफ़िर आपको नहीं बल्कि अल्लाह की आयतों को झुठलाया करते हैं। और इस आयत का यह

मतलब भी हो सकता है कि ये काफ़िर अगरचे ज़ाहिर में आप ही को झुठलाया करते हैं, मगर हक़ीक़त में आपको झुठलाने का अन्जाम खुद अल्लाह तआ़ला और उसकी आयतों का झुठलाना है, जैसा कि हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- "जो शख़्स मुझे तकलीफ़ पहुँचाता है वह हक़ीक़त में अल्लाह तआ़ला को तकलीफ़ पहुँचाने के हुक्म में है।"

और छठी आयत (यानी नम्बर 38) 'व मा मिन् दाब्बतिन्......' से मालूम हुआ कि क़ियामत के दिन इनसानों के साथ तमाम जानवर भी ज़िन्दा किये जायेंगे, और इब्ने जरीर, इब्ने अबी हातिम और बैहक़ी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि क़ियामत के दिन तमाम जानवर, चौपाये और परिन्दे भी दोबारा ज़िन्दा किये जायेंगे, और अल्लाह तआ़ला का इन्साफ़ इस हद तक है कि अगर किसी सींग वाले जानवर ने बिना सींग वाले जानवर को दुनिया में मारा था तो आज उसका बदला उससे लिया जायेगा (इसी तरह दूसरे जानवरों के आपसी ज़ुल्म व ज़्यादतियों का इन्तिक़ाम लिया जायेगा)। और जब उनके आपस के हुक़ूक़ व ज़ुल्मों के बदले और इन्तिक़ाम हो चुकेंगे तो उनको हुक्म होगा कि सब मिट्टी हो जाओ, और तमाम जानवर उसी वक़्त फिर मिट्टी का ढेर होकर रह जायेंगे। यही वह वक़्त होगा जबकि काफ़िर कहेगा 'या लैतनी कुन्तु तुराबा' यानी काश मेरा भी यही मामला हो जाता कि मुझे मिट्टी बना दिया जाता, और दोज़ख़ के अ़ज़ाब से बच जाता।

और इमाम बग़वी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक दूसरी रिवायत में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ही से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन सब हक़ वालों के हक़ अदा किये जायेंगे यहाँ तक कि बिना सींग की बकरी का बदला सींग वाली बकरी से भी लिया जायेगा।

मख़्लूक़ के हुक़ूक़ की हद से ज़्यादा अहमियत

यह सब को मालूम है कि जानवर किसी शरीअ़त और अहकाम के मुकल्लफ़ (पाबन्द) नहीं, इनके मुकल्लफ़ सिर्फ़ इनसान और जिन्न हैं। और ज़ाहिर है कि ग़ैर-मुकल्लफ़ (यानी जो क़ानून का पाबन्द न हो) से जज़ा व सज़ा का मामला नहीं हो सकता, इसी लिये उलेमा ने फ़रमाया है कि मेहशर में जानवरों का बदला उनके मुकल्लफ़ होने की वजह से नहीं बल्कि रब्बुल-आ़लमीन के अ़दल व इन्साफ़ की वजह से है, कि एक जानदार किसी जानदार पर कोई ज़ुल्म करे तो उसका बदला दिलवाया जायेगा, बाक़ी उनके किसी और अ़मल पर जज़ा व सज़ा न होगी।

इससे मालूम हुआ कि अल्लाह की मख़्लूक़ के आपसी हुक़ूक़ और ज़ुल्म व ज़्यादती का मामला इतना संगीन है कि ग़ैर-मुकल्लफ़ जानवरों को भी इससे आज़ाद नहीं किया गया, मगर अफ़सोस है कि बहुत से दीनदार और इबादत-गुज़ार आदमी भी इसमें लापरवाही बरतते हैं।

وَلَقَدْ أَرْسَلْنَا إِلَىٰ أُمَمٍ مِّن قَبْلِكَ فَأَخَذْنَاهُم بِالْبَأْسَاءِ وَالضَّرَّاءِ لَعَلَّهُمْ يَتَضَرَّعُونَ ۝ فَلَوْلَا إِذْ جَاءَهُم بَأْسُنَا تَضَرَّعُوا وَلَٰكِن قَسَتْ قُلُوبُهُمْ وَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝ فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِهِ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ أَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ حَتَّىٰ إِذَا فَرِحُوا بِمَا أُوتُوا أَخَذْنَاهُم بَغْتَةً فَإِذَا هُم مُّبْلِسُونَ ۝ فَقُطِعَ دَابِرُ الْقَوْمِ الَّذِينَ ظَلَمُوا ۚ وَالْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝

व ल-क़द् अर्सल्ना इला उ-ममिम् मिन् क़ब्लि-क फ़-अख़ज़्नाहुम् बिल्-बअ्सा-इ वज़्ज़र्रा-इ लअ़ल्लहुम् य-तज़र्रअ़ून (42) फ़लौ ला इज़् जाअहुम् बअ्सुना तज़र्रअ़ू व लाकिन् क़-सत् क़ुलूबुहुम् व ज़य्य-न लहुमुश्शैतानु मा कानू यअ़्मलून (43) फ़-लम्मा नसू मा ज़ुक्किरू बिही फ़तह्ना अ़लैहिम् अब्वा-ब कुल्लि शैइन्, हत्ता इज़ा फ़रिहू बिमा ऊतू अख़ज़्नाहुम् बग़्-ततन् फ़-इज़ा हुम् मुब्लिसून (44) फ़क़ुति-अ़ दाबिरुल् क़ौमिल्लज़ी-न ज़-लमू, वल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन (45)

और हमने रसूल भेजे थे बहुत सी उम्मतों पर तुझसे पहले, फिर उनको पकड़ा हमने सख़्ती में और तकलीफ़ में ताकि वे गिड़गिड़ायें। (42) फिर क्यों न गिड़गिड़ाये जब आया उन पर हमारा अ़ज़ाब, लेकिन सख़्त हो गये दिल उनके और भले कर दिखलाये उनको शैतान ने जो काम वे कर रहे थे। (43) फिर जब वे भूल गये उस नसीहत को जो उनको की गई थी, खोल दिये हमने उन पर दरवाज़े हर चीज़ के, यहाँ तक कि जब वे ख़ुश हुए उन चीज़ों पर जो उनको दी गयीं, पकड़ लिया हमने उनको अचानक, पस उस वक़्त वे रह गये ना-उम्मीद। (44) फिर कट गई जड़ उन ज़ालिमों की, और सब तारीफ़ें अल्लाह ही के लिये हैं जो पालने वाला है सारे जहान का। (45)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने आप से पहली उम्मतों की तरफ़ भी पैग़म्बर भेजे थे (मगर उन्होंने उनको न माना) तो हमने उनको तंगदस्ती और बीमारी से पकड़ा ताकि वे ढीले पड़ जाएँ (और अपने कुफ़्र व नाफ़रमानी से तौबा कर लें)। सो जब उनको हमारी सज़ा पहुँची थी वे ढीले क्यों न पड़े? (कि उनका जुर्म माफ़ हो जाए) लेकिन उनके दिल तो (वैसे ही) सख़्त (के सख़्त) रहे और शैतान उनके आमाल को उनके ख़्याल में (बदस्तूर) संवार (और अच्छा बना) करके दिखलाता रहा। फिर जब वे लोग (बदस्तूर) उन चीज़ों को भूले (और छोड़े) रहे जिनकी उनको (पैग़म्बरों की तरफ़ से)

नसीहत की जाती थी (यानी ईमान व नेकोकारी) तो हमने उन पर (ऐश व आराम की) हर चीज़ के दरवाज़े खोल दिए, यहाँ तक कि जब उन चीज़ों पर जो कि उनको मिली थीं वे ख़ूब इतरा गये (और लापरवाही व सुस्ती में उनका कुफ़्र और बढ़ गया, उस वक़्त) तो हमने उनको अचानक (बेगुमान अ़ज़ाब में) पकड़ लिया, (और सख़्त अ़ज़ाब नाज़िल किया जिसका ज़िक्र क़ुरआन में जगह-जगह आया है) फिर तो वे बिल्कुल भौंचक्के रह गए। फिर (उस अ़ज़ाब से) ज़ालिम लोगों की जड़ (तक) कट गई और अल्लाह का शुक्र है जो तमाम जहानों का परवर्दिगार है (कि ऐसे ज़ालिमों का पाप कटा जिनकी वजह से दुनिया में नहूसत फैली थी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ज़िक्र की गयी आयतों में शिर्क व कुफ़्र को रद्द व बातिल करना और तौहीद को साबित करना एक ख़ास अन्दाज़ में किया गया है कि पहले मक्का के मुश्रिकों से सवाल किया गया कि अगर तुम पर आज कोई मुसीबत आ पड़े, मसलन ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब इसी दुनिया में तुम पर आ जाये, या मौत या क़ियामत का हौलनाक हंगामा बरपा हो जाये, तो अपने दिलों में ग़ौर करके बतलाओ कि तुम उस वक़्त अपनी मुसीबत को दूर करने के लिये किसको पुकारोगे और किससे उम्मीद रखोगे कि वह तुम्हें अ़ज़ाब और मुसीबत से निजात दिलाये? क्या ये पत्थर के ख़ुद गढ़े हुए बुत या मख़्लूक़ में से दूसरे लोग जिनको तुमने ख़ुदा तआ़ला की हैसियत दे रखी है, उस वक़्त तुम्हारे काम आयेंगे और तुम इनसे फ़रियाद करोगे? या सिर्फ़ एक अल्लाह जल्ल शानुहू को ही उस वक़्त पुकारोगे।

इसका जवाब किसी अ़क़्ल व होश रखने वाले इनसान की तरफ़ से उसके अ़लावा हो ही नहीं सकता जो ख़ुद हक़ तआ़ला ने उनकी तरफ़ से ज़िक्र फ़रमाया है कि उस आ़म मुसीबत के वक़्त बड़े से बड़ा मुश्रिक भी सब बुतों और ख़ुद गढ़े हुए माबूदों को भूल जायेगा, और सिर्फ़ ख़ुदा तआ़ला को पुकारेगा। तो अब नतीजा ज़ाहिर है कि ये तुम्हारे बुत और वे माबूद जिनको तुमने ख़ुदा तआ़ला की हैसियत दे रखी है और इनको ही अपना मुश्किल-कुशा और ज़रूरत पूरी करने वाला जानते और कहते हो, जब उस बड़ी मुसीबत के वक़्त तुम्हारे काम न आये और तुम्हें यह जुर्रत व हिम्मत भी न हो सकी कि इनको अपनी इमदाद के लिये बुलाओ, तो फिर इनकी इबादत और इनकी मुश्किल-कुशाई (परेशानियों और मुश्किलों को हल करना) किस दिन काम आयेगी।

यह मज़मून पहले बयान हुई आयतों का ख़ुलासा है। उनमें फ़र्ज़ करने और थोड़ी देर के लिये मान लेने के तौर पर यह बतलाया गया है कि तुम्हारे कुफ़्र व शिर्क और नाफ़रमानी की सज़ा में तुम पर इसी दुनिया की ज़िन्दगी में भी अ़ज़ाब आ सकता है, और मान लो ज़िन्दगी में अ़ज़ाब न आया तो क़ियामत का आना तो यक़ीनी है, जहाँ इनसान के सब आमाल और कामों का जायज़ा लिया जायेगा, और जज़ा व सज़ा के अहकाम नाफ़िज़ होंगे।

यहाँ क़ियामत से मुराद परिचित क़ियामत के मायने भी हो सकते हैं और यह भी हो सकता

है कि लफ़्ज़ साअ़त से इस जगह छोटी क़ियामत मुराद हो जो हर इनसान की मौत पर क़ायम हो जाती है, जैसा कि मशहूर है कि:

مَنْ مَاتَ فَقَدْ قَامَتْ قِيَامَتُهٗ.

"यानी जो शख़्स मर गया उसकी क़ियामत तो आज ही क़ायम हो गयी।"

क्योंकि क़ियामत के हिसाब व किताब का शुरूआती नमूना भी क़ब्र व बर्ज़ख़ में सामने आ जायेगा और वहाँ की जज़ा व सज़ा के नमूने भी यहीं से शुरू हो जायेंगे।

हासिल यह है कि नाफ़रमानी करने वालों को इन आयतों में सचेत किया गया है कि अपनी इस नाफ़रमानी के साथ बेफ़िक्र होकर मत बैठो, हो सकता है कि इसी दुनिया की ज़िन्दगी में तुम पर अल्लाह तआ़ला का कोई अ़ज़ाब आ जाये, जैसे पिछली उम्मतों पर आया है। और यह भी न हो तो फिर मौत या क़ियामत के बाद का हिसाब तो यक़ीनी है।

लेकिन अपनी ज़िन्दगी के सीमित समय और इसमें पेश आने वाले बहुत ही सीमित अनुभवों पर पूरी दुनिया और पूरे आ़लम को अन्दाज़ा करने वाले इनसान की तबीयत ऐसी चीज़ों में बहाने बनाने वाली होती है, वे नबियों के डराने और चेतावनियों को फ़र्ज़ी और वहमी ख़्यालात कहकर टाल जाते हैं। ख़ासकर जबकि ऐसे हालात भी हर ज़माने में सामने आते हैं कि बहुत से लोग अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल की खुली नाफ़रमानियों के बावजूद फूल-फल रहे हैं, दुनिया में माल व दौलत, इ़ज़्ज़त व शान सब कुछ उनको हासिल है। एक तरफ़ यह नज़ारा और दूसरी तरफ़ अल्लाह के पैग़म्बर की यह चेतावनी और डरावा कि नाफ़रमानी करने वालों पर अ़ज़ाब आया करते हैं, जब इन दोनों को मिलाकर देखते हैं तो उनकी बहाने बनाने वाली तबीयत और शैतान उनको यही सिखाते हैं कि पैग़म्बर का क़ौल एक फ़रेब या वहमी ख़्याल है।

इसके जवाब के लिये ऊपर बयान हुई आयतों में हक़ तआ़ला ने पिछली उम्मतों के वाक़िआ़त और उन पर जारी होने वाला क़ुदरती क़ानून बयान फ़रमाया है। इरशाद फ़रमायाः

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَآ اِلٰٓى اُمَمٍ مِّنْ قَبْلِكَ فَاَخَذْنٰهُمْ بِالْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ لَعَلَّهُمْ يَتَضَرَّعُوْنَ.

"यानी हमने आप से पहले भी अपने रसूल दूसरी उम्मतों की तरफ़ भेजे, और दो तरह से उनका इम्तिहान लिया गया- अव्वल कुछ सख़्ती और तकलीफ़ उन पर डालकर यह देखा गया कि तकलीफ़ व मुसीबत से घबराकर भी ये अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मुतवज्जह होते हैं या नहीं। जब वे इसमें फ़ेल हुए और बजाय अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू होने (लौ लगाने) और सरकशी से बाज़ आने के वे और ज़्यादा उसमें खो गये तो अब उनका दूसरी क़िस्म का इम्तिहान लिया गया कि उन पर दुनियावी ऐश व आराम के दरवाज़े खोल दिये गये, और दुनिया की ज़िन्दगी से मुताल्लिक़ उनको सब कुछ दे दिया गया कि शायद ये लोग नेमतों को देखकर अपने मोहसिन (एहसान करने वाले) और नेमतें देने वाले को पहचानें, और इस तरह उनको ख़ुदा याद आये, लेकिन वे इस इम्तिहान में भी नाकाम साबित हुए। अपने मोहसिन और नेमतें देने वाले को पहचानने और उसका शुक्र अदा करने के बजाय वे ऐश व आराम की भूल-भुलैयों में ऐसे खो

गये कि अल्लाह और रसूल के पैग़ामात व तालीमात को पूरी तरह भुला बैठे, और चन्द दिन के ऐश में दीवाने हो गये। जब दोनों तरह के इम्तिहान व आज़माईश में नाकाम रहने के बाद उन पर हर तरह की हुज्जत पूरी हो गयी तो अल्लाह तआ़ला के अ़ज़ाब में अचानक पकड़ लिये गये, और ऐसे नेस्त व नाबूद कर दिये गये कि उनकी नस्ल का सिलसिला भी बाक़ी न रहा।

यह अ़ज़ाब पिछली उम्मतों पर अक्सर इस तरह आया कि कभी आसमान से कभी ज़मीन से कभी किसी दूसरी सूरत से एक आ़म अ़ज़ाब आया और पूरी क़ौम की क़ौम उसमें भस्म होकर रह गयी। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की पूरी क़ौम को पानी के ऐसे आ़म तूफ़ान ने घेर लिया जिससे पहाड़ों की चोटियाँ भी सुरक्षित न रह सकीं। क़ौमे आ़द पर हवा का सख़्त तूफ़ान आठ दिन तक लगातार रहा जिससे उनका कोई फ़र्द बाक़ी न बचा। क़ौमे समूद को एक ख़ौफ़नाक आवाज़ के ज़रिये तबाह कर दिया गया। क़ौमे लूत की पूरी बस्ती को उलट दिया गया जो आज तक उर्दुन के इलाक़े में एक अ़जीब क़िस्म के पानी की सूरत में मौजूद है, जिसमें कोई जानवर मेंढक मछली वग़ैरह ज़िन्दा नहीं रह सकता। इसी लिये उसको **बहर-ए-मय्यित** के नाम से नामित किया जाता है और **बहर-ए-लूत** के नाम से भी।

ग़र्ज़ कि पिछली उम्मतों की नाफ़रमानियों की सज़ा अक्सर तो उन विभिन्न प्रकार के अ़ज़ाबों की शक्ल में आयी जिसमें एक ही वक़्त में पूरी क़ौम तबाह व बरबाद हो गयी, और कभी ऐसा भी हुआ कि वे देखने में तबई मौत से मर गये और आगे कोई उनका नाम लेने वाला भी बाक़ी न रहा।

ज़िक्र की गयी आयत में यह भी बतला दिया कि अल्लाह रब्बुल-आ़लमीन किसी क़ौम पर आ़म और सार्वजनिक अ़ज़ाब अचानक और एक दम से नहीं भेजते बल्कि चेतावनी के तौर पर थोड़ी-थोड़ी सज़ायें नाज़िल फ़रमाते हैं, जिनके ज़रिये अच्छे और नेक-बख़्त लोग अपनी ग़फ़लत से बाज़ आकर सही रास्ते पर लग सकें। और यह भी मालूम हो गया कि जो तकलीफ़ और मुसीबत दुनिया में सज़ा के तौर पर दी जाती है उसकी सूरत अगरचे सज़ा की होती है लेकिन हक़ीक़त उसकी भी सज़ा नहीं होती, बल्कि ग़फ़लत से चौंकाने और जगाने के लिये होती है, जो कि पूरी तरह अल्लाह की रहमत का तक़ाज़ा है। क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

وَلَنُذِيقَنَّهُمْ مِّنَ الْعَذَابِ الْاَدْنٰى دُوْنَ الْعَذَابِ الْاَكْبَرِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ.

"यानी हम उनको बड़ा अ़ज़ाब चखाने से पहले एक छोटा सा अ़ज़ाब चखाते हैं ताकि वे अब भी हक़ीक़त को समझकर अपने ग़लत रास्ते से बाज़ आ जायें।"

इन्हीं आयतों से यह शुब्हा भी दूर हो गया कि यह दुनिया तो दारुल-जज़ा (बदले की जगह) नहीं बल्कि दारुल-अ़मल (अ़मल करने का मक़ाम) है, यहाँ तो नेक व बद और ख़ैर व शर एक ही पल्ले में तुलते हैं, बल्कि बुरे नेकों से अच्छे रहते हैं, फिर इस दुनिया में सज़ा जारी होने का क्या मतलब है? जवाब वाज़ेह है कि असल जज़ा व सज़ा तो उसी क़ियामत के दिन में होगी,

जिसका नाम ही यौमुद्दीन यानी बदले का दिन है, लेकिन कुछ तकलीफ़ें अ़ज़ाब के नमूने के तौर पर, और कुछ राहतें सवाब के नमूने के तौर पर इस दुनिया में भी अल्लाह की रहमत के तक़ाज़े के सबब भेज दी जाती हैं। और कुछ अल्लाह वालों ने तो यह फ़रमाया है कि दुनिया की जितनी लज़्ज़तें और राहतें हैं, वो भी सब नमूना हैं जन्नत की राहतों का, ताकि इनसान को उनकी तरफ़ दिलचस्पी और लगाव पैदा हो। और जितनी तकलीफ़ें, परेशानियाँ, रंज व ग़म इस दुनिया में हैं वो भी सब के सब नमूने हैं आख़िरत के अ़ज़ाब के, ताकि इनसान को उनसे बचने का एहतिमाम पैदा हो, वरना बग़ैर किसी नमूने के न किसी चीज़ की तरफ़ किसी को शौक़ व दिलचस्पी दिलाई जा सकती है और न किसी चीज़ से डराया जा सकता है।

ग़र्ज़ कि दुनिया की राहत व परेशानी हक़ीक़त में सज़ा व जज़ा नहीं, बल्कि सज़ा व जज़ा के नमूने हैं। और यह पूरी दुनिया आख़िरत का शोरूम है जिसमें ताजिर अपने माल के नमूने दिखाने के लिये दुकान के सामने लगाता है, ताकि उनको देखकर ख़रीदार को रुचि पैदा हो। मालूम हुआ कि दुनिया का रंज व राहत हक़ीक़त में सज़ा व जज़ा नहीं बल्कि ख़ालिक़ से कटी हुई मख़्लूक़ का रिश्ता फिर अपने ख़ालिक़ से जोड़ने की एक तदबीर है:

ख़ल्क़ रा बा तू चुनीं बदख़ू कुनन्द
ता तुरा नाचार रू आँ सू कुनन्द

यानी मख़्लूक़ से जो तुझे परेशानी व तकलीफ़ पहुँचती है यह भी दर असल इसकी एक तदबीर है कि इनसान अपने पैदा करने वाले की तरफ़ मुतवज्जह हो और ग़ैरुल्लाह से अपनी उम्मीदें तोड़ ले। मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

खुद ज़िक्र की हुई आयत के आख़िर में भी इस हिक्मत का ज़िक्र 'लअ़ल्लहुम यत्तज़र्रऊ़न' के जुमले में फ़रमाया गया है, यानी हमने उन पर जो मेहनत व मुसीबत दुनिया में डाली उसका मन्शा दर हक़ीक़त अ़ज़ाब देना न था बल्कि यह था कि मुसीबत में तबई तौर पर हर शख़्स को ख़ुदा याद आया करता है, इसलिये उस मेहनत में डालकर अपनी तरफ़ मुतवज्जह करना मक़सूद था। इससे मालूम हुआ कि दुनिया में जो तकलीफ़ व मुसीबत बतौर अ़ज़ाब के भी किसी शख़्स या जमाअ़त पर आती है उसमें भी एक पहलू से अल्लाह की रहमत अपना काम करती है।

इसके बाद तीसरी आयत में जो यह इरशाद फ़रमाया गयाः

فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ اَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ

कि जब उनकी नाफ़रमानी हद से गुज़रने लगी तो अब एक ख़तरनाक आज़माईश में उनको मुब्तला किया गया, कि उन पर दुनिया की नेमतों, राहतों और कामयाबियों के दरवाज़े खोल दिये गये।

इसमें इस बात पर आ़म इनसानों को चेतावनी दी गयी है कि दुनिया में किसी शख़्स या जमाअ़त पर ऐश व आराम की अधिकता देखकर धोखा न खायें, कि यही लोग सही रास्ते पर हैं, और यही कामयाब ज़िन्दगी के मालिक हैं, बल्कि बहुत सी बार यह हालत अ़ज़ाब में मुब्तला

उन नाफ़रमानों की भी होती है जिनको सख़्त सज़ा में अचानक पकड़ना तय कर लिया जाता है।

इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम यह देखो कि किसी शख़्स पर नेमत व दौलत बरस रही है, हालाँकि वह अपने गुनाहों और नाफ़रमानियों पर जमा हुआ है, तो समझ लो कि उसके साथ इस्तिदराज (ढील दिये जाने का मामला) हो रहा है, यानी उसका ऐश व आराम उसको सख़्त अ़ज़ाब में पकड़े जाने की एक निशानी है।

(मुस्नद अहमद, तफ़सीर इब्ने कसीर)

और तफ़सीर के इमाम अ़ल्लामा इब्ने जरीर रह. ने हज़रत उबादा इब्ने सामित रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"जब अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम को बाक़ी रखना और बढ़ाना चाहते हैं तो दो गुण उनमें पैदा कर देते हैं- एक हर काम में ऐतिदाल और दरमियानी राह चलना, दूसरे आबरू व पाकदामनी। यानी ख़िलाफ़े हक़ चीज़ों के इस्तेमाल से परहेज़। और जब अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम को हलाक व बरबाद करना चाहते हैं तो उन पर ख़ियानत (चोरी और बददियानती) के दरवाज़े खोल देते हैं। यानी वे अपनी ख़ियानतों और बुरे आमाल के बावजूद दुनिया में कामयाब नज़र आते हैं।"

आख़िरी आयत में फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला का आ़म अ़ज़ाब आया तो ज़ालिमों की नस्ल तक काट दी गयी, और इसके आख़िर में फ़रमाया 'वल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन' जिसमें इशारा किया गया कि मुजरिमों और ज़ालिमों पर जब कोई अ़ज़ाब व मुसीबत आये तो यह पूरे आ़लम (दुनिया) के लिये एक नेमत है, जिस पर लोगों को अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करना चाहिये।

قُلْ أَرَءَيْتُمْ إِنْ أَخَذَ ٱللَّهُ سَمْعَكُمْ وَأَبْصَٰرَكُمْ وَخَتَمَ
عَلَىٰ قُلُوبِكُم مَّنْ إِلَٰهٌ غَيْرُ ٱللَّهِ يَأْتِيكُم بِهِ ۗ ٱنظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ ٱلْءَايَٰتِ ثُمَّ هُمْ يَصْدِفُونَ ۝ قُلْ
أَرَءَيْتَكُمْ إِنْ أَتَىٰكُمْ عَذَابُ ٱللَّهِ بَغْتَةً أَوْ جَهْرَةً هَلْ يُهْلَكُ إِلَّا ٱلْقَوْمُ ٱلظَّٰلِمُونَ ۝ وَمَا نُرْسِلُ
ٱلْمُرْسَلِينَ إِلَّا مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ ۖ فَمَنْ ءَامَنَ وَأَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝
وَٱلَّذِينَ كَذَّبُوا۟ بِـَٔايَٰتِنَا يَمَسُّهُمُ ٱلْعَذَابُ بِمَا كَانُوا۟ يَفْسُقُونَ ۝

क़ुल् अ-रऐतुम् इन् अ-ख़ज़ल्लाहु समूअ़कुम् व अब्सारकुम् व ख़-त-म अ़ला क़ुलूबिकुम् मन् इलाहुन् ग़ैरुल्लाहि यअ्तीकुम् बिही, उन्ज़ुर्	तू कह- देखो तो अगर छीन ले अल्लाह तुम्हारे कान और आँखें और मोहर कर दे तुम्हारे दिलों पर, तो कौन ऐसा रब है अल्लाह के सिवा जो तुमको ये चीज़ें ला

कै-फ़ नुसर्रिफ़ुल्-आयाति सुम्-म हुम् यस्दिफ़ून (46) क़ुल् अ-रऐतकुम् इन् अताकुम् अ़ज़ाबुल्लाहि बग़्-ततन् औ जह्-रतन् हल् युह्लकु इल्लल् क़ौमुज़्-ज़ालिमून (47) व मा नुर्सिलुल्-मुर्सली-न इल्ला मुबश्शिरी-न व मुन्ज़िरी-न फ़-मन् आम-न व अस्ल-ह फ़ला ख़ौफ़ुन् अ़लैहिम् व ला हुम् यह्ज़नून (48) वल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना यमस्सुहुमुल्-अ़ज़ाबु बिमा कानू यफ़्सुक़ून (49)	देवे, देख हम क्योंकर तरह-तरह से बयान करते हैं बातें फिर भी वे किनारा करते हैं। (46) तू कह- देखो तो अगर आये तुम पर अ़ज़ाब अल्लाह का अचानक या ज़ाहिर होकर, तो कौन हलाक होगा ज़ालिम लोगों के सिवा। (47) और हम रसूल नहीं भेजते मगर ख़ुशी और डर सुनाने को, फिर जो कोई ईमान लाया और संवर गया तो न डर है उन पर और न वे ग़मगीन हों। (48) और जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को उनको पहुँचेगा अ़ज़ाब इसलिए कि वे नाफ़रमानी करते थे। (49)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उनसे यह भी) कहिए कि यह बतलाओ कि अगर अल्लाह तआ़ला तुम्हारी सुनने और देखने की क़ुव्वत बिल्कुल ले ले (कि न तुमको कुछ सुनाई दे न दिखाई दे) और तुम्हारे दिलों पर मोहर कर दे (कि तुम दिल से किसी चीज़ को समझ न सको) तो अल्लाह तआ़ला के सिवा और कौन माबूद है कि ये (चीज़ें) तुमको फिर से दे दे (जब तुम्हारे इक़रार से भी कोई ऐसा नहीं फिर कैसे किसी को इबादत का हक़दार समझते हो)? आप देखिए तो हम किस (किस) तरह दलीलों को विभिन्न अन्दाज़ से पेश कर रहे हैं, फिर (भी) (इन दलीलों में ग़ौर करने और इनके नतीजे को तस्लीम करने से) ये मुँह मोड़ते हैं। आप (इनसे यह भी) कहिए कि यह बतलाओ अगर तुम पर अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब आ पड़े, चाहे बेख़बरी में या ख़बरदारी में तो क्या सिवाय ज़ालिम लोगों के (उस अ़ज़ाब से) और भी कोई हलाक किया जाएगा (मतलब यह है कि अगर अ़ज़ाब आया तो वह तुम्हारे ज़ुल्म की वजह से तुम पर ही पड़ेगा, मोमिन बचे रहेंगे, इसलिये तुमको होश करना चाहिये और इस ग़लत-फ़हमी में न रहना चाहिये कि मुसीबत जब आ़म होती है तो परेशानी का एहसास ज़्यादा नहीं होता इसलिये अगर अ़ज़ाब आ ही गया तो उसमें हमारे साथ मुसलमान भी तो मुब्तला होंगे)।

और हम पैग़म्बरों को (जिनकी पैग़म्बरी यक़ीनी दलीलों से साबित कर चुके हैं) सिर्फ़ इस वास्ते भेजा करते हैं कि वे (ईमान और इताअ़त करने वालों को अल्लाह की रज़ा और जन्नत

की नेमतों की) ख़ुशख़बरी दें और (कुफ़्र व नाफ़रमानी करने वालों को अल्लाह की नाराज़ी से) डराएँ (इसलिये नहीं भेजते कि हुज्जत पूरी हो जाने के बाद भी मुख़ालिफ़ लोग दुश्मनी व विरोध के तौर पर जो उल्टी-सीधी फ़रमाईशें किया करें वे सब को पूरा करके दिखाया करें) फिर (उन पैग़म्बरों की ख़ुशख़बरियाँ देने और डराने के बाद) जो शख़्स ईमान ले आए और (अपनी हालत का अक़ीदे और अ़मल के एतिबार से) सुधार कर ले, सो उन लोगों को (आख़िरत में) कोई अन्देशा नहीं और न वे ग़मगीन होंगे। और जो लोग (इस ख़ुशख़बरी देने और डराने के बाद भी) हमारी आयतों को झूठा बतलाएँ उनको (कई बार तो दुनिया में भी वरना आख़िरत में तो ज़रूर) अ़ज़ाब लगता है, इस वजह से कि वे ईमान के दायरे से निकल जाते हैं।

قُلْ لَّآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِىْ خَزَآئِنُ اللّٰهِ وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّىْ مَلَكٌ ۚ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوْحٰٓى اِلَىَّ ۚ قُلْ هَلْ يَسْتَوِى الْاَعْمٰى وَالْبَصِيْرُ ۚ اَفَلَا تَتَفَكَّرُوْنَ ۝ وَاَنْذِرْ بِهِ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ اَنْ يُّحْشَرُوْٓا اِلٰى رَبِّهِمْ لَيْسَ لَهُمْ مِّنْ دُوْنِهٖ وَلِىٌّ وَّلَا شَفِيْعٌ لَّعَلَّهُمْ يَتَّقُوْنَ ۝

क़ुल् ला अक़ूलु लकुम् अिन्दी ख़ज़ाइनुल्लाहि व ला अअ़्लमुल्-ग़ै-ब व ला अक़ूलु लकुम् इन्नी म-लकुन् इन् अत्तबिअ़ु इल्ला मा यूहा इलय्-य, क़ुल् हल् यस्तविल्-अअ़्मा वल्-बसीरु, अ-फ़ला त-तफ़क्करून (50) ✿	तू कह- मैं नहीं कहता तुमसे कि मेरे पास हैं ख़ज़ाने अल्लाह के, और न मैं जानूँ ग़ैब की बात, और न मैं कहूँ तुमसे कि मैं फ़रिश्ता हूँ। मैं उसी पर चलता हूँ जो मेरे पास अल्लाह का हुक्म आता है। तू कह दे- कब बराबर हो सकता है अंधा और देखने वाला, सो क्या तुम ग़ौर नहीं करते? (50) ✿
व अन्ज़िर् बिहिल्लज़ी-न यख़ाफ़ू-न अंय्युह्शरू इला रब्बिहिम् लै-स लहुम् मिन् दूनिही वलिय्युंव्-व ला शफ़ीअ़ुल्-लअ़ल्लहुम् यत्तक़ून (51)	और ख़बरदार कर दे इस क़ुरआन से उन लोगों को जिनको डर है इसका कि वे जमा होंगे अपने रब के सामने इस तरह पर कि अल्लाह के सिवा न कोई उनका हिमायती होगा और सिफ़ारिश करने वाला, ताकि वे बचते रहें। (51)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन मुख़ालिफ़ लोगों से) कह दीजिए कि न तो मैं तुमसे यह कहता हूँ कि मेरे पास ख़ुदा तआ़ला के ख़ज़ाने हैं (कि जो कुछ मुझसे माँगा जाये वह अपनी क़ुदरत से दे दूँ) और न मैं तमाम ग़ैबों को जानता हूँ (जो अल्लाह तआ़ला की विशेषता है), और न मैं तुमसे यह कहता हूँ

कि मैं फ़रिश्ता हूँ। मैं तो सिर्फ़ उसकी पैरवी कर लेता हूँ जो मेरे पास वही आती है। (जिसमें वही के अहकाम पर ख़ुद अ़मल करना भी दाख़िल है और दूसरों को दावत देना भी, जैसा कि पिछले तमाम नबियों का भी यही हाल था। फिर) आप कहिए कि अन्धा और देखने वाला कहीं बराबर हो सकता है? (और जब यह बात सब को मुसल्लम है) तो क्या तुम (आँखों वाला बनना नहीं चाहते? और इस ज़िक्र हुई तक़रीर में पूरा) ग़ौर (हक़ के तलब करने के इरादे से) नहीं करते? (कि हक़ स्पष्ट हो जाये और तुम देखने वालों में दाख़िल हो जाओ)। और अगर (इस पर भी वे अपनी दुश्मनी और मुख़ालफ़त से बाज़ न आयें तो उनसे बहस-मुबाहसा बन्द कर दीजिए और आपका जो असली काम है अल्लाह के अहकाम की तब्लीग़ का उसमें मशग़ूल हो जाईये, और) ऐसे लोगों को (कुफ़्र व नाफ़रमानी पर अल्लाह के अ़ज़ाब से ख़ास तौर से) डराईए (जो यक़ीनी और एतिक़ादी तौर पर या कम से कम गुमान व संभावना के दर्जे में) इस बात से अन्देशा (डर) रखते हैं (कि क़ियामत में) अपने रब के पास ऐसी हालत से जमा किए जाएँगे कि ग़ैरुल्लाह में से (जिस जिसको मददगार या सिफ़ारिश करने वाला काफ़िरों ने समझा था उस वक़्त उनमें से) न कोई उनका मददगार होगा और न कोई (मुस्तक़िल) शफ़ाअ़त करने वाला, शायद ये लोग (अ़ज़ाब से) डर जाएँ (और कुफ़्र व नाफ़रमानी से बाज़ आ जायें)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अ़रब के काफ़िरों की तरफ़ से दुश्मनी के तौर पर फ़रमाईशी मोजिज़ों का मुतालबा

मक्का के काफ़िरों के सामने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बेशुमार मोजिज़े (ऐसी ख़ुदाई निशानियाँ जिनके करने से हर ताक़त आ़जिज़ रहे) और अल्लाह तआ़ला की स्पष्ट आयतों का ज़हूर हो चुका था। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यतीमी की हालत में दुनिया में तशरीफ़ लाना, लिखने-पढ़ने से बिल्कुल अलग एक बिल्कुल उम्मी होकर रहना, ऐसी ज़मीन में पैदा होना जिसके आस-पास भी न कोई आ़लिम था न इल्मी मर्कज़, उम्र शरीफ़ के चालीस साल इसी पूरी तरह उम्मी होने के आ़लम में सारे मक्का वालों के सामने रहना, फिर चालीस साल के बाद एक दम से आपकी ज़बाने मुबारक से ऐसा अ़क़्लों को हैरान कर देने वाला हकीमाना कलाम जारी होना जिसके उम्दा और ऊँचे मक़ाम वाला होने ने अ़रब के तमाम साहित्यकारों और अ़रबी कलाम के विद्वानों को चैलेंज देकर हमेशा के लिये उनके मुँहों पर मोहर लगा दी, और जिसके दानाई भरे मायनों और क़ियामत तक की इनसानी ज़रूरतों की रियायत के साथ पूर्ण इनसान की ज़िन्दगी का ऐसा अ़मली प्रोग्राम जिसको इनसानी अ़क़्ल व दिमाग़ हरगिज़ तैयार नहीं कर सकता, न सिर्फ़ वैचारिक और फ़िक्री हैसियत से जमा करके पेश किया, बल्कि अ़मली तौर पर भी दुनिया में पूरी तरह कामयाबी के साथ राईज करके दिखला दिया। और यह इनसान जो अपनी इनसानियत को भुलाकर बैल, बकरी, घोड़े, गधे की तरह अपनी ज़िन्दगी का

मक़सद सिर्फ़ खाने, पीने, सोने, जागने को क़रार दे चुका था, उसको सही इनसानियत का सबक़ दिया, उसका रुख़ उस बुलन्द उद्देश्य की तरफ़ फेर दिया जिसके लिये उसकी पैदाईश अ़मल में आई थी। इस तरह रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़िन्दगी का हर दौर और उसमें पेश आने वाले क़ाबिले क़द्र वाक़िआत में से हर एक एक मुस्तक़िल मोजिज़ा और अल्लाह की निशानी थी, जिसके बाद किसी इन्साफ़-पसन्द अ़क़्लमन्द के लिये अतिरिक्त किसी निशानी व मोजिज़े के तलब करने की कोई गुंजाईश बाक़ी न थी।

लेकिन क़ुरैश के काफ़िरों ने इसके बावजूद दूसरी क़िस्म के मोजिज़े अपनी इच्छा के मुताबिक़ तलब किये, उनके मतलूबा मोजिज़ों में से भी कुछ को हक़ तआ़ला ने खुले तौर पर अ़मल में लाकर दिखला दिया। चाँद के दो टुकड़े करने का मुतालबा किया था, चाँद को टुकड़े करने का मोजिज़ा न सिर्फ़ क़ुरैश ने बल्कि उस वक़्त की दुनिया में रहने वालों की बड़ी तायदाद ने आँखों से देख लिया।

लेकिन उनके मुतालबे के मुताबिक़ ऐसा अ़ज़ीमुश्शान मोजिज़ा ज़ाहिर होने के बावजूद वे अपने उसी कुफ़्र व गुमराही और मुख़ालफ़त व दुश्मनी पर जमे रहे और अल्लाह तआ़ला की इस खुली निशानी को एक खुला जादू कहकर नज़र-अन्दाज़ कर दिया, और इन सब चीज़ों को देखने और समझने-बूझने के बावजूद उनकी तरफ़ से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से रोज़ नये-नये मोजिज़ों का मुतालबा रहता था। और जैसा कि पिछली आयतों में गुज़रा है:

لَوْ لَا نُزِّلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ قَادِرٌ عَلٰٓى اَنْ يُّنَزِّلَ اٰيَةً وَّلٰـكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ.

यानी ये लोग कहते हैं कि अगर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) सचमुच अल्लाह के रसूल हैं तो इनका कोई मोजिज़ा क्यों ज़ाहिर नहीं होता। क़ुरआन ने उनके जवाब में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया कि आप उन लोगों को बतला दें कि अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत में तो सब कुछ है, उसने जिस तरह तुम्हारे माँगे बग़ैर ख़ुद ही बेशुमार खुली निशानियाँ और मोजिज़े नाज़िल फ़रमा दिये, इसी तरह वह तुम्हारे मतलूबा मोजिज़े भी नाज़िल फ़रमा सकता है, लेकिन उनको मालूम होना चाहिये कि अल्लाह का क़ानून इस बारे में यह है कि जब किसी क़ौम का मतलूबा मोजिज़ा दिखला दिया जाये और फिर वह इस पर भी ईमान न लायें तो उनको फ़ौरी अ़ज़ाब में पकड़ लिया जाता है। इसलिये क़ौम की मस्लेहत इसमें थी और है कि उनके मतलूबा मोजिज़े ज़ाहिर न किये जायें, मगर बहुत से लोग जो इस बारीक हिक्मत से जाहिल व बेख़बर हैं उनका इसरार यही रहता है कि हमारा मतलूबा मोजिज़ा दिखलाया जाये।

ऊपर बयान हुई आयतों में उन लोगों के ऐसे ही सवालों और मुतालबों का जवाब एक ख़ास अन्दाज़ से दिया गया है।

मक्का के काफ़िरों ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से विभिन्न वक़्तों में तीन मुतालबे पेश किये थे- अव्वल यह कि अगर आप वाक़ई अल्लाह के रसूल हैं तो मोजिज़े के द्वारा हमारे लिये तमाम दुनिया के ख़ज़ाने जमा करा दीजिए। दूसरे यह कि अगर आप वाक़ई सच्चे

रसूल हैं तो हमारे भविष्य में पेश आने वाले तमाम मुफ़ीद या नुक़सानदेह हालात व वाक़िआत बता दीजिए ताकि हम मुफ़ीद चीज़ों के हासिल करने और नुक़सानदेह सूरतों से बचने का इन्तिज़ाम पहले ही कर लिया करें। तीसरे यह कि हमारी समझ में नहीं आता कि हमारी ही क़ौम का एक इनसान जो हमारी ही तरह माँ-बाप से पैदा हुआ, और तमाम इनसानी सिफ़ात खाने पीने, बाज़ारों में फिरने वग़ैरह में हमारे साथ शरीक है, वह अल्लाह का रसूल बन जाये। कोई फ़रिश्ता होता जिसकी पैदाईश और सिफ़ात व गुण हम सबसे अलग और नुमायाँ होते तो हम उसको ख़ुदा तआ़ला का रसूल और अपना पेशवा मान लेते।

इन तीनों सवालों के जवाब में इरशाद हुआः

قُلْ لَّآ اَقُوْلُ لَكُمْ عِنْدِىْ خَزَآئِنُ اللّٰهِ وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّىْ مَلَكٌ. اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوْحٰٓى اِلَىَّ.

यानी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हिदायत दी गयी कि उन लोगों के बेकार और बेहूदा सवालों के जवाब में आप उनसे साफ़ कह दीजिए कि तुम जो मुझसे दुनिया के ख़ज़ानों का मुतालबा करते हो तो मैंने कब यह दावा किया है कि अल्लाह तआ़ला के सब ख़ज़ाने मेरे हाथ में हैं। और तुम जो यह मुतालबा करते हो कि भविष्य में पेश आने वाले हर मुफ़ीद या नुक़सानदेह मामले और वाक़िए को मैं तुम्हें बतला दूँ तो मैंने कब यह दावा किया है कि मैं हर ग़ैब की चीज़ को जानता हूँ। और तुम जो मुझमें फ़रिश्तों की मख़्सूस सिफ़ात देखना चाहते हो तो मैंने कब कहा है कि मैं फ़रिश्ता हूँ।

ख़ुलासा यह है कि मुझसे दलील उस चीज़ की माँगी जा सकती है जिसका मैंने दावा किया है, यानी यह कि मैं अल्लाह तआ़ला का रसूल हूँ, उसकी भेजी हुई हिदायतें इनसानों को पहुँचाता हूँ और ख़ुद भी उन पर अ़मल करता हूँ दूसरों को भी इसकी ताकीद करता हूँ। चुनाँचे इसके लिये एक दो नहीं बेशुमार स्पष्ट दलीलें पेश की जा चुकी हैं।

इस रिसालत के दावे के लिये न यह ज़रूरी है कि अल्लाह का रसूल अल्लाह के सब ख़ज़ानों का मालिक हो जाये, और न यह ज़रूरी है कि वह ख़ुदा तआ़ला की तरह ग़ैब की हर छोटी बड़ी चीज़ से वाक़िफ़ हो, और न यह ज़रूरी है कि वह इनसानी और बशरी सिफ़ात से अलग कोई फ़रिश्ता हो, बल्कि रसूल का मन्सब (मक़ाम और ओ़हदा) सिर्फ़ इतना है कि वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से भेजी हुई वही की पैरवी करे, जिसमें ख़ुद उस पर अ़मल करना भी दाख़िल है और दूसरों को उस पर अ़मल करने की दावत देना भी।

इस हिदायत नामे से रिसालत के मक़ाम व मर्तबे की हक़ीक़त को भी वाज़ेह फ़रमा दिया गया, और रसूल के बारे में जो ग़लत तसव्वुरात (धारणायें) उन लोगों ने क़ायम कर रखे थे उनको भी दूर कर दिया गया, और इसके तहत ही मुसलमानों को भी यह हिदायत कर दी गयी कि वे ईसाईयों की तरह अपने रसूल को ख़ुदा न बनायें और ख़ुदाई का मालिक न क़रार दें। उनकी बड़ाई व मुहब्बत का तक़ाज़ा भी यही है कि उनके मुताल्लिक़ यहूदियों व ईसाईयों की

तरह कमी-बेशी में और हद से बढ़ने में न पड़ जायें, कि यहूदियों ने तो अपने नबियों के क़त्ल तक से गुरेज़ न किया, और ईसाईयों ने अपने रसूल को ख़ुदा बना दिया।

इसके पहले जुमले में जो यह इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला के ख़ज़ाने मेरे हाथ में नहीं, इन ख़ज़ानों से क्या मुराद है? उलेमा-ए-तफ़सीर ने बहुत सी चीज़ों के नाम लिये हैं, मगर ख़ुद क़ुरआने करीम ने जहाँ अल्लाह के ख़ज़ानों का ज़िक्र किया है तो उसमें फ़रमाया है:

وَاِنْ مِّنْ شَیْءٍ اِلَّا عِنْدَنَا خَزَآئِنُهٗ.

"यानी कोई चीज़ दुनिया की ऐसी नहीं जिसके ख़ज़ाने हमारे पास न हों।"

इससे मालूम हुआ कि अल्लाह के ख़ज़ानों का मफ़्हूम दुनिया की तमाम चीज़ों को शामिल है, कुछ ख़ास चीज़ों को मुतैयन नहीं किया जा सकता। और जिन मुफ़स्सिरीन हज़रात ने मख़्सूस चीज़ों के नाम लिये हैं वो भी बतौर मिसाल के है, इसलिये इख़्तिलाफ़ कुछ नहीं। और जब इस आयत ने यह बतला दिया कि ख़ुदाई के सारे ख़ज़ाने तमाम रसूलों के सरदार और तमाम नबियों के इमाम हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हाथ में भी नहीं हैं तो फिर उम्मत के किसी बुज़ुर्ग या वली के मुताल्लिक़ यह ख़्याल करना कि वह जो चाहें कर सकते हैं, जिसको जो चाहें दे सकते हैं, खुली हुई जहालत है।

आख़िरी जुमले में फ़रमायाः

وَلَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّیْ مَلَكٌ.

"यानी मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मैं फ़रिश्ता हूँ जिसकी वजह से तुम इनसानी सिफ़ात को देखकर रिसालत का इनकार करते हो।"

बीच के जुमले में बात का अन्दाज़ बदल कर बजाय इसके कि:

لَآ اَقُوْلُ لَكُمْ اِنِّیْٓ اَعْلَمُ الْغَیْبَ.

फ़रमाया जाता, यानी यह कि मैं तुमसे यह नहीं कहता कि मैं ग़ैब को जानता हूँ। इरशाद यूँ फ़रमाया गया कि:

وَلَآ اَعْلَمُ الْغَیْبَ.

यानी मैं ग़ैब को नहीं जानता।

अबू हय्यान ने तफ़सीर बहरे-मुहीत में कलाम के इस अन्दाज़ के बदलने की एक बारीक वजह यह बयान फ़रमायी है कि तमाम ख़ुदाई ख़ज़ानों का मालिक होना या न होना, इसी तरह किसी शख़्स का फ़रिश्ता होना या न होना, ये चीज़ें तो देखने और महसूस करने से ताल्लुक़ रखती हैं, मुख़ातब लोग भी सब जानते थे कि अल्लाह तआ़ला के ख़ज़ाने सब आपके हाथ में नहीं, और आप फ़रिश्ते भी नहीं, सिर्फ़ दुश्मनी व मुख़ालफ़त की वजह से इसका मुतालबा करते थे। उनके जवाब में यह कह देना काफ़ी था कि मैंने कभी इसका दावा नहीं किया कि मैं अल्लाह के ख़ज़ानों का मालिक हूँ या यह कि मैं फ़रिश्ता हूँ।

लेकिन इल्म-ए-ग़ैब का मसला ऐसा न था, क्योंकि वे लोग अपने नजूमियों, ज्योतिषियों के बारे में भी इसका एतिक़ाद रखते थे कि वे ग़ैब को जानते हैं, तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में ऐसा एतिक़ाद रखना कुछ दूर की बात न थी, ख़ासकर जबकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुबारक ज़बान से उन्होंने बहुत सी ग़ैब की ख़बरें भी सुनी थीं, और उनके हक़ीक़त के मुताबिक़ होने को अपनी आँखों से भी देखा था, इसलिये यहाँ सिर्फ़ दावे और क़ौल की नफ़ी करने को काफ़ी न समझा, बल्कि असल फ़ेल की नफ़ी की गयी और यह फ़रमायाः

وَلَآ اَعْلَمُ الْغَيْبَ

यानी मैं ग़ैब को नहीं जानता। इसमें उनकी इस ग़लत-फ़हमी को भी दूर कर दिया कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वही के द्वारा या दिल में बात डालने के ज़रिये जिन ग़ैब की चीज़ों का इल्म किसी फ़रिश्ते या रसूल या वली को दे दिया जाये क़ुरआनी इस्तिलाह में उसको इल्मे ग़ैब या उसके जानने वाले को आ़लिमुल-ग़ैब नहीं कहा जा सकता।

इसी से यह बात भी स्पष्ट हो गयी कि इस मामले में किसी मुसलमान को कलाम नहीं हो सकता कि अल्लाह तआ़ला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ग़ैब की हज़ारों लाखों चीज़ों का इल्म अ़ता फ़रमाया था, बल्कि तमाम फ़रिश्तों और पहलों व बाद वालों को जितना इल्म दिया गया है उन सबसे ज़्यादा हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इल्म अ़ता फ़रमाया गया है। यही पूरी उम्मत का अ़क़ीदा है। हाँ इसके साथ ही क़ुरआन व सुन्नत की बेशुमार वज़ाहतों और बयानात के मुताबिक़ पहले और बाद के तमाम इमामों और बुज़ुर्गों का यह भी अ़क़ीदा है कि तमाम कायनात का मुकम्मल इल्म सिर्फ़ हक़ तआ़ला शानुहू की मख़्सूस सिफ़त है। जिस तरह उसके ख़ालिक़ व राज़िक़ और क़ादिरे मुतलक़ होने में कोई फ़रिश्ता या रसूल उसके बराबर नहीं हो सकता, इसी तरह उसके कामिल इल्म में भी कोई उसके बराबर नहीं हो सकता। इसी लिये अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी फ़रिश्ते या पैग़म्बर को ग़ैब की लाखों चीज़ें मालूम होने के बावजूद आ़लिमुल-ग़ैब नहीं कहा जा सकता।

ख़ुलासा यह है कि सरवरे कायनात, तमाम रसूलों के सरदार, इमामुल-अम्बिया मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के कमालात के बारे में बड़ा जामे जुमला यह है कि "बाद अज़ ख़ुदा बुज़ुर्ग तूई क़िस्सा मुख़्तसर।"

(यानी मुख़्तसर बात यह है कि अल्लाह तआ़ला के बाद सबसे आला व बुलन्द मक़ाम आप ही का है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**)

इल्मी कमालात में भी यही है कि ख़ुदा तआ़ला के बाद तमाम फ़रिश्तों और नबियों व रसूलों से आपका इल्म बढ़ा हुआ है, मगर ख़ुदा तआ़ला के बराबर नहीं, बराबरी का दावा करना ईसाईयत की तरह हद से बढ़ने वाला चलन है।

आयत के आख़िर में यह इरशाद फ़रमाया कि अंधा और बीना (देखने वाला) बराबर नहीं हो सकते। मतलब यह है कि नफ़्सानी जज़्बात और मुख़ालफ़त व दुश्मनी को छोड़कर हक़ीक़त को

देखो ताकि तुम्हारा शुमार अन्धों में न रहे, तुम आँखों वाले और समझ वाले हो जाओ और यह बीनाई तुम्हें ज़रा से ग़ौर व फ़िक्र से हासिल हो सकती है।

दूसरी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी है कि इन स्पष्ट बयानात के बाद भी अगर ये लोग अपनी ज़िद से बाज़ न आयें तो इनसे बहस व मुबाहसे को बन्द कर दीजिए और जो असली काम है रिसालत का यानी तब्लीग़ उसमें मशग़ूल हो जाईये, और तब्लीग़ व डराने का रुख़ उन लोगों की तरफ़ फेर दीजिए जो क़ियामत में अल्लाह तआ़ला के सामने पेशी और हिसाब किताब का अ़क़ीदा रखते हैं, जैसे मुसलमान या वे लोग जो कम से उसके इनकारी नहीं, बतौर गुमान व संभावना के ही सही, कम से कम उनको ख़तरा तो है कि शायद हमारे आमाल का हमसे हिसाब लिया जाये।

ख़ुलासा यह है कि क़ियामत के बारे में तीन तरह के आदमी हैं- एक वे जो यक़ीनी तौर पर उसका एतिक़ाद व यक़ीन रखते हैं। दूसरे वे जो शक व असमंजस में हैं। तीसरे वे जो बिल्कुल इनकारी हैं। और तब्लीग़ व डराने का हुक्म नबियों को अगरचे इन तीनों तब्क़ों के लिये आ़म है, जैसे कि क़ुरआन के बहुत से इरशादात से वाज़ेह है, लेकिन पहले दो तब्क़ों में चूँकि असर क़ुबूल करने की उम्मीद ज़्यादा है, इसलिये इस आयत में ख़ास तौर पर उनकी तरफ़ तवज्जोह करने की हिदायत फ़रमाई गयी। जैसा कि इरशाद है:

وَاَنْذِرْ بِهِ الَّذِيْنَ يَخَافُوْنَ اَنْ يُّحْشَرُوْٓا اِلٰى رَبِّهِمْ

और ख़बरदार कर दे इस क़ुरआन से उन लोगों को जिनको डर है कि वे जमा होंगे अपने रब के सामने.....।

وَلَا تَطْرُدِ الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ
يُرِيْدُوْنَ وَجْهَهٗ ؕ مَا عَلَيْكَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِّنْ شَيْءٍ وَّمَا مِنْ حِسَابِكَ عَلَيْهِمْ مِّنْ شَيْءٍ فَتَطْرُدَهُمْ
فَتَكُوْنَ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ وَكَذٰلِكَ فَتَنَّا بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لِّيَقُوْلُوْٓا اَهٰٓؤُلَآءِ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنْۢ
بَيْنِنَا ؕ اَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِالشّٰكِرِيْنَ ۝ وَاِذَا جَآءَكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاٰيٰتِنَا فَقُلْ سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ كَتَبَ
رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ ۙ اَنَّهٗ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوْٓءًۢا بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابَ مِنْۢ بَعْدِهٖ وَاَصْلَحَ فَاَنَّهٗ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ وَلِتَسْتَبِيْنَ سَبِيْلُ الْمُجْرِمِيْنَ ۝

व ला तत्रुदिल्लज़ी-न यद्अ़ू-न रब्बहुम् बिल्ग़दाति वल्अ़शिय्यि युरीदू-न वज्हहू, मा अ़लै-क मिन्	और मत दूर कर उन लोगों को जो पुकारते हैं अपने रब को सुबह और शाम, चाहते हैं उसकी रज़ा, तुझ पर नहीं है उनके हिसाब में से कुछ और न तेरे

हिसाबिहिम् मिन् शैइंव्-व मा मिन् हिसाबि-क अ़लैहिम् मिन् शैइन् फ़ततरु-दहुम् फ़-तकू-न मिनज़्-ज़ालिमीन (52) व कज़ालि-क फ़तन्ना बअ़्ज़हुम् बिबअ़्ज़िल्-लि-यक़ूलू अ-हाउला-इ मन्नल्लाहु अ़लैहिम् मिम्-बैनिना, अलैसल्लाहु बि-अअ़्ल-म बिश्शाकिरीन (53) व इज़ा जा-अकल्लज़ी-न युअ्मिनू-न बिआयातिना फ़क़ुल् सलामुन् अ़लैकुम् क-त-ब रब्बुकुम् अ़ला नफ़्सिहिर्रह्म-त अन्नहू मन् अ़मि-ल मिन्कुम् सूअम् बि-जहालतिन् सुम्-म ता-ब मिम्-बअ़्दिही व अस्ल-ह फ़-अन्नहू ग़फ़ूरुर्-रहीम (54) व कज़ालि-क नुफ़स्सिलुल्-आयाति व लितस्तबी-न सबीलुल्-मुज्रिमीन (55) ✿

हिसाब में से उन पर है कुछ कि तू उनको दूर करने लगे, पस हो जायेगा तू बेइन्साफ़ों में। (52) और इसी तरह हमने आज़माया है बाज़े लोगों को बाज़ों से ताकि कहें- क्या यही लोग हैं जिन पर अल्लाह ने फ़ज़्ल किया हम सब में? क्या नहीं है अल्लाह ख़ूब जानने वाला शुक्र करने वालों को। (53) और जब आयें तेरे पास हमारी आयतों के मानने वाले तू कह दे- तो सलाम है तुम पर लिख लिया है तुम्हारे रब ने अपने ऊपर रहमत को कि जो कोई करे तुम में से बुराई न जानने की वजह से फिर उसके बाद तौबा कर ले और नेक हो जाये तो बात यह है कि वह है बख़्शने वाला मेहरबान। (54) और इसी तरह हम तफ़सील से बयान करते हैं आयतों को और ताकि खुल जाये तरीक़ा गुनाहगारों का। (55) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उन लोगों को (अपनी मज्लिस से) न निकालिये जो सुबह व शाम (यानी पाबन्दी के साथ) अपने परवर्दिगार की इबादत करते हैं, जिससे ख़ास उसकी रज़ामन्दी का इरादा रखते हैं (और कोई ग़र्ज़ रुतबे व माल की नहीं। यानी उनकी इबादत में पाबन्दी और हमेशगी भी है और इख़्लास भी, और इख़्लास अगरचे अन्दरूनी चीज़ है मगर निशानियों और आसार से पहचाना भी जा सकता है, और जब तक इख़्लास न होने की कोई दलील नहीं, इख़्लास ही का गुमान रखना चाहिये) और उन (के अन्दर) का हिसाब (और तफ़तीश) ज़रा भी आप से मुताल्लिक़ और आपका हिसाब ज़रा भी उनसे मुताल्लिक़ नहीं कि आप उनको निकाल दें (यानी अगर उनके अन्दरूनी इख़्लास की जाँच और तफ़तीश आपके ज़िम्मे होती तो इसकी गुंजाईश थी कि जिनके

इख़्लास की तहक़ीक़ न हो जाये उनको अलग कर दें, मगर वह आपके ज़िम्मे नहीं, और दूसरी कोई वजह उनको निकालने के सही होने की मौजूद नहीं। और चूँकि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उम्मत के मुरब्बी हैं, और मुरब्बी के लिये अपने मातहतों के हालात की तफ़तीश करने का शुब्हा व गुमान हो सकता था, मगर इसका उल्टा यह कि वे लोग अपने पैग़म्बर की बातिनी हालत की तफ़तीश करें, इसका कोई गुमान व संभावना ही नहीं, इसलिये वह क़तई सही नहीं है। इस जगह एक संभावित और ख़्याली चीज़ को एक यक़ीनी चीज़ के साथ बराबर क़रार देकर उसकी नफ़ी की गयी ताकि उसका ग़लत और नकारात्मक होना भी यक़ीनी हो जाये) वरना (उनके निकालने से) आप नामुनासिब काम करने वालों में हो जाएँगे।

और (हमने जो मोमिनों को ग़रीब और काफ़िरों को रईस बना रखा है जो बज़ाहिर ख़्याल व गुमान के तक़ाज़े के ख़िलाफ़ है) तो (इसकी वजह यह है कि) इसी तरीक़े पर हमने (उनमें से) एक (यानी काफ़िरों) को दूसरे (यानी मोमिनों) से इम्तिहान में डाल रखा है (यानी इस तर्ज़े-अ़मल में इम्तिहान है काफ़िरों का) ताकि ये लोग (मोमिनों के बारे में) कहा करें कि क्या ये लोग हैं कि हम सब में से (चुन करके) इनपर अल्लाह ने (अपना) फ़ज़्ल किया है? (यानी अपने दीने इस्लाम के लिये इनको चुना है) क्या यह बात नहीं है कि अल्लाह तआ़ला हक़ पहचानने वालों को ख़ूब जानता है? (इन ग़रीब लोगों ने अपने असली इनाम व मेहरबानी करने वाले का हक़ पहचाना, हक़ की तलब में लग गये, दीने हक़ और अल्लाह के यहाँ क़ुबूलियत से सम्मानित किये गये, और उन रईसों और मालदारों ने नाशुक्री और कुफ़्र किया, वे इस नेमत से मेहरूम रहे)। और वे लोग जब आपके पास आएँ जो कि हमारी आयतों पर ईमान रखते हैं तो आप (उनको ख़ुशख़बरी सुनाने के लिये) यूँ कह दीजिए कि तुम पर सलामती है (यानी काफ़िरों पर जो कि हर तरह की आख़िरत की मुसीबतों में पड़ेंगे उनसे तुम सुरक्षित हो, और दूसरे यह भी कि) तुम्हारे रब ने (अपने फ़ज़्ल व करम से) मेहरबानी फ़रमाना (और तुमको नेमतें देना) अपने ज़िम्मे मुक़र्रर कर लिया है (यहाँ तक) कि जो शख़्स तुम में से कोई बुरा काम कर बैठे (जो कि) नादानी से (हो जाता है, क्योंकि ख़िलाफ़े हुक्म करना अ़मली जहालत है मगर) फिर वह उसके बाद तौबा कर ले (और आगे के लिये अपने आमाल का) सुधार रखे (इसमें यह भी आ गया कि अगर वह तौबा टूट जाये तो फिर तौबा कर ले) तो अल्लाह तआ़ला की यह शान है कि (उसके लिये भी) वह बड़े मग़फ़िरत करने वाले हैं (कि गुनाह की सज़ा भी माफ़ कर देंगे) और बड़ी रहमत वाले हैं (कि तरह-तरह की नेमतें भी देंगे)। और (जिस तरह हमने इस जगह पर मोमिनों और काफ़िरों के हाल और अन्जाम की तफ़सील बयान कर दी) इसी तरह हम आयतों की (जो कि दोनों फ़रीक़ के हाल व अन्जाम पर मुश्तमिल हों) तफ़सील बयान करते रहते हैं (ताकि मोमिनों का तरीक़ा भी ज़ाहिर हो जाये) और ताकि मुजरिमों का तरीक़ा (भी) ज़ाहिर हो जाए (और हक़ व बातिल के वाज़ेह होने से हक़ को तलाश करने वाले को हक़ का पहचानना आसान हो जाये)।

मआरिफ़ व मसाईल

घमण्ड व जाहिलीयत का ख़ात्मा और इज़्ज़त व ज़िल्लत का इस्लामी मेयार

इस्लाम में अमीर व ग़रीब का कोई भेदभाव नहीं

जिन लोगों ने इनसान होने के बावजूद इनसानियत को नहीं पहचाना बल्कि इनसान को दुनिया के अनेक जानवरों में से एक होशियार जानवर क़रार दिया, जिसने दूसरे जानवरों को अपना ताबेदार व महकूम बनाकर सबसे ख़िदमत ली, उनके नज़दीक इनसान की तख़्लीक़ (पैदाईश) का मक़सद इसके सिवा हो ही क्या सकता है कि वे एक जानवर की तरह खाने पीने, सोने जागने और दूसरे हैवानी जज़्बात को इस्तेमाल करने ही को ज़िन्दगी का मक़सद समझें। और जब ज़िन्दगी का मक़सद सिर्फ़ यही हो तो यह भी ज़ाहिर है कि इस दुनिया में अच्छे बुरे, बड़े छोटे, इज़्ज़तदार व बेइज़्ज़त, शरीफ़ व कमीने के पहचानने का मेयार यही हो सकता है कि जिसके पास खाने पीने, पहनने बरतने का सामान ज़्यादा हो वह कामयाब, इज़्ज़त वाला और शरीफ़ है, और जिसके पास ये चीज़ें कम हों वह बेइज़्ज़त, ज़लील और नामुराद व नाकाम है।

इन्साफ़ की बात यह है कि इस अक़ीदे व सोच पर अख़्लाक़ और नेक आमाल की कोई बहस ही इनसान के शरीफ़ और इज़्ज़तदार होने में नहीं आती, बल्कि वही अ़मल नेक अ़मल और अख़्लाक़ अच्छा अख़्लाक़ होगा जिसके ज़रिये ये हैवानी मक़ासिद अच्छी तरह पूरे हो सकें।

इसी लिये तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके लाये हुए दीन व मज़हब का पहला और आख़िरी सबक़ यही रहा है कि इस ज़िन्दगी के बाद एक दूसरी ज़िन्दगी है जो हमेशा रहने वाली और ख़त्म न होने वाली होगी, वहाँ की राहत भी मुकम्मल और हमेशा के लिये होगी और तकलीफ़ व अ़ज़ाब भी मुकम्मल और हमेशा के लिये। दुनिया की ज़िन्दगी खुद मक़सद नहीं, बल्कि दूसरी ज़िन्दगी में जो सामान काम आने वाला है उसको जमा करना इस चन्द दिन की ज़िन्दगी का असली मक़सद हैः

रहा मरने की तैयारी में मसरूफ़ मेरा काम और इस दुनिया में था क्या

और इनसान व हैवान में यही विशेष फ़र्क़ है कि हैवानात को अगली ज़िन्दगी की कोई फ़िक्र नहीं, बख़िलाफ़ इनसान के कि इसकी सबसे बड़ी फ़िक्र अ़क़्ल व होश वालों के नज़दीक दूसरी ज़िन्दगी को बनाना और संवारना है। इसी अ़क़ीदे व नज़रिये पर शराफ़त व घटिया पन और इज़्ज़त व ज़िल्लत का मेयार ज़ाहिर है कि ज़्यादा खाना पीना या ज़्यादा माल व दौलत जमा कर लेना नहीं होगा, बल्कि अच्छे अख़्लाक़ और नेक आमाल होंगे, जिन पर आख़िरत की इज़्ज़त का मदार है।

दुनिया जिस वक़्त भी अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की हिदायतों व तालीमात और आख़िरत के अ़क़ीदे से ग़ाफ़िल हुई तो इसका तबई नतीजा सामने आ गया कि इज़्ज़त व दौलत और शरीफ़ व घटिया होने का मेयार सिर्फ़ रोटी और पेट रह गया, जो इसमें कामयाब है वह शरीफ़ व इज़्ज़तदार कहलाता है, जो इसमें नाकाम या अधूरा है वह ग़रीब, बेइज़्ज़त, घटिया व ज़लील

समझा जाता है।

इसलिये हर ज़माने में सिर्फ़ दुनियावी ज़िन्दगी की भूल-भुलैयों में फंसे हुए इनसानों ने मालदार को इज़्ज़तदार व शरीफ़ और ग़रीब व फ़क़ीर को बेइज़्ज़त व घटिया क़रार दिया। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने ईमान लाने वाले ग़रीब लोगों को इसी मेयार से ज़लील व घटिया कहकर यह एतिराज़ किया कि हम इन कम-दर्जा लोगों के साथ नहीं बैठ सकते, अगर आप चाहते हैं कि हमें कोई पैग़ाम सुनायें तो इन ग़रीब-ग़ुरबा को अपने पास से निकाल दीजिए:

قَالُوْٓا اَنُؤْمِنُ لَكَ وَاتَّبَعَكَ الْاَرْذَلُوْنَ.

"यानी यह कैसे हो सकता है कि हम आप पर ऐसी हालत में ईमान ले आयें जबकि आपके पैरोकार घटिया और कम-दर्जे के लोग हैं।"

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने उनके इस दिल को छील देने वाले कलाम का जवाब मख़्सूस पैग़म्बराना अन्दाज़ में यह दिया:

وَمَا عِلْمِىْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ. اِنْ حِسَابُهُمْ اِلَّا عَلٰى رَبِّىْ لَوْ تَشْعُرُوْنَ.

"यानी मैं उनके आमाल से पूरी तरह वाकिफ़ नहीं कि यह फ़ैसला कर सकूँ कि वे घटिया हैं या शरीफ़ व इज़्ज़त वाले, बल्कि हर शख़्स के अ़मल की हक़ीक़त और उसका हिसाब मेरे रब ही को मालूम है, जो दिलों के भेद का जानकार है।"

नूह अ़लैहिस्सलाम ने उन जाहिल और घमण्डी, इनसानी शराफ़त व रज़ालत की हक़ीक़त से नावाक़िफ़ लोगों का रुख़ एक स्पष्ट हक़ीक़त की तरफ़ फेरकर यह बतला दिया कि शरीफ़ व रज़ील (घटिया और बेइज़्ज़त) के अलफ़ाज़ तुम लोग इस्तेमाल करते हो और इनकी हक़ीक़त से वाक़फ़ियत नहीं। बस पैसे वाले को शरीफ़ और ग़रीब को रज़ील कहने लगे, हालाँकि शराफ़त व रज़ालत (घटिया व बेक़द्र होने) का मेयार पैसा नहीं, बल्कि आमाल व अख़्लाक़ हैं। इस मौक़े पर हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम यह फ़रमा सकते थे कि आमाल व अख़्लाक़ के मेयार पर ये लोग तुम से ज़्यादा शरीफ़ व इज़्ज़त वाले हैं, लेकिन तब्लीग़ व सुधार के पैग़म्बराना अन्दाज़ ने इसकी इजाज़त न दी कि ऐसा जुमला कहें जिससे मुख़ातब ग़ुस्से में भड़क जाये, इसलिये सिर्फ़ इतना फ़रमा दिया कि रज़ालत का मदार तो कामों व आमाल पर है और मैं उनके आमाल से पूरी तरह वाक़िफ़ नहीं, इसलिये उनके शरीफ़ या रज़ील (घटिया) होने का फ़ैसला नहीं कर सकता।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के बाद भी हर ज़माने में क़ौम के ग़रीब लोग चाहे वे अपने अख़्लाक़ व आमाल के एतिबार से कितने ही शरीफ़ और इज़्ज़त वाले हों मगर दुनिया के पुजारी, घमण्डी लोग उनको हक़ीर व ज़लील कहते आये हैं, और यही वे लोग हैं जिन्होंने अपनी अ़क़्ल व समझ और अच्छे अख़्लाक़ की बिना पर हर ज़माने में अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की दावत क़ुबूल करने में पहल की, यहाँ तक कि धर्मों और मिल्लतों के इतिहास पर नज़र रखने वालों के नज़दीक किसी पैग़म्बर के सच्चा और हक़ पर होने की एक दलील यह बन गयी कि उसके शुरू के मानने वाले और पैरोकार क़ौम के ग़रीब लोग हों। यही वजह थी कि जब रूम के बादशाह

हिरक़्ल के पास हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पत्र मुबारक इस्लाम की दावत के लिये पहुँचा और उसने आपकी हक़्क़ानियत और सच्चाई की तहक़ीक़ करनी चाही तो जानकार लोगों से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में जो सवालात किये उनमें से एक सवाल यह भी था कि उनके अक्सर मानने वाले ग़रीब अ़वाम हैं या क़ौम के बड़े लोग? जब उसको बतलाया गया कि ग़रीब लोग हैं तो उसने कहा 'हुम अतबाउर्रुसुलि' यानी रसूलों के शुरू के पैरोकार यही लोग हुआ करते हैं।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर में फिर यही सवाल खड़ा हुआ। उपरोक्त आयतों में इसी का जवाब ख़ास हिदायतों के साथ मज़कूर है।

अ़ल्लामा इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इमाम इब्ने जरीर की रिवायत से नक़ल किया है कि क़ुरैश के काफ़िरों में के चन्द सरदार- उतबा, शैबा, इब्ने रबीआ़, मुत्इम बिन अ़दी और हारिस बिन नौफ़ल वग़ैरह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा अबू तालिब के पास आये और कहा- आपके भतीजे मुहम्मद की बात सुनने और मानने से हमारे लिये एक रुकावट यह भी है कि उनके आस-पास हर वक़्त वे लोग रहते हैं जो या तो हमारे ग़ुलाम थे, हमने उनको आज़ाद कर दिया, और या वे लोग हैं जो हमारे ही रहम व करम पर ज़िन्दगी गुज़ारते थे, उन हक़ीर व ज़लील लोगों के होते हुए हम उनकी मज्लिस में शरीक नहीं हो सकते, आप उनसे कह दें कि अगर हमारे आने के वक़्त वे उन लोगों को मज्लिस से हटा दिया करें तो हम उनकी बात सुनें और ग़ौर करें।

चचा अबू तालिब ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से उनकी बात नक़ल की तो हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह राय दी कि इसमें क्या हर्ज है, कुछ दिनों के लिये आप यह भी करके देखें। ये लोग तो अपने बेतकल्लुफ़ चाहने वाले हैं, उन लोगों के आने के वक़्त मज्लिस से हट जाया करेंगे।

इस पर उक्त आयत नाज़िल हुई, जिसमें सख़्ती के साथ ऐसा करने से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मना फ़रमा दिया गया। आयत के उतरने के बाद फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु को माज़िरत करनी पड़ी कि मेरी राय ग़लत थी।

और ये ग़रीब लोग जिनके बारे में यह गुफ़्तगू हुई उस वक़्त हज़रत बिलाल हब्शी, सुहैब रूमी, अ़म्मार बिन यासिर, सालिम मौला अबी हुज़ैफ़ा, सबीह मौला उसैद, अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद, मिक़दाद इब्ने अ़मर, मसऊद बिन अलक़ारी, ज़ुश्शिमालैन वग़ैरह सहाबा-ए-किराम थे, जिनकी इज़्ज़त व शराफ़त का परवाना आसमान से नाज़िल हुआ और क़ुरआन में इसी के बारे में दूसरी जगह इसकी ताकीद इन अलफ़ाज़ में आई है:

وَاصْبِرْ نَفْسَكَ مَعَ الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ يُرِيْدُوْنَ وَجْهَهٗ وَلَا تَعْدُ عَيْنٰكَ عَنْهُمْ تُرِيْدُ زِيْنَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَا تُطِعْ مَنْ اَغْفَلْنَا قَلْبَهٗ عَنْ ذِكْرِنَا وَاتَّبَعَ هَوٰهُ وَكَانَ اَمْرُهٗ فُرُطًا.

जिसमें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी है कि "आप अपने

नफ़्स को उन लोगों में बाँध रखें जो सुबह व शाम यानी हर वक़्त अपने रब की इबादत करते हैं इख़्लास के साथ। आप अपनी नज़रें उनके सिवा किसी पर न डालिये। जिसकी ग़र्ज़ यही हो सकती है कि दुनिया की ज़िन्दगी की रौनक़ मक़सूद हो, और ऐसे लोगों की बात न मानिये जिनके दिलों को हमने अपने ज़िक्र से ग़फ़लत में डाल दिया, और जो अपनी नफ़्सानी इच्छाओं के पीछे चलने में लग गये, और जिनका काम ही हदों से निकल जाना है।"

ज़िक्र की हुई आयत में उन ग़रीब लोगों की सिफ़त यह बतलाई कि वे सुबह शाम अपने रब को पुकारते हैं। इसमें सुबह व शाम से मुराद मुहावरे के मुताबिक़ दिन रात के तमाम वक़्त हैं, और पुकारने से मुराद इबादत करना है। और रात दिन की इस इबादत के साथ यह क़ैद भी लगा दी कि 'युरीदू-न वज्हहू' जिससे बतला दिया कि इबादत में जब तक इख़्लास न हो उसका कोई एतिबार नहीं।

आयत के आख़िर में जो यह इरशाद फ़रमाया गया कि उनका हिसाब आपके ज़िम्मे नहीं, और आपका हिसाब उनके ज़िम्मे नहीं। इब्ने अ़तीया और ज़मख़्शरी वग़ैरह की तहक़ीक़ के मुताबिक़ इसमें "हिसाबहुम" और "अ़लैहिम" में "उन" से इशारा मुश्रिकों के सरदारों की तरफ़ है जो ग़रीब मुसलमानों को मज्लिस से हटा देने की फ़रमाईश किया करते थे। तो हक़ तआ़ला ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को बतला दिया कि ये लोग चाहे ईमान लायें या न लायें आप ग़रीब मुसलमानों के मुक़ाबले में इनकी परवाह न करें, क्योंकि इनके हिसाब की ज़िम्मेदारी आप पर नहीं, जैसा कि आपके हिसाब की ज़िम्मेदारी इन पर नहीं। अगर यह ज़िम्मेदारी आप पर होती, यानी इनके मुसलमान न होने पर आप से सवाल और पूछगछ होती तो उस सूरत में आप मुश्रिकों के सरदारों की ख़ातिर ग़रीब मुसलमानों को मज्लिस से हटा सकते थे, और जब ऐसा नहीं तो उनको मज्लिस से हटाना खुली बेइन्साफ़ी है। अगर आप ऐसा करें तो आपका शुमार बेइन्साफ़ लोगों में हो जायेगा।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमाया गया कि हमने इसी तरह एक को दूसरों के ज़रिये इम्तिहान में डाल रखा है, ताकि क़ुरैश के सरदार ख़ुदा तआ़ला की इस ज़बरदस्त क़ुदरत का तमाशा देखें, कि ग़रीब मुसलमान जिनको वे हक़ीर व ज़लील समझते थे, अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी करने से किस मक़ाम पर पहुँचे, और दुनिया व आख़िरत में उनको कैसी इज़्ज़त हासिल हुई। और वे यह कहते फिरें कि क्या यही ग़रीब लोग अल्लाह के इनाम व इकराम के मुस्तहिक़ थे कि हम सब इज़्ज़तदार और बड़े लोगों को छोड़कर इनको नवाज़ा गयाः

अ़ल्लामा कश्शाफ़ वग़ैरह की तहक़ीक़ के मुताबिक़ उनका यह क़ौल उस परीक्षा व इम्तिहान का नतीजा है जो कमज़ोरों और मुसलमानों के ज़रिये उनका लिया गया था। वे उस इम्तिहान में नाकाम हुए, बजाय इसके कि क़ुदरत के इस प्रदर्शन पर ग़ौर करके इस नतीजे पर पहुँचते कि शराफ़त व रज़ालत माल व दौलत वग़ैरह पर मौक़ूफ़ नहीं, बल्कि उसका मदार अख़्लाक़ व आमाल पर है, वे उल्टा अल्लाह तआ़ला पर यह इल्ज़ाम लगाने लगे कि सम्मान व इकराम के हक़दार तो हम थे, हमें छोड़कर उनको सम्मान क्यों दिया गया? हक़ तआ़ला ने इसके जवाब में

फिर उनको असल हक़ीक़त की तरफ़ इस जुमले से मुतवज्जह फ़रमायाः

اَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِالشّٰكِرِيْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला ख़ूब जानते हैं कि कौन लोग हक़ को पहचानने वाले और शुक्रगुज़ार हैं। मतलब यह है कि हक़ीक़त के एतिबार से शरीफ़ व इ़ज़्ज़तदार वह शख़्स है जो अपने मोहसिन (एहसान करने वाले) का हक़ पहचाने और शुक्रगुज़ार हो, और वही इनाम व सम्मान का हक़दार है, न कि वह जो रात-दिन अपने मोहसिन और नेमत देने वाले की नेमतों में खेलने के बावजूद उसकी नाफ़रमानी करता है।

चन्द अहकाम और हिदायतें

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों से चन्द अहकाम व हिदायतें समझ में आती हैं:

अव्वल यह कि किसी के फटे कपड़े या ज़ाहिरी ख़स्ता हालत को देखकर उसको हक़ीर व ज़लील समझने का किसी को हक़ नहीं, बहुत सी बार ऐसे लिबास में ऐसे लोग भी होते हैं जो अल्लाह के नज़दीक निहायत सम्मानित व मक़बूल हैं। एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बहुत से शिकस्ता हालत वाले, गुबार में भरे हुए लोग ऐसे भी होते हैं कि वे लोग अल्लाह के मक़बूल हैं, अगर किसी काम के लिये क़सम खा बैठें कि ऐसा होगा तो अल्लाह तआ़ला उनकी क़सम को ज़रूर पूरा फ़रमाते हैं।

दूसरे यह कि शराफ़त व घटियापन का मेयार महज़ दुनिया की दौलत व मालदारी को समझना इनसानियत की तौहीन है, इसका असल मदार अख़्लाक़ और नेक आमाल पर है।

तीसरे यह कि किसी क़ौम के सुधारक और मुबल्लिग़ (प्रचारक) के लिये अगरचे सार्वजनिक तब्लीग़ भी ज़रूरी है, जिसमें मुवाफ़िक़ मुख़ालिफ़, मानने वाले और न मानने वाले सब मुख़ातब हों, लेकिन उन लोगों का हक़ पहले है जो उसकी तालीमात को अपनाकर उस पर चल रहे हों, दूसरों की ख़ातिर उनको पीछे करना या नज़र-अन्दाज़ करना जायज़ नहीं। मसलन ग़ैर-मुस्लिमों की तब्लीग़ के लिये नावाक़िफ़ मुसलमानों की तालीम व इस्लाह को पीछे नहीं करना चाहिये।

चौथे यह कि अल्लाह तआ़ला के इनाम शुक्रगुज़ारी के हिसाब से बढ़ते हैं, जो शख़्स अल्लाह के इनामों की अधिकता और कसरत का तालिब है उस पर लाज़िम है कि क़ौल व अ़मल से शुक्रगुज़ारी को अपना शिआ़र (आ़दत व चलन) बना ले।

आयतः

وَاِذَا جَآءَكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ ....الخ.

(यानी आयत नम्बर 54) के बारे में तफ़सीर के इमामों के दो क़ौल हैं- अक्सर हज़रात ने इन आयतों को पहली आयतों और पहले गुज़रे वाक़िआ़त ही से सम्बन्धित क़रार दिया है, और इसकी ताईद में यह रिवायत पेश की है कि जब क़ुरैश के सरदारों ने चचा अबू तालिब के माध्यम से यह मुतालबा किया कि आपकी मज्लिस में ग़रीब और मामूली दर्जे के लोग रहते हैं,

उनकी सफ़ में बैठकर आपका कलाम हम नहीं सुन सकते, अगर हमारे आने के वक़्त उन लोगों को आप मज्लिस से हटा दिया करें तो हम आपका कलाम सुनें और ग़ौर करें।

इस पर हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह मश्विरा दिया कि इसमें कोई हर्ज नहीं, मुसलमान तो अपने सच्चे दोस्त हैं, उनसे कह दिया जायेगा तो कुछ देर के लिये वे मज्लिस से हट जाया करेंगे, मुम्किन है कि इस तरह ये क़ुरैश के सरदार अल्लाह का कलाम सुनें और मुसलमान हो जायें।

लेकिन पहले गुज़री आयतों में इस मश्विरे के ख़िलाफ़ यह हुक्म नाज़िल हुआ कि ऐसा हरगिज़ न किया जाये, ऐसा करना ज़ुल्म और बेइन्साफ़ी है। इस हुक्म के नाज़िल होने पर हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को अपनी राय और मश्विरे की ग़लती मालूम हुई और डरे कि अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ राय देकर गुनाह हो गया, इसकी माज़िरत पेश करने के लिये हाज़िर हुए।

इस पर उपरोक्त आयतें उनकी तसल्ली के लिये नाज़िल हुईं। जिनका ख़ुलासा यह है कि आप उन लोगों को पहले हुई ग़लती पर पकड़ न होने से मुत्मईन फ़रमा दें, बल्कि सिर्फ़ यही नहीं कि उस ग़लती पर कोई पकड़ नहीं होगी बल्कि अर्रहमुर्राहिमीन की बेशुमार नेमतों का वायदा भी सुना दें, और अर्रहमुर्राहिमीन की बारगाह का यह क़ानून उनको बतला दें कि जब भी कोई मुसलमान जहालत (नादानी और अज्ञानता) से कोई बुरा काम कर बैठे, और फिर अपनी ग़लती पर सचेत होकर उससे तौबा कर ले और आईन्दा के लिये अपने अ़मल दुरुस्त कर ले तो अल्लाह तआ़ला उसके पिछले गुनाहों को माफ़ फ़रमा देंगे, और आईन्दा अपनी दुनिया व आख़िरत की नेमतों से भी उसको मेहरूम न फ़रमायेंगे।

इस वज़ाहत के मुताबिक़ ये आयतें उस ख़ास वाक़िए में नाज़िल हुईं जिसका बयान पिछली आयतों में हो चुका है। और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने इन आयतों के मज़मून को एक मुस्तक़िल हिदायत नामे की हैसियत से बयान किया है, जो उन लोगों से सम्बन्धित है जिनसे कोई गुनाह हो गया हो, फिर शर्मिन्दगी हुई और तौबा करके अपने अ़मल को सही कर लिया।

और अगर ग़ौर किया जाये तो इन दोनों बातों में कोई टकराव नहीं, क्योंकि इस पर सब का इत्तिफ़ाक़ है कि क़ुरआन मजीद का कोई हुक्म जो किसी ख़ास वाक़िए के बारे में नाज़िल हुआ हो अगर उसके अलफ़ाज़ और मज़मून आ़म है तो वह सिर्फ़ उसी वाक़िए के लिये मख़्सूस नहीं होता, बल्कि एक आ़म हुक्म की हैसियत रखता है। इसलिये अगर मान लो मज़कूरा आयतों का उतरना इसी बयान हुए वाक़िए में हुआ हो तब भी यह हुक्म एक आ़म उसूल व क़ानून की हैसियत रखता है, जो हर उस गुनाहगार को शामिल है जिसको गुनाह के बाद भी अपनी ग़लती का एहसास हुआ और शर्मिन्दा होकर उसने अपने आगे के अ़मल को दुरुस्त कर लिया।

अब इन आयतों की पूरी तशरीह (तफ़सीर व व्याख्या) देखिये। पहली आयत में इरशाद है:

وَاِذَا جَآءَكَ الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِاٰيٰتِنَا فَقُلْ سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ

यानी जब वे लोग आपके पास आयें जो हमारी आयतों पर ईमान रखते हैं (आयतों से मुराद इस जगह क़ुरआनी आयतें भी हो सकती हैं और अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत की आम निशानियाँ भी) तो ऐसे लोगों के मुताल्लिक़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह हिदायत दी गयी कि आप उनको "सलामुन अलैकुम" से ख़िताब फ़रमायें। यहाँ सलामुन अलैकुम के दो मायने हो सकते हैं- एक यह कि उनको अल्लाह जल्ल शानुहू का सलाम पहुँचा दीजिए, जिसमें उन लोगों का बहुत ज़्यादा सम्मान व इज़्ज़त है, इस सूरत में उन ग़रीब मुसलमानों के दिल टूटने की बेहतरीन भरपाई हो गयी जिनके बारे में क़ुरैश के सरदारों ने मज्लिस से हटा देने की तजवीज़ पेश की थी, और यह भी मुराद हो सकती है कि आप उन लोगों को सलामती की ख़ुशख़बरी सुना दीजिए कि अगर उन लोगों से अमल में कोताही या ग़लती भी हुई है तो वह माफ़ कर दी जायेगी, और ये हर क़िस्म की आफ़तों से सलामत रहेंगे।

दूसरे जुमलेः

كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ.

में इस एहसान पर और ज़्यादा एहसान व इनाम का वायदा इस तरह बयान फ़रमाया गया है कि आप उन मुसलमानों से फ़रमा दें कि तुम्हारे रब ने रहमत करने को अपने ज़िम्मे लिख लिया है, इसलिये बहुत डरें और घबरायें नहीं। इस जुमले में अव्वल तो रब लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाकर आयत के मज़मून को मुदल्लल कर दिया, कि अल्लाह तआला तुम्हारा पालने वाला है, और ज़ाहिर है कि कोई पालने वाला अपने पाले हुए को ज़ाया नहीं किया करता। फिर लफ़्ज़ रब ने जिस रहमत की तरफ़ इशारा किया था उसको स्पष्ट तौर पर भी ज़िक्र फ़रमा दिया, और वह भी इस उनवान से कि तुम्हारे रब ने रहमत करने को अपने ज़िम्मे लिख लिया है, और ज़ाहिर है कि किसी शरीफ़ भले इनसान से भी वायदा-ख़िलाफ़ी नहीं होती तो रब्बुल-आलमीन से कैसे हो सकती है, ख़ासकर जबकि उस वायदे को मुआहदे की सूरत में लिख लिया गया हो।

सही बुख़ारी, मुस्लिम और मुस्नद अहमद में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मज़कूर है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जब अल्लाह तआला ने सारी मख़्लूक़ात को पैदा फ़रमाया और हर एक की तक़दीर का फ़ैसला फ़रमाया तो एक किताब में जो अर्श पर अल्लाह तआला के पास है यह लिखाः

اِنَّ رَحْمَتِىْ غَلَبَتْ غَضَبِىْ.

"यानी मेरी रहमत मेरे ग़ुस्से पर ग़ालिब है।"

और हज़रत सलमान रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हमने तौरात में यह लिखा देखा है कि जब अल्लाह तआला ने आसमान, ज़मीन और इनकी सारी मख़्लूक़ात को पैदा फ़रमाया तो अपनी रहमत की सिफ़त के सौ हिस्से करके उसमें से एक हिस्सा सारी मख़्लूक़ात को तक़सीम कर दिया और आदमी और जानवर और दूसरी मख़्लूक़ात में जहाँ भी कोई रहमत (शफ़क़त व मेहरबानी) का असर पाया जाता है वह उसी तक़सीम शुदा हिस्से का असर है। माँ-बाप और

औलाद में, भाई-बहनों में, शौहर-बीवी में, आम रिश्तेदारों में, पड़ोसियों और दूसरे दोस्तों में जो आपसी हमदर्दी और मुहब्बत व रहमत के ताल्लुक़ात देखे जाते हैं वो सब उसी एक रहमत के हिस्से के परिणाम हैं, बाक़ी रहमत के निन्नानवे हिस्से अल्लाह तआ़ला ने ख़ुद अपने लिये रखे हैं। और कुछ रिवायतों में इसको नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीस की हैसियत से भी रिवायत किया गया है। इससे इनसान कुछ अन्दाज़ा लगा सकता है कि अल्लाह तआ़ला की रहमत अपनी मख़्लूक़ पर कैसी और किस दर्जे की है।

और यह ज़ाहिर है कि कोई इनसान बल्कि फ़रिश्ता भी अल्लाह जल्ल शानुहू की शान के मुताबिक़ इबादत व ताअ़त तो अदा कर नहीं सकता, और जो इताअ़त शान के ख़िलाफ़ हो वह दुनिया के लोगों की नज़र में बजाय इनाम का सबब होने के नाराज़गी का कारण समझी जाती है। यह हाल तो हमारी इबादत और नेकियों का है कि हक़ तआ़ला शानुहू की बुलन्द बारगाह की निस्बत से देखा जाये तो बुराईयों से कम नहीं, फिर इस पर मज़ीद यह कि वास्तविक बुराईयों और गुनाहों से भी कोई बशर ख़ाली नहीं, हाँ मगर यह कि अल्लाह ही किसी को महफ़ूज़ रखे। इन हालात में इन्साफ़ का तक़ाज़ा तो यह था कि कोई भी अ़ज़ाब से न बचता, लेकिन हो यह रहा है कि हर इनसान पर अल्लाह तआ़ला की नेमतें हर वक़्त बरस रही हैं, यह सब उसी रहमत का नतीजा है जो परवर्दिगारे आ़लम ने अपने ज़िम्मे लिख ली है।

तौबा से हर गुनाह माफ़ हो जाता है

इसके बाद कामिल रहमत का ख़ुलासा एक क़ानून की सूरत में इस तरह बयान फ़रमायाः

أَنَّهُ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوْٓءًا ۢ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابَ مِنْۢ بَعْدِهٖ وَأَصْلَحَ فَأَنَّهٗ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ

यानी जो आदमी जहालत (नादानी और नासमझी) से कोई बुरा काम कर बैठे और उसके बाद वह तौबा कर ले और अपने अ़मल को दुरुस्त करे तो अल्लाह तआ़ला बहुत मग़फ़िरत करने वाले हैं, उसके गुनाह को माफ़ फ़रमा देंगे, और बहुत रहमत करने वाले हैं, कि सिर्फ़ माफ़ी पर किफ़ायत न होगी बल्कि इनामात से भी नवाज़ा जायेगा।

इस आयत में लफ़्ज़ जहालत से बज़ाहिर किसी को यह ख़्याल हो सकता है कि गुनाह की माफ़ी का वायदा सिर्फ़ उस सूरत में है जबकि नावाक़फ़ियत (नादानी और अज्ञानता) और जहल के सबब कोई गुनाह हो जाये, जान-बूझकर गुनाह करने वाला इस हुक्म में दाख़िल नहीं। लेकिन हक़ीक़त यह नहीं, क्योंकि जहालत से मुराद इस जगह जहालत का अ़मल है, यानी ऐसा काम कर बैठे जैसा परिणाम से जाहिल और बेख़बर किया करता है, यह ज़रूरी नहीं कि वह वास्तव में जाहिल हो, इसकी ताईद ख़ुद लफ़्ज़ जहालत से भी होती है, कि यहाँ लफ़्ज़ जहल के बजाय जहालत का लफ़्ज़ शायद इसी की तरफ़ इशारा करने के लिये ही इस्तेमाल किया गया है, क्योंकि जहल तो इल्म का मुक़ाबिल है, और जहालत बरदाश्त व वक़ार के मुक़ाबिल है। यानी लफ़्ज़ जहालत मुहावरों में बोला ही जाता है अ़मली जहालत के लिये, और अगर ग़ौर किया जाये तो गुनाह जब भी किसी से होता है तो इस अ़मली जहालत ही की वजह से होता है, इसी लिये कुछ

बुज़ुर्गों का क़ौल है कि जो शख़्स अल्लाह व रसूल के किसी हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी करता है वह जाहिल है। इससे यही अ़मली जहालत मुराद है, नावाक़फ़ियत और बेइल्म होना ज़रूरी नहीं। और क़ुरआन मजीद और सही हदीसों के बेशुमार ख़ुलासे इस पर दलालत करते हैं कि तौबा करने से हर गुनाह माफ़ हो सकता है, चाहे ग़फ़लत व नादानी की वजह से हो गया हो, या जान-बूझकर नफ़्स की शरारत और इच्छा की पैरवी की वजह से।

इस जगह यह बात ख़ास तौर पर क़ाबिले ग़ौर है कि इस आयत में गुनाहगारों से मग़फ़िरत और रहमत का जो वायदा फ़रमाया गया है वह दो चीज़ों के साथ सशर्त है- एक तौबा, दूसरे अ़मल में सुधार। तौबा के मायने हैं गुनाह पर शर्मिन्दगी के। हदीस में इरशाद है:

اِنَّمَا التَّوْبَةُ النَّدَمُ.

"यानी तौबा नाम है नादिम और शर्मिन्दा होने का।"

दूसरे आगे के लिये अ़मल को सही करने के। उस अ़मल को सही करने और सुधारने में यह भी दाख़िल है कि आईन्दा उस गुनाह के पास न जाने का पुख़्ता इरादा और पूरा एहतिमाम करे, और यह भी शामिल है कि पिछले गुनाह से जो किसी के हुक़ूक़ ज़ाया हुए हैं तो जहाँ तक संभव हो उनको अदा करे, चाहे वे हुक़ूक़ अल्लाह के हों या बन्दों के। अल्लाह के हुक़ूक़ की मिसाल नमाज़, रोज़ा, ज़कात, हज वग़ैरह फ़राईज़ में कोताही करना है, और बन्दों के हुक़ूक़ की मिसाल किसी के माल पर नाजायज़ क़ब्ज़ा करना और इख़्तियार चलाना और ख़र्च करना, किसी की आबरू पर हमला करना, किसी को गाली-गलौज के ज़रिये या किसी दूसरी सूरत से तकलीफ़ पहुँचाना है।

इसलिये तौबा के कामिल होने के लिये जिस तरह यह ज़रूरी है कि पिछले गुनाह पर शर्मिन्दगी के साथ अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत तलब करे, और आईन्दा के लिये अपने अ़मल को दुरुस्त रखे, उस गुनाह के पास न जाये। इसी तरह यह भी ज़रूरी है कि जो नमाज़ें या रोज़े ग़फ़लत से छूट गयी हैं उनकी क़ज़ा करे, जो ज़कात नहीं दी गयी वह अब अदा करे, क़ुरबानी, सदक़ा-ए-फ़ित्र के वाजिबात में कोताही हुई है तो उनको अदा करे। हज फ़र्ज़ होने के बावजूद अदा नहीं किया तो अब अदा करे, और ख़ुद न कर सके तो हज्ज-ए-बदल कराये, और अगर अपने सामने हज्ज-ए-बदल और दूसरी क़ज़ाओं का मौक़ा पूरा न मिले तो वसीयत करे कि उसके वारिस उसके ज़िम्मे आयद हुए वाजिबात का फ़िदया या हज्ज-ए-बदल का इन्तिज़ाम करें। ख़ुलासा यह है कि अ़मल के सही और दुरुस्त करने के लिये सिर्फ़ आईन्दा का अ़मल दुरुस्त कर लेना काफ़ी नहीं, पिछले फ़राईज़ व वाजिबात को अदा करना भी ज़रूरी है।

इसी तरह बन्दों के हुक़ूक़ में अगर किसी का माल नाजायज़ तौर पर लिया है तो उसको वापस करे, या उससे माफ़ कराये, और किसी को हाथ या ज़बान से तकलीफ़ पहुँचाई है तो उससे माफ़ कराये। और अगर उससे माफ़ कराना इख़्तियार में न हो, मसलन वह मर जाये, या ऐसी जगह चला जाये जिसका इसको पता मालूम नहीं, तो उसकी तदबीर यह है कि उस शख़्स

के लिये अल्लाह तआ़ला से दुआ़-ए-मग़फ़िरत करते रहने की पाबन्दी करे, इससे उम्मीद है कि हक़ वाला राज़ी हो जायेगा और यह शख़्स उसके हक़ से बरी हो जायेगा।

قُلْ اِنِّیْ نُهِیْتُ اَنْ اَعْبُدَ الَّذِیْنَ تَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ قُلْ لَّاۤ اَتَّبِعُ اَهْوَآءَكُمْ ۙ قَدْ ضَلَلْتُ اِذًا وَّمَاۤ اَنَا مِنَ الْمُهْتَدِیْنَ ﴿۵۶﴾ قُلْ اِنِّیْ عَلٰى بَیِّنَةٍ مِّنْ رَّبِّیْ وَكَذَّبْتُمْ بِهٖ ؕ مَا عِنْدِیْ مَا تَسْتَعْجِلُوْنَ بِهٖ ؕ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ ؕ یَقُصُّ الْحَقَّ وَهُوَ خَیْرُ الْفٰصِلِیْنَ ﴿۵۷﴾ قُلْ لَّوْ اَنَّ عِنْدِیْ مَا تَسْتَعْجِلُوْنَ بِهٖ لَقُضِیَ الْاَمْرُ بَیْنِیْ وَبَیْنَكُمْ ؕ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِالظّٰلِمِیْنَ ﴿۵۸﴾

क़ुल् इन्नी नुहीतु अन् अअ़्बुदल्लज़ी-न तद्अू-न मिन् दूनिल्लाहि, क़ुल् ला अत्तबिअ़ु अह़्वा-अकुम् क़द् ज़लल्तु इज़ंव्-व मा अ-न मिनल् मुह़्तदीन (56) क़ुल् इन्नी अ़ला बय्यि-नतिम् मिर्रब्बी व कज़्ज़ब्तुम् बिही, मा अ़िन्दी मा तस्तअ़्जिलू-न बिही, इनिल्हुक्मु इल्ला लिल्लाहि, यक़ुस्सुल्-हक़्-क़ व हु-व ख़ैरुल्-फ़ासिलीन (57) क़ुल् लौ अन्-न अ़िन्दी मा तस्तअ़्जिलू-न बिही लक़ुज़ियल्-अम्रु बैनी व बैनकुम्, वल्लाहु अअ़्लमु बिज़्ज़ालिमीन (58)	तू कह दे मुझको रोका गया है इससे कि बन्दगी करूँ उनकी जिनको तुम पुकारते हो अल्लाह के सिवा, तू कह दे मैं नहीं चलता तुम्हारी ख़ुशी पर, बेशक अब तो मैं बहक जाऊँगा और न रहूँगा हिदायत पाने वालों में। (56) तू कह दे मुझको शहादत पहुँची मेरे रब की, और तुमने उसको झुठलाया, मेरे पास नहीं है जिस चीज़ की तुम जल्दी कर रहे हो, हुक्म किसी का नहीं सिवाय अल्लाह के, बयान करता है हक़ बात और वह सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाला है। (57) तू कह अगर होती मेरे पास वह चीज़ जिसकी तुम जल्दी कर रहे हो तो तय हो चुका होता झगड़ा मेरे और तुम्हारे बीच, और अल्लाह ख़ूब जानता है ज़ालिमों को। (58)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (इन विरोधियों से) कह दीजिए कि मुझे (हक़ तआ़ला की तरफ़ से) इससे मना किया गया है कि मैं उन (माबूदों) की इबादत करूँ जिनकी तुम लोग अल्लाह (की तौहीद) को छोड़कर इबादत करते हो। (और उनके तरीक़े की गुमराही ज़ाहिर करने के लिये) आप कह दीजिए कि मैं तुम्हारे (ग़लत और ग़ैर-हक़) ख़्यालात की पैरवी न करूँगा, क्योंकि (अगर नऊज़ु बिल्लाह मैं ऐसा

करूँ तो) उस हालत में तो मैं बेराह हो जाऊँगा और (सही) राह पर चलने वालों में न रहूँगा। आप (उनसे यह भी) कह दीजिए कि मेरे पास तो (इस इस्लाम मज़हब के हक़ होने पर) मेरे रब की तरफ़ से एक (काफ़ी) दलील (मौजूद) है, जो मेरे रब की तरफ़ से (मुझको मिली है, यानी क़ुरआन मजीद, जो कि मेरा मोजिज़ा है, जिससे मेरी तस्दीक़ होती है) और तुम (बिना वजह) इसको झुठलाते हो। (और तुम जो यह कहते हो कि अगर इस्लाम धर्म हक़ है तो हमारे इनकार पर आसमान से पत्थर बरसें या कोई और सख़्त अ़ज़ाब आये, जैसा कि दूसरी जगह इन अलफ़ाज़ में इसका ज़िक्र आया है:

اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَالْحَقُّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْعَلَيْنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِائْتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ.

तो इसका जवाब यह है कि) जिस चीज़ का तुम तक़ाज़ा कर रहे हो (यानी दर्दनाक अ़ज़ाब) वह मेरे पास (यानी मेरी क़ुदरत में नहीं) हुक्म किसी का नहीं (चलता) सिवाय अल्लाह तआ़ला के, (और अल्लाह का हुक्म अ़ज़ाब आने का हुआ नहीं तो मैं कैसे अ़ज़ाब दिखला दूँ) वह (यानी अल्लाह तआ़ला) हक़ बात को (दलील से) बतला देता है और सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाला वही है (चुनाँचे उसने मेरी रिसालत की स्पष्ट और मज़बूत दलील क़ुरआन करीम भेज दिया, और दूसरे खुले मोजिज़े ज़ाहिर फ़रमा दिये। और सही दलील एक भी काफ़ी होती है इसलिये तुम्हारी फ़रमाईशी दलीलें ज़ाहिर करने की ज़रूरत नहीं, इसलिये इस वक़्त अ़ज़ाब नाज़िल करने के ज़रिये फ़ैसला नहीं फ़रमाया) आप कह दीजिए कि अगर मेरे पास (यानी मेरी क़ुदरत में) वह चीज़ होती जिसका तुम तक़ाज़ा कर रहे हो (यानी अ़ज़ाब) तो (अब तक) मेरे और तुम्हारे आपसी क़ज़िये का (कभी का) फ़ैसला हो चुका होता, और ज़ालिमों को अल्लाह तआ़ला ख़ूब जानता है (कि किसके साथ क्या मामला किस वक़्त किया जाये)।

इन आयतों के मज़मून का पीछे से सम्बन्ध

उक्त आयतों में काफ़िरों की तरफ़ से अ़ज़ाब के नाज़िल होने की जल्दबाज़ी की फ़रमाईश और उसका जवाब ख़ैरुल-फ़ासिलीन (कि वह सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाला है) में और अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत का ज़िक्र **अअ़्लमु बिज़्ज़ालिमीन** (अल्लाह ख़ूब जानता है ज़ालिमों को) में बयान हुआ था। आगे तमाम मालूमात और ताक़तों व इख़्तियारात पर अल्लाह तआ़ला के इल्म व क़ुदरत का इहाता बयान किया जाता है।

وَعِنْدَهٗ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ لَا يَعْلَمُهَآ اِلَّا هُوَ ؕ وَيَعْلَمُ مَا فِى الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ؕ وَمَا تَسْقُطُ مِنْ وَّرَقَةٍ اِلَّا يَعْلَمُهَا وَلَا حَبَّةٍ فِىْ ظُلُمٰتِ الْاَرْضِ وَلَا رَطْبٍ وَّلَا يَابِسٍ اِلَّا فِىْ كِتٰبٍ مُّبِيْنٍ ۝ وَهُوَ الَّذِىْ يَتَوَفّٰىكُمْ بِالَّيْلِ وَيَعْلَمُ مَا جَرَحْتُمْ بِالنَّهَارِ ثُمَّ يَبْعَثُكُمْ فِيْهِ لِيُقْضٰٓى اَجَلٌ مُّسَمًّى ۚ ثُمَّ اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ ثُمَّ يُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ ۝ وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ

عِبَادِهٖ وَيُرْسِلُ عَلَيْكُمْ حَفَظَةً ۖ حَتّٰىٓ اِذَا جَآءَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ تَوَفَّتْهُ رُسُلُنَا وَهُمْ لَا يُفَرِّطُوْنَ ۝ ثُمَّ رُدُّوْٓا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰىهُمُ الْحَقِّ ۭ اَلَا لَهُ الْحُكْمُ ۣ وَهُوَ اَسْرَعُ الْحٰسِبِيْنَ ۝

व अ़िन्दहू मफ़ातिहुल्-ग़ैबि ला यअ़्लमुहा इल्ला हु-व, व यअ़्लमु मा फ़िल्बर्रि वल्बह्रि, व मा तस्क़ुतु मिंव्व-र-क़तिन् इल्ला यअ़्लमुहा व ला हब्बतिन् फ़ी ज़ुलुमातिल्-अर्ज़ि व ला रत्बिंव्-व ला याबिसिन् इल्ला फ़ी किताबिम् मुबीन (59) व हुवल्लज़ी य-तवफ़्फ़ाकुम् बिल्लैलि व यअ़्लमु मा जरह्तुम् बिन्नहारि सुम्-म यब्असुकुम् फ़ीहि लियुक़्ज़ा अ-जलुम् मुसम्मन् सुम्-म इलैहि मर्जिअ़ुकुम् सुम्-म युनब्बिअ़ुकुम् बिमा कुन्तुम् तअ़्मलून (60) ✽

व हुवल्क़ाहिरु फ़ौ-क़ अ़िबादिही व युर्सिलु अ़लैकुम् ह-फ़-ज़तन्, हत्ता इज़ा जा-अ अ-ह-दकुमुल्मौतु तवफ़्फ़त्हु रुसुलुना व हुम् ला युफ़र्रितून (61) सुम्-म रुद्दू इलल्लाहि मौलाहुमुल्-हक़्क़ि, अला लहुल्-हुक्मु, व हु-व अस्रअ़ुल्-हासिबीन (62)

और उसी के पास चाबियाँ हैं ग़ैब की कि उनको कोई नहीं जानता उसके सिवा और वह जानता है जो कुछ जंगल और दरिया में है, और नहीं झड़ता कोई पत्ता मगर वह जानता है उसको, और नहीं गिरता कोई दाना ज़मीन के अंधेरों में और न कोई हरी चीज़ और न कोई सूखी चीज़, मगर वह सब किताबे मुबीन में है। (59) और वही है कि क़ब्ज़े में ले लेता है तुमको रात में और जानता है जो कुछ कि तुम कर चुके हो दिन में, फिर तुम को उठा देता है उसमें ताकि पूरा हो वह वायदा जो मुक़र्रर हो चुका है, फिर उसी की तरफ़ तुम लौटाये जाओगे, फिर ख़बर देगा तुमको उसकी जो कुछ तुम करते हो। (60) ✽

और वही ग़ालिब है अपने बन्दों पर और भेजता है तुम पर निगहबान, यहाँ तक कि जब आ पहुँचे तुम में से किसी को मौत तो क़ब्ज़े में ले लेते हैं उसको हमारे भेजे हुए फ़रिश्ते, और वे कोताही नहीं करते। (61) फिर पहुँचाये जायेंगे अल्लाह की तरफ़ जो उनका सच्चा मालिक है, सुन रखो हुक्म उसी का है और वह बहुत जल्द हिसाब लेने वाला है। (62)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उसी के (यानी अल्लाह तआला के) पास (यानी उसी की क़ुदरत में) हैं ख़ज़ाने तमाम (सम्भावित) छुपी चीज़ों के (उनमें से जिस चीज़ को जिस वक़्त और जिस क़द्र चाहें ज़हूर में लाते हैं। उन चीज़ों में अज़ाब की क़िस्में भी आ गयीं। मतलब यह कि किसी को उन चीज़ों पर क़ुदरत नहीं, और जिस तरह कामिल क़ुदरत उनके साथ ख़ास है इसी तरह उनका इल्म भी पूरा और कामिल है, चुनाँचे) उनको कोई नहीं जानता सिवाय अल्लाह तआला के, और वह तमाम चीज़ों को जानता है जो कुछ ख़ुश्की में हैं और जो कुछ दरियाओं में हैं, और कोई पत्ता (तक दरख़्त से) नहीं गिरता मगर वह उसको भी जानता है, और कोई दाना (तक) ज़मीन के अंधेरे वाले हिस्सों में नहीं पड़ता, और न कोई तर और ख़ुश्क चीज़ (जैसे फल वग़ैरह) गिरती है, मगर ये सब किताबे-मुबीन (यानी लौहे-महफ़ूज़) में (दर्ज) हैं। और वह (यानी अल्लाह तआला) ऐसा है कि (अक्सर) रात में (सोने के वक़्त) तुम्हारी (नफ़्सानी) रूह को (जिससे एहसास व समझ मुताल्लिक़ है) एक तरह से क़ब्ज़ कर देता है, (यानी बेकार कर देता है) और जो कुछ दिन में करते हो उसको (हमेशा के लिये) जानता है, फिर तुमको जगा उठाता है ताकि (इसी सोने जागने के दौरों से दुनियावी ज़िन्दगी की) मुक़र्ररा मियाद "यानी निर्धारित समय" पूरी कर दी जाए। फिर उसी (अल्लाह) की तरफ़ (मर कर) तुमको जाना है, फिर तुमको बतला देगा जो कुछ तुम (दुनिया में) किया करते थे (और उसके मुनासिब जज़ा और सज़ा जारी करेगा)।

और वही (अल्लाह तआला क़ुदरत से) अपने बन्दों के ऊपर ग़ालिब (व बरतर) हैं और (ऐ बन्दो!) तुम पर (तुम्हारे आमाल और जान की) निगरानी रखने वाले (फ़रिश्ते) भेजते हैं, (जो ज़िन्दगी भर तुम्हारे आमाल को भी देखते हैं और तुम्हारी जान की भी हिफ़ाज़त करते हैं) यहाँ तक कि जब तुम में से किसी को मौत आ पहुँचती है तो (उस वक़्त) उसकी रूह हमारे भेजे हुए (फ़रिश्ते) क़ब्ज़ कर लेते हैं, और ये ज़रा भी कोताही नहीं करते (बल्कि जिस वक़्त हिफ़ाज़त का हुक्म था हिफ़ाज़त करते रहे, जब मौत का हुक्म हो गया तो यही मुहाफ़िज़ रूह क़ब्ज़ करने वाले फ़रिश्तों के साथ मिल जाते हैं)। फिर सब अपने असली मालिक अल्लाह के पास लाए जाएँगे। ख़ूब सुन लो कि (उस वक़्त) फ़ैसला उसी का (यानी अल्लाह ही का) होगा (और कोई दख़ल न दे सकेगा) और वह बहुत जल्द हिसाब ले लेगा।

मआरिफ़ व मसाईल

गुनाहों से बचने का बेहतरीन नुस्ख़ा

दुनिया के तमाम धर्मों में इस्लाम की विशेषता, ख़ास फ़र्क़ और इसका सबसे बड़ा रुक्न तौहीद (अल्लाह तआला को एक मानने और अकेला माबूद क़रार देने का) अक़ीदा है। और यह भी ज़ाहिर है कि सिर्फ़ अल्लाह तआला की ज़ात को एक और अकेला जानने का नाम तौहीद नहीं, बल्कि उसको कमाल की तमाम सिफ़ात में वाहिद व बेमिस्ल मानने और उसके सिवा किसी

मख़्लूक़ को उन सिफ़ात-ए-कमाल में उसका साझी व शरीक न समझने को तौहीद कहते हैं।

अल्लाह तआला की सिफ़ात-ए-कमाल- ज़िन्दगी, इल्म, क़ुदरत, सुनना, देखना, इरादा, मर्ज़ी, पैदा करना बनाना और रिज़्क़ वग़ैरह, वह इन सब सिफ़ात में ऐसा कामिल है कि उसके सिवा कोई मख़्लूक़ किसी सिफ़त में उसके बराबर नहीं हो सकती। फिर इन सिफ़ात में भी दो सिफ़तें सबसे ज़्यादा नुमायाँ और विशेष हैं- एक इल्म, दूसरे क़ुदरत। उसका इल्म भी तमाम मौजूद ग़ैर-मौजूद, ज़ाहिर और छुपे, बड़े और छोटे हर ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी और उसको अपने घेरे में लिये हुए है, और उसकी क़ुदरत भी इन सब पर पूरी-पूरी मुहीत (छाई हुई) है। ज़िक्र हुई दो आयतों में इन्हीं दो सिफ़तों का बयान है, और ये दो सिफ़तें ऐसी हैं कि अगर इनसान अल्लाह तआला की इन दो सिफ़तों पर मुकम्मल यक़ीन पैदा कर ले और ज़ेहन में बैठा ले तो उससे कोई गुनाह और जुर्म हो ही नहीं सकता। ज़ाहिर है कि अगर एक इनसान को अपने हर क़ौल व अमल और उठने-बैठने में हर क़दम पर यह ध्यान रहे कि एक अ़लीम व ख़बीर क़ादिरे मुतलक़ मुझे हर वक़्त देख रहा है, और मेरे ज़ाहिर व बातिन और दिल के इरादे और ख़्याल तक से वाक़िफ़ है तो यह ध्यान कभी उसका क़दम उस क़ादिरे मुतलक़ की नाफ़रमानी की तरफ़ न उठने देगा। इसलिये ये दोनों आयतें इनसान को पूरा इनसान बनाने और उसके आमाल व अख़्लाक़ को सही करने और सही रखने में एक लाजवाब और बेहतरीन नुस्ख़ा हैं।

पहली आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَعِنْدَهٗ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ لَا يَعْلَمُهَآ اِلَّا هُوَ.

लफ़्ज़ **मफ़ातेह** के दो मायने हो सकते हैं- एक ख़ज़ाना और दूसरे कुंजी (चाबी)। इसी लिये कुछ मुफ़स्सिरीन और अनुवादकों ने इसका तर्जुमा ख़ज़ानों से किया है और कुछ ने कुंजियों से, और हासिल दोनों का एक ही है, क्योंकि कुंजियों का मालिक होने से भी ख़ज़ानों का मालिक होना मुराद होता है।

क़ुरआनी परिभाषा में इल्म-ए-ग़ैब और आम मुतलक़ क़ुदरत सिर्फ़ अल्लाह तआला की ख़ास सिफ़त है, कोई मख़्लूक़ इसमें शरीक नहीं

लफ़्ज़ ग़ैब से मुराद वो चीज़ें हैं जो अभी वजूद में नहीं आयीं, या वजूद में तो आ चुकी हैं मगर अल्लाह तआला ने उन पर किसी को बाख़बर नहीं होने दिया। (तफ़सीरे मज़हरी)

पहली क़िस्म की मिसाल वो तमाम हालात व वाक़िआत हैं जो क़ियामत से संबन्धित हैं, या कायनात में आगे पेश आने वाले वाक़िआत से ताल्लुक़ रखते हैं। मसलन यह कि कौन, कब और कहाँ पैदा होगा, क्या-क्या काम करेगा, कितनी उम्र होगी, उम्र में कितने साँस लेगा, कितने क़दम उठायेगा, कहाँ मरेगा, कहाँ दफ़न होगा, रिज़्क़ किसको कितना और किस वक़्त मिलेगा,

बारिश किस वक़्त, कहाँ और कितनी होगी।

और दूसरी क़िस्म की मिसाल वह हमल (गर्भ) है जो औरत के पेट में वजूद तो इख़्तियार कर चुका है मगर यह किसी को मालूम नहीं कि लड़का है या लड़की, ख़ूबसूरत है या बदसूरत, नेक-तबीयत है या बद-ख़स्लत। इसी तरह और ऐसी चीज़ें जो वजूद में आ जाने के बावजूद मख़्लूक़ के इल्म व नज़र से ग़ायब हैं।

عِنْدَهٗ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ

के मायने यह हुए कि अल्लाह के पास हैं ख़ज़ाने ग़ैब के। उसके पास होने से मुराद उसकी मिल्क और क़ब्ज़े में होना है। मतलब यह हुआ कि ग़ैब के ख़ज़ानों का इल्म भी उसके क़ब्ज़े में है और उनको वजूद व ज़हूर में लाना भी उसी की क़ुदरत में है कि कब-कब और कितना-कितना वजूद में आयेगा, जैसा कि क़ुरआने करीम की एक दूसरी आयत में मज़कूर है:

وَاِنْ مِّنْ شَیْءٍ اِلَّا عِنْدَنَا خَزَآئِنُهٗ وَمَا نُنَزِّلُهٗۤ اِلَّا بِقَدَرٍ مَّعْلُوْمٍ

यानी हमारे पास हर चीज़ के ख़ज़ाने हैं मगर हम हर चीज़ को एक ख़ास अन्दाज़ से नाज़िल करते हैं।

ख़ुलासा यह है कि इस जुमले से हक़ तआ़ला का बेमिसाल इल्मी कमाल भी साबित हो गया और क़ुदरत का कमाल भी, और यह भी कि यह मुकम्मल इल्म और मुतलक़ क़ुदरत सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की सिफ़त है, और किसी को हासिल नहीं हो सकती। आयत में लफ़्ज़ "अ़िन्दहू" को पहले लाकर अ़रबी ग्रामर के हिसाब से इस तरफ़ इशारा कर दिया गया कि यह इल्म व क़ुदरत सिर्फ़ उसी के लिये ख़ास है। आगे इस इशारे का ख़ुलासा करके स्पष्ट तौर पर बयान करके दिल में बैठा दिया गया। इरशाद फ़रमायाः

لَا يَعْلَمُهَآ اِلَّا هُوَ

यानी उन ग़ैब के ख़ज़ानों को अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई नहीं जानता।

इसलिये इस जुमले से दो बातें साबित हुईं- अव्वल हक़ तआ़ला का तमाम ग़ैब की चीज़ों पर मुकम्मल इल्म के साथ बाख़बर होना और उन सब पर कामिल क़ुदरत के साथ क़ादिर होना, दूसरे हक़ तआ़ला शानुहू की ज़ात के सिवा किसी मख़्लूक़ या किसी चीज़ को ऐसा इल्म व क़ुदरत हासिल न होना।

क़ुरआन की इस्तिलाह (परिभाषा) में लफ़्ज़ ग़ैब के जो मायने (तफ़सीरे मज़हरी के हवाले से) ऊपर बयान किये गये हैं, कि वो चीज़ें जो अभी वजूद में नहीं आयीं या आ चुकी हैं मगर अभी तक किसी मख़्लूक़ पर उनका ज़हूर नहीं हुआ, अगर इन मायनों को सामने रखा जाये तो ग़ैब के मसले पर ऊपरी नज़र में जो-जो शुब्हात अ़वाम को पेश आया करते हैं ख़ुद-बख़ुद ख़त्म हो जायें।

लेकिन आ़म तौर पर लोग लफ़्ज़ ग़ैब के लुग़वी (शाब्दिक) मायने लेते हैं कि जो चीज़ हमारे इल्म व नज़र से ग़ायब हो, चाहे दूसरों के नज़दीक उसका इल्म हासिल करने के माध्यम मौजूद

हों, उसको भी ग़ैब कहने लगते हैं। इसके नतीजे में तरह-तरह के शुब्हात सामने आते हैं। मसलन इल्मे नुजूम (सितारों का इल्म), हाथों और माथे की लकीरों वग़ैरह से जो आने वाले वक़्त के वाक़िआ़त का इल्म हासिल किया जाता है, या कश्फ़ व इल्हाम के ज़रिये (चमत्कारिक तौर पर) किसी शख़्स को भविष्य के वाक़िआ़त का इल्म हो जाता है, या मानसून का रुख़ और उसकी ताक़त व रफ़्तार को देखकर मौसम विभाग के विशेषज्ञ होने वाली बारिश वग़ैरह के मुताल्लिक़ भविष्यवाणियाँ करते हैं, और उनमें बहुत सी बातें सही भी हो जाती हैं। ये सब चीज़ें अ़वाम की नज़र में इल्मे ग़ैब होती हैं, इसलिये उक्त आयत पर ये शुब्हात होने लगते हैं कि क़ुरआन मजीद ने तो इल्मे ग़ैब को अल्लाह तआ़ला की पाक ज़ात की विशेषता बतलाया है, और देखने व अनुभव में यह दूसरों को भी हासिल मालूम होता है।

जवाब स्पष्ट है कि कश्फ़ व इल्हाम या वही के ज़रिये अगर अल्लाह तआ़ला ने अपने किसी बन्दे को किसी आईन्दा होने वाले वाक़िए की इत्तिला दे दी तो क़ुरआनी इस्तिलाह में वह इल्मे ग़ैब न रहा। इसी तरह संसाधनों व उपकरणों के ज़रिये जो इल्म हासिल किया जा सके वह भी क़ुरआनी परिभाषा के लिहाज़ से इल्मे ग़ैब नहीं। जैसे मौसम विभाग की ख़बरें, या नब्ज़ देखकर बीमार के छुपे हालात बतला देना। वजह यह है कि मौसम विभाग को या किसी हकीम डॉक्टर को ऐसी ख़बरें देने का मौक़ा तब ही हाथ आया जब इन वाक़िआ़त का माद्दा पैदा होकर ज़ाहिर हो जाता है। फ़र्क़ इतना है कि अभी उसका ज़हूर आ़म नहीं होता, उपकरणों के ज़रिये अहले फ़न को ज़ाहिर होता है, अ़वाम बेख़बर रहते हैं। और जब यह माद्दा ताक़तवर हो जाता है तो इसका ज़हूर आ़म हो जाता है। यही वजह है कि मौसम विभाग महीने दो महीने के बाद होने वाली बारिश की ख़बर आज नहीं दे सकता, क्योंकि अभी उस बारिश का माद्दा सामने नहीं आया। इसी तरह कोई हकीम डॉक्टर साल दो साल पहले की खाई हुई, या दो साल बाद खाई जाने वाली दवा या ग़िज़ा वग़ैरह का पता आज नब्ज़ देखकर नहीं दे सकता, क्योंकि उसका कोई असर आ़दतन नब्ज़ में नहीं होता।

ख़ुलासा यह है कि ये सब चीज़ें वो हैं कि किसी चीज़ के आसार व निशानात देखकर उसके वजूद की ख़बर दे दी जाती है, और जब उसके आसार व निशानात और माद्दा ज़ाहिर हो चुका तो अब वह ग़ैब में शामिल न रहा, बल्कि मुशाहदे (देखने और अनुभव) में आ गया, अलबत्ता बारीक या हल्का व कमज़ोर होने की वजह से आ़म देखने और अनुभव में अभी नहीं आया, जब ताक़त पकड़ लेगा तो आ़म मुशाहदे में भी आ जायेगा।

इसके अ़लावा इन सब चीज़ों से हासिल होने वाली जानकारी सब कुछ होने के बाद भी अनुमान और अन्दाज़े ही की हैसियत रखती है, इल्म जो यक़ीन का नाम है वह इनमें से किसी चीज़ से किसी को हासिल नहीं होता। यही वजह है कि इन ख़बरों के ग़लत होने के बेशुमार वाक़िआ़त रोज़ाना पेश आते रहते हैं।

रहा सितारों वग़ैरह का इल्म सो उसमें जो चीज़ें हिसाब लगाने से मुताल्लिक़ हैं उनका इल्म तो इल्म है, मगर वो ग़ैब नहीं। जैसे हिसाब लगाकर कोई यह कहे कि आज पाँच बजकर

इक्तालीस मिनट पर सूरज निकलेगा या फ़ुलाँ महीने में फ़ुलाँ तारीख़ को चाँद ग्रहण या सूरज ग्रहण होगा, ज़ाहिर है कि यह एक महसूस चीज़ की रफ़्तार का हिसाब लगाकर वक़्त को निर्धारित करना ऐसा ही है जैसे हम हवाई जहाज़ों और रेलों के किसी पोर्ट या स्टेशन पर पहुँचने की ख़बर दे देते हैं। इसके अ़लावा सितारों वग़ैरह से जो ख़बरें मालूम करने का दावा किया जाता है वह धोखे के सिवा कुछ नहीं, सौ झूठ में एक सच निकल आना कोई इल्म नहीं।

हमल (गर्भ) में लड़का है या लड़की, इसके बारे में भी बहुत से अहले फ़न कुछ कहा करते हैं, मगर तजुर्बा गवाह है कि इसका दर्जा भी वही अनुमान और अन्दाज़े का है, यक़ीनी नहीं। और सौ में दो चार का सही हो जाना एक तबई चीज़ है, वह किसी इल्म व जानकारी से ताल्लुक़ नहीं रखता।

हाँ जब एक्सरे के उपकरण ईजाद हुए तो कुछ लोगों का ख़्याल था कि शायद उसके ज़रिये हमल का नर या मादा होना मालूम हो जाया करेगा, मगर तजुर्बे ने साबित कर दिया कि एक्सरे के उपकरण भी यह मुतैयन नहीं कर सकते कि हमल में लड़का है या लड़की।

इज़ाफ़ाः- आजकल चूँकि ऐसी मशीनें और साईंसी ईजादात सामने आ चुकी हैं जिनसे यक़ीनी तौर पर लिंग का निर्धारण हो जाता है और यह मालूम हो जाता है कि गर्भ में लड़का है या लड़की, और यहाँ तक कि अगर वह किसी बीमारी से पीड़ित है तो वह भी जाँच वग़ैरह से ज़ाहिर हो जाती है। लेकिन इससे भी क़ुरआन के इस दावे पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि ग़ैब का जानने वाला सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला है। क्योंकि बच्चे की जिन्स (लिंग) ग़ैब कहाँ वह तो सिर्फ़ एक पर्दे में है, मशीन के द्वारा उस पर्दे के अन्दर झाँक कर देखा जा सकता है तो वह ग़ैब कहाँ रहा। अगर एक कमज़ोर नज़र वाले आदमी को बिना चश्मा लगाये कुछ दिखाई न दे और चश्मा लगाकर चीज़ें दिखाई दें तो क्या उन चीज़ों को ग़ैब का हिस्सा कहा जायेगा? हरगिज़ नहीं।

ग़ैब का इल्म सिर्फ़ अल्लाह को है। कोई मशीन नहीं बता सकती कि माँ के पेट में पल रहा बच्चा बादशाह होगा या फ़क़ीर, नेक होगा या बद, कितनी उम्र वाला होगा, कितना रिज़्क़ खा पायेगा, किसी का क़ातिल होगा या मक़्तूल, बाप-दादा बनेगा या नहीं, जन्नती होगा या दोज़ख़ी। इन सब चीज़ों का इल्म सिर्फ़ ख़ुदा तआ़ला को है और ख़ुदा तआ़ला ही को रहेगा।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

ख़ुलासा यह है कि जो चीज़ क़ुरआनी इस्तिलाह में ग़ैब है उसका सिवाय ख़ुदा तआ़ला के किसी को इल्म नहीं, और जिन चीज़ों का इल्म लोगों को कुछ असबाब व उपकरणों के ज़रिये आ़दतन हासिल हो जाता है वह दर हक़ीक़त ग़ैब नहीं, चाहे सार्वजनिक ज़हूर न होने की वजह से उसको ग़ैब कहते हों।

इसी तरह किसी रसूल व नबी को वही (अल्लाह के पैग़ाम) के ज़रिये या किसी वली को कश्फ़ व इल्हाम के ज़रिये (अल्लाह की तरफ़ से कोई बात दिल में डालने या कोई हालत व वाक़िआ़ खोल देने की वजह से) जो ग़ैब की कुछ चीज़ों का इल्म दे दिया गया तो वह ग़ैब की हदों से निकल गया, उसको क़ुरआन में ग़ैब के बजाय ग़ैब की ख़बरें कहा गया है। जैसा कि

अनेक आयतों में मज़कूर है:

تِلْكَ مِنْ اَنْۢبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهَآ اِلَيْكَ.

इसलिये ज़िक्र हुई आयत में 'ला यअ़्लमुहा इल्ला हु-व' यानी ग़ैब के ख़ज़ानों को सिवाय अल्लाह तआ़ला के कोई नहीं जानता, इसमें किसी शुब्हे या हुक्म से अलग होने की गुंजाईश नहीं।

इस जुमले में तो हक़ जल्ल शानुहू की यह ख़ुसूसी सिफ़त बतलाई गयी है कि वह आ़लिमुल-ग़ैब है, हर ग़ैब को जानता है। बाद के जुमलों में ग़ैब के मुक़ाबिल इल्मे शहादत यानी हाज़िर व मौजूद चीज़ों के इल्म का बयान है कि उनके इल्म में भी अल्लाह जल्ल शानुहू की यह ख़ुसूसियत है कि उसका इल्म हर चीज़ को अपने इल्म व क़ुदरत के घेरे में लिये हुए है, कोई ज़र्रा उससे बाहर नहीं। इरशाद फ़रमाया कि वही जानता है हर उस चीज़ को जो ख़ुश्की में है और उस चीज़ को जो दरिया में है, और किसी पेड़ का कोई पत्ता नहीं गिरता जिसका इल्म उसको न हो। इसी तरह कोई दाना जो ज़मीन के अंधेरे हिस्से में छुपा है वह भी उसके इल्म में है, और हर तर व ख़ुश्क में तमाम कायनात का ज़र्रा-ज़र्रा उसके इल्म में है और लौहे-महफ़ूज़ में लिखा हुआ है।

ख़ुलासा यह है कि इल्म के मुताल्लिक़ दो चीज़ें हक़ तआ़ला की ख़ुसूसियतों (विशेषताओं) में से हैं, जिनमें कोई फ़रिश्ता या रसूल या कोई दूसरी मख़्लूक़ शरीक नहीं। एक इल्मे ग़ैब, दूसरे मौजूद चीज़ों का मुकम्मल इल्म। जिससे कोई ज़र्रा छुपा नहीं। पहली आयत में इन्हीं दोनों मख़्सूस सिफ़ात का बयान इस तरह इरशाद फ़रमाया गया है कि उसके पहले जुमले (वाक्य) में पहली ख़ुसूसियत का बयान है:

وَعِنْدَهٗ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ لَا يَعْلَمُهَآ اِلَّا هُوَ.

और बाद के जुमलों (वाक्यों) में तमाम कायनात व मौजूदात के मुकम्मल इल्म का ज़िक्र इस तरह फ़रमाया कि पहले इरशाद हुआ:

وَيَعْلَمُ مَا فِى الْبَرِّ وَالْبَحْرِ.

यानी अल्लाह तआ़ला ही जानता है हर उस चीज़ को जो ख़ुश्की में है और जो दरिया में है। इससे मुराद तमाम कायनात व मौजूदात है। जैसे सुबह व शाम का लफ़्ज़ बोलकर पूरा समय और पूरब व पश्चिम का लफ़्ज़ बोलकर पूरी ज़मीन मुराद ली जाती है, इसी तरह ख़ुश्की और दरिया बोलकर मुराद इससे पूरे आ़लम की कायनात व मौजूदात हैं। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह जल्ल शानुहू का इल्म तमाम कायनात पर मुहीत (फैला हुआ और उसको घेरे हुए) है।

आगे इसका और अधिक ख़ुलासा और वज़ाहत इस तरह बयान फ़रमाई कि अल्लाह तआ़ला का तमाम कायनात पर इल्मी घेराव सिर्फ़ यही नहीं कि बड़ी-बड़ी चीज़ों का उसको इल्म हो, बल्कि हर छोटी से छोटी, छुपी चीज़ भी उसके इल्म में है। फ़रमाया:

وَمَا تَسْقُطُ مِنْ وَّرَقَةٍ اِلَّا يَعْلَمُهَا.

यानी सारे जहान में किसी पेड़ का कोई पत्ता नहीं गिरता जो उसके इल्म में न हो। मुराद यह है कि हर पेड़ का हर पत्ता गिरने से पहले और गिरने के वक़्त और गिरने के बाद उसके इल्म में है। वह जानता है कि पत्ता पेड़ पर लगा हुआ कितनी मर्तबा उलट-पुलट होगा और कब और कहाँ गिरेगा और फिर वह किस-किस हाल से गुज़रेगा। गिरने का ज़िक्र शायद इसी लिये किया गया है कि उसके तमाम हालात की तरफ़ इशारा हो जाये, क्योंकि पत्ते का पेड़ से गिरना उसके पलने-बढ़ने और नबाती ज़िन्दगी का आख़िरी हाल है, आख़िरी हाल का ज़िक्र करके तमाम हालात की तरफ़ इशारा कर दिया गया।

उसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَلَاحَبَّةٍ فِي ظُلُمٰتِ الْاَرْضِ.

यानी हर वह दाना जो ज़मीन की गहराई और अंधेरी में कहीं पड़ा है वह भी उसके इल्म में है। पहले पेड़ के पत्ते का ज़िक्र किया जो आ़म नज़रों के सामने गिरता है, उसके बाद दाने का ज़िक्र किया जो काश्तकार ज़मीन में डालता है, या ख़ुद-बख़ुद कहीं ज़मीन की गहराई और अंधेरी में छुप जाता है, उसके बाद फिर तमाम कायनात पर अल्लाह तआ़ला के इल्म का हावी होना तर और ख़ुश्क के उनवान से ज़िक्र फ़रमाया, और फ़रमाया कि ये सब चीज़ें अल्लाह के नज़दीक किताबे मुबीन में लिखी हुई हैं। किताब-ए-मुबीन से मुराद कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन के नज़दीक लौह-ए-महफ़ूज़ है, और कुछ ने फ़रमाया कि इससे अल्लाह का इल्म मुराद है। और इसको किताबे मुबीन से इसलिये ताबीर किया गया है कि जैसे लिखी हुई चीज़ सुरक्षित हो जाती है, उसमें भूल-चूक की गुंजाईश नहीं रहती, इसी तरह अल्लाह जल्ल शानुहू का यह इल्मे मुहीत तमाम कायनात के ज़र्रे-ज़र्रे का सिर्फ़ अन्दाज़े और अनुमान का नहीं बल्कि यक़ीनी है।

क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतें इस पर सुबूत हैं कि इस तरह का कामिल इल्म जिससे कायनात का कोई ज़र्रा और उसका कोई हाल ख़ारिज न हो, यह सिर्फ़ हक़ तआ़ला की पाक ज़ात के साथ मख़्सूस है। सूरः लुक़मान में हैः

اِنَّهَآ اِنْ تَكُ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِّنْ خَرْدَلٍ فَتَكُنْ فِيْ صَخْرَةٍ اَوْفِي السَّمٰوٰتِ اَوْفِي الْاَرْضِ يَاْتِ بِهَا اللّٰهُ. اِنَّ اللّٰهَ لَطِيْفٌ خَبِيْرٌ.

"यानी अगर कोई दाना राई के बराबर हो फिर वह पत्थर के अन्दर छुपा हो या आसमानों में या ज़मीन में कहीं हो, अल्लाह तआ़ला उन सब को जमा कर लेंगे, बेशक अल्लाह तआ़ला लतीफ़ (बारीकी से देखने वाला) और हर चीज़ से ख़बरदार है।"

आयतुल-कुर्सी में हैः

يَعْلَمُ مَابَيْنَ اَيْدِيْهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يُحِيْطُوْنَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهٖٓ اِلَّا بِمَا شَآءَ.

"यानी अल्लाह तआ़ला सब इनसानों के अगले और पिछले सब हालात से वाक़िफ़ हैं और सारे इनसान मिलकर उसके इल्म में से किसी एक चीज़ का भी इहाता नहीं कर सकते, सिवाय उतने इल्म के जो अल्लाह तआ़ला किसी को देना चाहें।"

सूरः यूनुस में हैः

وَمَا يَعْزُبُ عَنْ رَّبِّكَ مِنْ مِّثْقَالِ ذَرَّةٍ فِي الْأَرْضِ وَلَا فِي السَّمَآءِ.

"यानी एक ज़र्रे के बराबर भी कोई चीज़ ज़मीन व आसमान में आपके रब के इल्म से जुदा (बाहर) नहीं है।"

और सूरः तलाक़ में है:

وَاَنَّ اللّٰهَ قَدْ اَحَاطَ بِكُلِّ شَيْءٍ عِلْمًا.

"यानी अल्लाह तआ़ला का इल्म हर चीज़ पर मुहीत (छाया हुआ और उसको घेरे हुए) है।"

इसी तरह बेशुमार आयतों में यह मज़मून विभिन्न उनवानों से आया हुआ है। ख़ुलासा यह है कि इन आयतों में बड़ी वज़ाहत और स्पष्टता के साथ यह बयान फ़रमा दिया गया है कि ग़ैब का इल्म (जिसको क़ुरआन में ग़ैब कहा गया है और उसकी तफ़सीर ऊपर गुज़र चुकी है) या तमाम कायनात का इल्मे मुहीत सिर्फ़ अल्लाह जल्ल शानुहू की मख़्सूस सिफ़त है, किसी फ़रिश्ते या रसूल के इल्म को उसी तरह हर ज़र्रा-ए-कायनात पर हावी व शामिल समझना वह ईसाईयों की तरह रसूल को ख़ुदा का दर्जा दे देना है और ख़ुदा तआ़ला के बराबर क़रार दे देना है, जो क़ुरआने करीम की वज़ाहत के मुताबिक़ शिर्क है। सूरः शुअ़रा में शिर्क की यही हक़ीक़त बयान फ़रमाई गयी है:

تَاللّٰهِ اِنْ كُنَّا لَفِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ. اِذْ نُسَوِّيْكُمْ بِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ.

"यानी क़ियामत के दिन मुश्रिक लोग कहेंगे कि ख़ुदा की क़सम हम सख़्त गुमराही में थे कि तुमको यानी बुतों को रब्बुल-आ़लमीन के बराबर करते थे।"

बिला शुब्हा अल्लाह तआ़ला ने अपने नबियों को और ख़ास तौर पर ख़ातमुल-अम्बिया हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ग़ैब की हज़ारों लाखों चीज़ों का इल्म अ़ता फ़रमाया है, और सब फ़रिश्तों और अम्बिया से ज़्यादा अ़ता फ़रमाया है, लेकिन यह ज़ाहिर है कि ख़ुदा तआ़ला के बराबर किसी का इल्म नहीं, न हो सकता है, वरना फिर यह रसूल की ताज़ीम (सम्मान) का वह ग़ुलू (हद से बढ़ा हुआ दर्जा) होगा जो ईसाईयों ने इख़्तियार किया, कि रसूल को ख़ुदा के बराबर ठहरा दिया, इसका नाम शिर्क है। हम इससे अल्लाह की पनाह चाहते हैं।

यहाँ तक पहली आयत का बयान था, जिसमें अल्लाह जल्ल शानुहू की इल्म की सिफ़त की ख़ुसूसियत का बयान है, कि वह हर ग़ैब व हाज़िर और कायनात के हर ज़र्रे-ज़र्रे पर हावी है। दूसरी आयत में इसी तरह हक़ तआ़ला की क़ुदरत की सिफ़त और उसके क़ादिरे मुतलक़ होने का बयान है जो उसी की ज़ात के साथ मख़्सूस है। इरशाद है:

وَهُوَ الَّذِيْ يَتَوَفّٰكُمْ بِالَّيْلِ وَيَعْلَمُ مَا جَرَحْتُمْ بِالنَّهَارِ ثُمَّ يَبْعَثُكُمْ فِيْهِ لِيُقْضٰٓى اَجَلٌ مُّسَمًّى.

"यानी अल्लाह तआ़ला हर रात में तुम्हारी रूह को एक तरह से क़ब्ज़ कर लेता है, और फिर सुबह को जगाकर उठा देता है, ताकि तुम्हारी निर्धारित उम्र पूरी कर दे। और फिर दिन भर में तुम जो कुछ करते रहते हो वह सब उसके इल्म में है। यह अल्लाह तआ़ला ही की कामिल क़ुदरत है कि इनसान के जीने, मरने और मरकर दोबारा ज़िन्दा होने का एक नमूना हर रोज़

उसके सामने आता रहता है। हदीस में नींद को मौत की बहन फ़रमाया है, और यह हकीकत है कि नींद इनसान के तमाम क़ुव्वतों को ऐसे ही बेकार कर देती है जैसे मौत।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने नींद और फिर उसके बाद जागने की मिसाल पेश फ़रमाकर इनसान को इस पर चेताया है कि जिस तरह हर रात और हर सुबह में हर शख़्स व्यक्तिगत तौर पर मरकर जीने की एक मिसाल को अपनी आँखों से देखता है, इसी तरह पूरे आ़लम की सामूहिक मौत और फिर सामूहिक ज़िन्दगी को समझ लो, जिसको क़ियामत कहा जाता है। जो ज़ात इस पर क़ादिर है उसकी कामिल क़ुदरत से वह भी कोई दूर की और नामुम्किन चीज़ नहीं। इसी लिये आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ثُمَّ اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ ثُمَّ يُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ.

यानी फिर तुमको अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ लौटकर जाना है, फिर वह तुमको जतलायेगा जो तुम अ़मल किया करते थे।"

मुराद यह है कि आमाल का हिसाब होगा, फिर उस पर जज़ा व सज़ा होगी।

तीसरी आयत में इसी मज़मून की और अधिक तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई है कि अल्लाह तआ़ला अपने सब बन्दों पर एक ग़ालिब क़ुव्वत रखता है, जब तक उसको उनका ज़िन्दा रखना मन्ज़ूर होता है तो हिफ़ाज़त करने वाले फ़रिश्ते उनकी हिफ़ाज़त के लिये भेज देता है, किसी की मजाल नहीं जो उसको नुक़सान पहुँचाये, और जब किसी बन्दे का उम्र का तयशुदा वक़्त पूरा हो जाता है तो यही हिफ़ाज़त करने वाले फ़रिश्ते उसकी मौत का ज़रिया बन जाते हैं, और अब उसकी मौत के असबाब उपलब्ध करने में ज़रा कमी नहीं करते। और फिर मरकर ही मामला ख़त्म नहीं हो जाता, बल्कि 'रुद्दू इलल्लाहि' यानी दोबारा ज़िन्दा होकर फिर अल्लाह तआ़ला के पास हाज़िर किये जायेंगे। इस जगह अह्कमुल-हाकिमीन के सामने पेशी और उम्रभर के हिसाब का जब ख़्याल किया जाये तो किसकी मजाल है जो पूरा उतर सके, और अ़ज़ाब से बच निकले। इसलिये इसके साथ ही इरशाद फ़रमायाः

اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰهُمُ الْحَقِّ.

यानी अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ हाकिम और अह्कमुल-हाकिमीन ही नहीं, वह अपने बन्दों के मौला भी हैं जो हर मौक़े पर उनकी मदद भी करते हैं।

उसके बाद फ़रमायाः

اَلَا لَهُ الْحُكْمُ.

कि बेशक फ़ैसला और हुक्म सिर्फ़ उसी का है। यहाँ यह ख़्याल हो सकता था कि एक ज़ात और अरबों इनसानों की पूरी-पूरी उम्रों का हिसाब, निपटेगा किस तरह? इसलिये इसके बाद फ़रमायाः

وَهُوَ اَسْرَعُ الْحٰسِبِيْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला के कामों को अपने कामों पर अन्दाज़ा करना जहालत है, वह बहुत जल्द सब हिसाब पूरा फ़रमा लेंगे।

قُلْ مَنْ يُّنَجِّيْكُمْ مِّنْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ تَدْعُوْنَهٗ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً ۚ لَئِنْ اَنْجٰنَا مِنْ هٰذِهٖ لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الشّٰكِرِيْنَ ۝ قُلِ اللّٰهُ يُنَجِّيْكُمْ مِّنْهَا وَمِنْ كُلِّ كَرْبٍ ثُمَّ اَنْتُمْ تُشْرِكُوْنَ ۝

क़ुल् मंय्युनज्जीकुम् मिन् ज़ुलुमातिल्-बर्रि वल्-बह्रि तद्ऊनहू तज़र्रुअंव्-व ख़ुफ़्यतन् ल-इन् अन्जाना मिन् हाज़िही ल-नकूनन्-न मिनश्शाकिरीन (63) क़ुलिल्लाहु युनज्जीकुम् मिन्हा व मिन् कुल्लि कर्बिन् सुम्-म अन्तुम् तुश्रिकून (64)	तू कह- कौन तुमको बचा लाता है जंगल के अंधेरों से और दरिया के अंधेरों से उस वक़्त में कि पुकारते हो तुम उसको गिड़गिड़ाकर और चुपके से, कि अगर हमको बचा ले इस बला से तो यक़ीनन हम ज़रूर एहसान मानेंगे। (63) तू कह दे- अल्लाह तुमको बचाता है उससे और हर सख़्ती से, फिर भी तुम शिर्क करते हो। (64)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उन लोगों से) कहिए कि वह कौन है जो तुमको ख़ुश्की और दरिया की अंधेरियों (यानी सख़्तियों) से उस हालत में निजात देता है कि तुम उसको (निजात देने के लिये) पुकारते हो (कभी) आ़जिज़ी ज़ाहिर करके और (कभी) चुपके-चुपके, (और यूँ कहते हो) कि (ऐ अल्लाह!) अगर आप हमको इन (अंधेरियों) से (इस बार) निजात दे दें तो (फिर) हम ज़रूर हक़ पहचानने (पर क़ायम रहने) वालों में से हो जाएँगे (यानी आपकी तौहीद के जो कि बड़ा हक़ पहचानना है, क़ायल रहें। और इस सवाल का जवाब चूँकि मुतैयन है और वे लोग भी कोई दूसरा जवाब न देंगे इसलिये) आप (ही) कह दीजिए कि ख़ुदा तआ़ला ही तुमको उनसे निजात देता है, (जब कभी निजात मिलती है) और (इन ज़िक्र हुई अंधेरियों की ही क्या ख़ुसूसियत है बल्कि) हर ग़म से (वही निजात देता है, मगर) तुम (ऐसे हो कि) फिर भी (निजात पाने के बाद बदस्तूर) शिर्क करने लगते हो (जो कि आला दर्जे की हक़ को न पहचानने वाली बात है, और वायदा किया था हक़ पहचानने का। ग़र्ज़ यह कि सख़्तियों में तुम्हारे इक़रार से तौहीद का हक़ होना साबित हो जाता है, फिर इनकार ध्यान और तवज्जोह के क़ाबिल कब है)।

मआरिफ़ व मसाईल

अल्लाह के इल्म और उसकी कामिल क़ुदरत की कुछ निशानियाँ

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू के इल्म व क़ुदरत का कमाल और उनकी बेमिसाल वुस्अ़त बयान की गयी थी। मज़कूरा आयतों में इसी इल्म व क़ुदरत के कुछ आसार और निशानियों व प्रदर्शनों का बयान है।

पहली आयत में लफ़्ज़ "ज़ुलुमात, ज़ुल्मत" की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं अंधेरी। "ज़ुलुमातिल-बर्रि वल्बहरि" के मायने ख़ुश्की और दरिया की अंधेरियाँ है। चूँकि अंधेरी की मुख़्तलिफ़ क़िस्में हैं- रात की अंधेरी, घटा बादल की अंधेरी, गर्द व ग़ुबार की अंधेरी और दरिया में मौजों की अंधेरी। इन तमाम क़िस्मों को शामिल करने के लिये लफ़्ज़ "ज़ुलुमात" जमा (बहुवचन) इस्तेमाल फ़रमाया गया है।

अगरचे इनसान के सोने और आराम करने के लिये अंधेरा भी एक नेमत है, लेकिन आ़म हालात में इनसान का काम रोशनी ही से चलता है, और अंधेरी सब कामों से बेकार करने के अ़लावा बहुत सी मुसीबतों और आफ़तों का सबब बन जाती है, इसलिये अ़रब के मुहावरे में लफ़्ज़ ज़ुलुमात मुसीबतों और हादसों व आफ़तों के लिये बोला जाता है। इस आयत में भी मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने यही मायने बयान फ़रमाये हैं।

आयत का मतलब यह हुआ कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने मक्का के मुश्रिकों को चेतावनी देने और उनकी ग़लत हरकतों पर आगाह करने के लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म दिया कि वह उन लोगों से यह सवाल करें कि ख़ुश्की और दरियाओं के सफ़रों में जब भी वे किसी मुसीबत में घिर जाते हैं, और उस वक़्त तमाम बुतों को भूलकर सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला को पुकारते हैं, कभी खुलकर अपनी पस्ती व आ़जिज़ी को स्वीकार करते हैं और कभी दिल-दिल में इसका इक़रार करते हैं कि इस मुसीबत से तो सिवाय ख़ुदा तआ़ला के कोई नहीं बचा सकता। और इस ख़्याल के साथ यह भी वायदा करते हैं कि अगर अल्लाह तआ़ला ने हमें इस मुसीबत से निजात दे दी तो हम शुक्रगुज़ारी और हक़ पहचानने को अपना शेवा बना लेंगे। यानी अल्लाह तआ़ला के शुक्रगुज़ार होंगे, उसी को अपना कारसाज़ समझेंगे, उसके सिवा किसी को उसका शरीक न समझेंगे। क्योंकि जब हमारी मुसीबत में कोई काम न आया तो हम उनकी पूजा-पाट क्यों करें। तो अब आप उनसे पूछिये कि उन हालात में कौन उनको मुसीबतों और हलाकत से निजात देता है? चूँकि उनका जवाब मुतैयन और मालूम था कि वे इस आसान सी बात का इनकार नहीं कर सकते कि ख़ुदा तआ़ला के सिवा कोई बुत या देवता उस हालत में उनके काम नहीं आया, इसलिये दूसरी आयत में हक़ तआ़ला ने ख़ुद ही रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इरशाद फ़रमाया कि आप ही कह दीजिए कि सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही तुम्हें उस मुसीबत से निजात देंगे, बल्कि तुम्हारी हर तकलीफ़ व परेशानी और बेचैनी को वही दूर

फ़रमायेंगे। मगर इन सब खुली हुई निशानियों के बावजूद फिर जब तुमको निजात और आराम मिल जाता है तो तुम फिर शिर्क में मुब्तला हो जाते हो, और बुतों की पूजा-पाट में लग जाते हो, यह कैसी ग़द्दारी और ख़तरनाक क़िस्म की जहालत है।

इन दोनों आयतों में अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत का बयान भी है कि हर इनसान को हर मुसीबत और तकलीफ़ से निजात देने पर उसको पूरी क़ुदरत है, और यह भी कि हर क़िस्म की मुसीबतों, तकलीफ़ों और परेशानियों को दूर करना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला ही के हाथ में है, और यह भी कि यह एक ऐसी खुली हुई हक़ीक़त और आसानी से समझ में आने वाली बात है कि सारी उम्र बुतों और देवताओं को पूजने और पुकारने वाले भी जब किसी मुसीबत में गिरफ़्तार हो जाते हैं उस वक़्त वे भी सिर्फ़ ख़ुदा तआ़ला ही को पुकारते हैं, और उसी की तरफ़ मुतवज्जह हो जाते हैं।

एक सबक़ लेने वाली बात

मुश्रिक लोगों का यह चलन उनकी ग़द्दारी के एतिबार से कितना ही बड़ा जुर्म हो मगर मुसीबत पड़ने के वक़्त सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ तवज्जोह और हक़ीक़त को स्वीकार करना हम मुसलमानों के लिये एक सबक़ लेने वाली बात है कि हम अल्लाह तआ़ला पर ईमान रखने के बावजूद मुसीबतों के वक़्त भी ख़ुदा तआ़ला को याद नहीं करते, बल्कि हमारा सारा ध्यान माद्दी सामानों में गुम होकर रह जाता है। हम अगरचे मूरतों और तस्वीरी बुतों को अपना कारसाज़ नहीं समझते, मगर ये माद्दी सामान और असबाब व यंत्र भी हमारे लिये बुतों से कम नहीं, जिनकी फ़िक्रों में हम ऐसे गुम हैं कि ख़ुदा तआ़ला और उसकी कामिल क़ुदरत की तरफ़ कभी ध्यान नहीं होता।

हादसों और मुसीबतों का असली इलाज

हम हर बीमारी में सिर्फ़ डॉक्टरों और दवाओं को और हर तूफ़ान और सैलाब के वक़्त सिर्फ़ माद्दी सामानों को अपना कारसाज़ समझकर उसी की फ़िक्र में ऐसे गुम हो जाते हैं कि मालिके कायनात की तरफ़ ध्यान तक नहीं जाता। हालाँकि क़ुरआन मजीद ने बार-बार स्पष्ट अलफ़ाज़ में यह बयान फ़रमाया है कि दुनिया की मुसीबतें और हादसे उमूमन इनसानों के बुरे आमाल के परिणामों और आख़िरत की सज़ा का हल्का सा नमूना होते हैं। और इस लिहाज़ से ये मुसीबतें मुसलमानों के लिये एक तरह की रहमत होते हैं, कि उनके ज़रिये ग़ाफ़िल इनसानों को चौंकाया जाता है, ताकि वे अब भी अपने बुरे आमाल का जायज़ा लेकर उनसे बाज़ आने की फ़िक्र में लग जायें, और आख़िरत की बड़ी और सख़्त सज़ा से बच जायें। इसी मज़मून के लिये क़ुरआने करीम का इरशाद है:

وَلَنُذِيْقَنَّهُمْ مِّنَ الْعَذَابِ الْاَدْنٰى دُوْنَ الْعَذَابِ الْاَكْبَرِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ.

"यानी हम लोगों को थोड़ा सा अ़ज़ाब क़रीब दुनिया में चखा देते हैं आख़िरत के बड़े

अज़ाब से पहले, ताकि वे अपनी ग़फ़लत और बुराईयों से बाज़ आ जायें।"

क़ुरआन मजीद की एक आयत में इरशाद है:

وَمَآ اَصَابَكُمْ مِّنْ مُّصِيْبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيْكُمْ وَيَعْفُوْا عَنْ كَثِيْرٍ

"यानी जो मुसीबत तुमको पहुँचती है वह तुम्हारे बुरे आमाल का नतीजा है, और बहुत से बुरे आमाल को अल्लाह तआ़ला माफ़ फ़रमा देते हैं।" (सूरः शूरा)

इस आयत के बयान में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कि किसी इनसान को जो किसी लकड़ी से मामूली ख़राश लगती है, या क़दम को कहीं ठोकर लग जाती है, या किसी नस में दर्द हो जाता है, यह सब किसी गुनाह का असर होता है, और जो गुनाह अल्लाह तआ़ला माफ़ फ़रमा देते हैं वो बहुत हैं।"

क़ाज़ी बैज़ावी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि इससे मुराद यह है कि मुजरिमों और गुनाहगारों को जो बीमारियाँ और आफ़तें पेश आती हैं वो सब गुनाहों के आसार होते हैं, और जो लोग गुनाहों से बचे हुए या सुरक्षित हैं उनकी बीमारियाँ और आफ़तें उनके सब्र व जमाव के इम्तिहान और जन्नत के बुलन्द दर्जे अ़ता करने के लिये होते हैं।

ख़ुलासा यह है कि आ़म इनसान जो गुनाहों से ख़ाली नहीं उनको जो भी बीमारियाँ और हादसे व मुसीबतें या तकलीफ़ें और परेशानियाँ पेश आती हैं वो सब गुनाहों के परिणाम और आसार हैं।

इसी से यह भी मालूम हो गया कि तमाम मुसीबतों और परेशानियों का और हर क़िस्म के हादसों और आफ़तों का असली और वास्तविक इलाज यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ रुजू किया जाये, पिछले गुनाहों से इस्तिग़फ़ार और आईन्दा उनसे परहेज़ करने का पुख़्ता इरादा करें, और अल्लाह तआ़ला ही से मुसीबतों के दूर होने की दुआ़ करें।

इसके यह मायने नहीं कि माद्दी असबाब दवा, इलाज और मुसीबतों से बचने की माद्दी तदबीरें बेकार हैं, बल्कि मतलब यह है कि असल कारसाज़ हक़ तआ़ला को समझें और माद्दी असबाब को भी उसी का इनाम समझकर इस्तेमाल करें कि सब असबाब और यंत्र व उपकरण उसी के पैदा किये हुए हैं, और उसी की अ़ता की हुई नेमतें हैं, और उसी के हुक्म और मर्ज़ी के ताबे होकर इनसान की ख़िदमत करते हैं। आग, हवा, पानी, मिट्टी और दुनिया की तमाम ताक़तें सब अल्लाह तआ़ला के फ़रमान के अधीन हैं, बग़ैर उसके इरादे के न आग जला सकती है, न पानी बुझा सकता है, न कोई दवा नफ़ा दे सकती है न कोई ग़िज़ा नुक़सान पहुँचा सकती है। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने ख़ूब फ़रमाया है:

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा मन व तू मुर्दा, बा हक़ ज़िन्दा अन्द

(यानी आग पानी मिट्टी हवा सब अपने काम में लगे हुए हैं। अगरचे ये हमें बेजान और

मुर्दा नज़र आते हैं मगर अल्लाह तआ़ला ने इनके मुनासिब इन सब को ज़िन्दगी और एहसास दिया है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

तजुर्बा गवाह है कि जब इनसान अल्लाह तआ़ला से ग़ाफ़िल होकर सिर्फ़ माद्दी सामानों के पीछे पड़ जाता है तो जैसे-जैसे ये सामान बढ़ते हैं परेशानियाँ और मुसीबतें और बढ़ती हैं।

मर्ज़ बढ़ता गया जूँ-जूँ दवा की

व्यक्तिगत तौर पर किसी दवा या इंजेक्शन का किसी वक़्त मुफ़ीद साबित होना या किसी माद्दी तदबीर का कामयाब हो जाना ग़फ़लत व नाफ़रमानी के साथ भी मुम्किन है, लेकिन जब मजमूई हैसियत से पूरी मख़्लूक़े ख़ुदा के हालात का जायज़ा लिया जाये तो ये सब चीज़ें नाकाम नज़र आती हैं। मौजूदा ज़माने में इनसान को राहत पहुँचाने और उसकी हर तकलीफ़ को दूर करने के लिये कैसे-कैसे उपकरण और सामान ईजाद किये गये हैं और किये जा रहे हैं कि अब से पचास साल पहले के इनसान को इनका वहम व गुमान भी न हो सकता था। बीमारियों के इलाज के लिये नई-नई तेज़ असर वाली दवायें और तरह-तरह के इंजेक्शन और बड़े-बड़े माहिर डॉक्टर और उनके लिये जगह-जगह अस्पतालों की अधिकता कौन नहीं जानता कि अब से पचास-साठ बरस पहले का इनसान इन सबसे मेहरूम था, लेकिन मजमूई हालात का जायज़ा लिया जाये तो इन उपकरणों व सामान से मेहरूम इनसान इतना बीमार और कमज़ोर न था जितना आज का इनसान बीमारियों का शिकार है।

इसी तरह आज आम वबाओं के लिये तरह-तरह के टीके मौजूद हैं, हादसों से इनसान को बचाने के लिये आग बुझाने वाले इंजन और मुसीबत के वक़्त फ़ौरी इत्तिला और फ़ौरी इमदाद के ज़रिये और सामान की फ़रावानी है, लेकिन जितना-जितना यह माद्दी सामान बढ़ता जाता है इनसान हादसों और आफ़तों का शिकार पहले से ज़्यादा होता जाता है। वजह इसके सिवा नहीं कि पिछले दौर में ख़ालिक़े कायनात से ग़फ़लत और खुली नाफ़रमानी इतनी न थी कि जितनी अब है। वे राहत के सामान को ख़ुदा तआ़ला का अ़तीया (दिया हुआ) समझकर शुक्रगुज़ारी के साथ इस्तेमाल करते थे, और आजका इनसान बग़ावत के साथ इस्तेमाल करना चाहता है, इसलिये उपकरणों और सामान की अधिकता इसको मुसीबत से नहीं बचाती।

ख़ुलासा यह है कि मुसलमानों को मुश्रिकों के इस वाक़िए से सीख हासिल करनी चाहिये कि मुसीबत के वक़्त वे भी ख़ुदा ही को याद करते थे, मोमिन का काम यह है कि अपनी तमाम मुसीबतों और तकलीफ़ों के दूर करने के लिये माद्दी सामान और तदबीरों से ज़्यादा अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करे, वरना अन्जाम वही होगा जो रोज़ाना देखने में आ रहा है, कि हर तदबीर मजमूई हैसियत से उल्टी पड़ती है। सैलाबों को रोकने और उनके नुक़सानात से बचने की हज़ार तदबीरें की जाती हैं मगर वो आते हैं और बार-बार आते हैं। बीमारियों के इलाज की नई-नई तदबीरें की जाती हैं मगर बीमारियाँ रोज़-बरोज़ बढ़ती जाती हैं। चीज़ों की महंगाई को ख़त्म करने के लिये हज़ारों तदबीरें की जाती हैं और वो देखने में प्रभावी भी मालूम होती हैं लेकिन मजमूई हैसियत से नतीजा यह है कि महंगाई रोज़-बरोज़ बढ़ती जाती है। चोरी, डकैती,

अग़वा, रिश्वत लेने, चोर बाज़ारी को रोकने के लिये कितनी माद्दी तदबीरें आज हर हुकूमत इस्तेमाल कर रही है, मगर हिसाब लगाईये तो हर रोज़ इन अपराधों में इज़ाफ़ा होता नज़र आता है। काश आज का इनसान सिर्फ़ व्यक्तिगत, ऊपरी और सरसरी नफ़े नुक़सान के स्तर से ज़रा ऊपर होकर हालात का जायज़ा ले तो उसको साबित होगा कि मजमूई हैसियत से हमारी माद्दी तदबीरें सब नाकाम हैं बल्कि हमारी मुसीबतों में इज़ाफ़ा कर रही हैं। फिर इस क़ुरआनी इलाज पर नज़र करे कि मुसीबतों से बचने की सिर्फ़ एक ही राह है, कि ख़ालिक़े कायनात की तरफ़ रुजू किया जाये, माद्दी तदबीरों को भी उसी की अ़ता की हुई नेमत के तौर पर इस्तेमाल किया जाये, इसके सिवा सलामती की कोई सूरत नहीं।

قُلْ هُوَ الْقَادِرُ عَلَىٰٓ اَنْ يَّبْعَثَ عَلَيْكُمْ عَذَابًا مِّنْ فَوْقِكُمْ اَوْمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِكُمْ اَوْيَلْبِسَكُمْ شِيَعًا وَّيُذِيْقَ بَعْضَكُمْ بَاْسَ بَعْضٍ ۭ اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّهُمْ يَفْقَهُوْنَ ۝ وَكَذَّبَ بِهٖ قَوْمُكَ وَهُوَ الْحَقُّ ۭ قُلْ لَّسْتُ عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ ۝ لِكُلِّ نَبَاٍ مُّسْتَقَرٌّ ۡ وَّسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۝

क़ुल् हुवल्-क़ादिरु अ़ला अंय्यब्अ़-स अ़लैकुम् अ़ज़ाबम् मिन् फ़ौक़िकुम् औ मिन् तह़्ति अर्जुलिकुम् औ यल्बि-सकुम् शि-यअ़ंव्-व युज़ी-क़ बअ़्ज़कुम् बअ्-स बअ़्ज़िन्, उन्ज़ुर् कै-फ़ नुसर्रिफ़ुल्-आयाति लअ़ल्लहुम् यफ़्क़हून (65) व कज़्ज़-ब बिही क़ौमु-क व हुवल्हक़्क़ु, क़ुल् लस्तु अ़लैकुम् बि-वकील (66) लिकुल्लि न-बइम् मुस्तक़र्रुंव्-व सौ-फ़ तअ़्लमून (67)	तू कह- उसी को क़ुदरत है इस पर कि भेजे तुम पर अ़ज़ाब ऊपर से या तुम्हारे पाँव के नीचे से, या भिड़ा दे तुमको अलग-अलग फ़िर्क़े करके और चखा दे एक को लड़ाई एक की, देख किस-किस तरह से हम बयान करते हैं आयतों को ताकि वे समझ जायें। (65) और उसको झूठ बतलाया तेरी क़ौम ने हालाँकि वह हक़ है। तू कह दे कि मैं नहीं तुम पर दारोग़ा। (66) हर एक ख़बर का एक निर्धारित वक़्त है और क़रीब है कि उसको जान लोगे। (67)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (यह भी) कहिए कि (जिस तरह वह निजात देने पर क़ादिर है उसी तरह) इस पर भी वही क़ादिर है कि तुम पर (तुम्हारे कुफ़्र व शिर्क की वजह से) कोई अ़ज़ाब तुम्हारे ऊपर से भेज दे (जैसे पत्थर या हवा या तूफ़ानी बारिश), या तुम्हारे पाँव तले (जो ज़मीन है उस) से, (ज़ाहिर कर दे, जैसे ज़लज़ला या ग़र्क़ हो जाना, और इन अ़ज़ाबों के क़रीबी असबाब तो अल्लाह के

सिवा किसी के इख़्तियार में नहीं, कभी न कभी ऐसा होगा चाहे दुनिया में या आख़िरत में) या कि तुमको (स्वार्थों के भिन्न होने की वजह से अलग-अलग) गिरोह-गिरोह करके सब को (आपस में) भिड़ा दे (यानी लड़वा दे), और तुम्हारे एक को दूसरे की लड़ाई (के ज़रिये मज़ा) चखा दे। (और इसका क़रीबी सबब इख़्तियारी काम है, और या सब आफ़तें जमा कर दे। ग़र्ज़ कि निजात देना और अ़ज़ाब में मुब्तला करना दोनों उसी की क़ुदरत में हैं। ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप देखिए तो सही हम किस (किस) तरह (तौहीद की) दलीलों को मुख़्तलिफ़ पहलुओं से बयान करते हैं, शायद वे (लोग) समझ जाएँ। और (अल्लाह तआ़ला के अ़ज़ाब देने पर क़ादिर होने और कुफ़्र व शिर्क के अ़ज़ाब का सबब होने को जानने के बावजूद) आपकी क़ौम (क़ुरैश और अ़रब भी) उस (अ़ज़ाब) को झुठलाते हैं (और उसके उत्पन्न व ज़ाहिर न होने के मोतक़िद हैं) हालाँकि वह यक़ीनी (तौर पर ज़ाहिर होने वाला) है। (और इसको सुनकर वे यूँ कह सकते हैं कि कब होगा तो) आप (यूँ) कह दीजिए कि मैं तुम पर (अ़ज़ाब लाने के लिये) तैनात नहीं किया गया हूँ (कि मुझको विस्तृत इत्तिला हो या मेरे इख़्तियार में हो, अलबत्ता) हर ख़बर (की निशानी) के ज़ाहिर होने का एक वक़्त (अल्लाह के इल्म में निर्धारित) है, और जल्द ही तुमको मालूम हो जाएगा (कि यह अ़ज़ाब आया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में अल्लाह जल्ल शानुहू के बेहिसाब इल्म और बेमिसाल क़ुदरत का यह असर ज़िक्र हुआ था कि हर इनसान की हर मुसीबत को वही दूर कर सकता है, और मुसीबत के वक़्त जो उसको पुकारता है वह अल्लाह तआ़ला की इमदाद अपनी आँखों के सामने देखता है। क्योंकि उसको तमाम कायनात पर क़ुदरत भी कामिल है और तमाम मख़्लूक़ पर रहमत भी कामिल, उसके सिवा न किसी को कामिल क़ुदरत हासिल है और न तमाम मख़्लूक़ पर रहमत व शफ़क़त।

ऊपर ज़िक्र हुई आयतों में कामिल क़ुदरत के दूसरे रुख़ का बयान है कि जैसे अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत में यह है कि कोई अ़ज़ाब कोई मुसीबत और कैसी ही बड़ी से बड़ी आफ़त हो उसको टाल सकता है, इसी तरह उसको इस पर भी क़ुदरत हासिल है कि जब किसी फ़र्द या जमाअ़त को उसकी सरकशी की सज़ा और अ़ज़ाब में मुब्तला करना चाहे तो हर क़िस्म का अ़ज़ाब उसके लिये आसान है। किसी मुजरिम को सज़ा देने के लिये दुनिया के हाकिमों की तरह उसको न किसी पुलिस और फ़ौज की हाजत है और न किसी मददगार की ज़रूरत। इसी मज़मून को इस तरह बयान फ़रमाया है:

هُوَ الْقَادِرُ عَلٰٓى اَنْ يَّبْعَثَ عَلَيْكُمْ عَذَابًا مِّنْ فَوْقِكُمْ اَوْمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِكُمْ اَوْيَلْبِسَكُمْ شِيَعًا.

यानी अल्लाह तआ़ला इस पर भी क़ादिर है कि भेज दे तुम पर कोई अ़ज़ाब तुम्हारे ऊपर से या तुम्हारे पाँव तले से, या तुम्हें विभिन्न पार्टियों में बाँटकर आपस में भिड़ा दे और एक को दूसरे के हाथ से अ़ज़ाब में हलाक कर दे।

अल्लाह के अ़ज़ाब की तीन क़िस्में

यहाँ अल्लाह के अ़ज़ाब की तीन क़िस्मों का ज़िक्र है- एक जो ऊपर से आये, दूसरे जो नीचे से आये, तीसरे जो अपने अन्दर से फूट पड़े। फिर लफ़्ज़ "अ़ज़ाबन" से इस जगह अ़रबी ग्रामर के एतिबार से इस पर भी सचेत कर दिया कि इन तीनों क़िस्मों में भी अनेक और विभिन्न क़िस्में और सूरतें हो सकती हैं।

मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि ऊपर से अ़ज़ाब आने की मिसालें पिछली उम्मतों में बहुत सी गुज़र चुकी हैं, जैसे क़ौमे नूह पर बारिश का सख़्त सैलाब आया और क़ौमे आ़द पर हवा का तूफ़ान मुसल्लत हुआ, और क़ौमे लूत पर ऊपर से पत्थर बरसाये गये, आले फ़िरऔ़न पर ख़ून और मेंढक वग़ैरह बरसाये गये, अस्हाबे फ़ील ने जब मक्का पर चढ़ाई की तो परिन्दों के ज़रिये उन पर ऐसी कंकरें बरसाई गयीं जिनसे वे सबके सब खाये हुए भूसे की तरह होकर रह गये।

इसी तरह नीचे से आने वाले अ़ज़ाब की भी पिछली क़ौमों में अनेक सूरतें गुज़र चुकी हैं। क़ौमे नूह पर तो ऊपर का अ़ज़ाब तूफ़ान, बारिश के साथ और नीचे का अ़ज़ाब ज़मीन का पानी उबलना शुरू हो गया। ग़र्ज़ कि ऊपर और नीचे के दोनों अ़ज़ाब में एक ही वक़्त में गिरफ़्तार हो गये, और क़ौमे फ़िरऔ़न पाँव तले के अ़ज़ाब में ग़र्क़ की गयी। क़ारून भी मय अपने ख़ज़ानों के इसी अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हुआ, और ज़मीन के अन्दर धंस गया।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और मुजाहिद रह. वग़ैरह तफ़सीर के इमामों ने फ़रमाया कि ऊपर के अ़ज़ाब से मुराद यह है कि ज़ालिम बादशाह और बेरहम हाकिम मुसल्लत हो जायें, और नीचे के अ़ज़ाब से मुराद यह है कि अपने नौकर, गुलाम और ख़िदमत करने वाले या मातहत मुलाज़िम बेवफ़ा, ग़द्दार, कामचोर, बददियानती और ख़ियानत करने वाले जमा हो जायें।

रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चन्द इरशादात से भी हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की इस तफ़सीर की ताईद होती है। मिश्कात शरीफ़ में शुअ़बुल-ईमान बैहक़ी के हवाले से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद मन्क़ूल है:

كَمَا تَكُوْنُوْنَ كَذٰلِكَ يُؤَمَّرُ عَلَيْكُمْ

"यानी जैसे तुम्हारे आमाल भले या बुरे होंगे वैसे ही हाकिम और अमीर तुम पर मुसल्लत किये जायेंगे।"

अगर तुम नेक और अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार होगे तो तुम्हारे हाकिम व अमीर भी रहम-दिल, इन्साफ़-पसन्द होंगे, और तुम बुरे अ़मल वाले होगे तो तुम पर हाकिम भी बेरहम और ज़ालिम मुसल्लत कर दिये जायेंगे। अ़रबी की मशहूर कहावत 'अअ़्मालुकुम उम्मालुकुम' का यही मतलब है।

और मिश्कात शरीफ़ में "हिल्या अबी नुऐम" के हवाले से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि मैं अल्लाह हूँ, मेरे सिवा कोई माबूद नहीं। मैं सब बादशाहों का मालिक और बादशाह हूँ। सब बादशाहों के दिल मेरे हाथ में हैं, जब मेरे बन्दे मेरी इताअ़त करते हैं तो मैं उनके बादशाहों और हाकिमों के दिलों में उनकी शफ़क़त व रहमत डाल देता हूँ। और जब मेरे बन्दे मेरी नाफ़रमानी करते हैं तो मैं उनके हाकिमों के दिल उन पर सख़्त कर देता हूँ। ये उनको हर तरह का बुरा अ़ज़ाब चखाते हैं। इसलिये तुम हाकिमों और अमीरों को बुरा कहने में अपने समय को ज़ाया न करो, बल्कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू और अपने अ़मल के सुधार की फ़िक्र में लग जाओ, ताकि तुम्हारे सब कामों को दुरुस्त कर दे।"

इसी तरह अबू दाऊद, नसाई में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"जब अल्लाह तआ़ला किसी अमीर और हाकिम का भला चाहते हैं तो उसको अच्छा वज़ीर और अच्छा नायब दे देते हैं कि अगर अमीर से कुछ भूल हो जाये तो वह उसको याद दिला दे, और जब अमीर सही काम करे तो वह उसकी मदद करे। और जब किसी हाकिम व अमीर के लिये कोई बुराई मुक़द्दर होती है तो बुरे आदमियों को उसके सहयोगी व सलाहकार और मातहत बना दिया जाता है।" (हदीस)

इन रिवायतों और ज़िक्र हुई आयत की उपर्युक्त तफ़सीर का हासिल यह है कि इनसान को जो तकलीफ़ें और मुसीबतें अपने हाकिमों के हाथों पहुँचती हैं, वह ऊपर से आने वाला अ़ज़ाब है, और जो अपने मातहतों और मुलाज़िमों के ज़रिये पहुँचती हैं वह नीचे से आने वाला अ़ज़ाब है। ये सब कोई इत्तिफ़ाक़ी हादसे नहीं होते बल्कि एक क़ानूने इलाही के ताबे इनसान के आमाल की सज़ा होते हैं। हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जब मुझसे कोई गुनाह हो जाता है तो मैं उसका असर अपने नौकर और अपनी सवारी के घोड़े और बोझ उठाने वाले गधे के मिज़ाज में महसूस करने लगता हूँ कि ये सब मेरी नाफ़रमानी करने लगते हैं। मौलाना रूमी रह. ने फ़रमाया किः

ख़ल्क़ रा बा तू चुनीं बदख़ू कुनंद
ता तुरा नाचार रू आँ सू कुनंद

यानी अल्लाह तआ़ला दुनिया में तुम्हारे ऊपर हुकूमत व इख़्तियार रखने वाले हाकिमों या मातहत मुलाज़िमों के ज़रिये तुम्हारे ख़िलाफ़े मिज़ाज, तकलीफ़देह मामलात का ज़ाहिरी अ़ज़ाब तुम पर मुसल्लत करके दर हक़ीक़त तुम्हारा रुख़ अपनी तरफ़ फेरना चाहते हैं, ताकि तुम होशियार हो जाओ और अपने आमाल को दुरुस्त करके आख़िरत के बड़े अ़ज़ाब से बच जाओ।

ख़ुलासा य6ह है कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तफ़सीर के मुताबिक़ हाकिमों का ज़ुल्म व ज़्यादती ऊपर से आने वाला अ़ज़ाब है, और मातहत मुलाज़िमों की बेईमानी, कामचोरी, ग़द्दारी, नीचे से आने वाला अ़ज़ाब है। और दोनों का इलाज एक ही है

कि सब अपने-अपने आमाल का जायज़ा लें और अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी और ग़लत रास्ते पर चलने से बाज़ आ जायें तो क़ुदरत ख़ुद ऐसे हालात पैदा कर देगी कि यह मुसीबत दूर हो, वरना सिर्फ़ माद्दी तदबीरों के ज़रिये इनके सुधार की उम्मीद अपने नफ़्स को धोखा देने के सिवा कुछ नहीं, जिसका तजुर्बा हर वक़्त हो रहा है।

ऊपर और नीचे के अ़ज़ाब की जो अनेक तफ़सीरें आपने अभी सुनी हैं दर हक़ीक़त उनमें कोई इख़्तिलाफ़ (भिन्नता और टकराव) नहीं, क्योंकि लफ़्ज़ "अ़ज़ाबन" जो इस आयत में आया है दर हक़ीक़त इन तमाम तफ़सीरों पर हावी है। आसमान से बरसने वाले पत्थर, ख़ून, आग और पानी का सैलाब और आला हाकिमों का ज़ुल्म व ज़्यादती, ये सब ऊपर से आने वाले अ़ज़ाब में दाख़िल हैं, और ज़मीन फटकर किसी क़ौम का उसमें धंस जाना या पानी ज़मीन से उबल कर ग़र्क़ हो जाना, या मातहत मुलाज़िमों के हाथों मुसीबत में मुब्तला हो जाना, ये सब नीचे से आने वाले अ़ज़ाब हैं।

अ़ज़ाब की तीसरी क़िस्म जो इस आयत में ज़िक्र की गयी है वह यह है:

اَوْيَلْبِسَكُمْ شِيَعًا.

यानी तुम्हारी विभिन्न और अनेक पार्टियाँ बनकर आपस में भिड़ जायें, और आपस में एक दूसरे के लिये अ़ज़ाब बन जायें। इसमें लफ़्ज़ "यल्बि-सकुम" लबि-स से बना है, जिसके असली मायने छुपा लेने और ढाँप लेने के हैं। इसी मायने में लिबास उन कपड़ों को कहा जाता है जो इनसान के बदन को ढाँप लें। और इसी वजह से 'इल्तिबास' शुब्हे व संदेह के मायने में इस्तेमाल होता है, जहाँ किसी कलाम की मुराद छुपी हो, साफ़ और स्पष्ट न हो।

और लफ़्ज़ "शि-य-अ़" "शीअ़तुन" की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं किसी का पैरो और ताबे। क़ुरआन मजीद में है:

وَاِنَّ مِنْ شِيْعَتِهٖ لَاِبْرٰهِيْمَ.

"यानी नूह अ़लैहिस्सलाम के नक़्शे क़दम पर चलने वाले हैं इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम।"

इसी लिये आ़म बोलचाल और मुहावरे में लफ़्ज़ शिया ऐसी जमाअ़त के लिये बोला जाता है जो किसी ख़ास ग़र्ज़ के लिये जमा हों, और उस ग़र्ज़ में एक दूसरे के मददगार हों, जिसका मुहावरे वाला तर्जुमा आजकल की भाषा में फ़िर्क़ा या पार्टी है।

इसी लिये आयत का तर्जुमा यह हो गया कि अ़ज़ाब की एक क़िस्म यह है कि क़ौम अनेक और विभिन्न पार्टियों में बंटकर आपस में भिड़ जाये, इसी लिये जब यह आयत नाज़िल हुई तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुसलमानों को ख़िताब करके फ़रमायाः

لَا تَرْجِعُوْا بَعْدِىْ كُفَّارًا يَّضْرِبُ بَعْضُكُمْ رِقَابَ بَعْضٍ.

"यानी तुम मेरे बाद फिर काफ़िरों जैसे न बन जाना कि एक दूसरे की गर्दन मारने लगो।"

(इब्ने अबी हातिम, हज़रत ज़ैद बिन असलम की रिवायत से, तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक मर्तबा हम रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जा रहे थे। हमारा गुज़र बनू मुआ़विया की मस्जिद पर हुआ तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मस्जिद में तशरीफ़ ले गये और दो रक्अ़त नमाज़ पढ़ी। हमने भी दो रक्अ़त अदा की। उसके बाद आप दुआ़ में मशग़ूल हो गये और बहुत देर तक दुआ़ करते रहे, उसके बाद इरशाद फ़रमाया कि मैंने अपने रब से तीन चीज़ों का सवाल किया- एक यह कि मेरी उम्मत को ग़र्क़ करके हलाक न किया जाये, अल्लाह तआ़ला ने यह दुआ़ क़ुबूल फ़रमाई। दूसरे यह कि मेरी उम्मत को सूखे और भूख के ज़रिये हलाक न किया जाये, यह भी क़ुबूल फ़रमा ली। तीसरी दुआ़ यह कि मेरी उम्मत आपस के जंग व झगड़े से तबाह न हो, मुझे इस दुआ़ से रोक दिया गया। (तफ़सीरे मज़हरी, तफ़सीरे बग़वी के हवाले से)

इसी मज़मून की एक हदीस हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है, जिसमें तीन दुआ़ओं में से एक दुआ़ यह है कि मेरी उम्मत पर किसी दुश्मन को मुसल्लत न फ़रमा दे जो सबको तबाह व बरबाद कर दे। यह दुआ़ क़ुबूल हुई, और आपस में न भिड़ जायें इस दुआ़ को मना कर दिया गया।

इन रिवायतों से साबित हुआ कि उम्मते मुहम्मदिया पर उस क़िस्म के अ़ज़ाब तो न आयेंगे जैसे पिछली उम्मतों पर आसमान या ज़मीन से आये, जिससे उनकी पूरी क़ौम तबाह व बरबाद हो गयी। लेकिन एक अ़ज़ाब दुनिया में इस उम्मत पर भी आता रहेगा, वह अ़ज़ाब आपस की लड़ाई-झगड़े और फ़िर्क़ों और पार्टियों का आपस में भिड़ना है। इसी लिये नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उम्मत को फ़िर्क़ों और पार्टियों में बंटकर आपसी टकराव और जंग व जदल से मना करने में इन्तिहाई ताकीद से काम लिया है, और हर मौक़े पर इससे डराया है कि तुम पर ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब इस दुनिया में अगर आयेगा तो आपस ही की जंग व जदल (लड़ाई-झगड़े) के ज़रिये आयेगा।

सूरः हूद की एक आयत में यह मज़मून और भी ज़्यादा वज़ाहत से आया है:

وَلَا يَزَالُوْنَ مُخْتَلِفِيْنَ إِلَّا مَنْ رَّحِمَ رَبُّكَ.

"यानी लोग हमेशा आपस में इख़्तिलाफ़ (विवाद) ही करते रहेंगे सिवाय उन लोगों के जिन पर अल्लाह तआ़ला ने रहमत फ़रमाई।" (सूरः हूद)

इससे वाज़ेह हुआ कि जो लोग आपस में (बिना शरई वजह के) इख़्तिलाफ़ (झगड़ा और विवाद) करते हैं वे अल्लाह की रहमत से मेहरूम या दूर हैं।

एक आयत में इरशाद है:

وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوْا.

दूसरी आयत में इरशाद है:

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ تَفَرَّقُوْا وَاخْتَلَفُوْا.

इन तमाम आयतों और रिवायतों का हासिल यह है कि इख़्तिलाफ़ (झगड़ा और विवाद) बड़ी मन्हूस और बुरी चीज़ है। आज दीनी और दुनियावी हर हैसियत से मुसलमानों की पस्ती और

बरबादी के कारणों पर ग़ौर किया जाये तो अक्सर मुसीबतों का सबब यही आपस का इख़्तिलाफ़ और बिखराव नज़र आयेगा। हमारी बद-आमालियों के नतीजे में यह अ़ज़ाब हम पर मुसल्लत हो गया कि वह कौम जिसकी एकता का मर्कज़ और केन्द्र एक कलिमा यानी 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' था। इस कलिमे को मानने वाला ज़मीन के किसी ख़ित्ते में हो, किसी भाषा का बोलने वाला हो, किसी रंग का हो, किसी नस्ल व ख़ानदान से मुताल्लिक़ हो, सब भाई-भाई थे। पहाड़ व दरिया की कठिन मन्ज़िलें उनकी एकता में बाधा न थीं, नसब व ख़ानदान, रंग व भाषा का भेद उनकी राह में रुकावट न था, उनकी कौमी एकता सिर्फ़ इस कलिमे से जुड़ी थी। अ़रबी, मिस्री, शामी, तुर्की, हिन्दी, चीनी की तक़्सीमें सिर्फ़ पहचान और परिचय के लिये थीं और कुछ नहीं। बक़ौल इक़बाल मरहूम केः

दुर्वेश-ए-ख़ुदा मस्त, न शरक़ी है न ग़रबी
घर उसका न दिल्ली न सफ़ाहान न समरक़न्द

आज दूसरी क़ौमों की साज़िशों, मक्कारियों और लगातार कोशिशों ने फिर उनको नस्ली, भाषाई और वतनी क़ौमियतों में बाँट दिया, और फिर उनमें से भी हर एक क़ौम व जमाअ़त अपने अन्दर भी बिखराव और फूट का शिकार होकर अनेक पार्टियों में बंट गयी। वह क़ौम जिसका चलन और पहचान ग़ैरों से भी माफ़ी व दरगुज़र और क़ुरबानी था और झगड़े से बचने के लिये अपने बड़े से बड़े हक़ को छोड़ देती थी, आज इसके बहुत से अफ़राद ज़रा-ज़रा सी घटिया व ज़लील इच्छाओं के पीछे बड़े से बड़े ताल्लुक़ को क़ुरबान कर देते हैं। यही वह स्वार्थ और इच्छाओं का इख़्तिलाफ़ (झगड़ा) है जो क़ौम व मिल्लत के लिये मन्हूस और इस दुनिया में नक़द अ़ज़ाब है।

हाँ इस जगह यह समझ लेना भी ज़रूरी है कि वह इख़्तिलाफ़ (विवाद और मतभेद) जिसको क़ुरआन में अल्लाह का अ़ज़ाब और रहमते ख़ुदावन्दी से मेहरूमी फ़रमाया गया है, वह वह इख़्तिलाफ़ है जो उसूल और अ़क़ीदों में हो या नफ़्सानी इच्छाओं और स्वार्थों की वजह से हो। इसमें वह मतभेद दाख़िल नहीं जो क़ुरआन व सुन्नत के बतलाये हुए इज्तिहादी उसूल के मातहत ऊपर के मसाईल में उम्मत के फ़ुक़हा (मसाईल के माहिर उलेमा) के अन्दर पहली सदी हिजरी से सहाबा व ताबिईन में होता चला आता है। जिनमें दोनों पक्षों की हुज्जत क़ुरआन व सुन्नत और इजमा (उम्मत की किसी मसले पर सर्वसम्मति) से है, और हर एक की नीयत क़ुरआन व सुन्नत के अहकाम की तामील है, मगर क़ुरआन व सुन्नत के संक्षिप्त और अस्पष्ट अलफ़ाज़ की ताबीर और उनसे आंशिक और निकलने वाले मसाईल के समझने, वज़ाहत करने और अहकाम निकालने में इस सिलसिले की कोशिश व राय का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है। ऐसे ही इख़्तिलाफ़ को एक हदीस में रहमत फ़रमाया गया है।

किताब 'जामे सग़ीर' में नस्र मक़्दसी, बैहक़ी और इमामुल-हरमैन के हवाले से यह रिवायत नक़ल की गयी हैः

اِخْتِلَافُ اُمَّتِیْ رَحْمَةٌ

कि "मेरी उम्मत का इख़्तिलाफ़ रहमत है।"

उम्मते मुहम्मदिया की विशेषता इसलिये इख़्तियार फ़रमाई गयी कि इस उम्मत के सच्चे उलेमा और मुत्तक़ी फ़ुक़हा में जो इख़्तिलाफ़ (मतभेद) होगा वह हमेशा क़ुरआन व सुन्नत के उसूलों के मातहत होगा, और सच्ची नीयत और इख़्लास के साथ होगा। माल व ओहदे और मर्तबे की कोई नफ़्सानी ग़र्ज़ उनके इख़्तिलाफ़ का सबब न होगी। इसलिये वह किसी जंग व जदल (लड़ाई-झगड़े) का सबब भी न बनेगा, बल्कि अ़ल्लामा अ़ब्दुर्रऊफ़ मुनावी व्याख्यापक जामे सग़ीर की तहक़ीक़ के मुताबिक़ उम्मत के फ़ुक़हा के विभिन्न और अनेक मस्लकों (विचारधाराओं) का वह दर्जा होगा जो पहले ज़माने में नबियों की मुख़्तलिफ़ शरीअ़तों का था, कि अलग-अलग होने के बावजूद सब की सब अल्लाह ही के अहकाम थे। इसी तरह उम्मत के मुज्तहिदीन के विभिन्न और अलग-अलग मस्लक क़ुरआन व सुन्नत के उसूलों के मातहत होने की वजह से सब के सब ख़ुदा और रसूल ही के अहकाम कहलायेंगे।

इस इज्तिहादी इख़्तिलाफ़ (वैचारिक मतभेद) की मिसाल महसूस चीज़ों में ऐसी है जैसे शहर की बड़ी सड़कों को चलने वालों की आसानी के लिये विभिन्न हिस्सों में बाँट दिया जाता है। एक हिस्से पर बसें चलती हैं, दूसरे पर दूसरी गाड़ियाँ या ट्राम। इसी तरह साईकिल सवारों और पैदल चलने वालों के लिये रोड का अलग एक हिस्सा होता है, एक रोड की कई हिस्सों में यह तक़सीम भी अगरचे ज़ाहिरी तौर पर एक इख़्तिलाफ़ (भिन्नता और अलग-अलग होने) की सूरत है, मगर चूँकि सब का रुख़ एक ही दिशा में है और हर एक पर चलने वाला एक ही मन्ज़िले मक़सूद पर पहुँचेगा, इसलिये रास्तों का यह इख़्तिलाफ़ (अलग-अलग होना) बजाय नुक़सानदेह होने के मुफ़ीद और चलने वालों के लिये गुंजाईश व रहमत है।

यही वजह है कि मुज्तहिद इमामों और फ़ुक़हा-ए-उम्मत का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि उनमें से किसी का मस्लक बातिल (ग़ैर-हक़) नहीं, और जो लोग उसकी पैरवी करते हैं, उनको दूसरों के नज़दीक गुनाहगार कहना जायज़ नहीं। मुज्तहिद इमामों और फ़ुक़हा-ए-उम्मत के मज़हबों के इख़्तिलाफ़ (भिन्नता) का हासिल इससे ज़्यादा नहीं कि एक मुज्तहिद ने जो मस्लक इख़्तियार किया है वह उसके नज़दीक राजेह (वरीयता प्राप्त) है, मगर उसके मुक़ाबिल दूसरे मुज्तहिद के मस्लक को भी वह बातिल नहीं कहते, बल्कि एक दूसरे का पूरा सम्मान व आदर करते हैं। दीनी मसाईल के माहिर सहाबा व ताबिईन और चारों इमामों के बेशुमार हालात व वाक़िआ़त इस पर गवाह और सुबूत हैं कि फ़िक़्ही मस्लक बहुत से मसाईल में अलग और भिन्न होने और इल्मी बहसें जारी रहने के बावजूद एक दूसरे का मुकम्मल एतिक़ाद व एहतिराम करते थे। लड़ाई-झगड़े और दुश्मनी व अ़दावत का वहाँ कोई शुब्हा व गुमान ही न था। फ़ुक़हा के मज़हबों के मानने और अनुसरण करने वालों में भी जहाँ तक सही इल्म व दयानत रहे उनके भी आपसी मामलात ऐसे ही रहे।

यह इख़्तिलाफ़ (मतभेद) है जो रहमत ही रहमत और लोगों के लिये गुंजाईश व सहूलत का ज़रिया और बहुत से मुफ़ीद परिणामों का हामिल है। और हक़ीक़त यही है कि ऊपर के अहकाम

में रावियों का इख़्तिलाफ़ जहाँ तक अपनी हद के अन्दर रहे वह कोई नुक़सानदेह चीज़ नहीं, बल्कि मसले के विभिन्न और अनेक पहलुओं को खोलने और सही नतीजे पर पहुँचने में मददगार है, और जहाँ सच्चाई परस्त और समझदार अ़क़्लमन्द जमा होंगे वहाँ यह मुम्किन ही नहीं कि किसी मसले में उनका इख़्तिलाफ़ (मतभेद) न हो। ऐसा क़ानून या तो बेअ़क़्लों में हो सकता है जिनको कोई समझ-बूझ न हो, या बेदीनों में हो सकता है जो किसी पार्टी वग़ैरह की रियायत से अपने ज़मीर (विवेक) के ख़िलाफ़ राय में इत्तिफ़ाक़ का इज़हार करें।

राय का इख़्तिलाफ़ (मतभेद) जो अपनी हदों के अन्दर हो, यानी क़ुरआन व सुन्नत के क़तई और एतिक़ादी मसाईल और क़तई अहकाम में न हो, सिर्फ़ ऊपर के ग़ौर व फ़िक्र के मसाईल में हो, जिनमें क़ुरआन व सुन्नत की तालीमात ख़ामोश या ग़ैर-स्पष्ट हैं, और वह भी लड़ाई-झगड़े और एक दूसरे को बुरा-भला कहने की हद तक न पहुँचे तो वह बजाय नुक़सानदेह होने के मुफ़ीद और एक नेमत व रहमत है। जैसे इस कायनात की तमाम चीज़ें शक्ल व सूरत, रंग व बू और ख़ासियत व लाभदायक होने में अलग-अलग और एक दूसरे से भिन्न हैं, हैवानों में लाखों अलग-अलग प्रजातियाँ, इनसानों में मिज़ाजों और पेशों, काम-धंधों और रहन-सहन के तरीक़ों में भिन्नता, यह सब इस कायनात की रौनक़ बढ़ाने वाले और बेशुमार फ़ायदों के असबाब हैं।

बहुत से लोग जो इस हक़ीक़त से वाक़िफ़ नहीं वे इमामों के मज़हबों और उलेमा-ए-हक़ के फ़तवों में इख़्तिलाफ़ (मतभेद और भिन्नता) को भी अपमान की नज़र से देखते हैं। उनको यह कहते सुना जाता है कि उलेमा में इख़्तिलाफ़ है तो हम किधर जायें। हालाँकि बात बिल्कुल साफ़ है कि जिस तरह किसी बीमार के मामले में डॉक्टरों हकीमों का मतभेद होता है तो हर शख़्स यह मालूम करने की कोशिश करता है कि उनमें से फ़न्नी एतिबार से ज़्यादा माहिर और तजुर्बेकार कौन है, बस उसका इलाज करते हैं, दूसरे डॉक्टरों को बुरा नहीं कहते। मुक़द्दिमे के वकीलों में मतभेद हो जाता है तो जिस वकील को ज़्यादा क़ाबिल और तजुर्बेकार जानते हैं उसके कहने पर अ़मल करते हैं, दूसरों को बुरा कहते नहीं फिरते। यही उसूल यहाँ होना चाहिये। जब किसी मसले में उलेमा के फ़तवे मुख़्तलिफ़ (अलग-अलग और भिन्न) हो जायें तो जहाँ तक संभव हो तहक़ीक़ करने के बाद जिस आ़लिम को इल्म और तक़्वे में दूसरों से ज़्यादा और बेहतर समझें उसकी पैरवी करें और दूसरे उलेमा को बुरा-भला कहते न फिरें।

हाफ़िज़ इब्ने क़य्यिम रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने 'आलामुल-मुवक़्क़िईन' में नक़ल किया है कि माहिर मुफ़्ती का चयन और मतभेद की सूरत में उनमें से उस शख़्स के फ़तवे को तरजीह देना जो उसके नज़दीक इल्म और तक़्वे में सबसे ज़्यादा हो, यह काम हर मामले वाले मुसलमान के ज़िम्मे ख़ुद लाज़िम है। उसका काम यह तो नहीं कि उलेमा के फ़तवों में से किसी फ़तवे को तरजीह दे, लेकिन यह उसी का काम है कि मुफ़्तियों और उलेमा में से जिसको अपने नज़दीक इल्म और ईमानदारी के एतिबार से ज़्यादा बेहतर जानता है उसके फ़तवे पर अ़मल करे, मगर दूसरे उलेमा और मुफ़्तियों को बुरा कहता न फिरे, ऐसा अ़मल करने के बाद अल्लाह के नज़दीक वह बिल्कुल बरी है, अगर हक़ीक़त में कोई ग़लती फ़तवा देने वाले से हो भी गयी तो उसका

वही ज़िम्मेदार है।

खुलासा-ए-कलाम यह है कि न हर इख़्तिलाफ़ पूरी तरह बुरा और न हर इत्तिफ़ाक़ बिना किसी शर्त के पसन्दीदा और मतलूब है। अगर चोर, डाकू, बाग़ी एक जमाअ़त बनाकर आपस में एकजुट और सहमत हो जायें तो कौन नहीं जानता कि उनका यह इत्तिफ़ाक़ बुरा और क़ौम के लिये तबाही लाने वाला है, और उसके ख़िलाफ़ जो कोशिश व कार्रवाई अ़वाम या पुलिस वग़ैरह की तरफ़ से उस जमाअ़त की मुख़ालफ़त में होती है, तो उनके इत्तिफ़ाक़ से यह असहमति और मुख़ालफ़त हर अ़क्लमन्द की नज़र में अच्छी और मुफ़ीद है।

मालूम हुआ कि ख़राबी राय के इख़्तिलाफ़ (मतभेद होने) में नहीं और न किसी एक राय पर अ़मल करने में है, बल्कि सारी ख़राबियाँ दूसरों के बारे में बदगुमानी और बुरा-भला कहने से पेश आती हैं जो इल्म व ईमानदारी और सच्चाई की तलाश की कमी और अपने स्वार्थों व इच्छाओं की अधिकता का नतीजा होता है। और जब किसी क़ौम या जमाअ़त में यह सूरत पैदा हो जाती है तो उनके लिये यह रहमत का इख़्तिलाफ़ भी अ़ज़ाब के इख़्तिलाफ़ की सूरत में बदल जाता है, और मुसलमानों की पार्टियाँ बनकर एक दूसरे के ख़िलाफ़ जंग व जदल में और कई बार मार-काट तक में मुब्तला हो जाते हैं, और एक दूसरे के ख़िलाफ़ बुरा-भला कहने और दिल दुखाने वाली बातें कहने को तो मज़हब की हिमायत समझ लिया जाता है, हालाँकि मज़हब का इस हद से बढ़ने और ज़्यादती से कोई ताल्लुक़ नहीं होता, बल्कि यह वही झगड़ा है जिससे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सख़्ती के साथ मना फ़रमाया है। सही हदीसों में इसको क़ौमों की गुमराही का सबब क़रार दिया है। (तिर्मिज़ी, इब्ने माजा)

दूसरी आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बिरादरी यानी मक्का के क़ुरैश की हक़ की मुख़ालफ़त का ज़िक्र करके हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह हिदायत फ़रमाई गयी कि ये लोग जो आप से अ़ज़ाब के आने का निर्धारित वक़्त पूछते हैं, आप इनसे फ़रमा दें कि मैं इस काम के लिये मुसल्लत नहीं किया गया, बल्कि हर बात का एक वक़्त अल्लाह के इल्म में मुक़र्रर (तयशुदा) है, वह अपने वक़्त पर हो रहेगी, और उसका नतीजा तुम्हारे सामने आ जायेगा।

وَإِذَا رَأَيْتَ الَّذِينَ يَخُوضُونَ فِي آيَاتِنَا فَأَعْرِضْ عَنْهُمْ حَتَّىٰ

يَخُوضُوا فِي حَدِيثٍ غَيْرِهِ ۚ وَإِمَّا يُنسِيَنَّكَ الشَّيْطَانُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرَىٰ مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ۝ وَمَا عَلَى الَّذِينَ يَتَّقُونَ مِنْ حِسَابِهِم مِّن شَيْءٍ وَلَٰكِن ذِكْرَىٰ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ۝ وَذَرِ الَّذِينَ اتَّخَذُوا دِينَهُمْ لَعِبًا وَلَهْوًا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيَاةُ الدُّنْيَا ۚ وَذَكِّرْ بِهِ أَن تُبْسَلَ نَفْسٌ بِمَا كَسَبَتْ لَيْسَ لَهَا مِن دُونِ اللَّهِ وَلِيٌّ وَلَا شَفِيعٌ وَإِن تَعْدِلْ كُلَّ عَدْلٍ لَّا يُؤْخَذْ مِنْهَا ۗ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ أُبْسِلُوا بِمَا كَسَبُوا ۖ لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيمٍ وَعَذَابٌ أَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ۝ قُلْ أَنَدْعُو مِن دُونِ

اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُنَا وَلَا يَضُرُّنَا وَنُرَدُّ عَلٰٓى اَعْقَابِنَا بَعْدَ اِذْ هَدٰىنَا اللّٰهُ كَالَّذِى اسْتَهْوَتْهُ الشَّيٰطِيْنُ
فِى الْاَرْضِ حَيْرَانَ لَهٗٓ اَصْحٰبٌ يَّدْعُوْنَهٗٓ اِلَى الْهُدَى ائْتِنَا ۗ قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ۗ
وَاُمِرْنَا لِنُسْلِمَ لِرَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ وَاَنْ اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّقُوْهُ ۗ وَهُوَ الَّذِىْٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝
وَهُوَ الَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ۗ وَيَوْمَ يَقُوْلُ كُنْ فَيَكُوْنُ ۚ قَوْلُهُ الْحَقُّ ۗ وَلَهُ
الْمُلْكُ يَوْمَ يُنْفَخُ فِى الصُّوْرِ ۗ عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ ۗ وَهُوَ الْحَكِيْمُ الْخَبِيْرُ ۝

व इज़ा रऐतल्लज़ी-न यख़ूज़ू-न फ़ी आयातिना फ़-अअ्रिज़् अ़न्हुम् हत्ता यख़ूज़ू फ़ी हदीसिन् ग़ैरिही, व इम्मा युन्सियन्नकश्शैतानु फ़ला तक़्अ़ुद् बअ़्दज़्ज़िक्रा मअ़ल्-क़ौमिज़्ज़ालिमीन (68) व मा अ़लल्लज़ी-न यत्तक़ू-न मिन् हिसाबिहिम् मिन् शैइंव्-व लाकिन् ज़िक्रा लअ़ल्लहुम् यत्तक़ून (69) व ज़रिल्लज़ीनत्त-ख़ज़ू दीनहुम् लअिबंव्-व लह्वंव्-व ग़र्रत्हुमुल् हयातुद्दुन्या व ज़क्किर् बिही अन् तुब्स-ल नफ़्सुम्-बिमा क-सबत् लै-स लहा मिन् दूनिल्लाहि वलिय्युंव्-व ला शफ़ीअ़ुन् व इन् तअ़्दिल् कुल्-ल अ़द्लिल्-ला युअ्ख़ज़् मिन्हा, उला-इकल्लज़ी-न उब्सिलू बिमा क-सबू लहुम् शराबुम् मिन् हमीमिंव्-व अ़ज़ाबुन् अलीमुम् बिमा कानू

और जब तू देखे उन लोगों को कि झगड़ते हैं हमारी आयतों में तो उनसे किनारा कर यहाँ तक कि वे मशग़ूल हो जायें किसी और बात में, और अगर भुला दे तुझको शैतान तो मत बैठ याद आ जाने के बाद ज़ालिमों के साथ। (68) और परहेज़गारों पर नहीं है झगड़ने वालों के हिसाब में से कोई चीज़ लेकिन उनके ज़िम्मे नसीहत करनी है ताकि वे डरें। (69) और छोड़ दे उनको जिन्होंने बना रखा है अपने दीन को खेल और तमाशा और धोखा दिया उनको दुनिया की ज़िन्दगी ने, और नसीहत कर उनको क़ुरआन से ताकि गिरफ़्तार न हो जाये कोई अपने किये में, कि न हो उसके लिये अल्लाह के सिवा कोई हिमायती और न सिफ़ारिश करने वाला, और अगर बदले में दे सारे बदले तो क़ुबूल न हों उससे, वही लोग हैं जो गिरफ़्तार हुए अपने किये में, उनको पीना है गर्म पानी और अ़ज़ाब

यक्फ़ुरून (70) ✿ क़ुल् अ-नद्अू मिन् दूनिल्लाहि मा ला यन्फ़अुना व ला यज़ुर्रुना व नुरद्दु अला अअ्क़ाबिना बअ्-द इज़् हदानल्लाहु कल्लज़िस्-तह्वत्हुश्-शयातीनु फ़िल्अर्ज़ि हैरा-न लहू अस्हाबुंय्-यद्अूनहू इलल्-हुदअ्तिना, क़ुल् इन्-न हुदल्लाहि हुवल्हुदा, व उमिर्ना लिनुस्लि-म लिरब्बिल् आलमीन (71) व अन् अक़ीमुस्सला-त वत्तक़ूहु, व हुवल्लज़ी इलैहि तुह्शरून (72) व हुवल्लज़ी ख़-लक़स्समावाति वल्अर्-ज़ बिल्हक़्क़ि, व यौ-म यक़ूलु कुन् फ़-यकून। ▲ क़ौलुहुल्-हक़्क़ु, व लहुल्मुल्कु यौ-म युन्फ़ख़ु फ़िस्सूरि, आ़लिमुल्-ग़ैबि वश्शहा-दति, व हुवल् हकीमुल्-ख़बीर (73)

है दर्दनाक बदले में कुफ़्र के। (70) ✿ तू कह दे क्या हम पुकारें अल्लाह के सिवा उनको जो न नफ़ा पहुँचा सकें हमको और न नुक़सान, और क्या फिर जायें हम उल्टे पाँव इसके बाद कि अल्लाह सीधी राह दिखा चुका हमको, उस शख़्स की तरह जिसको रस्ता भुला दिया हो जिन्नों ने जंगल में जबकि वह हैरान है, उसके साथी बुलाते हों उसको रास्ते कि तरफ़ कि चला आ हमारे पास। तू कह दे कि अ़ल्लाह ने जो राह बतलाई वही सीधी राह है, और हमको हुक्म हुआ है कि ताबे रहें परवर्दिगारे आ़लम के। (71) और यह कि क़ायम रखो नमाज़ को और डरते रहो अल्लाह से और वही है जिसके सामने तुम सब इकट्ठे होगे। (72) और वही है जिसने पैदा किया आसमानों और ज़मीन को ठीक तौर पर, और जिस दिन कहेगा कि हो जा तो वह हो जायेगा। ▲ उसी की बात सच्ची है और उसी की सल्तनत है जिस दिन फूँका जायेगा सूर, जानने वाला है छुपी और खुली बातों का, और वही है हिक्मत वाला, जानने वाला। (73)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऐ मुख़ातब!) जब तू उन लोगों को देखे जो हमारी आयतों (और अहकाम) में ऐब ढूँढ रहे हैं तो उन लोगों (के पास बैठने) से किनारा करने वाला हो जा, यहाँ तक कि वे किसी और बात में लग जाएँ। और अगर तुझको शैतान भुला दे (यानी ऐसी मज्लिस में बैठने की मनाही याद न रहे) तो (जब याद आये) याद आने के बाद फिर ऐसे ज़ालिम लोगों के पास मत बैठ (बल्कि फ़ौरन उठ खड़ा हो)। और (अगर वास्तव में कोई दुनियावी या दीनी ज़रूरत ऐसी

मज्लिस में जाने की हो तो उसका हुक्म यह है कि) जो लोग (शरीअ़त की मना की हुई बातों से जिनमें बिना ज़रूरत ऐसी मज्लिसों में जाना भी दाख़िल है) एहतियात रखते हैं उन पर इन (बुरा-भला कहने वालों और झुठलाने वालों) की पूछताछ (और बुरा कहने के गुनाह) का कोई असर न पहुँचेगा। (यानी ज़रूरत के सबब वहाँ जाने वाले गुनाहगार न होंगे) व लेकिन (अपनी ताक़त के मुताबिक़) उनके ज़िम्मे नसीहत कर देना है शायद कि वे (ताने देने वाले) भी (इन खुराफ़ात से) एहतियात करने लगें (चाहे इस्लाम क़ुबूल करके चाहे उनके लिहाज़ से), और (झुठलाने वालों की मज्लिस ही की कुछ तख़्सीस नहीं, बल्कि) ऐसे लोगों से बिल्कुल अलग रह जिन्होंने अपने (इस) दीन को (जिसका मानना उनके ज़िम्मे फ़र्ज़ था यानी इस्लाम को) लह्व-व-लअ़िब "यानी खेल-तमाशा" बना रखा है, (कि उसके साथ मज़ाक़ करते हैं) और दुनियावी ज़िन्दगी ने उनको धोखे में डाल रखा है (कि उसकी लज़्ज़तों में मशग़ूल हैं, और आख़िरत के इनकारी हैं, इसलिये इस मज़ाक़ का अन्जाम नज़र नहीं आता)। और (किनारा करने और ताल्लुक़ात ख़त्म करने के साथ ऐसे लोगों को) इस क़ुरआन के ज़रिये से (जिसका ये मज़ाक़ उड़ा रहे हैं) नसीहत भी करता रह ताकि कोई शख़्स अपने (बुरे) किरदार के सबब (अ़ज़ाब में) इस तरह न फंस जाए कि अल्लाह के अ़लावा कोई न उसका मददगार हो न सिफ़ारिश करने वाला, और (यह कैफ़ियत हो कि) अगर (मान लो) दुनिया भर का मुआ़वज़ा भी दे डाले (कि उसको ख़र्च करके अ़ज़ाब से बच जाये) तब भी उससे न लिया जाए (तो नसीहत से यह फ़ायदा है कि बुरे आमाल के अन्जाम पर चौंकना हो जाता है, आगे मानना न मानना दूसरा जाने। चुनाँचे) ये (मज़ाक़ उड़ाने वाले) ऐसे ही हैं कि (नसीहत न मानी और) अपने (बुरे) किरदार के सबब (अ़ज़ाब में) फंस गये (जिसका आख़िरत में इस तरह ज़हूर होगा कि) उनके लिए पीने के लिए बहुत तेज़ (खौलता हुआ) पानी होगा और (उसके अ़लावा और अन्दाज़ से भी) दर्दनाक सज़ा होगी अपने कुफ़्र के सबब (कि बुरा किरदार यही है, जिसका एक हिस्सा दीन का मज़ाक़ उड़ाना था)।

आप (सब मुसलमानों की तरफ़ से इन मुश्रिकों से) कह दीजिए कि क्या हम अल्लाह के सिवा (तुम्हारी मर्ज़ी के मुवाफ़िक़) ऐसी चीज़ की इबादत करें कि न वह (उसकी इबादत करने की सूरत में) हमको नफ़ा पहुँचा सके (यानी नफ़ा पहुँचाने पर क़ादिर हो) और न वह (उसकी इबादत न करने की सूरत में) हमको नुक़सान पहुँचा सके (यानी नुक़सान पहुँचाने पर क़ादिर हो। इससे मुराद झूठे और बातिल ख़ुदा हैं कि उनमें से कुछ को तो बिल्कुल ही क़ुदरत नहीं और जिनको कुछ है तो वह उनकी ज़ाती और अपनी नहीं, और माबूद में कम से कम अपने मुवाफ़िक़ और मुख़ालिफ़ को नफ़ा व नुक़सान पहुँचाने की तो क़ुदरत होनी चाहिये। तो क्या हम ऐसों की इबादत करें) और क्या (अल्लाह की पनाह) हम (इस्लाम से) इसके बाद उल्टे फिर जाएँ कि हमको ख़ुदा तआ़ला ने (हक़ रास्ते की) हिदायत कर दी है? (यानी अव्वल तो शिर्क ख़ुद ही बुरी चीज़ है, फिर ख़ुसूसन इस्लाम अपना लेने के बाद तो और ज़्यादा बुरा है, वरना हमारी तो वह मिसाल हो जाये) जैसे कोई शख़्स हो कि उसको शैतानों ने कहीं जंगल में (बहका कर राह

से) बेराह कर दिया हो और वह भटकता फिरता हो, (और) उसके कुछ साथी भी हों कि वे उसको ठीक रास्ते की तरफ़ (पुकार-पुकार कर) बुला रहे हों कि (इधर) हमारे पास आ, (मगर वह इस दर्जे हैरान है कि न समझता है न आता है। हासिल यह कि जैसे यह शख़्स राह पर था और राह जानने वाले अपने साथियों से बिछुड़कर जंगलों में भटकाने वालों के हाथों में पड़कर बेराह हो गया, और वे साथी अब भी उसको राह पर लाते हैं, मगर वह नहीं आता। अगर हम इस्लाम को छोड़ दें तो हमारी हालत भी ऐसी ही हो जाये कि इस्लाम के रास्ते पर होकर अपने हादी पैग़म्बर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से अलग हों, और गुमराह करने वालों के पंजे में गिरफ़्तार होकर गुमराह हो जायें, और वह हादी फिर भी ख़ैरख़्वाही के नाते इस्लाम की दावत देते रहें और हम गुमराही को न छोड़ें। यानी क्या हम तुम्हारी मर्ज़ी पर अ़मल करके अपनी ऐसी मिसाल बना लें)? आप (उनसे) कह दीजिए कि (जब इस मिसाल से मालूम हुआ कि राह से बेराह होना बुरा है और यह) यक़ीनी बात है कि सही रास्ता वह ख़ास अल्लाह ही का (बतलाया हुआ) रास्ता है, (और वह इस्लाम है। पस यक़ीनन उसका छोड़ना बेराह होना है, फिर हम कब छोड़ सकते हैं) और (आप कह दीजिए कि हम शिर्क कैसे कर सकते हैं) हमको (तो) यह हुक्म हुआ है कि हम परवर्दिगारे आ़लम के पूरे फ़रमाँबरदार हो जाएँ (जो इस्लाम में रहकर ही हो सकता है)।

और यह (हुक्म हुआ है) कि नमाज़ की पाबन्दी करो (जो कि तौहीद पर ईमान की सबसे ज़ाहिर निशानी है) और (यह हुक्म हुआ है कि) उससे (यानी अल्लाह से) डरो, (यानी मुख़ालफ़त न करो, जिसमें सबसे बढ़कर शिर्क है) और वही (अल्लाह) है जिसके पास तुम सब (क़ियामत के दिन क़ब्रों से निकलकर हिसाब के लिये) जमा किए जाओगे (वहाँ मुश्रिकों को अपने शिर्क का ख़मियाज़ा भुगतना पड़ेगा)। और वही (अल्लाह) है जिसने आसमानों को और ज़मीन को फ़ायदे वाला बनाकर पैदा किया, (जिसमें बड़ा फ़ायदा यह है कि उससे ख़ालिक़ के वजूद और तौहीद पर दलील पकड़ी जाये, पस यह भी तौहीद की एक दलील है) और (ऊपर जो क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने की ख़बर दी है उसको भी कुछ दूर की बात और मुहाल मत समझो, क्योंकि वह ख़ुदाई ताक़त के सामने इस क़द्र आसान है कि) जिस वक़्त वह (यानी अल्लाह तआ़ला) इतना कह देगा कि (हश्र) तू हो जा, बस वह (हश्र फ़ौरन) हो पड़ेगा। उसका (यह) कहना असरदार है (ख़ाली नहीं जाता)। और (हश्र के दिन) जबकि सूर में (अल्लाह के हुक्म से दूसरी बार फ़रिश्ते की) फूँक मारी जाएगी, सारी हुकूमत (हक़ीक़त में भी और ज़ाहिर में भी) ख़ास उसी (अल्लाह) की होगी, (और वह अपनी हुकूमत से ईमान वालों और मुश्रिकों का फ़ैसला करेगा)। वह (अल्लाह) छुपी हुई और ज़ाहिर चीज़ों का जानने वाला है (पस मुश्रिकों के हालात व आमाल का भी उसको इल्म है), वही है बड़ी हिक्मत वाला (इसलिये मुनासिब मुनासिब जज़ा हर एक को देगा, और वही है) पूरी ख़बर रखने वाला (इसलिये किसी बात या मामले को उससे छुपा लेना मुम्किन नहीं)।

मआरिफ़ व मसाईल

बेदीन और ग़लत लोगों की मज्लिसों से परहेज़ का हुक्म

उपर्युक्त आयतों में मुसलमानों को एक अहम उसूली हिदायत दी गयी है कि जिस काम का ख़ुद करना गुनाह है उसके करने वालों की मज्लिस में शरीक रहना भी गुनाह है, इससे परहेज़ करना और बचना चाहिये। जिसकी तफ़सील यह है कि:

पहली आयत में लफ़्ज़ 'यख़ूज़ू-न'' ख़ौज़ से बना है, जिसके असली मायने पानी में उतरने और उसमें गुज़रने के हैं, और बेहूदा व फ़ुज़ूल कामों में दाख़िल होने को भी ख़ौज़ कहा जाता है। क़ुरआने करीम में यह लफ़्ज़ उमूमन इसी मायने में इस्तेमाल हुआ है:

وَكُنَّا نَخُوضُ مَعَ الْخَآئِضِيْنَ.

और:

فِيْ خَوْضِهِمْ يَلْعَبُوْنَ.

वग़ैरह आयतें इसका सुबूत हैं।

इसी लिये ''ख़ौज़ फ़िल-आयाति'' का तर्जुमा इस जगह ऐब तलाश करने या झगड़ने का किया गया है। यानी जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उन लोगों को देखें जो अल्लाह तआ़ला की आयतों में सिर्फ़ खेल-तमाशे और मज़ाक़ उड़ाने के लिये दख़ल देते हैं और ऐब निकालते हैं तो आप उनसे अपना रुख़ फेर लें।

इस आयत का आ़म ख़िताब हर मुख़ातब को है, जिसमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी दाख़िल हैं और उम्मत के अफ़राद भी, और दर हक़ीक़त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब भी आ़म मुसलमानों को सुनाने के लिये है वरना आप तो बचपन में भी कभी ऐसी मज्लिसों में शरीक नहीं हुए। इसलिये किसी मनाही की आपको ज़रूरत न थी।

फिर बातिल वाले लोगों की मज्लिस से रुख़ फेरने की विभिन्न सूरतें हो सकती हैं- एक यह कि उस मज्लिस से उठ जायें, दूसरे यह कि वहाँ रहते हुए किसी दूसरे शग़ल में लग जायें, उनकी तरफ़ ध्यान न करें, लेकिन आयत के आख़िर में बतला दिया गया कि मुराद पहली ही सूरत में है, कि उनकी मज्लिस में बैठे न रहें, वहाँ से उठ जायें।

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि अगर तुमको शैतान भुलाये, यानी भूलकर उनकी मज्लिस में शरीक हो गये, चाहे इस तरह कि ऐसी मज्लिस में शरीक होने की मनाही याद न रही, या इस तरह कि यह याद न रहा कि ये लोग अपनी मज्लिस में अल्लाह तआ़ला की आयतों और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़िलाफ़ तज़किरे किया करते हैं, तो इस सूरत में जिस वक़्त भी याद आ जाये उसी वक़्त उस मज्लिस से उठ जाना चाहिये। याद आ जाने के बाद वहाँ बैठे रहना गुनाह है। एक दूसरी आयत में भी यही मज़मून इरशाद हुआ है, और उसके आख़िर में यह फ़रमाया है कि अगर तुम वहाँ बैठे रहे तो तुम भी उन्हीं जैसे हो।

इमाम राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने तफ़सीर-ए-कबीर में फ़रमाया है कि इस आयत का असली मन्शा गुनाह की मज्लिस और मज्लिस वालों से बेताल्लुक़ी और किनारा करना है, जिसकी बेहतर सूरत तो यही है कि वहाँ से उठ जाये, लेकिन अगर वहाँ से उठने में अपनी जान या माल या आबरू का ख़तरा हो तो अ़वाम के लिये यह भी जायज़ है कि किनारा करने की कोई दूसरी सूरत इख़्तियार कर लें, मसलन किसी दूसरे शग़ल में लग जायें और उन लोगों की तरफ़ ध्यान न दें। मगर ख़ास लोग जिनकी दीन में पैरवी की जाती है उनके लिये वहाँ से हर हाल में उठ जाना ही मुनासिब है।

इसके बाद फ़रमायाः

وَإِمَّا يُنسِيَنَّكَ الشَّيْطٰنُ.

यानी अगर तुझको शैतान भुला दे। इसका ख़िताब अगर आ़म मुसलमानों को है तो बात साफ़ है कि भूल और दिमाग़ से निकल जाना हर इनसान के साथ लगे हुए हैं, और अगर ख़िताब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है तो यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि अगर अल्लाह के रसूल व नबी पर भी भूल का असर हो जाया करे तो उनकी तालीमात पर कैसे भरोसा व इत्मीनान रह सकता है?

जवाब यह है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को भी किसी ख़ास हिक्मत व मस्लेहत के तहत भूल तो हो सकती है मगर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से फ़ौरन वही के ज़रिये उनको तंबीह हो जाती है जिससे वे भूल पर क़ायम नहीं रहते, इसलिये आख़िरकार उनकी तालीमात भूल और निस्यान के शुब्हे से पाक हो जाती हैं।

बहरहाल आयत के इस जुमले से मालूम हुआ कि अगर कोई शख़्स भूल-चूक से किसी ग़लती में मुब्तला हो जाये तो वह माफ़ है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का एक हदीस में इरशाद हैः

رُفِعَ عَنْ أُمَّتِي الْخَطَاءُ وَالنِّسْيَانُ وَمَا اسْتُكْرِهُوْا عَلَيْهِ.

"यानी मेरी उम्मत से ख़ता और भूल का और उस काम का गुनाह माफ़ कर दिया गया है जो किसी ने ज़बरदस्ती उससे करा दिया हो।"

इमाम जस्सास रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया किः

"इस आयत से मालूम हुआ कि मुसलमानों को हर ऐसी मज्लिस से अलग रहना चाहिये जिसमें अल्लाह तआ़ला या उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम या इस्लामी शरीअ़त के ख़िलाफ़ बातें हो रही हों और उसको बन्द करना या कराना, या कम से कम हक़ बात का इज़हार करना उसके क़ब्ज़े व इख़्तियार में न हो। हाँ अगर ऐसी मज्लिस में सुधार करने की नीयत से शरीक हो और उन लोगों को हक़ बात की तालीम व हिदायत करे तो हर्ज नहीं।"

और आयत के आख़िर में जो यह इरशाद है कि याद आ जाने के बाद ज़ालिम क़ौम के साथ न बैठो। इससे इमाम जस्सास रह. ने यह मसला निकाला है कि ऐसे ज़ालिम, बेदीन और

मुँह-फट लोगों की मज्लिस में शिर्कत करना पूरी तरह गुनाह है, चाहे वे उस वक़्त किसी नाजायज़ गुफ़्तगू में मशग़ूल हों या न हों। क्योंकि ऐसे लोगों को ऐसी बेहूदा गुफ़्तगू शुरू करते हुए देर क्या लगती है। तर्क लेने की वजह यह है कि इसमें बिल्कुल ही ज़ालिमों के साथ बैठने को मना फ़रमाया गया है, इसमें यह शर्त नहीं कि वे उस वक़्त भी ज़ुल्म करने में मशग़ूल हों।

क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में भी यही मज़मून स्पष्ट तौर पर बयान हुआ है। फ़रमायाः

وَلَا تَرْكَنُوْآ اِلَى الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ.

"यानी ज़ालिम लोगों के साथ मेलजोल और ताल्लुक़ न रखो, वरना तुम्हें भी जहन्नम की आग से पाला पड़ेगा।"

जब उक्त आयत नाज़िल हुई तो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! अगर उनकी मज्लिस में जाने की बिल्कुल ही मनाही रही तो हम मस्जिदे हराम (काबे की मस्जिद) में नमाज़ और तवाफ़ से भी मेहरूम हो जायेंगे, क्योंकि वे लोग तो हमेशा वहाँ बैठे रहते हैं (यह वाक़िआ हिजरत और फ़त्हे-मक्का से पहले का है), और उनका मशग़ला ही कमी निकालना और बुराई करना है। इस पर इसके बाद वाली दूसरी आयत नाज़िल हुईः

وَمَا عَلَى الَّذِيْنَ يَتَّقُوْنَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِّنْ شَيْءٍ وَّلٰكِنْ ذِكْرٰى لَعَلَّهُمْ يَتَّقُوْنَ.

यानी जो लोग एहतियात रखने वाले हैं वे अगर अपने काम से मस्जिदे हराम में जायें तो उन शरीर लोगों के बुरे आमाल की उन पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं। हाँ इतनी बात उनके ज़िम्मे है कि हक़ बात उनको पहुँचायें कि शायद वे उससे नसीहत हासिल करके सही रास्ते पर आ जायें।

तीसरी आयत में भी तक़रीबन इसी मज़मून की और अधिक ताकीद इस तरह इरशाद फ़रमाई गयी हैः

وَذَرِ الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَهُمْ لَعِبًا وَّلَهْوًا.

इसमें लफ़्ज़ ज़र 'वज़्र' से बना है, जिसके मायने हैं किसी चीज़ से नाराज़ होकर उसको छोड़ देना। आयत के मायने यह हैं कि आप उन लोगों को छोड़ दीजिए जिन्होंने अपने दीन को खेल और तमाशा बना रखा है। इसके दो मायने हो सकते हैं- एक यह कि जो दीने हक़ यानी इस्लाम उनके लिये भेजा गया है, उसको खेल और तमाशा बना रखा है, उसकी हंसी उड़ाते हैं। दूसरे यह कि उन्होंने असली दीन को छोड़कर अपना दीन व मज़हब ही खेल-तमाशे और बेहूदा चीज़ों को बना लिया है। दोनों मायनों का हासिल तक़रीबन एक ही है।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا.

यानी उनको दुनिया की चन्द दिन की ज़िन्दगी ने ग़ुरूर और धोखे में डाला हुआ है। यह उनके रोग का असली सबब बयान फ़रमा दिया कि उनकी इस सारी सरकशी और नाफ़रमानी का असली सबब यह है कि दुनिया ही की चन्द दिन की ज़िन्दगी पर फ़िदा हैं, और आख़िरत को

भुलाये बैठे हैं। अगर आख़िरत और क़ियामत का यक़ीन होता तो वे हरगिज़ ये हरकतें न करते।

इस आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आ़म मुसलमानों को दो हुक्म दिये गये हैं- अव्वल यह कि ऐसे लोगों से अलग रहें जिसका बयान मज़कूरा जुमले में आ चुका है। दूसरे यह कि सिर्फ़ उन लोगों से किनारा करना और वास्ता छोड़ देना भी काफ़ी नहीं, बल्कि सकारात्मक रुख़ अपनाते हुए यह भी ज़रूरी है कि क़ुरआन के ज़रिये उनको नसीहत भी करते रहें और ख़ुदा तआ़ला के अ़ज़ाब से डराते भी रहें।

आयत के आख़िर में उस अ़ज़ाब की तफ़सील इस तरह बयान फ़रमाई कि अगर इनकी यही हालत रही तो ये अपने बुरे आमाल के जाल में ख़ुद फंस जायेंगे। आयत में इस जगह "अन् तुब्स-ल" का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है, जिसके मायने क़ैद हो जाने और फंस जाने के हैं।

चूँकि दुनिया में इनसान इसका आ़दी है कि अगर कभी कोई ग़लती या ज़ुल्म किसी पर कर बैठा है और उसकी सज़ा उसके सामने आ गयी तो सज़ा से बचने के लिये तीन क़िस्म के साधन इख़्तियार करता है। कभी अपनी जमाअ़त और जत्थे का ज़ोर उसके ख़िलाफ़ इस्तेमाल करके अपने ज़ुल्म की सज़ा और परिणाम से बचने की कोशिश करता है, और अगर इससे बेबस हो गया तो बड़े लोगों की सिफ़ारिश से काम लेता है, और यह भी न चली तो फिर यह कोशिश करता है कि अपने को सज़ा से बचाने के लिये कुछ माल ख़र्च करे।

अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में बतला दिया कि ख़ुदा के मुजरिम के लिये सज़ा से बचाने वाला न कोई दोस्त अ़ज़ीज़ हो सकता है, न किसी की सिफ़ारिश बग़ैर अल्लाह तआ़ला की इजाज़त के चल सकती है, और न कोई माल क़ुबूल किया जा सकता है। बल्कि अगर सारे जहान का माल भी उसके क़ब्ज़े में हो और वह उस सारे माल को सज़ा से बचने का फ़िदया (बदला) बनाना चाहे तब भी यह फ़िदया उससे क़ुबूल न किया जायेगा।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

أُولَٰٓئِكَ الَّذِينَ أُبْسِلُوا بِمَا كَسَبُوا لَهُمْ شَرَابٌ مِّنْ حَمِيمٍ وَّعَذَابٌ أَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ.

यानी ये वे लोग हैं जो अपने बुरे आमाल की सज़ा में पकड़ लिये गये हैं, इनको पीने के लिये जहन्नम का खौलता हुआ पानी मिलेगा। जिसके मुताल्लिक़ दूसरी आयत में है कि वह उनकी अंतड़ियों के टुकड़े-टुकड़े उड़ा देगा, और उस पानी के अ़लावा दूसरे भी दर्दनाक क़िस्म के अ़ज़ाब होंगे उनके कुफ़्र व इनकार के बदले में।

इस आख़िरी आयत से यह भी मालूम हुआ कि जो लोग आख़िरत से ग़ाफ़िल सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी में मस्त और मगन हैं, उनकी दोस्ती और पास बैठना भी इनसान के लिये घातक और ख़तरनाक है। इसका अन्जाम यह है कि उनकी सोहबत में रहने वाला भी उस अ़ज़ाब का शिकार होगा जिसमें वे मुब्तला हैं।

इन तीनों आयतों का हासिल मुसलमान को बुरे माहौल और बुरी सोहबत से बचाना है, जो इनसान के लिये हलाक करने वाला ज़हर है। क़ुरआन व हदीस की बेशुमार वज़ाहतों के अ़लावा

मुशाहदा और तजुर्बा इसका गवाह है कि इनसान को तमाम बुराईयों और जराईम में मुब्तला करने वाली चीज़ उसकी बुरी सोसाईटी और बुरा माहौल है, जिसमें फंसने के बाद इनसान पहले तो अपने ज़मीर और दिल की आवाज़ के ख़िलाफ़ बुराईयों में मुब्तला हो जाता है और फिर जब आ़दत पड़ जाती है तो यह बुराई का एहसास भी ख़त्म हो जाता है, बल्कि बुराई को भलाई और भलाई को बुराई समझने लगता है, जैसा कि एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब कोई शख़्स शुरू में गुनाह में मुब्तला होता है तो उसके दिल पर एक सियाह नुक़्ता (काला धब्बा और बिन्दू) लग जाता है और जैसे सफ़ेद कपड़े में एक सियाह नुक़्ता हर शख़्स को नागवार होता है उसको भी गुनाह से दिल में नागवारी पैदा होती है, लेकिन जब एक के बाद दूसरा और तीसरा गुनाह करता चला जाता है और पिछले गुनाह से तौबा नहीं करता तो एक के बाद एक सियाह नुक़्ते (काले धब्बे) लगते चले जाते हैं, यहाँ तक कि दिल की नूरानी तख़्ती बिल्कुल सियाह हो जाती है, और इसका नतीजा यह होता है कि उसको भले-बुरे की तमीज़ नहीं रहती। क़ुरआन मजीद में इसी को लफ़्ज़ "रा-न" से ताबीर फ़रमाया है:

كَلَّا بَلْ رَانَ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ مَّا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ.

"यानी उनके दिलों में उनके बुरे आमाल की वजह से ज़ंग लग गया कि अब सलाहियत ही ख़त्म हो गयी।"

और जहाँ तक ग़ौर किया जाये इनसान को इस हालत पर पहुँचाने वाली चीज़ अक्सर उसका ग़लत माहौल और बुरी सोहबत (संगत) होती है। अल्लाह तआ़ला हमें उससे अपनी पनाह में रखे। इसी लिये बच्चों के मुरब्बियों (पालने वालों और अभिभावकों) का फ़र्ज़ है कि बच्चों को ऐसे माहौल और सोसाईटी से बचाने की पूरी कोशिश करें।

अगली तीन आयतों में भी तौहीद और आख़िरत को साबित करने और शिर्क के बातिल होने को बयान किया गया है, जो तर्जुमे से ज़ाहिर है।

وَ اِذْ قَالَ اِبْرٰهِيْمُ لِاَبِيْهِ اٰزَرَ اَتَتَّخِذُ اَصْنَامًا اٰلِهَةً ۚ اِنِّيْٓ اَرٰىكَ وَ قَوْمَكَ فِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ۝ وَكَذٰلِكَ نُرِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ مَلَكُوْتَ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضِ وَ لِيَكُوْنَ مِنَ الْمُوْقِنِيْنَ ۝ فَلَمَّا جَنَّ عَلَيْهِ الَّيْلُ رَاٰ كَوْكَبًا ۚ قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَآ اُحِبُّ الْاٰفِلِيْنَ ۝ فَلَمَّا رَاَ الْقَمَرَ بَازِغًا قَالَ هٰذَا رَبِّيْ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَ قَالَ لَئِنْ لَّمْ يَهْدِنِيْ رَبِّيْ لَاَكُوْنَنَّ مِنَ الْقَوْمِ الضَّآلِّيْنَ ۝ فَلَمَّا رَاَ الشَّمْسَ بَازِغَةً قَالَ هٰذَا رَبِّيْ هٰذَآ اَكْبَرُ ۚ فَلَمَّآ اَفَلَتْ قَالَ يٰقَوْمِ اِنِّيْ بَرِيْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ ۝ اِنِّيْ وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِيْ فَطَرَ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضَ حَنِيْفًا وَّمَآ اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ وَحَآجَّهٗ قَوْمُهٗ ۚ قَالَ اَتُحَآجُّوْٓنِّيْ فِي اللّٰهِ وَقَدْ هَدٰىنِ ۚ وَلَآ اَخَافُ مَا تُشْرِكُوْنَ بِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ رَبِّيْ شَيْـًٔا ۚ وَسِعَ رَبِّيْ كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا ۚ اَفَلَا تَتَذَكَّرُوْنَ ۝ وَكَيْفَ

أَخَافُ مَا أَشْرَكْتُمْ وَلَا تَخَافُونَ أَنَّكُمْ أَشْرَكْتُمْ بِاللهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا ۚ فَأَيُّ
الْفَرِيقَيْنِ أَحَقُّ بِالْأَمْنِ ۚ إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٨١﴾

व इज़् का-ल इब्राहीमु लि-अबीहि आज़-र अ-तत्तख़िज़ु अस्नामन् आलि-हतन् इन्नी अरा-क व क़ौम-क फ़ी ज़लालिम् मुबीन (74) व कज़ालि-क नुरी इब्राही-म म-लकूतस्समावाति वल्अर्ज़ि व लियकू-न मिनल् मूक़िनीन (75) फ़-लम्मा जन्-न अ़लैहिल्लैलु रआ कौ-कबन् क़ा-ल हाज़ा रब्बी फ़-लम्मा अ-फ़-ल क़ा-ल ला उहिब्बुल्-आफ़िलीन (76) फ़-लम्मा रअल्-क़-म-र बाज़िग़न् क़ा-ल हाज़ा रब्बी फ़-लम्मा अ-फ़-ल क़ा-ल ल-इल्लम् यह्दिनी रब्बी ल-अकूनन्-न मिनल् क़ौमिज़्ज़ाल्लीन (77) फ़-लम्मा रअश्शम्-स बाज़ि-ग़तन् क़ा-ल हाज़ा रब्बी हाज़ा अक्बरु फ़-लम्मा अ-फ़लत् क़ा-ल या क़ौमि इन्नी बरीउम् मिम्मा तुशिरकून (78) इन्नी वज्जह्तु वज्हि-य लिल्लज़ी फ़-तरस्समावाति वल्अर्-ज़ हनीफ़ंव्-व मा अ-न मिनल्-मुशिरकीन (79)

और याद कर जब कहा इब्राहीम ने अपने बाप आज़र को- क्या तू मानता है बुतों को ख़ुदा? मैं देखता हूँ कि तू और तेरी क़ौम खुली गुमराह हैं। (74) और इसी तरह हम दिखाने लगे इब्राहीम को आसमानों और ज़मीन की अ़जीब चीज़ें और ताकि उसको यक़ीन आ जाये। (75) फिर जब अंधेरा कर लिया उस पर रात ने, देखा उसने एक सितारा बोला- यह है रब मेरा, फिर जब वह ग़ायब हो गया तो बोला मैं पसन्द नहीं करता ग़ायब हो जाने वालों को। (76) फिर जब देखा चाँद चमकता हुआ, बोला यह है रब मेरा, फिर जब वह ग़ायब हो गया बोला अगर न हिदायत करेगा मुझको मेरा रब तो बेशक मैं रहूँगा गुमराह लोगों में। (77) फिर जब देखा सूरज झलकता हुआ, बोला यह है रब मेरा, यह सबसे बड़ा है। फिर जब वह ग़ायब हो गया बोला ऐ मेरी क़ौम मैं बेज़ार हूँ उनसे जिनको तुम शरीक करते हो। (78) मैंने मुतवज्जह कर लिया अपने मुँह को उसी की तरफ़ जिसने बनाये आसमान और ज़मीन, सबसे एक तरफ़ होकर, और मैं नहीं हूँ शिर्क

व हाज्जहू क़ौमुहू, क़ा-ल अतुहाज्जून्नी फ़िल्लाहि व क़द् हदानि, व ला अख़ाफ़ु मा तुशिरकू-न बिही इल्ला अंय्यशा-अ रब्बी शैअन्, वसि-अ रब्बी कुल्-ल शैइन् अ़िल्मन्, अ-फ़ला त-तज़क्करून (80) व कै-फ़ अख़ाफ़ु मा अशरक्तुम् व ला तख़ाफ़ू-न अन्नकुम् अशरक्तुम् बिल्लाहि मा लम् युनज़्ज़िल् बिही अ़लैकुम् सुल्तानन्, फ़-अय्युल् फ़रीक़ैनि अहक़्क़ु बिल्-अम्नि इन् कुन्तुम् तअ़्लमून। (81)	करने वाला। (79) और उससे झगड़ा किया उसकी क़ौम ने, बोला क्या तुम मुझसे झगड़ा करते हो अल्लाह के एक होने में, और वह मुझको समझा चुका और हैं डरता नहीं हूँ उनसे जिनको तुम शरीक करते हो उसका, मगर यह कि मेरा रब ही कोई तकलीफ़ पहुँचानी चाहे, इहाता कर लिया है मेरे रब के इल्म ने सब चीज़ों का, क्या तुम नहीं सोचते? (80) और मैं क्योंकर डरूँ तुम्हारे शरीकों से और तुम नहीं डरते इस बात से कि शरीक करते हो अल्लाह का उनको जिसकी नहीं उतारी उसने तुम पर कोई दलील, अब दोनों फ़िर्क़ों (पक्षों) में कौन मुस्तहिक़ है दिल के सुकून का, बोलो अगर तुम समझ रखते हो। (81)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (वह वक़्त भी याद करने के क़ाबिल है) जब इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) ने अपने बाप आज़र (नाम वाले) से फ़रमाया कि क्या तू बुतों को माबूद क़रार देता है? बेशक मैं तुझको और तेरी सारी क़ौम को (जो इस एतिक़ाद में तेरे शरीक हैं) खुली ग़लती में देखता हूँ। (और सितारों के मुताल्लिक़ आगे गुफ़्तगू आयेगी, बीच में इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का सही नज़र वाला होना बयान फ़रमाया जिसका पहले और बाद के क़िस्से से ताल्लुक़ है। फ़रमाते हैं) और हमने ऐसे ही (कामिल) तौर पर इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) को आसमानों और ज़मीन की मख़्लूक़ात (अल्लाह को पहचानने की नज़र से) दिखलाईं ताकि वह (ख़ालिक़ की ज़ात व सिफ़ात के) पहचानने वाले हो जाएँ) और ताकि (अल्लाह की पहचान में अधिक ज़्यादती होने से) पूरा यक़ीन करने वालों में से हो जाएँ। (आगे सितारों के बारे में गुफ़्तगू है जो कि मुश्रिकों के साथ मुनाज़रे का पूरक और आख़िरी हिस्सा है। ऊपर की गुफ़्तगू तो बुतों के बारे में हो चुकी) फिर (उसी दिन या किसी और दिन) जब उन पर (इसी तरह और सब पर) रात का अंधेरा छा गया तो उन्होंने एक सितारा देखा (कि चमक रहा है), आपने (अपनी क़ौम से मुख़ातिब होकर) फ़रमाया कि (तुम्हारे ख़्याल के मुवाफ़िक़) यह मेरा (और तुम्हारा) रब (और मेरे हालात में उलटफेर करने वाला) है? (बहुत अच्छा, अब थोड़ी देर में हक़ीक़त मालूम हुई जाती है। चुनाँचे थोड़े वक़्त के बाद वह आसमानी

किनारे में जा छुपा) सो जब वह छुप गया तो फ़रमाया कि मैं छुप जाने वालों से मुहब्बत नहीं रखता (और मुहब्बत रब होने के एतिक़ाद व यक़ीन का लाज़िमी हिस्सा है, पस हासिल यह हुआ कि मैं उसको रब नहीं समझता)।

फिर (उसी रात में या किसी दूसरी रात में) जब चाँद को देखा (कि) चमकता हुआ (निकला है) तो (पहले ही की तरह) फ़रमाया कि (तुम्हारे ख़्याल के मुवाफ़िक़) यह मेरा (और तुम्हारा) रब (और तमाम हालात में अपना इख़्तियार चलाने वाला) है? (बेहतर! अब थोड़ी देर में इसकी कैफ़ियत भी देखना। चुनाँचे वह भी छुप गया) सो जब वह छुप गया तो आपने फ़रमाया कि अगर मेरा (असली) रब मुझको हिदायत न करता रहे (जैसा कि अब तक हिदायत करता रहता है) तो मैं भी (तुम्हारी तरह) गुमराह लोगों में शामिल हो जाऊँ। फिर (यानी अगर चाँद का क़िस्सा उसी सितारे के क़िस्से की रात का था तब तो किसी रात की सुबह को, और अगर चाँद का क़िस्सा उसी सितारे के क़िस्से की रात का न था तो चाँद के क़िस्से की रात की सुबह को या उसके अ़लावा किसी और रात की सुबह को) जब सूरज को देखा (कि बड़ी चमक-दमक और शान से) चमकता हुआ (निकला है) तो (पहली दो बार की तरह फिर) आपने फ़रमाया कि (तुम्हारे ख़्याल के मुवाफ़िक़) यह मेरा (और तुम्हारा) रब (और हमारे हालात में अ़मल-दख़ल करने वाला) है? (और) यह तो (ज़िक्र हुए) सब (सितारों) से बड़ा है (इस पर बात और मुनाज़रे का ख़ात्मा हो जायेगा, अगर इसका रब होना बातिल हो गया तो छोटों का रब होना तो बदर्जा औला बातिल हो जायेगा। ग़र्ज़ कि शाम हुई तो वह भी ग़ुरूब हो गया) सो जब वह छुप गया तो फ़रमाया- ऐ मेरी क़ौम! बेशक मैं तुम्हारे शिर्क से बेज़ार (और नफ़रत करने वाला) हूँ (यानी उससे अपना बरी और बेताल्लुक़ होना ज़ाहिर करता हूँ, एतिक़ाद व यक़ीन के एतिबार से तो हमेशा से बेज़ार ही थे) मैं (सब तरीक़ों से) एक तरफ़ होकर अपना (ज़ाहिर का और दिल का) रुख़ उस (ज़ात) की तरफ़ (करना तुमसे ज़ाहिर) करता हूँ जिसने आसमानों को और ज़मीन को पैदा किया, और मैं (तुम्हारी तरह) शिर्क करने वालों में से नहीं हूँ (न एतिक़ाद व यक़ीन से न क़ौल व अ़मल से)। और उनसे उनकी क़ौम ने (बेहूदा) हुज्जत करनी शुरू की (वह यह कि यह पुरानी रस्म है, हमने अपने बाप-दादा को इसी राह पर पाया है, वग़ैरह........) आपने (पहली बात के जवाब में तो यह) फ़रमाया कि क्या तुम अल्लाह (की तौहीद) के मामले में मुझसे (बातिल) हुज्जत करते हो? हालाँकि उसने मुझको (सही दलील हासिल करने का) तरीक़ा बतला दिया है (जिसको मैं तुम्हारे सामने पेश कर चुका हूँ, और सिर्फ़ पुरानी रस्म होना उस तर्क देने का जवाब नहीं हो सकता। फिर उससे हुज्जत करना तुम्हारे लिये बेकार और मेरे नज़दीक ना-क़ाबिले तवज्जोह है)। और (दूसरी बात के जवाब में यह फ़रमाया कि) मैं उन चीज़ों से जिनको तुम अल्लाह तआ़ला के साथ (इबादत के हक़दार होने में) शरीक बनाते हो, नहीं डरता (कि वे मुझको कोई तकलीफ़ या नुक़सान पहुँचा सकते हैं, क्योंकि उनमें ख़ुद क़ुदरत व ताक़त की सिफ़त ही मौजूद नहीं है, और अगर किसी चीज़ में हो भी तो उस क़ुदरत का ज़ाती और मुस्तक़िल होना नहीं पाया जाता), लेकिन हाँ अगर मेरा परवर्दिगार ही कोई मामला चाहे (तो वह

दूसरी बात है, वह हो जायेगा, लेकिन इससे झूठ और बातिल माबूदों की क़ुदरत का सुबूत या उनसे ख़ौफ़ की ज़रूरत कब लाज़िम आई, और) मेरा परवर्दिगार (जिस तरह क़ादिरे मुतलक़ है जैसा कि इन चीज़ों से मालूम हुआ इसी तरह वह) हर चीज़ को अपने इल्म (के घेरे) में (भी) घेरे हुए है। (ग़र्ज़ कि क़ुदरत व इल्म दोनों उसी के साथ ख़ास हैं, और तुम्हारे ख़ुदाओं को न क़ुदरत हासिल है न इल्म) क्या तुम (सुनते हो और) फिर (भी) ख़्याल नहीं करते?

और (जिस तरह मेरे न डरने की वजह यह है कि तुम्हारे वे माबूद इल्म व क़ुदरत से बिल्कुल कोरे हैं, इसी तरह यह बात भी तो है कि मैंने कोई काम डर का किया भी तो नहीं, तो फिर) मैं उन चीज़ों से कैसे डरूँ जिनको तुमने (अल्लाह तआ़ला के साथ इबादत का हक़दार होने और रब होने का यक़ीन करने में) शरीक बनाया है, हालाँकि (तुमको डरना चाहिये दो वजह से- अव्वल यह कि तुमने डर का काम यानी शिर्क किया है, जिस पर अ़ज़ाब लागू होता है, दूसरे ख़ुदा का आ़लिम और क़ादिर होना मालूम हो चुका है, मगर) तुम इस बात (के वबाल) से नहीं डरते कि तुमने अल्लाह तआ़ला के साथ ऐसी चीज़ों को शरीक ठहराया है जिन (के माबूद होने) पर अल्लाह तआ़ला ने कोई दलील (लफ़्ज़ी या मानवी) नाज़िल नहीं फ़रमाई। (मतलब यह है कि डरना चाहिये तुमको, और तुम उल्टा मुझको डराते हो) सो (इस तक़रीर के बाद इन्साफ़ से सोचकर बतलाओ कि) इन (ज़िक्र हुई) दो जमाअ़तों में से (यानी मुश्रिकों और ईमान वालों में से) अमन का (यानी इसका कि उस पर ख़ौफ़ वाक़े न हो) ज़्यादा हक़दार कौन है? (और ख़ौफ़ भी वह जो वास्तव में क़ाबिले एतिबार है, यानी आख़िरत का) अगर तुम (कुछ) ख़बर रखते हो।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इनसे पहली आयतों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अ़रब के मुश्रिकों को ख़िताब और बुत-परस्ती छोड़कर सिर्फ़ ख़ुदा की इबादत की दावत का बयान था। इन आयतों में इसी हक़ की दावत की ताईद एक ख़ास अन्दाज़ में फ़रमाई गयी है, जो तबई तौर पर अ़रब वालों के लिये लुभावनी और रोचक हो सकती है। वह यह कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम तमाम अ़रब के पुर्खे हैं और इसी लिये सारा अ़रब उनके आदर व सम्मान पर हमेशा से एकमत चला आया है। इन आयतों में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के उस मुनाज़रे का ज़िक्र किया गया है जो उन्होंने बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) और सितारों की पूजा के ख़िलाफ़ अपनी क़ौम के साथ किया था, और फिर सब को तौहीद (एक अल्लाह को मानने) का सबक़ दिया था।

पहली आयत में है कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने अपने बाप आज़र से कहा कि तुमने अपने हाथों के बनाये हुए बुतों को अपना माबूद (पूज्य) बना लिया है, मैं तुमको और तुम्हारी सारी क़ौम को गुमराही में देखता हूँ।

मशहूर यह है कि आज़र हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के वालिद (पिता) का नाम है और अक्सर इतिहासकारों ने उनका नाम तारिख़ बतलाया है, और यह कि आज़र उनका लक़ब (उपनाम) है। और इमाम राज़ी रहमतुल्लाहि अ़लैहि और पहले उलेमा में से एक जमाअ़त का

कहना यह है कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के वालिद का नाम तारिख़ और चचा का नाम आज़र है। उनका चचा आज़र नमरूद के मंत्रालय में शामिल होने के बाद शिर्क में मुब्तला हो गया था, और चचा को बाप कहना अ़रबी मुहावरों में आ़म है। इसी मुहावरे के तहत आयत में आज़र को हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का बाप फ़रमाया गया है। ज़ुर्क़ानी ने शरह मवाहिब में इसके कई सुबूत और तथ्य भी नक़ल किये हैं।

अ़क़ायद व आमाल के सुधार की दावत अपने घर और अपने ख़ानदान से शुरू करनी चाहिये

आज़र हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के वालिद हों या चचा, बहरहाल नसबी तौर पर उनके आदरनीय और क़ाबिले एहतिराम बुज़ुर्ग थे। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने सबसे पहले हक़ की दावत अपने घर से शुरू फ़रमाई, जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को भी इसका हुक्म हुआ है:

وَاَنْذِرْ عَشِيْرَتَكَ الْاَقْرَبِيْنَ.

यानी अपने क़रीबी रिश्तेदारों को ख़ुदा के अ़ज़ाब से डराईये। और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हुक्म के मुताबिक़ सबसे पहले अपने ख़ानदान ही को सफ़ा पहाड़ी पर चढ़कर हक़ की दावत के लिये जमा फ़रमाया।

तफ़सीर 'बहर-ए-मुहीत' में है कि इससे यह भी मालूम हुआ कि अगर ख़ानदान के कोई सम्मानीय और क़ाबिले एहतिराम बुज़ुर्ग दीन के सही रास्ते पर न हों तो उनको सही रास्ते की तरफ़ दावत देना एहतिराम (इ़ज़्ज़त व आदर) के ख़िलाफ़ नहीं, बल्कि हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही का तक़ाज़ा है। और यह भी मालूम हुआ कि हक़ की दावत और इस्लाह (सुधार) का काम अपने क़रीबी लोगों से शुरू करना नबियों की सुन्नत है।

दो क़ौमी दृष्टिकोण, मुसलमान एक क़ौम और काफ़िर दूसरी क़ौम है

साथ ही इस आयत में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने अपने ख़ानदान और क़ौम की निस्बत अपनी तरफ़ करने के बजाय बाप से यह कहा कि तुम्हारी क़ौम गुमराही में है। इसमें उस अ़ज़ीम क़ुरबानी की तरफ़ इशारा है जो इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने ख़ुदा की राह में अपनी मुश्रिक बिरादरी से ताल्लुक़ तोड़ करके अदा की और अपने अ़मल से बतला दिया कि मुस्लिम क़ौमियत इस्लाम के रिश्ते से क़ायम होती है, नसबी और वतनी क़ौमियतें अगर इससे टकरायें तो वे सब छोड़ देने के क़ाबिल हैं:

हज़ार ख़ेश कि बेगाना अज़ ख़ुदा बाशद
फ़िदाई यक तने बेगाना कि आशना बाशद

हज़ारों अपने जो कि ख़ुदा तआला से बेगाने हों उस एक जान पर निसार व क़ुरबान हैं जो कि अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदार है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

क़ुरआने करीम ने हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के इस वाक़िए को ज़िक्र करके आईन्दा आने वाली उम्मतों को हिदायत की है कि वे भी उनके नक़्शे-क़दम पर चलें। इरशाद है:

قَدْ كَانَتْ لَكُمْ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ فِىٓ اِبْرٰهِيْمَ وَالَّذِيْنَ مَعَهٗ اِذْ قَالُوْا لِقَوْمِهِمْ اِنَّا بُرَءٰٓؤُا مِنْكُمْ وَمِمَّا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ.

यानी उम्मते मुहम्मदिया के लिये बेहतरीन नमूना और क़ाबिले पैरवी है हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों का यह अ़मल कि उन्होंने अपनी नसबी और वतनी बिरादरी से साफ़ कह दिया कि हम तुमसे और तुम्हारे ग़लत माबूदों से बेज़ार (अलग और नफ़रत करने वाले) हैं, और हमारे तुम्हारे बीच नफ़रत व दुश्मनी की दीवार उस वक़्त तक रुकावट है जब तक तुम एक अल्लाह की इबादत इख़्तियार न कर लो।

मालूम हुआ कि यही दो क़ौमी नज़रिया है जिसने पाकिस्तान बनवाया है, इसका ऐलान सबसे पहले हज़रत ख़लीलुल्लाह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया है, उम्मते मुहम्मदिया और दूसरी तमाम उम्मतों ने हिदायत के अनुसार यही तरीक़ा इख़्तियार किया, और आम तौर पर मुसलमानों में इस्लामी क़ौमियत परिचित हो गयी। हज्जतुल-विदा के सफ़र में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को एक क़ाफ़िला मिला, आपने पूछा कि तुम किस क़ौम से हो? तो उसने जवाब दिया 'नहनु क़ौमुम् मुस्लिमून' (यानी हम मुस्लिम क़ौम हैं। बुख़ारी) इसमें अ़रब के पिछले दस्तूर के मुताबिक़ किसी क़बीले या ख़ानदान का नाम लेने के बजाय "मुस्लिमून" कह कर उस असली क़ौमियत को बतला दिया जो दुनिया से लेकर आख़िरत तक चलने वाली है। हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने इस जगह अपने बाप से ख़िताब के वक़्त तो बिरादरी की निस्बत उनकी तरफ़ करके अपनी बेज़ारी का ऐलान फ़रमाया और जिस जगह क़ौम से अपनी बेज़ारी और ताल्लुक़ तोड़ने का ऐलान करना था वहाँ अपनी तरफ़ मन्सूब करके ख़िताब किया, जैसे कि अगली आयत में है:

يٰقَوْمِ اِنِّىْ بَرِىٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ.

यानी ऐ मेरी क़ौम! मैं तुम्हारे शिर्क से बेज़ार हूँ। इसमें इसकी तरफ़ इशारा है कि अगरचे नसब और वतन के लिहाज़ से तुम मेरी क़ौम हो, लेकिन तुम्हारे शिर्क वाले आमाल ने मुझे तुम्हारी बिरादरी से ताल्लुक़ ख़त्म करने पर मजबूर कर दिया।

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की बिरादरी और उनके बाप दोहरे शिर्क में मुब्तला थे कि बुतों की भी पूजा करते थे और सितारों की भी, इसी लिये हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने इन्हीं दोनों मसलों पर अपने बाप और अपनी क़ौम से मुनाज़रा (बहस-मुबाहसा) किया।

पहले बुत-परस्ती का गुमराही होना ज़िक्र फ़रमाया, अगली आयतों में सितारों का क़ाबिले इबादत न होना बयान फ़रमाया, और इससे पहले एक आयत में भूमिका बाँधने के तौर पर हक़ तआला ने हज़रत इब्राहीम की एक ख़ास शान और इल्म व समझ में आला मुक़ाम होने का

ज़िक्र इस तरह फ़रमायाः

وَكَذٰلِكَ نُرِيْٓ اِبْرٰهِيْمَ مَلَكُوْتَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَلِيَكُوْنَ مِنَ الْمُوْقِنِيْنَ.

यानी हमने इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को आसमानों और ज़मीन की मख़्लूक़ात को इस तरह दिखला दिया कि उनको सब चीज़ों की हक़ीक़त स्पष्ट तौर पर मालूम हो जाये, और उनका यक़ीन मुकम्मल हो जाये। इसी का नतीजा था जो बाद की आयतों में एक अ़जीब अन्दाज़ के मुनाज़रे की शक्ल में इस तरह ज़िक्र हुआ है।

तब्लीग़ व दावत में हिक्मत व तदबीर से काम लेना नबियों का तरीक़ा और सुन्नत है

فَلَمَّا جَنَّ عَلَيْهِ الَّيْلُ رَاٰ كَوْكَبًا. قَالَ هٰذَا رَبِّيْ.

यानी एक रात में जब अंधेरा छा गया और एक सितारे पर नज़र पड़ी तो अपनी क़ौम को सुनाकर कहा कि यह सितारा मेरा रब है? मतलब यह था कि तुम्हारे ख़्यालात व अ़क़ीदों के मुवाफ़िक़ यही मेरा और तुम्हारा रब यानी पालने वाला है? अब थोड़ी देर में इसकी हक़ीक़त देख लेना। चुनाँचे कुछ देर के बाद वह छुप गया तो हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को क़ौम पर हुज्जत क़ायम करने का खुला मौक़ा हाथ आया, और फ़रमायाः

لَآ اُحِبُّ الْاٰفِلِيْنَ.

मतलब यह है कि मैं ग़ुरूब हो (छुप) जाने वाली चीज़ों से मुहब्बत नहीं रखता, और जिसको ख़ुदा या माबूद बनाया जाये ज़ाहिर है कि वह सबसे ज़्यादा मुहब्बत व एहतिराम और बड़ाई का हक़दार होना चाहिये। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक शे'र में इसी वाक़िए को बयान फ़रमाया हैः

ख़लील आसा दरे मुल्के यक़ीं ज़न
नवा-ए-ला उहिब्बुल-आफ़िलीन रन

उसके बाद फिर किसी दूसरी रात में चाँद चमकता हुआ नज़र आया तो फिर अपनी क़ौम को सुनाकर वही तरीक़ा इख़्तियार फ़रमाया और कहा कि (तुम्हारे अ़क़ीदे के मुताबिक़) यह मेरा रब है? मगर इसकी हक़ीक़त भी कुछ देर के बाद सामने आ जायेगी। चुनाँचे जब चाँद ग़ुरूब हो गया तो फ़रमाया- अगर मेरा रब मुझे हिदायत न करता रहता तो मैं भी तुम्हारी तरह गुमराहों में दाख़िल हो जाता, और चाँद ही को अपना रब और माबूद समझ बैठता, लेकिन उसके उगने व छुपने के बदलने वाले हालात ने मुझे सचेत कर दिया कि यह सितारा भी क़ाबिले इबादत नहीं।

इस आयत में इसकी तरफ़ भी इशारा कर दिया कि मेरा रब कोई दूसरी चीज़ है जिसकी तरफ़ से मुझे हिदायत होती रहती है।

उसके बाद एक दिन सूरज को निकलते हुए देखा तो फिर क़ौम को सुनाकर उसी तरीक़े पर

फ़रमाया कि (तुम्हारे ख़्यालात के मुताबिक़) यह मेरा रब है? और यह तो सबसे बड़ा है, मगर इस बड़े की हक़ीक़त व हैसियत भी जल्द ही तुम्हारे सामने आ जायेगी। चुनाँचे सूरज भी अपने वक़्त पर गुरूब हो गया तो क़ौम पर आख़िरी हुज्जत पूरी करने के बाद अब असल हक़ीक़त को वाज़ेह तौर पर बयान फ़रमा दिया किः

يٰقَوْمِ اِنِّىْ بَرِىْٓءٌ مِّمَّا تُشْرِكُوْنَ.

यानी ऐ मेरी क़ौम! मैं तुम्हारे इन मुश्रिकाना ख़्यालात से बेज़ार हूँ, कि तुमने ख़ुदा तआ़ला की मख़्लूक़ात को ही ख़ुदाई का शरीक बना रखा है।

उसके बाद इस हक़ीक़त को बतला दिया कि मेरा और तुम्हारा रब (पालने वाला) उन तमाम मख़्लूक़ात में से कोई नहीं हो सकता जो ख़ुद अपने वजूद में दूसरे की मोहताज हैं, और हर वक़्त हर पल चढ़ने उतरने और निकलने छुपने की तब्दीली में घिरी हुई हैं, बल्कि हमारा सब का रब वह है जिसने आसमानों और ज़मीन और उनमें पैदा होने वाली तमाम मख़्लूक़ात को पैदा किया है। इसलिये मैंने अपना रुख़ तुम्हारे ख़ुद गढ़े और तैयार किये हुए सब बुतों और बदलने व प्रभावित होने वाले सितारों से फेरकर सिर्फ़ एक ख़ुदा वह्दहू ला शरी-क लहू की तरफ़ कर लिया है, और मैं तुम्हारी तरह शिर्क करने वालों में से नहीं हूँ।

मुनाज़रे के इस वाक़िए में हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने पैग़म्बराना समझ व नसीहत से काम लेकर एक बार ही में उनके सितारों को पूजने को ग़लत या गुमराही नहीं फ़रमाया, बल्कि एक ऐसा अन्दाज़ इख़्तियार किया जिससे हर अ़क़्लमन्द इनसान का दिल व दिमाग़ ख़ुद मुतास्सिर होकर हक़ीक़त को पहचान ले। हाँ बुत-परस्ती के ख़िलाफ़ बात करने में शुरू ही में सख़्ती इख़्तियार फ़रमाई और अपने बाप और पूरी क़ौम के गुमराही पर होना साफ़ तौर पर बयान कर दिया। वजह यह थी कि बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) का नामाक़ूल और गुमराही होना बिल्कुल वाज़ेह और खुला हुआ था, बख़िलाफ़ सितारों की पूजा के कि उसकी गुमराही इतनी वाज़ेह और स्पष्ट नहीं थी।

यहाँ यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने सितारों की पूजा के ख़िलाफ़ अपनी क़ौम के सामने जो दलील बयान फ़रमायी है उसका हासिल यह है कि जो चीज़ अदलती-बदलती रहती हो और उसके हालात अदल-बदल होते रहते हों, और वह अपनी हरकतों में किसी दूसरी ताक़त के ताबे हो, वह हरगिज़ इस लायक़ नहीं कि उसको अपना रब क़रार दें। दलील देने के इस अन्दाज़ में सितारों के निकलने, छुपने और बीच की तमाम हालतों से दलील पकड़ी जा सकती थी कि वे अपनी हरकतों (चाल वग़ैरह) में ख़ुदमुख़्तार नहीं, किसी के हुक्म के ताबे एक ख़ास चाल पर चल रहे हैं, लेकिन हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने इन तमाम हालात व कैफ़ियतों में से तर्क देने के लिये उन सितारों के छुपने को पेश किया, क्योंकि उनका गुरूब (छुपना और अस्त होना) अ़वाम की नज़रों में एक तरह से उनका ज़वाल (ख़ात्मा) समझा जाता है, और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का दलील देने और समझाने का आ़म अन्दाज़ वह होता है जो अ़वाम के ज़ेहनों पर असर डालने वाला हो। वे फ़ल्सफ़ियाना तथ्यों और वास्तविकताओं के

पीछे ज़्यादा नहीं पड़ते, बल्कि आम ज़ेहनों के मुताबिक़ ख़िताब फ़रमाते हैं। इसलिये उन सितारों की बेबसी और बेअसर होना साबित करने के लिये उनके गुरूब होने को पेश किया, वरना उनके बेबस और बेक़ुदरत होने पर तो उनके निकलने और उदय होने से भी दलील दी जा सकती थी, और उसके बाद गुरूब (छुपने और अस्त होने) से पहले जितनी तब्दीलियाँ पेश आती हैं उनसे भी इस पर दलील पकड़ी जा सकती है।

इस्लाम के प्रचारकों के लिये चन्द हिदायतें

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के मुनाज़रे (बहस करने) के इस अन्दाज़ से उलेमा और इस्लामी प्रचारकों के लिये चन्द अहम हिदायतें हासिल हुईः अव्वल यह कि क़ौमों की तब्लीग़ व सुधार में न हर जगह सख़्ती मुनासिब है न हर जगह नर्मी, बल्कि हर एक का एक मौक़ा और एक हद है। चुनाँचे बुत-परस्ती के मामले में हज़रत ख़लीलुल्लाह ने सख़्त अलफ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये हैं, क्योंकि उसकी गुमराही आम देखने में आने वाली चीज़ है, और सितारें की पूजा के मामले में ऐसे सख़्त अलफ़ाज़ इस्तेमाल नहीं फ़रमाये, बल्कि एक ख़ास तदबीर से मामले की हक़ीक़त को क़ौम के ज़ेहन में बैठाया, क्योंकि ग्रहों और सितारों का बेबस और बेइख़्तियार होना इतना वाज़ेह और खुला हुआ नहीं था जितना खुद अपने आप तैयार किये हुए बुतों का। इससे मालूम हुआ कि अवाम अगर किसी ऐसी ग़लती में मुब्तला हों जिसका ग़लती और गुमराही होना आम नज़रों में वाज़ेह न हो तो आलिम और मुबल्लिग़ (इस्लामी प्रचारक) को चाहिये कि सख़्ती के बजाय उनके शुब्हात को दूर करने की तदबीर करे।

दूसरी हिदायत इसमें यह है कि हक़ और हक़ीक़त के इज़हार के लिये इसमें हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने क़ौम को यूँ ख़िताब नहीं किया कि तुम ऐसा करो, बल्कि अपना हाल बतला दिया कि मैं तो इन निकलने और छुपने के चक्कर में रहने वाली चीज़ों को माबूद क़रार नहीं दे सकता, इसलिये मैंने अपना रुख़ एक ऐसी हस्ती की तरफ़ कर लिया है जो इन सब चीज़ों को पैदा करने वाली और पालने वाली है। मक़सद तो यह था कि तुमको भी ऐसा ही करना चाहिये, मगर हकीमाना अन्दाज़ में स्पष्ट तौर पर ख़िताब से परहेज़ फ़रमाया, ताकि वे ज़िद पर न आ जायें। इससे मालूम हुआ कि सुधारक और मुबल्लिग़ (इस्लामी प्रचारक) का सिर्फ़ यह काम नहीं कि हक़ बात को जिस तरह चाहे कह डाले, बल्कि उस पर लाज़िम है कि ऐसे अन्दाज़ से कहे जो लोगों के लिये असरदार और प्रभावी हो।

الَّذِينَ آمَنُوا وَلَمْ يَلْبِسُوا إِيمَانَهُم بِظُلْمٍ أُولَٰئِكَ

لَهُمُ الْأَمْنُ وَهُم مُّهْتَدُونَ ﴿٨٢﴾ وَتِلْكَ حُجَّتُنَا آتَيْنَاهَا إِبْرَاهِيمَ عَلَىٰ قَوْمِهِ ۚ نَرْفَعُ دَرَجَاتٍ مَّن نَّشَاءُ ۗ

إِنَّ رَبَّكَ حَكِيمٌ عَلِيمٌ ﴿٨٣﴾ وَوَهَبْنَا لَهُ إِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ ۚ كُلًّا هَدَيْنَا ۚ وَنُوحًا هَدَيْنَا مِن قَبْلُ ۖ وَمِن ذُرِّيَّتِهِ دَاوُودَ

وَسُلَيْمَانَ وَأَيُّوبَ وَيُوسُفَ وَمُوسَىٰ وَهَارُونَ ۚ وَكَذَٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿٨٤﴾ وَزَكَرِيَّا وَيَحْيَىٰ وَعِيسَىٰ وَإِلْيَاسَ ۖ

كُلٌّ مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ ۙ وَاِسْمٰعِيْلَ وَالْيَسَعَ وَيُوْنُسَ وَ لُوْطًا ۚ وَكُلًّا فَضَّلْنَا عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ۙ وَمِنْ اٰبَآئِهِمْ وَ
ذُرِّيّٰتِهِمْ وَاِخْوَانِهِمْ ۚ وَاجْتَبَيْنٰهُمْ وَهَدَيْنٰهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۝ ذٰلِكَ هُدَى اللّٰهِ يَهْدِيْ بِهٖ مَنْ
يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖ ۚ وَلَوْ اَشْرَكُوْا لَحَبِطَ عَنْهُمْ مَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝ اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحُكْمَ وَ
النُّبُوَّةَ ۚ فَاِنْ يَّكْفُرْ بِهَا هٰٓؤُلَآءِ فَقَدْ وَكَّلْنَا بِهَا قَوْمًا لَّيْسُوْا بِهَا بِكٰفِرِيْنَ ۝

अल्लज़ी-न आमनू व लम् यल्बिसू ईमानहुम् बिज़ुल्मिन् उलाइ-क लहुमुल्-अम्नु व हुम् मुह्तदून (82) ❁
व तिल्-क हुज्जतुना आतैनाहा इब्राही-म अ़ला क़ौमिही, नर्फ़अ़ु द-रजातिम् मन्-नशा-उ, इन्-न रब्ब-क हकीमुन् अ़लीम (83) व वहब्ना लहू इस्हा-क़ व यअ़्क़ू-ब, कुल्लन् हदैना व नूहन् हदैना मिन् क़ब्लु व मिन् ज़ुर्रिय्यतिही दावू-द व सुलैमा-न व अय्यू-ब व यूसु-फ़ व मूसा व हारू-न, व कज़ालि-क नज्ज़िल् मुह्सिनीन (84) व ज़-करिय्या व यह्या व अ़ीसा व इल्या-स कुल्लुम् मिनस्सालिहीन (85) व इस्माअ़ी-ल वल्य-स-अ़ व यूनु-स व लूतन्, व कुल्लन् फ़ज़्ज़ल्ना अ़लल् आ़लमीन (86) व मिन् आबाइहिम् व ज़ुर्रिय्यातिहिम् व

जो लोग यक़ीन ले आये और नहीं मिला दिया उन्होंने अपने यक़ीन में कोई नुक़सान, उन्हीं के वास्ते है दिल का सुकून और वही हैं सीधी राह पर। (82) ❁
और यह हमारी दलील है जो कि हमने दी थी इब्राहीम को उसकी क़ौम के मुक़ाबले में। दर्जे बुलन्द करते हैं हम जिसके चाहें, तेरा रब हिक्मत वाला है, जानने वाला। (83) और बख़्शा हमने इब्राहीम को इस्हाक़ और याक़ूब, सबको हमने हिदायत दी, और नूह को हिदायत की हमने उन सबसे पहले और उसकी औलाद में सुलैमान और अय्यूब और यूसुफ़ और मूसा और हारून को, और हम इसी तरह बदला दिया करते हैं नेक काम वालों को। (84) और ज़करिया और यहया और ईसा और इलियास को, सब हैं नेकबख़्तों में। (85) और इस्माईल और अल-यसअ़ और यूनुस को और लूत को, और सब को हमने बुज़ुर्गी दी सारे जहान वालों पर। (86) और हिदायत की हमने बाज़ों को उनके बाप-दादाओं में से और उनकी

इख़्वानिहिम् वज्तबैनाहुम् व हदैनाहुम् इला सिरातिम् मुस्तक़ीम (87) ज़ालि-क हुदल्लाहि यह्दी बिही मंय्यशा-उ मिन् अिबादिही, व लौ अश्रकू ल-हबि-त अ़न्हुम् मा कानू यअ्मलून (88) उला-इकल्लज़ी-न आतैनाहुमुल्-किता-ब वल्हुक्-म वन्नुबुव्व-त फ़-इंय्यक्फ़ुर् बिहा हा-उला-इ फ़-क़द् वक्कल्ना बिहा क़ौमल्लैसू बिहा बिकाफ़िरीन (89)	औलाद में से और भाईयों में से, और उनको हमने पसन्द किया और सीधी राह चलाया। (87) यह अल्लाह की हिदायत है इस पर चलाता है जिसको चाहे अपने बन्दों में से, और अगर ये लोग शिर्क करते तो यक़ीनन ज़ाया हो जाता जो कुछ इन्होंने किया था। (88) यही लोग थे जिनको दी हमने किताब और शरीअ़त और नुबुव्वत, फिर अगर इन बातों को न मानें मक्का वाले तो हमने इन बातों के लिये मुक़र्रर कर दिये हैं ऐसे लोग जो इनसे इनकार करने वाले नहीं हैं। (89)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

जो लोग (अल्लाह पर) ईमान रखते हैं और अपने (इस) ईमान को शिर्क के साथ नहीं मिलाते, ऐसों ही के लिए (क़ियामत में) अमन है और वही (दुनिया में सीधे) रास्ते पर (चल रहे) हैं। (और वे सिर्फ़ एक अल्लाह को मानने वाले हैं, बख़िलाफ़ मुश्रिकीन के कि अगरचे एक तरह से वे भी ख़ुदा पर ईमान रखते हैं क्योंकि ख़ुदा के क़ायल हैं, लेकिन शिर्क भी करते हैं जिससे शरई ईमान का इनकार हो जाता है। जब एक अल्लाह को मानने वाले क़ाबिले अमन हैं सो इस सूरत में ख़ुद तुम डरो, न कि मुझको डराते हो, हालाँकि न तुम्हारे ख़ुदा इस क़ाबिल कि उनसे डरा जाये, न मैंने कोई काम डर का किया, और न दुनिया का ख़ौफ़ क़ाबिले एतिबार। और तुम्हारी हालत तीनों एतिबार से ख़ौफ़ और डरने के क़ाबिल है)।

और यह (दलील जो इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने तौहीद पर क़ायम की थी) हमारी (दी हुई) हुज्जत (दलील) थी जो हमने इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) को उनकी क़ौम के मुक़ाबले में दी थी। (जब हमारी दी हुई थी तो यक़ीनन आला दर्जे की थी और इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की क्या ख़ुसूसियत है) हम (तो) जिसको चाहते हैं (इल्मी व अ़मली) मर्तबों में बढ़ा देते हैं (चुनाँचे तमाम नबियों को दर्जों की यह बुलन्दी अ़ता फ़रमाई) बेशक आपका रब बड़ा हिक्मत वाला, बड़ा इल्म वाला है (कि हर एक का हाल और सलाहियत जानता है और हर एक के मुनासिब उसको कमाल अ़ता फ़रमाता है)। और (हमने जैसा इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को ज़ाती इल्म व अ़मल का कमाल दिया, इसी तरह अतिरिक्त कमाल भी दिया कि उनके बड़ों और औलाद में से बहुतों को कमाल दिया, चुनाँचे) हमने उनको (एक बेटा) इस्हाक़ और (एक पोता) याक़ूब (दिया, और इससे

दूसरी औलाद की नफ़ी नहीं होती, और दोनों साहिबों में से) हर एक को (हक़ रास्ते की) हमने हिदायत की। और (इब्राहीम से) पहले ज़माने में हमने नूह (अलैहिस्सलाम) को (जिनका इब्राहीम अलैहिस्सलाम के पुर्खों में होना मशहूर है और असल की बड़ाई उसकी नस्ल में भी प्रभावी होती है, हक़ रास्ते की) हिदायत की, और उन (यानी इब्राहीम) की औलाद (चाहे वह औलाद लुग़वी या उर्फ़ी या शरई) में से (आख़िर तक जितनों का ज़िक्र है सब को हक़ रास्ते की हिदायत की, यानी) दाऊद (अलैहिस्सलाम) को और (उनके बेटे) सुलैमान (अलैहिस्सलाम) को और अय्यूब (अलैहिस्सलाम) को और यूसुफ़ (अलैहिस्सलाम) को और मूसा (अलैहिस्सलाम) को और हारून (अलैहिस्सलाम) को (हक़ रास्ते की हिदायत की), और (जब ये हिदायत पर चले तो हमने इनको बेहतरीन बदला भी दिया जैसे सवाब और अल्लाह की ज़्यादा निकटता, और जिस तरह नेक कामों पर उनको जज़ा दी) इसी तरह हम नेक काम करने वालों को बदला दिया करते हैं।

और साथ ही (हमने हक़ रास्ते की हिदायत की) ज़करिया (अलैहिस्सलाम) को और (उनके बेटे) यह्या (अलैहिस्सलाम) को और ईसा (अलैहिस्सलाम) को और इलियास (अलैहिस्सलाम) को, और ये सब (हज़रात) पूरे शाईस्ता "यानी तहज़ीब वाले और अख़्लाक़ व मुरव्वत वाले नेक" लोगों में थे। और (हमने सही रास्ते की हिदायत की) इस्माईल (अलैहिस्सलाम) को और यसअ् (अलैहिस्सलाम) को और यूनुस (अलैहिस्सलाम) को और लूत (अलैहिस्सलाम) को, और (इनमें से) हर एक को (उन ज़मानों के) तमाम जहान वालों पर हमने (नुबुव्वत से) फ़ज़ीलत दी और साथ ही इन (ज़िक्र शुदा हज़रात) के कुछ बाप-दादों को और कुछ औलाद को और कुछ भाईयों को (हक़ रास्ते की हमने हिदायत की), और हमने इन (सब) को मक़बूल बनाया और हमने इन सब को सही रास्ते (यानी दीने हक़) की हिदायत की।

(और वह दीन जिसकी इन सब को हिदायत हुई थी) अल्लाह की (जानिब से जो) हिदायत (होती है) वह यही (दीन) है, अपने बन्दों में से जिसको चाहे इसकी हिदायत (यानी मन्ज़िल पर पहुँचाने की सूरत में) करता है, (चुनाँचे अब जो लोग मौजूद हैं उनको भी इसी की हिदायत इस मायने में हुई कि उनको सही रास्ता दिखा दिया, फिर मन्ज़िल पर पहुँचना या न पहुँचना उनका काम है, मगर उनमें से कुछ ने उसको छोड़कर शिर्क इख़्तियार कर लिया) और (शिर्क इस क़द्र नापसन्द चीज़ है कि अम्बिया के अलावा दूसरे लोग तो किस गिनती में हैं) अगर (थोड़ी देर को मान लें कि) ये (उपर्युक्त अम्बिया) हज़रात भी (नऊज़ु बिल्लाह) शिर्क करते तो जो कुछ ये (नेक) आमाल किया करते थे उनके वह सब बेकार हो जाते।

(आगे नुबुव्वत के मसले की तरफ़ इशारा है कि) ये (जितने ज़िक्र हुए) ऐसे थे कि हमने इन (के मजमूए) को (आसमानी) किताब और हिक्मत (के उलूम) और नुबुव्वत अता की थी, (तो नुबुव्वत ताज्जुब की चीज़ नहीं जो यह काफ़िर लोग आपका इनकार कर रहे हैं, क्योंकि मिसालें मौजूद हैं) सो अगर (नज़ीर और मिसाल मौजूद होने पर भी) ये लोग (आपकी) नुबुव्वत का इनकार करें तो (आप ग़म न कीजिए क्योंकि) हमने इसके (मानने के) लिए बहुत-से ऐसे लोग मुक़र्रर कर दिए हैं (यानी मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा) जो इसके इनकारी नहीं हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

उपर्युक्त आयतों में से शुरू की आयतों में हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का मुनाज़रा अपने बाप आज़र और नमरूद की पूरी क़ौम के साथ मज़कूर था। जिसमें उनकी बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) और सितारों को पूजने के ख़िलाफ़ यक़ीनी सुबूत पेश करने के बाद उक्त आयतों में अपनी क़ौम को ख़िताब फ़रमाया कि तुम मुझे अपने बुतों से डराते हो कि मैं इनका इनकार करूँगा तो ये मुझे बरबाद कर देंगे, हालाँकि न बुतों में इसकी क़ुदरत है और न मैंने कोई काम ऐसा किया है जिसके नतीजे में मुझे कोई मुसीबत पहुँचे, बल्कि डरना तुम्हें चाहिये कि तुमने जुर्म भी ऐसा सख़्त किया है कि अल्लाह की मख़्लूक़ बल्कि मख़्लूक़ की बनाई हुई चीज़ों को ख़ुदा का शरीक और बराबर कर दिया, और फिर ख़ुदा तआ़ला का अ़लीम व ख़बीर और क़ादिरे मुतलक़ होना भी किसी अ़क्ल वाले से छुपा नहीं तो अब तुम जो सोचकर बतलाओ कि अमन और इत्मीनान का हक़दार कौन है, और डरना किसको चाहिये?

इन आयतों में से पहली आयत में यह मज़मून इरशाद फ़रमाया कि अ़ज़ाब से सुरक्षित व मुत्मईन सिर्फ़ वही लोग हो सकते हैं जो अल्लाह पर ईमान लायें, और फिर अपने ईमान में किसी ज़ुल्म की मिलावट न करें। हदीस में है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो सहाबा-ए-किराम सहम गये और अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! हम में से कौन ऐसा है जिसने कोई ज़ुल्म अपनी जान पर गुनाह के ज़रिये नहीं किया, और इस आयत में अ़ज़ाब से बचने की यह शर्त है कि ईमान के साथ कोई ज़ुल्म न किया हो, तो फिर हमारी निजात की क्या सबील है? हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम आयत का सही मतलब नहीं समझे, आयत में ज़ुल्म से मुराद शिर्क है जैसा कि एक दूसरी आयत में इरशाद है:

اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيْمٌ.

इसलिये आयत की मुराद यह है कि जो शख़्स ईमान लाये और फिर उसमें अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात में किसी को शरीक न ठहराये, वह अ़ज़ाब से महफ़ूज़ और हिदायत पाने वाला है।

ख़ुलासा यह है कि बुतों, पत्थरों, दरख़्तों, सितारों, दरियाओं को पूजने वाली मख़्लूक़ अपनी बेवक़ूफ़ी से इन चीज़ों को इख़्तियार वाला समझती है, और इनकी इबादत छोड़ने से इसलिये डरती है कि कहीं ये चीज़ें हमें कोई नुक़सान न पहुँचा दें। हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने गुर की बात उनको बतलाई की ख़ुदा तआ़ला जो तुम्हारे हर काम से बाख़बर भी है और तुम्हारे हर भले-बुरे पर पूरी तरह क़ादिर भी है उससे तो तुम डरते नहीं, कि उसकी नाफ़रमानी करने से कोई मुसीबत आ जायेगी, और जिन चीज़ों में न इल्म है न क़ुदरत उनसे ऐसे डरते हो? यह सिवाय बेअ़क्ली के और क्या है। डरना सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला से चाहिये, और जिसका उस पर ईमान हो वह किसी ख़तरे में नहीं।

इस आयत में 'व लम् यल्बिसू ईमानहुम बिज़ुल्मिन्' फ़रमाया है। इसमें ज़ुल्म से तो रसूले

करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की वज़ाहत के मुवाफ़िक़ शिर्क मुराद है, आ़म गुनाह मुराद नहीं। लेकिन लफ़्ज़ "बिज़ुल्मिन्" को बिना ख़ास किये लाकर अ़रबी भाषा के ग्रामर के मुताबिक़ आ़म कर दिया, जो हर क़िस्म के शिर्क को शामिल है, और लफ़्ज़ "लम् यल्बिसू" लबि-स से बना है जिसके एक मायने हैं "ओढ़ना" या गड्मड् कर देना, और आयत की मुराद यह है कि जो आदमी अपने ईमान में किसी क़िस्म का शिर्क मिला दे यानी ख़ुदा तआ़ला को कमाल की तमाम सिफ़ात के साथ मानने के बावजूद ग़ैरुल्लाह को भी उनमें से कुछ सिफ़ात को अपने अन्दर रखने वाला समझे वह इस अमन व ईमान से ख़ारिज है।

इस आयत से मालूम हुआ कि शिर्क सिर्फ़ यही नहीं कि खुले तौर पर मुश्रिक व बुत-परस्त हो जाये, बल्कि वह आदमी भी मुश्रिक है जो अगरचे किसी बुत की पूजा-पाट नहीं करता और इस्लाम का कलिमा पढ़ता है, मगर किसी फ़रिश्ते या रसूल या किसी वलीयुल्लाह को अल्लाह की कुछ ख़ास सिफ़ात का शरीक ठहराये। इसमें उन अ़वाम के लिये सख़्त तंबीह (चेतावनी) है जो औलिया-अल्लाह और उनके मज़ारों को हाजत पूरी करने वाला समझते हैं और अ़मलन उनको ऐसा समझते हैं कि गोया ख़ुदाई के इख़्तियारात उनके हवाले कर दिये गये हैं। अल्लाह तआ़ला हमें इससे अपनी पनाह में रखे।

दूसरी आयत में हक़ तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने जो अपनी क़ौम के मुनाज़रे में खुली फ़तह पाई और उनको लाजवाब कर दिया, यह हमारा ही इनाम था कि उनको सही नज़रिया अ़ता किया, फिर उसके स्पष्ट दलाईल बतला दिये। किसी को अपनी अ़क़्ल व समझ या तक़रीर और बयान के ज़ोर पर नाज़ न होना चाहिये, बग़ैर ख़ुदा तआ़ला की इमदाद के किसी का बेड़ा पार नहीं होता, हक़ीक़तों और तथ्यों को समझने के लिये और उन तक रसाई पाने के लिये सिर्फ़ इनसानी अ़क़्ल काफ़ी नहीं, जिसको हर दौर में देखा जाता रहा है कि बड़े-बड़े माहिर फ़लॉस्फ़र गुमराही के रास्ते पर पड़ जाते हैं और बहुत से अनपढ़ जाहिल सही अ़क़ीदे और नज़रिये के पाबन्द हो जाते हैं। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने ख़ूब फ़रमाया है:

बेइनायात-ए-हक़ व ख़ासान-ए-हक़
गर मलक बाशद सियाह हस्तश वरक़

कि जब तक अल्लाह और अल्लाह वालों की इनायत और नज़रे करम न हो अगर कोई फ़रिश्ता भी हो तब भी उसका नामा-ए-आमाल सियाह ही रहेगा। **हिन्दी अनुवादक**

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

نَرْفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنْ نَّشَآءُ.

यानी हम जिसके चाहते हैं दर्जे बुलन्द कर देते हैं। इसमें इशारा है कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को जो पूरे आ़लम में और क़ियामत तक आने वाली नस्लों में ख़ास इ़ज़्ज़त व मक़ाम अ़ता हुआ कि यहूदी, ईसाई, मुसलमान, बुद्धमत वाले वग़ैरह सब के सब उनके ऊँचे

मक़ाम और पवित्रता के क़ायल और उनका सम्मान करते चले आये हैं, यह भी हमारा ही फ़ज़्ल व इनाम है, किसी की मेहनत व कोशिश का इसमें दख़ल नहीं।

इसके बाद की छह आयतों में सत्रह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की सूची शुमार की गयी है जिनमें से कुछ हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के बाप-दादा (पुर्खे) हैं और अक्सर उनकी औलाद हैं, और कुछ उनके भाई-भतीजे हैं। इन आयतों में एक तरफ़ तो इन हज़रात का हिदायत पर होना, नेक लोगों में होना, सही रास्ते पर होना बयान फ़रमाया गया है, और यह बतलाया गया है कि इनको अल्लाह तआ़ला ने ही अपने दीन की ख़िदमत के लिये चुना और क़ुबूल फ़रमा लिया है, और दूसरी तरफ़ यह जतलाया गया है कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह की राह में अपने बाप, बिरादरी और वतन को छोड़ दिया था तो अल्लाह तआ़ला ने आख़िरत के बुलन्द दर्जे और हमेशा की और बेमिसाल राहतों से पहले दुनिया में भी उनको अपनी बिरादरी से बेहतर बिरादरी और वतन से बेहतर वतन अ़ता फ़रमाया, और यह बड़ा सम्मान अ़ता फ़रमाया कि हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के बाद क़ियामत तक जितने अम्बिया व रसूल भेजे गये वे सब उनकी औलाद में हैं। एक शाख़ा जो हज़रत इस्हाक़ अ़लैहिस्सलाम से चली उसमें बनी इस्राईल के तमाम अम्बिया आये और दूसरी शाख़ा जो हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम से चली उसमें तमाम इनसानों के सरदार और नुबुव्वत के सिलसिले को ख़त्म करने वाले हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पैदा हुए और यह सब हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की औलाद व नस्ल हैं। इससे यह भी मालूम हुआ कि अगरचे इ़ज़्ज़त व ज़िल्लत और निजात व अ़ज़ाब का असल मदार इनसान के अपने ज़ाती आमाल पर है लेकिन बाप-दादा (यानी पूर्वजों) में किसी नबी, वली का होना या औलाद में आ़लिमों और नेक लोगों का होना भी एक बड़ी नेमत है, और इससे भी इनसान को फ़ायदा पहुँचता है।

इन सत्रह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम में जिनकी फ़ेहरिस्त उक्त आयतों में दी गयी है एक हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम तो हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की पूर्वज हैं, बाक़ी सब को उनकी औलाद फ़रमाया है:

وَمِنْ ذُرِّيَّتِهٖ دَاوٗدَ وَسُلَيْمٰنَ. الاٰية.

इसमें एक शुब्हा तो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के बारे में हो सकता है कि वह बग़ैर बाप के पैदा होने की वजह से हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की पुत्री-औलाद में से हैं, यानी पोते नहीं बल्कि नवासे हैं, तो उनको औलाद व नस्ल कहना कैसे सही होगा? इसका जवाब ज़्यादातर उलेमा व फ़ुक़हा ने यह दिया है कि लफ़्ज़ ज़ुर्रियत पोतों और नवासों दोनों को शामिल है, और इसी से दलील पकड़ी है कि हज़रत इमाम हसन और इमाम हुसैन रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ुर्रियत (नस्ल) में दाख़िल हैं।

दूसरा शुब्हा हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम के बारे में है कि वह औलाद में नहीं बल्कि भतीजे हैं। लेकिन इसका जवाब भी स्पष्ट है कि उर्फ़ (आ़म बोलचाल) में चचा को बाप और भतीजे को

बेटा कहना बहुत ही आम जानी-पहचानी बात है।

ज़िक्र हुई आयतों में हज़रत ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम पर अल्लाह के इनामात बयान फ़रमा कर एक तरफ़ तो क़ुदरत का यह क़ानून बतला दिया गया कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की राह में अपनी महबूब (प्यारी और पसन्दीदा) चीज़ों को क़ुरबान करता है अल्लाह तआ़ला उसको दुनिया में भी उससे बेहतर चीज़ें अ़ता फ़रमा देते हैं। दूसरी तरफ़ मक्का के मुश्रिकों को यह हालात सुनाकर इस तरफ़ हिदायत करना मक़सूद है कि तुम लोग मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बात नहीं मानते तो देखो जिनको तुम भी सब बड़ा मानते हो यानी हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम और उनका पूरा ख़ानदान वे सब यही कहते चले आये हैं कि क़ाबिले इबादत सिर्फ़ एक यानी हक़ तआ़ला की ज़ात है, उसके साथ किसी को इबादत में शरीक करना या उसकी मख़्सूस सिफ़ात का साझी बतलाना कुफ़्र व गुमराही है। तुम लोग ख़ुद अपने अ़क़ीदे और मानी हुई बातों के अनुसार भी मुल्ज़िम हो।

आठवीं आयत में यही मज़मून इरशाद फ़रमाया गया और उसके आख़िर में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली देने के लिये इरशाद फ़रमायाः

فَإِنْ يَّكْفُرْ بِهَا هٰٓؤُلَآءِ فَقَدْ وَكَّلْنَا بِهَا قَوْمًا لَّيْسُوْا بِهَا بِكٰفِرِيْنَ.

यानी अगर आपके कुछ मुख़ातब आपकी बात नहीं मानते और पहले गुज़रे तमाम अम्बिया की हिदायतें पेश कर देने के बावजूद इनकार ही पर तुले हुए हैं तो आप ग़म न करें, क्योंकि हमने आपकी दावत व हिदायत को मानने और अपनाने के लिये एक बड़ी क़ौम को बना और तैयार कर रखा है, वे कुफ़्र व इनकार के पास न जायेंगे। इसमें नबी करीम के मुबारक ज़माने में मौजूद मुहाजिरीन व अन्सार सहाबा भी दाख़िल हैं और क़ियामत तक आने वाले मुसलमान भी। और यह आयत इन सब लोगों के लिये फ़ख़्र व सम्मान की बात है कि अल्लाह तआ़ला ने इनको तारीफ़ के मक़ाम में ज़िक्र फ़रमाया है। या अल्लाह हमें भी उन्हीं लोगों में शामिल फ़रमा और उन्हीं के साथ हमारा हश्र फ़रमा। आमीन

اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ هَدَى اللّٰهُ فَبِهُدٰىهُمُ

اقْتَدِهْ ۚ قُلْ لَّآ اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا ۚ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْعٰلَمِيْنَ ۝ وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖٓ اِذْ قَالُوْا مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِّنْ شَيْءٍ ۗ قُلْ مَنْ اَنْزَلَ الْكِتٰبَ الَّذِيْ جَآءَ بِهٖ مُوْسٰى نُوْرًا وَّهُدًى لِّلنَّاسِ تَجْعَلُوْنَهٗ قَرَاطِيْسَ تُبْدُوْنَهَا وَتُخْفُوْنَ كَثِيْرًا ۚ وَعُلِّمْتُمْ مَّا لَمْ تَعْلَمُوْٓا اَنْتُمْ وَلَآ اٰبَآؤُكُمْ ۗ قُلِ اللّٰهُ ۙ ثُمَّ ذَرْهُمْ فِيْ خَوْضِهِمْ يَلْعَبُوْنَ ۝ وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ مُبٰرَكٌ مُّصَدِّقُ الَّذِيْ بَيْنَ يَدَيْهِ وَلِتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا ۗ وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ وَهُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُوْنَ ۝ وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ قَالَ اُوْحِيَ اِلَيَّ وَلَمْ يُوْحَ اِلَيْهِ شَيْءٌ وَّمَنْ قَالَ سَاُنْزِلُ مِثْلَ مَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ ۗ وَلَوْ تَرٰٓى اِذِ الظّٰلِمُوْنَ فِيْ غَمَرٰتِ

الْمَوْتِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ بَاسِطُوْٓا اَيْدِيْهِمْ ۚ اَخْرِجُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ اَلْيَوْمَ تُجْزَوْنَ عَذَابَ الْهُوْنِ بِمَا كُنْتُمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ وَكُنْتُمْ عَنْ اٰيٰتِهٖ تَسْتَكْبِرُوْنَ ۝ وَلَقَدْ جِئْتُمُوْنَا فُرَادٰى كَمَا خَلَقْنٰكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّتَرَكْتُمْ مَّا خَوَّلْنٰكُمْ وَرَاۗءَ ظُهُوْرِكُمْ ۚ وَمَا نَرٰى مَعَكُمْ شُفَعَاۗءَكُمُ الَّذِيْنَ زَعَمْتُمْ اَنَّهُمْ فِيْكُمْ شُرَكٰۗؤُا ۭ لَقَدْ تَّقَطَّعَ بَيْنَكُمْ وَضَلَّ عَنْكُمْ مَّا كُنْتُمْ تَزْعُمُوْنَ ۝

उला-इकल्लज़ी-न हदल्लाहु फबिहुदाहु-मुक्तदिह्, क़ुल् ला अस्अलुकुम् अ़लैहि अज्रन्, इन् हु-व इल्ला ज़िक्रा लिल्-आ़लमीन (90) ❁

ये वे लोग थे जिनको हिदायत की अल्लाह ने, सो तू चल उनके तरीक़े पर। तू कह दे कि मैं नहीं माँगता तुमसे इसपर कुछ मज़दूरी, यह तो सिर्फ़ नसीहत है जहान के लोगों को। (90) ❁

व मा क़-दरुल्ला-ह हक़्-क़ क़द्रिही इज़् क़ालू मा अन्ज़लल्लाहु अ़ला ब-शरिम् मिन् शैइन्, क़ुल् मन् अन्ज़लल्-किताबल्लज़ी जा-अ बिही मूसा नूरंव्-व हुदल्-लिन्नासि तज्अ़लूनहू क़रातीं-स तुब्दूनहा व तुख़्फ़ू-न कसीरन् व अ़ुल्लिम्तुम् मा लम् तअ़्लमू अन्तुम् व ला आबाउकुम्, क़ुलिल्लाहु सुम्-म ज़र्हुम् फ़ी ख़ौज़िहिम् यल्अ़बून (91) व हाज़ा किताबुन् अन्ज़ल्नाहु मुबारकुम्-मुसद्दिक़ुल्लज़ी बै-न यदैहि व लितुन्ज़ि-र उम्मल्क़ुरा व मन् हौलहा, वल्लज़ी-न युअ्मिनू-न बिल्आख़िरति युअ्मिनू-न बिही व

और नहीं पहचाना उन्होंने अल्लाह को पूरा पहचानना, जब कहने लगे कि नहीं उतारी अल्लाह ने किसी इनसान पर कोई चीज़, तू पूछ कि किसने उतारी वह किताब जो मूसा लेकर आया था, रोशन थी और हिदायत थी लोगों के वास्ते, जिसको तुमने पन्ने-पन्ने करके लोगों को दिखलाया और बहुत सी बातों को तुमने छुपा रखा था और तुमको सिखला दीं जिनको न जानते थे तुम और न तुम्हारे बाप दादा, तू कह दे कि अल्लाह ने उतारी फिर छोड़ दे उनको अपनी ख़ुराफ़ात में खेलते रहें। (91) और यह क़ुरआन किताब है जो कि हमने उतारी बरकत वाली, तस्दीक़ करने वाली उनकी जो इससे पहली हैं, और ताकि डरा दे मक्का वालों को और उसके आस-पास वालों को और जिनको यक़ीन है

हुम् अ़ला सलातिहिम् युहाफ़िज़ून (92) व मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबन् औ क़ा-ल ऊहि-य इलय्-य व लम् यू-ह इलैहि शैउंव्-व मन् क़ा-ल स-उन्ज़िलु मिस्-ल मा अन्ज़लल्लाहु, व लौ तरा इज़िज़्ज़ालिमू-न फ़ी ग़-मरातिल्-मौति वल्मलाइ-कतु बासितू ऐदीहिम् अख़्रिजू अन्फ़ु-सकुम्, अल्यौ-म तुज्ज़ौ-न अ़ज़ाबल्हूनि बिमा कुन्तुम् तक़ूलू-न अ़लल्लाहि ग़ैरल्-हक़्क़ि व कुन्तुम् अ़न् आयातिही तस्तक्बिरून (93) व ल-क़द् जिअ्तुमूना फ़ुरादा कमा ख़लक़्नाकुम् अव्व-ल मर्रतिंव्-व तरक्तुम् मा ख़व्वल्नाकुम् वरा-अ ज़ुहूरिकुम् व मा नरा म-अ़कुम् शु-फ़अ़ा-अकुमुल्लज़ी-न ज़अ़म्तुम् अन्नहुम् फ़ीकुम् शु-रका-उ, लक़त्त-क़त्त-अ़ बैनकुम् व ज़ल्-ल अ़न्कुम् मा कुन्तुम् तज़्अुमून (94) ✿

आख़िरत का, वे इस पर ईमान लाते हैं और वे हैं अपनी नमाज़ से ख़बरदार (यानी नमाज़ की हिफ़ाज़त करने वाले)। (92) और उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन जो बाँधे अल्लाह पर बोहतान या कहे कि मुझ पर वही उतरी और उस पर वही नहीं उतरी कुछ भी, और जो कहे कि मैं भी उतारता हूँ उसके जैसा जो अल्लाह ने उतारा, और अगर तू देखे जिस वक़्त कि ज़ालिम हों मौत की सख़्तियों में और फ़रिश्ते अपने हाथ बढ़ा रहे हैं कि निकालो अपनी जानें, आज तुमको बदले में मिलेगा ज़िल्लत का अ़ज़ाब इस सबब से कि तुम कहते थे अल्लाह पर झूठी बातें और उसकी आयतों से तकब्बुर करते थे। (93) और यक़ीनन तुम हमारे पास आ गये एक-एक होकर जैसे हमने पैदा किया था तुमको पहली बार, और छोड़ आये तुम जो कुछ असबाब हमने तुमको दिया था अपनी पीठ के पीछे, और हम नहीं देखते तुम्हारे साथ सिफ़ारिश करने वालों को जिनको तुम बतलाया करते थे कि उनका तुम में साझा है, लाज़िमी तौर पर कट गया है तुम्हारा ताल्लुक़ और जाते रहे जो दावे कि तुम किया करते थे। (94) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और हम जो ग़म न करने को और सब्र करने को कहते हैं तो वजह यह है कि सब अम्बिया ने ऐसा ही किया है, चुनाँचे) ये हज़रात (जिनका ज़िक्र हुआ है) ऐसे थे जिनको अल्लाह तआ़ला ने (सब्र की) हिदायत की थी, सो (इस बारे में) आप भी उन्हीं के तरीक़े (यानी सब्र) पर चलिये (चूँकि आपको भी इसकी हिदायत की गयी है, क्योंकि इनसे न आपको नफ़ा न कोई

नुक़सान है जिसकी वजह से ग़म और बेसब्री हो। और इस मज़मून के इज़्हार के वास्ते इनसे तब्लीग़ के वक़्त) आप (यह भी) कह दीजिए कि मैं तुमसे इस (क़ुरआन की तब्लीग़) पर कोई मुआवज़ा नहीं चाहता (जिसके मिलने से नफ़ा और न मिलने से नुक़सान हो, बिना किसी ग़र्ज़ के नसीहत करता हूँ)। यह क़ुरआन तो तमाम जहान वालों के वास्ते सिर्फ़ एक नसीहत है (जिसको मानने से तुम्हारा ही नफ़ा और न मानने से तुम्हारा ही नुक़सान है)।

और इन (इनकार करने वाले) लोगों ने अल्लाह तआ़ला की जैसी क़द्र पहचानना वाजिब थी वैसी क़द्र न पहचानी, जबकि (मुँह भरकर) यूँ कह दिया कि अल्लाह ने किसी इनसान पर कोई चीज़ (यानी कोई किताब) अभी नाज़िल नहीं की। (यह कहना क़द्र न पहचानना इसलिये है कि इससे नुबुव्वत के मसले का इनकार लाज़िम आता है, और नुबुव्वत का इनकारी अल्लाह तआ़ला को झुठलाता है, और हक़ की तस्दीक़ वाजिब है। पस इसमें ज़रूरी क़द्र पहचानने में ख़लल डालना हुआ। यह तो तहक़ीक़ी जवाब था, और इल्ज़ामी चुप कर देने वाला जवाब देने के लिये) आप (उनसे) यह कहिए कि (यह तो बतलाओ कि) वह किताब किसने नाज़िल की है जिसको मूसा (अ़लैहिस्सलाम) लाए थे? (यानी तौरात, जिसको तुम भी मानते हो) जिसकी यह कैफ़ियत है कि वह (ख़ुद) नूर (की तरह स्पष्ट) है और (जिनकी हिदायत के लिये वह आई थी उन) लोगों के लिए वह (शरीअ़त का बयान करने की वजह से) हिदायत है, जिसको तुमने (अपनी नफ़्सानी इच्छाओं के लिये) अलग-अलग पन्नों में रख छोड़ा है, जिन (में जितने और पन्नों को चाहा उन) को ज़ाहिर कर देते हो (जिसमें तुम्हारे मतलब के ख़िलाफ़ कोई बात न हुइ) और बहुत-सी बातों को (जो अपने मतलब के ख़िलाफ़ हैं, यानी जिन पन्नों में वो लिखी हुई हैं उनको) छुपाते हो। और (इस किताब की बदौलत) तुमको बहुत-सी ऐसी बातें तालीम की गईं जिनको (किताब मिलने से पहले) न तुम (यानी बनी इस्राईल की क़ौम जो कि आयत के उतरने के वक़्त मौजूद थी) जानते थे और न तुम्हारे (क़रीबी सिलसिले के) बड़े (जानते थे। मतलब यह कि जिस तौरात की यह हालत है कि उसको अव्वल तो तुम मानते हो, दूसरे नूर व हिदायत होने की वजह से मानने के क़ाबिल भी है, तीसरे हर वक़्त तुम्हारे इस्तेमाल में है, अगरचे वह इस्तेमाल शर्मनाक है, लेकिन उसकी वजह से इनकार की गुंजाईश तो नहीं रही, चौथे तुम्हारे हक़ में वह बड़ी नेमत और मन्नत की चीज़ है, उसी की बदौलत आ़लिम बने बैठे हो, इस हैसियत से भी इसमें इनकार की गुंजाईश नहीं, यह बतलाओ कि उसको किसने नाज़िल किया है। और चूँकि इस सवाल का जवाब ऐसा मुतैयन है कि वे लोग भी इसके सिवा कोई जवाब न देते, इसलिये ख़ुद ही जवाब देने के लिये हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हुक्म है कि) आप (वही) कह दीजिए कि अल्लाह तआ़ला ने (उक्त किताब को) नाज़िल फ़रमाया है (और इससे उनका आ़म दावा बातिल हो गया)। फिर (यह जवाब सुनाकर) उनको उनके मश्ग़ले में बेहूदगी के साथ लगा रहने दीजिए (यानी आपकी ड्यूटी ख़त्म हो गयी, न मानें तो आप फ़िक्र में न पड़ें हम ख़ुद ही समझ लेंगे)।

और (जिस तरह तौरात हमारी नाज़िल की हुई किताब थी इसी तरह) यह (क़ुरआन) भी (जिसको यहूदी लोग उपर्युक्त क़ौल से झुठलाना चाहते हैं) ऐसी ही किताब है जिसको हमने

(आप पर) नाज़िल किया है, जो बड़ी (ख़ैर व) बरकत वाली है (चुनाँचे इस पर ईमान लाना और अ़मल करना कामयाबी और दोनों जहान में फ़ायदे की चीज़ है और) अपने से पहली (नाज़िल हुई) किताबों (के अल्लाह की ओर से नाज़िल होने) की तस्दीक़ करने वाली है, (सो हमने इस क़ुरआन को मख़्लूक़ के नफ़े और पहले नाज़िल हुई आसमानी किताबों की तस्दीक़ के लिये नाज़िल फ़रमाया) और (इसलिये नाज़िल फ़रमाया) ताकि आप (इसके ज़रिये से) मक्का वालों को और उसके आस-पास वालों को (ख़ुसूसियत के साथ अल्लाह के अ़ज़ाब से जो कि मुख़ालफ़त पर होगा) डराएँ (और वैसे सार्वजनिक रूप से भी डरायें) ताकि आप दुनिया वालों के लिये डराने वाले हो जायें। और (आपके डराने के बाद अगरचे सब ईमान न लायें लेकिन) जो लोग आख़िरत का (पूरा) यक़ीन रखते हैं (जिससे अ़ज़ाब का अन्देशा हो जाये और उससे बचने की फ़िक्र पड़ जाये और हमेशा निजात के रास्ते की तलब और हक़ के मुतैयन करने की धुन लग जाये, चाहे किसी किताबी दलील से या अ़क्ल की रहनुमाई से), ऐसे लोग (तो) इस (क़ुरआन) पर ईमान ले (ही) आते हैं और (ईमान व यक़ीन के साथ इसके आमाल के भी पाबन्द होते हैं, क्योंकि अ़ज़ाब से निजात का पूरे मजमूए पर वायदा किया गया है। चुनाँचे) वे अपनी नमाज़ की पूरी पाबन्दी करते हैं (और जब इस इबादत पर जो कि हर रोज़ पाँच बार आती है और भारी गुज़रने वाली है, पाबन्दी करते हैं तो दूसरी इबादतों के जो कि कभी-कभी आती और आसान हैं और अच्छी तरह पाबन्द होंगे। हासिल यह कि किसी के मानने न मानने की फ़िक्र न कीजिए, जो अपना भला चाहेंगे मान लेंगे, जो न चाहेंगे न मानेंगे। आप अपना काम कीजिए)।

और उस शख़्स से ज़्यादा कौन ज़ालिम होगा जो अल्लाह तआ़ला पर झूठ तोहमत लगाये (और पूरी तरह नुबुव्वत या ख़ास नुबुव्वत का इनकारी हो, जैसा कि ऊपर कुछ लोगों का क़ौल आया है कि 'अल्लाह ने किसी इनसान पर कुछ नाज़िल नहीं किया' और कुछ का क़ौल था कि 'क्या अल्लाह तआ़ला ने एक इनसान को रसूल बनाकर भेजा है?) या यूँ कहे कि मुझ पर वही आती है, हालाँकि उसके पास किसी भी बात की वही नहीं आई (जैसे मुसैलमा कज़्ज़ाब वग़ैरह) और (इसी तरह उससे भी ज़्यादा ज़ालिम कौन होगा) जो शख़्स (यूँ) कहे कि जैसा कलाम अल्लाह तआ़ला ने (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दावे के अनुसार उन पर) नाज़िल किया है उसी तरह का मैं भी ला (-कर दिखा-) ता हूँ, (जैसा कि नज़र या अ़ब्दुल्लाह कहता था जिसका ज़िक्र हुआ। ग़र्ज़ कि ये सब लोग बड़े ज़ालिम हैं) और (ज़ालिमों का हाल यह है कि) अगर आप (उनको) उस वक़्त देखें (तो बड़ा हौलनाक मन्ज़र दिखलाई दे) जबकि ये ज़ालिम लोग (जिनका ज़िक्र हुआ) मौत की (रूहानी) सख़्तियों में (गिरफ़्तार) होंगे और (मौत के) फ़रिश्ते (जो मलकुल-मौत के मददगार हैं इनकी रूह निकालने के वास्ते इनकी तरफ़) अपने हाथ बढ़ा रहे होंगे (और सख़्ती के ज़ाहिर करने को यूँ कहते जाते होंगे कि) हाँ (जल्दी) अपनी जानें निकालो, (कहाँ बचाते फिरते थे। देखो) आज (मरने के साथ ही) तुमको ज़िल्लत की सज़ा दी जाएगी (यानी जिसमें जिस्मानी तकलीफ़ भी हो और रूहानी ज़िल्लत भी हो), इस सबब से कि तुम अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे झूठी (-झूठी) बातें बकते थे। (जैसे यही कि अल्लाह ने किसी पर कुछ

नहीं उतारा, या यह कि ऐसा कलाम तो मेरे ऊपर भी नाज़िल होता है, या यह कि ऐसी वही तो मैं भी ला सकता हूँ। वग़ैरह-वग़ैरह) और तुम उसकी (यानी अल्लाह तआ़ला की) आयतों (के क़ुबूल करने) से (जो कि हिदायत का सबब थीं) घमण्ड करते थे।

(यह कैफ़ियत तो मौत के वक़्त होगी) और (जब क़ियामत का दिन होगा तो अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे) तुम हमारे पास (यार व मददगार से) अकेले-अकेले (होकर) आ गये (और इस हालत से आये) जिस तरह हमने तुमको पहली बार (दुनिया में) पैदा किया था (कि न बदन पर कपड़ा न पाँव में जूता) और जो कुछ हमने तुमको (दुनिया में साज़ व सामान) दिया था (जिस पर तुम भूले बैठे थे) उसको अपने पीछे ही छोड़ आए, (साथ कुछ न ला सके। मतलब यह कि माल व दौलत के भरोसे पर न रहना, यह सब यहीं रह जायेगा) और (तुममें जो कुछ को अपने झूठे माबूदों की शफ़ाअ़त का भरोसा था सो) हम तो तुम्हारे साथ (इस वक़्त) तुम्हारे उन शफ़ाअ़त करने वालों को नहीं देखते (जिससे साबित हुआ कि वास्तव में भी वे तुम्हारे साथ नहीं हैं), जिनके बारे में तुम दावे रखते थे कि वे तुम्हारे मामले में (हमारे) शरीक हैं (कि तुम्हारा इबादत का जो मामला हमारे साथ होता था वही उनके साथ होता था), वाक़ई तुम्हारे (और उनके) बीच में तो ताल्लुक़ ख़त्म हो गया (कि आज तुम उनसे बेज़ार और वे तुमसे बेज़ार, शफ़ाअ़त क्या करेंगे), और वह तुम्हारा दावा (जो ऊपर ज़िक्र हुआ) सब तुमसे गया-गुज़रा हुआ (कुछ काम का निकला, तो अब तुम पर पूरी-पूरी मुसीबत पड़ेगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में हज़रत ख़लीलुल्लाह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम पर अल्लाह के अ़ज़ीमुश्शान इनामात और उनके बुलन्द दर्जों का ज़िक्र था, जिनमें पूरी इनसानी नस्ल को उमूमन और मक्का वालों और अ़रब के लोगों को विशेष रूप से अ़मली सूरत में यह दिखलाना मक़सूद था कि जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की मुकम्मल इताअ़त को अपनी ज़िन्दगी का मक़सद बना ले और उसके लिये अपनी प्यारी व पसन्दीदा चीज़ों की क़ुरबानी पेश करे, जैसे हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने पेश की कि माँ-बाप और क़ौम व वतन सब को अल्लाह के लिये छोड़ दिया, फिर बैतुल्लाह के निर्माण की अ़ज़ीम ख़िदमत के लिये मुल्के शाम के हरेभरे इलाक़ों को छोड़कर मक्का के रेगिस्तान को इख़्तियार किया, बीवी और बच्चे को जंगल में छोड़कर चले जाने का हुक्म हुआ तो फ़ौरी तामील की, इक्लौते प्यारे बेटे की क़ुरबानी का हुक्म हुआ तो अपने इख़्तियार की हद तक उसकी मुकम्मल तामील करके दिखाई, ऐसे इताअ़त-गुज़ारों का असल बदला तो क़ियामत के बाद जन्नत ही में मिलेगा, लेकिन दुनिया में भी हक़ तआ़ला उनको वह मर्तबा और दौलत अ़ता फ़रमाते हैं जिसके सामने सारी दुनिया की दौलतें फीकी पड़ जाती हैं।

हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम व बिरादरी को अल्लाह के लिये छोड़ा तो इसके बदले में उनको अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की जमाअ़त मिली जो ज़्यादातर उनकी औलाद ही में हैं। इराक़ और शाम के वतन को छोड़ा तो अल्लाह का घर और अमन वाला शहर और

उम्मुल-क़ुरा यानी मक्का नसीब हुआ। उनकी क़ौम ने उनको ज़लील करना चाहा तो इसके बदले में उनको सारी दुनिया और क़ियामत तक आने वाली नस्लों का इमाम और पेशवा बना दिया कि दुनिया की मुख़्तलिफ़ क़ौमें और धर्म आपस के बड़े-बड़े मतभेदों और विवादों के बावजूद हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के सम्मान व आदर पर सहमत चले आये हैं।

इस सिलसिले में सत्रह अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की फ़ेहरिस्त शुमार की गयी थी जिनमें से ज़्यादातर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की औलाद व नस्ल में दाख़िल हैं, और यह बतलाया गया था कि ये सब वह बुज़ुर्ग हस्तियाँ हैं जिनको हक़ तआ़ला ने सारे आ़लम के इनसानों में से अपने दीन की ख़िदमत के लिये चुना और उनको सीधा रास्ता दिखलाया है।

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब फ़रमाकर मक्का वालों को सुनाया गया है कि किसी क़ौम के पूर्वज केवल पूर्वज (बाप-दादा) होने की हैसियत से पैरवी के क़ाबिल नहीं हो सकते, कि उनके हर क़ौल व फ़ेल को अनुसरणीय समझा जाये, जैसा कि उमूमन अ़रब के लोगों और मक्का वालों का ख़्याल था, बल्कि पैरवी और अनुसरण के लिये पहले यह जानना ज़रूरी है कि हम जिसकी पैरवी करते हैं वह ख़ुद भी हिदायत के सही रास्ते पर है या नहीं। इसलिये अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की एक मुख़्तसर फ़ेहरिस्त शुमार करके फ़रमाया गयाः

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ هَدَى اللَّهُ.

यानी यही वे लोग हैं जिनको अल्लाह ने हिदायत दी है। फिर फ़रमायाः

فَبِهُدَاهُمُ اقْتَدِهْ.

यानी आप भी इनकी हिदायत और काम के तरीक़े को इख़्तियार फ़रमायें।

इसमें एक हिदायत तो अ़रब वालों और तमाम उम्मत को यह है कि बाप-दादा की पैरवी की वहम-परस्ती को छोड़ें और ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से हिदायत याफ़्ता बुज़ुर्गों की पैरवी करें।

दूसरी हिदायत ख़ुद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है कि आप भी इन्हीं पहले गुज़रे अम्बिया का तरीक़ा इख़्तियार फ़रमायें।

यहाँ यह बात क़ाबिले ग़ौर है कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की शरीअ़तों में ऊपर के अहकाम में आंशिक इख़्तिलाफ़ात (भिन्नतायें) पहले भी होते रहे और इस्लामी शरीअ़त में भी उनसे भिन्न और अलग बहुत से अहकाम नाज़िल हुए हैं, तो फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पहले अम्बिया के तरीक़े पर चलने और अ़मल करने का क्या मतलब हुआ? दूसरी आयतों और हदीस की रिवायतों के पेशे नज़र इसका जवाब यह है कि यहाँ तमाम ऊपर के और आंशिक अहकाम में पहले अम्बिया का तरीक़-ए-कार इख़्तियार करने का हुक्म नहीं, बल्कि दीन की उसूली बातों- तौहीद, रिसालत और आख़िरत के मामलात में उनका तरीक़ा इख़्तियार करना मक़सूद है, जो किसी पैग़म्बर की शरीअ़त में अदल-बदल नहीं हुए। हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से लेकर ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक तमाम अम्बिया का यही एक

अ़क़ीदा और तरीक़ा रहा है, बाक़ी ऊपर के अहकाम जिनमें कोई तब्दीली नहीं की गयी, उनमें भी तरीक़ा-ए-कार संयुक्त रहा और जिनमें हालात के बदलने की वजह से वक़्त और हिक्मत के तक़ाज़े से कोई दूसरा हुक्म दिया गया उसकी तामील की गयी।

यही वजह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मामूल यह था कि जब तक आपको वही के ज़रिये कोई ख़ास हिदायत न आती थी तो आप ऊपर के मामलात (अहकाम व मसाईल) में भी पिछले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के तरीक़े पर चलते थे। (तफ़सीरे मज़हरी वग़ैरह)

इसके बाद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़ुसूसियत के साथ एक ऐसे ऐलान का हुक्म दिया गया जिसका ऐलान पहले तमाम अम्बिया भी करते चले आये हैं, वह यह किः

قُلْ لَّآ اَسْئَلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْعٰلَمِيْنَ.

यानी मैं तुम्हारी ज़िन्दगी संवारने के लिये जो हिदायतें तुम्हें दे रहा हूँ इस पर तुमसे कोई फ़ीस और मुआ़वज़ा नहीं लेता, तुम इसको मान लो तो मेरा कोई नफ़ा नहीं, और न मानो तो कोई नुक़सान नहीं। यह तो तमाम दुनिया जहान के लोगों के लिये नसीहत व ख़ैरख़्वाही का पैग़ाम है। तालीम व तब्लीग़ पर कोई मुआ़वज़ा (बदला) न लेना तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम में हमेशा संयुक्त मामला चला आया है, और तब्लीग़ के प्रभावी व असरदार होने में इसका बड़ा दख़ल है।

दूसरी आयत उन लोगों के जवाब में आई है जिन्होंने यह कह दिया था कि अल्लाह तआ़ला ने कभी किसी बशर (इनसान) पर कोई किताब नाज़िल ही नहीं फ़रमाई। यह किताबों और रसूलों का क़िस्सा सिरे से ग़लत है।

इसके कहने वाले अगर मक्का के बुत-परस्त (मूर्तियों के पुजारी) हैं जैसा कि अ़ल्लामा इब्ने कसीर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया, तो मामला ज़ाहिर है कि वे किसी किताब और नबी के क़ायल न थे, और अगर यहूदी हैं जैसा कि दूसरे मुफ़स्सिरीन ने यही क़ौल इख़्तियार फ़रमाया और आयत के मज़मून का सिलसिला बज़ाहिर इसकी ताईद में है तो फिर उनका ऐसा कहना सिर्फ़ ग़ुस्से और झुंझलाहट का नतीजा था, जो ख़ुद उनके भी मज़हब के ख़िलाफ़ था। इमाम बग़वी रहमतुल्लाहि अ़लैहि की एक रिवायत में है कि इसी लिये यहूदी भी उस शख़्स से नाराज़ हो गये जिसने यह बात कही थी, और इसी ग़लती की वजह से उसको धर्मगुरु बनने के ओ़हदे से हटा दिया था।

इस आयत में हक़ तआ़ला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से फ़रमाया कि जिन लोगों ने यह बेहूदा बात कही उन्होंने हक़ तआ़ला को पहचानने की तरह नहीं पहचाना, वरना यह गुस्ताख़ाना बात उनके मुँह से न निकलती। आप उन लोगों से जो बिल्कुल ही आसमानी किताबों का इनकार करते हैं यह कह दीजिए कि अगर बात यही है कि अल्लाह तआ़ला ने किसी इनसान पर कोई किताब नहीं भेजी, तो यह बतलाओ कि यह तौरात जिसको तुम भी मानते हो और इसी की वजह से क़ौम के चौधरी बने बैठे हो, यह किसने नाज़िल की है? और साथ ही यह भी

बतला दिया कि तुम वह टेढ़े चलने वाले हो कि जिस किताब तौरात को तुम आसमानी किताब कहते और मानते हो उसके साथ भी तुम्हारा यह मामला है कि तुमने उसको बंधी हुई किताब के बजाय अलग-अलग पन्नों में लिख छोड़ा है, ताकि जब तुम्हारा जी चाहे किसी पन्ने को बीच से निकाल दो, और उसमें लिखे अहकाम का इनकार कर दो। जैसे तौरात की वो आयतें जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की निशानियों और सिफ़ात के बारे में थीं उनको तुमने निकाल दिया है। आयत के आख़िरी जुमले 'तज्अ़लूनहू क़रातीस' का यही मतलब है। क़रातीस क़िरतास की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं पन्ना और वरक़, काग़ज़।

इसके बाद उन्हीं लोगों को मुख़ातब करके फ़रमायाः

وَعُلِّمْتُمْ مَّالَمْ تَعْلَمُوْٓا اَنْتُمْ وَلَآ اٰبَآؤُكُمْ.

यानी क़ुरआन के ज़रिये तुम्हें तौरात व इंजील से ज़ायद भी वह इल्म दिया गया है जिसकी न तुम्हें इससे पहले ख़बर थी, न तुम्हारे बाप-दादों को।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

قُلِ اللّٰهُ ثُمَّ ذَرْهُمْ فِىْ خَوْضِهِمْ يَلْعَبُوْنَ.

यानी इस सवाल का जवाब कि जब अल्लाह ने कोई किताब ही नहीं भेजी तो तौरात किसने नाज़िल की? वे तो क्या देंगे, आप ही फ़रमा दीजिए कि अल्लाह तआ़ला ने ही नाज़िल फ़रमाई है। और जब उन पर हुज्जत पूरी हो गयी तो आपका काम ख़त्म हो गया, अब वे जिस बेहूदा और बेकार काम में लगे हुए हैं, उनको उनके हाल पर छोड़ दीजिए।

अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल होने वाली किताबों के बारे में उन पर हुज्जत पूरी करने के बाद तीसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَهٰذَا كِتٰبٌ اَنْزَلْنٰهُ مُبٰرَكٌ مُّصَدِّقُ الَّذِىْ بَيْنَ يَدَيْهِ وَلِتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا.

यानी जिस तरह तौरात का ख़ुदा तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल होना उन्हें भी तस्लीम है इसी तरह यह क़ुरआन भी हमने नाज़िल किया है, और इसके हक़ व सच्चा होने के वास्ते उनके लिये यह गवाही और सुबूत काफ़ी है कि क़ुरआन उन सब चीज़ों की तस्दीक़ करता है जो तौरात व इंजील में नाज़िल हुई हैं। और तौरात व इंजील के बाद इसके नाज़िल करने की ज़रूरत इसलिये हुई कि ये दोनों किताबें तो बनी इस्राईल के लिये भेजी गयी थीं, उनकी दूसरी शाख़ा बनी इस्माईल जो अ़रब कहलाते हैं और उम्मुल-क़ुरा यानी मक्का और उसके आस-पास बसते हैं, उनकी हिदायत के लिये कोई ख़ास पैग़म्बर और किताब अब तक न आई थी, अब यह क़ुरआन उनके लिये ख़ुसूसन और पूरे आ़लम के लिये उमूमन नाज़िल किया गया है। मक्का मुअ़ज़्ज़मा को क़ुरआने करीम ने उम्मुल-क़ुरा फ़रमाया, यानी तमाम शहरों और बस्तियों की जड़ और बुनियाद। इसकी वजह यह है कि तारीख़ी रिवायतों के मुताबिक़ इस कायनात की पैदाईश में ज़मीन की पैदाईश की शुरूआत यहीं से हुई है, साथ ही यह कि सारे आ़लम का क़िब्ला और इबादत में तवज्जोह का मर्कज़ और केन्द्र यही है। (तफ़सीरे मज़हरी)

'उम्मुल-क़ुरा' के साथ 'व मन् हौलहा' फ़रमाया, यानी मक्का के चारों तरफ़, जिसमें पूरी दुनिया- पूरब व पश्चिम और उत्तर व दक्षिण दाख़िल है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ يُؤْمِنُوْنَ بِهٖ وَهُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُوْنَ.

यानी जो लोग आख़िरत पर ईमान रखते हैं वे क़ुरआन पर भी ईमान लाते हैं और अपनी नमाज़ों की पाबन्दी करते हैं। इसमें यहूदियों और मुश्रिक लोगों की एक संयुक्त बीमारी पर तंबीह की गयी है कि यह बेफ़िक्री कि जिसको चाहा माना जिसको चाहा रद्द कर दिया और उसके ख़िलाफ़ मोर्चा बना लिया, यह इस रोग का असर है कि वे आख़िरत पर ईमान नहीं रखते। जिस शख़्स का आख़िरत और हिसाब के दिन पर ईमान होगा उसको ख़ुदा का ख़ौफ़ ज़रूर इस तरफ़ मुतवज्जह करेगा कि दलीलों में ग़ौर करे, और हक़ बात को क़ुबूल करने में बाप-दादा की जाहिलीयत वाली रस्मों की परवाह न करे।

और अगर ग़ौर किया जाये तो आख़िरत से बेफ़िक्री ही तमाम बीमारियों की जड़ है। कुफ़्र व शिर्क भी इसी का नतीजा होता है और सारे गुनाह और नाफ़रमानियाँ भी। आख़िरत पर यक़ीन रखने वाले से अगर कभी कोई ग़लती और गुनाह हो भी जाता है तो उसका दिल तड़प उठता है, और आख़िरकार तौबा करके आगे के लिये गुनाह से बचने का पुख़्ता अ़हद करता है। और हक़ीक़त में ख़ौफ़े ख़ुदा और आख़िरत की फ़िक्र ही वह चीज़ है जो इनसान को इनसान बनाती और बुराईयों से रोक कर रखती है। इसी लिये क़ुरआने करीम की कोई सूरत बल्कि कोई रुकूअ़ भी शायद इससे ख़ाली नहीं कि जिसमें आख़िरत की फ़िक्र की तरफ़ मुतवज्जह न किया गया हो। या अल्लाह! हमें भी इस आख़िरत की फ़िक्र में से हिस्सा नसीब फ़रमा। आमीन

إِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى ۖ يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ
الْحَيِّ ۚ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ ﴿٩٥﴾ فَالِقُ الْاِصْبَاحِ ۚ وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا وَّالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا ۚ ذٰلِكَ
تَقْدِيْرُ الْعَزِيْزِ الْعَلِيْمِ ﴿٩٦﴾ وَهُوَ الَّذِيْ جَعَلَ لَكُمُ النُّجُوْمَ لِتَهْتَدُوْا بِهَا فِيْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ۗ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ
لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ﴿٩٧﴾ وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ فَمُسْتَقَرٌّ وَّمُسْتَوْدَعٌ ۗ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ
يَّفْقَهُوْنَ ﴿٩٨﴾

इन्नल्ला-ह फ़ालिक़ुल्-हब्बि वन्नवा, युख़्रिजुल् हय्-य मिनल्-मय्यिति व मुख़्रिजुल्-मय्यिति मिनल्-हय्यि, ज़ालिकुमुल्लाहु फ़-अन्ना	अल्लाह है कि फोड़ निकालता है दाना और गुठली, निकालता है मुर्दे से ज़िन्दा और निकालने वाला है ज़िन्दे से मुर्दा, यह है अल्लाह, फिर तुम किधर बहके जाते

तुअ्फ़कून (95) फ़ालिक़ुल्-इस्बाहि व ज-अ़लल्लै-ल स-कनंव्-वश्शम्-स वल्क़-म-र हुस्बानन्, ज़ालि-क तक़्दीरुल् अ़ज़ीज़िल्-अ़लीम (96) व हुवल्लज़ी ज-अ-ल लकुमुन्नुजू-म लितह्तदू बिहा फ़ी ज़ुलुमातिल्-बर्रि वल्बह्रि, क़द् फ़स्सल्नल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यअ्लमून (97) व हुवल्लज़ी अन्श-अकुम् मिन् नफ़्सिंव्-वाहि-दतिन् फ़मुस्त-क़र्रुंव्-व मुस्तौदअुन्, क़द् फ़स्सल्नल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यफ़्क़हून (98)	हो? (95) फोड़ निकालने वाला सुबह की रोशनी का, और उसने रात बनाई आराम को और सूरज और चाँद हिसाब के लिये, यह अन्दाज़ा रखा हुआ है ताक़तवर ख़बरदार का। (96) और उसी ने बना दिये तुम्हारे वास्ते सितारे कि उनके माध्यम से रास्ता मालूम करो अंधेरों में जंगल और दरिया के, यक़ीनन हमने खोल कर बयान कर दिये पते उन लोगों के लिये जो जानते हैं। (97) और वही है जिसने तुम सब को पैदा किया एक शख़्स से, फिर एक तो तुम्हारा ठिकाना है और एक अमानत रखे जाने की जगह, यक़ीनन हमने खोलकर सुना दिये पते उस क़ौम को जो सोचते हैं। (98)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक अल्लाह तआ़ला फाड़ने वाला है दाने और गुठलियों को (यानी ज़मीन में दबाने के बाद जो दाना या गुठली फूटती है यह अल्लाह ही का काम है)। वह जानदार (चीज़) को बेजान (चीज़) से निकाल लाता है (जैसे आदमी के बदन से वीर्य का क़तरा ज़ाहिर होता है) और वह बेजान (चीज़) को जानदार (चीज़) से निकालने वाला है। अल्लाह यही है (जिसकी ऐसी क़ुदरत है), सो तुम (उसकी इबादत छोड़कर) कहाँ (ग़ैरुल्लाह की इबादत की तरफ़) उल्टे चले जा रहे हो? वह (अल्लाह तआ़ला) सुबह (सादिक़) का (रात में से) निकालने वाला है (यानी रात ख़त्म हो जाती है और सुबह सादिक़ ज़ाहिर होती है) और उसने रात को राहत की चीज़ बनाई है (कि सब थके-थकाये सोकर आराम पाते हैं) और सूरज और चाँद (की रफ़्तार) को हिसाब से रखा है। (यानी उनकी रफ़्तार निर्धारित है जिससे समय के तय और मुक़र्रर करने में सहूलियत हो) यह (कि हिसाब से उनकी रफ़्तार हो) तय की हुई बात है ऐसी ज़ात की जो कि क़ादिर (-ए-मुतलक़) है (कि इस तरह हरकत पैदा करने पर उसको क़ुदरत है और) बड़े इल्म वाला है (कि इस रफ़्तार की मस्लेहतें और हिक्मतें जानता था इसलिये इस ख़ास अन्दाज़ पर मुक़र्रर कर दिया)। और वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम्हारे (फ़ायदे के) लिए सितारों को पैदा किया (और वह फ़ायदा यह है) ताकि तुम उनके ज़रिये से (रात के) ख़ुश्की और दरिया के अंधेरों में रास्ता मालूम कर सको,

बेशक हमने (ये तौहीद व इनाम की) ये दलीलें ख़ूब खोल-खोलकर बयान कर दी हैं, (और अगरचे पहुँचेंगी सब को मगर लाभदायक) उन (ही) लोगों के लिए (होंगी) जो (भले-बुरे की कुछ) ख़बर रखते हैं (क्योंकि ग़ौर ऐसे ही लोग किया करते हैं)। और वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुम (सब) को (असल में) एक शख़्स से (जो कि आदम अ़लैहिस्सलाम हैं) पैदा किया, फिर (आगे पैदाईश व नस्ल बढ़ने का इस तरह सिलसिला जारी चला आ रहा है कि तुममें से हर शख़्स के लिये माद्दे के तौर पर) एक जगह ज़्यादा रहने की है (यानी माँ का पेट) और एक जगह थोड़ा रहने की (यानी बाप की पीठ, जैसा कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं 'मिम्-बैनिस्सुल्बि')। बेशक हमने (तौहीद व इनाम की) ये दलीलें (भी) ख़ूब खोल-खोलकर बयान कर दी हैं (सब के लिये, मगर इनका नफ़ा भी पहले के अनुसार) उन (ही) लोगों के लिए (होगा) जो समझ-बूझ रखते हैं (यह तफ़सील हो गयी ज़िन्दा को निकालने की मुर्दे से और मुर्दे को निकालने की ज़िन्दे से)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में काफ़िरों और मुश्रिकों की हठधर्मी तथा तथ्यों, हक़ीक़तों और परिणामों से ग़फ़लत का तज़किरा था, और इन सब ख़राबियों की असल बुनियाद ख़ुदा तआ़ला और उसके बेमिसाल इल्म व क़ुदरत से बेख़बरी है। इसलिये ज़िक्र हुई चार आयतों में हक़ तआ़ला ने ग़ाफ़िल इनसान के इस रोग का इलाज इस तरह फ़रमाया है कि अपने बेपनाह इल्म और अ़ज़ीम क़ुदरत के चन्द नमूने और इनसान पर अपने इनामात व एहसानात का एक सिलसिला ज़िक्र फ़रमाया, जिनमें मामूली सा ग़ौर करने से हर सही फ़ितरत रखने वाला इनसान ख़ालिक़े कायनात की अ़ज़मत और बेमिसाल क़ुदरत का और इस बात का क़ायल हुए बग़ैर नहीं रह सकता कि ये अ़ज़ीमुश्शान कारनामे सारी कायनात में सिवाय ख़ुदा तआ़ला के किसी की क़ुदरत में नहीं।

पहली आयत में इरशाद फ़रमायाः

اِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى.

यानी अल्लाह तआ़ला फाड़ने वाला है दाने को और गुठलियों को। इसमें क़ुदरत का एक हैरत-अंगेज़ करिश्मा बतलाया गया है कि सूखी गुठली को फाड़कर उसके अन्दर से हरा-भरा पेड़-पौधा निकाल देना सिर्फ़ उसी पाक ज़ात का काम है जो इस कायनात को बनाने वाली है, इनसान की कोशिश व अ़मल को इसमें कोई दख़ल नहीं। काश्तकार की सारी कोशिशों का हासिल इससे ज़्यादा नहीं होता कि दाने और गुठली के अन्दर से जो नाज़ुक कौंपल ख़ुदा की क़ुदरत ने निकाली है उसकी राह से बाधायें और नुक़सान देने वाली चीज़ों को दूर कर दे। ज़मीन को हल वग़ैरह के ज़रिये नर्म करना, फिर ख़ाद डालना, पानी देना, इन सब कामों का असर ज़्यादा से ज़्यादा यही है कि निकलने वाली नाज़ुक कौंपल की राह में कोई रुकावट बाक़ी न रहे। बाक़ी असल काम कि दाना और गुठली फटकर उसमें से दरख़्त की कौंपल निकले और फिर उसमें रंग-बिरंग के अ़जीब व ग़रीब पत्ते और फिर ऐसे फल-फूल लगें कि इनसान की अ़क़्ल व दिमाग़ उसका एक पत्ता या एक पंखड़ी बनाने से आ़जिज़ है। इसमें ज़ाहिर है कि किसी इनसानी

अमल को दख़ल नहीं। इसी लिये क़ुरआन में एक दूसरी जगह इरशाद फ़रमायाः

اَفَرَءَيْتُمْ مَّا تَحْرُثُوْنَ. ءَاَنْتُمْ تَزْرَعُوْنَهٗ اَمْ نَحْنُ الزّٰرِعُوْنَ.

यानी क्या तुम उन दानों को नहीं देखते जिनको तुम मिट्टी में डाल देते हो कि उनको तुमने बोया और बनाया है या हमने?

दूसरा जुमला यह इरशाद फ़रमायाः

يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ الْحَيِّ.

यानी अल्लाह तआ़ला ही बेजान चीज़ों में से जानदार चीज़ों को पैदा करता है। बेजान से मुराद नुत्फ़ा (वीर्य का क़तरा) या अण्डा है, जिनसे इनसान और हैवानात की पैदाईश होती है। इसी तरह जानदारों से बेजान चीज़ें निकाल देता है। यहाँ बेजान चीज़ों से मुराद वही नुत्फ़ा और अण्डा है, कि वह जानदार चीज़ों से निकलता है।

इसके बाद फ़रमायाः

ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُوْنَ.

यानी ये सब काम सिर्फ़ एक अल्लाह तआ़ला के किये और बनाये हुए हैं। फिर यह जानते बूझते हुए तुम किस तरफ़ बहके चले जा रहे हो कि ख़ुद गढ़े और बनाये हुए बुतों को अपना मुश्किल हल करने वाला और हाजत पूरी करने वाला माबूद कहने लगे।

दूसरी आयत में इरशाद हैः

فَالِقُ الْاِصْبَاحِ.

'फ़ालिक़ु' के मायने फाड़ने वाला और 'इस्बाह' के मायने यहाँ सुबह के वक़्त के हैं। 'फ़ालिक़ुल-इस्बाहि' के मायने हैं फाड़ने वाला सुबह का। यानी गहरी अंधेरी की चादर को फाड़कर सुबह का निकालने वाला। यह भी उन कामों और आमाल में से है जिनमें जिन्नात व इनसान और सारी कायनात की क़ुव्वतें बेहक़ीक़त हैं, और हर आँखों वाला देखकर यह समझने पर मजबूर है कि रात की अंधेरी के बाद सुबह का उजाला पैदा करने वाला न कोई इनसान हो सकता है न फ़रिश्ता, न कोई दूसरी मख़्लूक़, बल्कि यह सिर्फ़ उस हस्ती का काम है जो सारे जहान की पैदा करने वाली और अक़्ल व समझ की हदों से ऊपर है।

मख़्लूक़ात के आराम के लिये रात की क़ुदरती और जबरी निर्धारण एक अज़ीम नेमत है

उसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا.

लफ़्ज़ 'सकन' सुकून से निकला है। हर ऐसी चीज़ को सकन कहा जाता है जिस पर पहुँच कर इनसान को सुकून व इत्मीनान और राहत हासिल हो। इसी लिये इनसान के रहने के घर को

क़ुरआन में 'सकन' फ़रमाया हैः

جَعَلَ لَكُمْ مِنْ بُيُوْتِكُمْ سَكَنًا.

क्योंकि इनसान का घर चाहे एक झोंपड़ी ही हो, वहाँ पहुँचकर इनसान को आदतन सुकून व राहत हासिल होती है। इसलिये इस जुमले के मायने यह हो गये कि अल्लाह तआला ने रात को हर जानदार के लिये सुकून व राहत की चीज़ बनाई है। 'फ़ालिक़ुल-इस्बाहि' (सुबह के फाड़ने वाले) में उन नेमतों का ज़िक्र था जो इनसान दिन के उजाले से हासिल करता है, रात की अंधेरी में नहीं हो सकती। उसके बादः

جَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا.

फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि जिस तरह दिन का उजाला एक अज़ीम नेमत है, कि उसके ज़रिये इनसान अपने सब कारोबार करता है, इसी तरह रात की अंधेरी को भी बुरा न जानो, वह भी एक बड़ी नेमत है, कि उसमें दिन भर का थका माँदा इनसान आराम करके इस क़ाबिल हो जाता है कि आने वाले कल में फिर ताज़गी और चुस्ती के साथ काम कर सके, वरना इनसानी फ़ितरत लगातार मेहनत को बरदाश्त नहीं कर सकती।

रात की अंधेरी को राहत के लिये मुतैयन कर देना एक मुस्तक़िल नेमत और अल्लाह तआला की ग़ालिब क़ुदरत का एक ख़ास प्रतीक व निशान है, मगर यह नेमत रोज़ाना बिना माँगे मिल जाती है इसलिये इनसान का ध्यान भी कभी नहीं जाता कि यह कितना बड़ा एहसान व इनाम है। ग़ौर कीजिए कि अगर हर शख़्स अपने इख़्तियार व इरादे से अपने आराम का वक़्त निर्धारित करता तो कोई सुबह को आठ बजे सोने का इरादा करता, कोई बारह बजे, कोई चार बजे और कोई रात के विभिन्न हिस्सों में, जिसका नतीजा यह होता कि रात-दिन के चौबीस घंटों में कोई भी ऐसा घंटा न आता जिसमें इनसानी कारोबार, मेहनत मज़दूरी, कारख़ाने और फ़ैक्ट्रियाँ न चल रही होतीं, जिसका लाज़िमी नतीजा यह होता कि सोने वालों के आराम में भी ख़लल आता और काम करने वालों के काम में भी। सोने वालों के आराम में काम करने वालों के शोर शराबे और खड़के व धमाके के ख़लल डालते और काम करने वालों के काम में उन लोगों की ग़ैर-हाज़िरी ख़लल डालती जो उस वक़्त सो रहे हैं। इसके अ़लावा सोने वालों के बहुत से वो काम रह जाते जो उनके सोने के वक़्त में ही हो सकते हैं। अल्लाह जल्ल शानुहू की ग़ालिब क़ुदरत ने न सिर्फ़ इनसान पर बल्कि हर जानदार पर रात के वक़्त नींद का ग़लबा ऐसा मुसल्लत कर दिया कि वह काम छोड़कर सो जाने के लिये मजबूर होता है। शाम होते ही हर परिन्दा, दरिन्दा और चौपाये अपने-अपने ठिकाने और घर का रुख़ करते हैं, हर इनसान जबरी तौर पर काम छोड़कर आराम करने की फ़िक्र में लगता है, पूरी दुनिया में एक सन्नाटा छा जाता है, रात की अंधेरी नींद और आराम में मददगार साबित होती है, क्योंकि आ़दतन ज़्यादा रोशनी में नींद नहीं आती।

ग़ौर कीजिए कि अगर सारी दुनिया की हुकूमतें और अ़वाम मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों

के ज़रिये सोने का कोई एक वक़्त मुक़र्रर करना चाहते तो अव्वल तो इसमें दुश्वारियाँ कितनी होतीं, दूसरे अगर सारे इनसान किसी समझौते के पाबन्द होकर एक निर्धारित वक़्त में सोया करते तो जानवरों को उस समझौते का पाबन्द कौन बनाता, और वे खुले फिरते तो सोने वाले इनसानों और उनके सामानों का क्या हश्र होता? यह अल्लाह जल्ल शानुहू ही की ग़ालिब क़ुदरत है जिसने जबरी तौर पर हर इनसान और हर जानदार पर एक निर्धारित वक़्त में नींद मुसल्लत करके इन अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों की ज़रूरत से बेनियाज़ कर दिया। फ़तबारकल्लाहु अह्सनुल् ख़ालिक़ीन।

सूरज और चाँद का हिसाब

इरशाद फ़रमायाः

وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا.

"हुस्बान" मस्दर है, हिसाब करने और गिनने के मायने में आता है। मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने सूरज व चाँद के निकलने व छुपने और उनकी रफ़्तार को एक ख़ास हिसाब से रखा है, जिसके ज़रिये इनसान सालों, महीनों, दिनों और घन्टों का बल्कि मिनटों और सैकिण्डों का हिसाब आसानी से लगा सकता है।

यह अल्लाह जल्ल शानुहू ही की ग़ालिब क़ुदरत का अ़मल है कि इन विशाल और अज़ीमुश्शान नूरानी कुरों (ग्रहों) और इनकी हरकतों को ऐसे स्थिर और मज़बूत अन्दाज़ से रखा है कि हज़ारों साल गुज़र जाने पर भी इनमें कभी एक मिनट या एक सैकिण्ड का फ़र्क़ नहीं आता। इनकी मशीनरी को न किसी वर्कशॉप की ज़रूरत पड़ती है, न पुर्ज़े घिसने और बदलने से कोई साबक़ा पड़ता है। ये दोनों नूर के कुरे अपने-अपने दायरे में एक निर्धारित रफ़्तार के साथ चल रहे हैं:

لَا الشَّمْسُ يَنْۢبَغِىْ لَهَآ اَنْ تُدْرِكَ الْقَمَرَ وَلَا الَّيْلُ سَابِقُ النَّهَارِ.

हज़ारों साल में भी इनकी रफ़्तार में एक सैकिण्ड का फ़र्क़ नहीं आता। अफ़सोस कि क़ुदरत के इस स्थिर और अपरिवर्तित सिस्टम ही से इनसान धोखा खा गया कि इन्हीं चीज़ों को अपने वजूद में मुस्तक़िल बल्कि माबूद व मक़सूद बना बैठा। अगर इनका यह निज़ाम कभी-कभी टूटा करता, इनकी मशीनरी दुरुस्त करने के लिये कुछ दिनों या घन्टों के अन्तराल (ब्रेक) हुआ करते तो इनसान समझ लेता कि यह मशीन ख़ुद-बख़ुद नहीं चल रही, बल्कि इन कुरों के स्थिर और न बदलने वाले निज़ाम ने इनसान की नज़रों को चकाचौंध कर दिया, और अपनी तरफ़ लगा लिया, यहाँ तक कि वह इसको भूल बैठा किः

कोई महबूब है इस पर्दा-ए-ज़ंगारी में

(यानी इस कारख़ाने के पीछे कोई इसका बनाने और चलाने वाला मौजूद है। हिन्दी अनुवादक)

आसमानी किताबें और अम्बिया व रसूल इसको इसी हक़ीक़त से आगाह करने के लिये नाज़िल हुए।

क़ुरआने करीम के इस इरशाद ने इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि सालों और महीनों का हिसाब सूरज से भी हो सकता है और चाँद से भी, दोनों ही अल्लाह जल्ल शानुहू के इनामात हैं। यह दूसरी बात है कि आम अनपढ़ दुनिया की सहूलत और उनको हिसाब किताब की उलझन से बचाने के लिये इस्लामी अहकाम में चाँद के महीने व साल इस्तेमाल किये गये, और चूँकि इस्लामी तारीख़ और इस्लामी अहकाम सब का मदार चाँद के हिसाब पर है इसलिये उम्मत पर फ़र्ज़ है कि वह इस हिसाब को कायम और बाकी रखे, दूसरे सूरज वग़ैरह के हिसाबात वग़ैरह अगर किसी ज़रूरत से इख़्तियार किये जायें तो कोई गुनाह नहीं, लेकिन चाँद के हिसाब को बिल्कुल नज़र-अन्दाज़ करना और मिटा देना बहुत बड़ा गुनाह है, जिससे इनसान को यह भी ख़बर न रहे कि रमज़ान कब आयेगा और ज़िलहिज्जा और मुहर्रम कब।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ذٰلِكَ تَقْدِيْرُ الْعَزِيْزِ الْعَلِيْمِ.

यानी यह हरकतों व रफ़्तार का हैरत-अंगेज़ स्थिर निज़ाम जिसमें कभी एक मिनट और सैकिण्ड का फ़र्क़ न आये, यह उसी पाक ज़ात की क़ुदरत का करिश्मा हो सकता है जो हर चीज़ पर ग़ालिब और ताक़त रखने वाली भी है, और हर चीज़ और हर काम की जानने वाली भी।

तीसरी आयत में इरशाद हैः

وَهُوَ الَّذِىْ جَعَلَ لَكُمُ النُّجُوْمَ لِتَهْتَدُوْا بِهَا فِىْ ظُلُمٰتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ.

यानी सूरज व चाँद के अलावा दूसरे सितारे भी अल्लाह जल्ल शानुहू की कामिल क़ुदरत के ख़ास निशान हैं, और उनके पैदा करने में हज़ारों हिक्मतों में से एक हिक्मत यह भी है कि इनसान अपने ख़ुश्की और पानी के सफ़रों में जहाँ रात की अंधेरी के वक़्त दिशाओं का पता लगाना भी आसान नहीं रहता, इन सितारों के ज़रिये अपने रास्ते मुतैयन कर सकता है। तजुर्बा गवाह है कि आज इस मशीनरी के ज़माने में भी इनसान सितारों की हिदायत (रहनुमाई) से बेनियाज़ नहीं है।

इस आयत में भी इनसान की इस ग़फ़लत और कम-समझी पर तंबीह की गयी है कि ये सितारे भी किसी बनाने वाले और चलाने वाले के फ़रमान के ताबे चल रहे हैं, न अपने वजूद में मुस्तक़िल हैं न अपने बाक़ी रहने और काम करने में। जो लोग सिर्फ़ इन्हीं पर अपनी नज़रें जमाकर बैठ रहे और इनके बनाने वाले की तरफ़ नज़र न की वे बहुत ही छोटी नज़र रखने वाले और धोखे में मुब्तला हैं:

आनाँ कि बजुज़ रू-ए-तू जाये नगरानन्द
कोताह-नज़र अंद चे कोताह-नज़र अन्द

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ.

यानी हमने क़ुदरत की दलीलें और निशानियाँ ख़ूब खोल-खोलकर बयान कर दी हैं उन लोगों

के लिये जो ख़बर रखते हैं। इसमें इशारा फ़रमा दिया कि जो लोग इन खुली-खुली निशानियों से भी अल्लाह तआ़ला को नहीं पहचानते वे बेख़बर और बेहोश हैं।

चौथी आयत में इरशाद है:

وَهُوَ الَّذِىٓ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ فَمُسْتَقَرٌّ وَّمُسْتَوْدَعٌ.

मुस्तक़र, क़रार से बना है। उस जगह को मुस्तक़र कहते हैं जो किसी चीज़ के लिये ठहरने का मक़ाम हो। और मुस्तौदअ़ वदीअ़त से निकला है, जिसके मायने हैं किसी के पास अस्थायी तौर पर चन्द दिन रख देने के। तो मुस्तौदअ़ उस जगह को कहा जायेगा जहाँ कोई चीज़ आरज़ी (वक़्ती) तौर पर चन्द दिन रखी जाये।

यानी अल्लाह तआ़ला ही वह पाक ज़ात है जिसने इनसान को एक जान यानी हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से पैदा फ़रमाया, फिर इसके लिये एक मुस्तक़र यानी एक मुद्दत तक रहने की जगह बना दी, और एक मुस्तौदअ़ यानी चन्द दिन रहने की जगह।

क़ुरआने करीम के अलफ़ाज़ तो यही हैं, इनकी ताबीर व तफ़सीर में बहुत सी गुंजाईशें हैं, इसी लिये तफ़सीर के उलेमा के अक़वाल इसमें विभिन्न और अनेक हैं, किसी ने फ़रमाया कि मुस्तौदअ़ (चन्द दिन रहना) माँ का पेट, और मुस्तक़र (ठहरने की जगह) यह दुनिया है। किसी ने फ़रमाया कि मुस्तौदअ़ क़ब्र है और मुस्तक़र आख़िरत का जहान, और भी अनेक अक़वाल हैं और क़ुरआनी अलफ़ाज़ में सब की गुंजाईश है। हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने तफ़सीर-ए-मज़हरी में इसको तरजीह दी कि मुस्तक़र आख़िरत का मक़ाम जन्नत या दोज़ख़ है, और इनसान की शुरूआ़ती पैदाईश से आख़िरत तक जितने चरण और दर्जे हैं वे सब मुस्तौदअ़ यानी चन्द दिन के ठहरने की जगह हैं, चाहे माँ का पेट हो या ज़मीन पर रहने सहने की जगह या क़ब्र व बर्ज़ख़। क़ुरआने करीम की एक आयत से भी इसकी तरजीह मालूम होती है, जिसमें फ़रमायाः

لَتَرْكَبُنَّ طَبَقًا عَنْ طَبَقٍ.

यानी तुम एक दर्जे से दूसरे दर्जे की तरफ़ हमेशा चढ़ते रहोगे। जिसका हासिल यह है कि आख़िरत के जहान से पहले-पहले इनसान अपनी पूरी ज़िन्दगी में एक मुसाफ़िर की हैसियत रखता है, जो ज़ाहिरी सुकून व क़रार के वक़्त भी दर हक़ीक़त अपनी उम्र के सफ़र की मन्ज़िलें तय कर रहा है:

मुसाफ़िर हूँ कहा जाना है, नावाक़िफ़ हूँ मन्ज़िल से
अज़ल से फिरते-फिरते गोर तक पहुँचा हूँ मुश्किल से

इस आख़िरी आयत में ज़ाहिरी टिप-टॉप और मख़्लूक़ात की चमक-दमक और रंगीनियों में मशग़ूल होकर अपने असली ठिकाने और ख़ुदा व आख़िरत से ग़ाफ़िल हो जाने वाले की आँखें खोल दी गयी हैं, ताकि वह हक़ीक़त को पहचाने और दुनिया के धोखे व फ़रेब से निजात पाये।

وَهُوَ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً ۚ فَاَخْرَجْنَا بِهٖ نَبَاتَ كُلِّ شَيْءٍ فَاَخْرَجْنَا مِنْهُ خَضِرًا نُّخْرِجُ مِنْهُ حَبًّا مُّتَرَاكِبًا ۚ وَمِنَ النَّخْلِ مِنْ طَلْعِهَا قِنْوَانٌ دَانِيَةٌ وَّجَنّٰتٍ مِّنْ اَعْنَابٍ وَّالزَّيْتُوْنَ وَالرُّمَّانَ مُشْتَبِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ ۗ اُنْظُرُوْٓا اِلٰى ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ وَيَنْعِهٖ ۗ اِنَّ فِيْ ذٰلِكُمْ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُوْنَ ۝ وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ الْجِنَّ وَخَلَقَهُمْ وَخَرَقُوْا لَهٗ بَنِيْنَ وَبَنٰتٍ بِغَيْرِ عِلْمٍ ۗ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَصِفُوْنَ ۝ بَدِيْعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۗ اَنّٰى يَكُوْنُ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَمْ تَكُنْ لَّهٗ صَاحِبَةٌ ۗ وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ ۚ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ ۚ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ فَاعْبُدُوْهُ ۚ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَّكِيْلٌ ۝

व हुवल्लज़ी अन्ज़-ल मिनस्समा-इ माअन् फ़-अख़्रज्ना बिही नबा-त कुल्लि शैइन् फ़-अख़्रज्ना मिन्हु ख़ाज़िरन् नुख़्रिजु मिन्हु हब्बम् मु-तराकिबन् व मिनन्नख़्लि मिन् तल्अिहा क़िन्वानुन् दानियतुंव्-व जन्नातिम् मिन् अअ्नाबिंव्-वज़्ज़ैतू-न वर्रुम्मा-न मुश्तबिहंव्-व ग़ै-र मु-तशाबिहिन्, उन्ज़ुरू इला स-मरिही इज़ा अस्म-र व यन्अिही, इन्-न फ़ी ज़ालिकुम् लआयातिल्-लिक़ौमिंय्युअ्मिनून (99) व ज-अलू लिल्लाहि शु-रकाअल्-जिन्-न व ख़-ल-क़हुम् व ख़-रक़ू लहू बनी-न व बनातिम् बिग़ैरि अिल्मिन्, सुब्हानहू व तआ़ला अ़म्मा यसिफ़ून (100) ❁ बदीअुस्समावाति वल्अर्ज़ि, अन्ना यकूनु लहू व-लदुंव्-व लम् तकुल्लहू

और उसी ने उतारा आसमान से पानी, फिर निकाली हमने उससे उगने वाली हर चीज़, फिर निकाली उसमें से सब्ज़ खेती जिससे हम निकालते हैं दाने एक पर एक चढ़ा हुआ, और खजूर के गाभे में से फल के गुच्छे झुके हुए, और बाग़ अंगूर के और ज़ैतून के और अनार के आपस में मिलते-जुलते और अलग-अलग भी, देखो हर एक दरख़्त के फल को जब वह फल लाता है और उसके पकने को, इन चीज़ों में निशानियाँ हैं ईमान वालों के वास्ते। (99) और ठहराते हैं अल्लाह के शरीक जिन्नों को हालाँकि उसने उनको पैदा किया है और गढ़ते हैं उसके वास्ते बेटे और बेटियाँ जहालत से, वह पाक है और बहुत दूर है उन बातों से जो ये लोग बयान करते हैं। (100) ❁

नये अन्दाज़ पर बनाने वाला आसमान और ज़मीन का, क्योंकर हो सकता है उसके बेटा हालाँकि उसके कोई औरत नहीं, और उसने बनाई हर चीज़, और

साहि-बतुन्, व ख़-ल-क़ कुल्-ल शैइन् व हु-व बिकुल्लि शैइन् अ़लीम (101) ज़ालिकुमुल्लाहु रब्बुकुम् ला इला-ह इल्ला हु-व ख़ालिक़ु कुल्लि शैइन् फ़अ़्बुदूहु व हु-व अ़ला कुल्लि शैइंव्-वकील (102)	वह हर चीज़ से वाक़िफ़ है। (101) यही अल्लाह तुम्हारा रब है, नहीं है कोई माबूद सिवाय उसके, पैदा करने वाला हर चीज़ का, सो तुम उसी की इबादत करो और वह हर चीज़ पर कारसाज़ है। (102)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने आसमानों (की तरफ़) से पानी बरसाया, फिर हमने उस (एक ही पानी) के ज़रिये से हर क़िस्म के (रंग-बिरंगे) पेड़-पौधों को (ज़मीन से) निकाला। (एक ही पानी एक ही मिट्टी से इतनी विभिन्न क़िस्म के पेड़-पौधे जिनके रंग व बू, ज़ायक़ा, फ़ायदे बेहद मुख़्तलिफ़ हैं, क़ुदरत का किस क़द्र अ़जीब करिश्मा है)। फिर हमने उस (कौंपल) से (जो शुरू में ज़मीन से निकलती है, जिसको कुछ जगहों में सूई या खूँटी कहते हैं और रंग में पीली होती है) हरी डाली निकाली कि उस (शाख़) से हम ऊपर-तले चढ़े हुए दाने निकालते हैं। (यह तो ग़ल्लों की कैफ़ियत है, जिसका ज़िक्र संक्षिप्त रूप से **फ़ालिक़ुल-हब्बि वन्नवा** में आ चुका) और खजूर के दरख़्तों से (यानी उनके गुप्फे में से) गुच्छे निकलते हैं, जो (बोझ के मारे) नीचे को लटक जाते हैं। और उसी पानी से हमने अंगूरों के बाग़ (पैदा किये) और ज़ैतून और अनार के दरख़्त पैदा किए जो कि (बाज़े अनार और बाज़े ज़ैतून फल की सूरत शक्ल व मात्रा व रंग वग़ैरह के एतिबार से) एक-दूसरे से मिलते-जुलते होते हैं और (बाज़े) एक-दूसरे से मिलते-जुलते नहीं होते। ज़रा हर एक के फल को तो देखो जब वह फलता है (कि उस वक़्त बिल्कुल कच्चा अस्वादिष्ट, फ़ायदा उठाने के क़ाबिल नहीं होता) और (फिर) उसके पकने को देखो (कि उस वक़्त सब गुणों में कैसा कामिल हो गया, यह भी ख़ुदा की क़ुदरत का ज़हूर है) उन (चीज़ों) में (भी अल्लाह के एक होने की) दलीलें (मौजूद) हैं (और गोया तब्लीग़ के एतिबार से सब के लिये हैं मगर फ़ायदा उठाने के एतिबार से) उन (ही) लोगों के लिए (हैं) जो ईमान (लाने की फ़िक्र) रखते हैं (यह मेवों और फलों का बयान हुआ जिनका ज़िक्र मुख़्तसर तौर पर **वन्नवा** में आ चुका है)।

और (मुश्रिक) लोगों ने (अपने एतिक़ाद में) शैतानों को (ऐसे) अल्लाह का (जिसकी सिफ़ात व काम ऊपर बयान हुए) शरीक क़रार दे रखा है (कि उनके बहकाने से शिर्क करते हैं और ख़ुदा के मुक़ाबले में उनके कहने पर चलते हैं) हालाँकि उन लोगों को (ख़ुद उनके इक़रार के मुवाफ़िक़ भी) ख़ुदा (ही) ने पैदा किया है, (जब पैदा करने वाला कोई और नहीं तो माबूद भी कोई और न होना चाहिये)। और उन (मुश्रिकों में से कुछ) लोगों ने (अपने एतिक़ाद में) अल्लाह के हक़ में

बेटे और बेटियाँ बिना सनद के गढ़ रखे हैं (जैसे ईसाई हज़रत मसीह को और कुछ यहूदी हज़रत उज़ैर को ख़ुदा का बेटा और अरब के मुश्रिक लोग फ़रिश्तों को ख़ुदा की बेटियाँ कहते थे) वह इन बातों से पाक और बरतर है जिनको ये लोग (ख़ुदा तआ़ला की शान में) बयान करते हैं (यानी यह कि उसका कोई शरीक हो या उसके कोई औलाद हो)।

वह आसमानों और ज़मीनों का बनाने वाला (यानी नेस्त से हस्त करने वाला) है (और दूसरा कोई बनाने वाला नहीं, पस माबूद भी कोई और न होगा। इससे तो शरीक की नफ़ी हुई, और औलाद की नफ़ी की दलील यह है कि औलाद की हक़ीक़त यह है कि मियाँ-बीवी हों और उन दोनों के मिलाप से तीसरी जानदार चीज़ पैदा हो, तो) उसके (यानी अल्लाह के) औलाद कहाँ हो सकती है? हालाँकि उसकी कोई बीवी तो है नहीं, और अल्लाह तआ़ला ने (जैसे इन लोगों को पैदा किया और ज़मीन व आसमान को पैदा किया, इसी तरह उसने) हर चीज़ को पैदा किया, और (जिस तरह वह पैदा करने और बनाने में अकेला और बेमिसाल है इसी तरह इस सिफ़त में भी बेमिसाल है कि) वह हर चीज़ को ख़ूब जानता है (उसके आग़ाज़ को भी और अन्जाम को भी, और इस गुण में भी उसका कोई शरीक नहीं, और पैदा करना बिना इल्म और जानकारी के हो नहीं सकती, इससे भी साबित हुआ कि और कोई ख़ालिक़ नहीं)। यह (ज़ात जिसकी कामिल सिफ़तें बयान की गयीं, यह) है अल्लाह तुम्हारा रब, उसके सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, हर चीज़ का पैदा करने वाला (जैसा कि ऊपर बयान हुआ। जब ये सिफ़तें अल्लाह ही में हैं) तो तुम उस (ही) की इबादत करो, और (फिर यह कि) वह (ही) हर चीज़ का (असली) कारसाज़ है (दूसरा कोई कारसाज़ भी नहीं। पस उसकी इबादत करोगे तो वह तुमको असली और वास्तविक नफ़ा पहुँचायेगा और कोई दूसरा क्या दे देगा। ग़र्ज़ कि ख़ालिक़ भी वही, अ़लीम भी वही, वकील भी वही, और ये सब चीज़ें चाहती हैं कि माबूद भी वही हो)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन मज़ामीन में एक अ़जीब तरतीब की रियायत है। वह यह कि यहाँ तीन क़िस्म की कायनात का ज़िक्र है- निचली कायनात, ऊपर की कायनात और फ़िज़ाई कायनात यानी आसमानी स्पेस में पैदा होने वाली चीज़ें। और बयान शुरू किया नीचे की चीज़ों से, क्योंकि वो हम से ज़्यादा क़रीब हैं, और फिर उसके दो हिस्से किये- एक बयान ज़मीन से उगने वाली घास, पौधों और दरख़्तों बाग़ों वग़ैरह का, दूसरे हैवानात- इनसान और जानवरों का। अव्वल को दूसरे के मुक़ाबले में पहले बयान किया क्योंकि दूसरे वाला पहले से ज़्यादा गहरा है क्योंकि उसके अन्दर रूह है, चुनाँचे नुत्फ़े (वीर्य के क़तरे) के विभिन्न मर्हले (चरण) और हालात तबीबों व हकीमों के समझने और जानने के साथ मख़्सूस हैं, बख़िलाफ़ नबातात (पेड़-पौधे और ज़मीन से उगने वाली चीज़ों) के, कि इनके बढ़ने, फलने फूलने वग़ैरह को आ़म तौर से सब ही देखते और महसूस करते हैं। फिर आसमानी फ़िज़ा की कायनात को ज़िक्र किया- सुबह व शाम। फिर ऊपर की कायनात का ज़िक्र किया- सूरज, चाँद और सितारे। फिर चूँकि नीचे वाली कायनात की चीज़ें

इनसान की नज़रों और अनुभव में ज़्यादा आती हैं इसको दोबारा ज़िक्र करके इस पर ख़त्म फ़रमाया। मगर पहले वह संक्षिप्त रूप से ज़िक्र हुआ था अब तफ़सील से ज़िक्र किया गया। लेकिन तफ़सील की तरतीब में संक्षिप्त वाली तरतीब के उलटा कर दिया गया, कि जानदारों के बयान को आगे किया और पेड़-पौधों और उगने वाली चीज़ों के बयान को पीछे। मुम्किन है कि इसका आधार यह हो कि इस विस्तृत बयान में नेमत के इज़्हार का उनवान इख़्तियार किया गया है तो इस हैसियत से जिस पर नेमत की गयी वह मक़सूद और अनुसरणीय होने की वजह से पहले ज़िक्र करने के क़ाबिल हो और नबातात (वनस्पति और ज़मीन से उगने वाली चीज़ों) में पहली तरतीब बाक़ी है कि ग़ल्लों (दानों) की कैफ़ियत दाने और गुठली से पहले बयान हुई, और बारिश का बीच में ज़िक्र आना नबातात (ज़मीन से उगने वाली चीज़ों पेड़-पौधों वग़ैरह) के ताबे है। और इसमें एक और बारीक बात यह भी हो सकती है कि बारिश की विभिन्न और अनेक हैसियतें हैं, शुरूआत के एतिबार से तो वह ऊपर की कायनात से संबन्धित और अन्जाम व आख़िर के एतिबार से नीचे की कायनात से संबन्धित और दूरी व अपनी चाल के एतिबार से फ़िज़ाई कायनात (अंतरिक्ष) से संबन्धित है।

لَا تُدْرِكُهُ الْأَبْصَارُ ۖ وَهُوَ يُدْرِكُ الْأَبْصَارَ ۖ وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ ۝ قَدْ جَاءَكُم بَصَائِرُ مِن
رَّبِّكُمْ ۖ فَمَنْ أَبْصَرَ فَلِنَفْسِهِ ۖ وَمَنْ عَمِيَ فَعَلَيْهَا ۚ وَمَا أَنَا عَلَيْكُم بِحَفِيظٍ ۝ وَكَذَٰلِكَ نُصَرِّفُ الْآيَاتِ وَ
لِيَقُولُوا دَرَسْتَ وَلِنُبَيِّنَهُ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ۝ اتَّبِعْ مَا أُوحِيَ إِلَيْكَ مِن رَّبِّكَ ۖ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ ۖ وَأَعْرِضْ عَنِ
الْمُشْرِكِينَ ۝ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا أَشْرَكُوا ۗ وَمَا جَعَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا ۖ وَمَا أَنتَ عَلَيْهِم بِوَكِيلٍ ۝

ला तुद्रिकुहुल्-अब्सारु व हु-व युद्रिकुल्-अब्सा-र व हुवल्-लतीफ़ुल्-ख़बीर (103) क़द् जा-अकुम् बसा-इरु मिर्रब्बिकुम् फ़-मन् अब्स-र फ़लिनफ़्सिही व मन् अ़मि-य फ़-अ़लैहा, व मा अ-न अ़लैकुम् बि-हफ़ीज़ (104) व कज़ालि-क नुसर्रिफ़ुल्-आयाति व लियक़ूलू दरस्-त व लिनुबय्यि-नहू लिक़ौमिंय्-यअ़लमून (105) इत्तबिअ़् मा	नहीं पा सकतीं उसको आँखें और वह पा सकता है आँखों को, और वह बहुत ही लतीफ़ और ख़बर रखने वाला है। (103) तुम्हारे पास आ चुकीं निशानियाँ तुम्हारे रब की तरफ़ से, फिर जिसने देख लिया सो अपने वास्ते और जो अन्धा रहा सो अपने नुक़सान को, और मैं नहीं तुम पर निगहबान। (104) और यूँ तरह-तरह से समझाते हैं हम आयतें और ताकि वे कहें कि तूने किसी से पढ़ा है, और ताकि स्पष्ट कर दें हम इसको समझ वालों के

ऊहि-य इलै-क मिर्रब्बि-क ला इला-ह इल्ला हु-व व अअ्रिज़् अनिल् मुश्रिकीन (106) व लौ शाअल्लाहु मा अश्रकू, व मा जअ़ल्ना-क अ़लैहिम् हफ़ीज़न् व मा अन्-त अ़लैहिम् ब-वकील (107)	वास्ते। (105) और तू चल उस पर जो हुक्म तुझको आये तेरे रब का, कोई माबूद नहीं सिवाय उसके, और मुँह फेर ले मुश्रिकों से। (106) और अगर अल्लाह चाहता तो वे लोग शिर्क न करते, और हमने नहीं किया तुझको उनपर निगहबान और नहीं है तू उनपर दारोग़ा। (107)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और उसके जानने वाला होने की और उसमें बेमिसाल होने की यह कैफ़ियत है कि) उसको तो किसी की निगाह नहीं घेर सकती (दुनिया में तो इस तरह कि कोई देख ही नहीं सकता, जैसा कि शरीअ़त की दलीलों से साबित है, और आख़िरत में इस तरह कि जन्नत वाले अगरचे देखेंगे जैसा कि यह भी शरई दलीलों से साबित है, लेकिन घेरना मुहाल रहेगा, और जिस आँखों से देखे जाने वाली चीज़ के ज़ाहिर का घेरना नज़र के ज़रिये मुहाल हो तो उसकी अन्दरूनी हक़ीक़त का ज़ाहिर के मुक़ाबले में इहाता करना और पता लगाना और भी नामुम्किन होगा, क्योंकि अन्दरूनी हक़ीक़त तो ज़ाहिर से कहीं ज़्यादा छुपी होती है, उसका अ़क़्ल से पता लगाना और भी मुश्किल है, क्योंकि अ़क़्ली एहसास में आँखों से देखने के मुक़ाबले में ग़लती करने की ज़्यादा संभावना है, इसलिये यह ज़्यादा मुहाल है) और वह (यानी अल्लाह तआ़ला) सब निगाहों को (जो कि उसके इहाते से आ़जिज़ थीं लाज़िमी तौर पर) घेर लेता है (इसी तरह और चीज़ों को भी अपने इल्म के घेरे में लिये हुए है जैसा कि फ़रमाया 'व हु-व बिकुल्लि शैइन् अ़लीम') और (इस बात से कि वह सबको घेरे हुए है और उसको कोई घेरने वाला नहीं, लाज़िम आ गया कि) वही बड़ा बारीक देखने वाला, ख़बर रखने वाला है (और कोई दूसरा नहीं, और इल्म का वह कमाल और इन्तिहा है जिसमें अल्लाह तआ़ला बेमिसाल है। आप इन लोगों से कह दीजिए कि) अब बिला शुब्हा तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से हक़ देखने के ज़रिये "यानी माध्यम" (यानी तौहीद व रिसालत के हक़ होने की अ़क़्ली व किताबी दलीलें) पहुँच चुके हैं, सो जो शख़्स (उनके ज़रिये से हक़ को) देख लेगा वह अपना फ़ायदा करेगा, और जो शख़्स अन्धा रहेगा वह अपना नुक़सान करेगा, और मैं तुम्हारा (यानी तुम्हारे आमाल का) निगराँ नहीं हूँ (यानी जैसे निगरानी करने वाले के ज़िम्मे होता है कि ग़लत और बेहूदा हरकत न करने दे, यह मेरे ज़िम्मे नहीं, मेरा काम सिर्फ़ तब्लीग़ है)।

और (देखिये) हम इस (बेहतरीन) अन्दाज़ पर दलीलों को विभिन्न पहलुओं से बयान करते हैं (ताकि आप सब को पहुँचा दें) और ताकि ये (इनकार करने वाले तास्सुब से) यूँ कहें कि आपने किसी से (इन मज़ामीन को) पढ़ लिया है, (मतलब यह कि ताकि इन पर और ज़्यादा

इल्ज़ाम हो कि हम तो इस तरह स्पष्ट करके हक़ को साबित करते थे और तुम फिर बेकार के बहाने बनाते थे) और ताकि हम इस (क़ुरआन के मज़ामीन) को समझदारों के लिए ख़ूब ज़ाहिर कर दें (यानी क़ुरआन के नाज़िल करने के तीन फ़ायदे हैं- एक यह कि आपको तब्लीग़ का अज्र मिले, दूसरे यह कि इनकार करने वालों पर ज़्यादा जुर्म क़ायम हो, तीसरे यह कि अ़क्लमन्द और समझदार हक़ के इच्छुकों पर हक़ ज़ाहिर हो जाये। पस) आप (यह न देखिये कि कौन मानता है और कौन नहीं मानता) ख़ुद उस रास्ते पर चलते रहिये जिस (पर चलने) की वही आपके रब की तरफ़ से आपके पास आई है, (और इस रास्ते में बड़ी चीज़ यह यक़ीन रखना है कि) अल्लाह के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं, और (इस रास्ते में तब्लीग़ का हुक्म भी दाख़िल है) और (इस पर क़ायम रहकर) मुश्रिकों की तरफ़ ख़्याल न कीजिए (कि अफ़सोस! उन्होंने क़ुबूल क्यों न किया) और (वजह ख़्याल न करने की यह है कि) अगर अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर होता तो ये शिर्क न करते, (लेकिन इन लोगों के बुरे आमाल की वजह से अल्लाह तआ़ला को मन्ज़ूर हुआ कि इनको सज़ा दें, इसलिये ऐसा ही सामान जमा कर दिया, फिर क्या आप उनको मुसलमान बना सकते हैं?) और (आप इस फ़िक्र में पड़े ही क्यों) हमने आपको उन (के आमाल) का निगराँ नहीं बनाया और न आप (उन आमाल पर अ़ज़ाब देने के हमारी तरफ़ से) उन पर मुख़्तार हैं (पस जब आप से संबन्धित न उनके जराईम और अपराधों की तफ़तीश है और न उनकी सज़ा का हुक्म है, फिर आपको क्यों परेशानी और चिंता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः अन्आ़म की इन पाँच आयतों में से पहली आयत में इब्सार बसर की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं निगाह और देखने की क़ुव्वत। और इदराक के मायने पा लेना, पकड़ लेना, इहाता कर लेना हैं। हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इस जगह इदराक की तफ़सीर इहाता कर लेना बयान फ़रमाई है। (बहरे मुहीत)

आयत के मायने यह हो गये कि सारी मख़्लूक़ात जिन्नात, इनसान, फ़रिश्ते और तमाम हैवानात की निगाहें मिलकर भी अल्लाह जल्ल शानुहू को इस तरह नहीं देख सकतीं कि ये निगाहें उसकी ज़ात का इहाता (घेराव) कर लें, और अल्लाह तआ़ला तमाम मख़्लूक़ात की निगाहों को पूरी तरह देखते हैं, और उनका देखना उन सब पर मुहीत (घेरे हुए) है। इस मुख़्तसर आयत में हक़ तआ़ला की दो विशेष सिफ़तों का ज़िक्र है- अव्वल यह कि सारी कायनात में किसी की निगाह बल्कि सब की निगाहें मिलकर भी उसकी ज़ात का इहाता नहीं कर सकतीं।

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर जहान के सारे इनसान और जिन्नात और फ़रिश्ते और शैतान जब से पैदा हुए और जब तक पैदा होते रहेंगे, वे सब के सब मिलकर एक सफ़ में खड़े हो जायें तो सब मिलकर भी उसकी ज़ात का अपनी निगाह में इहाता (घेराव) नहीं कर सकते।

(तफ़सीरे-मज़हरी, इब्ने अबी हातिम के हवाले से)

और यह ख़ास सिफ़त हक़ जल्ल शानुहू की ही हो सकती है, वरना निगाह को अल्लाह तआ़ला ने ऐसी क़ुव्वत बख़्शी है कि छोटे से छोटे जानवर की छोटी से छोटी आँख दुनिया के बड़े से बड़े कुर्रे को देख सकती और निगाह से उसका इहाता कर सकती है। सूरज व चाँद कितने बड़े-बड़े कुर्रे (ग्रह) हैं कि ज़मीन और सारी दुनिया की इनके मुक़ाबले में कोई हैसियत नहीं है, मगर हर इनसान बल्कि छोटे से छोटे जानवर की आँख इन कुर्रों को इसी तरह देखती है कि निगाह में इनका इहाता (घेराव) हो जाता है।

और हक़ीक़त यह है कि निगाह तो इनसानी हवास (महसूस करने वाली क़ुव्वतों) में से एक हास्सा है, जिससे सिर्फ़ महसूस चीज़ों का इल्म हासिल हो सकता है, हक़ तआ़ला की पाक ज़ात तो अ़क़्ल व वहम के इहाते से भी ऊपर है, उसका इल्म इस आँख के हास्से (महसूस करने वाली क़ुव्वत) से कैसे हासिल होः

तू दिल में आता है समझ में नहीं आता
बस जान. गया मैं तेरी पहचान यही है

हक़ तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात असीमित हैं, और इनसानी हवास और अ़क़्ल व ख़्याल सब सीमित चीज़ें हैं। ज़ाहिर है कि एक असीमित किसी सीमित चीज़ में नहीं समा सकता, इसी लिये दुनिया के बुद्धिमान और फ़लॉस्फ़र जिन्होंने अ़क़्ली दलीलों से कायनात के पैदा करने वाले का पता लगाने और उसकी ज़ात व सिफ़ात के समझने और पाने के लिये अपनी उम्रें तहक़ीक़ व खोज में ख़र्च कीं, और सूफ़िया-ए-किराम (अल्लाह वाले) जिन्होंने कश्फ़ व मुराक़बों के रास्ते से इस मैदान की सैर की, सब के सब इस पर सहमत हैं कि उसकी ज़ात व सिफ़ात की हक़ीक़त को न किसी ने पाया न पा सकता है। मौलाना रूमी रह. ने फ़रमायाः

दूर बीनान-ए-बारगाहे अलस्त गै़र अज़ीं पै न बुर्दा अन्द कि हस्त

और हज़रत शैख़ सअ़दी रह. ने फ़रमायाः

चे शबहा नशिस्तम दरीं सैर गुम कि हैरत गिरफ़्त आस्तीनम कि क़ुम

अल्लाह तआ़ला के दीदार का मसला

इनसान को हक़ तआ़ला की ज़ियारत (दीदार और दर्शन) हो सकती है या नहीं? इस मसले में अहले-सुन्नत वल-जमाअ़त के तमाम उलेमा का अ़क़ीदा यह है कि इस दुनिया में हक़ तआ़ला की ज़ात का दीदार और ज़ियारत नहीं हो सकती। यही वजह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जब यह दरख़्वास्त की कि "रब्बि अरिनी" (ऐ मेरे परवर्दिगार! मुझे अपनी ज़ियारत करा दीजिए) तो जवाब में इरशाद हुआ कि "लन तरानी" (आप हरगिज़ मुझे नहीं देख सकते)। ज़ाहिर है कि हज़रत मूसा कलीमुल्लाह अ़लैहिस्सलाम को जब यह जवाब मिलता है तो फिर और किसी इनसान व जिन्न की क्या मजाल है। अलबत्ता आख़िरत में मोमिनों को हक़ तआ़ला की ज़ियारत होना सही व मज़बूत और मुतवातिर हदीसों से साबित है, और ख़ुद क़ुरआन करीम में मौजूद हैः

وُجُوْهٌ يَّوْمَئِذٍ نَّاضِرَةٌ اِلٰى رَبِّهَا نَاظِرَةٌ.

"क़ियामत के दिन बहुत से चेहरे तरोताज़ा और ख़ुश होंगे और अपने रब की तरफ़ देख रहे होंगे।"

हाँ मगर काफ़िर और इनकारी लोग उस दिन भी सज़ा के तौर पर हक़ तआ़ला के दीदार से मुशर्रफ़ (सम्मानित) न होंगे जैसा कि क़ुरआने करीम की एक आयत में है:

كَلَّآ اِنَّهُمْ عَنْ رَّبِّهِمْ يَوْمَئِذٍ لَّمَحْجُوْبُوْنَ.

"यानी काफ़िर उस दिन अपने रब की ज़ियारत से आड़ में और मेहरूम होंगे।"

और आख़िरत में हक़ तआ़ला की ज़ियारत मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर होगी। मेहशर के मैदान में भी और जन्नत में पहुँचने के बाद भी, और जन्नत वालों के लिये सारी नेमतों से बड़ी नेमत हक़ तआ़ला की ज़ियारत (देखना) होगी।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब जन्नत वाले जन्नत में दाख़िल हो जायेंगे तो हक़ तआ़ला उनसे फ़रमायेंगे कि जो नेमतें जन्नत में मिल चुकी हैं उनसे ज़ायद और कुछ चाहिये तो बतलाओ, कि हम वह भी दे दें। ये लोग अ़र्ज़ करेंगे- या अल्लाह! आपने हमें दोज़ख़ से निजात दी, जन्नत में दाख़िल फ़रमाया, इससे ज़्यादा हम और क्या चाहें? उस वक़्त बीच से पर्दा उठा दिया जायेगा और सब को अल्लाह तआ़ला की ज़ियारत होगी, और जन्नत की सारी नेमतों से बढ़कर यह नेमत होगी। यह हदीस सही मुस्लिम में हज़रत सुहैब रज़ियल्लाहु अ़न्हु से मन्क़ूल है।

और सही बुख़ारी की एक हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक रात चाँद की चाँदनी में तशरीफ़ रखते थे, और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का मजमा था, आपने चाँद की तरफ़ नज़र फ़रमाई और फिर फ़रमाया कि (आख़िरत में) तुम अपने रब को इसी तरह आँखों से देखोगे जैसे इस चाँद को देख रहे हो।

तिर्मिज़ी और मुस्नद अहमद की एक हदीस में हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि अल्लाह तआ़ला जिन लोगों को जन्नत में ख़ास दर्जा अ़ता फ़रमायेंगे उनको रोज़ाना सुबह व शाम हक़ तआ़ला की ज़ियारत (देखना) नसीब होगी।

ख़ुलासा यह है कि दुनिया में किसी को हक़ तआ़ला की ज़ियारत नहीं हो सकती, और आख़िरत में सब जन्नत वालों को होगी। और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जब मेराज की रात में ज़ियारत हुई वह भी दर हक़ीक़त आख़िरत के जहान ही की ज़ियारत है, जैसा कि शैख़ मुहीयुद्दीन इब्ने अ़रबी ने फ़रमाया कि दुनिया सिर्फ़ इस जहान का नाम है जो आसमानों के अन्दर घिरा हुआ है, आसमानों से ऊपर आख़िरत का मक़ाम है, वहाँ पहुँचकर जो ज़ियारत हुई उसको दुनिया की ज़ियारत नहीं कहा जा सकता।

अब सवाल यह रहता है कि जब क़ुरआन की आयत 'ला तुदरिकुहुल-अब्सारु' से यह मालूम हुआ कि इनसान को अल्लाह तआ़ला का दीदार हो ही नहीं सकता तो फिर क़ियामत में कैसे

होगा? इसका स्पष्ट जवाब यह है कि क़ुरआन की आयत के यह मायने नहीं कि इनसान के लिये हक़ तआ़ला का दीदार और ज़ियारत नामुम्किन है, बल्कि आयत के मायने यह हैं कि इनसानी निगाह उसकी ज़ात का इहाता नहीं कर सकती, क्योंकि उसकी ज़ात असीमित और इनसान की नज़र सीमित है।

क़ियामत में भी जो ज़ियारत होगी वह ऐसी तरह होगी कि नज़र इहाता नहीं कर सकेगी, और दुनिया में इनसान और उसकी नज़र में इतनी क़ुव्वत नहीं जो इस तरह के दीदार को भी बरदाश्त कर सके। इसलिये दुनिया में तो दीदार बिल्कुल ही नहीं हो सकता, और आख़िरत में निगाह में ताक़त पैदा हो जायेगी तो दीदार व ज़ियारत हो सकेगी, मगर नज़र में ज़ाते हक़ का इहाता (घेराव करना) उस वक़्त भी न हो सकेगा।

दूसरी सिफ़त हक़ तआ़ला शानुहू की इस आयत में यह बयान फ़रमाई है कि उसकी नज़र सारी कायनात पर मुहीत (फैली हुई और उसको घेरे हुए) है। दुनिया का कोई ज़र्रा उसकी नज़र से छुपा हुआ नहीं। यह मुकम्मल इल्म और इल्मी इहाता भी हक़ तआ़ला शानुहू की ही विशेषता है, उसके सिवा किसी मख़्लूक़ को कायनात की तमाम चीज़ों और ज़र्रे-ज़र्रे का इल्म न कभी हासिल हुआ, न हो सकता है। क्योंकि वह मख़्सूस सिफ़त है अल्लाह तआ़ला की।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

وَهُوَ اللَّطِيْفُ الْخَبِيْرُ

लतीफ़ अ़रबी लुग़त के एतिबार से दो मायनों में इस्तेमाल किया जाता है- एक मायने मेहरबान, दूसरे कसीफ़ के मुक़ाबले में, यानी वह चीज़ जो हवास के ज़रिये महसूस व मालूम नहीं की जा सकती।

और **ख़बीर** के मायने हैं ख़बर रखने वाला। इस जुमले के मायने यह हो गये कि अल्लाह तआ़ला लतीफ़ हैं, इसी लिये हवास (महसूस करने वाली कुव्वतों) के ज़रिये उनको नहीं पाया और महसूस किया जा सकता। और ख़बीर हैं, इसलिये सारी कायनात का कोई ज़र्रा उनके इल्म व ख़बर से बाहर नहीं। और अगर लतीफ़ के मायने इस जगह मेहरबान के लिये जायें तो इशारा इस तरफ़ होगा कि अल्लाह तआ़ला अगरचे हमारी हर बात व काम बल्कि इरादे और ख़्याल से भी वाक़िफ़ हैं, जिसका तक़ाज़ा यह था कि हम हर गुनाह पर पकड़े जाया करते, मगर चूँकि वह लतीफ़ व मेहरबान भी हैं, इसलिये हर गुनाह पर पकड़ नहीं फ़रमाते।

दूसरी आयत में लफ़्ज़ **बसाइर**, बसीरत की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं अ़क्ल व समझ। यानी वह क़ुव्वत जिसके ज़रिये इनसान ग़ैर-महसूस चीज़ों का इल्म हासिल कर सकता है। बसाइर से मुराद आयत में वो दलीलें और माध्यम व सूत्र हैं जिनसे इनसान हक़ और हक़ीक़त को मालूम कर सके। आयत के मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से तुम्हारे पास हक़ देखने के माध्यम और सूत्र पहुँच चुके हैं, यानी क़ुरआन आया, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आये, आपके मोजिज़े आये, आपके अख़्लाक़ व मामलात और तालीमात देखने और

अनुभव में आये, ये सब हक़ देखने और जानने के ज़रिये (माध्यम और सूत्र) हैं।

तो जो शख़्स इन सूत्रों और माध्यमों से काम लेकर अक़्ल व समझ वाला बन गया, उसने अपना नफ़ा हासिल कर लिया, और जो इन माध्यमों और सूत्रों को छोड़कर हक़ से अन्धा रहा तो उसने अपना ही नुक़सान किया।

आयत के आख़िर में फ़रमाया कि 'मैं तुम्हारा निगराँ नहीं'। यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इसके ज़िम्मेदार नहीं कि लोगों को ज़बरदस्ती करके बुरे कामों से रोक ही दें, जैसे निगराँ और मुहाफ़िज़ का काम होता है, बल्कि रसूल का मन्सबी फ़रीज़ा सिर्फ़ अहकाम का पहुँचा देना और समझा देना है, फिर कोई अपने इख़्तियार से उनको माने या न माने, यह उसकी ज़िम्मेदारी है।

तौहीद व रिसालत पर जो स्पष्ट दलीलें पिछली आयतों में बयान हो चुकी हैं, तीसरी आयत में उनकी तरफ़ इशारा करके फ़रमाया गयाः

كَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ.

यानी हम इसी तरह दलीलों को विभिन्न पहलुओं से बयान करते हैं।

इसके बाद फ़रमाया गयाः

وَلِيَقُوْلُوْا دَرَسْتَ وَلِنُبَيِّنَهٗ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ.

जिसका हासिल यह है कि सारा हिदायत का सामान मोजिज़ों और दलीलों; बेमिसाल किताब क़ुरआन और एक बिल्कुल बिना पढ़े-लिखे की मुबारक ज़बान से ऐसे उलूम व तथ्यों का इज़हार जिनसे सारी दुनिया के बुद्धिमान, फ़लॉस्फ़र और अ़क़्लमन्द आ़जिज़ हैं, ऐसा उम्दा कलाम जिसमें क़ियामत तक आने वाले जिन्नात व इनसानों को चैलेंज किया गया कि उसकी एक छोटी सी सूरत जैसा कलाम कोई बना सके तो लाये, और सारी दुनिया इससे आ़जिज़ रही। यह सब हक़ देखने और समझने का सामान ऐसा था कि हर हठधर्म इनकारी को भी रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के क़दमों पर गिर जाना चाहिये था, लेकिन जिन लोगों की तबीयत में गुमराही और टेढ़ था, वे यह कहने लगे कि ये उलूम तो आपने किसी से पढ़ लिये हैं।

साथ ही यह भी फ़रमा दियाः

وَلِنُبَيِّنَهٗ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ.

जिसका हासिल यह है कि अ़क़्लमन्द जिनकी अ़क़्ल दुरुस्त और समझ सही सलामत है, उनके लिये यह बयान लाभदायक और मुफ़ीद साबित हुआ। ख़ुलासा यह है कि हिदायत का सामान तो सब के सामने रखा गया मगर सही समझ न रखने वालों ने उससे फ़ायदा न उठाया, सही समझ रखने वाले लोग उसके ज़रिये दुनिया के रहबर बन गये।

चौथी आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हिदायत है कि आप यह न देखिये कि कौन मानता है और कौन नहीं मानता, आप ख़ुद उस तरीक़े पर चलते रहिये जिस तरीक़े पर चलने के लिये आपके पास आपके रब की तरफ़ से वही नाज़िल हुई है। जिसमें बड़ी

चीज़ यह एतिक़ाद (यक़ीन लाना) है कि अल्लाह के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं। साथ ही उस वही में तब्लीग़ का हुक्म भी दाख़िल है, उस पर क़ायम रहकर मुश्रिकों की तरफ़ ख़्याल न कीजिए कि अफ़सोस! उन्होंने क्यों क़ुबूल न किया।

पाँचवीं आयत में इसकी वजह यह बतलाई गयी कि अगर अल्लाह तआ़ला को तक़दीरी तौर पर यह मन्ज़ूर होता कि सब इनसान मुसलमान हो जायें तो ये शिर्क न कर सकते, लेकिन उनके बुरे आमाल की वजह से अल्लाह तआ़ला को यह मन्ज़ूर था कि उनको सज़ा मिले तो ऐसा ही सामान जमा कर दिया। फिर आप उनको कैसे मुसलमान बना सकते हैं, और आप इस फ़िक्र में पड़ें क्यों, हमने आपको उनके आमाल का निगराँ नहीं बनाया, और न आप उन आमाल पर अ़ज़ाब देने के हमारी तरफ़ से मुख़्तार हैं। इसलिये आपको उनके आमाल से चिंता न होनी चाहिये।

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًا بِغَيْرِ

عِلْمٍ ۗ كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ۪ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ مَّرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۞ وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ

جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ لَّيُؤْمِنُنَّ بِهَا ۗ قُلْ اِنَّمَا الْاٰيٰتُ عِنْدَ اللّٰهِ وَمَا يُشْعِرُكُمْ ۙ اَنَّهَآ اِذَا جَآءَتْ

لَا يُؤْمِنُوْنَ ۞ وَنُقَلِّبُ اَفْـِٕدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوْا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّنَذَرُهُمْ فِيْ طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُوْنَ ۞

وَلَوْ اَنَّنَا نَزَّلْنَآ اِلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةَ وَكَلَّمَهُمُ الْمَوْتٰى وَحَشَرْنَا عَلَيْهِمْ كُلَّ شَيْءٍ قُبُلًا مَّا كَانُوْا لِيُؤْمِنُوْٓا

اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ اللّٰهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ يَجْهَلُوْنَ ۞ وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيٰطِيْنَ الْاِنْسِ

وَالْجِنِّ يُوْحِيْ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُوْرًا ۗ وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ ۞

وَلِتَصْغٰٓى اِلَيْهِ اَفْـِٕدَةُ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوْا مَا هُمْ مُّقْتَرِفُوْنَ ۞

व ला तसुब्बुल्लज़ी-न यद्अू-न मिन् दूनिल्लाहि फ़-यसुब्बुल्ला-ह अ़द्वम्-बिग़ैरि इ़ल्मिन्, कज़ालि-क ज़य्यन्ना लिकुल्लि उम्मतिन् अ़-म-लहुम् सुम्-म इला रब्बिहिम् मर्जिअ़ुहुम् फ़-युनब्बिउहुम् बिमा कानू यअ़्मलून (108) व अक़्समू बिल्लाहि जह्-द	और तुम लोग बुरा न कहो उनको जिनकी ये पूजा करते हैं अल्लाह के सिवा, पस वे बुरा कहने लगेंगे अल्लाह को बेअदबी से बिना समझे, इसी तरह हमने अच्छा बना दिया हर एक फ़िर्क़े की नज़र में उनके आमाल को, फिर उन सब को अपने रब के पास पहुँचना है, तब वह जतला देगा उनको जो कुछ वे करते थे। (108) और वे क़समें खाते हैं अल्लाह की

ऐमानिहिम् ल-इन् जाअत्हुम् आयतुल् लयुअ्मिनुन्-न बिहा, क़ुल् इन्नमल्-आयातु अिन्दल्लाहि व मा युश्अिरुकुम् अन्नहा इज़ा जाअत् ला युअ्मिनून (109) व नुक़ल्लिबु अफ़्इ-द-तहुम् व अब्सारहुम् कमा लम् युअ्मिनू बिही अव्व-ल मर्रतिंव्-व न-ज़रुहुम् फ़ी तुग़्यानिहिम् यअ्महून (110) ❁	ताकीद से कि अगर आये उनके पास कोई निशानी तो ज़रूर उस पर ईमान लायेंगे, तू कह दे कि निशानियाँ तो अल्लाह के पास हैं और ऐ मुसलमानो तुमको क्या ख़बर है कि जब वो निशानियाँ आयेंगी तो ये लोग ईमान ले ही आयेंगे। (109) और हम उलट देंगे उन के दिल और उनकी आँखें जैसे कि ईमान नहीं लाये निशानियों पर पहली बार, और हम छोड़े रखेंगे उनको उनकी सरकशी (नाफ़रमानी) में बहकते हुए। (110) ❁

पारा नम्बर आठ (व लौ अन्नना)

व लौ अन्नना नज़्ज़ल्ना इलैहिमुल्-मलाइ-क-त व कल्ल-महुमुल्-मौता व हशर्ना अ़लैहिम् कुल्-ल शैइन् क़ुबुलम् मा कानू लियुअ्मिनू इल्ला अंय्यशा-अल्लाहु व लाकिन्-न अक्स-रहुम् यज्हलून (111) व कज़ालि-क जअ़ल्ना लिकुल्लि नबिय्यिन् अ़दुव्वन् शयातिनल्-इन्सि वल्जिन्नि यूही बअ़्ज़ुहुम् इला बअ़्ज़िन् ज़ुख़्रुफ़ल्-क़ौलि ग़ुरूरन्, व लौ शा-अ रब्बु-क मा फ़-अ़लूहु फ़-ज़र्हुम् व मा यफ़्तरून (112) व लितस्ग़ा इलैहि अफ़्इ-दतुल्लज़ी-न ला	और अगर हम उतारें उन पर फ़रिश्ते और बातें करें उनसे मुर्दे और ज़िन्दा कर दें हम हर चीज़ को उनके सामने तो भी ये लोग हरगिज़ ईमान लाने वाले नहीं मगर ये कि चाहे अल्लाह, लेकिन उनमें अक्सर जाहिल हैं। (111) और इसी तरह कर दिया हमने हर नबी के लिये दुश्मन शरीर आदमियों को और जिन्नों को, जो कि सिखलाते हैं एक दूसरे को मुलम्मा की हुई (यानी चिकनी-चुपड़ी) बातें फ़रेब देने के लिये, और अगर तेरा रब चाहता तो वे लोग यह काम न करते, सो तू छोड़ दे वे जानें और उनका झूठ। (112) और इसलिए कि माईल हों उन मुलम्मा की (चिकनी-चुपड़ी) बातों की तरफ़ उन लोगों

युअ्मिनू-न बिल्-आख़िरति व लियरज़ौहु व लियक़्तरिफ़ू मा हुम् मुक़्तरिफ़ून (113)	के दिल जिनको यक़ीन नहीं आख़िरत का और वे उसको भी पसन्द कर लें और किये जायें जो कुछ बुरे काम कर रहे हैं। (113)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और गाली मत दो उन (बातिल माबूदों) को जिनकी ये (मुश्रिक) लोग ख़ुदा (की तौहीद) को छोड़कर इबादत करते हैं "यानी उनके माबूदों को" क्योंकि (तुम्हारे ऐसा करने से) फिर वे जहालत की वजह से हद से गुज़र कर (यानी गुस्से में आकर) अल्लाह तआ़ला की शान में गुस्ताख़ी करेंगे। (और इसका ताज्जुब न किया जाये कि ऐसी गुस्ताख़ी करने वालों को साथ के साथ सज़ा क्यों नहीं मिल जाती, क्योंकि) हमने (दुनिया में तो) इसी तरह (जैसा हो रहा है) हर तरीक़े वालों को उनका अ़मल (भला हो या बुरा हो) पसन्दीदा बना रखा है (यानी ऐसे असबाब जमा हो जाते हैं कि हर एक को अपना तरीक़ा पसन्द है। इससे मालूम हुआ कि यह आ़लम असल में परीक्षा और इम्तिहान का है, पस इसमें सज़ा ज़रूरी नहीं) फिर (अलबत्ता अपने वक़्त पर) अपने रब ही के पास उन (सब) को जाना है, सो (उस वक़्त) वह उनको जतला देगा जो कुछ भी वे (दुनिया में) किया करते थे (और मुजरिमों को सज़ा दे देगा)। और उन (इनकार करने वाले) लोगों ने अपनी क़समों में बड़ा ज़ोर लगाकर अल्लाह की क़सम खाई कि अगर उनके (यानी हमारे) पास (यानी उनके फ़रमाईशी निशानों में से) कोई निशानी (ज़हूर में) आ जाए तो वे (यानी हम) ज़रूर ही उस (निशान) पर ईमान ले आएँगे (यानी निशान ज़ाहिर करने वाले की नुबुव्वत को मान लेंगे)। आप (जवाब में) कह दीजिए कि निशानियाँ सब ख़ुदा तआ़ला के क़ब्ज़े में हैं (वह उनमें जिस तरह चाहे तसर्रुफ़ फ़रमा दे दूसरे को दख़ल देना और फ़रमाईश करना बेजा है, क्योंकि अल्लाह के सिवा किसी को मालूम नहीं कि किसका ज़ाहिर होना हिक्मत है और किसका ज़ाहिर न होना हिक्मत है। अलबत्ता रसूलों के भेजने के वक़्त मुतलक़ तौर पर किसी निशान को ज़ाहिर कर देना इसमें हिक्मत यक़ीनी है, सो मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की रिसालत के सच्चा होने पर अल्लाह तआ़ला बहुत से निशान ज़ाहिर फ़रमा चुके हैं जो कि दलालत के लिये काफ़ी हैं। बस यह उनकी फ़रमाईश का जवाब हो गया) और (चूँकि मुसलमानों के दिल में ख़्याल था कि अच्छा हो अगर यह निशान ज़ाहिर हो जाये, शायद ये लोग ईमान ले आयें। उनको ख़िताब फ़रमाते हैं कि) तुमको इसकी क्या ख़बर (बल्कि हमको ख़बर है) कि वो (फ़रमाईशी) निशान जिस वक़्त (ज़हूर में) आ जाएँगे, ये लोग (अपने हद से बढ़े हुए बुग़्ज़ और दुश्मनी के सबब) तब भी ईमान न लाएँगे। और (उनके ईमान न लाने की वजह से) हम भी उनके दिलों को (हक़ तलाश करने के इरादे से) और निगाहों को (हक़ देखने की नज़र से) फेर देंगे (और उनका यह ईमान न लाना ऐसा है) जैसा कि ये लोग इस (क़ुरआन) पर (जो कि बहुत बड़ा मोजिज़ा और निशानी है) पहली बार (जबकि यह आया) ईमान नहीं लाए (तो अब ईमान न

लाने को दूर की बात मत समझो) और (निगाहों को बेकार करने का मतलब ज़ाहिरी तौर पर बेकार करना नहीं है, बल्कि मुराद यह है कि) हम उनको उनकी नाफ़रमानी (और कुफ़्र) में हैरान (व परेशान) रहने देंगे (ईमान की तौफ़ीक़ न होगी कि यह भी मानवी तौर पर बेकार करना है)।

आठवाँ पारा (व लौ अन्नना)

और (इनकी दुश्मनी व बैर की तो यह कैफ़ियत है कि) अगर हम (एक फ़रमाईशी निशान क्या कई-कई और बड़े-बड़े फ़रमाईशी निशान भी ज़ाहिर कर देते, मसलन यह कि) उनके पास फ़रिश्तों को भेज देते (जैसा कि वे कहते हैं कि अगर हमारे पास फ़रिश्ते उतर आते) और उनसे मुर्दे (ज़िन्दा होकर) बातें करने लगते (जैसा कि वे कहते हैं कि हमारे बाप-दादा को ज़िन्दा करके हमारे पास लाओ और उनसे हमारी बात कराओ) और (यह तो सिर्फ़ इतना ही कहते हैं कि अल्लाह तआ़ला को और फ़रिश्तों को हमारे सामने लाओ जैसा कि सूरः बनी इस्राईल की आयत 92 में उनका क़ौल नक़ल किया गया है) हम (इसी पर बस न करते बल्कि ग़ैब में) मौजूद तमाम चीज़ों को (जिसमें जन्नत व दोज़ख़ सब ही कुछ आ गया) इनके पास इनकी आँखों के सामने लाकर जमा कर देते (कि सब को खुल्लम-खुल्ला देख लेते) तब भी ये लोग ईमान न लाते, हाँ अगर ख़ुदा ही चाहे (और इनकी तक़दीर बदल दे) तो और बात है। (पस जब उनकी दुश्मनी व मुख़ालफ़त और शरारत की यह कैफ़ियत है और ख़ुद भी वे इसको जानते हैं कि हमारी नीयत इस वक़्त भी ईमान लाने की नहीं तो इसका तक़ाज़ा यह था कि निशानों की फ़रमाईश न करते इसलिये कि इसका कोई फ़ायदा नहीं) लेकिन उनमें से अक्सर लोग जहालत की बातें करते हैं (कि ईमान लाने का तो इरादा नहीं फिर ख़्वाह-मख़्वाह की फ़रमाईशें, इसका जहालत होना ज़ाहिर है)। और (ये लोग जो आप से दुश्मनी रखते हैं यह कोई नई बात आप ही के लिये नहीं हुई, बल्कि जिस तरह ये आप से दुश्मनी रखते हैं) इसी तरह हमने हर नबी के लिए दुश्मन बहुत-से शैतान पैदा किए, कुछ आदमी (जिनसे असल मामला था) और कुछ जिन्न, (शैतान और उसकी औलाद) जिनमें से बाज़े (यानी शैतान और उसका लश्कर) दूसरे बाज़ों को (यानी काफ़िर आदमियों को) चिकनी-चुपड़ी बातों का वस्वसा डालते रहते थे ताकि उनको धोखे में डाल दें (इससे मुराद कुफ़्र व मुख़ालफ़त की बातें हैं कि ज़ाहिर में नफ़्स को अच्छी और भली मालूम होती थीं और अन्दर में तबाह करने वाली थीं, और यही धोखा है। जब यह कोई नई बात नहीं तो इसका ग़म न कीजिए कि आपके साथ ये लोग ऐसे मामलात क्यों करते हैं, असल यह है कि इसमें कुछ हिक्मतें हैं, इस वजह से इनको ऐसे मामलात पर क़ुदरत भी हो गयी है) और अगर तुम्हारा परवर्दिगार (यह) चाहता (कि ये लोग ऐसे मामलात पर क़ादिर न रहें) तो (फिर) ये ऐसे काम न कर सकते (मगर कुछ हिक्मतों की वजह से इनको क़ुदरत दे दी है)। सो (जब इसमें हिक्मतें हैं तो) इन लोगों को और जो कुछ ये (दीन के बारे में) बोहतान लगा रहे हैं (जैसे नुबुव्वत का इनकार जिससे दुश्मनी ज़ाहिर हो रही है) इसको आप रहने दीजिए (इसकी फ़िक्र व ग़म में न पड़िये, हम ख़ुद निर्धारित वक़्त पर मुनासिब सज़ा देंगे, कि उन हिक्मतों में से एक यह

भी है)।

और (वे शैतान उन काफ़िर आदमियों के दिल में इसलिये बुरा ख़्याल डालते थे) ताकि उस (फ़रेब भरी बात) की तरफ़ उन लोगों के दिल माईल हो जाएँ जो आख़िरत पर (जैसा चाहिये वैसा) यक़ीन नहीं रखते (इससे मुराद काफ़िर लोग हैं, चाहे वे अहले किताब हों, क्योंकि जैसा चाहिये उनको भी यक़ीन नहीं, वरना नुबुव्वत के इनकार करने की जिस पर क़ियामत में सज़ा होगी कभी जुर्रत न करते)। और ताकि (दिली मैलान के बाद) उसको (दिल के यक़ीन से भी) पसन्द कर लें, और ताकि (यक़ीन व एतिक़ाद के बाद) उन कामों के करने वाले (भी) हो जाएँ जिनको वे करते थे।

मआरिफ़ व मसाईल

बयान हुई आयतों में से पहली आयत एक ख़ास वाक़िए में नाज़िल हुई है, और इसमें एक अहम उसूली मसले की हिदायत दी गयी है, कि जो काम ख़ुद करना जायज़ नहीं उसका सबब और ज़रिया बनना भी जायज़ नहीं।

आयत का शाने नुज़ूल (उतरने का मौक़ा और सबब) अ़ल्लामा इब्ने जरीर की रिवायत के मुताबिक़ यह है कि जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चाचा मोहतरम अबू तालिब मौत की बीमारी में थे तो क़ुरैश के मुश्रिक सरदार जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की दुश्मनी और तकलीफ़ पहुँचाने में लगे हुए थे, और क़त्ल की साज़िशें करते रहते थे, उनको यह फ़िक्र हुई कि अबू तालिब की वफ़ात हमारे लिये एक मुश्किल मसला बन जायेगी, क्योंकि उनके बाद अगर हम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) को क़त्ल करें तो यह हमारी इ़ज़्ज़त व शराफ़त के ख़िलाफ़ होगा, लोग कहेंगे कि अबू तालिब के सामने तो इनका कुछ बिगाड़ न सके, उनकी मौत के बाद अकेला पाकर क़त्ल कर दिया। इसलिये अब वक़्त है कि हम मिलकर ख़ुद अबू तालिब ही से कोई निर्णायक बात कर लें।

यह बात तक़रीबन हर लिखा पढ़ा मुसलमान जानता है कि अबू तालिब अगरचे मुसलमान नहीं हुए थे लेकिन हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की न सिर्फ़ मुहब्बत बल्कि इ़ज़्ज़त व क़द्र भी उनके दिल में जमी हुई थी, और आपके दुश्मनों के मुक़ाबले में मज़बूत ढाल बने रहते थे।

चन्द क़ुरैशी सरदारों ने यह मश्विरा करके अबू तालिब के पास जाने के लिये एक जमाअ़त गठित की, जिसमें अबू सुफ़ियान, अबू जहल, अ़मर बिन आ़स वग़ैरह क़ुरैशी सरदार शामिल थे। अबू तालिब से इस जमाअ़त की मुलाक़ात के लिये वक़्त लेने का काम एक शख़्स मुत्तलिब नाम के को सुपुर्द हुआ। उसने अबू तालिब से इजाज़त लेकर इस जमाअ़त को वहाँ पहुँचाया।

जमाअ़त ने अबू तालिब से कहा कि आप हमारे बड़े और सरदार हैं, और आपको मालूम है कि आपके भतीजे मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) ने हमें और हमारे माबूदों को सख़्त तकलीफ़ पहुँचा रखी है, हम चाहते हैं कि आप उनको बुलाकर समझा दें कि वह हमारे माबूदों को बुरा न कहें तो हम इस पर सुलह कर लेंगे कि वह अपने दीन पर जिस तरह चाहें अ़मल

करें, जिसको चाहें माबूद बनायें, हम उनको कुछ न कहेंगे।

अबू तालिब ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपने पास बुलाया और कहा कि ये आपकी बिरादरी के सरदार आये हैं। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस जमाअ़त से मुख़ातिब होकर फ़रमाया कि आप लोग क्या चाहते हैं? उन्होंने कहा कि हमारी इच्छा यह है कि आप हमें और हमारे माबूदों को छोड़ दें, बुरा भला न कहें, और हम आपको और आपके माबूद को छोड़ देंगे, इस तरह आपसी मुख़ालफ़त ख़त्म हो जायेगी।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अच्छा यह बतलाओ कि अगर मैं तुम्हारी यह बात मान लूँ तो क्या तुम एक ऐसा कलिमा (वाक्य और बात) कहने के लिये तैयार हो जाओगे जिसके कहने से तुम सारे अ़रब के मालिक हो जाओगे, और अ़रब से बाहर की दुनिया के लोग भी तुम्हारे ताबे और कर दाता बन जायेंगे?

अबू जहल बोला कि ऐसा कलिमा एक नहीं हम दस कहने को तैयार हैं, बतलाईये वह क्या है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया "ला इला-ह इल्लल्लाहु" यह सुनते ही सब नाराज़ और ग़ुस्सा हो गये। अबू तालिब ने भी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से कहा कि मेरे भतीजे! इस कलिमे के सिवा कोई और बात कहो, क्योंकि आपकी क़ौम इस कलिमे से घबरा गयी है।

आपने फ़रमाया- चचा जान! मैं तो इस कलिमे के सिवा कोई दूसरा कलिमा नहीं कह सकता। अगर ये लोग आसमान से सूरज को उतार लायें और मेरे हाथ में रख दें तब भी मैं इस कलिमे के सिवा कोई दूसरा हरगिज़ न कहूँगा। मक़सद यह था कि इनको मायूस कर दें।

इस पर ये लोग नाराज़ होकर कहने लगे या तो आप हमारे माबूदों (बुतों) को बुरा कहने से बाज़ आ जाईये वरना हम आपको भी गालियाँ देंगे और उस ज़ात को भी जिसका आप अपने आपको रसूल बतलाते हैं। इस पर यह आयत नाज़िल हुईः

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًا ۢ بِغَيْرِ عِلْمٍ

यानी आप उन बुतों को बुरा न कहें जिनको इन लोगों ने ख़ुदा बना रखा है, जिसके नतीजे में वे अल्लाह तआ़ला को बुरा कहने लगें अपनी गुमराही और बेसमझी की वजह से।

इसमें "ला तसुब्बू" लफ़्ज़ "सब्ब" से निकला है, जिसके मायने हैं गाली देना। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो अपने फ़ितरी अख़्लाक़ की बिना पर पहले ही इसके पाबन्द थे, कभी बचपन में भी किसी इनसान बल्कि किसी जानवर के लिये भी गाली का लफ़्ज़ आपकी मुबारक ज़बान पर जारी नहीं हुआ, मुम्किन है कुछ सहाबा-ए-किराम की ज़बान से कभी कोई सख़्त कलिमा निकल भी गया हो जिसको मक्का के मुश्रिकों ने गाली से ताबीर किया, और क़ुरैशी सरदारों के इस मण्डल (जमाअ़त) ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने इस मामले को रखकर यह ऐलान कर दिया कि आप हमारे बुतों को बुरा-भला कहने से बाज़ न आयेंगे तो हम आपके ख़ुदा को बुरा-भला कहेंगे।

इस पर क़ुरआनी हुक्म यह नाज़िल हुआ, जिसके ज़रिये मुसलमानों को रोक दिया गया कि वे मुश्रिकों के बातिल और झूठे माबूदों के बारे में कोई सख़्त कलिमा न कहा करें। इस आयत में यह बात ख़ास तौर से क़ाबिले ध्यान है कि इससे पहली आयत में ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब हो रहा था, मसलन इरशाद है:

اِتَّبِعْ مَآ اُوْحِیَ اِلَیْكَ مِنْ رَّبِّكَ.

और:

اَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِيْنَ.

और:

مَاجَعَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا.

और:

مَآاَنْتَ عَلَيْهِمْ بِوَكِيْلٍ.

इन तमाम कलिमों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मुख़ातब थे, कि आप ऐसा करें या ऐसा न करें। इसके बाद इस आयत में ख़िताब का अन्दाज़ रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से फेरकर आ़म मुसलमानों की तरफ़ कर दिया गया। फ़रमाया "ला तसुब्बू" इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तो कभी किसी को गाली दी ही नहीं थी, उनको डायरेक्ट इस कलाम का मुख़ातब बनाना उनकी दिली तकलीफ़ का सबब हो सकता है, इसलिये ख़िताब आ़म कर दिया गया, और तमाम सहाबा-ए-किराम भी इसमें एहतियात फ़रमाने लगे। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

रहा यह मामला कि क़ुरआने करीम की बहुत सी आयतों में बुतों का तज़किरा सख़्त अलफ़ाज़ में आया है, और वो आयतें मन्सूख़ (रद्द) भी नहीं, उनकी तिलावत अब भी होती है।

इसका जवाब यह है कि क़ुरआनी आयतों में जहाँ कहीं ऐसे अलफ़ाज़ आये हैं वो मुनाज़रे के तौर पर किसी हक़ीक़त को स्पष्ट करने के लिये लाये गये हैं, वहाँ किसी का दिल दुखाना मक़सद नहीं है, और न कोई समझदार इनसान उनसे यह नतीजा निकाल सकता है कि इसमें बुतों को बुरा कहना या मुश्रिकों को चिड़ाना मन्ज़ूर है। और यह एक ऐसा खुला हुआ फ़र्क़ है जिसको हर भाषा के मुहावरे वाले आसानी से समझ सकते हैं कि कभी किसी शख़्स का कोई ऐब या बुराई किसी मसले की सफ़ाई और उसको स्पष्ट करने के लिये ज़िक्र की जाती है, जैसे आ़म तौर पर अ़दालतों में हर रोज़ सामने आता रहता है, लेकिन अ़दालत के सामने होने वाले बयान को दुनिया में कोई आदमी यह नहीं कहता कि फ़ुलाँ ने फ़ुलाँ को गाली दी है। इसी तरह डॉक्टर और हकीमों के सामने इनसान के बहुत से ऐसे ऐब बयान किये जाते हैं कि उनको दूसरी जगह और दूसरी तरह कोई बयान करेगा तो गाली समझी जाये, लेकिन इलाज की ग़र्ज़ से उनके बयान करने को कोई गाली देना नहीं कहता।

इसी तरह क़ुरआने करीम ने जगह-जगह बुतों के बेहिस व बेशऊर और बेइल्म व बेक़ुदरत

और बेबस होने को इस अन्दाज़ में बयान फ़रमाया है कि समझने वाले हक़ीक़त को समझ लें, और न समझने वालों की ग़लती या कम-समझी वाज़ेह हो जाये। जिसके नतीजे में क़ुरआन पाक में इरशाद हुआ है:

ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوْبُ.

"यानी यह बुत भी कमज़ोर हैं और इनके चाहने वाले भी कमज़ोर" या यह इरशाद हुआ है:

اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ.

"यानी तुम और जिन बुतों की तुम इबादत करते हो वो सब जहन्नम का ईंधन हैं।"

यहाँ भी किसी को बुरा-भला कहना मक़सूद नहीं, गुमराही और ग़लती का बुरा अन्जाम बयान करना मक़सूद है। और फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने स्पष्ट फ़रमाया है कि अगर कोई शख़्स इस आयत को भी मुश्रिकों के चिड़ाने के लिये पढ़े तो उसके लिये उस वक़्त यह तिलावत करना भी वर्जित बुरा-भला कहने के हुक्म में दाख़िल और नाजायज़ है। जैसे बुरी जगहों में क़ुरआन की तिलावत का नाजायज़ होना सब को मालूम है। (तफ़सीर रूहुल-मआनी)

मज़मून का ख़ुलासा यह है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़बान और क़ुरआने करीम में तो न पहले कभी ऐसा आया था जिसको लोग गाली समझें, और न आईन्दा आने का कोई ख़तरा था, हाँ मुसलमानों से इसकी संभावना थी उनको इस आयत ने ऐसा करने से रोक दिया।

इस वाक़िए और इस पर क़ुरआनी हिदायत ने एक बड़े इल्म का दरवाज़ा खोल दिया, और चन्द उसूली मसाईल इससे निकल आये।

किसी गुनाह का सबब बनना भी गुनाह है

मसलन एक उसूल यह निकल आया कि जो काम अपनी ज़ात के एतिबार से जायज़ बल्कि किसी दर्जे में अच्छा भी हो मगर उसके करने से कोई फ़साद (ख़राबी) लाज़िम आता हो, या उसके नतीजे में लोग बुराई और गुनाह में मुब्तला होते हों, वह काम भी मना और वर्जित हो जाता है। क्योंकि झूठे माबूदों यानी बुतों को बुरा कहना कम से कम जायज़ तो ज़रूर है, और ईमानी ग़ैरत के तक़ाज़े से कहा जाये तो शायद अपनी ज़ात में सवाब और अच्छा भी हो, मगर चूँकि इसके नतीजे में यह अन्देशा हो गया कि लोग अल्लाह जल्ल शानुहू को बुरा कहेंगे तो बुतों को बुरा कहने वाले इस बुराई का सबब बन जायेंगे, इसलिये इस जायज़ काम को भी मना कर दिया गया।

इसकी एक और मिसाल भी हदीस में इस तरह आई है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को मुख़ातब करके फ़रमाया कि कोई शख़्स अपने माँ-बाप को गाली न दे। सहाबा-ए-किराम ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! यह तो किसी शख़्स से मुम्किन ही नहीं कि अपने माँ-बाप को गाली दे। फ़रमाया कि हाँ इनसान ख़ुद तो उनको गाली नहीं देता, लेकिन जब

वह किसी दूसरे शख़्स के माँ-बाप को गाली दे और उसके नतीजे में वह दूसरा इसके माँ-बाप को गाली दे, तो उस गाली दिलवाने का सबब यह बेटा बना, तो यह भी ऐसा ही है जैसे इसने ख़ुद गाली दी।

इसी मामले की एक दूसरी मिसाल हुज़ूरे पाक के दौर में यह पेश आई कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से फ़रमाया कि बैतुल्लाह शरीफ़ जाहिलीयत (इस्लाम से पहले) के ज़माने के किसी हादसे में ध्वस्त हो गया था तो मक्का के क़ुरैश ने हुज़ूरे पाक की नुबुव्वत से पहले उसकी तामीर कराई। इस तामीर में चन्द चीज़ें हज़रत इब्राहीम की तामीर की बुनियादों के ख़िलाफ़ हो गयीं- एक तो यह कि जिस हिस्से को **हतीम** कहा जाता है यह भी बैतुल्लाह का हिस्सा है, तामीर में इसको पैसा कम होने की बिना पर छोड़ दिया। दूसरे बैतुल्लाह शरीफ़ के दो दरवाज़े पूर्वी और पश्चिमी थे, एक दाख़िल होने के लिये दूसरा बाहर निकलने के लिये, जाहिलीयत के लोगों ने पश्चिमी दरवाज़ा बन्द करके सिर्फ़ एक कर दिया, और वह भी ज़मीन की सतह से ऊँचा कर दिया, ताकि बैतुल्लाह शरीफ़ में दाख़िला सिर्फ़ उनकी मर्ज़ी व इजाज़त से हो सके। हर शख़्स बिना किसी रोक-टोक के न जा सके। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरा दिल चाहता है कि बैतुल्लाह की मौजूदा तामीर को गिराकर हज़रत ख़लीलुल्लाह की तामीर के बिल्कुल मुताबिक़ बना दूँ, मगर ख़तरा यह है कि तुम्हारी क़ौम यानी आम अ़रब अभी-अभी मुसलमान हुए हैं, बैतुल्लाह को गिराने से कहीं उनके दिलों में कुछ शुब्हात न पैदा हो जायें, इसलिये मैंने अपने इरादे को छोड़ दिया।

ज़ाहिर है कि बैतुल्लाह की तामीर को इब्राहीमी बुनियादों के मुताबिक़ बनाना एक नेकी और सवाब का काम था, मगर इस पर लोगों की नावाक़फ़ियत के सबब एक ख़तरे की संभावना देखकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस इरादे को छोड़ दिया। इस वाक़िए से भी यही उसूल समझ में आया कि अगर किसी जायज़ बल्कि सवाब के काम पर कोई ख़राबी और विवाद लाज़िम आता हो तो वह जायज़ काम भी मना हो जाता है।

लेकिन इस पर एक मज़बूत इश्काल (शुब्हा) है, जिसको तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में अबू मन्सूर से नक़ल किया है। वह यह कि अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों पर जिहाद व क़िताल लाज़िम फ़रमाया है, हालाँकि क़िताल (लड़ाई और जंग) का यह लाज़िमी नतीजा है कि मुसलमान किसी ग़ैर-मुस्लिम को क़त्ल करने का इरादा करेगा तो वे मुसलमानों को क़त्ल करेंगे, और मुसलमान का क़त्ल हराम है, तो इस उसूल पर जिहाद भी मना और वर्जित हो जाना चाहिये। ऐसे ही हमारी इस्लामी तब्लीग़ और क़ुरआन की तिलावत पर तथा अज़ान और नमाज़ पर बहुत से काफ़िर मज़ाक़ उड़ाते हैं, तो क्या हम उनके इस ग़लत रवैये की बिना पर अपनी इबादतों को छोड़ देंगे?

इसका जवाब ख़ुद अबू मन्सूर ने यह दिया है कि यह इश्काल एक ज़रूरी शर्त के नज़र-अन्दाज़ कर देने से पैदा हो गया। शर्त यह है कि वह जायज़ काम जिसको किसी ख़राबी

लाज़िम आने की वजह से मना कर दिया गया है वह इस्लाम के मक़ासिद और ज़रूरी कामों में से न हो। जैसे बातिल और झूठे माबूदों को बुरा कहना, इससे इस्लाम का कोई मक़सद जुड़ा हुआ नहीं, इसलिये जब इस पर किसी दीनी ख़राबी का ख़तरा लाहिक़ हुआ तो उन कामों को छोड़ दिया गया। और जो काम ऐसे हैं कि इस्लाम में ख़ुद मक़सूद हैं, या कोई इस्लामी उद्देश्य उसपर निर्भर है, अगर दूसरे लोगों की ग़लत चाल से उन पर कोई बिगाड़ और ख़राबी लाज़िम भी होती नज़र आये तो उन मक़ासिद को हरगिज़ छोड़ा न जायेगा, बल्कि इसकी कोशिश की जायेगी कि वे काम तो अपनी जगह जारी रहें और पेश आने वाली ख़राबियाँ जहाँ तक मुम्किन हो बन्द हो जायें।

यही वजह है कि एक मर्तबा हज़रत हसन बसरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि और इमाम मुहम्मद बिन सीरीन रहमतुल्लाहि अ़लैहि दोनों हज़रात एक जनाज़े की नमाज़ में शिर्कत के लिये चले। वहाँ देखा कि मर्दों के साथ औरतों का भी इज्तिमा है, उसको देखकर इब्ने सीरीन वापस हो गये मगर हज़रत हसन बसरी ने फ़रमाया कि लोगों की ग़लत रविश की वजह से हम अपने ज़रूरी काम कैसे छोड़ दें। नमाज़े जनाज़ा फ़र्ज़ है उसको इस ख़राबी की वजह से नहीं छोड़ा जा सकता, हाँ जहाँ तक संभव हो इसकी कोशिश की जायेगी कि यह ख़राबी और बुराई मिट जाये। यह वाक़िआ भी तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में नक़ल किया गया है।

इसलिये इस उसूल का ख़ुलासा जो उपर्युक्त आयत से निकला है यह हो गया कि जो काम अपनी ज़ात में जायज़ बल्कि नेकी व सवाब भी हो मगर शरीअ़त के मक़ासिद (उद्देश्य और ज़रूरी कामों) में से न हो, अगर उसके करने पर कुछ ख़राबियाँ लाज़िम आ जायें तो वह काम छोड़ देना वाजिब हो जाता है, बख़िलाफ़ शरई मक़ासिद के कि वह ख़राबियों के लाज़िम आने की वजह से नहीं छोड़े जा सकते।

इस उसूल से उम्मत फ़ुक़हा (उलेमा और क़ुरआन व हदीस से मसाईल निकालने वाले हज़रात) ने हज़ारों मसाईल के अहकाम निकाले हैं। फ़ुक़हा ने फ़रमाया है कि किसी शख़्स का बेटा नाफ़रमान हो और वह यह जानता हो कि उसको किसी काम के करने के लिये कहूँगा तो इनकार करेगा और उसके ख़िलाफ़ करेगा जिससे उसका सख़्त गुनाहगार होना लाज़िम आयेगा, तो ऐसी सूरत में बाप को चाहिये कि उसको हुक्म के अन्दाज़ में किसी काम के करने या छोड़ने को न कहे, बल्कि नसीहत के अन्दाज़ में इस तरह कहे कि फ़ुलाँ काम कर लिया जाये तो बहुत अच्छा हो। ताकि इनकार या ख़िलाफ़ करने की सूरत में एक नई नाफ़रमानी का गुनाह उस पर आ़यद न हो जाये। (ख़ुलासतुल-फ़तावा)

इसी तरह किसी को वअ़ज़ व नसीहत करने में भी अगर अन्दाज़े और हालात से यह मालूम हो जाये कि वह नसीहत क़ुबूल करने के बजाय कोई ऐसा ग़लत अन्दाज़ इख़्तियार करेगा जिसके नतीजे में वह और ज़्यादा गुनाह में मुब्तला हो जायेगा तो ऐसी सूरत में नसीहत छोड़ देना बेहतर है। इमाम बुख़ारी रह. ने सही बुख़ारी में इस विषय पर एक मुस्तक़िल बाब रखा है:

باب من ترك بعض الا ختيار مخافة ان يقصر فهم بعض اناس فيقعوا في اشد منه.

यानी कई बार जायज़ बल्कि अच्छी चीज़ों को इसलिये छोड़ दिया जाता है कि उससे कम-समझ अवाम को किसी ग़लत-फ़हमी में मुब्तला हो जाने का ख़तरा होता है, बशर्ते कि वह काम इस्लामी मक़ासिद में दाख़िल न हो।

मगर जो काम इस्लामी मक़ासिद में दाख़िल हैं चाहे फ़राईज़ व वाजिबात हों या मुअक्कदा सुन्नतें या दूसरी क़िस्म की इस्लामी पहचान की चीज़ें, अगर उनके अदा करने से कुछ कम-समझ लोग ग़लती में मुब्तला होने लगें तो उन कामों को हरगिज़ न छोड़ा जायेगा, बल्कि दूसरे तरीक़ों से लोगों की ग़लत-फ़हमी और ग़लत काम करने को दूर करने की कोशिश की जायेगी।

इस्लाम के शुरू ज़माने के वाक़िआत गवाह हैं कि नमाज़ व तिलावत और तब्लीग़े इस्लाम की वजह से मक्का के मुश्रिकों को गुस्सा आता और वे बिफरते थे मगर इसकी वजह से इन इस्लाम के अहकाम और पहचानों को कभी नहीं छोड़ा गया, बल्कि ख़ुद उक्त आयत के शाने नुज़ूल में जो वाक़िआ अबू जहल वग़ैरह क़ुरैश के सरदारों का ज़िक्र किया गया है उसका हासिल यही था कि क़ुरैशी सरदार इस पर सुलह करना चाहते थे कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तौहीद (अल्लाह को एक मानने) की तब्लीग़ करना छोड़ दें, जिसके जवाब में आपने फ़रमाया कि मैं यह काम किसी हाल में नहीं कर सकता चाहे वे सूरज और चाँद लाकर मेरे हाथ पर रख दें।

इसलिये यह मसला इस तरह साफ़ हो गया कि जो काम इस्लामी मक़ासिद में दाख़िल हैं अगर उनके करने से कुछ लोग ग़लत-फ़हमी का शिकार होते हों तो उन कामों को हरगिज़ न छोड़ा जायेगा, हाँ जो काम इस्लामी मक़ासिद में दाख़िल नहीं, और उनके छोड़ देने से कोई दीनी मक़सद ख़त्म नहीं होता ऐसे कामों को दूसरों की ग़लत-फ़हमी या ग़लत काम करने के अन्देशे की वजह से छोड़ दिया जायेगा।

पिछली आयतों में इसका ज़िक्र था कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के खुले हुए मोजिज़े और अल्लाह तआ़ला की रोशन निशानियों के बावजूद हठधर्म लोगों ने अपनी ज़िद और हठधर्मी का एक नया रूप यह बदला कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ख़ास-ख़ास क़िस्म के मोजिज़े दिखलाने का मुतालबा किया, जैसा कि इमाम इब्ने जरीर रह. ने नक़ल किया है कि क़ुरैश के सरदारों ने मुतालबा किया कि अगर आप हमें यह मोजिज़ा दिखला दें कि सफ़ा पहाड़ पूरा सोना हो जाये तो हम आपकी नुबुव्वत व रिसालत को मान लेंगे और मुसलमान हो जायेंगे।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अच्छा पक्का वायदा करो कि अगर यह मोजिज़ा ज़ाहिर हो गया तो तुम सब मुसलमान हो जाओगे? उन्होंने क़समें खा लीं, आप अल्लाह तआ़ला से दुआ़ करने के लिये खड़े हो गये कि इस पहाड़ को सोना बना दीजिए। हज़रत जिब्रील अ़लैहिस्सलाम यही लेकर आये कि अगर आप चाहें तो हम अभी इस पूरे पहाड़ को सोना बना दें लेकिन अल्लाह के क़ानून के मुताबिक़ इसका यह नतीजा होगा कि अगर फिर भी ये ईमान न लाये तो सब पर सार्वजनिक अ़ज़ाब नाज़िल करके हलाक कर दिया जायेगा, जैसे पिछली क़ौमों में हमेशा होता रहा है, कि उन्होंने किसी ख़ास मोजिज़े का मुतालबा किया, वह

दिखाया गया, और वे फिर भी इनकारी हो गये तो उन पर ख़ुदा तआ़ला का क़हर व अ़ज़ाब नाज़िल हो गया। रहमतुल्-लिल्आ़लमीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम चूँकि उन लोगों की आ़दतों और हठधर्मी से वाक़िफ़ थे, शफ़क़त के तक़ाज़े से आपने फ़रमाया कि अब मैं इस मोजिज़े की दुआ़ नहीं करता। इस वाक़िए पर यह आयत नाज़िल हुईः

وَاَقْسَمُوْا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ

जिसमें काफ़िरों के क़ौल की नक़ल की है कि उन्होंने मतलूबा मोजिज़ा ज़ाहिर होने पर मुसलमान हो जाने के लिये क़समें खा लीं। इसके बाद की आयतः

اِنَّمَا الْاٰيٰتُ عِنْدَ اللّٰهِ

में उनके क़ौल का जवाब है कि मोजिज़े और निशानियाँ सब अल्लाह तआ़ला के इख़्तियार में हैं, और जो मोजिज़े ज़ाहिर हो चुके हैं वो भी उसी की तरफ़ से थे, और जिनका मुतालबा किया जा रहा है उन पर भी वह पूरी तरह क़ादिर है, लेकिन अ़क़्ल व इन्साफ़ के एतिबार से उनको ऐसा मुतालबा करने का कोई हक़ नहीं, क्योंकि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के रसूल होने के दावेदार हैं, और इस दावे पर बहुत सी दलीलें और शहादतें मोजिज़ों की सूरत में पेश फ़रमा चुके हैं, अब दूसरे फ़रीक़ को इसका तो हक़ है कि उन दलीलों और शहादतों पर जिरह करे, उनको ग़लत साबित करे, लेकिन उन पेश की हुई शहादतों (सुबूतों) में कोई जिरह न करें और फिर यह मुतालबा करें कि हम तो दूसरी शहादतें चाहते हैं, यह ऐसा होगा जैसे अ़दालत में जिस पर दावा किया गया है वह दावेदार के पेश किये हुए गवाहों पर तो कोई जिरह न करे, मगर यह कहे कि मैं तो इन गवाहों की गवाही नहीं मानता, बल्कि फ़ुलाँ विशेष शख़्स की गवाही पर बात मानूँगा। इसको कोई अ़दालत सुनवाई के क़ाबिल न समझेगी।

इसी तरह नुबुव्वत व रिसालत पर बेशुमार स्पष्ट निशानियाँ और मोजिज़े ज़ाहिर हो जाने के बाद जब तक उन मोजिज़ों को ग़लत साबित न करें, उनको यह कहने का हक़ नहीं कि हम तो फ़ुलाँ क़िस्म का मोजिज़ा देखेंगे तब ईमान लायेंगे।

इसके बाद आयतों के आख़िर तक मुसलमानों को तंबीह और ख़िताब है कि तुम्हारा काम हक़ दीन पर ख़ुद क़ायम रहना और दूसरों को सही तरीक़े से पहुँचा देना है, फिर भी अगर वे हठधर्मी करने लगें तो उनकी फ़िक्र में नहीं पड़ना चाहिये, क्योंकि ज़बरदस्ती किसी को मुसलमान बनाना नहीं, अगर ज़बरदस्ती बनाना होता तो अल्लाह तआ़ला से ज़्यादा ज़बरदस्त कौन है, वह ख़ुद ही सब को मुसलमान बना देते। और इन आयतों में मुसलमानों को मुत्मईन करने के लिये यह भी बतला दिया गया कि अगर हम उनके माँगे हुए मोजिज़ों को भी बिल्कुल खुले और वाज़ेह तौर पर ज़ाहिर कर दें तब भी वे ईमान न लायेंगे, क्योंकि उनका इनकार किसी ग़लत-फ़हमी या नावाक़फ़ियत की वजह से नहीं, बल्कि ज़िद, दुश्मनी और हठधर्मी से है, जिसका इलाज किसी मोजिज़े से नहीं हुआ करता। आख़िरी आयत 'व लौ अन्नना नज़्ज़ल्ना इलैहिमुल-मलाइ-कतु' में इसी मज़मून का बयान है कि अगर हम उनको उनके फ़रमाईशी मोजिज़े सब

दिखला दें, बल्कि उनसे भी ज़्यादा फ़रिश्तों से उनकी मुलाक़ात और मुर्दों से गुफ़्तगू करा दें, तब भी वे मानने वाले नहीं। बाद की दो आयतों में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को तसल्ली दी गयी है कि ये लोग अगर आप से दुश्मनी रखते हैं तो कुछ ताज्जुब की बात नहीं, पिछले तमाम अम्बिया के भी दुश्मन होते चले आये हैं। आप इससे दुखी और परेशान न हों।

أَفَغَيْرَ اللّٰهِ أَبْتَغِيْ حَكَمًا وَّهُوَ الَّذِيْٓ أَنْزَلَ إِلَيْكُمُ

الْكِتٰبَ مُفَصَّلًا ۭ وَالَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْلَمُوْنَ اَنَّهٗ مُنَزَّلٌ مِّنْ رَّبِّكَ بِالْحَقِّ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ ۝ وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ صِدْقًا وَّعَدْلًا ۭ لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ ۚ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝ وَاِنْ تُطِعْ اَكْثَرَ مَنْ فِي الْاَرْضِ يُضِلُّوْكَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۭ اِنْ يَّتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُوْنَ ۝ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ مَنْ يَّضِلُّ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۚ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ ۝

अ-फ़ग़ैरल्लाहि अब्तग़ी ह-कमंव्-व हुवल्लज़ी अन्ज़-ल इलैकुमुल्-किता-ब मुफ़स्सलन्, वल्लज़ी-न आतैनाहुमुल्-किता-ब यअ्लमू-न अन्नहू मुनज़्ज़लुम्-मिर्रब्बि-क बिल्हक़्क़ि फ़ला तकूनन्-न मिनल्-मुम्तरीन (114) व तम्मत् कलि-मतु रब्बि-क सिद्क़ंव्-व अ़द्लन्, ला मुबद्दि-ल लि-कलिमातिही व हुवस्समीअुल्-अ़लीम (115) व इन् तुतिअ् अक्स-र मन् फ़िल्अर्ज़ि युज़िल्लू-क अ़न् सबीलिल्लाहि, इंय्यत्तबिअू-न इल्लज़्ज़न्-न व इन् हुम् इल्ला यख़्रुसून (116) इन्-न रब्ब-क हु-व अअ्लमु मंयज़िल्लु अ़न् सबीलिही व हु-व अअ्लमु बिल्मुह्तदीन (117)	सो क्या अल्लाह के सिवा किसी और को मुन्सिफ़ (जज) बनाऊँ हालाँकि उसी ने उतारी तुम पर खुली किताब, और जिन लोगों को हमने किताब दी है वे जानते हैं कि यह उतरी है तेरे रब की तरफ़ से ठीक, सो तू मत हो शक करने वालों में। (114) और तेरे रब की बात पूरी सच्ची है और इन्साफ़ की, कोई बदलने वाला नहीं उसकी बात को, और वही है सुनने वाला जानने वाला। (115) और अगर तू कहना मानेगा अक्सर उन लोगों का जो दुनिया में हैं तो तुझको बहका देंगे अल्लाह की राह से, वे सब तो चलते हैं अपने ख़्याल पर और सब अटकल ही दौड़ाते हैं। (116) तेरा रब ख़ूब जानने वाला है उसको जो बहकता है उसकी राह से, और वही ख़ूब जानने वाला है उनको जो उसकी राह पर हैं। (117)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(आप कह दीजिए कि मेरे और तुम्हारे बीच जो रिसालत के मुक़द्दिमे में विवाद है कि मैं सरकारी हुक्म से उसका दावेदार हूँ और तुम इनकार करते हो, और यह मुक़द्दिमा अह्कमुल-हाकिमीन की बारगाह से मेरे हक़ में इस तरह तय और फ़ैसल हो चुका है कि मेरे इस दावे पर काफ़ी सुबूत और दलील, यानी सब को आ़जिज़ कर देने वाला क़ुरआन ख़ुद क़ायम फ़रमा दिया है और तुम फिर भी नहीं मानते) तो क्या (तुम यह चाहते हो कि मैं इस ख़ुदाई फ़ैसले को काफ़ी न क़रार दूँ और) अल्लाह तआ़ला के सिवा किसी और फ़ैसला करने वाले को तलाश करूँ? हालाँकि वह ऐसा (कामिल फ़ैसला कर चुका) है कि उसने एक कामिल किताब (जो अपने बेमिसाल होने में) कामिल (है) तुम्हारे पास भेज दी है (जो अपने मोजिज़ा होने की वजह से नुबुव्वत पर इशारा करने में काफ़ी है, पस उसके दो कमाल तो ये हैं, सब को अपने जैसा कलाम बनाने से आ़जिज़ करने वाली और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उतरी हुई होना, और इसके अ़लावा और एतिबार से भी कामिल है। और उससे जो हिदायत व तालीम के दूसरे उद्देश्य जुड़े हुए हैं उनके लिये काफ़ी है, चुनाँचे) उसकी (एक यानी तीसरी कमाल की) हालत यह है कि उसके मज़ामीन (जो दीन के बारे में अहम हैं) ख़ूब साफ़-साफ़ बयान किए गए हैं। और (कमाल की चौथी ख़ूबी उसकी यह है कि पहली आसमानी किताबों में उसकी ख़बर दी गयी थी जो निशानी है उसके अहम और शान वाली होने की, चुनाँचे) जिन लोगों को हमने किताब (यानी तौरात व इंजील) दी है वे इस बात को यक़ीन के साथ जानते हैं कि यह (क़ुरआन) आपके रब की तरफ़ से हक़ के साथ भेजा गया है (इसको जानते तो सब हैं, फिर जिनमें हक़ कहने की सिफ़त थी उन्होंने ज़ाहिर भी कर दिया, और जो मुख़ालिफ़ व दुश्मन थे वे ज़ाहिर न करते थे) सो आप शुब्हा करने वालों में न हों। और (कमाल की पाँचवी ख़ूबी इसकी यह है कि) आपके रब का (यह) कलाम हक़ीक़त और एतिदाल के एतिबार से (भी) कामिल है, (यानी उलूम व अ़क़ीदों में वास्तविकता और ज़ाहिरी व बातिनी आमाल में एतिदाल लिये हुए है। और इसके कमाल का छठा वस्फ़ यह है कि) इसके (इस) कलाम का कोई बदलने वाला नहीं, (यानी किसी की तब्दीली और कमी-बेशी करने से इसको अल्लाह बचाने वाला है। जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया कि हम ही इसकी हिफ़ाज़त करने वाले हैं) और (ऐसी कामिल दलील पर भी जो लोग ज़बान और दिल के झुठलाने से पेश आयें) वह (यानी अल्लाह तआ़ला उनकी बातों को) ख़ूब सुन रहे हैं (और उनके अ़क़ीदों को) ख़ूब जान रहे हैं (अपने वक़्त पर उनको काफ़ी सज़ा देंगे)।

और (बावजूद दलीलों के खुल जाने और स्पष्ट हो जाने के) दुनिया में अक्सर लोग ऐसे (इनकारी और गुमराह) हैं कि अगर (मान लो) आप उनका कहना मानने लगें तो वे आपको अल्लाह की राह (रास्ते) से बेराह कर दें (क्योंकि वे ख़ुद गुमराह हैं, चुनाँचे अ़क़ीदों में) वे सिर्फ़ बेअसल ख़्यालात पर चलते हैं, और (बातों में) बिल्कुल अन्दाज़े की और ख़्याली बातें करते हैं। (और उनके मुक़ाबले में ख़ुदा के कुछ बन्दे सही राह पर भी हैं और) यक़ीनन आपका रब उसको

(भी) ख़ूब जानता है जो उसकी (बतलाई हुई सीधी) राह से बेराह हो जाता है, और वह (ही) उनको भी ख़ूब जानता है जो उसकी (बतलाई हुई) राह पर चलते हैं (पस गुमराहों को सज़ा मिलेगी और सही राह वालों को इनाम व सम्मान से नवाज़ा जायेगा)।

मआरिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में इसका ज़िक्र था कि मक्का के मुश्रिक लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन के हक़ व सही होने पर खुले-खुले मोजिज़े और दलीलें देखने और जानने के बावजूद हठधर्मी से यह मुतालबा करते हैं कि फ़ुलाँ-फ़ुलाँ किस्म के ख़ास मोजिज़े हमें दिखलाये जायें तो हम मानने को तैयार हैं। क़ुरआने करीम ने उनकी बेकार की और ग़लत बहस का यह जवाब दिया कि जो मोजिज़े ये अब देखना चाहते हैं हमारे लिये उनका ज़ाहिर करना भी कुछ मुश्किल नहीं, लेकिन ये हठधर्म लोग उनको देखने के बाद भी नाफ़रमानी से बाज़ न आयेंगे और अल्लाह के क़ानून के अनुसार इसका नतीजा फिर यह होगा कि इन सब पर अ़ज़ाब आ जायेगा।

इसी लिये रहमतुल-लिल्आ़लमीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनके माँगे हुए मोजिज़ों के ज़ाहिर करने से शफ़क़त की बिना पर इनकार कर दिया, और जो मोजिज़े व दलाईल अब तक उनके सामने आ चुके हैं उन्हीं में ग़ौर करने की तरफ़ उनको दावत दी। ज़िक्र हुई आयतों में उन दलीलों का बयान है जिनसे बहुत आसानी से क़ुरआने करीम का हक़ और अल्लाह का कलाम होना साबित है।

पहली आयत में जो इरशाद फ़रमाया उसका हासिल यह है कि मेरे और तुम्हारे बीच रिसालत व नुबुव्वत के मुक़द्दमे में विवाद है, मैं इसका दावेदार हूँ और तुम इनकारी। और यह मुक़द्दिमा अह्कमुल-हाकिमीन (यानी अल्लाह तआ़ला) के इजलास से मेरे हक़ में इस तरह तय और फ़ैसल हो चुका है कि मेरे इस दावे पर क़ुरआन का मोजिज़ा और बेनज़ीर होना काफ़ी सुबूत और दलील है, जिसने दुनिया की तमाम क़ौमों को चेलैंज किया कि अगर इसके अल्लाह का कलाम होने में किसी को शुब्हा है तो इस कलाम की एक छोटी सी सूरत या आयत का मुक़ाबला करके दिखलाओ। जिसके जवाब में तमाम अ़रब आ़जिज़ रहा, और वे लोग जो हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पस्त करने (नीचा दिखाने) के लिये अपनी जान, माल, औलाद, आबरू सब कुछ क़ुरबान कर रहे थे उनमें से एक भी ऐसा न निकला कि क़ुरआन के मुक़ाबले के लिये एक दो आयत बनाकर पेश कर देता। यह खुला हुआ मोजिज़ा क्या हक़ क़ुबूल करने के लिये काफ़ी न था, कि एक उम्मी (बिना पढ़ा-लिखा) जिसने कहीं किसी से तालीम नहीं पाई, उसके पेश किये हुए कलाम के मुक़ाबले से पूरा अ़रब बल्कि पूरा जहान आ़जिज़ हो जाये। यह दर हक़ीक़त अह्कमुल-हाकिमीन की अ़दालत से इस मुक़द्दिमे का स्पष्ट फ़ैसला है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अल्लाह के सच्चे रसूल और क़ुरआन अल्लाह जल्ल शानुहू का कलाम है।

पहली आयत में इसी के मुताल्लिक़ फ़रमायाः

اَفَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْتَغِىْ حَكَمًا.

यानी क्या तुम यह चाहते हो कि मैं अल्लाह तआ़ला के इस फ़ैसले के बाद किसी और फ़ैसला करने वाले को तलाश करूँ? यह नहीं हो सकता। इसके बाद क़ुरआने करीम की चन्द ऐसी ख़ुसूसियात (विशेषताओं) का ज़िक्र किया गया है जो ख़ुद क़ुरआने करीम के हक़ और अल्लाह का कलाम होने का सुबूत हैं। मसलन फ़रमायाः

هُوَالَّذِىْٓ اَنْزَلَ اِلَيْكُمُ الْكِتٰبَ مُفَصَّلًا.

जिसमें क़ुरआने करीम के चार ख़ुसूसी (विशेष) कमालात का बयान है। अव्वल यह कि वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल किया हुआ है। दूसरे यह कि वह एक कामिल किताब और मोजिज़ा है कि सारा जहान उसके मुक़ाबले से आ़जिज़ है। तीसरे यह कि तमाम अहम और उसूली मज़ामीन उसमें बहुत विस्तार और स्पष्ट रूप से बयान किये गये हैं। चौथे यह कि क़ुरआने करीम से पहले अहले किताब (यानी यहूदी व ईसाई) भी यक़ीन के साथ जानते हैं कि क़ुरआन अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल किया हुआ हक़ कलाम है, फिर जिनमें कोई सच्चाई और हक़ कहने की सिफ़त थी उन्होंने इसका ज़ाहिर भी कर दिया, और जो लोग मुख़ालिफ़ व विरोधी थे वे बावजूद यक़ीन के इसका इज़हार न करते थे।

क़ुरआने करीम की इन चार सिफ़ात को बयान करने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब हैः

فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ.

यानी इन स्पष्ट और खुली दलीलों के बाद आप शुब्हा करने वालों में न हों।

यह ज़ाहिर है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तो किसी वक़्त भी शुब्हा करने वालों में न थे, न हो सकते थे, जैसा कि ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद तफ़सीर इब्ने कसीर में है कि "न मैंने कभी शक किया और न कभी सवाल किया।" मालूम हुआ कि यहाँ अगरचे लफ़्ज़ों में ख़िताब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को है लेकिन दर हक़ीक़त सुनाना दूसरों को मक़सूद है। और आपकी तरफ़ निस्बत करने से मुबालग़ा और ताकीद करना मन्ज़ूर है कि जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ऐसा कहा गया तो दूसरों की क्या हस्ती है जो कोई शक कर सकें।

दूसरी आयत में क़ुरआने हकीम की दो और विशेष सिफ़ात का बयान है जो क़ुरआन के अल्लाह का कलाम होने का काफ़ी सुबूत हैं। इरशाद हैः

وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ صِدْقًا وَّعَدْلًا. لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ.

यानी कामिल है कलाम आपके रब का, सच्चाई और इन्साफ़ और एतिदाल के एतिबार से। उसके कलाम को कोई बदलने वाला नहीं।

लफ़्ज़ "तम्मत" में कामिल होने का बयान है, और "कलि-मतु रब्बि-क" से मुराद क़ुरआन

है। (तफ़सीर बहरे मुहीत, हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से)

क़ुरआन के कुल मज़ामीन दो किस्म के हैं- एक वो जिनमें दुनिया की तारीख़ के सबक़ लेने वाले वाक़िआत व हालात और नेक आमाल पर वायदा और बुरे आमाल पर सज़ा की धमकी बयान की गयी है, दूसरे वो जिनमें इनसान की बेहतरी व कामयाबी के लिये अहकाम बयान किये गये हैं। इन दोनों किस्मों के मुताल्लिक़ क़ुरआन मजीद की ये दो सिफ़तें बयान फ़रमायीं:

صِدْقًا وَّعَدْلًا.

सिद्क़ का ताल्लुक़ पहली किस्म से है, यानी जितने वाक़िआत व हालात या वायदे वईद क़ुरआन में बयान किये गये हैं वो सब सच्चे और सही हैं, उनमें किसी ग़लती की संभावना नहीं। और अद्ल का ताल्लुक़ दूसरी किस्म यानी अहकाम से है, जिसका मतलब यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू के तमाम अहकाम अ़दल पर आधारित हैं, और लफ़्ज़ अ़दल का मतलब दो मायने को शामिल है- एक इन्साफ़ जिसमें किसी पर ज़ुल्म और हक़-तल्फ़ी न हो, दूसरे एतिदाल कि न बिल्कुल इनसान की नफ़्सानी इच्छाओं के ताबे हों; और न ऐसे जिनको इनसानी जज़्बात और उसकी फ़ितरी क़ुव्वतें बरदाश्त न कर सकें। जिसका मतलब यह हुआ कि अल्लाह के तमाम अहकाम इन्साफ़ और एतिदाल पर आधारित हैं, न उनमें किसी पर ज़ुल्म है, और न उनमें ऐसी शिद्दत और तकलीफ़ है जिसको इनसान बरदाश्त न कर सके। जैसे एक दूसरी जगह इरशाद है:

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا.

"यानी अल्लाह तआ़ला किसी शख़्स को उसकी वुस्अ़त व ताक़त से ज़्यादा किसी अ़मल की तकलीफ़ नहीं देते।"

इसके साथ ही इस आयत में लफ़्ज़ तम्मत लाकर यह भी बतला दिया कि सिर्फ़ यही नहीं कि क़ुरआने करीम में सिदक़ व अ़दल की सिफ़ात मौजूद हैं, बल्कि वह इन सिफ़ात में हर हैसियत से कामिल व मुकम्मल है।

और यह बात कि तमाम क़ुरआनी अहकाम दुनिया की तमाम क़ौमों के लिये और क़ियामत तक आने वाली नस्लों और बदलने वाले हालात के लिये इन्साफ़ पर भी आधारित हों और एतिदाल पर भी, यह अगर ज़रा भी ग़ौर किया जाये तो सिर्फ़ अहकामे ख़ुदावन्दी ही में हो सकता है। दुनिया की कोई क़ानून बनाने वाली असेम्बली (विधान सभा) तमाम मौजूदा और आईन्दा पेश आने वाले हालात का न पूरा अन्दाज़ा लगा सकती है, और न उन सब हालात की रियायत करके कोई क़ानून बना सकती है। हर मुल्क व क़ौम अपने मुल्क और अपनी क़ौम के भी सिर्फ़ मौजूदा हालात को सामने रखकर क़ानून बनाती है, और उन क़वानीन में भी तजुर्बा करने के बाद बहुत सी चीज़ें अ़दल व एतिदाल के ख़िलाफ़ महसूस होती हैं तो उनको बदलना पड़ता है, दूसरी क़ौमों और दूसरे मुल्कों या आने वाले हालात की पूरी रियायत करके ऐसा क़ानून तैयार करना जो हर क़ौम हर मुल्क हर हाल में अ़दल व एतिदाल की सिफ़ात लिये हुए हो, यह इनसानी फ़िक्र व सोच से ऊपर और बाहर है, सिर्फ़ हक़ तआ़ला शानुहू के ही कलाम में हो

सकता है। इसलिये क़ुरआने करीम की यह पाँचवीं सिफ़त कि इसमें बयान किये हुए पिछले और आने वाले तमाम वाक़िआत और वायदा वईद सब सच्चे हैं, इनमें वास्तव के ख़िलाफ़ होने का मामूली सा भी शुब्हा नहीं हो सकता, और इसके बयान किये हुए तमाम अहकाम पूरी दुनिया और क़ियामत तक आने वाली नस्लों के लिये अ़दल व एतिदाल लिये हुए हैं, न इनमें किसी पर ज़ुल्म है, न एतिदाल व दरमियानी चाल (यानी सही राह) से बाल बराबर भी हद से निकलना है, यह अपने आप में ख़ुद क़ुरआन के अल्लाह का कलाम होने का मुकम्मल सुबूत है।

छठी सिफ़त यह बयान फ़रमाईः

لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِهٖ.

यानी अल्लाह तआ़ला के कलिमात को कोई बदलने वाला नहीं। बदलने की एक सूरत तो यह हो सकती है कि कोई इसमें ग़लती साबित करे, इसलिये बदला जाये, या यह कि कोई दुश्मन ज़बरदस्ती इसको बदल डाले। अल्लाह तआ़ला का कलाम इन सब चीज़ों से ऊपर और पाक है, उसने ख़ुद वायदा फ़रमाया है किः

اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَاِنَّا لَهٗ لَحٰفِظُوْنَ.

"यानी हमने ही क़ुरआन को नाज़िल किया है और हम ही इसके मुहाफ़िज़ हैं।"

फिर किसकी मजाल है कि ख़ुदा की हिफ़ाज़त को तोड़कर उसमें कोई बदलाव या कमी-बेशी कर सके। चुनाँचे चौदह सौ बरस इस पर गुज़र चुके हैं, और हर दौर हर ज़माने में क़ुरआन के मुख़ालिफ़ इसके मानने वालों की तुलना में तायदाद में भी ज़्यादा रहे हैं, क़ुव्वत में भी, मगर किसी की मजाल नहीं हो सकी कि क़ुरआन के एक ज़बर ज़ेर में फ़र्क़ पैदा कर सके। हाँ बदलने की एक तीसरी सूरत यह भी हो सकती थी कि ख़ुद हक़ तआ़ला की तरफ़ से इसको मन्सूख़ (रद्द और निरस्त) करके बदल दिया जाये, इसी लिये हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि इस आयत में इसकी तरफ़ इशारा है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आख़िरी पैग़म्बर और क़ुरआन आख़िरी किताब है, इसके बाद नस्ख़ (बदलाव) का कोई गुमान व गुंजाईश नहीं, जैसा कि क़ुरआने करीम की दूसरी आयतों में यह मज़मून और भी ज़्यादा वज़ाहत के साथ आया है।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ.

यानी अल्लाह जल्ल शानुहू उस तमाम गुफ़्तगू को सुनते हैं जो ये लोग कर रहे हैं, और सब के हालात और भेदों से वाक़िफ़ हैं, हर एक के अ़मल का बदला उसके मुताबिक़ देंगे।

तीसरी आयत में हक़ तआ़ला ने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इत्तिला दी कि ज़मीन पर बसने वाले इनसानों की अक्सरियत गुमराही पर है, आप इससे मरऊब न हों, उनकी बातों पर कान न धरें, क़ुरआन ने अनेक जगहों पर इस मज़मून को बयान फ़रमाया है। एक जगह इरशाद हैः

وَلَقَدْ ضَلَّ قَبْلَهُمْ أَكْثَرُ الْأَوَّلِينَ.

दूसरी जगह इरशाद है:

وَمَا أَكْثَرُ النَّاسِ وَلَوْ حَرَصْتَ بِمُؤْمِنِينَ.

मतलब यह है कि आदतन इनसान पर अ़ददी अक्सरियत का रौब ग़ालिब हो जाता है, और उनकी इताअ़त करने (बात मानने) लगता है, इसलिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब किया गया कि:

"दुनिया में ज़्यादा लोग ऐसे हैं कि अगर आप उनका कहना मानने लगें तो वे आपको अल्लाह की राह से बेराह कर दें, क्योंकि वे अ़क़ीदों व नज़रियात में महज़ ख़्यालात और वहमों के पीछे चलते हैं, और अहकाम में सिर्फ़ अन्दाज़े और अटकल से काम लेते हैं, जिनकी कोई बुनियाद नहीं।"

ख़ुलासा यह है कि आप उनकी अ़ददी अक्सरियत (अधिक संख्या होने) से मरऊब होकर उनकी मुवाफ़क़त का ख़्याल भी न फ़रमायें, क्योंकि ये सब बेउसूल और बेराह चलने वाले हैं। आयत के आख़िर में फ़रमाया कि:

"यक़ीनन आपका रब उसको ख़ूब जानता है जो उसकी राह से बेराह हो जाता है और वह उसको भी ख़ूब जानता है जो उसकी राह पर चलता है, पस जैसे गुमराहों को सज़ा मिलेगी, सीधी राह वालों को इनाम व सम्मान हासिल होगा।"

فَكُلُوا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللَّهِ عَلَيْهِ إِنْ كُنْتُمْ بِآيَاتِهِ مُؤْمِنِينَ ﴿١١٨﴾ وَمَا لَكُمْ أَلَّا تَأْكُلُوا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللَّهِ عَلَيْهِ وَقَدْ فَصَّلَ لَكُمْ مَا حَرَّمَ عَلَيْكُمْ إِلَّا مَا اضْطُرِرْتُمْ إِلَيْهِ ۗ وَإِنَّ كَثِيرًا لَيُضِلُّونَ بِأَهْوَائِهِمْ بِغَيْرِ عِلْمٍ ۗ إِنَّ رَبَّكَ هُوَ أَعْلَمُ بِالْمُعْتَدِينَ ﴿١١٩﴾ وَذَرُوا ظَاهِرَ الْإِثْمِ وَبَاطِنَهُ ۚ إِنَّ الَّذِينَ يَكْسِبُونَ الْإِثْمَ سَيُجْزَوْنَ بِمَا كَانُوا يَقْتَرِفُونَ ﴿١٢٠﴾ وَلَا تَأْكُلُوا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللَّهِ عَلَيْهِ وَإِنَّهُ لَفِسْقٌ ۗ وَإِنَّ الشَّيَاطِينَ لَيُوحُونَ إِلَىٰ أَوْلِيَائِهِمْ لِيُجَادِلُوكُمْ ۖ وَإِنْ أَطَعْتُمُوهُمْ إِنَّكُمْ لَمُشْرِكُونَ ﴿١٢١﴾

फ़-कुलू मिम्मा ज़ुकिरस्मुल्लाहि अ़लैहि इन् कुन्तुम् बिआयातिही मुअ्मिनीन (118) व मा लकुम् अल्ला तअ्कुलू मिम्मा ज़ुकिरस्मुल्लाहि अ़लैहि व क़द् फ़स्स-ल लकुम् मा हर्र-म अ़लैकुम् इल्ला मज़्तुरिर्तुम्	सो तुम खाओ उस जानवर में से जिस पर नाम लिया गया है अल्लाह का अगर तुमको उसके हुक्मों पर ईमान है। (118) और क्या सबब है कि तुम नहीं खाते उस जानवर में से कि जिस पर नाम लिया गया है अल्लाह का, और वह स्पष्ट कर चुका है जो कुछ उसने तुम पर हराम

इलैहि, व इन्-न कसीरल्-लयुज़िल्लू-न बिअह्वाइहिम् बिग़ैरि अिल्मिन्, इन्-न रब्ब-क हु-व अअ्लमु बिल्मुअ्तदीन (119) व ज़रू ज़ाहिरल्-इस्मि व बाति-नहू, इन्नल्लज़ी-न यक्सिबूनल्-इस्-म सयुज्ज़ौ-न बिमा कानू यक़्तरिफ़ून (120) व ला तअ्कुलू मिम्मा लम् युज़्करिस्मुल्लाहि अलैहि व इन्नहू लफ़िस्कुन्, व इन्नश्शयाती-न लयूहू-न इला औलिया-इहिम् लियुजादिलूकुम् व इन् अतअ्तुमूहुम् इन्नकुम्-लमुश्रिकून (121) ❁	किया है मगर जबकि मजबूर हो जाओ उसके खाने पर, और बहुत लोग बहकाते फिरते हैं अपने ख़्यालात पर बिना तहक़ीक़ के, तेरा रब ही ख़ूब जानता है हद से बढ़ने वालों को। (119) और छोड़ दो खुला हुआ गुनाह और छुपा हुआ, जो लोग गुनाह करते हैं जल्द ही सज़ा पायेंगे अपने किये की। (120) और उसमें से न खाओ जिस पर नाम नहीं लिया गया अल्लाह का, और यह खाना गुनाह है, और शैतान दिल में डालते हैं अपने रफ़ीक़ों (साथियों और दोस्तों) के ताकि वे तुमसे झगड़ा करें, और अगर तुमने उनका कहा माना तो तुम भी मुश्रिक हुए। (121) ❁

इन आयतों के मज़मून का पीछे से संबन्ध

ऊपर आयत नम्बर 116 (अगर तू कहना मानेगा.........) में गुमराह लोगों का कहना मानने से पूरी तरह मना किया गया था, आगे एक वाक़िए के सबब एक ख़ास मामले में उनकी पैरवी करने और बात मानने से मना फ़रमाते हैं। वह ख़ास वाक़िआ ज़िबह किये और बिना ज़िबह किये हुए के हलाल होने का है। वाक़िआ यह है कि काफ़िरों ने मुसलमानों में शक डालना चाहा कि अल्लाह के मारे हुए जानवर को तो खाते नहीं हो और अपने मारे हुए यानी ज़िबह किये हुए को खाते हो? (अबू दाऊद व हाकिम, इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से) कुछ मुसलमानों ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में यह शुब्हा नक़ल किया, इस पर ये आयतें "लमुश्रिकून" (यानी आयत नम्बर 121) तक नाज़िल हुईं। (अबू दाऊद, तिर्मिज़ी इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से)।

जवाब का हासिल यह है कि तुम मुसलमान हो अल्लाह के अहकाम की पाबन्दी करते हो, और अल्लाह तआ़ला ने हलाल व हराम की तफ़सील बतला दी है, पस उस पर चलते रहो, हलाल पर हराम होने का और हराम पर हलाल होने का शुब्हा मत करो, और मुश्रिकों के शुब्हा डालने की तरफ़ ध्यान ही मत दो।

और इस जवाब की तहक़ीक़ यह है कि उसूली और बुनियादी चीज़ों के साबित करने के

लिये तो अक़्ली दलीलें चाहियें और उसूल के साबित हो जाने के बाद आमाल और ऊपर के अहकाम में सिर्फ़ नक़ली (किताबी और ख़ुदा व रसूल की बतलाई हुई) दलीलें काफ़ी हैं, अक़्ली दलीलों की ज़रूरत नहीं, बल्कि कई बार वह नुक़सानदेह है, क्योंकि उससे शुब्हों के दरवाज़े खुलते हैं। क्योंकि ऊपर के अहकाम में क़तई दलील की कोई सबील नहीं, अलबत्ता अगर कोई हक़ का तालिब और दिल की तसल्ली चाहने वाला हो तो उसके सामने नसीहत व बयान के तौर पर पेश कर देने में हर्ज नहीं, लेकिन जब यह भी न हो बल्कि बहस-मुबाहसे और झगड़ने की सूरत हो तो अपने काम में लगना चाहिये और एतिराज़ करने वाले की तरफ़ ध्यान न देना चाहिये। हाँ अगर एतिराज़ करने वाला किसी हुक्म व मसले का अक़्ली क़तई दलील के मुख़ालिफ़ होना साबित करना चाहे तो उसका जवाब दावा करने वाले के ज़िम्मे होगा, मगर मुश्रिकों के शुब्हे में इसकी गुंजाईश व संभावना ही नहीं, इसलिये इस जवाब में सिर्फ़ मुसलमानों को ऊपर ज़िक्र हुए क़ायदे के अनुसार ख़िताब है, कि ऐसी ख़ुराफ़ात पर नज़र मत करो, हक़ के मोतक़िद और आमिल रहो। इस बिना पर इस जगह में मुश्रिकों के शुब्हे का जवाब स्पष्ट तौर पर बयान न होने से कोई शुब्हा नहीं हो सकता, मगर इस पर भी उसकी तरफ़ इशारा कर दिया गया है। जहाँ ''कुलू'' (खाओ) में ''ज़ुकिरस्मुल्लाहि'' (जिस पर अल्लाह का नाम लिया गया है) और ''ला तअ्कुलू'' (मत खाओ) में ''लम् युज़्करिस्मुल्लाहि'' (जिस पर अल्लाह का नाम नहीं लिया गया है) मज़कूर है, और यह आदत से और दूसरी दलीलों से मालूम होता है कि अल्लाह का नाम लेना ज़िबह करने के वक़्त होगा, और अल्लाह का नाम न लिये जाने की तहक़ीक़ (पता लगाने) की दो सूरतें होंगी- ज़िबह न होना और ज़िबह के वक़्त अल्लाह के नाम का ज़िक्र न होना। पस शुब्हे के जवाब का हासिल यह हुआ कि हलाल होने का मदार दो चीज़ों के मजमूए पर है- ज़िबह जो नजिस (नापाक) ख़ून को निकाल कर गन्दगी से पाक कर देता है और वह नजासत (गन्दगी और नापाकी) ही मनाही का सबब थी, दूसरे अल्लाह का नाम लेना जो कि बरकत के लिये मुफ़ीद है, जो कि ख़ून वाले जानवरों में हलाल होने की शर्त है, और किसी चीज़ के वजूद के लिये उसकी बाधा और रुकावट का दूर करना और शर्त का पाया जाना दोनों चीज़ें ज़रूरी हैं। पस इस मजमूए (यानी दोनों चीज़ों के पाये जाने) से हिल्लत (हलाल होना) साबित होगी।

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और जब ऊपर काफ़िरों की पैरवी का बुरा होना मालूम हो गया) सो जिस (हलाल) जानवर पर (ज़िबह के वक़्त) अल्लाह का नाम (बिना किसी दूसरे की शिर्कत के) लिया जाए उसमें से (बेतकल्लुफ़) खाओ (और उसको मुबाह व हलाल समझो) अगर तुम उसके अहकाम पर ईमान रखते हो (क्योंकि हलाल को हराम जानना ख़िलाफ़े ईमान है) और तुमको कौनसी चीज़ (अक़ीदे के एतिबार से) इसका सबब हो सकती है कि तुम ऐसे जानवर में से न खाओ जिस पर (ज़िबह के वक़्त) अल्लाह का नाम (बिना किसी को शरीक किये हुए) लिया गया हो, हालाँकि अल्लाह

तआला ने (दूसरी आयत में) उन सब जानवरों की तफ़सील बतला दी है जिनको तुम पर हराम किया हैं, मगर जब तुमको सख़्त ज़रूरत पड़ जाए तो वो भी हलाल हैं, (और उस तफ़सील में यह अल्लाह का नाम लेने के साथ ज़िबह किया हुआ दाख़िल नहीं, फिर इसके खाने में एतिक़ाद के तौर पर क्यों तबीयत में नागवारी हो)। और (उन लोगों के शुब्हात की तरफ़ बिल्कुल भी ध्यान न दो क्योंकि) यह यक़ीनी बात है कि बहुत-से आदमी (और उन ही में से ये भी हैं, अपने साथ दूसरों को भी) अपने ग़लत ख़्यालात (की बिना पर) से बिना किसी सनद के गुमराह करते (फिरते) हैं। (लेकिन आख़िर कहाँ तक ख़ैर मनायेंगे) इसमें कोई शुब्हा नहीं कि आपका रब (ईमान की) हद से निकल जाने वालों को (जिनमें ये भी हैं) ख़ूब जानता है (पस एक ही बार में सज़ा देगा)।

और तुम ज़ाहिरी गुनाह को भी छोड़ो और बातिनी गुनाह को भी छोड़ दो (मसलन हलाल को हराम यक़ीन करना बातिनी गुनाह है जैसे कि इसके विपरीत भी) बिला शुब्हा जो लोग गुनाह कर रहे हैं उनको उनके किए की जल्द ही (क़ियामत में) सज़ा मिलेगी। और उन (जानवरों) में से मत खाओ जिन पर (उक्त तरीक़े के अनुसार) अल्लाह का नाम न लिया गया हो (जैसा कि मुश्रिक लोग ऐसे जानवरों को खाते हैं) और यह चीज़ (यानी बिना अल्लाह के नाम के ज़िक्र किये ज़िबह किये हुए में से खाना) नाफ़रमानी (की बात) है, (ग़र्ज़ कि न छोड़ने में उनकी पैरवी करो और न अ़मल में) और (उन लोगों के शुब्हात इसलिये क़ाबिले तवज्जोह नहीं कि) यक़ीनन शयातीन (यानी जिन्न) अपने (उन) दोस्तों (और पैरवी करने वालों) को (ये शुब्हात) तालीम कर रहे हैं, ताकि ये तुमसे (बेकार) झगड़ा करें (यानी अव्वल तो ये शुब्हात शरई हुक्म के ख़िलाफ़ हैं, दूसरे उनकी ग़र्ज़ सिर्फ़ झगड़ा करना है इसलिये क़ाबिले तवज्जोह नहीं), और अगर (ख़ुदा न करे) तुम (अ़क़ीदों या आमाल में) उन लोगों की इताअ़त (बात मानना और फ़रमाँबरदारी) करने लगो तो यक़ीनन तुम मुश्रिक हो जाओ (क्योंकि उस सूरत में तुम ख़ुदा की तालीम पर दूसरे की तालीम को तरजीह दोगे, जबकि तरजीह देना तो दूर की बात है बराबर समझना भी शिर्क है। यानी उनकी बात मानना और पैरवी करना ऐसी बुरी चीज़ है इसलिये उसके शुरूआ़ती क़दम यानी उधर ध्यान देने और तवज्जोह करने से भी बचना चाहिये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

مَاذُكِرَاسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ

(जिस पर अल्लाह का नाम लिया गया हो) में इख़्तियारी और ग़ैर-इख़्तियारी दोनों तरह का ज़िबह करना दाख़िल है। ग़ैर-इख़्तियारी और मजबूरी वाले ज़िबह से मुराद यह कि जैसे तीर, बाज़ और कुत्ते के ज़रिये शिकार किया हुआ जबकि उसके छोड़ने के वक़्त बिस्मिल्लाह पढ़ी जाये। इसी तरह ज़िक्र करने में हक़ीक़ी और हुक्मी ज़िक्र सब दाख़िल है (हक़ीक़ी तो यही है कि स्पष्टता से अल्लाह नाम ही लिया जाये, और हुक्म से मुराद यह है कि स्पष्ट लफ़्ज़ अल्लाह न कहा जाये लेकिन अल्लाह का ज़िक्र दूसरे लफ़्ज़ों में किया जाये जो अल्लाह का नाम लेने ही के

हुक्म में है, या दिल में बिस्मिल्लाह हो और पढ़ने का इरादा हो मगर शिकारी जानवर छोड़ते वक़्त ज़बान पर न आये भूल से रह जाये। हिन्दी अनुवादक)। पस इमाम अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक जिस पर बिस्मिल्लाह भूल से छूट जाये वह उसमें दाख़िल है जिस पर अल्लाह का नाम लिया गया है, अलबत्ता जान-बूझकर छोड़ देने से इमाम साहिब के नज़दीक हराम होता है।

أَوَمَنْ كَانَ مَيْتًا فَأَحْيَيْنَٰهُ وَجَعَلْنَا لَهُۥ نُورًا يَمْشِى بِهِۦ فِى ٱلنَّاسِ كَمَن مَّثَلُهُۥ فِى ٱلظُّلُمَٰتِ لَيْسَ بِخَارِجٍ مِّنْهَا ۚ كَذَٰلِكَ زُيِّنَ لِلْكَٰفِرِينَ مَا كَانُوا۟ يَعْمَلُونَ ﴿١٢٢﴾

अ-व मन् का-न मैतन् फ़-अस्यैनाहु व जअ़ल्ना लहू नूरंय्यम्शी बिही फ़िन्नासि कमम्म-सलुहू फ़िज़्ज़ुलुमाति लै-स बिख़ारिजिम् मिन्हा, कज़ालि-क ज़ुय्यि-न लिल्काफ़िरी-न मा कानू यअ़्मलून (122)	भला एक शख़्स जो कि मुर्दा था फिर हमने उसको ज़िन्दा कर दिया और हमने उसको दी रोशनी कि लिये फिरता है उसको लोगों में, बराबर हो सकता है उसके कि जिसका हाल यह है कि पड़ा है अंधेरों में? वहाँ से निकल नहीं सकता, इसी तरह अच्छे बना दिये गये हैं काफ़िरों की निगाह में उनके काम। (122)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐसा शख़्स जो कि पहले मुर्दा (यानी गुमराह) था फिर हमने उसको ज़िन्दा (यानी मुसलमान) बना दिया, और हमने उसको एक ऐसा नूर (यानी ईमान) दे दिया कि वह उसको लिये हुए आदमियों में चलता फिरता है (यानी हर वक़्त वह उसके साथ रहता है, जिससे वह सब नुक़सानात से जैसे गुमराही वग़ैरह से महफ़ूज़ व सुरक्षित और बेफ़िक्र फिरता है, तो) क्या ऐसा शख़्स (बदहाली में) उस शख़्स की तरह हो सकता है जिसकी हालत यह है कि वह (गुमराही की) अंधेरियों में (घिरा हुआ) है, (और) उनसे निकलने ही नहीं पाता। (मुराद यह कि वह मुसलमान नहीं हुआ। और इसका ताज्जुब न किया जाये कि कुफ़्र के अंधेरा होने के बावजूद वह इस पर क्यों क़ायम रहा, वजह यह है कि जिस तरह मोमिनों को उनका ईमान अच्छा मालूम होता है) इसी तरह काफ़िरों को उनके (कुफ़्र वग़ैरह के) आमाल अच्छे मालूम हुआ करते हैं (चुनाँचे इसी वजह से ये मक्का के सरदार जो आपसे बेकार की फ़रमाईशें और शुब्हे व झगड़े-बहसें पेश करते रहते हैं, अपने कुफ़्र को अच्छा ही समझकर उस पर डटे और अड़े हुए हैं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में पहले इसका ज़िक्र आया था कि इस्लाम के विरोधी, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन के खुले-खुले मोजिज़े (अल्लाह की तरफ़ से आई निशानियाँ और

चमत्कारिक चीज़ें) देखने के बावजूद ज़िद और हठधर्मी से नये-नये मोजिज़ों का मुतालबा करते हैं। इसके बाद क़ुरआन ने बतलाया कि अगर ये लोग वाक़ई हक़ के तलबगार होते तो जो मोजिज़े इनकी आँखों के सामने आ चुके हैं वो इनको हक़ रास्ता दिखाने के लिये काफ़ी से भी ज़्यादा थे। फिर उन मोजिज़ों का बयान आया।

मज़कूरा आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और क़ुरआन पर ईमान लाने वालों और कुफ़्र व इनकार करने वालों के कुछ हालात व ख़्यालात और दोनों के अच्छे व बुरे अन्जाम का बयान और मोमिन व काफ़िर और ईमान व कुफ़्र की हक़ीक़त को मिसालों में समझाया गया है। मोमिन और काफ़िर की मिसाल ज़िन्दा और मुर्दा से और ईमान व कुफ़्र की मिसाल रोशनी और अंधेरी से दी गयी है। यह क़ुरआनी मिसालें हैं जिनमें कोई शायरी नहीं, एक हक़ीक़त का इज़हार है।

मोमिन ज़िन्दा है और काफ़िर मुर्दा

इस मिसाल देने में मोमिन को ज़िन्दा और काफ़िर को मुर्दा बतलाया गया है। वजह यह है कि इनसान, हैवानात और पेड़-पौधों वग़ैरह में अगरचे ज़िन्दगी की क़िस्में और शक्लें विभिन्न और अलग-अलग हैं लेकिन इतनी बात से कोई समझदार इनसान इनकार नहीं कर सकता कि उनमें से हर एक की ज़िन्दगी किसी ख़ास मक़सद के लिये है, और क़ुदरत ने उसमें उस मक़सद को हासिल करने की पूरी क्षमता और सलाहियत रखी है। क़ुरआन की आयतः

اَعْطٰى كُلَّ شَیْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى.

में इसी का बयान है कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने इस कायनात की हर चीज़ को पैदा फ़रमाया और उसको जिस मक़सद के लिये पैदा फ़रमाया था उस तक पहुँचने की उसको पूरी हिदायतें दे दीं। जिनके मातहत हर मख़्लूक़ अपने-अपने ज़िन्दगी के मक़सद और अपनी-अपनी ड्यूटी का हक़ अदा कर रही है। इस जहान में ज़मीन, पानी, हवा और आग, इसी तरह आसमानी मख़्लूक़ात और चाँद-सूरज और तमाम सितारे अपनी-अपनी ड्यूटी पूरी तरह पहचान कर अपने फ़राईज़ अदा कर रहे हैं। और यही ड्यूटी की अदायेगी उनमें से हर चीज़ की ज़िन्दगी का सुबूत है, और जिस वक़्त जिस हाल में उनमें से कोई चीज़ अपनी ड्यूटी अदा करना छोड़ दे तो वह ज़िन्दा नहीं बल्कि मुर्दा है। पानी अगर अपना काम प्यास बुझा देना और मैल-कुचैल दूर करना वग़ैरह छोड़ दे तो वह पानी नहीं कहलायेगा। आग जलना और जलाना छोड़ दे तो वह आग नहीं रहेगी, पेड़ और घास उगना और बढ़ना फिर फल-फूल लाना छोड़ दे तो वह पेड़ और घास नहीं रहेगी, क्योंकि उसने अपनी ज़िन्दगी के मक़सद को छोड़ दिया, तो वह एक बेजान मुर्दे की तरह हो गयी।

तमाम कायनात का तफ़सीली जायज़ा लेने के बाद एक इनसान जिसमें कुछ भी अक़्ल व शऊर हो इस बात पर ग़ौर करने के लिये मजबूर होगा कि इनसान की ज़िन्दगी का मक़सद क्या है और उसकी ड्यूटी क्या है, और यह कि अगर वह अपने मक़सदे ज़िन्दगी को पूरा कर रहा है

तो वह ज़िन्दा कहलाने का हक़दार है, और उसको पूरा नहीं करता तो वह एक मुर्दा लाश से ज़्यादा कोई हक़ीक़त नहीं रखता।

अब सोचना यह है कि इनसान का मक़सदे ज़िन्दगी क्या और इसके फ़राईज़ क्या हैं। और ऊपर बयान हुए उसूल के मुताबिक़ यह मुतैयन है कि अगर वह अपने मक़सदे ज़िन्दगी और ड्यूटी को अदा कर रहा है तो ज़िन्दा है, वरना मुर्दा कहलाने का मुस्तहिक़ है। जिन बेअ़क्ल लोगों ने इनसान को दुनियां की एक अपने आप उगने वाली घास या एक होशियार क़िस्म का जानवर क़रार दे दिया है और उनके नज़दीक एक इनसान और गधे कुत्ते में कोई फ़र्क़ नहीं, उन सब का मक़सदे ज़िन्दगी उन्होंने अपनी नफ़्सानी इच्छाओं को पूरा करना, खाना पीना, सोना जागना, फिर मर जाना ही क़रार दे लिया है, वे तो अ़क्ल व शऊर वालों के नज़दीक क़ाबिले ख़िताब नहीं। दुनिया के अ़क्लमन्द चाहे किसी मज़हब व मिल्लत और किसी विचारधारा से ताल्लुक़ रखते हों, दुनिया की पैदाईश से आज तक इनसान के कायनात का मख़दूम और तमाम मख़्लूक़ात से बेहतर होने पर एक राय चले आये हैं, और यह ज़ाहिर है कि अफ़ज़ल व आला उसी चीज़ को समझा और कहा जा सकता है, जिसका मक़सदे ज़िन्दगी आला व अफ़ज़ल होने के एतिबार से नुमायाँ हो, और हर समझ-बूझ वाला इनसान यह भी जानता है कि खाने पीने, सोने जागने, रहने सहने, ओढ़ने पहनने में इनसान को दूसरे जानवरों से कोई ख़ास फ़र्क़ और विशेषता हासिल नहीं, बल्कि बहुत से जानवर इससे बेहतर और इससे ज़्यादा खाते पीते हैं, इससे बेहतर क़ुदरती लिबास में हैं, इससे बेहतर हवा व फ़िज़ा में रहते बसते हैं, और जहाँ तक अपने नफ़े नुक़सान के पहचानने का मामला है उसमें भी हर जानवर बल्कि हर दरख़्त एक हद तक शऊर व एहसास वाला है। मुफ़ीद (लाभदायक) चीज़ों के हासिल करने और नुक़सानदेह चीज़ों से बचने की ख़ास सलाहियत अपने अन्दर रखता है, इसी तरह दूसरों के लिये नफ़ा पहुँचाने के मामले में तो तमाम हैवानात और पेड़-पौधों का क़दम बज़ाहिर इनसान से भी आगे नज़र आता है, कि उनके गोश्त, खाल, हड्डी, पट्ठे और दरख़्तों की जड़ से लेकर शाख़ों और पत्तों तक हर चीज़ मख़्लूक़ के लिये कारामद और उनकी ज़रूरियाते ज़िन्दगी पैदा करने में बेशुमार फ़ायदे अपने अन्दर रखती है, बख़िलाफ़ इनसान के कि न इसका गोश्त किसी के काम आता है न खाल, न बाल न हड्डी न पट्ठे।

अब देखना यह है कि इन हालात में फिर यह इनसान किस बिना पर कायनात का मख़दूम और तमाम मख़्लूक़ात से बेहतर ठहरता है। अब हक़ीक़त पहचानने की मन्ज़िल क़रीब आ पहुँची, ज़रा सा ग़ौर करें तो मालूम होगा कि इन सारी चीज़ों के अ़क्ल व शऊर की पहुँच सिर्फ़ मौजूदा ज़िन्दगी के वक़्ती और अस्थायी नफ़े नुक़सान तक है, और इसी ज़िन्दगी में वह दूसरों के लिये लाभदायक नज़र आती है। इस दुनिया की ज़िन्दगी से पहले क्या था, और बाद में क्या आने वाला है, इस मैदान में जमादात (बेजान चीज़ें), नबातात (पेड़-पौधे) तो क्या किसी बड़े से बड़े होशियार जानवर की अ़क्ल व शऊर भी काम नहीं देती, और न इस मैदान में उनमें से कोई चीज़ किसी के लिये कारामद या मुफ़ीद हो सकती है, बस यही वह मैदान है जिसमें कायनात के

मख़्दूम और तमाम मख़्लूक़ात से बेहतर यानी इनसान को काम करना है, और इसी से इसकी विशेषता और श्रेष्टा दूसरी मख़्लूक़ात से स्पष्ट हो सकती है।

मालूम हुआ कि इनसान की ज़िन्दगी का मक़सद पूरे आ़लम के आग़ाज़ व अन्जाम को सामने रखकर सब के नतीजों और परिणामों पर नज़र डालना और यह मुतैयन करना है कि मजमूई एतिबार से क्या चीज़ नफ़ा देने वाली और मुफ़ीद है और कौनसी चीज़ नुक़सानदेह और और तकलीफ़ देने वाली है, फिर इस सूझ-बूझ के साथ ख़ुद अपने लिये भी मुफ़ीद चीज़ों को हासिल करना और नुक़सानदेह चीज़ों से बचना और दूसरों को भी उन मुफ़ीद चीज़ों की तरफ़ दावत देना और बुरी चीज़ों से बचाने का एहतिमाम करना है। ताकि हमेशा की राहत व सुकून और इत्मीनान की ज़िन्दगी हासिल हो सके। और जब इनसान का मक़सदे ज़िन्दगी और इनसानी कमाल का यह मेयारी फ़ायदा ख़ुद हासिल करना और दूसरों को पहुँचाना है, तो अब क़ुरआन की यह तमसील (मिसाल देना) हक़ीक़त बनकर सामने आ जाती है कि ज़िन्दा सिर्फ़ वह शख़्स है जो अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर ईमान लाये, और दुनिया की शुरूआ़त व इन्तिहा और इसमें मजमूई एतिबार से नफ़े व नुक़सान को अल्लाह की वही की रोशनी में पहचाने, क्योंकि सिर्फ़ इनसानी अ़क़्ल ने न कभी इस मैदान को सर किया है न कर सकती है। दुनिया के बड़े-बड़े अ़क़्लमन्द व बुद्धिजीवी और विज्ञानियों ने अन्जामकार इसका इक़रार किया है।

और जब मक़सदे ज़िन्दगी के एतिबार से ज़िन्दा सिर्फ़ वह शख़्स है जो अल्लाह की वही का ताबेदार और मोमिन हो तो यह भी मुतैयन हो गया कि जो ऐसा नहीं वह मुर्दा कहलाने का हक़दार है। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने ख़ूब फ़रमाया हैः

ज़िन्दगी अज़ बहरे ताअ़त व बन्दगीस्त   बेइबादत ज़िन्दगी शर्मिन्दगीस्त
आदमियत लह्म व शह्म व पोस्त नेस्त   आदमियत जुज़ रज़ा-ए-दोस्त नेस्त

यानी ज़िन्दगी का मक़सद ही अपने पैदा करने वाले की इबादत व बन्दगी है, और जो ज़िन्दगी अपने इस मक़सद को पूरा न करे उसको आगे चलकर अपनी नाकामी के सबब बड़ी शर्मिन्दगी उठानी पड़ेगी। सिर्फ़ गोश्त-पोस्त और हड्डी-चर्बी से बने इस जिस्म का नाम आदमी नहीं, आदमी तो वह है जो अल्लाह की रज़ा हासिल करने में लगा हुआ है।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

यह मोमिन व काफ़िर की क़ुरआनी मिसाल थी, कि मोमिन ज़िन्दा और काफ़िर मुर्दा है। दूसरी मिसाल ईमान व कुफ़्र की नूर और अंधेरी के साथ दी गयी है।

ईमान नूर है और कुफ़्र अंधेरी

ईमान को नूर और कुफ़्र को ज़ुल्मत और अंधेरी क़रार दिया गया है। ज़रा ग़ौर किया जाये तो यह मिसाल भी कोई ख़्याली मिसाल नहीं, एक हक़ीक़त का बयान है। यहाँ भी रोशनी और अंधेरी के असल मक़सद पर ग़ौर किया जाये तो हक़ीक़त सामने आ जायेगी कि रोशनी का

मक़सद यह है कि उसके ज़रिये नज़दीक व दूर की चीज़ों को देख सकें, जिसके परिणाम स्वरूप नुक़सान देने वाली चीज़ों से बचने और मुफ़ीद चीज़ों को इख़्तियार करने का मौक़ा मिले।

अब ईमान को देखो कि वह एक नूर है जिसकी रोशनी तमाम आसमानों, ज़मीन और इन सबसे बाहर की तमाम चीज़ों पर हावी है। सिर्फ़ यही रोशनी पूरे आ़लम के अन्जाम और तमाम बातों के सही परिणामों को दिखा सकती है, जिसके साथ यह नूर हो तो वह ख़ुद भी तमाम नुक़सानदेह और हानिकारक चीज़ों से बच सकता है और दूसरों को भी बचा सकता है। और जिसको यह रोशनी हासिल नहीं वह ख़ुद अंधेरे में है। कायनात के मजमूए और पूरी ज़िन्दगी के एतिबार से क्या चीज़ लाभदायक है क्या नुक़सानदेह इसका वह कोई फ़र्क़ नहीं कर सकता, सिर्फ़ पास-पास की चीज़ों को टटोल कर कुछ पहचान सकता है। मौजूदा दुनिया की ज़िन्दगी यही आस-पास का माहौल है, काफ़िर इस ज़िन्दगी और इसके नफ़े नुक़सान को तो पहचान लेता है मगर बाद में आने वाली हमेशा की ज़िन्दगी की उसको कुछ ख़बर नहीं, न उसके नफ़े व नुक़सान का उसे कुछ इल्म है। क़ुरआने करीम ने इसी मज़मून के लिये इरशाद फ़रमाया है:

يَعْلَمُوْنَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْاٰخِرَةِ هُمْ غٰفِلُوْنَ.

यानी ये लोग दुनियावी ज़िन्दगी के ज़ाहिर और इसके खरे-खोटे को तो कुछ पहचानते हैं मगर आख़िरत के जहान से पूरी तरह ग़ाफ़िल हैं।

दूसरी एक आयत में पिछली इनकारी और काफ़िर उम्मतों का ज़िक्र करने के बाद क़ुरआने करीम ने फ़रमाया है:

وَكَانُوْا مُسْتَبْصِرِيْنَ.

यानी आख़िरत के मामले में ऐसी सख़्त ग़फ़लत और बेअ़क़्ली बरतने वाले इस दुनिया में बेवक़ूफ़ व नादान न थे, बल्कि रोशन ख़्याल लोग थे। मगर यह ज़ाहिरी सतही रोशन ख़्याली सिर्फ़ दुनिया की चन्द रोज़ की ज़िन्दगी के संवारने ही में काम दे सकती थी आख़िरत की हमेशा की ज़िन्दगी में इसने कुछ काम न दिया।

इस तफ़सील को सुनने के बाद क़ुरआन मजीद की ज़िक्र हुई आयत को फिर एक मर्तबा पढ़ लीजिए:

اَوَمَنْ كَانَ مَيْتًا فَاَحْيَيْنٰهُ وَجَعَلْنَا لَهٗ نُوْرًا يَّمْشِيْ بِهٖ فِى النَّاسِ كَمَنْ مَّثَلُهٗ فِى الظُّلُمٰتِ لَيْسَ بِخَارِجٍ مِّنْهَا.

मतलब यह है कि वह शख़्स जो पहले मुर्दा यानी काफ़िर था, फिर हमने उसको ज़िन्दा कर दिया, यानी मुसलमान बना दिया, और हमने उसको एक ऐसा नूर यानी ईमान दे दिया जिसको लिये हुए वह लोगों में फिरता है, क्या उस शख़्स के बराबर हो सकता है जिसकी मिसाल ऐसी है कि वह तरह-तरह की अंधेरियों में घिरा हुआ है, जिनसे निकलने नहीं पाता। यानी कुफ़्र की अंधेरियों में मुब्तला है, वह ख़ुद ही अपने नफ़े नुक़सान को नहीं पहचानता, और हलाकत से नहीं बच सकता, दूसरों को क्या नफ़ा पहुँचा सकता है।

ईमान के नूर का फ़ायदा दूसरों को भी पहुँचता है

इस आयत (यानी आयत नम्बर 122 जिसकी तफ़सीर बयान हो रही है) में:

نُوْرًا يَّمْشِيْ بِهٖ فِي النَّاسِ.

फ़रमाकर इस तरफ़ भी हिदायत कर दी गयी है कि ईमान का नूर सिर्फ़ किसी मस्जिद या ख़ानक़ाह या गोशे व हुजरे के साथ मख़्सूस नहीं, जिसको अल्लाह तआ़ला ने यह नूर दिया है वह इसको लेकर सब जगह लोगों की भीड़-भाड़ में लिये फिरता है, और हर जगह इस रोशनी से ख़ुद भी फ़ायदा उठाता है और दूसरों को भी फ़ायदा पहुँचाता है। नूर किसी ज़ुल्मत (अंधेरी) से दब नहीं सकता, जैसा कि देखा जाता है कि एक टिमटिमाता हुआ चिराग़ भी अंधेरे में मग़लूब नहीं होता, हाँ उसकी रोशनी दूर तक नहीं पहुँचती, तेज़ रोशनी होती है तो दूर तक फैलती है, कम होती है तो थोड़ी जगह को रोशन करती है, मगर अंधेरी पर बहरहाल ग़ालिब ही रहती है, अंधेरी उस पर ग़ालिब नहीं आती। वह रोशनी ही नहीं जो अंधेरी से मग़लूब हो जाये। इसी तरह वह ईमान ही नहीं जो कुफ़्र से मग़लूब या मरऊब हो जाये। यह ईमानी नूर इनसानी ज़िन्दगी के हर शोबे (क्षेत्र), हर हाल और हर दौर में उसके साथ है।

इसी तरह इस मिसाल में एक और इशारा यह भी है कि जिस तरह रोशनी का फ़ायदा हर इनसान व हैवान को इरादा व बेइरादा हर हाल में कुछ न कुछ पहुँचता है, फ़र्ज़ करो कि न रोशनी वाला यह चाहता है कि दूसरे को फ़ायदा पहुँचे, न दूसरा यह इरादा करके निकला है कि उसकी रोशनी से मुझे फ़ायदा पहुँचे, मगर जब रोशनी किसी के साथ होगी तो उससे जबरी और क़ुदरती तौर पर सब को ही फ़ायदा पहुँचेगा। इसी तरह मोमिन के ईमान से दूसरों को भी कुछ न कुछ फ़ायदा पहुँचता है, चाहे उसको एहसास हो या न हो। आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلْكٰفِرِيْنَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ.

यानी इन स्पष्ट खुली हुई दलीलों के बावजूद इनकारी और काफ़िर जो बात को नहीं मानते इसकी वजह यह है कि "हर एक अपने ख़्याल व एतिक़ाद के साथ लगाव रखता है" शैतान और नफ़्सानी इच्छाओं ने उनकी नज़रों में उनके बुरे आमाल ही को ख़ूबसूरत और भला बनाकर रखा है, जो सख़्त धोखा है। नऊज़ु बिल्लाहि मिन्हा

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا فِيْ كُلِّ قَرْيَةٍ اَكٰبِرَ مُجْرِمِيْهَا لِيَمْكُرُوْا فِيْهَا ۚ

وَمَا يَمْكُرُوْنَ اِلَّا بِاَنْفُسِهِمْ وَمَا يَشْعُرُوْنَ ﴿۱۲۳﴾ وَاِذَا جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ قَالُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ حَتّٰى نُؤْتٰى مِثْلَ مَآ اُوْتِيَ رُسُلُ اللّٰهِ ؔ اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهٗ ؕ سَيُصِيْبُ الَّذِيْنَ اَجْرَمُوْا صَغَارٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعَذَابٌ شَدِيْدٌۢ بِمَا كَانُوْا يَمْكُرُوْنَ ﴿۱۲۴﴾ فَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ اَنْ يَّهْدِيَهٗ يَشْرَحْ صَدْرَهٗ لِلْاِسْلَامِ ۚ وَمَنْ يُّرِدْ اَنْ

يُضِلَّهُ يَجْعَلْ صَدْرَهُ ضَيِّقًا حَرَجًا كَأَنَّمَا يَصَّعَّدُ فِي السَّمَاءِ ۚ كَذَٰلِكَ يَجْعَلُ اللَّهُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٢٥﴾

व कज़ालि-क जअ़ल्ना फ़ी कुल्लि क़र्यतिन् अकाबि-र मुज्रिमीहा लियम्कुरू फ़ीहा, व मा यम्कुरू-न इल्ला बिअन्फ़ुसिहिम् व मा यश्अुरून (123) व इज़ा जाअत्हुम् आयतुन् क़ालू लन्-नुअ्मि-न हत्ता नुअ्ता मिस्-ल मा ऊति-य रुसुलुल्लाहि। अल्लाहु अअ़्लमु हैसु यज्अ़लु रिसाल-तहू, सयुसीबुल्लज़ी-न अज्रमू सग़ारुन् अ़िन्दल्लाहि व अ़ज़ाबुन् शदीदुम् बिमा कानू यम्कुरून (124) फ़मंय्युरिदिल्लाहु अंय्यह्दि-यहू यश्रह् सद्-रहू लिल्इस्लामि व मंय्युरिद् अंय्युज़िल्लहू यज्अ़ल् सद्-रहू ज़य्यिक़न् ह-रजन् कअन्नमा यस्सअ़्-अ़दु फ़िस्समा-इ, कज़ालि-क यज्अ़लुल्लाहुर्रिज्-स अ़लल्लज़ी-न ला युअ्मिनून (125)	और इसी तरह किये हैं हमने हर बस्ती में गुनाहगारों के सरदार कि हीले किया करें वहाँ, और जो हीले करते हैं सो अपनी ही जान पर, और नहीं सोचते। (123) और जब आती है उनके पास कोई आयत तो कहते हैं कि हम हरगिज़ न मानेंगे जब तक कि न दिया जाये हमको जैसा कुछ कि दिया गया है अल्लाह के रसूलों को, अल्लाह ख़ूब जानता है उस मौक़े को जहाँ भेजे अपने पैग़ाम, जल्द ही पहुँचेगी गुनाहगारों को ज़िल्लत अल्लाह के यहाँ और अ़ज़ाब सख़्त, इस वजह से कि वे मक्र करते थे। (124) सो जिसको अल्लाह चाहता है कि हिदायत करे तो खोल देता है उसके सीने को इस्लाम क़ुबूल करने के वास्ते, और जिसको चाहता है कि गुमराह करे तो कर देता है उसके सीने को तंग बहुत ज़्यादा तंग, गोया वह ज़ोर से चढ़ता है आसमान पर, इसी तरह डालेगा अल्लाह अ़ज़ाब को ईमान न लाने वालों पर। (125)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (यह कोई नई बात नहीं, जिस तरह मक्के के सरदार इन अपराधों के मुजरिम हो रहे हैं और उनके असर से दूसरे लोग शामिल हो जाते हैं) इसी तरह हमने (पहली उम्मतों में भी) हर बस्ती में वहाँ के रईसों 'यानी बड़े लोगों और सरदारों' ही को (पहले) जुर्मों का करने वाला बनाया (फिर उनके असर से और अ़वाम भी उनसे मिल गये) ताकि वे लोग वहाँ (नबियों को

नुक़सान पहुँचाने के लिये) शरारतें किया करें (जिनसे उनका सज़ा का हक़दार होना ख़ूब साबित हो जाये)। और वे लोग (अगरचे अपने ख़्याल में दूसरों को नुक़सान पहुँचाते हैं लेकिन वास्तव में) अपने ही साथ शरारत कर रहे हैं (क्योंकि इसका वबाल तो उन्हीं को भुगतना पड़ेगा) और (जहालत की हद यह कि) उनको (इसकी) ज़रा ख़बर नहीं। और (इन मक्का के काफ़िरों का जुर्म यहाँ तक बढ़ गया है कि) जब इनको कोई आयत पहुँचती है तो (बावजूद इसके कि वह अपने बेमिसाल होने की वजह से नुबुव्वत पर दलालत करने में काफ़ी होती, मगर ये लोग फिर भी) यूँ कहते हैं कि हम (इस नबी पर) हरगिज़ ईमान न लाएँगे जब तक कि हमको भी ऐसी ही चीज़ (न) दी जाए जो अल्लाह के रसूलों को दी जाती है (यानी अल्लाह की वही, ख़िताब या सहीफ़ा व किताब जिसमें हमको आप पर ईमान लाने का हुक्म हो, और इस क़ौल का बड़ा जुर्म होना ज़ाहिर है कि झुठलाने और दुश्मनी व तकब्बुर और गुस्ताख़ी सब इसके अन्दर मौजूद है। आगे अल्लाह तआ़ला इस क़ौल को रद्द फ़रमाते हैं कि) उस मौक़े को तो ख़ुदा ही ख़ूब जानता है जहाँ अपना पैग़ाम (वही के ज़रिये से) भेजता है, (क्या हर कोई इस सम्मान के क़ाबिल हो गया "जब तक ख़ुदा तआ़ला न बख़्शे"। आगे इस जुर्म की सज़ा का बयान है कि) जल्द ही उन लोगों को जिन्होंने यह जुर्म किया है ख़ुदा के पास पहुँचकर (यानी आख़िरत में) ज़िल्लत पहुँचेगी, (जैसा कि उन्होंने अपने को नबी के मुक़ाबले में इज़्ज़त व नुबुव्वत का मुस्तहिक़ समझा था) और उनकी शरारतों के मुक़ाबले में सख़्त सज़ा (मिलेगी)।

सो (ऊपर जो मोमिन व काफ़िर का हाल बयान हुआ है, इससे यह मालूम हुआ कि) जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला (निजात के) रास्ते पर डालना चाहते हैं उसके सीने (यानी दिल) को इस्लाम (क़ुबूल करने) के लिए खोल देते हैं (कि उसके क़ुबूल करने में टाल-मटोल और असमंजस में नहीं पड़ता और वह ज़िक्र हुआ नूर यही है) और जिसको (तक़दीरी तौर पर) बेराह रखना चाहते हैं उसके सीने (यानी दिल) को (इस्लाम के क़ुबूल करने से) तंग (और) बहुत तंग कर देते हैं (और उसको इस्लाम लाना ऐसा मुसीबत नज़र आता है) जैसे कोई (फ़र्ज़ करो) आसमान में चढ़ना (चाहता) हो (और चढ़ा नहीं जाता और जी तंग होता है, और मुसीबत का सामना होता है। पस जैसे उस शख़्स से चढ़ा नहीं जाता) इसी तरह अल्लाह ईमान न लाने वालों पर (चूँकि उनके कुफ़्र और शरारत के सबब) फटकार डालता है (इसलिये उनसे ईमान नहीं लाया जाता)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयत के आख़िर में यह ज़िक्र था कि यह दुनिया इम्तिहान की जगह है, यहाँ जिस तरह अच्छे और नेक आमाल के साथ कुछ मेहनत व मशक़्क़त लगी हुई है, उनकी राह में यहाँ रुकावटें पेश आती हैं, इसी तरह बुरे आमाल के साथ चन्द दिन की नफ़्सानी लज़्ज़तें और इच्छाओं का एक फ़रेब होता है जो हक़ीक़त और अन्जाम से ग़ाफ़िल इनसान की नज़र में उन बुरे आमाल ही को सजा-संवार कर पेश कर देता है, और दुनिया के बड़े-बड़े होशियार इसमें

मुब्तला हो जाते हैं।

उक्त आयतों में से पहली आयत में इसका बयान है कि इसी इम्तिहान और आज़माईश का एक रुख़ यह भी है कि इस दुनिया की शुरूआत से यूँ ही होता चला आया है कि हर बस्ती के रईस व मालदार और बड़े लोग ही हक़ीक़त और अन्जाम से ग़ाफ़िल चन्द दिन की फ़ानी लज़्ज़तों में मस्त होकर अपराधों को करते हैं और अ़वाम की आ़दत यह होती है कि बड़े लोगों के पीछे चलने और उनकी नक़ल उतारने ही को अपनी बेहतरी और कामयाबी समझते हैं, और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके नायब उलेमा व बुज़ुर्ग जो उनको उनके बुरे आमाल से रोकना और उसके अन्जाम की तरफ़ मुतवज्जह करना चाहते हैं, ये बड़े लोग उनके ख़िलाफ़ तरह-तरह की शरारतें किया करते हैं, जो देखने में तो उन बुज़ुर्गों के ख़िलाफ़ शरारतें और साज़िशें और उनके दिल दुखाने का सामान होता है, लेकिन अन्जाम के एतिबार से इन सब का वबाल ख़ुद उन्हीं की तरफ़ लौटता है, और अक्सर दुनिया में भी इसका ज़हूर हो जाता है।

इस इरशाद में मुसलमानों को इस पर तंबीह की गयी है कि दुनिया के बड़ों, रईसों और मालदारों की रीस न करें, उनके पीछे चलने की आ़दत छोड़ें, अन्जाम पर नज़र रखने को चलन बनायें और भले-बुरे को ख़ुद पहचानें।

साथ ही रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह तसल्ली देना मक़सूद है कि क़ुरैश के सरदार जो आपकी मुख़ालफ़त पर लगे हुए हैं इससे आप दुखी और परेशान न हों, इसलिये कि यह कोई नई बात नहीं, पिछले नबियों को भी ऐसे लोगों से वास्ता पड़ा है, और आख़िरकार वे रुस्वा और ज़लील हुए और अल्लाह का कलिमा बुलन्द हुआ।

दूसरी आयत में उन्हीं क़ुरैशी सरदारों की एक ऐसी गुफ़्तगू का ज़िक्र है जो हक़ के मुक़ाबले में महज़ हठधर्मी और मज़ाक़ उड़ाने के अन्दाज़ में थी, फिर उसका जवाब दिया गया है।

इमाम बग़वी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत क़तादा की रिवायत से नक़ल किया है कि क़ुरैश के सबसे बड़े सरदार अबू जहल ने एक मर्तबा कहा कि बनू अ़ब्दे मुनाफ़ (यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़ानदान) से हमने हर मोर्चे पर मुक़ाबला किया, जिसमें कभी हम उनसे पीछे नहीं रहे, लेकिन अब वे यूँ कहते हैं कि तुम शराफ़त व बुज़ुर्गी में हमारा मुक़ाबला इसलिये नहीं कर सकते कि हमारे ख़ानदान में एक नबी आये हैं, जिनको अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से वही आती है। फिर कहा कि मैं अल्लाह की क़सम खाता हूँ कि हम कभी उनकी पैरवी और अनुसरण न करेंगे, जब तक ख़ुद हमारे पास ऐसी ही वही न आने लगे जैसी उनके पास आती है। उक्त आयत में:

وَإِذَا جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ قَالُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ حَتّٰى نُؤْتٰى مِثْلَ مَآ اُوْتِيَ رُسُلُ اللّٰهِ.

का यही मतलब है।

नुबुव्वत व रिसालत मेहनत से हासिल की जाने वाली और इख़्तियारी चीज़ नहीं, बल्कि एक ओहदा है........

नुबुव्वत व रिसालत मेहनत से हासिल की जाने वाली और इख़्तियारी चीज़ नहीं, बल्कि एक ओहदा है, जिसके अ़ता करने का इख़्तियार सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के हाथ में है

क़ुरआने करीम ने यह क़ौल नक़्ल करने के बाद जवाब दियाः

اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهٗ.

यानी अल्लाह तआ़ला ही जानता है कि वह अपनी रिसालत व नुबुव्वत किसको अ़ता फ़रमाये। मतलब यह है कि उस बेवक़ूफ़ ने अपनी जहालत से यह समझ रखा है कि नुबुव्वत और पैग़म्बरी ख़ानदानी शराफ़त या क़ौम की सरदारी और मालदारी के ज़रिये हासिल की जा सकती है, हालाँकि नुबुव्वत अल्लाह तआ़ला की ख़िलाफ़त का ओहदा है, जिसका हासिल करना किसी के इख़्तियार में नहीं, कितने ही कमालात हासिल कर लेने के बाद भी कोई अपने इख़्तियार से या कमाल के ज़ोर से नुबुव्वत व रिसालत हासिल नहीं कर सकता, वह ख़ालिस हक़ जल्ल शानुहू की अ़ता है, वह जिसको चाहते हैं अ़ता फ़रमा देते हैं।

इससे साबित हुआ कि रिसालत व नुबुव्वत कोई मेहनत से हासिल की जाने वाली और इख़्तियारी चीज़ नहीं, जिसको इल्मी, अ़मली कमालात या मुजाहदे व मेहनत वग़ैरह के ज़रिये हासिल किया जा सके। कोई शख़्स विलायत के मक़ामात में कितनी ही ऊँची परवाज़ करके भी नुबुव्वत हासिल नहीं कर सकता, बल्कि वह महज़ फ़ज़्ले ख़ुदावन्दी है जो ख़ुदावन्दी इल्म व हिक्मत के मातहत ख़ास बन्दों को दिया जाता है। हाँ यह ज़रूरी है कि जिस शख़्स को हक़ तआ़ला के इल्म में यह मक़ाम और ओहदा देना मन्ज़ूर होता है उसको शुरू ही से इसके क़ाबिल बनाकर पैदा किया जाता है। उसके अख़्लाक़ व आमाल की ख़ास तरबियत की जाती है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

سَيُصِيْبُ الَّذِيْنَ اَجْرَمُوْا صَغَارٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعَذَابٌ شَدِيْدٌ ۢ بِمَا كَانُوْا يَمْكُرُوْنَ.

इसमें लफ़्ज़ सग़ार हासिले मस्दर है, जिसके मायने हैं ज़िल्लत व रुस्वाई। इस जुमले के मायने यह हैं कि ये हक़ के विरोधी जो आज अपनी क़ौम में बड़े और सरदार कहलाते हैं जल्द ही इनकी बड़ाई और इज़्ज़त ख़ाक में मिलने वाली है। इनको अल्लाह तआ़ला के पास सख़्त ज़िल्लत व रुस्वाई पहुँचने वाली है, और सख़्त अ़ज़ाब होने वाला है।

अल्लाह के पास का मतलब यह भी हो सकता है कि क़ियामत के दिन जब ये अल्लाह के सामने हाज़िर होंगे तो ज़लील व रुस्वा होकर हाज़िर होंगे, और फिर उनको सख़्त अ़ज़ाब दिया जायेगा। और यह मायने भी हो सकते हैं कि अगरचे इस वक़्त देखने में ये बड़े इज़्ज़तदार और सरदार हैं लेकिन अल्लाह की तरफ़ से इनको सख़्त ज़िल्लत व रुस्वाई पहुँचने वाली है। वह दुनिया में भी हो सकती है और आख़िरत में भी, जैसा कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के मुख़ालिफ़ों

के मुताल्लिक़ दुनिया की तारीख़ में इसको देखा जाता रहा है, कि अंततः उनके मुख़ालिफ़ दुनिया में भी ज़लील हुए। हमारे नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बड़े-बड़े विरोधी जो अपनी इज़्ज़त की डींग मारा करते थे, एक-एक करके या तो इस्लाम के दायरे में दाख़िल हो गये, और जो न हुए तो ज़लील व रुस्वा होकर हलाक हुए। अबू जहल, अबू लहब वग़ैरह क़ुरैश के सरदारों का हाल दुनिया के सामने आ गया, और मक्का फ़तह होने ने उन सब की कमरें तोड़ दीं।

दीन में दिली इत्मीनान और उसकी पहचान

तीसरी आयत में अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हिदायत पाने वालों और गुमराही पर जमे रहने वालों के कुछ हालात और निशानियाँ बतलाई गयी हैं। इरशाद फ़रमायाः

فَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ اَنْ يَّهْدِيَهٗ يَشْرَحْ صَدْرَهٗ لِلْاِسْلَامِ.

"यानी जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला हिदायत देना चाहते हैं उसका सीना इस्लाम के लिये खोल देते हैं।"

इमाम हाकिम ने मुस्तद्रक में और इमाम बैहक़ी ने शुअ़बुल-ईमान में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि जब यह आयत नाज़िल हुई तो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से शरह-सदर यानी सीना इस्लाम के लिये खोल देने की तफ़सीर मालूम की। आपने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला मोमिन के दिल में एक रोशनी डाल देते हैं, जिससे उसका दिल हक़ बात को देखने समझने और क़ुबूल करने के लिये खुल जाता है (यानी वह हक़ बात को आसानी से क़ुबूल करने लगता है और ख़िलाफ़ हक़ से नफ़रत और घबराहट होने लगती है)। सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया कि क्या इसकी कोई निशानी भी है जिससे वह शख़्स पहचाना जाये जिसको शरह-सदर हासिल हो गया है? फ़रमाया हाँ! निशानी यह है कि उस शख़्स की सारी रुचि आख़िरत और उसकी नेमतों की तरफ़ हो जाती है, दुनिया की बेजा इच्छाओं और फ़ानी लज़्ज़तों से घबराता है, और मौत के आने से पहले मौत की तैयारी करने लगता है। फिर फ़रमायाः

وَمَنْ يُّرِدْ اَنْ يُّضِلَّهٗ يَجْعَلْ صَدْرَهٗ ضَيِّقًا حَرَجًا كَاَنَّمَا يَصَّعَّدُ فِى السَّمَآءِ.

यानी जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला गुमराही में रखना चाहते हैं उसका दिल तंग और सख़्त तंग कर देते हैं। उसको हक़ बात का क़ुबूल करना और उस पर अ़मल करना ऐसा कठिन होता है जैसे किसी इनसान का आसमान में चढ़ना।

इमामे तफ़सीर कल्बी ने फ़रमाया कि "उसका दिल तंग होने का यह मतलब है कि उसमें हक़ और भलाई के लिये कोई रास्ता नहीं रहता।" यह मज़मून हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी मन्क़ूल है, और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जब वह अल्लाह का ज़िक्र सुनता है तो उसको घबराहट होने लगती है, और जब कुफ़्र व शिर्क की बातें सुनता है तो उनमें दिल लगता है।

सहाबा किराम को दीन में दिली इत्मीनान हासिल था, इसलिये शक व शुब्हात बहुत कम पेश आये

यही वजह थी कि सहाबा-ए-किराम रिज़वानुल्लाहि अ़लैहिम अज्मईन जिनको हक़ तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत और डायरेक्ट शागिर्दी के लिये चुना था उनको इस्लामी अहकाम में शुब्हात और वस्वसे कम से कम पेश आये। सारी उम्र में सहाबा-ए-किराम ने जो सवालात रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने पेश किये वो गिने-चुने चन्द हैं। वजह यह थी कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत के फ़ैज़ से अल्लाह तआ़ला की बड़ाई और मुहब्बत का गहरा नक़्श (छाप) उनके दिलों में बैठ गया था, जिसके सबब उनको शरह-सदर (दिल के इत्मीनान) का मक़ाम हासिल था, उनके दिल अपने आप ही हक़ व बातिल का मेयार बन गये थे। हक़ को आसानी के साथ फ़ौरन क़ुबूल करते और बातिल उनके दिलों में रास्ता न पाता था। फिर जैसे-जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुबारक दौर से दूरी होती चली गयी, शक व शुब्हों ने राह पानी शुरू की। अ़क़ीदों के मतभेद और झगड़े पैदा होने शुरू हुए।

शक व शुब्हात के दूर करने का असली तरीक़ा बहस व मुबाहसा नहीं दिली इत्मीनान को हासिल करना है

आज पूरी दुनिया इन शक व शुब्हात के घेरे में फंसी हुई है और बहस व मुबाहसे की राह से इसको हल करना चाहती है जो इसका सही रास्ता नहीं:

फ़ल्सफ़ी को बहस के अन्दर ख़ुदा मिलता नहीं
डोर को सुलझा रहा है पर सिरा मिलता नहीं

रास्ता वही है जो सहाबा-ए-किराम और उम्मत के बुज़ुर्गों ने इख़्तियार फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत और उनके इनाम को ध्यान में रखकर उसकी बड़ाई व मुहब्बत दिल में पैदा की जाये तो शुब्हात अपने आप ख़त्म हो जाते हैं। यही वजह है कि ख़ुद क़ुरआने करीम ने रसूले पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह दुआ़ माँगने की तालीम फ़रमाई है:

رَبِّ اشْرَحْ لِيْ صَدْرِيْ.

"रब्बिश्रह् ली सद्री" यानी ऐ मेरे परवर्दिगार मेरा सीना खोल दीजिए।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

كَذٰلِكَ يَجْعَلُ اللّٰهُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ.

यानी इसी तरह अल्लाह तआ़ला ईमान न लाने वालों पर फटकार डाल देता है। हक़ बात उनके दिल में नहीं उतरती और हर बुराई और बेहूदगी की तरफ़ दौड़-दौड़कर जाते हैं।

وَهٰذَا صِرَاطُ رَبِّكَ مُسْتَقِيمًا ۗ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّذَّكَّرُوْنَ ۞ لَهُمْ دَارُ السَّلٰمِ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَهُوَ وَلِيُّهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۞ وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ جَمِيْعًا ۚ يٰمَعْشَرَ الْجِنِّ قَدِ اسْتَكْثَرْتُمْ مِّنَ الْاِنْسِ ۚ وَقَالَ اَوْلِيٰٓؤُهُمْ مِّنَ الْاِنْسِ رَبَّنَا اسْتَمْتَعَ بَعْضُنَا بِبَعْضٍ وَّبَلَغْنَآ اَجَلَنَا الَّذِيْٓ اَجَّلْتَ لَنَا ۚ قَالَ النَّارُ مَثْوٰىكُمْ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اِلَّا مَا شَآءَ اللّٰهُ ۗ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ۞

व हाज़ा सिरातु रब्बि-क मुस्तक़ीमन्, क़द् फ़स्सल्नल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यज़्ज़क्करून (126) लहुम् दारुस्सलामि अ़िन्-द रब्बिहिम् व हु-व वलिय्युहुम् बिमा कानू यअ़्मलून (127) व यौ-म यह्शुरुहुम् जमीअ़न् या मअ़्शरल्-जिन्नि क़दिस्तक्सर्तुम् मिनल्-इन्सि व क़ा-ल औलियाउहुम् मिनल्-इन्सि रब्बनस्तम्त-अ़ बअ़्ज़ुना बिबअ़्ज़िंव्-व बलग़्ना अ-ज-लनल्लज़ी अज्जल्-त लना, क़ालन्नारु मस्वाकुम् ख़ालिदी-न फ़ीहा इल्ला मा शाअल्लाहु, इन्-न रब्ब-क हकीमुन् अ़लीम (128)	और यह है रास्ता तेरे रब का सीधा, हम ने स्पष्ट कर दिया निशानियों को ग़ौर करने वालों के वास्ते। (126) उन्हीं के लिये है सलामती का घर अपने रब के यहाँ और वह उनका मददगार है, उनके आमाल की वजह से। (127) और जिस दिन जमा करेगा उन सब को, फ़रमायेगा ऐ जिन्नात की जमाअ़त! तुमने बहुत कुछ अपने ताबे कर लिये आदमियों में से, और आदमियों में से उनसे दोस्ती रखने वाले कहेंगे- ऐ हमारे रब! काम निकाला हम में एक ने दूसरे से और हम पहुँचे अपने उस वायदे को जो तूने हमारे लिये मुक़र्रर किया था। फ़रमायेगा- आग है तुम्हारा घर, रहा करोगे उसी में मगर जब चाहे अल्लाह, यक़ीनन तेरा रब हिक्मत वाला, ख़बर रखने वाला है। (128)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (ऊपर जो इस्लाम का ज़िक्र है तो) यही (इस्लाम) आपके रब का (बतलाया हुआ) सीधा रास्ता है (जिस पर चलने से निजात होती है, जिसका ज़िक्र 'फ़मंय्युरिदिल्ला-ह अंय्यह्दियहू' (यानी पीछे गुज़री आयत नम्बर 125) में है। और इसी सिराते मुस्तक़ीम की वज़ाहत के लिये) हमने नसीहत हासिल करने वालों के वास्ते इन आयतों को साफ़-साफ़ बयान कर दिया (जिससे वे इसके बेमिसाल और चमत्कारी होने की तस्दीक़ करें और फिर इसके मज़ामीन पर अ़मल करके निजात हासिल करें। यही तस्दीक़ व अ़मल पूरा सिराते मुस्तक़ीम है, बख़िलाफ़ उनके

जिनको नसीहत हासिल करने की फ़िक्र ही नहीं, उनके वास्ते न यह काफ़ी न दूसरी दलीलें और निशानियाँ काफ़ी। आगे उन मानने वालों की जज़ा का ज़िक्र है जैसा कि न मानने वालों की सज़ा ऊपर कई जुमलों में ज़िक्र हुई है। पस इरशाद है कि) उन लोगों के वास्ते उनके रब के पास (पहुँचकर) सलामती (यानी अमन व बक़ा) का घर (यानी जन्नत) है, और वह (यानी अल्लाह तआ़ला) उनसे उनके (अच्छे और नेक) आमाल की वजह से मुहब्बत रखता है। और (वह दिन याद करने के क़ाबिल है) जिस दिन अल्लाह तआ़ला तमाम मख़्लूक़ों को जमा करेंगे (और उनमें से ख़ास तौर पर काफ़िरों को हाज़िर करके उनमें जो जिन्नाती शैतान हैं उनसे झिड़की और डाँट के तौर पर कहा जायेगा कि) ऐ जिन्नात की जमाअ़त! तुमने इनसानों (को गुमराह करने) में बड़ा हिस्सा लिया (और उनको ख़ूब बहकाया। इसी तरह इनसानों से पूछा जायेगा कि ऐ आदम की औलाद! क्या मैंने तुमसे अ़हद नहीं लिया था कि शैतान की इबादत मत करना, उसके कहने पर मत चलना? ग़र्ज़ कि जिन्नाती शैतान भी इक़रार करेंगे) और जो इनसान उन (जिन्नाती शैतानों) के साथ ताल्लुक़ रखने वाले थे वे (इक़रार के तौर पर) कहेंगे कि ऐ हमारे परवर्दिगार! (आप सही फ़रमाते हैं, वाक़ई इस गुमराही के मामले में) हममें से एक ने दूसरे से (नफ़्सानी) फ़ायदा हासिल किया था (चुनाँचे गुमराह इनसानों को अपने कुफ़्रिया व शिर्किया अ़क़ीदों में लज़्ज़त आती है और गुमराह करने वाले शैतानों को इससे मज़ा मिलता है कि हमारा कहना मान लिया गया), और (वास्तव में हम इनके बहकाने से क़ियामत के इनकारी थे, लेकिन वह इनकार ग़लत साबित हुआ। चुनाँचे) हम अपनी इस मुक़र्ररा मियाद "यानी निर्धारित समय" तक आ पहुँचे जो आपने हमारे लिए तय और निर्धारित फ़रमाई थी (यानी क़ियामत)। वह (यानी अल्लाह तआ़ला सारे काफ़िर जिन्नों और काफ़िर इनसानों से) फ़रमाएँगे कि तुम सब का ठिकाना दोज़ख़ है, जिसमें हमेशा-हमेशा को रहोगे (कोई निकलने का रास्ता व तदबीर नहीं), हाँ अगर ख़ुदा ही को (निकालना) मन्ज़ूर हो तो दूसरी बात है (लेकिन यह यक़ीनी है कि ख़ुदा भी नहीं चाहेगा, इसलिये हमेशा उसी में रहा करो)। बेशक आपका रब बड़ा हिक्मत वाला, बड़ा इल्म वाला है (इल्म से सब के जुर्मों की जानकारी रखता है और हिक्मत से मुनासिब सज़ा देता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बयान हुई आयतों में से पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके इरशाद फ़रमायाः

وَهٰذَا صِرَاطُ رَبِّكَ مُسْتَقِيْمًا.

"यानी यह रास्ता तेरे रब का है सीधा।"

इसमें लफ़्ज़ "हाज़ा" से बक़ौल हज़रत इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु क़ुरआन की तरफ़ और बक़ौल हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु इस्लाम की तरफ़ इशारा है। (रूहुल-मआ़नी)

मायने यह हैं कि यह क़ुरआन या इस्लामी शरीअ़त जो आपको दी गयी है यह रास्ता आपके रब का है, यानी ऐसा रास्ता है जिसको आपके परवर्दिगार ने अपनी हिक्मते बालिग़ा से तजवीज़ फ़रमाया और इसको पसन्द किया है। इसमें रास्ते की निस्बत परवर्दिगार की तरफ़ करके इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि क़ुरआन और इस्लाम का जो क़ानून और अ़मल का तरीक़ा आपको दिया गया है इस पर अ़मल करना कुछ अल्लाह तआ़ला के फ़ायदे के लिये नहीं बल्कि अ़मल करने वालों के फ़ायदे के लिये परवर्दिगारी की शान के तक़ाज़े की बिना पर है। इसके ज़रिये इनसान की ऐसी तरबियत करना मक़सूद है जो उसकी हमेशा की बेहतरी और कामयाबी की ज़ामिन हो।

फिर इसमें लफ़्ज़ रब की निस्बत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ करके आप पर एक ख़ास लुत्फ़ व इनायत का इज़हार फ़रमाया गया है कि आपके परवर्दिगार ने यह रास्ता तजवीज़ फ़रमाया है। इस निस्बत का लुत्फ़ ज़ौक़ वाले ही महसूस कर सकते हैं कि एक बन्दे को अपने रब और माबूद की तरफ़ कोई मामूली सी निस्बत (ताल्लुक़) हासिल हो जाना भी उसके लिये बहुत बड़े फ़ख़्र की चीज़ है, और अगर तमाम जहानों का रब और कायनात का माबूद अपने आपको उसकी तरफ़ मन्सूब करे कि मैं तेरा हूँ तो उसकी क़िस्मत का क्या कहना। हज़रत हसन निज़ामी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि इसी मक़ाम से फ़रमाते हैं:

बन्दा हसन बसद् ज़ुबान गुफ़्त कि बन्दा-ए-तू अम
तू ब-ज़ुबाने ख़ुद बगो कि बन्दा-नवाज़ कीस्ती

इसके बाद इस क़ुरआनी रास्ते का यह हाल लफ़्ज़ "मुस्तक़ीम" से बयान किया गया कि यह रास्ता सीधा रास्ता है। इसमें भी मुस्तक़ीम को सिरात की सिफ़त के तौर पर लाने के बजाय हाल के तरीक़े से ज़िक्र करके इस तरफ़ इशारा कर दिया कि जो रास्ता परवर्दिगारे आ़लम का तजवीज़ किया हुआ है उसमें सिवाय मुस्तक़ीम और सीधा होने के और कोई गुमान व संदेह हो ही नहीं सकता। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी व बहरे मुहीत)

इसके बाद फ़रमायाः

قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّذَّكَّرُوْنَ.

यानी हमने नसीहत क़ुबूल करने वालों के वास्ते इन आयतों को साफ़-साफ़ और खोलकर बयान कर दिया है।

"फ़स्सलना" तफ़सील से बना है। तफ़सील के असली मायने ये हैं कि मज़मून का टुकड़े-टुकड़े करके एक-एक फ़स्ल (हिस्से) को अलग-अलग बयान किया जाये। इस तरीक़े पर पूरा मज़मून ज़ेहन में बैठ जाता है। इसलिये तफ़सील का हासिल साफ़-साफ़ बयान करना हो गया। मतलब यह है कि हमने बुनियादी और उसूली मसाईल को साफ़-साफ़ तफ़सील के साथ बयान कर दिया है, जिसमें कोई संक्षिप्तता और अस्पष्टता बाक़ी नहीं छोड़ी। इसमें 'ग़ौर करने और नसीहत हासिल करने वालों के लिये' फ़रमाकर यह बतला दिया कि अगरचे क़ुरआनी

इरशादात बिल्कुल स्पष्ट और साफ़ हैं, लेकिन इनसे फ़ायदा उन्हीं लोगों ने उठाया जो नसीहत हासिल करने के इरादे से क़ुरआन में ग़ौर करते हैं, ज़िद और दुश्मनी या बाप-दादा की रस्मों की बेजान पैरवी के पर्दे उनके बीच में रुकावट नहीं होते।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

لَهُمْ دَارُ السَّلَامِ عِنْدَ رَبِّهِمْ

यानी जिन लोगों का ऊपर ज़िक्र किया गया है कि वे क़ुरआनी हिदायतों को ज़ेहन ख़ाली करके नसीहत हासिल करने के लिये देखते और सुनते हैं, और इसके लाज़िमी नतीजे के तौर पर इन हिदायतों को क़ुबूल करते हैं, उनके लिये उनके रब के पास दारुस्सलाम का इनाम मौजूद और सुरक्षित है। इसमें लफ़्ज़ 'दार' के मायने घर और 'सलाम' के मायने तमाम आफ़तों, मुसीबतों और मेहनतों से सुरक्षित रहने के हैं, इसलिये दारुस्सलाम उस घर को कहा जा सकता है जिसमें किसी तकलीफ़ व मशक़्क़त, रंज व ग़म और आफ़त व मुसीबत का गुज़र न हो, और ज़ाहिर है कि वह जन्नत ही हो सकती है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि सलाम अल्लाह जल्ल शानुहू का नाम है, और दारुस्सलाम के मायने हैं अल्लाह का घर, और ज़ाहिर है कि अल्लाह का घर अमन व सलामती की जगह होती है, इसलिये मायनों का हासिल यह भी हो गया कि वह घर जिसमें अमन व सुकून और सलामती व इत्मीनान हो। जन्नत को दारुस्सलाम फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि जन्नत ही सिर्फ़ वह जगह है जहाँ इनसान को हर क़िस्म की तकलीफ़, परेशानी, तकलीफ़ और हर ख़िलाफ़े तबीयत चीज़ से मुकम्मल और हमेशा की सलामती हासिल होती है, जो दुनिया में न किसी बड़े से बड़े बादशाह को कभी हासिल हुई और न बड़े से बड़े नबी व रसूल को। क्योंकि इस फ़ानी दुनिया का यह आ़लम ऐसी मुकम्मल और हमेशा वाली राहत का मक़ाम ही नहीं।

इस आयत में यह बतलाया गया है कि उन नेकबख़्त लोगों के लिये उनके रब के पास दारुस्सलाम (अमन व सलामती का घर) है। रब के पास होने के यह मायने भी हो सकते हैं कि यह दारुस्सलाम यहाँ नक़द नहीं मिलता बल्कि जब वे क़ियामत के दिन अपने रब के पास जायेंगे उस वक़्त मिलेगा। और यह मायने भी हो सकते हैं कि दारुस्सलाम का वायदा ग़लत नहीं हो सकता, रब्बे करीम इसका ज़ामिन (गारंटर) है, वह उसके पास सुरक्षित है। और इसमें इस तरफ़ भी इशारा है कि उस दारुस्सलाम की नेमतों और राहतों को आज कोई तसव्वुर में भी नहीं ला सकता, रब ही जानता है, जिसके पास यह ख़ज़ाना महफ़ूज़ है।

और इस दूसरे मायने के हिसाब से इस दारुस्सलाम का मिलना क़ियामत और आख़िरत पर मौक़ूफ़ नहीं मालूम होता, बल्कि यह भी हो सकता है कि रब्बे करीम जिसको चाहें इसी आ़लम में दारुस्सलाम नसीब कर सकते हैं, कि तमाम आफ़तों और मुसीबतों से अमन नसीब फ़रमा दें।

चाहे इस तरह कि दुनिया में कोई आफ़त व मुसीबत ही उनको न पहुँचे जैसा कि पहले नबियों और अल्लाह के वलियों में इसकी भी नज़ीरें और मिसालें मौजूद हैं, और या इस तरह कि आख़िरत की नेमतों को उनके सामने ध्यान में लाकर उनकी निगाह को ऐसा हकीक़त पहचानने वाला बना दिया गया जिससे दुनिया की चन्द दिन की तकलीफ़ व मुसीबत उनकी नज़रों में बेहकीक़त और नाक़ाबिले तवज्जोह चीज़ नज़र आने लगती है। मुसीबतों के पहाड़ भी उनके सामने एक तिनके से कम रह जाते हैं।

दुनिया की तकलीफ़ों के मुक़ाबले में जो इनामात मिलने वाले हैं वो उनके सामने ऐसे ज़ेहन में बैठ जाते हैं कि ये तकलीफ़ें भी उनको मज़ेदार मालूम होने लगती हैं। और यह कोई नामुम्किन और दूर की चीज़ नहीं, देखो आख़िरत की हमेशा की नेमतें तो बड़ी चीज़ हैं, यह दुनिया की फ़ानी और चन्द दिन की राहत का तसव्वुर इनसान के लिये कैसी-कैसी मेहनत व मशक़्क़त को मज़ेदार बना देता है कि सिफ़ारिशें और रिश्वतें पेश करके आज़ादी की राहत को क़ुरबान करता है, और नींद व आराम को ख़त्म करने वाली नौकरी व मज़दूरी की मेहनत को शौक़ से तलब करता है, और इस मेहनत के मिल जाने पर प्रसन्न व शुक्रगुज़ार होता है, क्योंकि उसके सामने इकत्तीस दिन पूरे हो जाने के बाद हासिल होने वाली तन्ख़्वाह की लज़्ज़त होती है, वह लज़्ज़त इस नौकरी व मज़दूरी की सब कड़वाहटों को मज़ेदार बना देती है। क़ुरआन मजीद की आयतः

وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ جَنَّتٰنِ.

की एक तफ़सीर यह भी है कि ख़ुदा तआ़ला से डरने वालों को दो जन्नतें मिलेंगी- एक आख़िरत में, दूसरी दुनिया में। दुनिया की जन्नत यही होती है कि अव्वल तो उसके हर काम में अल्लाह तआ़ला की मदद शामिल होती है, हर काम आसान होता नज़र आता है, और कभी चन्द दिन की तकलीफ़ व मशक़्क़त या नाकामी भी होती है तो आख़िरत की नेमतों के मुक़ाबले में वह भी उनको लज़ीज़ (मज़ेदार) नज़र आती है, जिससे यह तकलीफ़ भी राहत की सूरत इख़्तियार कर लेती है।

ख़ुलासा यह है कि इस आयत में नेक लोगों के लिये उनके रब के पास दारुस्सलाम होने का जो ज़िक्र है वह दारुस्सलाम आख़िरत में तो यक़ीनी और मुतैयन है, और यह भी हो सकता है कि इस दुनिया में भी उनको दारुस्सलाम का लुत्फ़ दे दिया जाये।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

وَهُوَ وَلِيُّهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ.

यानी उनके नेक आमाल की वजह से अल्लाह तआ़ला उनका सरपरस्त व ज़िम्मेदार और हिमायती व मददगार हो जाता है। उनकी सब मुश्किलें आसान हो जाती हैं।

तीसरी आयत में मैदाने हश्र के अन्दर तमाम जिन्नात और इनसानों को जमा करने के बाद

दोनों गिरोहों से एक सवाल व जवाब का ज़िक्र है कि अल्लाह तआ़ला जिन्नाती शैतानों को ख़िताब करके उनके जुर्म का इज़हार इस तरह फ़रमायेंगे कि तुमने इनसानों की गुमराही में बड़ा हिस्सा लिया है। इसके जवाब में जिन्नात क्या कहेंगे क़ुरआन ने इसका ज़िक्र नहीं किया, ज़ाहिर यही है कि अ़लीम व ख़बीर (सब कुछ जानने वाले और हर चीज़ की ख़बर रखने वाले यानी अल्लाह तआ़ला) के सामने इक़रार करने के सिवा चारा क्या है। मगर उनका इक़रार ज़िक्र न करने में यह इशारा है कि इस सवाल पर वे ऐसे हैरान हो जायेंगे कि जवाब के लिये ज़बान न उठ सकेगी। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इसके बाद इनसानी शैतानों यानी वे लोग जो दुनिया में शैतानों के ताबे रहे, ख़ुद भी गुमराह हुए और दूसरों की गुमराही का सबब बनते रहे, उन लोगों की तरफ़ से अल्लाह की बारगाह में एक जवाब ज़िक्र किया गया है। अगरचे सवाल इनसानी शैतानों से नहीं किया गया, मगर ज़िमनी ख़िताब की वजह से उन लोगों ने जवाब दिया। मगर ज़ाहिर यह है कि ख़ुद इनसान दिखने वाले शैतानों से भी सवाल होगा, जिसका ज़िक्र स्पष्ट तौर पर अगरचे यहाँ नहीं है मगर सूरः यासीन की इस आयत में बयान हुआ है:

اَلَمْ اَعْهَدْ اِلَيْكُمْ يٰبَنِىْٓ اٰدَمَ اَنْ لَّا تَعْبُدُوا الشَّيْطٰنَ.

"यानी ऐ इनसानो! क्या हमने तुमसे रसूलों के वास्ते से यह न कहा था कि शैतान की पैरवी न करना।"

जिससे मालूम हुआ कि इनसानी शैतानों से भी इस मौक़े पर सवाल होगा और वे जवाब में इक़रार करेंगे कि बेशक हमसे यह जुर्म हुआ कि हमने शैतानों की बात मानी, और यह कहेंगे कि बेशक जिन्नाती शैतानों ने हमसे और हमने उनसे दोस्ताना ताल्लुक़ात रखकर एक दूसरे से नफ़ा हासिल किया। इनसानी शैतानों ने तो उनसे यह फ़ायदा हासिल किया कि दुनिया की लज़्ज़तें हासिल करने की राहें सीखीं, और कहीं-कहीं जिन्नाती शैतानों की दुहाई देकर या किसी दूसरे तरीक़े से उनसे इमदाद भी हासिल की। जैसे बुत-परस्त हिन्दुओं में बल्कि बहुत से जाहिल मुसलमानों में भी ऐसे तरीक़े परिचित हैं जिनके ज़रिये शैतानों और जिन्नात से बाज़ कामों में इमदाद ले सकते हैं, और जिन्नाती शैतानों ने इनसानों से यह फ़ायदा हासिल किया कि उनकी बात मानी गयी, और यह इनसान को अपने ताबे बनाने में कामयाब हो गये, यहाँ तक कि वे मौत और आख़िरत को भूल बैठे, और उस वक़्त उन लोगों ने इक़रार किया कि जिस मौत और आख़िरत को हम शैतान के बहकाने से भूल बैठे थे अब वह सामने आ गयी। इस पर हक़ तआ़ला का इरशाद होगा:

اَلنَّارُ مَثْوٰىكُمْ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اِلَّا مَاشَآءَ اللّٰهُ. اِنَّ رَبَّكَ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ.

"यानी तुम दोनों गिरोहों के जुर्म की सज़ा अब यह है कि तुम्हारा ठिकाना आग है, जिसमें हमेशा रहोगे, मगर यह कि अल्लाह तआ़ला ही उससे किसी को निकालना चाहे।"

लेकिन दूसरी आयतों में क़ुरआन गवाह है कि अल्लाह तआ़ला भी नहीं चाहेगा, इसलिये

हमेशा ही रहना पड़ेगा।

وَكَذٰلِكَ نُوَلِّيْ بَعْضَ الظّٰلِمِيْنَ بَعْضًاۢ بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝

يٰمَعْشَرَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اَلَمْ يَاْتِكُمْ رُسُلٌ مِّنْكُمْ يَقُصُّوْنَ عَلَيْكُمْ اٰيٰتِيْ وَيُنْذِرُوْنَكُمْ لِقَآءَ يَوْمِكُمْ هٰذَا ؕ قَالُوْا شَهِدْنَا عَلٰٓى اَنْفُسِنَا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَشَهِدُوْا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ اَنَّهُمْ كَانُوْا كٰفِرِيْنَ ۝ ذٰلِكَ اَنْ لَّمْ يَكُنْ رَّبُّكَ مُهْلِكَ الْقُرٰى بِظُلْمٍ وَّاَهْلُهَا غٰفِلُوْنَ ۝ وَلِكُلٍّ دَرَجٰتٌ مِّمَّا عَمِلُوْا ؕ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُوْنَ ۝

व कज़ालि-क नुवल्ली बअ्ज़ज़्-ज़ालिमी-न बअ्ज़म् बिमा कानू यक्सिबून (129) ❁	और इसी तरह हम साथ मिलायेंगे गुनाहगारों को एक दूसरे के, उनके आमाल के सबब। (129) ❁
या मअ्शरल्-जिन्नि वल्-इन्सि अलम् यअ्तिकुम् रुसुलुम् मिन्कुम् यक़ुस्सू-न अ़लैकुम् आयाती व युन्ज़िरूनकुम् लिक़ा-अ यौमिकुम् हाज़ा, क़ालू शहिद्ना अ़ला अन्फ़ुसिना व ग़र्रत्हुमुल्-हयातुद्दुन्या व शहिदू अ़ला अन्फ़ुसिहिम् अन्नहुम् कानू काफ़िरीन (130)	ऐ जिन्नों और इनसानों की जमाअ़त! क्या नहीं पहुँचे थे तुम्हारे पास रसूल तुम ही में के? कि सुनाते थे तुमको मेरे हुक्म और डराते थे तुमको इस दिन के पेश आने से। कहेंगे कि हमने इक़रार किया अपने गुनाह का, और उनको धोखा दिया दुनिया की ज़िन्दगी ने और क़ायल हो गये अपने ऊपर इस बात के कि वे काफ़िर थे। (130)
ज़ालि-क अल्लम् यकुर्रब्बु-क मुह्लिकल्क़ुरा बिज़ुल्मिंव्-व अह्लुहा ग़ाफ़िलून (131)	यह इस वास्ते कि तेरा रब हलाक करने वाला नहीं बस्तियों को उनके ज़ुल्म पर और वहाँ के लोग बेख़बर हों। (131)
व लिकुल्लिन् द-रजातुम्-मिम्मा अ़मिलू, व मा रब्बु-क बिग़ाफ़िलिन् अ़म्मा यअ्मलून (132)	और हर एक के लिये दर्जे हैं उनके अ़मल के और तेरा रब बेख़बर नहीं उनके काम से। (132)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जिस तरह दुनिया में गुमराही के लिहाज़ से सब में ताल्लुक़ व निकटता थी) इसी तरह

(दोज़ख़ में) हम कुछ काफ़िरों को कुछ के क़रीब (और इकट्ठा) रखेंगे उनके (कुफ़िया) आमाल के सबब।

(यह उक्त ख़िताब तो जिन्नात और इनसानों को उनके एक-दूसरे के साथ संबन्धित हालात के एतिबार से था, आगे हर एक को उसके ज़ाती और व्यक्तिगत हालात के एतिबार ख़िताब है कि) ऐ जिन्नात और इनसानों की जमाअ़त! (हाँ यह तो बतलाओ जो तुम कुफ़्र व इनकार करते रहे तो) क्या तुम्हारे पास तुम्हीं में से पैग़म्बर नहीं आए थे जो तुमसे मेरे (अ़क़ीदों व आमाल से संबन्धित) अहकाम बयान किया करते थे, और तुमको इस आज के दिन (के पेश आने) की ख़बर दिया करते थे (फिर क्या वजह कि तुम कुफ़्र व इनकार से बाज़ न आये)? वे सब अ़र्ज़ करेंगे कि हम अपने ऊपर (जुर्म का) इक़रार करते हैं (हमारे पास उज़्र और बचाव की कोई वजह नहीं। आगे अल्लाह तआ़ला उनको इस मुसीबत के पेश आने का सबब बतलाते हैं) और उनको (यहाँ) दुनियावी ज़िन्दगानी ने भूल में डाल रखा है (कि दुनियावी लज़्ज़तों को सबसे बड़ा मक़सद समझ रखा है आख़िरत की फ़िक्र ही नहीं) और (इसका नतीजा यह हुआ कि वहाँ) ये लोग इक़रार करेंगे कि वे (यानी हम) काफ़िर थे (और ग़लती पर थे, मगर वहाँ के इक़रार से क्या होता है, अगर दुनिया में ज़रा ग़फ़लत दूर कर लें तो उस बुरे दिन का क्यों सामना हो। आगे रसूलों के भेजने में जिसका ऊपर ज़िक्र था अपनी रहमत का इज़्हार फ़रमाते हैं कि) यह (रसूलों का भेजना) इस वजह से है कि आपका रब किसी बस्ती वालों को (उनके) कुफ़्र के सबब (दुनिया में भी) ऐसी हालत में हलाक नहीं करता कि उस बस्ती के रहने वाले (अल्लाह के अहकाम से रसूलों के न आने के कारण) बेख़बर हों। (पस आख़िरत का अ़ज़ाब जो कि बहुत सख़्त है होता ही नहीं, इसलिये रसूलों को भेजते हैं ताकि उनको बुराईयों और जुर्मों की इत्तिला हो जाये। फिर जिसको अ़ज़ाब हो उसका हक़दार होने की वजह से हो। चुनाँचे आगे फ़रमाते हैं) और (जब रसूल आ गये और इत्तिला हो गयी फिर जैसा-जैसा कोई करेगा तो अच्छे बुरे जिन्नात और इनसानों में से) हर एक के लिए (जज़ा व सज़ा के वैसे ही) दर्जे हैं उनके आमाल के सबब, और आपका रब उनके आमाल से बेख़बर नहीं है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

बयान हुई आयतों में से पहली आयत में लफ़्ज़ ''नुवल्ली'' के अ़रबी लुग़त के एतिबार से दो तर्जुमे हो सकते हैं- एक मिला देने और क़रीब कर देने के और दूसरे मुसल्लत कर देने के। तफ़सीर के इमामों सहाबा व ताबिईन से भी दोनों तरह की रिवायतों में इसकी तफ़सीर नक़ल की गयी है।

मेहशर में लोगों की जमाअ़तें आमाल व अख़्लाक़ की बुनियाद पर होंगी, दुनियावी ताल्लुक़ात की बुनियाद पर नहीं

हज़रत सईद बिन जुबैर और हज़रत क़तादा वग़ैरह ने पहला तर्जुमा इख़्तियार करके आयत

का यह मतलब क़रार दिया है कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला के यहाँ सामूहिक एकतायें यानी लोगों की जमाअ़तें और पार्टियाँ नस्ली या वतनी या रंग व भाषा की बिना पर नहीं बल्कि आमाल व अख़्लाक़ के एतिबार से होंगी। अल्लाह तआ़ला का फ़रमाँबरदार मुसलमान जहाँ कहीं होगा वह मुसलमानों का साथी होगा, और नाफ़रमान काफ़िर जहाँ कहीं होगा वह काफ़िरों का साथी होगा, चाहे उनकी नस्ल और नसब में, वतन और भाषा में, रंग और सामाजिक रहन-सहन में कितनी ही दूरी और भिन्नता हो।

फिर मुसलमानों में भी नेक, दीनदार दीनदारों के साथ होगा, और गुनाहगार, बुरे आमाल वाला बुरे आमाल वालों के साथ लगा दिया जायेगा। सूरः "तकवीर" में जो इरशाद है:

وَاِذَا النُّفُوْسُ زُوِّجَتْ.

यानी लोगों के जोड़े और जमाअ़तें बना दी जायेंगी। इसका यही मतलब है कि आमाल व अख़्लाक़ के एतिबार से मेहशर वाले विभिन्न जमाअ़तों में तक़सीम हो जायेंगे।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इस आयत की तफ़सीर में फ़रमाया कि "एक क़िस्म के आमाल नेक या बद करने वाले एक साथ कर दिये जायेंगे। नेक आदमी नेकों के साथ जन्नत में, और बुरे आमाल वाले दूसरे बुरे किरदार वालों के साथ जहन्नम में पहुँचा दिया जायेगा।" और इस मज़मून की ताईद के लिये फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने क़ुरआने करीम की आयतः

اُحْشُرُوا الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا وَاَزْوَاجَهُمْ.

से दलील पकड़ी, जिसका मज़मून यही है कि क़ियामत के दिन हुक्म होगा कि ज़ालिमों को और उनके जैसे अ़मल करने वालों को जहन्नम में ले जाओ।

बयान हुई आयत के मज़मून का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआ़ला कुछ ज़ालिमों को दूसरे ज़ालिमों का साथी बनाकर एक जमाअ़त कर देंगे, अगरचे नस्ली और वतनी एतिबार से उनमें कितनी भी दूरी हो।

और एक दूसरी आयत में यह बात भी स्पष्ट तौर पर बयान फ़रमा दी है कि मेहशर में यह दुनियावी और रस्मी एकता जो आज लोगों में नस्ल, वतन, रंग, भाषा वग़ैरह की बुनियादों पर क़ायम है, यह सब पूरी तरह टूट जायेगी। क़ुरआन पाक में फ़रमाया है:

وَيَوْمَ تَقُوْمُ السَّاعَةُ يَوْمَئِذٍ يَّتَفَرَّقُوْنَ.

यानी जब क़ियामत क़ायम होगी तो जो लोग आपस में एकजुट और मुत्तफ़िक़ हैं वे अलग-अलग हो जायेंगे।

दुनिया में भी आमाल व अख़्लाक़ का सामूहिक मामलात में असर

और यह मौजूदा रिश्तों, नातों और रस्मी संगठनों का कट जाना क़ियामत के दिन में तो स्पष्ट और मुकम्मल तौर पर सब के सामने आ ही जायेगा, मगर दुनिया में भी इसका एक

मामूली सा नमूना हर जगह पाया जाता है कि नेक आदमी को नेकों से मुनासबत होती है, उन्हीं की जमाअ़त और समाज से जुड़ा होता है, और इस तरह नेक कामों में उसके लिये रास्ते खुलते नज़र आते हैं और इरादा मज़बूत होता जाता है। इसी तरह बुरे किरदार वाले को अपने ही जैसे बुरे किरदार वालों से ताल्लुक़ और लगाव होता है, वह उन्हीं में उठता बैठता है, और उनकी सोहबत से उसकी बद-अ़मली व बद-अख़्लाक़ी में रोज़ नया इज़ाफ़ा होता रहता है और नेकी के रास्ते उसके सामने से बन्द होते जाते हैं। यह उसके बुरे अ़मल की नक़द सज़ा इसी दुनिया में मिलती है।

ख़ुलासा यह है कि नेक व बद आमाल की एक जज़ा सज़ा तो आख़िरत में मिलेगी और एक जज़ा सज़ा नक़द इसी दुनिया में इस तरह मिल जाती है कि नेक आदमी को काम के साथी भी नेक और दियानतदार नसीब हो जाते हैं जो उसके काम को चार चाँद लगा देते हैं, और बुरे और बदनीयत आदमी को हाथ-पाँव और काम के साथी भी उसी जैसे मिलते हैं जो उसको और भी ज़्यादा गहरे गढ़े में धकेल देते हैं।

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला किसी बादशाह और हाकिम से राज़ी होते हैं तो उसको अच्छे वज़ीर और अच्छा अ़मला (काम करने वाले अफ़राद) दे देते हैं जिससे उसकी हुकूमत के सब काम-धंधे दुरुस्त और तरक़्क़ी करने वाले हो जाते हैं, और जब किसी से अल्लाह तआ़ला नाराज़ होते हैं तो उसका अ़मला और काम करने वाले साथी बुरे मिलते हैं, बुरे अफ़सरों से पाला पड़ता है, वह अगर कोई अच्छा काम करने का इरादा भी करता है तो उस काम पर क़ाबू नहीं पाता।

एक ज़ालिम को दूसरे ज़ालिम के हाथ से सज़ा मिलती है

ज़िक्र की गयी आयत का यह मतलब तर्जुमे के एतिबार से है। और हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर, हज़रत इब्ने ज़ैद रज़ियल्लाहु अ़न्हुम तथा मालिक बिन दीनार रह. वग़ैरह से इस आयत की तफ़सीर दूसरे तर्जुमे के एतिबार से यह नक़ल की गयी है कि अल्लाह तआ़ला बाज़े ज़ालिमों को दूसरे ज़ालिमों पर मुसल्लत कर देता है, और इस तरह एक ज़ालिम को दूसरे ज़ालिम के हाथ से सज़ा दिलवा देता है।

यह मज़मून भी अपनी जगह सही, दुरुस्त और क़ुरआन व हदीस के दूसरे इरशादात के मुताबिक़ है। एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

كَمَا تَكُوْنُوْنَ كَذٰلِكَ يُؤَمَّرُ عَلَيْكُمْ.

जैसे तुम होगे वैसे ही हाकिम तुम पर मुसल्लत होंगे।

तुम ज़ालिम व बदकार होगे तो तुम्हारे हाकिम भी ज़ालिम व बदकार ही होंगे और तुम नेक अ़मल और नेक किरदार वाले होगे तो अल्लाह तआ़ला तुम्हारे हाकिम नेक और रहम-दिल इन्साफ़ का मिज़ाज रखने वाले लोगों को बना देंगे।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब अल्लाह तआ़ला किसी क़ौम का भला चाहते हैं तो उन पर बेहतरीन हाकिम और सरदारों (शासकों) का क़ब्ज़ा व हुकूमत क़ायम फ़रमाते हैं, और जब किसी क़ौम का बुरा चाहते हैं तो उन पर बदतरीन हाकिम व बादशाहों को मुसल्लत कर देते हैं। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में है कि फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा व इमामों) ने इस आयत में इस पर दलील पकड़ी है कि जब रिआ़या और अ़वाम अल्लाह तआ़ला से बाग़ी और उसके नाफ़रमान होकर ज़ुल्म व ज़्यादती में मुब्तला हो जाते हैं तो अल्लाह तआ़ला उन पर ज़ालिम हाकिमों को मुसल्लत करके उनके हाथों उनको सज़ा दिलवाते हैं।

और इमाम इब्ने कसीर रह. ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह फ़रमान नक़ल किया है कि:

مَنْ اَعَانَ ظَالِمًا سَلَّطَهُ اللّٰهُ عَلَيْهِ.

"यानी जो शख़्स किसी ज़ालिम के ज़ुल्म में उसकी मदद करता है तो अल्लाह तआ़ला उसी ज़ालिम को उसके सताने के लिये उस पर मुसल्लत कर देते हैं, और उसी के हाथ से उसको सज़ा दिलवाते हैं।"

दूसरी आयत में एक सवाल व जवाब का ज़िक्र है जो मेहशर में जिन्नात और इनसानों को मुख़ातब करके किया जायेगा, कि तुम जो कुफ़्र और अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी में मुब्तला हुए इसका क्या सबब है? क्या तुम्हारे पास हमारे रसूल नहीं पहुँचे जो तुम्हारी क़ौम में से थे, जो मेरी आयतें तुमको पढ़-पढ़कर सुनाते और आजके दिन की हाज़िरी और हिसाब से डराते थे? इसके जवाब में उन सब की तरफ़ से रसूलों के आने और हक़ का पैग़ाम सुनाने का और इसके बावजूद कुफ़्र व नाफ़रमानी में मुब्तला होने का इक़रार ज़िक्र किया गया है, और उनकी तरफ़ से कोई वजह और सबब इस ग़लत काम करने का ज़िक्र नहीं किया गया, बल्कि हक़ तआ़ला ने ही इसकी वजह यह बतलाई है कि:

وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا.

यानी उन लोगों को दुनिया की ज़िन्दगी और लज़्ज़तों ने धोखे में डाल दिया, कि वह उसी को सब कुछ समझ बैठे जो हक़ीक़त में कुछ न था, और अन्जाम व परिणाम से ग़ाफ़िल हो गये। बक़ौल अक्बर इलाहाबादी मरहूमः

थी फ़क़त ग़फ़लत ही ग़फ़लत, ऐश का दिन कुछ न था
हम उसे सब कुछ समझते थे वह लेकिन कुछ न था

इस आयत में एक बात तो यह क़ाबिले ग़ौर है कि कुछ दूसरी आयतों में तो यह बयान हुआ है कि मुश्रिकों से जब मेहशर में उनके कुफ़्र व शिर्क के बारे में सवाल होगा तो वे अपने जुर्म से मुकर जायेंगे, और अल्लाह के दरबार में क़सम खाकर यह झूठ बोलेंगे कि:

وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِكِيْنَ.

"यानी क़सम है हमारे परवर्दिगार अल्लाह तआ़ला की, हम मुश्रिक हरगिज़ न थे।"

और इस आयत से मालूम होता है कि वे अपने कुफ़्र व शिर्क का शर्मिन्दगी के साथ इक़रार कर लेंगे। इन दोनों में बज़ाहिर टकराव और भिन्नता मालूम होती है, मगर दूसरी आयतों में इसकी वज़ाहत व ख़ुलासा इस तरह मौजूद है कि शुरू में जब उनसे सवाल होगा तो मुकर जायेंगे, मगर उस वक़्त अल्लाह तआ़ला अपनी कामिल क़ुदरत से उनकी ज़बानें बन्द कर देंगे, हाथों, पैरों और दूसरे अंगों से गवाही लेंगे, अल्लाह तआ़ला की कामिल क़ुदरत से उनको बोलने की ताक़त अ़ता होगी और वो साफ़-साफ़ उसके सारे आमाल का कच्चा-चिट्ठा बयान कर देंगे, और उस वक़्त जिन्नात व इनसान को यह मालूम होगा कि हमारे हाथ-पाँव और कान और ज़बान सब क़ुदरत के कारख़ाने की ख़ुफ़िया पुलिस के अफ़राद थे, जिन्होंने सारे मामलात और हालात की सच्ची और सही गवाहियाँ दे दीं, तो अब उनको इनकार करने की कोई गुंजाईश न रहेगी, उस वक़्त ये सब लोग अपने जुर्म का साफ़-साफ़ इक़रार कर लेंगे।

क्या जिन्नात में भी रसूल होते हैं?

दूसरी बात इस जगह क़ाबिले ग़ौर यह है कि इस आयत में हक़ तआ़ला ने जिन्नात और इनसानों की दोनों जमाअ़तों को ख़िताब करके यह फ़रमाया है कि क्या हमारे रसूल तुम्हारे पास नहीं पहुँचे? जो तुम्हारी ही क़ौम से थे। इससे यह ज़ाहिर होता है कि जिस तरह इनसानों के रसूल इनसान और बशर भेजे गये हैं इसी तरह जिन्नात के रसूल जिन्नात की क़ौम से भेजे गये हैं। इस मसले में तफ़सीर के उलेमा के अक़वाल भिन्न और अलग-अलग हैं। कुछ हज़रात का कहना यह है कि रसूल और नबी सिर्फ़ इनसान ही हुए और होते चले आये हैं, जिन्नात की क़ौम में से कोई शख़्स डायरेक्ट रसूल नहीं हुआ, बल्कि ऐसा हुआ है कि इनसानी रसूल और पैग़म्बर का कलाम अपनी क़ौम को पहुँचाने के लिये जिन्नात की क़ौम में कुछ लोग हुए हैं जो दर हक़ीक़त रसूलों के क़ासिद और पैग़ाम पहुँचाने वाले होते थे, एक तरह से उनको भी रसूल कह दिया जाता है। इन हज़रात की दलील क़ुरआन मजीद की उन आयतों से है जिनमें जिन्नात की ऐसी बातें बयान हुई हैं कि उन्होंने नबी का कलाम या क़ुरआन सुनकर क़ौम को पहुँचाया। मसलन यह आयतः

وَلَّوْا اِلٰى قَوْمِهِمْ مُّنْذِرِيْنَ.

और सूरः जिन्न की यह आयतः

فَقَالُوْآ اِنَّا سَمِعْنَا قُرْاٰنًا عَجَبًا يَّهْدِيْ اِلَى الرُّشْدِ فَاٰمَنَّا بِهٖ.

वग़ैरह।

लेकिन उलेमा की एक जमाअ़त इस आयत के ज़ाहिरी मायने के एतिबार से इसकी भी क़ायल है कि ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पहले हर गिरोह के रसूल उसी गिरोह में से होते थे, इनसानों के विभिन्न वर्गों में इनसानी रसूल आते थे, और जिन्नात के

मुख़्तलिफ़ वर्गों में जिन्नात ही में से रसूल होते थे। हज़रत ख़ातमुल-अम्बिया सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की यह ख़ुसूसियत है कि आपको सारे आ़लम के इनसानों और जिन्नात का वाहिद (अकेला) रसूल बनाकर भेजा गया और वह भी किसी एक ज़माने के लिये नहीं बल्कि क़ियामत तक पैदा होने वाले तमाम जिन्नात व इनसान आपकी उम्मत हैं, और आप ही सब के रसूल व पैग़म्बर हैं।

हिन्दुओं के अवतार भी उमूमन जिन्नात हैं, उनमें किसी रसूल व नबी होने का गुमान व संभावना है

तफ़सीर के इमामों में से इमाम कलबी और इमाम मुजाहिद रह. वग़ैरह ने इसी क़ौल को इख़्तियार किया है, और क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने तफ़सीरे मज़हरी में इसी क़ौल को इख़्तियार करते हुए फ़रमाया है कि इस आयत से साबित होता है कि आदम अ़लैहिस्सलाम से पहले जिन्नात के रसूल जिन्नात ही की क़ौम में से होते थे, जबकि यह साबित है कि ज़मीन पर इनसानों से हज़ारों साल पहले से जिन्नात आबाद थे और वे भी इनसानों की तरह शरई अहकाम के पाबन्द और ज़िम्मेदार हैं, तो अ़क्ल व शरीअ़त का तक़ाज़ा है कि उनमें अल्लाह तआ़ला के अहकाम पहुँचाने वाले रसूल व पैग़म्बर हों।

हज़रत क़ाज़ी सनाउल्लाह पानीपती रह. ने फ़रमाया कि हिन्दुस्तान के हिन्दू जो अपनी वेद की तारीख़ हज़ारों साल पहले की बतलाते हैं और अपने मुक़्तदा व बुज़ुर्ग जिनको वे अवतार कहते हैं, उसी ज़माने के लोगों को बताते हैं, कुछ नामुम्किन और दूर की बात नहीं कि वे यही जिन्नात के रसूल व पैग़म्बर हों और उन्हीं की लाई हुई हिदायतें किसी किताब की सूरत में जमा की गयी हों। हिन्दुओं के अवतारों की जो तस्वीरें और मूर्तियाँ मन्दिरों में रखी जाती हैं वो भी इसी अन्दाज़ की हैं, कि किसी के कई चेहरे हैं, किसी के बहुत से हाथ-पाँव हैं, किसी के हाथी की तरह सूण्ड है, जो आ़म इनसानी शक्लों से बहुत अलग और भिन्न हैं। और जिन्नात का ऐसी शक्लों में अवतरित होना कुछ मुहाल बात नहीं। इसलिये कुछ बईद नहीं कि उनके अवतार जिन्नात की क़ौम में आये हुए रसूल या उनके नायब हों और उनकी किताब भी उनकी हिदायतों का मजमूआ़ हो, फिर धीरे-धीरे जैसे दूसरी किताबों में रद्दोबदल और कमी-बेशी हो गयी, उसमें भी रद्दोबदल करके शिर्क व बुत-परस्ती दाख़िल कर दी गयी हो।

बहरहाल अगर वह असल किताब और रसूल जिनकी सही हिदायतें भी मौजूद होतीं तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने और उमूमी रिसालत के बाद वह भी मन्सूख़ (निरस्त) और नाक़ाबिले अ़मल ही हो जातीं, और असल शक्ल बदल जाने और कमी-बेशी हो जाने के बाद तो उसका नाक़ाबिले अ़मल होना ख़ुद ही वाज़ेह है।

तीसरी आयत में यह बतलाया गया है कि इनसानों और जिन्नात में रसूल भेजना अल्लाह तआ़ला के अ़दल व इन्साफ़ और रहमत का तक़ाज़ा है कि वह किसी क़ौम पर वैसे ही अ़ज़ाब

नहीं भेज देते जब तक कि उनको पहले अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के ज़रिये ग़फ़लत व गुमराही से जगा न दिया जाये और हिदायत की रोशनी उनके लिये न भेज दी जाये।

चौथी आयत का मफ़्हूम स्पष्ट है कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक इनसानों और जिन्नात में हर तब्क़े (वर्ग और जमाअ़त) के लोगों के दर्जे मुक़र्रर हैं, और ये दर्जे उनके आमाल ही के मुताबिक़ रखे गये हैं, उनमें से हर एक की जज़ा व सज़ा उन्हीं आमाल के पैमाने के मुताबिक़ होगी।

وَرَبُّكَ الْغَنِيُّ ذُو الرَّحْمَةِ ۚ إِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَسْتَخْلِفْ مِنْ بَعْدِكُمْ مَّا يَشَآءُ كَمَآ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ ذُرِّيَّةِ قَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ﴿١٣٣﴾ اِنَّ مَا تُوْعَدُوْنَ لَاٰتٍ ۙ وَّمَآ اَنْتُمْ بِمُعْجِزِيْنَ ﴿١٣٤﴾ قُلْ يٰقَوْمِ اعْمَلُوْا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنِّيْ عَامِلٌ ۚ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ ۙ مَنْ تَكُوْنُ لَهٗ عَاقِبَةُ الدَّارِ ۗ اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿١٣٥﴾ وَجَعَلُوْا لِلّٰهِ مِمَّا ذَرَاَ مِنَ الْحَرْثِ وَالْاَنْعَامِ نَصِيْبًا فَقَالُوْا هٰذَا لِلّٰهِ بِزَعْمِهِمْ وَهٰذَا لِشُرَكَآئِنَا ۚ فَمَا كَانَ لِشُرَكَآئِهِمْ فَلَا يَصِلُ اِلَى اللّٰهِ ۚ وَمَا كَانَ لِلّٰهِ فَهُوَ يَصِلُ اِلٰى شُرَكَآئِهِمْ ۗ سَآءَ مَا يَحْكُمُوْنَ ﴿١٣٦﴾

व रब्बुकल्-ग़निय्यु ज़ुर्रह्मति, इंय्यशअ् युज़्हिब्कुम् व यस्तख़्लिफ़् मिम्-बअ्दिकुम् मा यशा-उ कमा अन्श-अकुम् मिन् ज़ुर्रिय्यति क़ौमिन् आख़रीन (133) इन्-न मा तू-अ़दू-न लआतिंव्-व मा अन्तुम् बिमुअ्जिज़ीन (134) क़ुल् या क़ौमिअ़्मलू अ़ला मकानतिकुम् इन्नी आ़मिलुन् फ़सौ-फ़ तअ़्लमू-न मन् तकूनु लहू आ़क़ि-बतुद्दारि, इन्नहू ला युफ़्लिहुज़्-ज़ालिमून (135) व ज-अ़लू लिल्लाहि मिम्मा ज़-र-अ मिनल्-हर्सि वल्-अन्आ़मि नसीबन् फ़क़ालू हाज़ा

और तेरा रब बेपरवाह है रहमत वाला, चाहे तो तुमको ले जाये और तुम्हारे पीछे क़ायम कर दे जिसको चाहे जैसा कि तुमको पैदा किया औरों की औलाद से। (133) जिस चीज़ का तुमसे वायदा किया जाता है वह ज़रूर आने वाली है और तुम आ़जिज़ नहीं कर सकते। (134) तू कह दे- ऐ लोगो! तुम काम करते रहो अपनी जगह पर मैं भी काम करता हूँ, सो जल्द ही जान लोगे तुम कि किसको मिलता है आक़बत (अन्जाम) का घर, यक़ीनन भला न होगा ज़ालिमों का। (135) और मुक़र्रर करते हैं अल्लाह का उसकी पैदा की हुई खेती और जानवरों में एक हिस्सा, फिर कहते

लिल्लाहि बिज़अ़्मिहिम् व हाज़ा लिशु-रकाइना फ़मा का-न लिशु-रकाइहिम् फ़ला यसिलु इलल्लाहि व मा का-न लिल्लाहि फ़हु-व यसिलु इला शु-रकाइहिम्, सा-अ मा यह्कुमून (136)	हैं यह हिस्सा अल्लाह का है अपने ख़्याल में, और यह हमारे शरीकों का है, सो जो हिस्सा उनके शरीकों का है वह तो नहीं पहुँचता अल्लाह की तरफ़ और जो अल्लाह का है वह पहुँच जाता है उनके शरीकों की तरफ़, क्या ही बुरा इन्साफ़ करते हैं। (136)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और आपका रब (रसूलों को कुछ इसलिये नहीं भेजता कि नऊज़ु बिल्लाह वह इबादत का मोहताज है, वह तो) बिल्कुल ग़नी है। (बल्कि इसलिये भेजता है कि वह) रहमत वाला (भी) है, (अपनी रहमत से रसूलों को भेजा ताकि उनके ज़रिये से लोगों को नफ़ा व नुक़सान देने वाली चीज़ें मालूम हो जायें, फिर नफ़ा और फ़ायदा देने वाली चीज़ों से लाभान्वित हों और नुक़सान देने वाली चीज़ों से महफ़ूज़ रहें। सो इसमें बन्दों ही का फ़ायदा है। और बाक़ी उनका ग़नी व बेपरवाह होना तो ऐसा है कि) अगर वह चाहे तो तुम सब को (दुनिया से अचानक) उठा ले और तुम्हारे बाद जिस (मख़्लूक़) को चाहे तुम्हारी जगह (दुनिया में) आबाद कर दे, जैसा (कि इसकी नज़ीर पहले से मौजूद है) कि तुमको (जो कि अब मौजूद हो) एक दूसरी क़ौम की नस्ल से पैदा किया है (कि उनका कहीं पता नहीं और तुम उनकी जगह मौजूद हो, और इसी तरह यह सिलसिला चला आ रहा है। लेकिन यह सिलसिला दर्जा-बदर्जा और एक ख़ास रफ़्तार से क़ायम है, अगर हम चाहें अचानक भी ऐसा कर दें, क्योंकि किसी के होने न होने से हमारा कोई काम अटका नहीं पड़ा। पस रसूलों का भेजना हमारी ज़रूरत व आवश्यकता की वजह से नहीं, तुम्हारी ज़रूरत की वजह से है। तुमको चाहिये कि उनकी तस्दीक़ और उनकी पैरवी करके भलाई और नेकबख़्ती हासिल करो और कुफ़्र व इनकार के नुक़सान से बचो, क्योंकि) जिस चीज़ का (रसूलों के द्वारा) तुमसे वायदा किया जाता है (यानी क़ियामत और अ़ज़ाब) वह बेशक आने वाली चीज़ है, और (अगर तुमको यह गुमान व वहम हो कि अगरचे क़ियामत आये मगर हम कहीं भाग जायेंगे, हाथ न आयेंगे, जैसे कि दुनिया में हाकिमों का मुजरिम कभी ऐसा कर सकता है, तो ख़ूब समझ लो कि) तुम (ख़ुदा तआ़ला को) आ़जिज़ नहीं कर सकते (कि उसके हाथ न आओ। और अगर हक़ मुतैयन हो जाने की दलीलें क़ायम और खड़ी होने के बावजूद किसी को इसमें कलाम हो कि कुफ़्र ही का तरीक़ा अच्छा है इस्लाम का बुरा है, फिर क़ियामत से क्या अन्देशा, तो ऐसे लोगों के जवाब में) आप (आख़िरी बात) यह फ़रमा दीजिए कि ऐ मेरी क़ौम! (तुम जानो। बेहतर है) तुम अपनी हालत पर अ़मल करते रहो, मैं भी (अपने तरीक़े पर) अ़मल कर रहा हूँ।

सो अब जल्दी ही तुमको मालूम हुआ जाता है कि इस जहान (के आमाल) का अन्जाम किसके लिए नफ़ा देने वाला होगा। यह यक़ीनी बात है कि हक़-तल्फ़ी करने वालों को कभी फ़लाह "यानी कामयाबी" न होगी (और सबसे बढ़कर अल्लाह की हक़-तल्फ़ी है, और यह बात सही दलीलों में थोड़ा सा ग़ौर करने से भी मालूम हो सकती है कि इस्लाम का तरीक़ा हक़-तल्फ़ी है या कुफ़्र का तरीक़ा। और जो दलीलों में भी ग़ौर न करे उससे इतना कह देना काफ़ी है कि बहुत जल्द तुम इस बुरे अ़मल का अन्जाम जान लोगे)।

और (अल्लाह तआ़ला ने) जो खेती (वग़ैरह) और मवेशी (जानवर) पैदा किए हैं, इन (मुश्रिक) लोगों ने उनमें से कुछ हिस्सा अल्लाह (के नाम) का मुक़र्रर किया (और कुछ बुतों के नाम का मुक़र्रर किया, हालाँकि पैदा करने में कोई शरीक नहीं) और अपने गुमान के मुताबिक़ कहते हैं कि यह तो अल्लाह का है (जो कि मेहमानों और मसाकीन और मुसाफ़िर वग़ैरह आ़म ज़रूरतों के मौक़ों में ख़र्च होता है) और यह हमारे माबूदों का है (जिसके ख़र्च करने के मौक़े ख़ास हैं)। फिर जो चीज़ उनके माबूदों (के नाम) की होती है वह तो अल्लाह (नाम के हिस्से) की तरफ़ नहीं पहुँचती (बल्कि इत्तिफ़ाक़न मिल जाने से भी अलग निकाल ली जाती है) और जो चीज़ अल्लाह (के नाम) की होती है वह उनके माबूदों (के नाम के हिस्से) की तरफ़ पहुँच जाती है, उन्होंने क्या बुरी तजवीज़ निकाल रखी है। (क्योंकि अव्वल तो अल्लाह का पैदा किया हुआ दूसरे के नाम क्यों जाये, दूसरे फिर जितना अल्लाह का हिस्सा निकाला है उसमें से भी घट जाये। और अगर ज़रूरत मन्द व बेज़रूरत मन्द होना इसका आधार है तो मोहताज यानी ज़रूरतमन्द मानकर फिर उसको माबूद समझना और ज़्यादा बड़ी बेवक़ूफ़ी है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इससे पहली आयत में यह बयान हुआ था कि अल्लाह जल्ल शानुहू का हमेशा से यह दस्तूर रहा है कि जिन्नात व इनसान की हर क़ौम में अपने रसूल और अपनी हिदायतें भेजी हैं, और जब तक रसूलों के ज़रिये उनको पूरी तरह सचेत व आगाह नहीं कर दिया गया उस वक़्त तक उनके कुफ़्र व शिर्क और मासियत व नाफ़रमानी पर उनको कभी सज़ा नहीं दी।

उक्त आयतों में से पहली आयत में यह बतलाया गया है कि रसूलों और आसमानी किताबों के तमाम सिलसिले कुछ इसलिये नहीं थे कि रब्बुल-आ़लमीन को हमारी इबादत और इताअ़त की आवश्यकता और ज़रूरत थी, या उसका कोई काम हमारी इताअ़त पर मौक़ूफ़ था। नहीं! वह बिल्कुल बेनियाज़ और ग़नी है, मगर उसके कामिल इस्तिग़ना और बेनियाज़ी (यानी हर ज़रूरत से ऊपर और सबसे बेपरवाह होने) के साथ उसमें एक रहमत की सिफ़त भी है और सारे आ़लम के वजूद में लाने, फिर बाक़ी रखने और उनकी ज़ाहिरी और बातिनी, मौजूदा और आईन्दा की तमाम ज़रूरतों को बिना माँगे पूरा करने का सबब भी रहमत की सिफ़त है, वरना बेचारा इनसान अपनी ज़रूरतों को ख़ुद पैदा करने के क़ाबिल तो क्या होता इसको तो अपनी तमाम ज़रूरतों के माँगने का भी सलीक़ा नहीं। ख़ास तौर पर वजूद की नेमत जो अ़ता की गयी है इसका तो बिना

माँगे मिलना बिल्कुल ही स्पष्ट है कि किसी इनसान ने कहीं अपने पैदा होने की दुआ नहीं माँगी, और न वजूद से पहले दुआ माँगने का कोई तसव्वुर हो सकता है। इसी तरह इनसान की तख़्लीक़ (पैदाईश) जिन अंगों से की गयी है आँख, कान, हाथ, पाँव, दिल, दिमाग़ क्या ये चीज़ें किसी इनसान ने माँगी थीं, या कहीं उसको माँगने का शऊर व सलीक़ा था? कुछ नहीं, बल्कि:

मा नबूदेम व तक़ाज़ा-ए-मा न बूद
लुत्फ़े तू नागुफ़्ता-ए-मा मी शनवद

न हमारा कोई वजूद था और न हमारी कुछ माँग और तक़ाज़ा था। यह तेरा लुत्फ़ व करम है कि तू हमारी बिना माँगी ज़रूरत व तक़ाज़े सुन लेता और अपनी रहमत से उसे क़ुबूल फ़रमाता है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी**

अल्लाह तआ़ला सबसे बेनियाज़ है, कायनात की पैदाईश सिर्फ़ उसकी रहमत का नतीजा है

बहरहाल इस आयत में 'रब्बुल्-ग़निय्यु' के अलफ़ाज़ से अल्लाह तआ़ला की बेनियाज़ी बयान करने के साथ 'ज़ुर्रह्मति' का इज़ाफ़ा करके यह बतला दिया कि वह अगरचे तुम सबसे बल्कि सारी कायनात से बिल्कुल बेपरवाह और बेनियाज़ है, लेकिन बेनियाज़ी के साथ वह रहमत वाला भी है।

किसी इनसान को अल्लाह ने बेनियाज़ नहीं बनाया, इसमें बड़ी हिक्मत है, इनसान बेनियाज़ हो जाये तो ज़ुल्म करता है

और यह उसी पाक ज़ात का कमाल है वरना इनसान की आ़दत यह है कि अगर वह दूसरों से बेनियाज़ और बेपरवाह हो जाये तो उसको दूसरों के नफ़े नुक़सान और रंज व राहत की कोई परवाह नहीं रहती, बल्कि उसी हालत में वह दूसरों पर ज़ुल्म व सितम के लिये आमादा हो जाता है। क़ुरआने करीम की एक आयत में इरशाद है:

إِنَّ الْإِنْسَانَ لَيَطْغَىٰ أَنْ رَّاٰهُ اسْتَغْنَىٰ.

यानी इनसान जब अपने आपको बेनियाज़ और दूसरों से बेज़रूरत मन्द पाता है तो वह सरकशी और नाफ़रमानी पर आमादा हो जाता है। इसी लिये हक़ तआ़ला ने इनसान को ऐसी ज़रूरतों में जकड़ दिया है जो दूसरों की इमदाद के बग़ैर पूरी ही नहीं हो सकतीं। बड़े से बड़ा बादशाह और हाकिम नौकरों चाकरों और चपरासियों का मोहताज है, बड़े से बड़ा मालदार और मिल मालिक मज़दूरों का मोहताज है, सुबह को जिस तरह एक मज़दूर और रिक्शा चलाने वाला कुछ पैसे हासिल करके मोहताजी दूर करने के लिये रोज़गार की तलाश में निकलता है ठीक उसी तरह बड़े मालदार जिनको सरमायेदार कहा जाता है वे मज़दूर और रिक्शा और गाड़ी सवारी की

तलाश में निकलते हैं। क़ुदरत ने सब को मोहताजी की एक ज़न्जीर में जकड़ा हुआ है, हर एक दूसरे का मोहताज है, किसी का किसी पर एहसान नहीं और यह न होता तो न कोई मालदार किसी को एक पैसा देता और न कोई मज़दूर किसी का ज़रा सा बोझ उठाता। यह तो सिर्फ़ हक् तआ़ला शानुहू की सिफ़ते कमाल है कि पूरी तरह हर चीज़ से बेज़रूरत मन्द और बेनियाज़ होने के बावजूद रहमत वाला है। इस जगह रहमत वाला होने के बजाय अगर रहमान या रहीम का लफ़्ज़ लाया जाता तब भी कलाम का मक़सद अदा हो जाता, लेकिन ग़नी होने के साथ रहमत की सिफ़त के जोड़ की ख़ास अहमियत ज़ाहिर करने के लिये 'रहमत वाला' का उनवान इख़्तियार फ़रमाया गया, कि वह ग़नी और मुकम्मल बेनियाज़ होने के बावजूद रहमत की सिफ़त भी मुकम्मल रखता है, और यही सिफ़त रसूलों और किताबों के भेजने का असल सबब है।

इसके बाद यह भी बतला दिया कि जिस तरह उसकी रहमत आ़म और पूर्ण है इसी तरह उसकी क़ुदरत हर चीज़ और हर काम पर हावी है। अगर वह चाहे तो तुम सबको एक आन में फ़ना कर सकता है, और सारी मख़्लूक़ के फ़ना कर देने से भी उसके कारख़ाना-ए-क़ुदरत में मामूली सा फ़र्क़ नहीं आता। फिर अगर वह चाहे तो मौजूदा सारी कायनात को फ़ना करके इनकी जगह दूसरी मख़्लूक़ इसी तरह उसी आन में पैदा करके खड़ी कर दे, जिसकी एक नज़ीर इनसान के हर दौर में उसके सामने रहती है, कि आज जो करोड़ों इनसान ज़मीन के चप्पे-चप्पे पर आबाद और ज़िन्दगी के तमाम क्षेत्रों और मैदानों के विभिन्न कारोबार को चला रहे हैं, अगर अब से एक सौ साल पहले की तरफ़ ग़ौर किया जाये तो मालूम होगा कि उस वक़्त भी यह दुनिया इसी तरह आबाद थी, और सब काम चल रहे थे, मगर मौजूदा आबाद करने वालों और काम चलाने वालों में से कोई न था। एक दूसरी क़ौम थी जो आज ज़मीन के नीचे है, और जिसका आज नाम व निशान भी नहीं मिलता। और मौजूदा दुनिया उसी पहली क़ौम की नस्ल से पैदा की गयी है। अल्लाह का इरशाद है:

اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَسْتَخْلِفْ مِنْ ۢ بَعْدِكُمْ مَّا يَشَآءُ كَمَآ اَنْشَاَكُمْ مِّنْ ذُرِّيَّةِ قَوْمٍ اٰخَرِيْنَ.

यानी अगर अल्लाह तआ़ला चाहें तो तुम सब को ले जायें। ले जाने से मुराद ऐसा फ़ना कर देना है कि नाम व निशान तक गुम हो जाये। और इसी लिये यहाँ हलाक करने या मार देने का ज़िक्र नहीं फ़रमाया बल्कि ले जाना इरशाद फ़रमाया, जिसमें पूरी तरह फ़ना और बेनाम व निशान कर देने की तरफ़ इशारा है।

इसी आयत में अल्लाह तआ़ला के ग़नी और बेनियाज़ होने का, फिर रहमत वाला होने का, और फिर कामिल क़ुदरत का मालिक होने का बयान करने के बाद दूसरी आयत में नाफ़रमानों और हुक्म न मानने वालों को तंबीह की गयी है कि:

اِنَّ مَا تُوْعَدُوْنَ لَاٰتٍ وَّمَآ اَنْتُمْ بِمُعْجِزِيْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने तुमको जिस अ़ज़ाब से डराया है वह ज़रूर आने वाला है, और तुम सब मिलकर भी ख़ुदाई अ़ज़ाब को नहीं टाल सकते।

तीसरी आयत में फिर उनको ग़फ़लत से चौंकाने का एक दूसरा तरीक़ा इख़्तियार करके इरशाद फ़रमायाः

قُلْ يٰقَوْمِ اعْمَلُوْا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنِّىْ عَامِلٌ فَسَوْفَ تَعْلَمُوْنَ مَنْ تَكُوْنُ لَهٗ عَاقِبَةُ الدَّارِ. اِنَّهٗ لَا يُفْلِحُ الظّٰلِمُوْنَ.

जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ख़िताब है कि आप इन मक्का वालों से कह दीजिए कि ऐ मेरी क़ौम! अगर तुम मेरी बात नहीं मानते तो तुम्हें इख़्तियार है न मानो और अपनी हालत पर अपने अक़ीदे और दुश्मनी के मुताबिक़ अमल करते रहो, मैं भी अपने अक़ीदे के मुताबिक़ अमल करता रहूँगा। मेरा इसमें कोई नुक़सान नहीं, मगर बहुत जल्द तुम्हें मालूम हो जायेगा कि आख़िरत के जहान की निजात और फ़लाह किसको हासिल होती है। यह ख़ूब समझ लो कि ज़ालिम यानी हक़-तल्फ़ी करने वाले कभी फ़लाह (कामयाबी) नहीं पाया करते।

और इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर रह. ने इस आयत की तफ़सीर में इस तरफ़ भी इशारा फ़रमाया कि इस जगह आयत मेंः

مَنْ تَكُوْنُ لَهٗ عَاقِبَةُ الدَّارِ.

फ़रमाया हैः

عَاقِبَةُ الدَّارِ الْاٰخِرَةِ.

नहीं फ़रमाया। इससे मालूम होता है कि आख़िरत के घर से पहले दुनिया के घर में भी अन्जामकार फ़लाह व कामयाबी अल्लाह के नेक बन्दों ही को हासिल होती है, जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम के हालात इस पर गवाह व सुबूत हैं कि थोड़े ही समय में तमाम क़ुव्वत व सत्ता वाले मुख़ालिफ़ उनके सामने ज़लील हुए, उनके मुल्क इनके हाथों पर फ़तह हुए, ख़ुद हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दौर में तमाम अरब इलाक़े आपकी मातहती में आ गये। यमन और बेहरीन से लेकर शाम की सीमाओं तक आपकी हुकूमत फैल गयी, फिर आपके ख़लीफ़ाओं और सहाबा-ए-किराम के हाथों तक़रीबन पूरी दुनिया इस्लाम के झण्डे के नीचे आ गयी, और अल्लाह तआ़ला का यह वायदा पूरा हुआः

كَتَبَ اللّٰهُ لَاَغْلِبَنَّ اَنَا وَرُسُلِىْ.

यानी अल्लाह ने लिख दिया है कि मैं ग़ालिब आऊँगा और मेरे रसूल ग़ालिब आयेंगे। और दूसरी आयत में इरशाद हैः

اِنَّا لَنَنْصُرُ رُسُلَنَا وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ يَقُوْمُ الْاَشْهَادُ.

यानी हम अपने रसूलों की मदद करेंगे, और उन लोगों की जो ईमान लाये, इस दुनिया में भी और उस दिन में भी जबकि आमाल के हिसाब पर गवाही देने वाले गवाही पर खड़े होंगे, यानी क़ियामत के दिन।

चौथी आयत में अरब के मुश्रिकों की एक ख़ास गुमराही और ग़लत चलन पर तंबीह फ़रमाई गयी है। अरब वालों की आदत यह थी कि खेती और बाग़ों से तथा तिजारतों से जो

कुछ पैदावार होती थी, उसमें से एक हिस्सा अल्लाह तआ़ला के लिये और एक हिस्सा अपने बुतों के लिये निकाला करते थे। अल्लाह तआ़ला के नाम का हिस्सा ग़रीबों व फ़क़ीरों और मिस्कीनों पर ख़र्च करते और बुतों के नाम का हिस्सा बुतख़ाने के पुजारियों और निगहबानों पर ख़र्च किया करते थे।

अव्वल तो यही ज़ुल्म कुछ कम न था कि सारी चीज़ें पैदा तो ख़ुदा तआ़ला ने फ़रमायीं और हर चीज़ की पैदावार उसने अ़ता फ़रमायी, फिर उसकी दी हुई चीज़ों में बुतों को शरीक कर दिया। इस पर अतिरिक्त सितम पर सितम यह था कि अगर कभी पैदावार में कुछ कमी आ जाये तो उस कमी को अल्लाह के हिस्से पर यह कहकर डाल देते कि अल्लाह तआ़ला तो बेपरवाह और बेज़रूरत मन्द है, वह हमारी चीज़ों का मोहताज नहीं। और बुतों का हिस्सा भी पूरा कर लेते, और ख़ुद अपने इस्तेमाल का हिस्सा भी। और कभी ऐसा होता कि बुतों के हिस्से में से या अपने हिस्से में से कोई चीज़ अल्लाह के हिस्से में पड़ जाती तो उसको हिसाब पूरा करने के लिये उसमें से निकाल लेते थे, अगर कभी मामला इसके उलट हो जाये कि अल्लाह के हिस्से में से कोई चीज़ अपने हिस्से या बुतों के हिस्से में पड़ जाये तो उसको वहीं रहने देते और यह कहते कि अल्लाह तआ़ला तो ग़नी है उसके हिस्से में से कुछ कम भी हो जाये तो हर्ज नहीं। क़ुरआने करीम ने उनकी इस गुमराही और ग़लत हरकत को ज़िक्र करके फ़रमायाः

سَآءَ مَا يَحْكُمُوْنَ.

यानी उन लोगों का यह फ़ैसला किस क़द्र बुरा और भोंण्डा है कि जिसने उनको और उनकी सारी चीज़ों को पैदा किया, अव्वल तो उसके साथ दूसरों को शरीक कर दिया, फिर उसके हिस्से को भी दूसरी तरफ़ विभिन्न बहानों से मुन्तक़िल कर दिया।

काफ़िरों की इस चेतावनी में मुसलमानों के लिये सबक़

यह तो अ़रब के मुश्रिकों की एक गुमराही और ग़लत तरीक़े पर तंबीह की गयी है। इसके साथ इसके तहत में उन मुसलमानों के लिये भी सबक़ लेने और चौंकने वाली बात है जो अल्लाह की दी हुई ज़िन्दगानी और उसके बख़्शे हुए बदनी अंगों की पूरी ताक़त को विभिन्न हिस्सों में बाँटते हैं, उम्र और वक़्त का एक हिस्सा अल्लाह और उसकी इबादत के लिये मख़्सूस करते हैं, हालाँकि हक़ तो उसका यह था कि उम्र के सारे वक़्त और लम्हे उसी की इबादत और ताअ़त के लिये वक़्फ़ (समर्पित) होते। इनसानी ज़रूरतों और मजबूरियों के लिये इसमें से कोई वक़्त अपने लिये भी निकाल लेते, और हक़ तो यह है कि फिर भी उसके शुक्र का हक़ अदा न होता, मगर यहाँ तो हमारी हालत यह है कि दिन रात के चौबीस घन्टों में से अगर हम कोई वक़्त अल्लाह की याद और इबादत के लिये मुक़र्रर भी कर लेते हैं तो जब कोई ज़रूरत पेश आती है तो उसमें न अपने कारोबार में कोई हर्ज डाला जाता है, न आराम के वक़्तों में, सारा नज़ला उस वक़्त पर पड़ता है जो नमाज़, तिलावत या इबादत के लिये मुक़र्रर किया था। कोई

काम पेश आये, या बीमारी या कोई दूसरी ज़रूरत तो सबसे पहले उसका असर उस वक़्त पर पड़ता है जो हमने ज़िक्रुल्लाह या इबादत के लिये मख़्सूस किया था। यह कैसा ग़लत फ़ैसला और कितनी नाशुक्री और हक़-तल्फ़ी है। अल्लाह तआ़ला हमको और सब मुसलमानों को इससे महफ़ूज़ रखें।

وَكَذٰلِكَ زَيَّنَ لِكَثِيْرٍ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ قَتْلَ اَوْلَادِهِمْ شُرَكَآؤُهُمْ لِيُرْدُوْهُمْ وَلِيَلْبِسُوْا عَلَيْهِمْ دِيْنَهُمْ ۚ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا فَعَلُوْهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُوْنَ ۝ وَقَالُوْا هٰذِهٖٓ اَنْعَامٌ وَّحَرْثٌ حِجْرٌ ۖ لَّا يَطْعَمُهَآ اِلَّا مَنْ نَّشَآءُ بِزَعْمِهِمْ وَاَنْعَامٌ حُرِّمَتْ ظُهُوْرُهَا وَاَنْعَامٌ لَّا يَذْكُرُوْنَ اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا افْتِرَآءً عَلَيْهِ ۚ سَيَجْزِيْهِمْ بِمَا كَانُوْا يَفْتَرُوْنَ ۝ وَقَالُوْا مَا فِيْ بُطُوْنِ هٰذِهِ الْاَنْعَامِ خَالِصَةٌ لِّذُكُوْرِنَا وَمُحَرَّمٌ عَلٰٓى اَزْوَاجِنَا ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مَّيْتَةً فَهُمْ فِيْهِ شُرَكَآءُ ۚ سَيَجْزِيْهِمْ وَصْفَهُمْ ۚ اِنَّهٗ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ ۝ قَدْ خَسِرَ الَّذِيْنَ قَتَلُوْٓا اَوْلَادَهُمْ سَفَهًا بِغَيْرِ عِلْمٍ وَّحَرَّمُوْا مَا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ افْتِرَآءً عَلَى اللّٰهِ ۚ قَدْ ضَلُّوْا وَمَا كَانُوْا مُهْتَدِيْنَ ۝

व कज़ालि-क ज़य्य-न लि-कसीरिम्-मिनल्-मुश्रिकी-न क़त्-ल औलादिहिम् शु-रकाउहुम् लियुरदूहुम् व लियल्बिसू अ़लैहिम् दीनहुम्, व लौ शाअल्लाहु मा फ़-अ़लूहु फ़-ज़र्हुम् व मा यफ़्तरून (137) व क़ालू हाज़िही अन्आमुंव्-व हर्सुन् हिज्रुल्ला यत्अ़मुहा इल्ला मन्-नशा-उ बिज़अ़्मिहिम् व अन्आमुन् हुर्रिमत् ज़ुहूरुहा व अन्आ़मुल्ला यज़्कुरूनस्मल्लाहि अ़लैहफ़्तिराअन् अ़लैहि, सयज्ज़ीहिम् बिमा कानू यफ़्तरून (138) व क़ालू मा फ़ी	और इसी तरह सजा दिया बहुत से मुश्रिकों की निगाह में उनकी औलाद के क़त्ल को उनके शरीकों ने, ताकि उनको हलाक करें और रला-मिला दें उन पर उनके दीन को, और अल्लाह चाहता तो वे यह काम न करते, सो छोड़ दे वे जानें और उनका झूठ। (137). और कहते हैं कि ये मवेशी और खेती मना है, इसको कोई न खाये मगर जिसको हम चाहें उनके ख़्याल के मुवाफ़िक़, और बाज़े मवेशी (जानवरों) की पीठ पर चढ़ना हराम किया और बाज़े मवेशी के ज़िबह के वक़्त नाम नहीं लेते अल्लाह का अल्लाह पर बोहतान बाँधकर, बहुत जल्द वह सज़ा देगा उनको इस झूठ की। (138) और कहते हैं जो बच्चा इन

बुतूनि हाज़िहिल्-अन्आमि ख़ालि-सतुल् लिज़ुकूरिना व मुहर्रमुन् अला अज़्वाजिना व इंय्यकुम् मै-ततन् फ़हुम् फ़ीहि शु-रका-उ, सयज्ज़ीहिम् वस्फ़हुम्, इन्नहू हकीमुन् अ़लीम (139) क़द् ख़सिरल्लज़ी-न क़-तलू औलादहुम् स-फ़हम् बिग़ैरि अ़िल्मिंव्-व हर्रमू मा र-ज़-क़हुमुल्लाहु-फ़्तिरा-अन् अ़लल्लाहि, क़द् ज़ल्लू व मा कानू मुह्तदीन (140) ❁ ❖	मवेशी (जानवरों) के पेट में है उसको तो ख़ास हमारे मर्द ही खायें और वह हराम है हमारी औरतों पर, और जो बच्चा मुर्दा हो तो उसके खाने में सब बराबर हैं। वह सज़ा देगा उनको उनकी तक़रीरों की, वह हिक्मत वाला जानने वाला है। (139) बेशक ख़राब हुए जिन्होंने क़त्ल किया अपनी औलाद को नादानी से बग़ैर समझे और हराम ठहरा लिया उस रिज़्क़ को जो अल्लाह ने उनको दिया बोहतान बाँधकर अल्लाह पर, बेशक वे गुमराह हुए और न आये सीधी राह पर। (140) ❁ ❖

इन आयतों के मज़मून का पीछे से ताल्लुक़

पिछली आयतों में मुश्रिकों के ग़लत और बातिल शिर्क व कुफ़्र भरे अ़क़ीदों का बयान था, इन आयतों में उनकी अ़मली ग़लतियों और जाहिलाना रस्मों का ज़िक्र है। जाहिलीयत की जिन रस्मों का ज़िक्र इन आयतों में आया है वो ये हैं:-

अव्वल ग़ल्ले और फल में से कुछ हिस्सा अल्लाह के नाम का निकालते और कुछ बुतों और जिन्नात के नाम का, फिर अगर इत्तिफ़ाक़ से अल्लाह के हिस्से में से कुछ हिस्सा बुतों के हिस्से में मिल जाता तो उसको उसी तरह मिला रहने देते थे, और अगर मामला इसके उलट होता तो उसको निकाल कर फिर बुतों के हिस्से को पूरा कर देते थे और बहाना यह था कि अल्लाह तआ़ला तो ग़नी है उसका हिस्सा कम हो जाने से उसका कोई नुक़सान नहीं, और दूसरे शरीक मोहताज हैं, उनका हिस्सा न घटना चाहिये। इस बुरी रस्म का बयान उक्त आयतों में से पहली आयत में आ चुका।

दूसरी रस्म यह थी कि बहीरा, सायबा जानवरों को बुतों के नाम पर छोड़ते और यह कहते थे कि यह काम अल्लाह तआ़ला की रज़ा के लिये है। इसमें भी बुतों का हिस्सा यह था कि इबादत उनकी थी और अल्लाह का हिस्सा यह हुआ कि इसको अल्लाह की रज़ा समझते थे।

तीसरी रस्म अपनी लड़कियों को क़त्ल कर डालने की थी।

चौथी रस्म कुछ खेत बुतों के नाम वक़्फ़ कर देते और कहते कि इसके ख़र्च का असल मक़ाम सिर्फ़ मर्द हैं, औरतों को इसमें से कुछ देना न देना हमारी मर्ज़ी पर है, उनको मुतालबे का हक़ नहीं।

पाँचवीं रस्म इसी तरह का अ़मल मवेशी जानवरों में करते थे कि कुछ को मर्दों के लिये मख़्सूस क़रार देते थे।

छठी रस्म जिन चौपाये जानवरों को बुतों के नाम पर छोड़ देते तो उन पर सवारी और बोझ ढोने को हराम समझते थे।

सातवीं रस्म कुछ चौपाये जानवर मख़्सूस थे जिन पर किसी मौक़े में भी अल्लाह का नाम न लेते थे, न दूध निकालने के वक़्त, न सवार होते वक़्त, न ज़िबह करने के वक़्त।

आठवीं रस्म यह थी कि जिन जानवरों का नाम बहीरा या सायबा रखकर बुतों के नाम पर छोड़ते उनके ज़िबह के वक़्त अगर बच्चा पेट से ज़िन्दा निकलता तो उसको भी ज़िबह कर लेते, मगर उसको सिर्फ़ मर्दों के लिये हलाल और औरतों के लिये हराम समझते थे, और अगर बच्चा मुर्दा निकला तो वह सब के लिये हलाल होता था।

नवीं रस्म कुछ जानवरों का दूध भी मर्दों के लिये हलाल और औरतों के लिये हराम समझते थे।

दसवीं रस्म बहीरा, सायबा, वसीला और हामी चार क़िस्म के जानवरों की ताज़ीम (सम्मान) को इबादत समझते थे।

(ये सब रिवायतें दुर्रे मन्सूर और रूहुल-मआ़नी में हज़रत इब्ने अ़ब्बास, इमाम मुजाहिद, इब्ने ज़ैद और सुद्दी से इब्ने मुन्ज़िर, इब्ने अबी शैबा और इब्ने हुमैद के हवाले से नक़ल की गयी हैं)

(अज़ बयानुल-क़ुरआन)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और इसी तरह बहुत-से मुश्रिकों के ख़्याल में उनके (शैतान) माबूदों ने अपनी औलाद के क़त्ल करने को अच्छा और पसन्दीदा बना रखा है (जैसा कि जाहिलीयत में लड़कियों को क़त्ल या ज़िन्दा दफ़न कर देने की रस्म थी) ताकि (इस बुरे काम के करने के सबब) वे (शैतान) उन (मुश्रिकों) को (अ़ज़ाब का हक़दार बनाकर) बरबाद करें, और ताकि उनके तरीक़े को ख़ल्त-मल्त कर दें (कि हमेशा ग़लती में फंसे रहें, और आप उनकी इन बुरी हरकतों से दुखी व परेशान न हों, क्योंकि) अगर अल्लाह तआ़ला को (इनका भला) मन्ज़ूर होता तो ये ऐसा काम न करते। तो आप इनको और जो कुछ ये ग़लत बातें बना रहे हैं (कि हमारा यह फ़ेल बहुत अच्छा है) यूँ ही रहने दीजिए (कुछ फ़िक्र न कीजिए हम ख़ुद समझ लेंगे)। और वे अपने (बातिल) ख़्याल पर यह भी कहते हैं कि ये (मख़्सूस) मवेशी हैं और (मख़्सूस) खेत हैं, जिनका इस्तेमाल हर शख़्स को जायज़ नहीं, इनको कोई नहीं खा सकता सिवाय उनके जिनको हम चाहें (जैसा कि रस्म नम्बर चार और पाँच में ऊपर बयान हुआ) और कहते हैं कि ये (मख़्सूस) मवेशी हैं जिन पर (अल्लाह का नाम नहीं लेना चाहिये, चुनाँचे इसी यक़ीन व एतिक़ाद की वजह से उन पर) सवारी या बोझ लादने का काम हराम कर दिया गया है, और (मख़्सूस) मवेशी हैं जिन पर ये लोग अल्लाह का नाम नहीं लेते (जैसा कि रस्म नम्बर सात में बयान हुआ। और ये सब बातें) सिर्फ़ अल्लाह पर

बोहतान बाँधने के तौर पर (कहते) हैं (बोहतान बाँधना इसलिये कि वे इन कामों को अल्लाह की रज़ा व ख़ुशनूदी का सबब समझते थे), अभी अल्लाह तआला उनको उनके बोहतान बाँधने की सज़ा दिये देता है (अभी इसलिये कहा कि क़ियामत जो कि आने वाली है दूर नहीं, और कुछ कुछ सज़ा तो मरते ही शुरू हो जायेगी)। और वे (यूँ भी) कहते हैं कि जो चीज़ इन मवेशियों के पेट में (से निकलती) है (जैसे दूध या बच्चा) वह ख़ालिस हमारे मर्दों के लिए (हलाल) है और हमारी औरतों पर हराम है, और अगर वह (पेट का निकला हुआ बच्चा) मुर्दा है तो उस (से नफ़ा उठाने के जायज़ होने) में (मर्द व औरत) सब बराबर हैं, (जैसा कि रस्म नम्बर आठ और नौ में बयान हुआ), अभी अल्लाह तआला उनको उनकी (इस) ग़लत-बयानी की सज़ा दिये देता है (ग़लत-बयानी की वही तक़रीर है जो बोहतान बाँधने के बारे में ऊपर गुज़री, और अब तक जो सज़ा नहीं दी तो वजह यह है कि) बेशक वह बड़ा हिक्मत वाला है (कुछ हिक्मतों के सबब मोहलत दे रखी है, और अभी सज़ा न देने से कोई यूँ न समझे कि उसको ख़बर नहीं, क्योंकि वह) बड़ा इल्म वाला है (उसको सब ख़बर है)।

(आगे बतौर ख़ुलासे और अन्जाम के फ़रमाते हैं कि) वाक़ई वे लोग ख़राबी में पड़ गये जिन्होंने (इन ज़िक्र हुए कामों को तरीक़ा बना लिया कि) अपनी औलाद को महज़ अपनी बेवक़ूफ़ी की वजह से, बिना किसी (माक़ूल व मक़बूल) सनद के क़त्ल कर डाला, और जो (हलाल) चीज़ें उनको अल्लाह तआला ने खाने-पीने को दी थीं उनको (एतिक़ाद या अमल में) हराम कर लिया (जैसा कि ऊपर बयान हुई रस्मों और रस्म नम्बर दस में है कि मन्शा सब का एक ही है, बयान हुआ और यह मजमूआ) महज़ अल्लाह पर तोहमत बाँधने के तौर पर (हुआ, जैसा कि ऊपर औलाद को क़त्ल करने में बोहतान बाँधना और कुछ जानवरों के हराम कर लेने में तोहमत लगाना अलग-अलग भी आ चुका है), बेशक ये लोग गुमराही में पड़ गए और (यह गुमराही नई नहीं बल्कि पुरानी है, क्योंकि पहले भी ये) कभी राह पर चलने वाले नहीं हुए (पस ज़ल्लू में रास्ते का ख़ुलासा और मा कानू में उसकी ताकीद और ख़सिरू में बुरे अन्जाम का ख़ुलासा जो कि अज़ाब है, ज़िक्र किया गया)।

وَهُوَ الَّذِيٓ اَنْشَاَ جَنّٰتٍ مَّعْرُوْشٰتٍ

وَّغَيْرَ مَعْرُوْشٰتٍ وَّالنَّخْلَ وَالزَّرْعَ مُخْتَلِفًا اُكُلُهٗ وَالزَّيْتُوْنَ وَالرُّمَّانَ مُتَشَابِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ ۚ

كُلُوْا مِنْ ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ وَاٰتُوْا حَقَّهٗ يَوْمَ حَصَادِهٖ ۖ وَلَا تُسْرِفُوْا ۚ اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ ﴿١٤١﴾ وَمِنَ

الْاَنْعَامِ حَمُوْلَةً وَّفَرْشًا ۚ كُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعُوْا خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ ۚ اِنَّهٗ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ ﴿١٤٢﴾

व हुवल्लज़ी अन्श-अ जन्नातिम् मअ्रूशातिंव्-व ग़ै-र मअ्रूशातिंव्-	और उसी ने पैदा किये बाग़ जो टटियों (बाड़ों) पर चढ़ाये जाते हैं और जो टटियों पर नहीं चढ़ाये जाते, और खजूर

वन्नख़्-ल वज़्ज़र्-अ मुख़्तलिफ़न् उकुलुहू वज़्ज़ैतू-न वर्रुम्मा-न मु-तशाबिहंव्-व ग़ै-र मु-तशाबिहिन्, कुलू मिन् स-मरिही इज़ा अस्म-र व आतू हक़्क़हू यौ-म हसादिही व ला तुस्रिफ़ू इन्नहू ला युहिब्बुल्-मुस्रिफ़ीन (141) व मिनल्-अन्आमि हमूलतंव्-व फ़र्शन्, कुलू मिम्मा र-ज़-क़कुमुल्लाहु व ला तत्तबिअ़ू ख़ुतुवातिश्शैतानि, इन्नहू लकुम् अ़दुव्वुम् मुबीन (142)	के पेड़ और खेती कि विभिन्न हैं उनके फल, और पैदा किया ज़ैतून को और अनार को एक दूसरे के जैसा और अलग-अलग भी, खाओ उनके फल में से जिस वक़्त फल लायें और अदा करो उनका हक़ जिस दिन उनको काटो और बेजा ख़र्च न करो, उसको पसन्द नहीं आते बेजा ख़र्च करने वाले (141) और पैदा किये मवेशी (जानवरों) में बोझ उठाने वाले और ज़मीन से लगे हुए, खाओ अल्लाह के रिज़्क़ में से और मत चलो शैतान के क़दमों पर, वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। (142)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वही (अल्लाह पाक) है जिसने बाग़ पैदा किए, वे भी जो टटियों "यानी बाँस या सरकन्डों के बने हुए बाड़े व झोंपड़ी" पर चढ़ाए जाते हैं, (जैसे अंगूर) और वे भी जो टटियों पर नहीं चढ़ाए जाते, (या तो इसलिये कि बेलदार नहीं जैसे तनेदार दरख़्त, या बावजूद बेलदार होने के आदत नहीं, जैसे ख़रबूज़ा, तरबूज़ वग़ैरह) और खजूर के पेड़ और खेती (भी उसने पैदा किये) जिनमें खाने की चीज़ें अलग-अलग तरीक़े की (हासिल) होती हैं, और ज़ैतून और अनार (भी उसी ने पैदा किये) जो (अनार-अनार) आपस में (और ज़ैतून-ज़ैतून आपस में रंग, मज़े और शक्ल व मात्रा में से कुछ सिफ़तों में कभी) एक-दूसरे के जैसे भी होते हैं और (कभी) एक-दूसरे के जैसे नहीं होते, (और अल्लाह ने इन चीज़ों को पैदा करके इजाज़त दी है कि) इन सब की पैदावार खाओ (चाहे उसी वक़्त से सही) जब वह निकल आए (और पकने भी न पाये) और (यक़ीनन इसके साथ इतना ज़रूर है कि) उसमें (शरीअ़त के हिसाब से) जो हक़ वाजिब है (यानी ख़ैर-ख़ैरात) वह उसके काटने (और तोड़ने) के दिन (ग़रीबों को) दिया करो। और (इस देने में भी शरई इजाज़त की) हद से मत गुज़रो, यक़ीनन वह (यानी अल्लाह तआ़ला शरई इजाज़त की) हद से गुज़रने वालों को ना-पसन्द करते हैं।

और (जिस तरह बाग़ और खेत अल्लाह ने पैदा किये हैं इसी तरह हैवानात भी, चुनाँचे) मवेशियों में ऊँचे क़द के (भी) और छोटे क़द के (भी उसी ने पैदा किये, और उनके बारे में भी बाग़ों और खेतों की तरह इजाज़त दी कि) जो कुछ अल्लाह तआ़ला ने तुमको दिया है (और

शरीअ़त के एतिबार से हलाल किया है उसको) खाओ, और (अपनी तरफ़ से हराम करने के अहकाम तराश कर) शैतान के क़दम से क़दम मिलाकर मत चलो, बेशक वह तुम्हारा खुला दुश्मन है (कि तुमको हक़ दलीलों के स्पष्ट होने के बावजूद गुमराह कर रहा है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में मक्का के मुश्रिकों की इस गुमराही का ज़िक्र था कि अल्लाह तआ़ला के पैदा किये हुए जानवरों और उसकी अ़ता की हुई नेमतों में उन ज़ालिमों ने अपने खुद बनाये और तैयार किये हुए बेजान बेशऊर बुतों को अल्लाह तआ़ला का साझी क़रार देकर जो चीज़ वे बतौर इबादत या सदक़ा-ख़ैरात के निकालते हैं उनमें एक हिस्सा अल्लाह तआ़ला का और दूसरा हिस्सा बुतों का रखते हैं। फिर अल्लाह के हिस्से को भी विभिन्न हीलों हवालों से बुतों के हिस्से में डालते हैं। इसी तरह की और बहुत सी जाहिलाना रस्मों को शरई क़ानून की हैसियत दे रखी है।

बयान हुई आयतों में से पहली आयत में अल्लाह तआ़ला ने नबातात (वनस्पति) और दरख़्तों की मुख़्तलिफ़ क़िस्में और उनके फ़ायदों व फल की पैदाईश में अपनी कामिल क़ुदरत के हैरत-अंगेज़ कमालात का ज़िक्र फ़रमाया और दूसरी आयत में इसी तरह जानवरों और मवेशी की विभिन्न और अनेक क़िस्मों की पैदाईश का ज़िक्र फ़रमाकर उनकी गुमराही पर चौंकाया कि उन बेअ़क़्ल लोगों ने कैसे क़ादिरे मुतलक़, अ़लीम व ख़बीर (यानी अल्लाह तआ़ला) के साथ कैसे बेख़बर, बेशऊर, बेजान और बेबस चीज़ों को उसका शरीक व साझी बना डाला है।

और फिर उनको सिराते मुस्तक़ीम और अ़मल की सही राह की तरफ़ हिदायत फ़रमाई कि जब इन चीज़ों के पैदा करने और तुमको अ़ता करने में कोई साझी व शरीक नहीं तो इबादत में उनको शरीक ठहराना हद से ज़्यादा नेमत की नाशुक्री और ज़ुल्म है। जिसने ये चीज़ें पैदा करके तुमको अ़ता फ़रमायीं और तुम्हारे लिये इनको ऐसा ताबे कर दिया कि जिस तरह चाहो इनको इस्तेमाल कर सको, और फिर इन सब चीज़ों को तुम्हारे लिये हलाल कर दिया, तुम्हारा फ़र्ज़ है कि उसकी इन नेमतों से फ़ायदा उठाने के वक़्त उसके शुक्र के हक़ को याद रखो और अदा करो, शैतानी ख़्यालात और जाहिलाना रस्मों को अपना दीन न बनाओ।

पहली आयत में **अन्श-अ** के मायने पैदा किया और **मारूशात** अ़र्श से बना है, जिसके मायने उठाने के और बुलन्द करने के हैं। मारूशात से मुराद दरख़्तों की वो बेलें हैं जो टटियों पर चढ़ाई जाती हैं, जैसे अंगूर और कुछ तरकारियाँ। और इसके मुक़ाबले में **ग़ैर-मारूशात** में वो सब दरख़्त शामिल हैं जिनकी बेलें ऊपर नहीं चढ़ाई जातीं, चाहे वो तनेदार दरख़्त हों जिनकी बेल ही नहीं या बेलदार हों मगर उनकी बेलें ज़मीन ही पर फैलती हैं ऊपर नहीं चढ़ाई जातीं, जैसे तरबूज़, ख़रबूज़ा वग़ैरह।

और **नख़्ल** के मायने खजूर का दरख़्त, और **ज़रअ़** हर क़िस्म की खेती, और **ज़ैतून** ज़ैतून के पेड़ को भी कहते हैं और उसके फल को भी, और **रुम्मान** अनार को कहा जाता है।

इन आयतों में हक़ तआ़ला ने पहले तो बाग़ों में पैदा होने वाले दरख़्तों की दो क़िस्में बयान

फ़रमायीं- एक वो जिनकी बेलें ऊपर चढ़ाई जाती हैं, दूसरी वो जिनकी बेलें चढ़ाई नहीं जातीं। इसमें अपनी हिक्मते बालिग़ा और क़ुदरत के भेदों की तरफ़ इशारा है कि एक ही मिट्टी और एक ही पानी और एक ही हवा फ़िज़ा से कैसे-कैसे विभिन्न अन्दाज़ के पौधे पैदा फ़रमाये, फिर उनके फलों की तैयारी और हरियाली व ताज़गी और उनमें रखे हुए हज़ारों गुणों व विशेषताओं की रियायत से किसी दरख़्त का मिज़ाज ऐसा कर दिया कि जब तक बेल ऊपर न चढ़े अव्वल तो फल आता ही नहीं, और आ भी जाये तो बढ़ता और बाक़ी नहीं रहता, जैसे अंगूर वग़ैरह। और किसी का मिज़ाज ऐसा बना दिया कि उसकी बेल को ऊपर चढ़ाना भी चाहो तो न चढ़े, और चढ़ भी जाये तो उसका फल कमज़ोर हो जाये, जैसे ख़रबूज़ा तरबूज़ वग़ैरह। और कुछ दरख़्तों को मज़बूत तनों पर खड़ा करके इतना ऊँचा ले गये कि आदमी की कोशिशों और कारीगरी से इतना ऊँचा ले जाना आदतन मुम्किन न था। और दरख़्तों का यह विभिन्न प्रकार का होना महज़ इत्तिफ़ाक़ी नहीं बल्कि बड़ी हिक्मत के साथ उनके फलों के मिज़ाज की रियायत से है। कुछ फल ज़मीन और मिट्टी ही में बढ़ते और पकते हैं, और कुछ को मिट्टी लगना ख़राब कर देता है। कुछ के लिये ऊँची शाख़ों पर लटक कर निरन्तर ताज़ा हवा खाना, सूरज की किरनों और सितारों के नूर से रंग हासिल करना ज़रूरी है, हर एक के लिये क़ुदरत ने उसके मुनासिब इन्तिज़ाम फ़रमा दिया। वाक़ई अल्लाह तआ़ला बहुत ही ख़ूब बनाने और पैदा करने वाले हैं।

इसके बाद ख़ुसूसी तौर पर नख़्ल और ज़र्अ़ यानी खजूर के पेड़ और खेती का ज़िक्र फ़रमाया। खजूर का फल आ़म तौर पर तबीयत की ख़ुशी के लिये भी खाया जाता है और ज़रूरत के वक़्त इससे पूरी ग़िज़ा का काम भी लिया जा सकता है। और खेती में पैदा होने वाली जिनसों से उमूमन इनसानों की ग़िज़ा और जानवरों का चारा हासिल किया जाता है, इन दोनों को ज़िक्र करने के बाद फ़रमायाः

مُخْتَلِفًا اُكُلُهُ

इसमें "उकुलुहू" (उसका खाना) में "उस" से मुराद "ज़र्अ़" (खेती) भी हो सकती है और "नख़्ल" (खजूर) भी। बहरहाल मुराद दोनों ही हैं। मायने यह हैं कि खजूरों में विभिन्न क़िस्में और हर क़िस्म का अलग-अलग ज़ायक़ा है, और खेती में तो सैंकड़ों क़िस्में और हर क़िस्म के ज़ायक़े और फ़ायदे विभिन्न हैं। एक ही पानी हवा, एक ही ज़मीन से निकलने वाले फलों में इतना अ़ज़ीमुश्शान फ़र्क़ और फिर हर क़िस्म के फ़ायदों और गुणों का हैरत-अंगेज़ भिन्नता और अलग-अलग होना एक मामूली समझ रखने वाले इनसान को यह तस्लीम करने पर मजबूर कर देता है कि उनको पैदा करने वाली कोई ऐसी अ़ज़ीमुश्शान और अ़क़्लों में न आने वाली हस्ती है जिसके इल्म व हिक्मत का अन्दाज़ा भी इनसान नहीं लगा सकता।

इसके बाद दो चीज़ें और ज़िक्र फ़रमायीं "ज़ैतून" और "रुम्मान" (यानी अनार)। ज़ैतून का फल फल भी है तरकारी भी, और उसका तेल सब तेलों से ज़्यादा साफ़, निथुरा और उम्दा होने

के साथ बेशुमार फ़ायदों व गुणों वाला है। हज़ारों बीमारियों का बेहतरीन इलाज है। इसी तरह अनार के फ़ायदे और गुण बेशुमार हैं जिनको अ़वाम व ख़्वास सब जानते हैं। इन दोनों फलों का ज़िक्र करके फ़रमायाः

مُتَشَابِهًا وَّغَيْرَ مُتَشَابِهٍ.

यानी इनमें से हर एक के फल कुछ ऐसे होते हैं जो रंग और ज़ायक़े के एतिबार से मिले जुले (एक जैसे) होते हैं और कुछ ऐसे भी होते हैं जिनके रंग और ज़ायक़े विभिन्न और अलग-अलग होते हैं। और यह कुछ दानों का रंग व मज़ा और मात्रा में एक जैसा और कुछ का अलग-अलग होना अनार में भी पाया जाता है, ज़ैतून में भी।

इन तमाम क़िस्मों के दरख़्तों और फलों का ज़िक्र फ़रमाकर इस आयत में इनसान को दो हुक्म दिये गये- पहला हुक्म तो ख़ुद इनसान की इच्छा और नफ़्स के तक़ाज़े को पूरा करने वाला है। फ़रमायाः

كُلُوْا مِنْ ثَمَرِهٖٓ اِذَآ اَثْمَرَ.

यानी इन दरख़्तों और खेतियों के फलों को खाओ जब वो फलदार हो जायें। इसमें इशारा फ़रमा दिया कि इन तमाम प्रकार और समस्त क़िस्मों के दरख़्तों के पैदा करने वाले मालिक को अपनी कोई ज़रूरत पूरी नहीं करनी बल्कि तुम्हारे ही फ़ायदे के लिये पैदा किया है, सो तुम्हें इख़्तियार है इनको खाओ और फ़ायदा उठाओ। "जब वो फल लायें" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि दरख़्तों की शाख़ों और लकड़ियों में से फल निकाल लाना तुम्हारे तो बस का काम नहीं, जब वो फल अल्लाह के हुक्म से निकल आयें तो उनके खाने का इख़्तियार उसी वक़्त हासिल हो गया, चाहे वो अभी पक्के भी न हों।

ज़मीन का उश्र

दूसरा हुक्म यह दिया गयाः

وَاٰتُوْا حَقَّهٗ يَوْمَ حَصَادِهٖ.

"आतू" के मायने हैं "लाओ" या "अदा करो" और हसाद कहते हैं "खेती कटने या फलों के तोड़ने के वक़्त को।" और हक़्क़हू (उसके हक़) के "उस" से हर उस खाने की चीज़ की तरफ़ इशारा है जिनका ज़िक्र ऊपर आया है। मायने यह हैं कि इन सब चीज़ों को खाओ पियो इस्तेमाल करो, मगर एक बात याद रखो कि खेती काटने या फल तोड़ने के वक़्त उसका हक़ भी अदा किया करो। हक़ से मुराद ग़रीबों व मिस्कीनों पर सदक़ा करना है, जैसा कि एक दूसरी आयत में आ़म अलफ़ाज़ के साथ इरशाद हैः

وَالَّذِيْنَ فِيْٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُوْمٌ. لِّلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُوْمِ.

"यानी नेक बन्दों के मालों में निर्धारित हक़ होता है माँगने वाले और न माँगने वाले फ़क़ीरों (ग़रीबों) व मिस्कीनों का।"

इस सदके से मुराद आम सदका-ख़ैरात है, या वह सदका जो ज़मीन की ज़कात या उश्र कहलाता है, इसमें तफ़सीर के इमामों, सहाबा व ताबिईन के दो कौल हैं- कुछ हज़रात ने पहले कौल को इख़्तियार फ़रमाया है और वजह यह करार दी है कि यह आयत मक्की है और ज़कात का फ़रीज़ा मदीना तय्यिबा की हिजरत के दो साल बाद लागू हुआ है। इसलिये यहाँ हक् से मुराद ज़मीन की ज़कात का हक् नहीं हो सकता। और कुछ हज़रात ने इस आयत को मदनी आयतों में शुमार फ़रमाया और हक् से मुराद ज़मीन की ज़कात और उश्र को करार दिया।

इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर रह. ने अपनी तफ़सीर में और इब्ने अ़रबी उन्दुलुसी ने अपनी तफ़सीर अहकामुल-क़ुरआन में इसका फ़ैसला इस तरह फ़रमाया है कि आयत चाहे मक्की हो या मदनी, दोनों सूरतों में इस आयत से ज़मीन की ज़कात यानी उश्र मुराद हो सकता है। क्योंकि उनके नज़दीक ज़कात के वाजिब होने का असल हुक्म मक्का में नाज़िल हो चुका था। सूरः मुज़्ज़म्मिल की आयत ज़कात के हुक्म पर मुश्तमिल है जो सब के नज़दीक मक्की है, अलबत्ता ज़कात की मिक्दार और निसाब का निर्धारण वगैरह हिजरत के बाद हुआ, और इस आयत से सिर्फ़ इतना मालूम होता है कि ज़मीन की पैदावार पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कोई हक् लागू किया गया है, उसकी मिक्दार का निर्धारण इसमें बयान नहीं हुआ। इसलिये मिक्दार (मात्रा) के मामले में यह आयत मुख़्तसर और संक्षिप्त है, और मक्का मुअ़ज़्ज़मा में इस मात्रा के निर्धारण की यहाँ ज़रूरत भी इसलिये न थी कि वहाँ मुसलमानों को यह इत्मीनान हासिल न था कि ज़मीनों और बाग़ों की पैदावार सहूलत के साथ हासिल कर सकें, इसलिये उस ज़माने में तो रिवाज वही रहा जो पहले नेक लोगों में चला आता था, कि खेती काटने या फल तोड़ने के वक्त जो ग़रीब-गुर्बा वहाँ जमा हो जाते उनको कुछ दे देते थे, कोई ख़ास मात्रा मुतैयन न थी। इस्लाम से पहले दूसरी उम्मतों में भी खेती और फलों में इस तरह का सदका देने का रिवाज क़ुरआन करीम की आयतः

إِنَّا بَلَوْنٰهُمْ كَمَا بَلَوْنَآ اَصْحٰبَ الْجَنَّةِ.

(यानी सूरः अल्-कलम आयत 17) में बयान हुआ है। हिजरत के दो साल बाद जिस तरह दूसरे मालों के निसाब और ज़कात की मात्रा की तफ़सीलात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह की तरफ़ से आई वही के अनुसार बयान फ़रमाई, इसी तरह ज़मीन की ज़कात का बयान फ़रमाया, जो हज़रत मुआ़ज़ बिन जबल और इब्ने उमर और जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की रिवायत से हदीस की तमाम किताबों में मन्क़ूल है। फ़रमायाः

مَاسَقَتِ السَّمَآءُ فَفِيْهِ الْعُشْرُ وَمَا سُقِيَ بِالسَّانِيَةِ فَنِصْفُ الْعُشْرِ.

यानी बारिश वाली ज़मीनों में जहाँ सिंचाई का कोई सामान नहीं सिर्फ़ बारिश पर पैदावार का मदार है, उन ज़मीनों की पैदावार का दसवाँ हिस्सा बतौर ज़कात निकालना वाजिब है। और जो ज़मीनें कुँओं से सींची जाती हैं उनकी पैदावार का बीसवाँ हिस्सा वाजिब है।

ज़कात के क़ानून में इस्लामी शरीअ़त ने हर किस्म की ज़कात में इस बात को बुनियादी

उसूल के तौर पर इस्तेमाल किया है कि जिस पैदावार में मेहनत और ख़र्च कम है उसमें ज़कात की मात्रा ज़्यादा और जितनी मेहनत और ख़र्च किसी पैदावार पर बढ़ता जाता है उतनी ही ज़कात की मात्रा कम होती जाती है। मिसाल के तौर पर यूँ समझिये कि अगर किसी को कोई पुराना ख़ज़ाना मिल जाये, या सोने चाँदी वग़ैरह की खान निकल आये तो उसका पाँचवाँ हिस्सा बतौर ज़कात के उसके ज़िम्मे लाज़िम है, क्योंकि मेहनत और ख़र्च कम और पैदावार ज़्यादा है। उसके बाद बारिश वाली ज़मीन का नम्बर है, जिसमें मेहनत और ख़र्च कम से कम है, उसकी ज़कात पाँचवें हिस्से से आधी यानी दसवाँ हिस्सा कर दिया गया। उसके बाद वह ज़मीन है जिसको कुएँ से या नहर का पानी ख़रीदकर उससे सैराब किया जाता है, इसमें मेहनत और ख़र्च बढ़ गया तो ज़कात उससे भी आधी कर दी गयी, यानी बीसवाँ हिस्सा। उसके बाद आम नक़द सोना या चाँदी और तिजारत का माल है, जिनके हासिल करने और बढ़ाने पर ख़र्च भी काफ़ी होता है और मेहनत भी ज़्यादा, इसलिये उसकी ज़कात इसकी आधी यानी चालीसवाँ हिस्सा कर दिया गया।

क़ुरआन की उक्त आयत और हदीस की उक्त रिवायत में ज़मीन की पैदावार के लिये कोई निसाब मुक़र्रर नहीं फ़रमाया, इसी लिये इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. और इमाम अहमद बिन हम्बल रह. का मज़हब यह है कि ज़मीन की पैदावार चाहे थोड़ी हो या ज़्यादा, बहरहाल उसकी ज़कात निकालना ज़रूरी है। क़ुरआन की सूरः ब-क़रह वाली आयत जिसमें ज़मीन की ज़कात का ज़िक्र है वहाँ भी उसके लिये कोई निसाब बयान नहीं हुआ। इरशाद है:

اَنْفِقُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّآ اَخْرَجْنَا لَكُمْ مِّنَ الْاَرْضِ.

"यानी ख़र्च करो अपनी हलाल कमाई में से और उस चीज़ में से जो हमने तुम्हारे लिये ज़मीन से निकाली है।"

तिजारती मालों और मवेशी (जानवरों) के लिये तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने निसाब बयान फ़रमा दिया, कि साढ़े बावन तौले चाँदी से कम में ज़कात नहीं, चालीस बकरियों, पाँच ऊँटों से कम में ज़कात नहीं, लेकिन ज़मीन की पैदावार के मुताल्लिक़ जो बयान ऊपर की हदीस में आया है उसमें कोई निसाब नहीं बतलाया गया, इसलिये हर थोड़े व ज़्यादा में से ज़मीन की ज़कात यानी दसवाँ या बीसवाँ हिस्सा निकालना वाजिब है।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَلَا تُسْرِفُوْا. اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ.

"यानी हद से ज़ायद ख़र्च न करो, क्योंकि अल्लाह तआ़ला फ़ुज़ूल ख़र्ची करने वाले लोगों को पसन्द नहीं करते।"

यहाँ सवाल यह है कि अल्लाह की राह में अगर कोई शख़्स अपना सारा माल बल्कि जान भी ख़र्च कर दे तो इसको इसराफ़ (फ़ुज़ूलख़र्ची) नहीं कहा जा सकता, बल्कि हक़ की अदायेगी कहना भी मुश्किल है, फिर इस जगह इसराफ़ से मना करने का क्या मतलब है? जवाब यह है

कि किसी ख़ास क्षेत्र और मौक़े में इसराफ़ का नतीजा आदतन दूसरे मौक़ों में कमी व कोताही हुआ करता है। जो शख़्स अपनी इच्छाओं में बेझिझक हद से ज़ायद ख़र्च करता है वह उमूमन दूसरों के हुक़ूक़ अदा करने में कोताही किया करता है, यहाँ उसी कोताही से रोका गया है। यानी एक तरफ़ कोई आदमी अपना सारा माल अल्लाह की राह में लुटाकर ख़ाली हो बैठे तो बाल-बच्चों, घर वालों और रिश्तेदारों बल्कि ख़ुद अपने नफ़्स के हुक़ूक़ कैसे अदा करेगा, इसलिये हिदायत यह की गयी कि अल्लाह की राह में ख़र्च करने में भी एतिदाल (दरमियानी राह) से काम ले, ताकि सब हुक़ूक़ अदा हो सकें।

ثَمٰنِيَةَ اَزْوَاجٍ مِنَ الضَّاْنِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْمَعْزِ اثْنَيْنِ قُلْ آٰلذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ نَبِّـُٔوْنِيْ بِعِلْمٍ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿۱۴۳﴾ وَمِنَ الْاِبِلِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْبَقَرِ اثْنَيْنِ قُلْ آٰلذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَآءَ اِذْ وَصّٰىكُمُ اللّٰهُ بِهٰذَا فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا لِّيُضِلَّ النَّاسَ بِغَيْرِ عِلْمٍ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۴۴﴾

ع ۱۷

समानिय-त अज़्वाजिन् मिनज़्ज़अ्नि-स्नैनि व मिनल्-मअ्ज़िस्नैनि, क़ुल् आज़्ज़-करैनि हर्र-म अमिल्-उन्सयैनि अम्मश्त-मलत् अलैहि अर्हामुल्-उन्सयैनि, नब्बिऊनी बिअिल्मिन् इन् कुन्तुम् सादिक़ीन (143) व मिनल् इबिलिस्नैनि व मिनल् ब-क़रिस्नैनि, क़ुल् आज़्ज़-करैनि हर्र-म अमिल्-उन्सयैनि अम्मश्त-मलत् अलैहि अर्हामुल्-उन्सयैनि, अम् कुन्तुम् शु-हदा-अ इज़् वस्साकुमुल्लाहु बिहाज़ा फ-मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अलल्लाहि	पैदा किये आठ नर और मादा, भेड़ में से दो और बकरी में से दो, पूछ तू कि दोनों नर (अल्लाह ने) हराम किये हैं या दोनों मादा या वह बच्चा कि उस पर मुश्तमिल हैं बच्चेदानी दोनों मादाओं की, बतलाओ मुझको सनद अगर तुम सच्चे हो। (143) और पैदा किये ऊँट में से दो और गाय में से दो, पूछ तू दोनों नर हराम किये हैं या दोनों मादा या वह बच्चा कि उस पर मुश्तमिल हैं बच्चेदानी दोनों मादाओं की, क्या तुम हाज़िर थे जिस वक़्त तुमको अल्लाह ने यह हुक्म दिया था? फिर उस से ज़्यादा ज़ालिम कौन जो बोहतान बाँधे अल्लाह पर झूठा ताकि लोगों को गुमराह

कज़िबल्-लियुज़िल्लन्ना-स बिग़ैरि अ़िल्मिन्, इन्नल्ला-ह ला यह्दिल् क़ौमज़्ज़ालिमीन (144) ✿	करे बिना तहक़ीक़ के, बेशक अल्लाह हिदायत नहीं करता ज़ालिम लोगों को। (144) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(और ये मवेशी) आठ नर व मादा (पैदा किए) यानी भेड़ (और दुंबे) में दो क़िस्म (नर व मादा) और बकरी में दो क़िस्म (नर व मादा)। आप (उनसे) कहिए कि (यह तो बतलाओ कि) क्या अल्लाह तआ़ला ने इन (दोनों जानवरों के) दोनों नरों को हराम कहा है या दोनों मादा को (हराम कहा है), या उस (बच्चे) को जिसको दोनों मादा (अपने) पेट में लिए हुए हैं (वह बच्चा नर हो या मादा। यानी तुम जो विभिन्न प्रकार के हराम होने के दावेदार हो तो क्या यह हराम होने का हुक्म अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है) तुम मुझको किसी दलील से तो बतलाओ, अगर (अपने दावे में) तुम सच्चे हो। (यह तो छोटे क़द वाले के बारे में बयान हुआ आगे बड़े क़द वालों का बयान है कि भेड़ बकरी में भी नर व मादा पैदा किये, जैसा कि बयान हुआ) और (इसी तरह) ऊँट में दो क़िस्म (एक नर और एक मादा) और गाय (-भैंस) में दो क़िस्म (एक नर और एक मादा पैदा किये)। आप (इनसे इस बारे में भी) कहिए कि (यह तो बतलाओ कि) क्या अल्लाह तआ़ला ने इन दोनों (जानवरों के) नरों को हराम कहा है या दोनों मादा को (हराम कहा है), या उस (बच्चे) को जिसको दोनों मादा (अपने) पेट में लिए हुए हों (वह बच्चा नर हो या मादा। इसका भी वही मतलब है कि तुम जो विभिन्न प्रकार के हराम होने के दावेदार हो तो क्या यह हराम होना अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया है? इस पर कोई दलील क़ायम करनी चाहिये, जिसके दो तरीक़े हैं- एक तो यह कि किसी रसूल व फ़रिश्ते के वास्ते से हो, सो नुबुव्वत व वही के मसले से तो तुमको इनकार ही है, इस सूरत को तो तुम इख़्तियार कर नहीं सकते, पस दूसरा तरीक़ा दावा करने के लिये मुतैयन हो गया कि ख़ुद ख़ुदा तआ़ला ने बिना वास्ते के तुमको यह अहकाम दिये हों, तो) क्या तुम उस वक़्त हाज़िर थे जिस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने इस (हराम व हलाल होने) का हुक्म दिया? (और ज़ाहिर है कि इसका दावा भी नहीं हो सकता, पस साबित हो गया कि उनके पास कोई दलील नहीं)। तो (इस बात के साबित होने के बाद कि इस दावे पर कोई दलील नहीं, यक़ीनी बात है कि) उससे ज़्यादा (और) कौन ज़ालिम (और झूठा) होगा जो अल्लाह तआ़ला पर बिना दलील (हलाल व हराम होने के बारे में) झूठ तोहमत लगाए? ताकि लोगों को गुमराह करे (यानी यह शख़्स बड़ा ज़ालिम होगा और) यक़ीनन अल्लाह तआ़ला ज़ालिम लोगों को (आख़िरत में जन्नत का) रास्ता न दिखलाएँगे (बल्कि दोज़ख़ में भेजेंगे। पस ये लोग भी इस जुर्म की सज़ा में दोज़ख़ में जायेंगे)।

قُل لَّآ أَجِدُ فِي مَآ أُوحِيَ إِلَيَّ مُحَرَّمًا عَلَىٰ طَاعِمٍ يَطْعَمُهُۥٓ إِلَّآ أَن يَكُونَ مَيْتَةً أَوْ دَمًا مَّسْفُوحًا أَوْ لَحْمَ خِنزِيرٍ فَإِنَّهُۥ رِجْسٌ أَوْ فِسْقًا أُهِلَّ لِغَيْرِ ٱللَّهِ بِهِۦ ۚ فَمَنِ ٱضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَإِنَّ رَبَّكَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ وَعَلَى ٱلَّذِينَ هَادُوا۟ حَرَّمْنَا كُلَّ ذِي ظُفُرٍ ۖ وَمِنَ ٱلْبَقَرِ وَٱلْغَنَمِ حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ شُحُومَهُمَآ إِلَّا مَا حَمَلَتْ ظُهُورُهُمَآ أَوِ ٱلْحَوَايَآ أَوْ مَا ٱخْتَلَطَ بِعَظْمٍ ۚ ذَٰلِكَ جَزَيْنَٰهُم بِبَغْيِهِمْ ۖ وَإِنَّا لَصَٰدِقُونَ ۝ فَإِن كَذَّبُوكَ فَقُل رَّبُّكُمْ ذُو رَحْمَةٍ وَٰسِعَةٍ وَلَا يُرَدُّ بَأْسُهُۥ عَنِ ٱلْقَوْمِ ٱلْمُجْرِمِينَ ۝

कुल् ला अजिदु फ़ी मा ऊहि-य इलय्-य मुहर्रमन् अ़ला ताअ़िमिंय्-यत्-अ़मुहू इल्ला अंय्यकू-न मै-ततन् औ दमम्-मस्फ़ूहन् औ लह्-म ख़िन्ज़ीरिन् फ़-इन्नहू रिज्सुन् औ फ़िस्क़न् उहिल्-ल लिग़ैरिल्लाहि बिही फ़-मनिज़्तुर्-र ग़ै-र बाग़िंव्-व ला आ़दिन् फ़-इन्-न रब्ब-क ग़फ़ूरुर्रहीम (145) व अ़लल्लज़ी-न हादू हर्रम्ना कुल्-ल ज़ी ज़ुफ़ुरिन् व मिनल्-ब-क़रि वल्ग़-नमि हर्रम्ना अ़लैहिम् शुहू-महुमा इल्ला मा ह-मलत् ज़ुहूरुहुमा अविल्-हवाया औ मख़्त-ल-त बिअ़ज़्मिन्, ज़ालि-क जज़ैनाहुम् बिबग़्यिहिम् व इन्ना लसादिक़ून (146) फ़-इन् कज़्ज़बू-क फ़-क़ुर्रब्बुकुम् ज़ू रह्मतिंव्-वासि-अ़तिन्

तू कह दे कि मैं नहीं पाता उस वही में जो कि मुझको पहुँची है किसी चीज़ को हराम खाने वाले पर जो उसको खाये, मगर यह कि वह चीज़ मुर्दार हो या बहता हुआ ख़ून या सुअर का गोश्त कि वह नापाक है या नाजायज़ ज़बीहा जिस पर नाम पुकारा जाये अल्लाह के सिवा किसी और का, फिर जो कोई भूख से बेइख़्तियार हो जाये, न नाफ़रमानी करे और न ज़्यादती करे तो तेरा रब बड़ा माफ़ करने वाला है बहुत मेहरबान। (145) और यहूद पर हमने हराम किया था हर एक नाख़ून वाला जानवर और गाय और बकरी में से हराम की थी उन पर उनकी चर्बी मगर जो लगी हो पुश्त पर या अंतड़ियों पर, या जो चर्बी कि मिली हुई हो हड्डी के साथ, यह हमने उनको सज़ा दी थी उनकी शरारत पर, और हम सच कहते हैं। (146) फिर अगर तुझको झुठलायें तो कह दे कि तुम्हारे रब की

व ला युरद्‌दु बअ्सुहू अनिल् क़ौमिल्-मुज्रिमीन (147)	रहमत में बड़ी वुस्अ़त है, और नहीं टलेगा उसका अ़ज़ाब गुनाहगार लोगों से। (147)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिए कि (जिन हैवानात के बारे में बात हो रही है उनके मुताल्लिक़) जो कुछ अहकाम वही के ज़रिये से मेरे पास आए हैं उनमें तो मैं किसी खाने वाले के लिए कोई हराम (ग़िज़ा) नहीं पाता जो उसको खाए (चाहे मर्द हो या औरत), मगर (इन चीज़ों को ज़रूर हराम पाता हूँ वो) यह कि वह मुर्दार (जानवर) हो (यानी जिसका ज़िबह करना वाजिब हो इसके बावजूद वह शरई तरीक़े के बग़ैर ज़िबह हुए मर जाये), या बहता हुआ ख़ून हो, या सुअर का गोश्त हो, क्योंकि वह (यानी सुअर) बिल्कुल नापाक है (इसी लिये उसके सब अंग नापाक और हराम हैं, और ऐसा नजिस नजिसुल-ऐन कहलाता है), या जो (जानवर वग़ैरह) शिर्क का ज़रिया हो (इस तरह) कि अल्लाह के अ़लावा किसी और (की निकटता व रज़ा हासिल करने) के लिए नामज़द कर दिया गया हो (सो ये सब हराम हैं)। फिर (भी इसमें इतनी आसानी रखी है कि) जो शख़्स (भूख से बहुत ही) बेताब हो जाए, शर्त यह है कि न तो (खाने में) मज़े का तालिब हो और न (ज़रूरत की मात्रा से) आगे बढ़ने वाला हो तो (इस हालत में इन हराम चीज़ों से खाने में भी उस शख़्स को कुछ गुनाह नहीं होता) वाक़ई आपका रब (उस शख़्स के लिये) माफ़ करने वाला, रहम करने वाला है (कि ऐसे वक़्त में रहमत फ़रमाई कि गुनाह की चीज़ में से गुनाह उठा दिया)।

और यहूदियों पर हमने नाख़ून वाले तमाम जानवर हराम कर दिए थे, और गाय और बकरी (के अंगों) में से इन दोनों की चर्बियाँ उन (यहूद) पर हमने हराम कर दी थीं, मगर वह (चर्बी इस हुक्म से अलग थी) जो इन (दोनों) की पुश्त पर या अंतड़ियों में लगी हो, या जो (चर्बी) हड्डी से मिली हो, (बाक़ी सब चर्बी हराम थी, सो इन चीज़ों को हराम करना अपने आप में मक़सूद न था बल्कि) उनकी शरारत के सबब हमने उनको यह सज़ा दी थी, और हम यक़ीनन सच्चे हैं। फिर (इस ज़िक्र हुई तहक़ीक़ के बाद भी) अगर ये (मुश्रिक लोग नऊज़ु बिल्लाह इस मज़मून में सिर्फ़ इस वजह से) आपको झूठा कहें (कि उन पर अ़ज़ाब नहीं आता) तो आप (जवाब में) फ़रमा दीजिए कि तुम्हारा रब बड़ी ज़बरदस्त रहमत वाला है (कुछ हिक्मतों से जल्दी पकड़ नहीं फ़रमाता), और (इससे यूँ न समझो कि हमेशा यूँ ही बचे रहेंगे, जब वह निर्धारित वक़्त आ जायेगा फिर उस वक़्त) उसका अ़ज़ाब मुजिरम लोगों से (किसी तरह) न टलेगा।

سَيَقُولُ الَّذِينَ أَشْرَكُوا لَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا أَشْرَكْنَا وَلَا آبَاؤُنَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ شَيْءٍ ۚ كَذَٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ حَتَّىٰ ذَاقُوا بَأْسَنَا ۗ قُلْ هَلْ عِنْدَكُمْ مِنْ عِلْمٍ فَتُخْرِجُوهُ لَنَا ۖ إِنْ تَتَّبِعُونَ إِلَّا الظَّنَّ وَإِنْ أَنْتُمْ إِلَّا تَخْرُصُونَ ۝ قُلْ فَلِلَّهِ الْحُجَّةُ الْبَالِغَةُ ۖ فَلَوْ شَاءَ لَهَدَاكُمْ أَجْمَعِينَ ۝ قُلْ هَلُمَّ شُهَدَاءَكُمُ الَّذِينَ يَشْهَدُونَ أَنَّ اللَّهَ حَرَّمَ هَٰذَا ۖ فَإِنْ شَهِدُوا فَلَا تَشْهَدْ مَعَهُمْ ۚ وَلَا تَتَّبِعْ أَهْوَاءَ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَالَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْآخِرَةِ وَهُمْ بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُونَ ۝

स-यक़ूलुल्लज़ी-न अशरकू लौ शाअल्लाहु मा अशरक्ना व ला आबाउना व ला हर्रम्ना मिन् शैइन्, कज़ालि-क कज़्ज़बल्लज़ी-न मिन् क़ब्लिहिम् हत्ता ज़ाक़ू बअ्सना, क़ुल हल् अिन्दकुम् मिन् अिल्मिन् फ़-तुख़्रिजूहु लना इन् तत्तबिअू-न इल्लज़्ज़न्-न व इन् अन्तुम् इल्ला तख़्रुसून (148) क़ुल् फ़लिल्लाहिल्-हुज्जतुल्-बालि-ग़तु फ़लौ शा-अ ल-हदाकुम् अज्मअ़ीन (149) क़ुल् हलुम्-म शु-हदा-अकुमुल्लज़ी-न यश्हदू-न अन्नल्ला-ह हर्र-म हाज़ा फ़-इन् शहिदू फ़ला तश्हद् म-अ़हुम् व ला तत्तबिअ् अह्वा-अल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना वल्लज़ी-न ला युअ्मिनू-न बिल्-आख़ि-रति व हुम् बिरब्बिहिम् यअ्दिलून (150) ❁

अब कहेंगे मुश्रिक अगर अल्लाह चाहता तो शिर्क न करते हम और न हमारे बाप दादे, और न हम हराम कर लेते कोई चीज़, इसी तरह झुठलाया किये इनसे पहले यहाँ तक कि उन्होंने चखा हमारा अज़ाब। तू कह दे कि कुछ इल्म भी है तुम्हारे पास कि उसको हमारे आगे ज़ाहिर करो, तुम तो ख़ालिस अटकल पर चलते हो और सिर्फ़ अन्दाज़े ही करते हो। (148) तू कह दे- पस अल्लाह का इल्ज़ाम पूरा है, सो अगर वह चाहता तो हिदायत कर देता तुम सब को। (149) तू कह कि लाओ अपने गवाह जो गवाही दें इस बात की कि अल्लाह ने हराम किया है इन चीज़ों को, फिर अगर वे ऐसी गवाही दें तो भी तू एतिबार न कर उनका, और न चल उनकी ख़ुशी पर जिन्होंने झुठलाया हमारे हुक्मों को और जो यक़ीन नहीं करते आख़िरत का, और वे अपने रब के बराबर करते हैं औरों को। (150) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये मुशरिक यूँ कहने को हैं कि अगर अल्लाह तआ़ला को (बतौर रज़ा के यह मामला) मन्ज़ूर होता (कि हम शिर्क और चीज़ों को हराम न करें, यानी अल्लाह तआ़ला शिर्क न करने और चीज़ों को हराम न करने को पसन्द करते और शिर्क व हराम करने को नापसन्द करते) तो न हम शिर्क करते और न हमारे बाप-दादा (शिर्क करते), और न हम (और न हमारे बुज़ुर्ग) किसी चीज़ को (जिनका ज़िक्र ऊपर आ चुका है) हराम कह सकते। (इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला इस शिर्क व हराम करने से नाराज़ नहीं। अल्लाह तआ़ला जवाब देते हैं कि यह दलील पकड़ना और तर्क देना इसलिये ग़लत है कि इससे रसूलों का झुठलाना लाज़िम आता है, पस ये लोग रसूल को झुठला रहे हैं, और जिस तरह यह कर रहे हैं) इसी तरह जो (काफ़िर) लोग इनसे पहले हो चुके हैं उन्होंने भी (रसूलों को) झुठलाया था, यहाँ तक कि उन्होंने हमारे अ़ज़ाब का मज़ा चखा (चाहे दुनिया में, जैसा कि अक्सर पहले काफ़िरों पर अ़ज़ाब नाज़िल हुआ है, या मरने के बाद तो ज़ाहिर ही है। और यह इशारा है इस तरफ़ कि उन लोगों के कुफ़्रिया काम और बातों के मुक़ाबले में सिर्फ़ ज़ुबानी जवाब और मुनाज़रे पर बस न किया जायेगा, बल्कि पहले वालों की तरह अ़मली सज़ा भी दी जायेगी, चाहे दुनिया में भी या सिर्फ़ आख़िरत में। आगे दूसरे जवाब देने के लिये इरशाद है कि) आप (उनसे) कहिए कि क्या तुम्हारे पास (इस मुक़द्दमे पर कि किसी काम को कर लेने की क़ुदरत देना इस बात को लाज़िम है कि उससे अल्लाह ख़ुश है) कोई दलील है? (अगर है) तो उसको हमारे सामने ज़ाहिर करो। (असल यह है कि दलील वग़ैरह कुछ भी नहीं) तुम लोग सिर्फ़ ख़्याली बातों पर चलते हो, और तुम बिल्कुल अटकल से बातें बनाते हो।

(और दोनों जवाब देकर) आप (उनसे) कहिए कि पस (दोनों जवाबों से मालूम हुआ कि) पूरी हुज्जत अल्लाह ही की रही (और तुम्हारी हुज्जत बातिल हो गयी) फिर (इसका तक़ाज़ा तो यह था कि तुम सब राह पर आ जाते मगर इसकी तौफ़ीक़ ख़ुदा ही की तरफ़ से है) अगर वह चाहता तो तुम सब को राह (सही रास्ते) पर ले आता (मगर हक़ तआ़ला की बहुत सी हिक्मतें हैं, किसी को तौफ़ीक़ दी किसी को नहीं दी, अलबत्ता हक़ का इज़हार और इख़्तियार व इरादे का अ़ता फ़रमाना सब के लिये आ़म है। आगे नक़ली (यानी किताबी या शरई तौर पर बयान हुई) दलील के मुतालबे के लिये इरशाद फ़रमाते हैं कि) आप (उनसे) कहिए कि (अपनी अ़क़्ली दलील का हाल तो तुमको मालूम हुआ, अच्छा अब कोई सही दलीले नक़ली पेश करो जैसे) अपने गवाहों को लाओ जो इस बात पर (बाक़ायदा) गवाही दें कि अल्लाह तआ़ला ने इन (ज़िक्र की हुई चीज़ों) को हराम कर दिया है। (बाक़ायदा गवाही वह है जो देखने पर आधारित हो या ऐसी निश्चित दलील पर जो यक़ीन का फ़ायदा देने में देखने के बराबर हो, जैसा कि:

اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَآءَ اِذْ وَصّٰكُمْ.

इसकी तरफ़ इशारा कर रहा है)। फिर अगर (इत्तिफ़ाक़ से किसी को फ़र्ज़ी झूठे गवाह बनाकर ले आयें और) वे (गवाह इसकी) गवाही (भी) दे दें तो (चूँकि वह गवाही यक़ीनन बेक़ायदा और ख़ाली बात बनाना होगा, क्योंकि देखना भी नहीं पाया जा रहा और न देखने के बराबर कोई चीज़ सामने आ रही है, इसलिये) आप उस गवाही को न सुनें। और (जब उनका झूठा होना वाज़ेह है जैसा कि 'व ला हर्रमूना' से ज़ाहिर है, और इसी तरह 'व कज़ालि-क कज़्ज़बल्लज़ी-न....' इस पर दलालत कर रहा है, और बहुत सी आयतों से उनका आख़िरत का इनकारी और मुश्रिक होना ज़ाहिर है तो ऐ मुख़ातब!) ऐसे लोगों के बातिल ख़्यालात की (जिनका बातिल और ग़लत होना अभी साबित हो चुका) पैरवी मत करना जो हमारी आयतों को झुठलाते हैं और जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते (और इसी सबब से निडर होकर हक़ की तलाश नहीं करते) और वे (इबादत का हक़दार होने में) अपने रब के बराबर दूसरों को ठहराते (यानी शिर्क करते) हैं।

قُلْ تَعَالَوْا اَتْلُ مَا حَرَّمَ رَبُّكُمْ عَلَيْكُمْ اَلَّا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْئًا وَّبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا ۚ وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ مِّنْ اِمْلَاقٍ ۚ نَحْنُ نَرْزُقُكُمْ وَاِيَّاهُمْ ۚ وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ ۚ وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ۚ ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ۝ وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ ۚ وَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيْزَانَ بِالْقِسْطِ ۚ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۚ وَاِذَا قُلْتُمْ فَاعْدِلُوْا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى ۚ وَبِعَهْدِ اللّٰهِ اَوْفُوْا ۚ ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ۝ وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۚ ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝

क़ुल् तआ़लौ अत्लु मा हर्र-म रब्बुकुम् अ़लैकुम् अल्ला तुश्रिकू बिही शैअंव्-व बिल्वालिदैनि इह्सानन् व ला तक़्तुलू औलादकुम् मिन् इम्लाकि़न्, नह्नु नरज़ुक़ुकुम् व इय्याहुम् व ला तक़्रबुल्-फ़वाहि-श मा ज़-ह-र मिन्हा व मा ब-त-न व ला तक़्तुलुन्नफ़्सल्लती हर्रमल्लाहु	तू कह- तुम आओ मैं सुना दूँ जो हराम किया है तुम पर तुम्हारे रब ने, कि शरीक न करो उसके साथ किसी चीज़ को, और माँ-बाप के साथ नेकी करो और मार न डालो अपनी औलाद को ग़रीबी की वजह से, हम रिज़्क़ देते हैं तुमको और उनको, और पास न जाओ बेहयाई के काम के जो ज़ाहिर हो उसमें से और जो छुपा हो, और मार न डालो उस जान को जिसको

इल्ला बिल्हक़्क़ि, ज़ालिकुम् वस्साकुम् बिही लअ़ल्लकुम् तअ़्किलून (151) व ला तक़रबू मालल्-यतीमि इल्ला बिल्लती हि-य अह्सनु हत्ता यब्लु-ग़ अशुद्दहू व औफ़ुल्-कै-ल वल्मीज़ा-न बिल्क़िस्ति ला नुकल्लिफ़ु नफ़्सन् इल्ला वुस्अ़हा व इज़ा क़ुल्तुम् फ़अ़्दिलू व लौ का-न ज़ा क़ुर्बा व बि-अ़ह्दिल्लाहि औफ़ू, ज़ालिकुम् वस्साकुम् बिही लअ़ल्लकुम् तज़क्करून (152) व अन्-न हाज़ा सिराती मुस्तक़ीमन् फ़त्तबिअ़ूहु व ला तत्तबिअ़ुस्सुबु-ल फ़-तफ़र्र-क़ बिकुम् अ़न् सबीलिही, ज़ालिकुम् वस्साकुम् बिही लअ़ल्लकुम् तत्तक़ून (153)	हराम किया है अल्लाह ने मगर हक़ पर, तुमको यह हुक्म किया है ताकि तुम समझो। (151) और पास न जाओ यतीम के माल के मगर इस तरह से कि बेहतर हो, यहाँ तक कि पहुँच जाये वह अपनी जवानी को और पूरा करो माप और तौल को इन्साफ़ से, हम किसी के ज़िम्मे वही चीज़ लाज़िम करते हैं जिसकी उसको ताक़त हो, और जब बात कहो तो हक़ की कहो अगरचे वह अपना क़रीब ही हो, और अल्लाह का अ़हद पूरा करो, तुमको यह हुक्म कर दिया है ताकि तुम नसीहत पकड़ो। (152) और हुक्म किया कि यह राह है मेरी सीधी, सो इस पर चलो, और मत चलो और रस्तों पर कि तुमको जुदा कर देंगे अल्लाह के रास्ते से, यह हुक्म कर दिया है तुमको ताकि तुम बचते रहो। (153)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप (उनसे) कहिए कि आओ मैं तुमको वो चीज़ें पढ़कर सुनाऊँ जिनको तुम्हारे रब ने तुम पर हराम फ़रमाया है, वो (चीज़ें ये हैं कि एक) यह कि अल्लाह तआ़ला के साथ किसी चीज़ को शरीक मत ठहराओ (पस शरीक ठहराना हराम हुआ)। (दूसरे यह कि) और माँ-बाप के साथ एहसान किया करो (पस उनसे बुरे अन्दाज़ से पेश आना और बुरा व्यवहार करना हराम हुआ)। और (तीसरे यह कि) अपनी औलाद को ग़ुर्बत व तंगी के सबब (जैसा कि जाहिलीयत में अक्सर आ़दत थी) क़त्ल मत किया करो, (क्योंकि) हम तुमको और उनको (दोनों को तयशुदा) रिज़्क़ देंगे, (वे तुम्हारे निर्धारित रिज़्क़ में शरीक नहीं हैं, फिर क्यों क़त्ल करते हो? पस क़त्ल करना हराम हुआ)। और (चौथे यह कि) बेहयाई (यानी बदकारी) के जितने तरीक़े हैं उनके पास भी मत जाओ (पस ज़िना करना हराम हुआ), चाहे वे खुले तौर पर हों या छुपे तौर पर हों, (वो तरीक़े यही हैं)। और (पाँचवे यह कि) जिसका ख़ून करना अल्लाह तआ़ला ने हराम कर दिया है

उसको क़त्ल मत करो मगर (शरई) हक़ पर (क़त्ल जायज़ है। जैसे ख़ून के बदले ख़ून में या शादीशुदा होने की सूरत में ज़िना करने और उसके साबित हो जाने पर संगसार करने में। पस नाहक़ क़त्ल करना हराम हुआ)। इस (सब) का तुमको (अल्लाह तआ़ला ने) ताकीदी (यानी बहुत ज़ोर देकर) हुक्म दिया है ताकि तुम (इनको) समझो (और समझकर अ़मल करो)।

और (छठे यह कि) यतीम के माल के पास मत जाओ (यानी उसमें तसर्रुफ़ मत करो) मगर ऐसे तरीक़े से (इख़्तियार चलाने और ख़र्च करने की इजाज़त है) जो कि (शरई तौर पर) अच्छा और पसन्दीदा है (जैसे उसके काम में लगाना, उसकी हिफ़ाज़त करना, और कुछ सरपरस्तों और वसीयत वालों को इसमें यतीम के लिये तिजारत करने की भी इजाज़त है) यहाँ तक कि वह अपने बालिग़ होने की उम्र को पहुँच जाए (उस वक़्त तक इन ज़िक्र हुए तसर्रुफ़ात की भी इजाज़त है, और फिर उसका माल उसको दे दिया जायेगा शर्त यह कि वह बेअ़क़्ल और नासमझ न हो। पस यतीम के माल में ग़ैर-शरई दख़ल-अन्दाज़ी और ख़र्च करना हराम हुआ)। और (सातवें यह कि) नाप और तौल पूरी-पूरी किया करो इन्साफ़ के साथ (कि किसी का हक़ अपने पास न रहे, और न आये, पस इसमें दग़ा करना हराम हुआ। और ये अहकाम कुछ कठिन और मुश्किल नहीं, क्योंकि) हम (तो) किसी शख़्स को उसकी ताक़त से ज़्यादा (अहकाम की) तकलीफ़ (भी) नहीं देते (फिर क्यों इन अहकाम में कोताही की जाये)। और (आठवें यह कि) जब तुम (फ़ैसला या गवाही वग़ैरह के मुताल्लिक़ कोई) बात किया करो तो (उसमें) इन्साफ़ (का ख़्याल) रखा करो, चाहे वह शख़्स (जिसके मुक़ाबले में वह बात कह रहे हो तुम्हारा) रिश्तेदार ही हो (पस ख़िलाफ़े इन्साफ़ करना हराम हुआ)। और (नौवें यह कि) अल्लाह तआ़ला से जो अ़हद किया करो (जैसे क़सम या मन्नत वग़ैरह बशर्ते कि वह जायज़ हो) उसको पूरा किया करो (पस इसका पूरा न करना हराम हुआ)। इन (सब) का तुमको अल्लाह तआ़ला ने ताकीदी (बहुत सख़्ती और ज़ोरदार अन्दाज़ में) हुक्म दिया है ताकि तुम याद रखो (और अ़मल करो)।

और यह (भी कह दीजिए) कि (कुछ इन्हें अहकाम की तख़्सीस नहीं बल्कि) यह दीन (इस्लाम और इसके तमाम अहकाम) मेरा रास्ता है, (जिसकी तरफ़ मैं अल्लाह के हुक्म से दावत देता हूँ) जो कि (बिल्कुल) सीधा (और सही) है, सो इस राह पर चलो और दूसरी राहों पर मत चलो कि वो (राहें) तुमको उसकी (यानी अल्लाह की) राह से (जिसकी तरफ़ मैं दावत देता हूँ) जुदा (और दूर) कर देंगी। इसका तुमको अल्लाह तआ़ला ने ताकीदी हुक्म दिया है ताकि तुम (इस राह के ख़िलाफ़ करने से) एहतियात रखो।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों से पहले तक़रीबन दो तीन रुकूअ़ में लगातार यह मज़मून बयान हो रहा है कि ग़ाफ़िल और जाहिल इनसान ने ज़मीन व आसमान की सारी चीज़ों के पैदा करने वाले अह्कमुल-हाकिमीन का नाज़िल किया हुआ क़ानून छोड़कर अपने बाप-दादा की और मन-घढ़त रस्मों को अपना दीन बना लिया। जिन चीज़ों को अल्लाह तआ़ला ने हराम किया था उनको जायज़

समझकर इस्तेमाल करने लगे, और बहुत सी चीज़ें जिनको अल्लाह तआ़ला ने हलाल क़रार दिया था उनको अपने ऊपर हराम कर लिया। और कुछ चीज़ों को मर्दों के लिये जायज़ और औरतों के लिये हराम, कुछ को औरतों के लिये हलाल और मर्दों के लिये हराम क़रार दे दिया।

इन तीन आयतों में उन चीज़ों का बयान है जिनको अल्लाह तआ़ला ने हराम क़रार दिया है। तफ़सीली बयान में नौ चीज़ों का ज़िक्र है, उसके बाद दसवाँ हुक्म इस तरह बयान फ़रमाया गया कि:

هٰذَا صِرَاطِى مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ.

"यानी यह दीन मेरा सीधा रास्ता है, इस पर चलो।"

जिसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लाये हुए और बतलाये हुए दीन व शरीअ़त की तरफ़ इशारा करके तमाम हलाल व हराम और जायज़ व नाजायज़, मक्रूह व मुस्तहब (नापसन्द और पसन्दीदा) चीज़ों की तफ़सील को इसके हवाले कर दिया कि शरीअ़ते मुहम्मदिया ने जिस चीज़ को हलाल बतलाया उसको हलाल और जिसको हराम क़रार दिया उसको हराम समझो, अपनी तरफ़ से हलाल व हराम के फ़ैसले न करते फिरो।

फिर जिन दस चीज़ों का तफ़सीली बयान इन आयतों में आया है उनमें असल मक़सद तो हराम चीज़ों का बयान करना है, जिसका तक़ाज़ा यह था कि उन सब को मना करने के लफ़्ज़ से मनाही के उनवान से बयान किया जाता, लेकिन क़ुरआने करीम ने अपने ख़ास हकीमाना अन्दाज़ के मातहत उनमें से चन्द चीज़ों को हुक्म देने के अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाया है और मुराद यह है कि इसके ख़िलाफ़ करना हराम है। (तफ़सीरे कश्शाफ़) इसकी हिक्मत आगे मालूम हो जायेगी। वो दस चीज़ें जिनकी हुर्मत (हराम होने) का बयान इन आयतों में आया है ये हैं:

1. अल्लाह तआ़ला के साथ इबादत व इताअ़त में किसी को शरीक व साझी ठहराना।
2. माँ-बाप के साथ अच्छा बर्ताव न करना।
3. ग़रीबी व तंगदस्ती के डर से औलाद को क़त्ल कर देना।
4. बेहयाई के काम करना।
5. किसी को नाहक़ क़त्ल करना।
6. यतीम का माल नाजायज़ तौर पर खा जाना।
7. नाप-तौल में कमी करना।
8. गवाही या फ़ैसला या दूसरे कलाम में बेइन्साफ़ी करना।
9. अल्लाह तआ़ला के अ़हद को पूरा न करना।
10. अल्लाह तआ़ला के सीधे रास्ते का छोड़कर दायें बायें दूसरे रास्ते इख़्तियार करना।

ज़िक्र हुई आयतों की अहम विशेषतायें

हज़रत कअ़ब अहबार रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो तौरात के माहिर आ़लिम हैं। पहले यहूदी थे फिर मुसलमान हुए, वह फ़रमाते हैं कि क़ुरआन मजीद की ये आयतें जिनमें दस हराम चीज़ों का

बयान है, अल्लाह की किताब तौरात बिस्मिल्लाह के बाद इन्हीं आयतों से शुरू होती है। और कहा गया है कि यही वो दस कलिमे हैं जो हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर नाज़िल हुए थे।

क़ुरआन के व्याख्यापक हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि यही वो मोहकम आयतें हैं जिनका ज़िक्र सूरः आले इमरान में आया है कि जिन पर आदम अ़लैहिस्सलाम से लेकर ख़ातमुल-अम्बिया हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक तमाम अम्बिया की शरीअ़तें सहमत रही हैं। इनमें से कोई चीज़ किसी मज़हब व मिल्लत और किसी शरीअ़त में मन्सूख़ (रद्द व निरस्त) नहीं हुई। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

ये आयतें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का वसीयत नामा हैं

और तफ़सीर इब्ने कसीर में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है, उन्होंने फ़रमाया कि जो शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ऐसा वसीयत नामा देखना चाहे जिस पर आपकी मोहर लगी हुई हो तो वह इन आयतों को पढ़ ले। इनमें वह वसीयत मौजूद है जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अल्लाह के हुक्म से उम्मत को दी है।

और हाकिम ने हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम को ख़िताब करके फ़रमायाः "कौन है जो मुझसे तीन आयतों पर बैअ़त करे।" फिर यही तीन आयतें तिलावत फ़रमाकर इरशाद फ़रमाया कि "जो शख़्स इस बैअ़त को पूरा करेगा तो उसका अज्र अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे हो गया।"

अब इन दस चीज़ों का तफ़सीली बयान और तीनों आयतों की तफ़सीर देखिये। इन आयतों की शुरूआ़त इस तरह की गयी हैः

قُلْ تَعَالَوْا اَتْلُ مَا حَرَّمَ رَبُّكُمْ عَلَيْكُمْ

इसमें "तआ़लौ" का तर्जुमा है "आ जाओ" और असल में यह कलिमा ऐसे वक़्त बोला जाता है जबकि कोई बुलाने वाला ऊँची जगह खड़ा होकर नीचे वालों को अपने पास बुलाये। इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि इस दावत को क़ुबूल करने में उन लोगों के लिये बरतरी और बुलन्दी है। मायने ये हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके फ़रमाया गया कि आप इन लोगों से कह दीजिए कि आ जाओ ताकि मैं तुम्हें वो चीज़ें पढ़कर सुना दूँ जो अल्लाह तआ़ला ने तुम पर हराम की हैं। ये डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आया हुआ पैग़ाम है, इसमें किसी के अन्दाज़े और गुमान या क़्यास का दख़ल नहीं, ताकि तुम उनसे बचने का एहतिमाम करो और बेकार में अपनी तरफ़ से अल्लाह की हलाल चीज़ों को हराम करते न फिरो।

इस आयत का ख़िताब अगरचे डायरेक्ट मक्का के मुश्रिकों की तरफ़ है, मगर ख़िताब का मज़मून आम है, और तमाम इनसानों को शामिल है, चाहे मोमिन हों या काफ़िर, अ़रब हों या ग़ैर-अ़रब, और मौजूदा हाज़िर लोग हों या आईन्दा आने वाली नस्लें। (तफ़सीर बहरे मुहीत)

सबसे पहला बड़ा गुनाह शिर्क है जिसको हराम किया गया है

इस एहतिमाम के साथ ख़िताब करके हराम व मना की गयी चीज़ों की फ़ेहरिस्त में सबसे पहले यह इरशाद फ़रमायाः

اَلَّا تُشْرِكُوْا بِهٖ شَيْئًا

यानी सबसे पहला काम यह है कि अल्लाह तआ़ला के साथ किसी को शरीक और साझी न समझो। न अ़रब के मुश्रिकों की तरह बुतों को ख़ुदा बनाओ, न यहूदियों व ईसाईयों की तरह नबियों को ख़ुदा या ख़ुदा का बेटा कहो, न दूसरों की तरह फ़रिश्तों को ख़ुदा की बेटियाँ क़रार दो, न जाहिल अ़वाम की तरह नबियों और वलियों को इल्म व क़ुदरत की सिफ़त में अल्लाह तआ़ला के बराबर क़रार दो।

शिर्क का मतलब और उसकी क़िस्में

तफ़सीरे मज़हरी में है कि लफ़्ज़ "शैअ़न" (किसी चीज़ को) के मायने यहाँ यह भी हो सकते हैं कि शिर्क की किसी क़िस्म खुली या छुपी में मुब्तला न हो। खुले शिर्क को तो सब जानते हैं कि किसी ग़ैरुल्लाह को इबादत और इताअ़त में या उसकी मख़्सूस सिफ़ात में अल्लाह तआ़ला के बराबर या उसका साझी क़रार देना है, और छुपा शिर्क यह है कि अपने कारोबार और दीनी व दुनियावी मक़ासिद (मामलात और उद्देश्यों) में और नफ़े नुक़सान में अगरचे अ़क़ीदा तो यही हो कि कारसाज़ अल्लाह तआ़ला है, मगर अ़मली तौर पर दूसरों को कारसाज़ समझे और सारी कोशिशें दूसरों ही से लगाकर रखे। या इबादत में रियाकारी करे कि दूसरों को दिखाने के लिये नमाज़ वग़ैरह को अच्छा करके पढ़े, या सदक़ा ख़ैरात नाम पाने के ख़्याल से करे, या अ़मली तौर पर नफ़े नुक़सान का मालिक किसी ग़ैरुल्लाह को क़रार दे। शैख़ सअ़दी रह. ने इसी मज़मून को इस तरह बयान फ़रमाया हैः

दरीं नौए अज़ शिर्क पौशीदा अस्त कि ज़ैदम ब-बख़्शीद व उमरम् बख़स्त

यानी इसमें भी एक क़िस्म का शिर्क छुपा हुआ है कि आदमी यूँ समझे कि मुझे ज़ैद ने कुछ बख़्श दिया और उमर ने नुक़सान पहुँचा दिया।

बल्कि हक़ीक़त इसके सिवा नहीं कि बख़्शिश या नुक़सान जो कुछ है वह क़ादिरे मुतलक़ हक़ तआ़ला की तरफ़ से है, ज़ैद और उमर पर्दे हैं जिनके अन्दर से बख़्शिश या नुक़सान का ज़हूर होता है, वरना जैसा कि सही हदीस में है कि अगर सारी दुनिया के तमाम जिन्नात व इनसान मिलकर तुमको कोई ऐसा नफ़ा पहुँचाना चाहें जो अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिये मुक़द्दर नहीं फ़रमाया तो मजाल नहीं कि पहुँचा सकें। इसी तरह अगर सारी दुनिया के जिन्नात व

इनसान मिलकर तुमको कोई ऐसा नुक़सान पहुँचाना चाहें जो अल्लाह तआ़ला ने नहीं चाहा तो यह भी किसी से मुम्किन नहीं।

खुलासा यह है कि खुला शिर्क और छुपा शिर्क दोनों से इन्तिहाई परहेज़ करना चाहिये, और शिर्क में जिस तरह बुतों वग़ैरह की पूजा-पाट दाख़िल है इसी तरह अम्बिया व औलिया को इल्म व क़ुदरत वग़ैरह में अल्लाह तआ़ला के बराबर समझना भी शिर्क में दाख़िल है। अगर ख़ुदा न करे किसी का अ़क़ीदा ही ऐसा हो तो खुला और ज़ाहिरी शिर्क है, और अ़क़ीदा न हो मगर अ़मल इस तरह का है तो छुपा और अन्दरूनी शिर्क कहलायेगा। इस मक़ाम में सबसे पहले शिर्क से बचने की हिदायत की गयी है, वजह यह है कि शिर्क ऐसा जुर्म है जिसके बारे में क़ुरआन का फ़ैसला है कि इसकी माफ़ी नहीं, इसके सिवा दूसरे गुनाहों की माफ़ी विभिन्न असबाब से हो सकती है। इसी लिये हदीस में हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु अ़न्हु और हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- अल्लाह तआ़ला के साथ किसी को साझी न क़रार दो अगरचे तुम्हारे टुकड़े कर दिये जायें, या तुम्हें सूली पर चढ़ा दिया जाये, या तुम्हें ज़िन्दा जला दिया जाये।

दूसरा गुनाह माँ-बाप से बदसुलूकी है

इसके बाद दूसरी चीज़ यह इरशाद फ़रमाईः

وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا.

यानी माँ-बाप के साथ एहसान का मामला और अच्छा बर्ताव करो। मक़सद तो इस जगह यह है कि माँ-बाप के साथ एहसान का मामला करो, इसमें इस तरफ़ इशारा करना है कि माँ-बाप के हक़ में सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं कि उनकी नाफ़रमानी न करो और तकलीफ़ न पहुँचाओ, बल्कि अच्छे सुलूक और आ़जिज़ी वाले बर्ताव के ज़रिये उनको राज़ी रखना और ख़ुश रखना फ़र्ज़ है, जिसका बयान दूसरी जगह क़ुरआने करीम में इस तरह आया हैः

وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ.

"यानी उनके सामने अपने बाज़ू फ़रमाँबरदारी के तौर पर पस्त करो।"

इस आयत में माँ-बाप को तकलीफ़ पहुँचाने और सताने को शिर्क के बाद दूसरे नम्बर का जुर्म क़रार दिया है, जैसा कि एक दूसरी आयत में उनकी इताअ़त और आराम पहुँचाने को अल्लाह तआ़ला ने अपनी इबादत के साथ मिलाकर बयान फ़रमाया हैः

وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا.

"यानी आपके रब ने यह फ़ैसला कर दिया है कि उसके सिवा किसी की इबादत न करो, और माँ-बाप के साथ एहसान का मामला करो।"

और एक जगह इरशाद फ़रमायाः

اَنِ اشْكُرْلِىْ وَلِوَالِدَيْكَ. اِلَىَّ الْمَصِيْرُ.

"यानी मेरा शुक्र अदा करो और अपने माँ-बाप का, फिर मेरी ही तरफ़ लौटकर आना है।" यानी अगर इसके ख़िलाफ़ करोगे तो सज़ा पाओगे।

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत है कि उन्होंने रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया कि सबसे अफ़ज़ल और बेहतर अ़मल कौनसा है? आपने फ़रमाया "नमाज़ को उसके (मुस्तहब) वक़्त में पढ़ना।" फ़रमाते हैं कि मैंने फिर सवाल किया कि इसके बाद कौनसा अ़मल अफ़ज़ल है? तो फ़रमाया "माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक।" फिर पूछा कि इसके बाद कौनसा अ़मल है? फ़रमाया "अल्लाह के रास्ते में जिहाद।"

सही मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि एक दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तीन मर्तबा फ़रमायाः

رَغِمَ اَنْفُهٗ رَغِمَ اَنْفُهٗ رَغِمَ اَنْفُهٗ

यानी ज़लील हो गया, ज़लील हो गया, ज़लील हो गया।

सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया या रसूलल्लाह! कौन ज़लील हो गया? फ़रमाया वह शख़्स जिसने अपने माँ-बाप को या उनमें से एक को बुढ़ापे के ज़माने में पाया और फिर वह जन्नत में दाख़िल न हुआ।

मतलब यह है कि बुढ़ापे के ज़माने में माँ-बाप की ख़िदमत से जन्नत का मिलना यक़ीनी है। बड़ा मेहरूम व ज़लील है वह शख़्स जिसने इतनी सस्ती जन्नत को हाथ से खो दिया। सस्ती इसलिये कि माँ-बाप जो औलाद पर तबई तौर से ख़ुद ही मेहरबान होते हैं वे ज़रा सी ख़िदमत से बहुत ख़ुश हो जाते हैं, उनका ख़ुश रखना किसी बड़े अ़मल का मोहताज नहीं। और बुढ़ापे की क़ैद इसलिये कि जिस वक़्त माँ-बाप तन्दुरुस्त और ताक़तवर हैं, और अपनी ज़रूरतें ख़ुद पूरी करते हैं बल्कि औलाद की भी माली और जानी इमदाद कर देते हैं उस वक़्त तो न ख़िदमत के वे मोहताज हैं न उस ख़िदमत का कोई ख़ास वज़न है, क़ाबिले क़द्र ख़िदमत उस वक़्त ही हो सकती है जबकि वे बुढ़ापे की वजह से मोहताज (ज़रूरत मन्द) हों।

तीसरा हराम, औलाद का क़त्ल करना

तीसरी चीज़ जिसका हराम होना इन आयतों में बयान हुआ है वह औलाद का क़त्ल है, और मुनासबत यह है कि इससे पहले माँ-बाप के हक़ का बयान था जो औलाद के ज़िम्मे है और इसमें औलाद के हक़ का बयान है जो माँ-बाप के ज़िम्मे है। औलाद के साथ बदसुलूकी का बदतरीन मामला वह था जो जाहिलीयत में उसका ज़िन्दा दफ़न करने या क़त्ल करने का जारी था। इस आयत में इससे रोका गया है। इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ مِّنْ اِمْلَاقٍ ۚ نَحْنُ نَرْزُقُكُمْ وَاِيَّاهُمْ

"यानी ग़ुर्बत की वजह से अपनी औलाद को क़त्ल न करो, हम तुमको भी रिज़्क़ देंगे और उनको भी।"

जाहिलीयत के ज़माने में बेरहमी और संगदिली की यह बदतरीन रस्म चल पड़ी थी कि जिसके घर में लड़की पैदा होती तो उसको इस शर्म के ख़ौफ़ से कि किसी को दामाद बनाना पड़ेगा, ज़िन्दा को गड्ढे में दफ़न कर देते थे, और कई बार इस ख़ौफ़ से कि औलाद के लिये ज़िन्दगी की ज़रूरतें और खाने-पीने का सामान जमा करने में मुश्किलें पेश आयेंगी, ये संगदिल लोग अपने बच्चों को अपने हाथ से कृत्ल कर देते थे। क़ुरआने करीम ने इस रस्म को मिटाया और जो इरशाद ऊपर मज़कूर हुआ उसमें उनके इस ज़ेहनी रोग का भी इलाज कर दिया, जिसके सबब वे इस बदतरीन जुर्म के अपराधी होते थे कि बच्चों को खाना कहाँ से खिलायेंगे, अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में बतला दिया कि खाना खिलाने और रिज़्क़ पहुँचाने के असली ज़िम्मेदार तुम नहीं, यह काम डायरेक्ट हक़ तआ़ला का है, तुम ख़ुद अपने रिज़्क़ और खाने में भी उसी के मोहताज हो, वह देता है तो तुम बच्चों को भी दे देते हो, वह अगर तुम्हें न दे तो तुम्हारी क्या मजाल है कि एक दाना गेहूँ या चावल का ख़ुद पैदा कर लो। ज़मीन के अन्दर से बीज को एक कौंपल की सूरत में मनों मिट्टी को चीर-फाड़कर निकालना फिर उसको दरख़्त की सूरत देना, फिर उस पर फूल-फल लगाना किसका काम है? क्या माँ-बाप यह काम कर सकते हैं? यह तो सब क़ादिरे मुतलक़ की क़ुदरत व हिक्मत के करिश्मे हैं, इनसान के अ़मल का इसमें क्या दख़ल है। वह तो सिर्फ़ इतना कर सकता है कि ज़मीन को नर्म कर दे और दरख़्त निकले तो पानी दे दे और उसकी हिफ़ाज़त कर ले, मगर फूल-फल पैदा करने में तो उसका मामूली सा भी दख़ल नहीं। मालूम हुआ कि माँ-बाप की यह सोच ग़लत है कि हम बच्चों को रिज़्क़ देते हैं, बल्कि अल्लाह तआ़ला ही के ग़ैब के ख़ज़ाने से माँ-बाप को भी मिलता है, औलाद को भी। इसलिये इस जगह माँ-बाप को पहले ज़िक्र किया कि हम तुमको भी रिज़्क़ देंगे और उनको भी। माँ-बाप को पहले लाने में इसकी तरफ़ भी इशारा हो सकता है कि तुमको रिज़्क़ इसलिये दिया जाता है कि तुम बच्चों को पहुँचाओ, जैसा कि एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اِنَّمَا تُنْصَرُوْنَ وَتُرْزَقُوْنَ بِضُعَفَاءِ كُمْ.

"यानी तुम्हारे कमज़ोर लोगों के तुफ़ैल में अल्लाह तआ़ला तुम्हारी भी मदद फ़रमाते हैं और तुम्हें रिज़्क़ देते हैं।"

क़ुरआने करीम में सूरः बनी इस्राईल में भी यही मज़मून इरशाद फ़रमाया गया है। मगर वहाँ रिज़्क़ के मामले में औलाद को पहले ज़िक्र फ़रमाया है:

نَحْنُ نَرْزُقُهُمْ وَاِيَّاكُمْ.

"यानी हम उनको भी रिज़्क़ देंगे और तुमको भी।"

इसमें भी इसकी तरफ़ इशारा है कि रिज़्क़ देने के पहले मुस्तहिक़ हमारे नज़दीक वे कमज़ोर बच्चे हैं जो ख़ुद कुछ नहीं कर सकते, उन्हीं की ख़ातिर तुम्हें रिज़्क़ दिया जाता है।

औलाद की तालीमी अख़्लाक़ी तरबियत न करना और बेदीनी के लिये आज़ाद छोड़ देना भी एक तरह से औलाद का क़त्ल है

औलाद के क़त्ल का जुर्म और सख़्त गुनाह होना जो इस आयत में बयान फ़रमाया गया है वह ज़ाहिरी क़त्ल करने और मार डालने के लिये तो ज़ाहिर ही है, और ग़ौर किया जाये तो औलाद को तालीम व तरबियत न देना जिसके नतीजे में ख़ुदा और रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आख़िरत की फ़िक्र से ग़ाफ़िल रहे, बद-अख़्लाक़ियों और बेहयाईयों में गिरफ़्तार हो यह भी औलाद के क़त्ल से कम नहीं। क़ुरआने करीम ने उस शख़्स को मुर्दा क़रार दिया है जो अल्लाह को न पहचाने, और उसकी इताअ़त न करे। आयतः

اَوَمَنْ كَانَ مَيْتًا فَاَحْيَيْنٰهُ

में इसी का बयान है। जो लोग अपनी औलाद के आमाल व अख़्लाक़ के दुरुस्त करने पर तवज्जोह नहीं देते उनको आज़ाद छोड़ते हैं, या ऐसी ग़लत तालीम दिलाते हैं जिसके नतीजे में इस्लामी अख़्लाक़ तबाह हों वे भी एक हैसियत से औलाद को क़त्ल करने के मुजरिम हैं। और ज़ाहिरी क़त्ल का असर तो सिर्फ़ दुनिया की चन्द दिन की ज़िन्दगी को तबाह करता है, यह क़त्ल इनसान की आख़िरत की और हमेशा की ज़िन्दगी को तबाह कर देता है।

चौथा हराम बेहयाई का काम है

चौथी चीज़ जिसके हराम होने का इन आयतों में बयान है वो बेहयाई के काम हैं। इसके मुताल्लिक़ इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ.

यानी बेहयाई के जितने तरीक़े हैं उनके पास भी मत जाओ, चाहे वो खुले तौर पर हों या छुपे तौर पर।

'फ़वाहिश' फ़ाहिशा की जमा है, और लफ़्ज़ फ़ुह्श, फ़हशा और फ़ाहिशा सब मस्दर हैं जिनका उर्दू में तर्जुमा बेहयाई से किया जाता है। और क़ुरआन व हदीस की परिभाषा में हर ऐसे बुरे काम के लिये ये अलफ़ाज़ बोले जाते हैं जिसकी बुराई और ख़राबी के असरात बुरे हों और दूर तक पहुँचें। इमाम राग़िब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने "मुफ़रदातुल-क़ुरआन" में और इब्ने असीर रह. ने निहाया में यही मायने बयान फ़रमाये हैं। क़ुरआने करीम में जगह-जगह फ़ुह्श और फ़हशा की मनाही आई है। एक आयत में इरशाद हैः

يَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ.

एक जगह इरशाद हैः

حَرَّمَ رَبِّيَ الْفَوَاحِشَ.

वग़ैरह।

फ़ुहश और फ़हशा के इस अ़मा मफ़्हूम में तमाम बड़े गुनाह दाख़िल हैं, चाहे ज़बान और कहने से मुताल्लिक़ हों या कामों से। और ज़ाहिर से मुताल्लिक़ हों या बातिन और दिल से। बदकारी और बेहयाई के जितने काम हैं वो भी सब इसमें दाख़िल हैं। इसी लिये आ़म ज़बानों पर यह लफ़्ज़ बदकारी के मायने में बोला जाता है। क़ुरआन की इस आयत में फ़वाहिश के क़रीब जाने से भी रोका गया है, इसको अगर आ़म मफ़्हूम में लिया जाये तो तमाम बुरी ख़स्लतें और गुनाह चाहे ज़बान के हों चाहे हाथ-पाँव वग़ैरह के, और चाहे दिल से मुताल्लिक़ हों, सभी इसमें दाख़िल हो गये। और अगर अ़वाम में मशहूर यानी बेहयाई के मायने लिये जायें तो इसके मायने बदकारी और उसकी तरफ़ ले जाने वाले असबाब मुराद होंगे।

फिर इसी आयत में फ़वाहिश की तफ़सीर में यह भी फ़रमा दियाः

مَاظَهَرَ مِنْهَا وَمَابَطَنَ.

पहली तफ़सीर के मुताबिक़ ज़ाहिरी फ़वाहिश से ज़बान और हाथ-पाँव वग़ैरह के तमाम गुनाह मुराद होंगे, और बातिनी फ़वाहिश से मुराद वो गुनाह होंगे जो दिल से मुताल्लिक़ हैं, जैसे हसद, कीना, हिर्स, नाशुक्री, बेसब्री वग़ैरह।

और दूसरी तफ़सीर के मुताबिक़ ज़ाहिरी फ़वाहिश से मुराद वो बेहयाई के काम होंगे जिनको खुलेआ़म किया जाता है, और बातिनी वो जो छुपाकर किये जायें। खुली बदकारी में उसकी तरफ़ ले जाने वाली चीज़ें या उसके साथ की दूसरी बुराईयाँ सब दाख़िल हैं। बुरी नीयत से किसी औ़रत की तरफ़ देखना, हाथ वग़ैरह से छूना, उससे इस तरह की बातें करना सब इसमें दाख़िल हैं, और बातिनी बेहयाई में वो ख़्यालात और इरादे और उनको पूरा करने की ख़ुफ़िया तदबीरें दाख़िल हैं जो किसी बेहयाई और बदकारी के सिलसिले में अ़मल में लाई जायें।

और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि ज़ाहिरी फ़वाहिश से वो बेहयाई के काम मुराद हैं जिनका बुरा होना आ़म तौर पर मशहूर व मालूम है और सब जानते हैं, और बातिनी फ़वाहिश से मुराद वो काम हैं जो अल्लाह के नज़दीक बेहयाई के काम हैं, अगरचे आ़म तौर पर उनको लोग बुरा नहीं जानते, या आ़म लोगों को उनका हराम होना मालूम नहीं। मसलन बीवी को तीन तलाक़ देने के बाद बीवी बनाकर रख छोड़ा या किसी ऐसी औ़रत से निकाह कर लिया जो शरई तौर पर उसके लिये हलाल नहीं।

ख़ुलासा यह है कि यह आयत फ़वाहिश के असल मफ़्हूम के एतिबार से तमाम ज़ाहिरी और बातिनी गुनाहों को और आ़म मशहूर मफ़्हूम के एतिबार से बदकारी व बेहयाई के जितने तरीक़े खुले या छुपे हुए हैं उन सब को शामिल है, और हुक्म इसमें यह दिया गया है कि इन चीज़ों के पास भी न जाओ। पास न जाने से मुराद यह है कि ऐसी मज्लिसों और ऐसे जगहों से भी बचो जहाँ जाकर इसका ख़तरा हो कि हम गुनाह में मुब्तला हो जायेंगे, और ऐसे कामों से भी बचो जिनसे उन गुनाहों का रास्ता निकलता हो। हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद हैः

مَنْ حَامَ حَوْلَ حمًى اوشك اَنْ يَّقَعَ فِيْهِ.

"यानी जो शख़्स किसी वर्जित और प्रतिबन्धित जगह के आस-पास घूमता है तो कुछ बईद नहीं कि वह उसमें दाख़िल भी हो जाये।"

इसलिये एहतियात का तक़ाज़ा यही है कि जिस जगह का दाख़िला मना और प्रतिबन्धित है उस जगह के आस-पास भी न फिरे।

पाँचवाँ हराम नाहक़ किसी को क़त्ल करना है

हराम होने वाली चीज़ों में से पाँचवीं चीज़ नाहक़ किसी को क़त्ल करना है। इसके बारे में इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ.

"यानी जिस शख़्स का ख़ून अल्लाह ने हराम कर दिया है उसको क़त्ल मत करो, हाँ मगर हक़ पर।" और इस हक़ की तफ़सील रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक हदीस में बयान फ़रमाई है जो हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बुख़ारी व मुस्लिम ने नक़ल की है, वह यह कि आपने फ़रमाया- किसी मुसलमान का ख़ून हलाल नहीं मगर तीन चीज़ों से- एक यह कि वह शादीशुदा होने के बावजूद बदकारी में मुब्तला हो जाये। दूसरे यह कि उसने किसी को नाहक़ क़त्ल कर दिया हो, उसके बदले में मारा जाये। तीसरे यह कि अपना दीने हक़ छोड़कर मुर्तद हो गया (यानी इस्लाम लाकर फिर उससे फिर गया) हो।

हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु जिस वक़्त बाग़ियों के घेरे में घिरे हुए थे और ये लोग उनको क़त्ल करना चाहते थे, उस वक़्त भी हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने लोगों को यह हदीस सुनाकर कहा कि अल्लाह का शुक्र है मैं इन तीनों चीज़ों से बरी हूँ। मैंने इस्लाम लाने के बाद तो क्या ज़माना-ए-जाहिलीयत में भी कभी बदकारी नहीं की, और न मैंने किसी को क़त्ल किया, और न कभी मेरे दिल में यह वस्वसा (ख़्याल) आया कि मैं अपने दीने इस्लाम को छोड़ दूँ। फिर तुम मुझे किस बिना पर क़त्ल करते हो?

और बेवजह क़त्ल करना जैसे मुसलमान का हराम है इसी तरह उस ग़ैर-मुस्लिम का क़त्ल भी ऐसा ही हराम है जो किसी इस्लामी मुल्क में मुल्क के क़ानून का पाबन्द होकर रहता है, या जिससे मुसलमानों का समझौता है।

तिर्मिज़ी और इब्ने माजा में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद मन्क़ूल है कि जो किसी ज़िम्मी ग़ैर-मुस्लिम को क़त्ल कर दे उसने अल्लाह तआ़ला के अ़हद को तोड़ दिया, और जो शख़्स अल्लाह के अ़हद को तोड़ दे वह जन्नत की ख़ुशबू भी न सूँघ सकेगा, हालाँकि जन्नत की ख़ुशबू सत्तर साल की दूरी तक पहुँचती है।

इस एक आयत में दस में से पाँच हराम व नाजायज़ चीज़ों का बयान फ़रमाने के बाद

इरशाद फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ.

"यानी इन चीज़ों का अल्लाह तआ़ला ने तुमको ताकीदी (ज़ोर देकर बहुत अहमियत के साथ) हुक्म दिया है ताकि तुम समझो।"

छठा हराम, यतीम का माल नाजायज़ तौर पर खाना

दूसरी आयत में छठे हुक्म यतीम का माल नाजायज़ तौर पर खाने की हुर्मत के मुताल्लिक़ इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ.

"यानी यतीम के माल के पास न जाओ मगर ऐसे तरीक़े से जो अच्छा है, यहाँ तक कि वह अपने बालिग़ होने की उम्र को पहुँच जाये।"

इसमें यतीम नाबालिग़ बच्चों के वली और पालने वाले को ख़िताब है कि वह उनके माल को एक आग समझे और नाजायज़ तौर पर उसके खाने और लेने के पास भी न जाये, जैसा कि दूसरी एक आयत में इन्हीं अलफ़ाज़ के साथ आया है कि जो लोग यतीमों का माल नाजायज़ तौर पर जुल्म से खाते हैं वे अपने पेटों में आग भरते हैं।

अलबत्ता यतीम के माल की हिफ़ाज़त करना और किसी ऐसी जायज़ तिजारत या कारोबार में लगाकर बढ़ाना जिसमें नुक़सान का ख़तरा आ़दतन न हो, यह तरीक़ा अच्छा और ज़रूरी है, यतीम के वली को ऐसा करना चाहिये।

इसके बाद यतीम के माल की हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी की हद बतला दीः

حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ.

यानी यहाँ तक कि वह अपने बालिग़ होने की उम्र को पहुँच जाये तो वली की ज़िम्मेदारी ख़त्म हो गयी, उसका माल उसके सुपुर्द कर दिया जाये।

लफ़्ज़ **अशद्** के असली मायने क़ुव्वत के हैं, और इसकी शुरूआ़त उलेमा की अक्सरियत के नज़दीक बालिग़ हो जाने से हो जाती है। जिस वक़्त बच्चे में बालिग़ होने की निशानियाँ पायी जायें या उसकी उम्र पन्द्रह साल की पूरी हो जाये, उस वक़्त उसको शरई तौर पर बालिग़ क़रार दिया जायेगा।

लेकिन बालिग़ हो जाने के बाद यह देखा जायेगा कि उसमें अपने माल की हिफ़ाज़त और सही जगहों में ख़र्च करने की सलाहियत पैदा हो गयी है या नहीं, अगर सलाहियत देखी जाये तो बालिग़ होते ही उसका माल उसके सुपुर्द कर दिया जाये, और अगर यह सलाहियत अभी उसमें मौजूद नहीं तो पच्चीस साल की उम्र तक माल की हिफ़ाज़त वली के ज़िम्मे है। इस बीच में जिस वक़्त भी उसको माल की हिफ़ाज़त और कारोबार की लियाक़त पैदा हो जाये तो माल उसको दिया जा सकता है, और अगर पच्चीस साल तक भी उसमें यह सलाहियत पैदा न हो तो

फिर इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के नज़दीक उसका माल हर हाल में उसको दे दिया जाये, बशर्ते कि उसके अन्दर यह सलाहियत न होना दीवानगी और जुनून (पागलपन) की हद तक न पहुँची हो। और कुछ इमामों के नज़दीक उस वक़्त भी माल उसको सुपुर्द न किया जाये, बल्कि शरई क़ाज़ी उसके माल की हिफ़ाज़त किसी ज़िम्मेदार आदमी के सुपुर्द कर दे।

यह मज़मून क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत से लिया गया है, जिसमें फ़रमाया है:

اٰنَسْتُمْ مِّنْهُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْٓا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ.

यानी यतीम बच्चों में बालिग़ होने के बाद अगर तुम यह सलाहियत देखो कि वे अपने माल की खुद हिफ़ाज़त कर सकते हैं और किसी कारोबार में लगा सकते हैं तो उनका माल उनके सुपुर्द कर दो। इस आयत ने बतलाया कि सिर्फ़ बालिग़ होना माल सुपुर्द करने के लिये काफ़ी नहीं, बल्कि माल की हिफ़ाज़त और कारोबार की क़ाबलियत शर्त है।

सातवाँ हराम नाप-तौल में कमी

सातवाँ हुक्म इस आयत में नाप-तौल को इन्साफ़ के साथ पूरा करने का है। इन्साफ़ का मतलब यह है कि देने वाला दूसरे फ़रीक़ के हक़ में कोई कमी न करे और लेने वाला अपने हक़ से ज़्यादा न ले। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

चीज़ों के लेन-देन में नाप-तौल में कमी-ज़्यादती को क़ुरआन ने सख़्त हराम क़रार दिया है, और इसके ख़िलाफ़ करने वालों के लिये सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन में सख़्त वईद (धमकी) आई है।

मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन लोगों को जो तिजारत में नाप-तौल का काम करते हैं ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि नाप और तौल यह वो काम हैं जिनमें बेइन्साफ़ी करने की वजह से तुमसे पहले कई उम्मतें अल्लाह के अ़ज़ाब के ज़रिये तबाह हो चुकी हैं (तुम इसमें पूरी एहतियात से काम लो)। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

अफ़सरों, मुलाज़िमों, मज़दूरों का अपनी तयशुदा ड्यूटी और ज़िम्मेदारी में कोताही करना भी नाप-तौल में कमी करने के हुक्म में है

याद रहे कि नाप-तौल की कमी जिसको क़ुरआन में ततफ़ीफ़ कहा गया है सिर्फ़ डण्डी मारने और कम नापने के साथ मख़्सूस नहीं, बल्कि किसी के ज़िम्मे दूसरे का जो हक़ है उसमें कमी करना भी ततफ़ीफ़ में दाख़िल है जैसा कि मुवत्ता इमाम मालिक में हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि एक शख़्स को नमाज़ के अरकान में कमी करते हुए देखा तो फ़रमाया कि तूने ततफ़ीफ़ कर दी, यानी जो हक़ वाजिब था वह अदा नहीं किया। इसको नक़ल करके इमाम मालिक रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

لِكُلِّ شَيْءٍ وَفَاءٌ وَتَطْفِيْفٌ.

यानी हक़ का पूरा देना और कमी करना हर चीज़ में होता है, सिर्फ़ नाप-तौल में ही नहीं।

इससे मालूम हुआ कि जो मुलाज़िम अपनी ड्यूटी पूरी नहीं करता, वक़्त चुराता है, या काम में कोताही करता है, वह कोई वज़ीर व अमीर हो या मामूली मुलाज़िम, और वह कोई दफ़्तरी काम करने वाला हो या इल्मी और दीनी ख़िदमत, जो हक़ उसके ज़िम्मे है उसमें कोताही करे तो वह भी मुतफ़्फ़िफ़ीन (हक़ मारने और नाप-तौल में कमी करने) में दाख़िल है। इसी तरह मज़दूर जो अपनी मुक़र्ररा ख़िदमत में कोताही करे वह भी इसमें दाख़िल है।

इसके बाद फ़रमायाः

لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا.

"यानी हम किसी शख़्स को उसकी ताक़त से ज़्यादा किसी चीज़ का हुक्म नहीं देते।" यानी हदीस की रिवायतों में इसका यह मतलब बयान किया गया है कि जो शख़्स अपने इख़्तियार की हद तक नाप-तौल का पूरा-पूरा हक़ अदा करे तो अगर इसके बावजूद ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर कोई मामूली कमी-बेशी हो जाये तो वह माफ़ है, क्योंकि वह उसकी क़ुदरत व इख़्तियार से बाहर है। और तफ़सीरे मज़हरी में है कि इस जुमले का इज़ाफ़ा करने से इशारा इस तरफ़ है कि हक़ के अदा करने के वक़्त एहतियात इसमें है कि कुछ ज़्यादा दे दिया जाये, ताकि कमी का शुब्हा न रहे, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक ऐसे ही मौक़े पर वज़न करने वाले को हुक्म दिया किः

زِنْ وَارْجِعْ.

"यानी तौलो और झुकता हुका तौलो।"

(अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, सुवैद बिन कैस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से)

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आम आदत यही थी कि जिस किसी का कोई हक़ आपके ज़िम्मे होता तो उसके अदा करने के वक़्त उसके हक़ से ज़ायद अदा फ़रमाने को पसन्द फ़रमाते थे, और बुख़ारी की एक हदीस में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"अल्लाह तआला उस शख़्स पर रहमत करे जो बेचने के वक़्त भी नर्म हो कि हक़ से ज़्यादा दे और ख़रीदने के वक़्त भी नर्म हो कि हक़ से ज़्यादा न ले, बल्कि कुछ मामूली कमी भी हो तो राज़ी हो जाये।"

मगर यह हुक्म अख़्लाक़ी है कि देने में ज़्यादा दे और लेने में कम भी हो तो झगड़ा न करे, क़ानूनी चीज़ नहीं कि आदमी ऐसा करने पर मजबूर हो। इसी बात की तरफ़ इशारा करने के लिये क़ुरआन में यह इरशाद फ़रमाया कि हम किसी को उसकी ताक़त से ज़्यादा चीज़ का हुक्म नहीं देते। यानी दूसरे को उसके हक़ से ज़्यादा अदा करना और अपने हक़ में कमी पर राज़ी हो जाना कोई जबरी (लाज़िमी) हुक्म नहीं, क्योंकि आम लोगों को ऐसा करना आसान नहीं।

आठवाँ हुक्म अ़दल व इन्साफ़ है इसके ख़िलाफ़ करना हराम है

इरशाद फ़रमायाः

وَاِذَا قُلْتُمْ فَاعْدِلُوْا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى.

"यानी जब तुम बात कहो तो हक़ की कहो, अगरचे वह अपना रिश्तेदार ही हो।"

इस जगह किसी ख़ास बात का ज़िक्र नहीं, इसी लिये मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक यह हर क़िस्म की बात को शामिल है, चाहे वह बात किसी मामले की गवाही हो या हाकिम की तरफ़ से फ़ैसला या आपस में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की गुफ़्तगू, इन सब में क़ुरआन का इरशाद यह है कि हर जगह, हर हाल में बात करते हुए हक़ व इन्साफ़ का ख़्याल रहना चाहिये। किसी मुक़द्दमे की गवाही या फ़ैसले में हक़ व इन्साफ़ क़ायम रखने के मायने ज़ाहिर हैं कि गवाह को जो बात यक़ीनी तौर पर मालूम है वह अपनी तरफ़ से किसी लफ़्ज़ की कमी-बेशी किये बग़ैर जितना मालूम है साफ़-साफ़ कह दे, अपनी अटकल और गुमान को दख़ल न दे, और इसकी फ़िक्र न करे कि इससे किसको फ़ायदा पहुँचेगा और किसको नुक़सान। इसी तरह किसी मुक़द्दमे का फ़ैसला करना है तो गवाहों को शरई उसूल पर जाँचने के बाद जो कुछ उनकी शहादत (गवाही) से तथा दूसरी क़िस्म के इशारात से साबित हो उसके मुताबिक़ फ़ैसला करे, गवाही और फ़ैसला दोनों में न किसी की दोस्ती और मुहब्बत हक़ बात कहने से रुकावट हो, और न किसी की दुश्मनी और मुख़ालफ़त। इसी लिये इस जगह यह जुमला बढ़ाया गयाः

وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى.

यानी अगरचे वह आदमी जिसके मुक़द्दिमे की गवाही देना या फ़ैसला करना है वह तुम्हारा रिश्तेदार ही हो, तब भी हक़ व इन्साफ़ को न गवाही में हाथ से जाने दो और न फ़ैसले में।

इस आयत के मक़सद में झूठी गवाही और हक़ के ख़िलाफ़ फ़ैसले से रोकना है। झूठी गवाही के बारे में अबू दाऊद और इब्ने माजा ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद नक़ल फ़रमाया हैः

"झूठी गवाही शिर्क के बराबर है।" यह तीन मर्तबा फ़रमाया। और फिर यह आयत तिलावत फ़रमाईः

فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْاَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوْا قَوْلَ الزُّوْرِ. حُنَفَآءَ لِلّٰهِ غَيْرَ مُشْرِكِيْنَ بِهٖ.

"यानी बुत-परस्ती के गन्दे अक़ीदे से बचो और झूठ बोलने से, अल्लाह के साथ किसी को शरीक न बनाते हुए।"

इसी तरह हक़ के ख़िलाफ़ फ़ैसला करने के बारे में अबू दाऊद ने हज़रत बरीदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद नक़ल किया हैः

"क़ाज़ी (यानी मुक़द्दिमों का फ़ैसला करने वाले) तीन क़िस्म के हैं- उनमें से एक जन्नत में जायेगा और दो जहन्नम में। जिसने मामले की तहक़ीक़ शरीअ़त के मुवाफ़िक़ करके हक़ को

पहचाना फिर हक़ के मुताबिक़ फ़ैसला किया वह जन्नती है, और जिसने तहक़ीक़ करके हक़ बात को जान तो लिया, मगर जान-बूझकर फ़ैसला उसके ख़िलाफ़ किया वह दोज़ख़ी है। और इसी तरह वह क़ाज़ी जिसको इल्म न हो या तहक़ीक़ और ग़ौर-फ़िक्र में कमी की और जहालत (अज्ञानता) से कोई फ़ैसला दे दिया वह भी जहन्नम में जायेगा।"

क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों में इसी मज़मून को और भी ज़्यादा स्पष्ट और ताकीद के साथ बयान फ़रमाया गया है कि गवाही या फ़ैसले में किसी की दोस्ती, रिश्तेदारी और ताल्लुक़ का या दुश्मनी और मुख़ालफ़त का कोई असर न होना चाहिये। जैसे एक जगह इरशाद है:

وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِالْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ

"यानी हक़ बात अगरचे ख़ुद तुम्हारे ख़िलाफ़ हो या माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदारों के ख़िलाफ़ हो, उसके कहने में रुकावट न होनी चाहिये।"

इसी तरह एक दूसरी आयत में हुक्म है:

وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوْا.

"यानी किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इन्साफ़ के ख़िलाफ़ गवाही देने या फ़ैसला करने पर आमादा न कर दे।" और गवाही और फ़ैसले के अ़लावा आपस की गुफ़्तगुओं में हक़ व इन्साफ़ क़ायम रखने का मतलब यह है कि उसमें झूठ न बोले, किसी की ग़ीबत न करे, ऐसी बात न बोले जिससे दूसरों को तकलीफ़ पहुँचे, या किसी को जानी या माली नुक़सान पहुँचे।

नवाँ हुक्म अल्लाह के अ़हद को पूरा करना, यानी अ़हद तोड़ने का हराम होना

नवाँ हुक्म इस आयत में अल्लाह तआ़ला के अ़हद को पूरा करने और अ़हद तोड़ने से बचने का है। इरशाद फ़रमायाः

وَبِعَهْدِ اللّٰهِ اَوْفُوْا.

"यानी अल्लाह तआ़ला के अ़हद को पूरा करो।"

अल्लाह के अ़हद से मुराद वह अ़हद भी हो सकता है जो कायनात के पहले दिन में हर इनसान से लिया गया जिसमें सब इनसानों से कहा गया था "अलस्तु बि-रब्बिकुम" "क्या मैं तुम्हारा परवर्दिगार नहीं हूँ।" सब ने जवाब दिया "बला" "यानी बेशक आप हमारे रब और परवर्दिगार हैं।"

इस अ़हद का तक़ाज़ा यही है कि परवर्दिगार के किसी हुक्म की नाफ़रमानी न करें। जिन कामों के करने का हुक्म दिया है उनको सारे कामों से मुक़द्दम और अहम जानें, और जिन कामों से मना फ़रमाया है उनके पास भी न जायें, और उनके शुब्हों से भी बचते रहें। ख़ुलासा इस अ़हद का यह है कि अल्लाह तआ़ला की मुकम्मल इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) करें।

और यह भी हो सकता है कि वे ख़ास-ख़ास अ़हद जिनका ज़िक्र क़ुरआन के विभिन्न मौक़ों में फ़रमाया गया है मुराद हों, और उन्हीं में से ये तीन आयतें भी हैं जिनकी तफ़सीर आप देख रहे हैं (जिनमें दस अहकाम ताकीद के साथ बयान फ़रमाये गये हैं)।

उलेमा ने फ़रमाया कि इस अ़हद में नज़्र और मन्नत का पूरा करना भी दाख़िल है जो एक इनसान अपनी तरफ़ से अल्लाह तआ़ला के साथ करता है, कि फ़ुलाँ काम करूँगा या नहीं करूँगा (क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में इसको स्पष्ट रूप से भी ज़िक्र फ़रमाया है):

يُوْفُوْنَ بِالنَّذْرِ.

"यानी अल्लाह के नेक बन्दे अपनी मन्नतों को पूरा किया करते हैं।"

(खुलासा यह है कि यह नवाँ हुक्म शुमार में तो नवाँ हुक्म है, मगर हक़ीक़त के एतिबार से शरीअ़त के वाजिब व ज़रूरी अहकाम के करने और मना की गयी चीज़ों से रुकने और बचने को शामिल है)।

इस दूसरी आयत के आख़िर में फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ.

"यानी इन कामों का तुमको अल्लाह तआ़ला ने ताकीदी हुक्म दिया है ताकि तुम याद रखो।"

तीसरी आयत में दसवाँ हुक्म बयान किया गया है। फ़रमायाः

وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ ۚ وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ.

"यानी यह दीने मुहम्मदी मेरा सीधा रास्ता है, सो इस राह पर चलो, और दूसरी राहों पर मत चलो, कि वो राहें तुमको अल्लाह की राह से जुदा (अलग और दूर) कर देंगी।"

इसमें लफ़्ज़ **हाज़ा** (यह) का इशारा दीने इस्लाम या क़ुरआन की तरफ़ है, और यह भी हो सकता है कि सूरः अन्आ़म की तरफ़ इशारा हो, क्योंकि इसमें भी इस्लाम के पूरे उसूल (बुनियादी अहकाम) तौहीद, रिसालत और शरई अहकाम के उसूल बयान हुए हैं (और **मुस्तक़ीम** दीन के उस रास्ते की सिफ़त है जिससे इस तरफ़ इशारा कर दिया गया है कि दीने इस्लाम के लिये मुस्तक़ीम होना लाज़िमी वस्फ़ है इसके बाद फ़रमाया "फ़त्तबिऊहु" यानी जब यह मालूम हो गया कि दीने इस्लाम मेरा रास्ता है और वही मुस्तक़ीम और सीधा रास्ता है तो अब मन्ज़िले मक़सूद का सीधा रास्ता हाथ आ गया, इसलिये सिर्फ़ इसी रास्ते पर चलो)।

फिर फ़रमायाः

وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَبِيْلِهٖ.

"सुबुल" सबील की जमा (बहुवचन) है, इसके मायने भी रास्ते के हैं। मुराद यह है कि अल्लाह तआ़ला तक पहुँचने और उसकी रज़ा हासिल करने का असली रास्ता तो एक ही है, लेकिन दुनिया में लोगों ने अपने-अपने ख़्यालात से अनेक और विभिन्न रास्ते बना रखे हैं, तुम उन रास्तों में से किसी रास्ते पर न चलो, क्योंकि ये रास्ते हक़ीक़त में ख़ुदा तआ़ला तक पहुँचने

के नहीं हैं, इसलिये जो इन रास्तों पर चलेगा वह अल्लाह के रास्ते से दूर जा पड़ेगा।

तफ़सीरे मज़हरी में फ़रमाया है कि क़ुरआने करीम नाज़िल करने और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के भेजने का मन्शा तो यह है कि लोग अपने ख़्यालात और अपने इरादों और तजवीज़ों को क़ुरआन व सुन्नत के ताबे करें, और अपनी ज़िन्दगियों को इनके साँचे में ढालें, लेकिन हो यह रहा है कि लोगों ने क़ुरआन व सुन्नत को अपने ख़्यालात और तजवीज़ों के साँचे में ढालने की ठान ली, जो आयत या हदीस अपने मन्शा के ख़िलाफ़ नज़र आई उसको तावीलें (उल्टा-सीधा मतलब बयान) करके अपनी इच्छा के मुताबिक़ बना ली। यहीं से दूसरी गुमराह करने वाली राहें पैदा होती हैं, जो बिदअ़तों और शुब्हात की राहें हैं, उन्हीं से बचने के लिये इस आयत में हिदायत की गयी है।

मुस्नद दारमी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत ने नक़ल किया है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक सीधा ख़त (लकीर) खींचा और फ़रमाया कि यह अल्लाह का रास्ता है, फिर उसके दायें-बायें और ख़त खींचे और फ़रमाया कि ये सुबुल हैं (यानी वो रास्ते जिन पर चलने से इस आयत में मना फ़रमाया है) और फ़रमाया कि इनमें से हर रास्ते पर एक शैतान मुसल्लत है, जो लोगों को सीधे रास्ते से हटाकर उस तरफ़ बुलाता है और उसके बाद आपने दलील के तौर पर इस आयत को तिलावत फ़रमाया।

आयत के आख़िर में फिर इरशाद फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने इसका तुमको ताकीदी हुक्म दिया है ताकि तुम एहतियात रखो।

तीनों आयतों की तफ़सीर और इनमें बयान किये हुए दस बुनियादी मुहर्रमात (हराम होने वाली बातों) का बयान पूरा हो गया, आख़िर में क़ुरआन करीम के इस अन्दाज़े बयान पर भी एक नज़र डालिये कि इस जगह दस अहकाम बयान किये थे, उनको आजकल की क़ानून की किताबों की तरह दस धाराओं में नहीं लिख दिया, बल्कि पहले पाँच हुक्म बयान करने के बाद फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ وَصّٰكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ.

और फिर और चार हुक्म बयान फ़रमाने के बाद फिर इसी जुमले को दोबारा इस फ़र्क़ के साथ ज़िक्र किया कि "ताक़िलून" के बजाय "तज़क्करून" फ़रमाया और फिर आख़िरी हुक्म एक मुस्तक़िल आयत में बयान फ़रमाकर फिर इसी जुमले को इस फ़र्क़ के साथ दोहराया कि "तज़क्करून" के बजाय "तत्तक़ून" फ़रमाया।

क़ुरआने करीम के इस हकीमाना अन्दाज़े बयान में बहुत सी हिक्मतें हैं।

अव्वल यह कि क़ुरआने करीम दुनिया के आ़म क़ानूनों की तरह महज़ हाकिमाना क़ानून नहीं, बल्कि मुरब्बियाना क़ानून है। इसी लिये हर क़ानून के साथ उसको आसान करने की तदबीर भी बतलाई जाती है, और अल्लाह तआ़ला की पहचान और आख़िरत की फ़िक्र ही वह

चीज़ है जो इनसान को क़ानून की पाबन्दी पर छुपे या खुले में मजबूर करने वाली है। इसी लिये तीनों आयतों के आख़िर में ऐसे कलिमात लाये गये जिनसे इनसान का रुख़ इस फ़ानी दुनिया से फिरकर अल्लाह तआ़ला और आख़िरत की तरफ़ हो जाये।

पहली आयत में जो पाँच अहकाम बयान किये गये हैं: 1. शिर्क से बचना। 2. माँ-बाप की नाफ़रमानी से बचना। 3. औलाद के क़त्ल करने से बचना। 4. बेहयाई के कामों से बचना। 5. किसी का नाहक़ ख़ून करने से बचना। इनके आख़िर में तो लफ़्ज़ ''ताक़िलून'' इस्तेमाल फ़रमाया, क्योंकि इस्लाम आने से पहले ज़माने के लोग इन चीज़ों को कोई ऐब ही न जानते थे, इसलिये इशारा किया गया कि बाप-दादा की चलाई हुई रस्मों और ख़्यालों को छोड़कर अ़क्ल से काम लो।

दूसरी आयत में चार अहकाम बयान हुए यानी 1. यतीम के माल को नाहक़ न खाना। 2. नाप-तौल में कमी न करना। 3. बात कहने में हक़ और सच्चाई का लिहाज़ रखना। 4. अल्लाह के अ़हद को पूरा करना।

ये चीज़ें ऐसी हैं कि इनके ज़रूरी होने को तो ये जाहिल भी जानते थे, और इनमें कुछ लोग अ़मल भी करते थे, मगर अक्सर इनमें ग़फ़लत बरती जाती थी, और ग़फ़लत का इलाज है ''तज़किरा'' यानी ख़ुदा व आख़िरत की याद, इसलिये इस आयत के आख़िर में लफ़्ज़ ''तज़क्करून'' फ़रमाया।

तीसरी आयत में सिराते मुस्तक़ीम को इख़्तियार करने और उसके ख़िलाफ़ दूसरी राहों से बचने की हिदायत है, और सिर्फ़ ख़ौफ़े ख़ुदा ही ऐसी चीज़ है जो इनसान को अपने ख़्यालात व इच्छाओं से रोकने का सही ज़रिया हो सकती है। इसलिये इसके आख़िर में ''लअ़ल्लकुम तत्तक़ून'' इरशाद फ़रमाया।

और तीनों जगह वसीयत का लफ़्ज़ लाया गया जो ताकीदी हुक्म को कहा जाता है, इसी लिये कुछ सहाबा किराम ने फ़रमाया कि जो शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मोहर किया हुआ वसीयत नामा देखना चाहे वह ये तीन आयतें पढ़ ले।

ثُمَّ اٰتَیْنَا مُوْسَی الْکِتٰبَ تَمَامًا عَلَی الَّذِیْٓ اَحْسَنَ وَ
تَفْصِیْلًا لِّکُلِّ شَیْءٍ وَّھُدًی وَّرَحْمَۃً لَّعَلَّھُمْ بِلِقَآءِ رَبِّھِمْ یُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۵۴﴾ وَھٰذَا کِتٰبٌ اَنْزَلْنٰہُ مُبٰرَکٌ
فَاتَّبِعُوْہُ وَاتَّقُوْا لَعَلَّکُمْ تُرْحَمُوْنَ ﴿۱۵۵﴾ اَنْ تَقُوْلُوْٓا اِنَّمَآ اُنْزِلَ الْکِتٰبُ عَلٰی طَآئِفَتَیْنِ مِنْ قَبْلِنَا ۪
وَاِنْ کُنَّا عَنْ دِرَاسَتِھِمْ لَغٰفِلِیْنَ ﴿۱۵۶﴾ اَوْ تَقُوْلُوْا لَوْ اَنَّآ اُنْزِلَ عَلَیْنَا الْکِتٰبُ لَکُنَّآ اَھْدٰی مِنْھُمْ ۚ
فَقَدْ جَآءَکُمْ بَیِّنَۃٌ مِّنْ رَّبِّکُمْ وَھُدًی وَّرَحْمَۃٌ ۚ فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ کَذَّبَ بِاٰیٰتِ اللّٰہِ وَصَدَفَ
عَنْھَا ؕ سَنَجْزِی الَّذِیْنَ یَصْدِفُوْنَ عَنْ اٰیٰتِنَا سُوْٓءَ الْعَذَابِ بِمَا کَانُوْا یَصْدِفُوْنَ ﴿۱۵۷﴾

ع ۱۹

सुम्-म आतैना मूसल्-किता-ब तमामन् अ़लल्लज़ी अह्स-न व तफ़्सीलल्-लिकुल्लि शैइंव्-व रह्म-तल् लअ़ल्लहुम् बिलिक़ा-इ रब्बिहिम् युअ्मिनून (154) ❁

फिर दी हमने मूसा को किताब वास्ते पूरा करने नेमत के नेक काम वालों पर, और वास्ते हर चीज़ की तफ़सील के, और हिदायत और रहमत के लिये ताकि वे लोग अपने रब के मिलने का यक़ीन करें। (154) ❁

व हाज़ा किताबुन् अन्ज़ल्नाहु मुबारकुन् फ़त्तबिअ़ूहु वत्तक़ू लअ़ल्लकुम् तुर्हमून (155) अन् तक़ूलू इन्नमा उन्ज़िलल्-किताबु अ़ला ताइ-फ़तैनि मिन् क़ब्लिना व इन् कुन्ना अ़न् दिरा-सतिहिम् लग़ाफ़िलीन (156) औ तक़ूलू लौ अन्ना उन्ज़ि-ल अ़लैनल्-किताबु लकुन्ना अह्दा मिन्हुम् फ़-क़द् जाअकुम् बय्यि-नतुम् मिर्रब्बिकुम् व हुदंव्-व रह्मतुन् फ़-मन् अज़्लमु मिम्मन् कज़्ज़-ब बिआयातिल्लाहि व स-द-फ़ अ़न्हा, स-नज्ज़िल्लज़ी-न यस्दिफ़ू-न अ़न् आयातिना सूअल्-अ़ज़ाबि बिमा कानू यस्दिफ़ून (157)

और एक यह किताब है कि हमने उतारी बरकत वाली सो इस पर चलो और डरते रहो ताकि तुम पर रहमत हो। (155) इस वास्ते कि कभी तुम कहने लगो कि किताब जो उतरी थी सो उन्हीं दो फ़िर्क़ों पर जो हमसे पहले थे और हम को तो उनके पढ़ने-पढ़ाने की ख़बर ही न थी। (156) या कहने लगो कि अगर हम पर उतरती किताब तो हम तो राह पर चलते उनसे बेहतर, सो आ चुकी तुम्हारे पास हुज्जत तुम्हारे रब की तरफ़ से, और हिदायत और रहमत, अब उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन जो झुठलाये अल्लाह की आयतों को और उनसे कतराये, हम सज़ा देंगे उनको जो हमारी आयतों से कतराते हैं बुरा अ़ज़ाब बदले में उस कतराने के। (157)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

फिर (शिर्क के बातिल होने के मज़मून के बाद हम नुबुव्वत के मसले में कलाम करते हैं कि हमने सिर्फ़ आपको अकेला नबी नहीं बनाया, जिस पर ये लोग इस क़द्र शोर व हंगामा मचा रहे हैं, बल्कि आप से पहले) हमने मूसा (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) किताब (तौरात) दी थी, जिससे अ़मल करने वालों पर (हमारी) अच्छी तरह नेमत पूरी हो (कि अ़मल करके पूरा

सवाब हासिल करें) और सब (ज़रूरी) अहकाम की (उसके ज़रिये से) तफ़सील हो जाए, और (उसके ज़रिये से सब को) रहनुमाई हो और (मानने वालों के लिये) रहमत हो। (हमने इन गुणों वाली किताब इसलिये दी) ताकि वे लोग (यानी बनी इस्राईल) अपने रब की मुलाक़ात होने पर यक़ीन लाएँ (और मुलाक़ात के यक़ीन से सब अहकाम पर अमल करें)। और (जब उसका और उसके पूरक इंजील का दौर ख़त्म हो चुका उसके बाद) यह (क़ुरआन मजीद) एक किताब है जिसको हमने (आपके पास) भेजा, बड़ी ख़ैर व बरकत वाली, सो (अब) इसकी पैरवी करो और (इसके ख़िलाफ़ करने के बारे में ख़ुदा से) डरो, ताकि तुम पर (अल्लाह तआ़ला की) रहमत हो। (और हमने यह क़ुरआन इसलिये भी नाज़िल किया कि अगर यह नाज़िल न होती तो) कभी तुम लोग (क़ियामत में कुफ़्र व शिर्क पर अ़ज़ाब होने के वक़्त) यूँ कहने लगते कि (आसमानी) किताब तो सिर्फ़ हमसे पहले जो दो फ़िर्क़े (यहूदी व ईसाई) थे उन पर नाज़िल हुई थी और हम उनके पढ़ने-पढ़ाने से बिल्कुल बेख़बर थे (इसलिये हमको तौहीद का पता ही न चला) या (और पहले मोमिनों को सवाब मिलने के वक़्त) यूँ कहते कि अगर हम पर कोई किताब नाज़िल होती तो हम इन (पहले मोमिनों) से भी ज़्यादा राह पर होते (और अ़क़ीदों व आमाल में इनसे ज़्यादा कमाल हासिल करके सवाब के हक़दार होते) सो (याद रखो कि) अब (तुम्हारे पास कोई उ़ज़्र नहीं) तुम्हारे पास (भी) तुम्हारे रब के पास से एक किताब (जिसके अहकाम) स्पष्ट (हैं) और (जो) रहनुमाई का ज़रिया (है) और (ख़ुदा की) रहमत (है) आ चुकी है। सो (ऐसी काफ़ी शाफ़ी किताब आने के बाद) उस शख़्स से ज़्यादा ज़ालिम कौन होगा जो हमारी इन आयतों को झूठा बतलाए (और दूसरों को भी) इससे रोके? हम अभी (यानी आख़िरत में) उन लोगों को जो कि हमारी आयतों से रोकते हैं उनके इस रोकने के सबब सख़्त सज़ा देंगे (यह सख़्ती इस रोकने से बढ़ी वरना सिर्फ़ झुठलाना भी सज़ा का सबब है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

ग़फ़लत और लापरवाही की वजह यह नहीं कि तौरात व इंजील अ़रब वालों की भाषा में न थी, क्योंकि तर्जुमे के ज़रिये से मज़ामीन की इत्तिला मुम्किन है, बल्कि ऐसा ही है। असल वजह यह है कि अहले किताब (यहूदियों व ईसाईयों) ने अ़रब वालों की तालीम व तौहीद का कभी एहतिमाम नहीं किया, और इत्तिफ़ाक़न कान में कोई मज़मून पड़ जाना आदतन सचेत होने में कम असर रखता है, अगरचे इस क़द्र सचेत होने और चौंकने पर उसकी तलब और ग़ौर-फ़िक्र करना वाजिब हो जाता है, और इसी बिना पर तौहीद के छोड़ने पर अ़ज़ाब मुम्किन था। और इससे यह लाज़िम नहीं आता कि हज़रत मूसा और हज़रत ईसा को उमूमी तौर पर सब के लिये नबी बनाकर भेजा गया था, क्योंकि यह हमारे नबी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ तमाम उसूल व अहकाम के मजमूए के एतिबार से ख़ास है, वरना उसूल (बुनियादी बातों और एतिक़ादों) में तमाम नबियों की पैरवी सारी मख़्लूक़ पर वाजिब है। पस इस बिना पर अ़ज़ाब सही होता, लेकिन यह उ़ज़्र सरसरी नज़र में पेश किया जा सकता था, अब इसकी भी गुंजाईश न

रही और अल्लाह की हुज्जत पूरी हो गयी।

और दूसरा क़ौलः

لَوْ اَنَّـآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا الْكِتٰبُ لَكُنَّـآ اَهْدٰى مِنْهُمْ

के मुताल्लिक़ एक सवाल व जवाब उन लोगों के बारे में सूरः मायदा के तीसरे रुकूअ़ के आख़िर में गुज़र चुका है जो हज़रत ईसा और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बीच के ज़माने के हैं, जिस ज़माने में कि कोई नबी नहीं आया, कि ये लोग बख़्शे जायेंगे या नहीं। इसकी तफ़सील वहाँ देख ली जाये।

هَلْ يَنْظُرُوْنَ اِلَّآ اَنْ تَاْتِيَهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْ يَاْتِىَ رَبُّكَ اَوْ يَاْتِىَ
بَعْضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ ۗ يَوْمَ يَاْتِىْ بَعْضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ لَا يَنْفَعُ نَفْسًا اِيْمَانُهَا لَمْ تَكُنْ اٰمَنَتْ مِنْ قَبْلُ
اَوْ كَسَبَتْ فِىْٓ اِيْمَانِهَا خَيْرًا ۗ قُلِ انْتَظِرُوْٓا اِنَّا مُنْتَظِرُوْنَ ۝

हल् यन्ज़ुरू-न इल्ला अन् तअ्ति-यहुमुल्मलाइ-कतु औ यअ्ति-य रब्बु-क औ यअ्ति-य बअ्ज़ु आयाति रब्बि-क, यौ-म यअ्ती बअ्ज़ु आयाति रब्बि-क ला यन्फ़अ़ु नफ़्सन् ईमानुहा लम् तकुन् आम-नत् मिन् क़ब्लु औ क-सबत् फ़ी ईमानिहा ख़ैरन्, क़ुलिन्तज़िरू इन्ना मुन्तज़िरून (158)	काहे की राह देखते हैं लोग मगर यही कि उन पर आयें फ़रिश्ते या आये तेरा रब या आये कोई निशानी तेरे रब की, जिस दिन आयेगी निशानी तेरे रब की, काम न आयेगा किसी के उसका ईमान लाना, जो कि पहले से ईमान न लाया था, या अपने ईमान में कुछ नेकी न की थी। तू कह दे कि तुम राह देखो हम भी राह देखते हैं। (158)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ये लोग (जो कि किताब, खुली निशानियों के नाज़िल होने और हक़ के स्पष्ट हो जाने के बाद भी ईमान नहीं लाते, अपने ईमान लाने के लिये) सिर्फ़ इस बात के मुन्तज़िर (मालूम होते) हैं (यानी ऐसा रुके हुए हैं जैसे कोई इन्तिज़ार कर रहा हो) कि इनके पास फ़रिश्ते आएँ या इनके पास आपका रब आए (जैसा कि क़ियामत में हिसाब के वक़्त वाक़े होगा) या आपके रब की कोई बड़ी निशानी (जिनमें से क़ियामत भी है) आए (मुराद इस बड़ी निशानी से सूरज का पश्चिम से निकलना है। मतलब यह हुआ कि क्या ईमान लाने में क़ियामत के आने या उसके क़रीब होने का इन्तिज़ार है? सो उसके बारे में सुन रखें कि) जिस दिन आपके रब की यह

(ज़िक्र हुई) बड़ी निशानी आ पहुँचेगी (उस दिन) किसी ऐसे शख़्स का ईमान उसके काम न आएगा जो पहले से ईमान नहीं रखता (बल्कि उसी दिन ईमान लाया हो), या (ईमान तो पहले से भी रखता हो लेकिन) उसने अपने ईमान में कोई नेक अ़मल न किया हो (बल्कि बुरे आमाल और गुनाहों में मुब्तला हो, और उस दिन उनसे तौबा करके नेक आमाल शुरू करे, तो उसकी तौबा क़ुबूल न होगी। और इससे पहले अगर गुनाहों से तौबा करता तो मोमिन होने की बरकत से तौबा क़ुबूल हो जाती, मालूम हुआ कि तौबा का क़ुबूल होना ईमान की बरकतों और फ़ायदों में से है, उस वक़्त ईमान ने यह ख़ास नफ़ा न दिया, और जब क़ियामत की निशानी ईमान क़ुबूल करने और तौबा करने से रुकावट और बाधा हो गयी तो ख़ास क़ियामत तो और भी ज़्यादा इन चीज़ों से रुकावट और बाधा होगी, फिर इन्तिज़ार काहे का। और अगर इस धमकाने और डाँट पर भी ईमान न लायें तो) आप (और अतिरिक्त डाँट-डपट के तौर पर) फ़रमा दीजिए कि (ख़ैर! बेहतर) तुम (इन चीज़ों के) मुन्तज़िर रहो (और मुसलमान नहीं होते तो मत होओ), हम भी (इन चीज़ों के) मुन्तज़िर हैं (उस वक़्त तुम पर मुसीबत पड़ेगी, और हम ईमान वाले इन्शा-अल्लाह तआ़ला निजात पाने वाले होंगे)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः अन्आ़म का अक्सर हिस्सा मक्का वालों और अ़रब के मुश्रिकों के अ़क़ीदों और आमाल की इस्लाह (सुधार) और उनके शुब्हात व सवालात के जवाब में नाज़िल हुआ है।

इस पूरी सूरत और ख़ासकर पिछली आयतों में मक्का और अ़रब के बाशिन्दों पर वाज़ेह कर दिया गया कि तुम रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मोजिज़े और निशानियाँ देख चुके, पिछली किताबों और पहले अम्बिया की भविष्यवाणियाँ आपके बारे में सुन चुके, फिर एक बिल्कुल बिना पढ़े-लिखे की ज़बान से क़ुरआन की स्पष्ट आयतें सुन चुके, जो एक मुस्तक़िल मोजिज़ा बनकर आया, अब हक़ व सच्चाई की राहें तुम्हारे सामने खुल चुकीं और ख़ुदा तआ़ला की हुज्जत तुम पर पूरी हो चुकी, अब ईमान लाने में किस चीज़ का इन्तिज़ार है।

इस मज़मून को इस ज़िक्र हुई आयत में बहुत ही असरदार अन्दाज़ में इस तरह बयान फ़रमायाः

هَلْ يَنْظُرُوْنَ اِلَّآ اَنْ تَاْتِيَهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْيَاْتِيَ رَبُّكَ اَوْيَاْتِيَ بَعْضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ.

"यानी ये लोग क्या ईमान लाने में इसका इन्तिज़ार कर रहे हैं कि मौत के फ़रिश्ते इनके पास पहुँच जायें, या इसका इन्तिज़ार कर रहे हैं कि क़ियामत की कुछ आख़िरी निशानियाँ देख लें। रब्बे करीम का मैदाने क़ियामत में फ़ैसले के लिये तशरीफ़ फ़रमा होना क़ुरआन मजीद की कई आयतों में बयान हुआ है। सूरः ब-क़रह में इसी मज़मून की आयत इस तरह आई हैः

هَلْ يَنْظُرُوْنَ اِلَّآ اَنْ يَّاْتِيَهُمُ اللّٰهُ فِيْ ظُلَلٍ مِّنَ الْغَمَامِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَقُضِيَ الْاَمْرُ.

"यानी क्या ये लोग इसका इन्तिज़ार कर रहे हैं कि अल्लाह तआ़ला बादलों के साये में

इनके पास आ जाये और फ़रिश्ते आ जायें और लोगों के लिये जन्नत व दोज़ख़ का जो फ़ैसला होना है वह हो जाये।"

अल्लाह तआ़ला का मैदाने क़ियामत में तशरीफ़ फ़रमा होना किस शान और किस कैफ़ियत के साथ होगा इसका इनसानी अ़क्ल इहाता नहीं कर सकती, इसलिये सहाबा-ए-किराम और उम्मत के बुज़ुर्गों का मस्लक इस क़िस्म की आयतों के मुताल्लिक़ यह है कि जो क़ुरआन में ज़िक्र किया गया है उस पर ईमान लाया जाये और यक़ीन किया जाये और उसकी कैफ़ियतों को अल्लाह के इल्म के हवाले किया जाये। मसलन इस आयत में यह यक़ीन किया जाये कि अल्लाह तआ़ला मैदाने क़ियामत में जज़ा व सज़ा के फ़ैसले लिये तशरीफ़ फ़रमा होंगे, और इसमें बहस और फ़िक्र न की जाये कि किस कैफ़ियत, किस अन्दाज़ और किस दिशा में होंगे।

इस आयत में आगे इरशाद फ़रमायाः

يَوْمَ يَاْتِیْ بَعْضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ لَا يَنْفَعُ نَفْسًا اِيْمَانُهَا لَمْ تَكُنْ اٰمَنَتْ مِنْ قَبْلُ اَوْ كَسَبَتْ فِیْٓ اِيْمَانِهَا خَيْرًا۔

इसमें सचेत किया और चौंकाया है कि अल्लाह तआ़ला की कुछ निशानियाँ सामने आ जाने के बाद तौबा का दरवाज़ा बन्द हो जायेगा। जो शख़्स उससे पहले ईमान नहीं लाया अब ईमान लायेगा तो क़ुबूल नहीं होगा, और जो शख़्स ईमान तो ला चुका था मगर नेक अ़मल नहीं किये थे वह अब तौबा करके आईन्दा नेक अ़मल का इरादा करेगा तो उसकी भी तौबा क़ुबूल न होगी। ख़ुलासा यह है कि काफ़िर अपने कुफ़्र से या गुनाहगार अपने गुनाह व नाफ़रमानी से अगर उस वक़्त तौबा करना चाहेगा तो वह तौबा क़ुबूल न होगी।

सबब यह है कि ईमान और तौबा सिर्फ़ उस वक़्त तक क़ुबूल हो सकती है जब तक वह इनसान के इख़्तियार में है, और जब अल्लाह के अ़ज़ाब का और आख़िरत की हक़ीक़तों का सामना हो गया तो हर इनसान ईमान लाने में और गुनाह से बाज़ आने पर ख़ुद-बख़ुद मजबूर हो गया, मजबूरी का ईमान और तौबा क़ाबिले क़ुबूल नहीं।

क़ुरआन मजीद की बेशुमार आयतों में बयान हुआ है कि दोज़ख़ वाले दोज़ख़ में पहुँचकर फ़रियाद करेंगे, और बड़े बड़े वायदे करेंगे कि अगर हमें अब दुनिया में दोबारा लौटा दिया जाये तो हम ईमान और नेक अ़मल के सिवा कुछ न करेंगे। मगर सब का जवाब यही होगा कि ईमान व अ़मल का वक़्त ख़त्म हो चुका और अब जो कुछ कह रहे हो मजबूर होकर कह रहे हो, इसका एतिबार नहीं।

इसी आयत की तफ़सीर में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद मन्क़ूल है कि जिस वक़्त क़ियामत की आख़िरी निशानियों में से यह निशानी ज़ाहिर होगी कि सूरज पूरब के बजाय पश्चिम की ओर से निकलेगा तो उसको देखते ही सारे जहान के काफ़िर ईमान का कलिमा पढ़ने लगेंगे और सारे नाफ़रमान फ़रमाँबरदार बन जायेंगे, लेकिन उस वक़्त का ईमान और तौबा क़ाबिले क़ुबूल न होगा। (तफ़सीरे बग़वी, हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की सनद से)

इस आयत में इतनी बात तो क़ुरआनी वज़ाहत से मालूम हो गयी कि कुछ निशानियाँ ऐसी ज़ाहिर होंगी जिनके बाद तौबा का दरवाज़ा बन्द हो जायेगा, किसी काफ़िर या फ़ासिक़ (बदकार

व गुनाहगार) की तौबा क़ुबूल न होगी, लेकिन क़ुरआने करीम ने इसकी वज़ाहत नहीं फ़रमाई कि वह कौनसी निशानी है।

सही बुख़ारी में इसी आयत की तफ़सीर में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से यह हदीस नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया किः

"क़ियामत उस वक़्त तक क़ायम न होगी जब तक यह वाक़िआ़ पेश न आ जाये कि सूरज पश्चिम की तरफ़ से निकले। जब लोग यह निशानी देखेंगे तो सब ईमान ले आयेंगे, यही वह वक़्त होगा जिसके लिये क़ुरआन में यह इरशाद है कि उस वक़्त किसी नफ़्स को ईमान लाना नफ़ा नहीं देगा।"

इसकी तफ़सील सही मुस्लिम में हज़रत हुज़ैफ़ा इब्ने उसैद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से इस तरह नक़ल की गयी है कि एक मर्तबा सहाबा किराम क़ियामत की निशानियों का तज़किरा आपस में कर रहे थे, हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये, उस वक़्त आपने फ़रमाया कि क़ियामत उस वक़्त तक क़ायम न होगी जब तक तुम दस निशानियाँ न देख लो-

1. सूरज का पश्चिम की तरफ़ से निकलना। 2. एक ख़ास क़िस्म का धुआँ। 3. दाब्बतुल-अर्ज़ (ज़मीन से निकलने वाला एक अजीब जानवर)। 4. याजूज माजूज का निकलना। 5. ईसा अ़लैहिस्सलाम का आसमान से उतरना। 6. दज्जाल का निकलना। 7, 8, 9. तीन जगहों पर ज़मीन का धंस जाना- एक पूरब में, एक पश्चिम में, एक अ़रब के इलाक़े में। 10. एक आग जो अ़दन के क़अ़र (गहरे हिस्से) से निकलेगी और लोगों को आगे-आगे हंका कर ले चलेगी।

और मुस्नद अहमद में हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- इन निशानियों में सबसे पहले पश्चिम की तरफ़ से सूरज का निकलना और दाब्बुल-अर्ज़ (ज़मीन से एक अ़जीब जानवर) का निकलना सामने आयेगा।

इमाम क़ुर्तुबी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने तज़किरे में और हाफ़िज़ इब्ने हजर ने शरह बुख़ारी में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से यह भी नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- इस वाक़िए यानी पश्चिम की तरफ़ से सूरज निकलने के बाद एक सौ बीस साल तक दुनिया क़ायम रहेगी। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इस तफ़सील के बाद यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम जब नाज़िल होंगे तो सही रिवायतों के अनुसार आप लोगों को ईमान की दावत देंगे और लोग ईमान क़ुबूल करेंगे, और पूरी दुनिया में इस्लामी निज़ाम (क़ानून) राईज होगा। ज़ाहिर है कि अगर उस वक़्त का ईमान मक़बूल न हो तो यह दावत और लोगों का इस्लाम में दाख़िल होना सब ग़लत हो जाता है।

तफ़सीर रूहुल-मआ़नी में तो इसका यह जवाब इख़्तियार किया है कि पश्चिम की तरफ़ से सूरज निकलने का वाक़िआ़ हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम के तशरीफ़ लाने के काफ़ी ज़माने के बाद में होगा, और उसी वक़्त तौबा का दरवाज़ा बन्द होगा।

और अ़ल्लामा बिल्क़ीनी रह. वग़ैरह ने फ़रमाया कि यह बात भी असंभव नहीं है कि ईमान और तौबा क़ुबूल न होने का यह हुक्म जो सूरज के पश्चिम की तरफ़ से निकलने के वक़्त होगा आख़िर ज़माने तक बाक़ी न रहे, बल्कि कुछ अ़रसे के बाद यह हुक्म बदल जाये और ईमान व तौबा क़ुबूल होने लगे। (रूहुल-मआ़नी) वल्लाहु आलम

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि ज़िक्र हुई आयत में अगरचे इसकी वज़ाहत नहीं की गयी कि जिस निशानी के ज़ाहिर होने के बाद तौबा क़ुबूल न होगी वह कौनसी निशानी है, मगर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बयान से स्पष्ट हो गया कि इससे मुराद सूरज का पश्चिम की ओर से निकलना है।

और क़ुरआने करीम ने ख़ुद क्यों इसकी वज़ाहत न कर दी? तफ़सीर बहरे मुहीत में है कि इस जगह क़ुरआन का बात को ग़ैर-वाज़ेह (अस्पष्ट) रखना ही ग़ाफ़िल इनसान को चौंकाने में ज़्यादा मुफ़ीद है ताकि उसको हर नये पेश आने वाले वाक़िए से इस पर तंबीह होती रहे और तौबा में जल्दी करे।

इसके अ़लावा इस अस्पष्टता और संक्षिप्तता से एक और फ़ायदा यह भी है कि इस पर तंबीह हो जाये कि जिस तरह पूरे आ़लम के लिये पश्चिम से सूरज के निकलने पर तौबा का दरवाज़ा बन्द हो जायेगा इसी तरह इसका एक नमूना हर इनसान के लिये व्यक्तिगत तौर पर तौबा के बन्द हो जाने का उसकी मौत के वक़्त पेश आता है।

क़ुरआने करीम ने एक दूसरी आयत में इसको वाज़ेह तौर पर भी बयान फ़रमा दिया है:

وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ حَتّٰىٓ اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنِّيْ تُبْتُ الْئٰنَ.

"यानी उन लोगों की तौबा क़ुबूल नहीं होती जो गुनाह करते रहते हैं, यहाँ तक कि जब उनमें से किसी की मौत आ जाये तो कहता है कि मैं अब तौबा करता हूँ।"

और इसी के ख़ुलासे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

اِنَّ تَوْبَةَ الْعَبْدِ تُقْبَلُ مَالَمْ يُغَرْغِرْ.

"यानी बन्दे की तौबा उस वक़्त तक क़ुबूल होती रहती है जब तक उसकी रूह हलक़ में आकर ग़रग़रा-ए-मौत की सूरत पैदा न हो जाये।"

इससे मालूम हुआ कि रूह निकलने के वक़्त जब साँस आख़िरी हो उस वक़्त भी चूँकि मौत के फ़रिश्ते सामने आ जाते हैं, उस वक़्त भी तौबा क़ुबूल नहीं होती। और यह भी ज़ाहिर है कि यह सूरतेहाल भी अल्लाह की तरफ़ से एक अहम निशानी है, इसलिये उक्त आयत में:

بَعْضُ اٰيٰتِ رَبِّكَ.

(तेरे रब की निशानियों में से कोई) में यह मौत का वक़्त भी दाख़िल है, जैसा कि तफ़सीर बहरे मुहीत में कुछ उलेमा का यह क़ौल नक़ल भी किया है, और कुछ बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है:

مَنْ مَّاتَ فَقَدْ قَامَتْ قِيَامَتُهٗ.

"यानी जो शख़्स मर गया उसकी क़ियामत तो उसी वक़्त क़ायम हो गयी।" क्योंकि अ़मल का घर ख़त्म हुआ और आमाल के बदले का कुछ नमूना क़ब्र ही से शुरू हो गया।

यहाँ अ़रबी भाषा के एतिबार से यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि इस आयत में पहले फ़रमायाः

أَوْ يَأْتِيَ بَعْضُ آيٰتِ رَبِّكَ.

और फिर इसी जुमले को दोहराकर फ़रमायाः

يَوْمَ يَأْتِيْ بَعْضُ آيٰتِ رَبِّكَ لَا يَنْفَعُ نَفْسًا إِيْمَانُهَا.

इसमें कलाम को मुख़्तसर नहीं किया गया बल्कि "तेरे रब की कोई निशानी" को दोबारा लाया गया। इससे मालूम होता है कि पहले कलिमे जो "कुछ निशानियाँ" बयान हुई हैं वो और हैं और दूसरे कलिमे की "कुछ निशानियाँ" पहली से अलग हैं। इससे इस तफ़सील की तरफ़ इशारा हो सकता है जो अभी आपने हज़रत हुज़ैफ़ा इब्ने उसैद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से पढ़ी है कि क़ियामत की दस निशानियाँ बहुत अहम हैं, उनमें से आख़िरी निशानी पश्चिम की तरफ़ से सूरज का निकलना है जो तौबा का दरवाज़ा बन्द होने की निशानी है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

قُلِ انْتَظِرُوْٓا إِنَّا مُنْتَظِرُوْنَ.

इसमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब है, कि आप उन लोगों से कह दीजिए कि अल्लाह की सारी हुज्जतें पूरी हो जाने के बाद भी अगर तुम्हें मौत या क़ियामत का इन्तिज़ार है तो यह इन्तिज़ार करते रहो, हम भी इसी का इन्तिज़ार करेंगे कि तुम्हारे साथ तुम्हारे रब का क्या मामला होता है।

إِنَّ الَّذِيْنَ فَرَّقُوْا دِيْنَهُمْ وَكَانُوْا شِيَعًا لَّسْتَ مِنْهُمْ فِيْ شَيْءٍ ۚ إِنَّمَآ أَمْرُهُمْ إِلَى اللّٰهِ ثُمَّ يُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ ﴿١٥٩﴾ مَنْ جَآءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهٗ عَشْرُ أَمْثَالِهَا ۚ وَمَنْ جَآءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزٰٓى إِلَّا مِثْلَهَا وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿١٦٠﴾

इन्नल्लज़ी-न फ़र्रक़ू दीनहुम् व कानू शि-यअ़ल्लस्-त मिन्हुम् फ़ी शैइन्, इन्नमा अम्रुहुम् इलल्लाहि सुम्-म युनब्बिउहुम् बिमा कानू यफ़्अ़लून (159) मन् जा-अ बिल्ह-स-नति	जिन्होंने राहें निकालीं अपने दीन में और हो गये बहुत से फ़िर्के, तुझको उनसे कुछ ताल्लुक़ नहीं, उनका काम अल्लाह ही के हवाले है, फिर वही जतला देगा उनको जो कुछ वे करते थे। (159) जो कोई लाता है एक नेकी तो उसके लिये उसका

फ़-लहू अ़श्रु अम्सालिहा व मन् जा-अ बिस्सय्यि-अति फला युज्ज़ा इल्ला मिस्लहा व हुम् ला युज़्लमून (160)	दस गुना है, और जो कोई लाता है एक बुराई सो सज़ा पायेगा उसके बराबर, और उन पर ज़ुल्म न होगा। (160)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक जिन लोगों ने अपने दीन को (जिसका उनको पाबन्द किया गया है) जुदा-जुदा कर दिया (यानी हक़ दीन को उसकी पूरी शक्ल में क़ुबूल न किया, चाहे सब को छोड़ दिया या कुछ को, और शिर्क व कुफ़्र और बिद्अ़त के तरीक़े इख़्तियार कर लिये) और (अलग-अलग) गिरोह-गिरोह बन गये, आपका उनसे कोई ताल्लुक़ नहीं (यानी आप उनसे बरी हैं, आप पर कोई इल्ज़ाम नहीं)। बस (वे ख़ुद अपने अच्छे बुरे के ज़िम्मेदार हैं, और) उनका मामला अल्लाह तआ़ला के हवाले है (वह देखभाल रहे हैं), फिर (क़ियामत में) वह उनको उनका किया हुआ जतला देंगे (और हुज्जत क़ायम करके अ़ज़ाब का हक़दार होना ज़ाहिर कर देंगे)। जो शख़्स नेक काम करेगा तो उसको (सबसे कम दर्जा यह है कि) उसके दस हिस्से मिलेंगे (यानी ऐसा समझा जायेगा कि गोया वह नेकी दस बार की और एक नेकी पर जिस क़द्र सवाब मिलता अब दस हिस्से वैसे सवाब के मिलेंगे)। और जो शख़्स बुरा काम करेगा सो उसको उसके बराबर ही सज़ा मिलेगी (ज़्यादा न मिलेगी)। और उन लोगों पर (ज़ाहिरी तौर पर भी) ज़ुल्म न होगा (कि कोई नेकी दर्ज न हो, या कोई बुराई ज़्यादा करके लिख ली जाये)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः अन्आ़म का ज़्यादातर हिस्सा मक्का के मुश्रिकों के ख़िताब और उनके सवाल व जवाब के मुताल्लिक़ आया है, जिसमें उनको यह हिदायत की गयी थी कि इस वक़्त अल्लाह तआ़ला का सीधा रास्ता सिर्फ़ क़ुरआन और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैरवी में सीमित है। जिस तरह आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पहले अम्बिया के ज़माने में उनका और उनकी किताब व शरीअ़त का इत्तिबा (पैरवी) निजात का मदार था, आज सिर्फ़ आपकी और आपकी शरीअ़त की पैरवी निजात का मदार है। अ़क़्ल से काम लो और इस सीधे रास्ते को छोड़कर दायें-बायें के ग़लत रास्तों को इख़्तियार न करो, वरना वे रास्ते तुम्हें ख़ुदा तआ़ला से दूर कर देंगे।

उक्त आयतों में से पहली आयत में एक आ़म ख़िताब है, जिसमें अ़रब के मुश्रिक, यहूदी व ईसाई और मुसलमान सब दाख़िल हैं। इन सब को मुख़ातब करके अल्लाह के सीधे रास्ते से मुँह फेरने और बाग़ी होने वालों का बुरा अन्जाम बयान किया गया है, और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को हिदायत की गयी है कि आपका उन ग़लत रास्तों पर चलने वालों से कोई ताल्लुक़ नहीं होना चाहिये। फिर उनमें ग़लत रास्ते वो भी हैं जो सिराते मुस्तक़ीम से बिल्कुल

विपरीत दिशा की तरफ़ ले जाने वाले हैं, जैसे मुश्रिक लोगों और अहले किताब के रास्ते, और वो रास्ते भी हैं जो विपरीत दिशा में तो नहीं मगर सीधे रास्ते से हटाकर दायें-बायें ले जाने वाले हैं, वो शुब्हात और बिदअ़तों के रास्ते हैं, वो भी इनसान को गुमराही में डाल देते हैं।

इरशाद फ़रमायाः

اِنَّ الَّذِيْنَ فَرَّقُوْا دِيْنَهُمْ وَكَانُوْا شِيَعًا لَّسْتَ مِنْهُمْ فِيْ شَيْءٍ ۭ اِنَّمَآ اَمْرُهُمْ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ يُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ

"यानी वे लोग जिन्होंने राहें निकालीं अपने दीन में और हो गये बहुत से फ़िर्क़े, तुझको उनसे कुछ सरोकार नहीं, उनका काम अल्लाह ही के हवाले है, फिर वह जतलायेगा उनको जो कुछ वे करते थे।"

इस आयत में ग़लत रास्तों पर पड़ने वालों के मुताल्लिक़ अव्वल तो यह बतला दिया कि अल्लाह का रसूल उनसे बरी है, रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से उनका कोई ताल्लुक़ नहीं। फिर उनको यह सख़्त वईद (सज़ा की धमकी) सुनाई कि उनका मामला बस ख़ुदा तआ़ला के हवाले है, वही उनको क़ियामत के दिन सज़ा देंगे।

दीन में फूट डालना और फ़िर्क़े बन जाना जो इस आयत में ज़िक्र हुआ है, इससे मुराद यह है कि दीन की उसूली और बुनियादी बातों की पैरवी को छोड़कर अपने ख़्यालात और इच्छाओं के मुताबिक़ या शैतानी फ़रेब व धोखे में मुब्तला होकर दीन में कुछ नई चीज़ें बढ़ा दे या कुछ चीज़ों को छोड़ दे।

दीन में बिदअ़त ईजाद करने पर सख़्त वईद

तफ़सीरे मज़हरी में है कि इसमें पिछली उम्मतों के लोग भी दाख़िल हैं, जिन्होंने अपने दीन के उसूल (बुनियादी चीज़ों) को छोड़ करके अपनी तरफ़ से कुछ चीज़ें मिला दी थीं, और इस उम्मत के बिदअ़ती भी जो दीन में अपनी तरफ़ से बेबुनियाद चीज़ों को शामिल करते रहते हैं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक हदीस में इस मज़मून को इस तरह वाज़ेह फ़रमाया है किः

"मेरी उम्मत को भी वही हालात पेश आयेंगे जो बनी इस्राईल को पेश आये। जिस तरह के बुरे आमाल में वे मुब्तला हुए मेरी उम्मत के लोग भी मुब्तला होंगे। बनी इस्राईल बहत्तर फ़िर्क़ों में बंट गये थे, मेरी उम्मत के तिहत्तर फ़िर्क़े हो जायेंगे। जिनमें से एक फ़िर्क़े के अ़लावा सब दोज़ख़ में जायेंगे। सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया कि वह निजात पाने वाला फ़िर्क़ा कौनसा है? फ़रमायाः

مَآ اَنَا عَلَيْهِ وَاَصْحَابِيْ.

यानी वह जमाअ़त जो मेरे और मेरे सहाबा के तरीक़े पर चलेगी वह निजात पायेगी। (इस हदीस को तिर्मिज़ी, अबू दाऊद ने हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है)।"

और तबरानी ने मोतबर सनद से हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया है कि उन्होंने हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा से फ़रमाया कि इस आयत में जिन फ़िर्क़ों का ज़िक्र है वे बिदअ़त वाले और अपनी इच्छाओं व ख़्यालात के तावे नये तरीक़े ईजाद करने वाले हैं। यही मज़मून हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से सही सनद के साथ मन्क़ूल है। इसी लिये रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दीन में नये-नये तरीक़े अपनी तरफ़ से ईजाद करने (निकालने) को बड़ी ताकीद के साथ मना फ़रमाया है।

इमाम अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी वग़ैरह ने हज़रत इरबाज़ बिन सारिया रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"तुम में से जो लोग मेरे बाद ज़िन्दा रहेंगे वे बहुत झगड़े और विवाद देखेंगे, इसलिये (मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ कि) तुम मेरी सुन्नत और खुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत को मज़बूती से पकड़े हुए इसी के मुताबिक़ हर काम में अ़मल करो, नये-नये तरीक़ों से बचते रहो, क्योंकि दीन में नयी पैदा की हुई हर चीज़ बिदअ़त है और हर बिदअ़त गुमराही है।"

एक हदीस में इरशाद फ़रमाया कि जो शख़्स जमाअ़त से एक बालिश्त भर जुदा हो गया उसने इस्लाम का निशान अपनी गर्दन से निकाल दिया। (अबू दाऊद व अहमद)

तफ़सीरे मज़हरी में है कि जमाअ़त से मुराद इस हदीस में सहाबा की जमाअ़त है। वजह यह है कि अल्लाह तआ़ला ने हमारे आक़ा मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को रसूल बनाकर भेजा, और आपको क़ुरआन अ़ता फ़रमाया, और क़ुरआन के अ़लावा दूसरी वही अ़ता फ़रमाई, जिसको हदीस या सुन्नत कहा जाता है। फिर क़ुरआन में बहुत सी आयतें संक्षिप्त या अस्पष्ट हैं, उनकी तफ़सीर व बयान को अल्लाह तआ़ला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़रिये बयान करने का वायदा फ़रमायाः

ثُمَّ إِنَّ عَلَيْنَا بَيَانَهُ

का यही मतलब है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ुरआन के मुश्किल मक़ामात और अस्पष्ट (ग़ैर-वाज़ेह) बातों की तफ़सीर और अपनी सुन्नत की तफ़सीलात अपने अप्रत्यक्ष शागिर्दों यानी सहाबा-ए-किराम को अपने क़ौल व अ़मल के ज़रिये सिखलायीं, इसलिये सहाबा की अक्सरियत का अ़मल अल्लाह की पूरी शरीअ़त का बयान और तफ़सीर है।

इसलिये मुसलमान की सआ़दत (भलाई और नेकबख़्ती) इसी में है कि हर काम में किताबुल्लाह और सुन्नते रसूलुल्लाह की पैरवी करे, और जिस आयत या हदीस की मुराद में संदेह व शुब्हा हो उसमें उसको इख़्तियार करे जिसको सहाबा-ए-किराम की बड़ी जमाअ़त ने इख़्तियार फ़रमाया हो।

इसी पवित्र उसूल को नज़र-अन्दाज़ कर देने से इस्लाम में अनेक और विभिन्न फ़िर्क़े पैदा हो गये कि सहाबा के अ़मल और उनकी तफ़सीरों (शरई वज़ाहतों और खुलासों) को नज़र-अन्दाज़

करके अपनी तरफ़ से जो जी में आया उसको क़ुरआन व सुन्नत का मफ़हूम (मतलब) क़रार दे दिया, यही वो गुमराही के रास्ते हैं जिनसे क़ुरआने करीम ने बार-बार रोका और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उम्रभर बड़ी ताकीद के साथ मना फ़रमाया, और इसके ख़िलाफ़ करने वालों पर लानत फ़रमाई।

हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- छह आदमियों पर मैं लानत करता हूँ, अल्लाह तआ़ला भी उन पर लानत करे। एक वह शख़्स जिसने किताबुल्लाह में अपनी तरफ़ से कुछ बढ़ा दिया (यानी चाहे कुछ अलफ़ाज़ बढ़ा दिये या मायने में ऐसी ज़्यादती कर दी जो सहाबा की तफ़सीर व बयान के ख़िलाफ़ है)। दूसरे वह शख़्स जो अल्लाह की तक़दीर का इनकारी हो गया। तीसरे वह शख़्स जो उम्मत पर ज़बरदस्ती मुसल्लत हो जाये ताकि इज़्ज़त दे दे उस शख़्स को जिसको अल्लाह ने ज़लील किया है, और ज़िल्लत दे दे उस शख़्स को जिसको अल्लाह ने इज़्ज़त दी है। चौथे वह शख़्स जिसने अल्लाह के हराम को हलाल समझा, यानी मक्का के हरम शरीफ़ में क़त्ल व क़िताल किया, या शिकार खेला। पाँचवें वह शख़्स जिसने मेरी आल-औलाद की बेहुर्मती की। छठे वह शख़्स जिसने मेरी सुन्नत को छोड़ दिया।

एक दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

مَنْ جَآءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهٗ عَشْرُ اَمْثَالِهَا وَمَنْ جَآءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزٰٓى اِلَّا مِثْلَهَا وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ.

पिछली आयत में इसका बयान था कि सिराते मुस्तक़ीम से फिर जाने वालों को क़ियामत के दिन में अल्लाह तआ़ला ही उनके आमाल की सज़ा देंगे।

इस आयत में आख़िरत की जज़ा व सज़ा का करीमाना उसूल इस तरह बयान फ़रमाया है कि जो शख़्स एक नेक काम करेगा उसको दस गुना बदला दिया जायेगा, और जो एक गुनाह करेगा उसका बदला सिर्फ़ एक गुनाह के बराबर दिया जायेगा।

सही बुख़ारी और मुस्लिम, नसाई और मुस्नद अहमद में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- तुम्हारा रब तआ़ला रहीम है, जो शख़्स किसी नेक काम का सिर्फ़ इरादा करे उसके लिये एक नेकी लिख ली जाती है, चाहे अ़मल करने की नौबत भी न आये। फिर जब वह उस नेक काम को कर ले तो दस नेकियाँ उसके नामा-ए-आमाल में लिख दी जाती हैं। और जो शख़्स किसी गुनाह का इरादा करे, मगर फिर उस पर अ़मल न करे तो उसके लिये भी एक नेकी लिख दी जाती है, और गुनाह का अ़मल भी करे तो एक गुनाह लिख दिया जाता है, या उसको भी मिटा दिया जाता है। इस माफ़ करने और करम के होते हुए अल्लाह के दरबार में वही शख़्स हलाक हो सकता है जिसने हलाक होने ही की ठान रखी है। (इब्ने कसीर)

एक हदीसे क़ुदसी में हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से इरशाद हैः

"जो शख़्स एक नेकी करता है उसको दस नेकियों का सवाब मिलता है, और इससे भी ज़्यादा। और जो शख़्स एक गुनाह करता है तो उसकी सज़ा सिर्फ़ एक ही गुनाह के बराबर

मिलेगी, या मैं उसको भी माफ़ कर दूँगा। और जो शख़्स इतने गुनाह करके मेरे पास आये जिनसे सारी ज़मीन भर जाये और मग़फ़िरत का तालिब हो तो मैं इतनी ही मग़फ़िरत से उसके साथ मामला करूँगा। और जो शख़्स मेरी तरफ़ एक बालिश्त क़रीब होता है मैं एक हाथ उसकी तरफ़ बढ़ता हूँ। और जो शख़्स एक हाथ मेरी तरफ़ आता है मैं उसकी तरफ़ एक बाअ़ के बराबर आता हूँ (बाअ़ कहते हैं दोनों हाथों के फैलाव को)। और जो शख़्स मेरी तरफ़ झपट कर आता है मैं उसकी तरफ़ दौड़कर आता हूँ।"

हदीस की इन रिवायतों से मालूम हुआ कि नेकी की जज़ा में दस तक की ज़्यादती जो इस आयत में बयान हुई है अदना हद का बयान है, और अल्लाह तआ़ला अपने रहम व करम से इससे ज़्यादा भी दे सकते हैं, और देंगे, जैसा कि दूसरी रिवायतों से सत्तर गुना या सात सौ गुना तक साबित होता है।

इस आयत के अलफ़ाज़ में यह बात भी क़ाबिले ग़ौर है कि यहाँ लफ़्ज़ "जा-अ बिल्ह-स-नति" फ़रमाया है "अ़मि-ल बिल्ह-स-नति" नहीं फ़रमाया। तफ़सीर बहरे मुहीत में है कि इससे इस तरफ़ इशारा जाता है कि महज़ किसी नेक या बुरे काम को कर लेने पर यह जज़ा व सज़ा नहीं दी जायेगी, बल्कि जज़ा व सज़ा के लिये मौत के वक़्त तक उस नेक अ़मल या बुरे अ़मल का क़ायम रहना शर्त है, जिसका नतीजा यह है कि अगर किसी शख़्स ने कोई नेक अ़मल किया लेकिन फिर उसके किसी गुनाह की शामत से वह अ़मल ज़ाया हो गया तो वह उस अ़मल पर जज़ा का मुस्तहिक़ नहीं रहा। जैसे अल्लाह की पनाह कुफ़्र व शिर्क तो सारे ही नेक आमाल को बरबाद कर देता है, उसके अ़लावा और भी बहुत से गुनाह ऐसे हैं जो बाज़े नेक आमाल को बातिल और बेअसर कर देते हैं। जैसे क़ुरआने करीम में है:

لَا تُبْطِلُوْا صَدَقٰتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى.

"यानी तुम अपने सदक़ों को एहसान जतलाकर या तकलीफ़ पहुँचाकर बातिल और ज़ाया न करो।"

इससे मालूम हुआ कि सदक़े का नेक अ़मल एहसान जताने या तकलीफ़ पहुँचाने से बातिल और ज़ाया हो जाता है। इसी तरह हदीस में है कि मस्जिद में बैठकर दुनिया की बातें करना नेकियों को इस तरह खा जाता है जैसे आग लकड़ी को खा लेती है। इससे मालूम हुआ कि मस्जिद में जो नेक आमाल नवाफ़िल और तस्बीह वग़ैरह के किये हैं, वो दुनिया की बातें करने से ज़ाया (बरबाद) हो जाते हैं।

इसी तरह बुरे आमाल से अगर तौबा कर ली तो वह गुनाह नामा-ए-आमाल से मिटा दिया जाता है, मौत के वक़्त तक बाक़ी नहीं रहता। इसलिये इस आयत में यह नहीं फ़रमाया कि "कोई अ़मल करे नेक या बद तो उसको जज़ा या सज़ा मिलेगी" बल्कि यूँ फ़रमाया कि "जो शख़्स हमारे पास लायेगा नेक अ़मल तो दस गुना सवाब पायेगा, और हमारे पास लायेगा बुरा अ़मल तो एक ही अ़मल की सज़ा पायेगा।" अल्लाह तआ़ला के पास लाना उसी वक़्त होगा जब

वह अ़मल आख़िर तक क़ायम और बाक़ी रहे, नेक अ़मल को ज़ाया करने वाली कोई चीज़ पेश न आये। और बुरे अ़मल से तौबा व इस्तिग़फ़ार न करे।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ.

यानी उच्चतम अ़दालत में इसकी संभावना नहीं कि किसी पर ज़ुल्म हो सके, न किसी के नेक अ़मल के बदले में कमी की संभावना है, न किसी के बुरे अ़मल में उससे ज़ायद सज़ा का शुब्हा व गुमान है।

قُلْ إِنَّنِيْ هَدٰىنِيْ رَبِّيْٓ إِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ۚ دِيْنًا قِيَمًا مِّلَّةَ إِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا ۚ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۝ قُلْ إِنَّ صَلَاتِيْ وَنُسُكِيْ وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِيْ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ لَا شَرِيْكَ لَهٗ ۚ وَبِذٰلِكَ أُمِرْتُ وَأَنَا أَوَّلُ الْمُسْلِمِيْنَ ۝ قُلْ أَغَيْرَ اللّٰهِ أَبْغِيْ رَبًّا وَّهُوَ رَبُّ كُلِّ شَيْءٍ ۚ وَلَا تَكْسِبُ كُلُّ نَفْسٍ إِلَّا عَلَيْهَا ۚ وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ أُخْرٰى ۚ ثُمَّ إِلٰى رَبِّكُمْ مَّرْجِعُكُمْ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۝ وَهُوَ الَّذِيْ جَعَلَكُمْ خَلٰٓئِفَ الْأَرْضِ وَرَفَعَ بَعْضَكُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجٰتٍ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰىكُمْ ۚ إِنَّ رَبَّكَ سَرِيْعُ الْعِقَابِ ۖ وَإِنَّهٗ لَغَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

क़ुल् इन्ननी हदानी रब्बी इला सिरातिम् मुस्तक़ीम। दीनन् क़ि-यमम् मिल्ल-त इब्राही-म हनीफ़न् व मा का-न मिनल् मुश्रिकीन (161) क़ुल् इन्-न सलाती व नुसुकी व मह्या-य व ममाती लिल्लाहि रब्बिल्-आ़लमीन (162) ला शरी-क लहू व बिज़ालि-क उमिर्तु व अ-न अव्वलुल् मुस्लिमीन (163) क़ुल् अग़ैरल्लाहि अब्ग़ी रब्बंव्-व हु-व रब्बु कुल्लि शैइन्, व ला तक्सिबु कुल्लु नफ़्सिन् इल्ला अ़लैहा व ला तज़िरु वाज़ि-रतुंव्-	तू कह दे- मुझको सुझाई मेरे रब ने राह सीधी, दीन सही मिल्लत इब्राहीम की, जो एक ही तरफ़ का था और न था शरीक करने वालों में। (161) तू कह- मेरी नमाज़ और मेरी क़ुरबानी और मेरा जीना और मरना अल्लाह ही के लिये है, जो पालने वाला है जहान का। (162) कोई नहीं उसका शरीक और यही मुझको हुक्म हुआ और मैं सबसे पहले फ़रमाँबरदार हूँ। (163) तू कह- क्या अब मैं अल्लाह के सिवा तलाश करूँ कोई रब, और वही है रब हर चीज़ का, और जो कोई गुनाह करता है सो वह उसके ज़िम्मे पर है, और

-विज़्-र उख़्रा सुम्-म इला रब्बिकुम् मरजिअुकुम् फ़युनब्बिउकुम् बिमा कुन्तुम् फ़ीहि तख़्तलिफ़ून (164) व हुवल्लज़ी ज-अ़-लकुम् ख़ला-इफ़ल्-अर्ज़ि व र-फ़-अ़ बअ़्ज़कुम् फ़ौ-क़ बअ़्ज़िन् द-रजातिल् लियब्लु-वकुम् फ़ी मा आताकुम्, इन्-न रब्ब-क सरीअ़ुल्-अ़िक़ाबि व इन्नहू ल-ग़फ़ूरुर्रहीम (165) ●	बोझ न उठायेगा एक शख़्स दूसरे का, फिर तुम्हारे रब के पास ही सब को लौटकर जाना है, सो वह जतला देगा जिस बात में तुम झगड़ते थे। (164) और उसी ने तुमको नायब किया है ज़मीन में और बुलन्द कर दिये तुम में दर्जे एक के एक पर, ताकि आज़माये तुम को अपने दिये हुए हुक्मों में, तेरा रब जल्द अ़ज़ाब करने वाला है, और वही बख़्शने वाला मेहरबान है। (165) ●

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

आप कह दीजिए कि मुझको मेरे रब ने एक सीधा रास्ता (वही के ज़रिये से) बतला दिया है (जो दलीलों से साबित होने के सबब) एक मज़बूत दीन है, जो इब्राहीम (अ़लैहिस्सलाम) का तरीक़ा है, जिसमें ज़रा भी टेढ़ापन नहीं, और वह (इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम) शिर्क करने वालों में से न थे। (और) आप (उस ज़िक्र हुए दीन की किसी क़द्र तफ़सील के लिये) फ़रमा दीजिए कि (उस दीन का हासिल यह है कि) यक़ीनन मेरी नमाज़ और मेरी सारी इबादत और मेरा जीना और मेरा मरना यह सब ख़ालिस अल्लाह तआ़ला ही का है, जो सारे जहान का मालिक है (उसके इबादत का हक़दार होने या रब होने के तसर्रुफ़ात में) उसका कोई शरीक नहीं, और मुझको इसी (ज़िक्र हुए दीन पर रहने) का हुक्म हुआ है, और (हुक्म के मुवाफ़िक़) मैं (उस दीन वालों में) सब मानने वालों से पहला (मानने वाला) हूँ।

आप (इन बातिल की तरफ़ बुलाने वालों से) फ़रमा दीजिए कि क्या (तौहीद व इस्लाम की हक़ीक़त वाज़ेह हो जाने के बाद तुम्हारे कहने से) मैं ख़ुदा तआ़ला के सिवा किसी और को रब बनाने के लिए तलाश करूँ (यानी नऊज़ु बिल्लाह शिर्क इख़्तियार कर लूँ)? हालाँकि वह हर चीज़ का मालिक है, (और सब चीज़ें उसकी मम्लूक हैं और मम्लूक मालिक का साझी नहीं हो सकता) और (तुम जो कहते हो कि तुम्हारा गुनाह हमारे सर, सो यह बिल्कुल बेकार की बात है कि करने वाला पाक साफ़ रहे और सिर्फ़ दूसरा गुनाहगार हो जाये, बल्कि बात यह है कि) जो शख़्स भी कोई अ़मल करता है वह उसी पर रहता है, और कोई दूसरे (के गुनाह) का बोझ न उठाएगा (बल्कि सब अपनी-अपनी भुगतेंगे) फिर (सब के अ़मल कर चुकने के बाद) तुम सब को अपने रब के पास जाना होगा। फिर वह तुमको जतला देंगे जिस-जिस चीज़ में तुम झगड़ा करते थे (कि कोई किसी दीन को हक़ बतलाता था और कोई किसी को, वहाँ अ़मली इत्तिला से फ़ैसला

कर दिया जायेगा कि हक़ वालों को निजात और बातिल वालों को सज़ा होगी)।

और वह (अल्लाह) ऐसा है जिसने तुमको ज़मीन में इख़्तियार वाला बनाया (इस नेमत में तो समानता है) और एक का दूसरे पर (विभिन्न चीज़ों में) रुतबा बढ़ाया (इस नेमत में एक की दूसरे पर बरतरी है) ताकि (इन नेमतों से ज़ाहिरी तौर पर) तुमको उन चीज़ों में आज़माए जो (ज़िक्र हुई नेमतों में से) तुमको दी हैं। (आज़माना यह कि कौन उन नेमतों की क़द्र करके नेमत देने वाले की इताअ़त करता है और कौन बेक़द्री करके इताअ़त नहीं करता। पस बाज़े फ़रमाँबरदार हुए, बाज़े नाफ़रमान हुए और दोनों के साथ मुनासिब मामला किया जायेगा, क्योंकि) यक़ीनन आपका रब जल्द सज़ा देने वाला (भी) है, और बेशक वह बड़ी मग़फ़िरत करने वाला, बड़ी मेहरबानी करने वाला (भी) है (पस नाफ़रमानों के लिये सज़ा है और फ़रमाँबरदारों के लिये रहमत है। और नाफ़रमानी से फ़रमाँबरदारी की तरफ़ आने वालों के लिये मग़फ़िरत है। पस शरई अहकाम के पाबन्द लोगों पर ज़रूरी हुआ कि दीने हक़ के मुवाफ़िक़ इताअ़त इख़्तियार करें, और बातिल और हक़ की मुख़ालफ़त से बाज़ आयें)।

मआरिफ़ व मसाईल

ये सूरः अन्आम की आख़िरी छह आयतें हैं। जिन लोगों ने दीने हक़ में कमी-बेशी करके मुख़्तलिफ़ दीन बना लिये थे, और ख़ुद मुख़्तलिफ़ गिरोहों और फ़िर्क़ों में बंट गये थे, उनके मुक़ाबले पर इनमें से पहली तीन आयतों में दीने हक़ की सही तस्वीर, उसके बुनियादी उसूल और कुछ अहम भाग व ऊपर के अहकाम बयान किये गये हैं। पहली दो आयतों में उसूल (बुनियादी चीज़ों) का बयान है और तीसरी आयत में उनके अहम ऊपरी अहकाम का ज़िक्र है, और दोनों में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मुख़ातब करके यह इरशाद हुआ है कि आप उन लोगों को यह बात पहुँचा दें।

पहली आयत में इरशाद है:

قُلْ اِنَّنِیْ هَدٰىنِیْ رَبِّیْۤ اِلٰی صِرَاطٍ مُّسْتَقِیْمٍ.

"यानी आप कह दीजिए कि मुझे मेरे रब ने एक सीधा रास्ता बता दिया है।" इसमें इशारा फ़रमा दिया कि मैंने तुम्हारी तरह अपने ख़्यालात या बाप-दादा की रस्मों के ताबे होकर यह रास्ता इख़्तियार नहीं किया बल्कि मेरे रब ने मुझे यह रास्ता बताया है। और लफ़्ज़ "रब" से इस तरफ़ भी इशारा कर दिया कि उसकी शाने रबूबियत का तक़ाज़ा है कि वह सही रास्ता बताये, तुम भी अगर चाहो तो उसकी तरफ़ हिदायत के सामान तुम्हारे लिये भी मौजूद हैं।

दूसरी आयत में फ़रमाया:

دِیْنًا قِیَمًا مِّلَّةَ اِبْرٰهِیْمَ حَنِیْفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِیْنَ.

इसमें लफ़्ज़ "क़ियम" मस्दर है क़ियाम के मायने में, और मुराद इससे क़ायम रहने वाला स्थिर है, यानी यह दीन स्थिर व मज़बूत है जो अल्लाह की तरफ़ से आई हुई मज़बूत बुनियादों पर क़ायम है, किसी के निजी ख़्यालात नहीं, और कोई नया दीन व मज़हब भी नहीं जिसमें

किसी को शुब्हा हो सके, बल्कि पिछले तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम का यही दीन है, विशेष तौर पर हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम का नाम इसलिये ज़िक्र फ़रमाया कि दुनिया के हर मज़हब वाले उनकी इ़ज़्ज़त व इमामत के कायल हैं। मौजूदा फ़िर्क़ों में से यहूदी, ईसाई, अ़रब के मुश्रिक आपस में कितने ही भिन्न हों मगर इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की बुज़ुर्गी व इमामत पर सब ही मुत्तफ़िक़ (सहमत) हैं। यही वह इमामत व पेशवाई का मक़ाम है जो अल्लाह तआ़ला ने ख़ुसूसी इनाम के तौर पर उनको दिया है, जैसा कि क़ुरआन में फ़रमायाः

اِنِّیْ جَاعِلُکَ لِلنَّاسِ اِمَامًا.

फिर उनमें से हर फ़िर्क़ा यह साबित करने की कोशिश करता था कि हम इब्राहीमी दीन पर क़ायम हैं, और हमारा मज़हब ही मिल्लते इब्राहीम है। उनके इस मुग़ालते को दूर करने के लिये फ़रमाया कि इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम तो ग़ैरुल्लाह की इबादत से परहेज़ करने वाले और शिर्क से नफ़रत करने वाले थे, और यही उनका सबसे बड़ा कारनामा है, तुम लोग जबकि शिर्क में मुब्तला हो गये, यहूदियों ने हज़रत उज़ैर अ़लैहिस्सलाम को, ईसाईयों ने हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को और अ़रब के मुश्रिकों ने हज़ारों पत्थरों को ख़ुदाई का शरीक मान लिया तो फिर किसी को यह कहने का हक़ नहीं रहा कि वह मिल्लते इब्राहीमी का पाबन्द है, हाँ यह हक़ सिर्फ़ मुसलमान को पहुँचता है जो शिर्क व कुफ़्र से बेज़ार (नफ़रत करता और उससे बचता) है।

तीसरी आयत में फ़रमायाः

قُلْ اِنَّ صَلَاتِیْ وَنُسُکِیْ وَمَحْیَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰہِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ.

इसमें लफ़्ज़ ''नुसुक'' के मायने क़ुरबानी के भी आते हैं और हज के हर फ़ेल (काम और रुक्न) को भी नुसुक कहते हैं। हज के आमाल को ''मनासिक'' कहा जाता है। और यह लफ़्ज़ उमूमी तौर पर इबादत के मायने में भी इस्तेमाल होता है, इसलिये नासिक आ़बिद के मायने में भी बोला जाता है। इस जगह इनमें से हर एक मायने मुराद लिये जा सकते हैं, और मुफ़स्सिरीन सहाबा व ताबिईन से ये सब तफ़सीरें मन्क़ूल भी हैं, मगर सिर्फ़ इबादत के मायने इस जगह ज़्यादा मुनासिब मालूम होते हैं। आयत के मायने यह हो गये कि ''मेरी नमाज़ और मेरी तमाम इबादतें और मेरी पूरी ज़िन्दगी और फिर मौत यह सब अल्लाह रब्बुल-आ़लमीन के लिये है।''

इसमें आमाल में से सबसे पहले नमाज़ का ज़िक्र किया क्योंकि वह तमाम नेक आमाल की रूह और दीन का सुतून है। उसके बाद तमाम आमाल व इबादात का संक्षिप्त ज़िक्र फ़रमाया, और फिर इससे आगे बढ़कर पूरी ज़िन्दगी के आमाल व अहवाल का ज़िक्र किया, और आख़िर में मौत का। इन सब का ज़िक्र करके फ़रमाया कि हमारी ये सब चीज़ें सिर्फ़ अल्लाह रब्बुल-आ़लमीन के लिये हैं, जिसका कोई शरीक नहीं, और यही पूरे ईमान और पूरे इख़्लास का नतीजा है कि इनसान अपनी ज़िन्दगी के हर हाल में और हर काम में इसको नज़र के सामने रखे कि मेरा और तमाम जहान का एक रब है, मैं उसका बन्दा और हर वक़्त उसकी नज़र में हूँ। मेरा दिल, दिमाग़, आँख, कान, ज़बान और हाथ-पैर, क़लम और क़दम उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न उठना चाहिये। यह वह ध्यान है कि अगर इनसान इसको अपने दिल व दिमाग़ में बिठा ले तो

सही मायने में इनसान और कामिल इनसान हो जाये, और गुनाह व नाफ़रमानी और जराईम का उसके आस-पास भी गुज़र न हो।

तफ़सीर दुर्रे मन्सूर में इसी आयत के तहत में नक़ल किया है कि हज़रत अबू मूसा अश्अ़री रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाया करते थे कि मेरा दिल चाहता है कि हर मुसलमान इस आयत को बार-बार पढ़ा करे और इसको अपनी ज़िन्दगी का वज़ीफ़ा बना ले।

इस आयत में नमाज़ और तमाम इबादतों का अल्लाह के लिये होना तो ज़ाहिर है कि उनमें शिर्क या दिखावे या किसी दुनियावी स्वार्थ का दख़ल न होना मुराद है। और ज़िन्दगी और मौत का अल्लाह के लिये होना, इसका मतलब यह भी हो सकता है कि मेरी मौत व ज़िन्दगी ही उसके क़ब्ज़ा-ए-क़ुदरत में है, तो फिर ज़िन्दगी के आमाल व इबादात भी उसी के लिये होना लाज़िम है। और यह मायने भी हो सकते हैं कि जितने आमाल ज़िन्दगी से संबन्धित हैं वे भी सिर्फ़ अल्लाह के लिये हैं, जैसे नमाज़ रोज़ा और लोगों के साथ मामलात के हुक़ूक़ व फ़राईज़ वग़ैरह, और जो आमाल मौत से संबन्धित हैं, यानी वसीयत और अपने बाद के लिये जो हर इनसान कोई निज़ाम चाहता और सोचता है, वह सब अल्लाह रब्बुल-आ़लमीन के लिये और उसी के अहकाम के ताबे है।

फिर फ़रमायाः

وَبِذٰلِكَ اُمِرْتُ وَاَنَا اَوَّلُ الْمُسْلِمِيْنَ.

"यानी मुझे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से इसी क़ौल व क़रार और कामिल इख़्लास का हुक्म दिया गया है, और मैं सबसे पहला फ़रमाँबरदार मुसलमान हूँ।"

मुराद यह है कि इस उम्मत में सबसे पहला मुसलमान मैं हूँ। क्योंकि हर उम्मत का पहला मुसलमान ख़ुद वह नबी या रसूल होता है जिस पर शरीअ़त की वही नाज़िल की जाती है।

और पहला मुसलमान होने से इस तरफ़ भी इशारा हो सकता है कि मख़्लूक़ात में सबसे पहले रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का नूर मुबारक पैदा किया गया है, उसके बाद तमाम आसमान व ज़मीन और मख़्लूक़ात वजूद में आये हैं। जैसा कि एक हदीस में इरशाद है:

اَوَّلُ مَاخَلَقَ اللّٰهُ تَعَالٰى نُوْرِىْ (روح المعانى)

कि सबसे पहले अल्लाह तआ़ला ने मेरा नूर पैदा किया। (मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)

किसी के गुनाह का भार दूसरा नहीं उठा सकता

चौथी आयत में मक्का के मुश्रिकों वलीद बिन मुग़ीरा वग़ैरह की उस बात का जवाब है जो वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और आ़म मुसलमानों से कहा करते थे कि तुम हमारे दीन में वापस आ जाओ तो तुम्हारे सारे गुनाहों का भार हम उठा लेंगे। इस पर फ़रमायाः

قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْغِىْ رَبًّا وَّهُوَ رَبُّ كُلِّ شَىْءٍ.

इसमें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को इरशाद है कि आप उनसे कह दीजिए कि

क्या तुम मुझसे यह चाहते हो कि तुम्हारी तरह मैं भी अल्लाह के सिवा कोई और रब तलाश कर लूँ? हालाँकि वही सारे जहान और सारी कायनात का रब है। इस गुमराही की मुझसे कोई उम्मीद न रखो। बाक़ी तुम्हारा यह कहना कि हम तुम्हारे गुनाहों का भार उठा लेंगे यह ख़ुद एक बेवक़ूफ़ी है, गुनाह तो जो शख़्स करेगा उसी के नामा-ए-आमाल में लिखा जायेगा, और वही उसकी सज़ा का मुस्तहिक़ होगा, तुम्हारे इस कहने से वह गुनाह तुम्हारी तरफ़ कैसे मुन्तक़िल हो सकता है। और अगर यह ख़्याल हो कि हिसाब और नामा-ए-आमाल में तो उन्हीं के रहेगा लेकिन मैदाने हश्र में उस पर जो सज़ा तय होगी वह सज़ा हम भुगत लेंगे, तो इस ख़्याल को भी इस आयत के अगले जुमले ने रद्द कर दिया। फ़रमायाः

وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰی.

"यानी क़ियामत के दिन कोई शख़्स दूसरे के गुनाह का बोझ नहीं उठायेगा।"

इस आयत ने मुश्रिकों के बेहूदा क़ौल का जवाब तो दिया ही है, आ़म मुसलमानों को यह ज़ाब्ता (नियम व उसूल) भी बतला दिया कि क़ियामत के मामले को दुनिया पर अन्दाज़ा न करो कि यहाँ कोई शख़्स जुर्म करके किसी दूसरे के सर डाल सकता है, ख़ुसूसन जबकि दूसरा ख़ुद रज़ामन्द भी हो, मगर अल्लाह की अ़दालत में इसकी कोई गुंजाईश नहीं, वहाँ एक के गुनाह में दूसरा हरगिज़ नहीं पकड़ा जा सकता। इसी आयत से दलील लेकर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हरामी बच्चे पर माँ-बाप के जुर्म (यानी ज़िना) का कोई असर नहीं होगा। यह हदीस इमाम हाकिम ने सही सनद से हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा से रिवायत की है।

और एक मय्यित के जनाज़े पर हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने किसी को रोते हुए देखा तो फ़रमाया कि ज़िन्दों के रोने से मुर्दे को अ़ज़ाब होता है। इब्ने अबी मुलैका कहते हैं कि मैंने यह क़ौल हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा के सामने नक़्ल किया तो उन्होंने फ़रमाया कि तुम एक ऐसे शख़्स का यह क़ौल नक़ल कर रहे हो जो न कभी झूठ बोलता है और न उनकी विश्वसनीयता में कोई शुब्हा किया जा सकता है, मगर कभी सुनने में भी ग़लती हो जाती है, इस मामले में तो क़ुरआन का वाज़ेह फ़ैसला तुम्हारे लिये काफ़ी हैः

وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰی.

"यानी एक का गुनाह दूसरे पर नहीं पड़ सकता। तो किसी ज़िन्दा आदमी के रोने से बेक़सूर मुर्दा किस तरह अ़ज़ाब में फंस सकता है।" (दुर्रे मन्सूर)

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमाया कि "फिर तुम सब को आख़िरकार अपने रब ही के पास जाना है, जहाँ तुम्हारे सारे विवादों का फ़ैसला सुना दिया जायेगा।" मतलब यह है कि बात बनाने और उल्टी-सीधी बहस करने से बाज़ आओ, अपने अन्जाम की फ़िक्र करो।

पाँचवीं और छठी आयत में एक जामे नसीहत पर सूरः अन्आ़म को ख़त्म किया गया है, और वह यह कि गुज़रे ज़माने की तारीख़ (इतिहास) और पिछली क़ौमों के हालात को उनके सामने लाकर अपने भविष्य की तरफ़ मुतवज्जह फ़रमाया गया हैः

وَهُوَ الَّذِیْ جَعَلَكُمْ خَلٰٓئِفَ الْاَرْضِ وَرَفَعَ بَعْضَكُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجٰتٍ.

इसमें लफ़्ज़ "ख़लाईफ़" ख़लीफ़ा की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं किसी का क़ायम-मक़ाम और गद्दी संभालने वाला होना। कि अल्लाह तआ़ला ने ही तुमको तुमसे पहली क़ौमों की जगह पर आबाद किया है, कोई मकान ज़मीन जिसको आज तुम अपनी मिल्कियत कहते हो और समझते हो ऐसा नहीं जो कल तुम्हीं जैसे दूसरे इनसानों की मिल्कियत में न हो, अल्लाह तआ़ला ने उनको हटाकर तुम्हें उनकी जगह बैठाया है, और फिर यह बात भी हर वक़्त क़ाबिले ग़ौर है कि तुम में भी सब आदमी बराबर नहीं, कोई ग़रीब है कोई मालदार, कोई ज़लील है कोई इज़्ज़तदार। और यह भी ज़ाहिर है कि अगर मालदारी और इज़्ज़त ख़ुद इनसान के इख़्तियार में होती तो कौनसा इनसान ग़रीबी और ज़िल्लत को इख़्तियार करता, यह दर्जों का फ़र्क़ भी तुम्हें इसकी ख़बर दे रहा है कि इख़्तियार किसी और हस्ती के हाथ में है, वह जिसको चाहे ग़रीब कर दे जिसको चाहे मालदार, जिसको चाहे इज़्ज़त दे जिसको चाहे ज़िल्लत।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

لِيَبْلُوَكُمْ فِىْ مَآ اٰتٰكُمْ.

यानी तुम्हें दूसरे लोगों की जगह बैठाने और उनके माल व जायदाद का मालिक बन जाने और फिर इज़्ज़त व दौलत के एतिबार से विभिन्न दर्जों में रखने से मक़सद ही यह है कि तुम्हारी आँखें खुलें और इसका इम्तिहान हो कि जो नेमतें पिछले लोगों को हटाकर तुम्हारे सुपुर्द की गयी हैं उनमें तुम्हारा अ़मल क्या होता है, शुक्रगुज़ारी और फ़रमाँबरदारी का या नाशुक्री और नाफ़रमानी का?

छठी आयत में इन दोनों हालतों का अन्जाम इस तरह बतला दियाः

اِنَّ رَبَّكَ سَرِيْعُ الْعِقَابِ وَاِنَّهٗ لَغَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ.

"यानी आपका रब नाफ़रमानों पर जल्द अ़ज़ाब भेजने वाला है, और फ़रमाँबरदारों के लिये ग़फ़ूरुर्रहीम (माफ़ करने और रहम करने वाला) है।"

सूरः अन्आ़म का शुरू हम्द (अल्लाह की तारीफ़) से हुआ और ख़त्म मग़फ़िरत पर। अल्लाह तआ़ला हम सब को हम्द की तौफ़ीक़ और मग़फ़िरत से मालामाल फ़रमा दें।

हदीस में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- सूरः अन्आ़म मुकम्मल एक ही बार में नाज़िल हुई, और इस शान के साथ नाज़िल हुई कि सत्तर हज़ार फ़रिश्ते इसके साथ में तस्बीह पढ़ते हुए आये। इसी लिये हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि सूरः अन्आ़म क़ुरआने करीम की अफ़ज़ल (श्रेष्ट) व आला सूरतों में से है।

कुछ रिवायतों में हज़रत अ़ली कर्रमल्लाहु वज्हहू से मन्क़ूल है कि यह सूरत जिस बीमार पर पढ़ी जाये अल्लाह तआ़ला उसको शिफ़ा देते हैं। व आख़िरु दअ़्वाना अनिल्-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन।

(अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि सूरः अन्आ़म की तफ़सीर पूरी हुई)
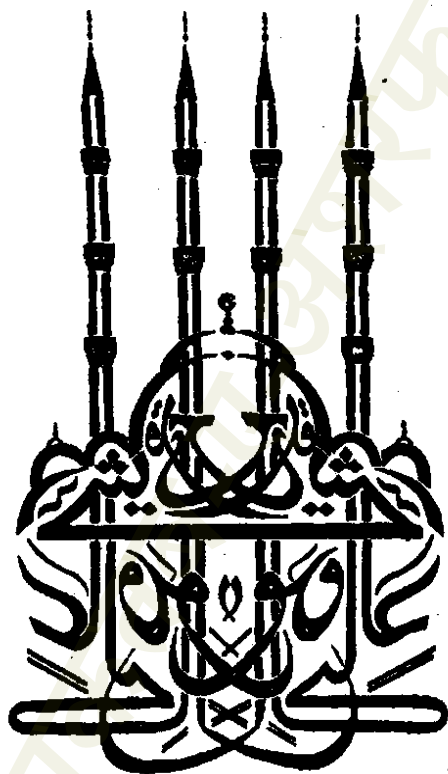
* सूरः आराफ़ *

यह सूरत मक्की है। इसमें 206 आयतें
और 24 रुकूअ़ हैं।
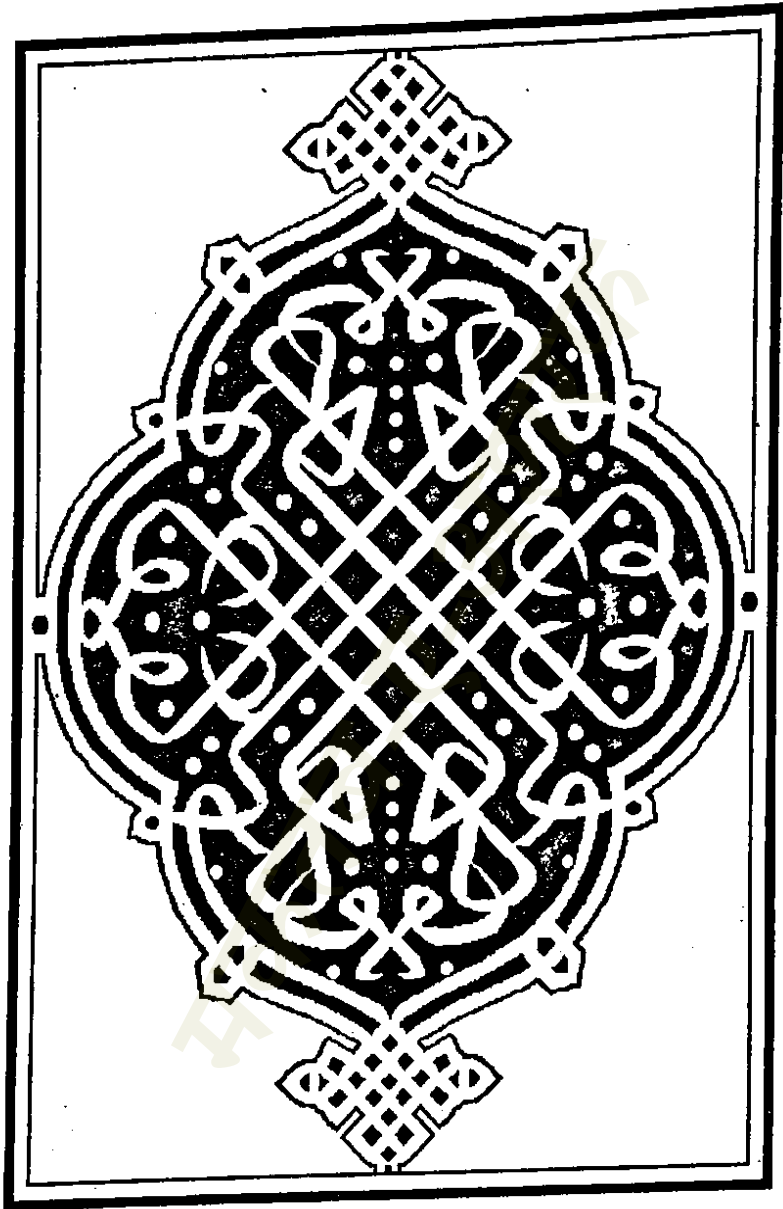
सूरः आराफ़

سُوْرَةُ الْاَعْرَافِ مَكِّيَّةٌ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○

الٓمّٓصٓ ۞ كِتٰبٌ اُنْزِلَ اِلَيْكَ فَلَا يَكُنْ فِيْ صَدْرِكَ حَرَجٌ مِّنْهُ لِتُنْذِرَ بِهٖ وَذِكْرٰى لِلْمُؤْمِنِيْنَ ۞ اِتَّبِعُوْا مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَلَا تَتَّبِعُوْا مِنْ دُوْنِهٖٓ اَوْلِيَآءَ ۭ قَلِيْلًا مَّا تَذَكَّرُوْنَ ۞ وَكَمْ مِّنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنٰهَا فَجَآءَهَا بَاْسُنَا بَيَاتًا اَوْ هُمْ قَآئِلُوْنَ ۞ فَمَا كَانَ دَعْوٰىهُمْ اِذْ جَآءَهُمْ بَاْسُنَآ اِلَّآ اَنْ قَالُوْٓا اِنَّا كُنَّا ظٰلِمِيْنَ ۞ فَلَنَسْـَٔلَنَّ الَّذِيْنَ اُرْسِلَ اِلَيْهِمْ وَلَنَسْـَٔلَنَّ الْمُرْسَلِيْنَ ۞ فَلَنَقُصَّنَّ عَلَيْهِمْ بِعِلْمٍ وَّمَا كُنَّا غَآئِبِيْنَ ۞

सूरः आराफ़ मक्का में नाज़िल हुई। इसमें 206 आयतें और 24 रुकूअ़ हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शुरू अल्लाह के नाम से जो बेहद मेहरबान निहायत रहम वाला है।

अलिफ़्-लाम्-मीम्-सॉद् (1) किताबुन् उन्ज़ि-ल इलै-क फ़ला यकुन् फ़ी सद्रि-क ह-रजुम् मिन्हु लितुन्ज़ि-र बिही व ज़िक्रा लिल्मुअ्मिनीन (2) इत्तबिअ़ू मा उन्ज़ि-ल इलैकुम् मिर्रब्बिकुम् व ला तत्तबिअ़ू मिन् दूनिही औलिया-अ, क़लीलम् मा तज़क्करून (3) व कम् मिन् क़र्यतिन् अह्लक्नाहा फ़जा-अहा बअ्सुना बयातन् औ हुम् क़ा-इलून (4) फ़मा का-न दअ़्वाहुम् इज़्	अलिफ़्-लाम्-मीम्-सॉद। (1) यह किताब उतरी है तुझ पर सो चाहिए कि तेरा जी तंग न हो इसके पहुँचाने से, ताकि डराये इससे और नसीहत हो ईमान वालों को। (2) चलो इसी पर जो उतरा तुम पर तुम्हारे रब की तरफ़ से, और न चलो इसके सिवा और साथियों के पीछे, तुम बहुत कम ध्यान करते हो। (3) और कितनी बस्तियाँ हमने हलाक कर दीं कि पहुँचा उन पर हमारा अ़ज़ाब रातों-रात या दोपहर को सोते हुए। (4) फिर यही थी उनकी पुकार जिस वक़्त कि पहुँचा उन पर हमारा अ़ज़ाब कि कहने लगे कि

जा-अहुम् बअ्सुना इल्ला अन् क़ालू इन्ना कुन्ना ज़ालिमीन (5) फ़-लनस्-अलन्नल्लज़ी-न उर्सि-ल इलैहिम् व ल-नस्अलन्नल्-मुर्सलीन (6) फ़-ल-नक़ुस्सन्-न अलैहिम् बिअ़िल्मिंव्-व मा कुन्ना ग़ा-इबीन (7)	बेशक हम ही थे गुनाहगार। (5) सो हमको ज़रूर पूछना है उनसे जिनके पास रसूल भेजे गये थे, और हमको ज़रूर पूछना है रसूलों से। (6) फिर हम उनको हालात सुना देंगे अपने इल्म से और हम कहीं ग़ायब न थे। (7)

सूरत के मज़ामीन का ख़ुलासा

पूरी सूरत पर नज़र डालने से मालूम होता है कि इसमें ज़्यादातर मज़ामीन मआ़द (यानी आख़िरत) और रिसालत से संबन्धित हैं, और पहली ही आयत 'किताबुन उन्ज़ि-ल....' में नुबुव्वत का और आयत नम्बर 6 'फ़-लनस्अलन्नल्लज़ी-न.....' में मआ़द व आख़िरत की तहक़ीक़ का मज़मून है। और रुकूअ़ नम्बर चार के आधे से रुकूअ़ नम्बर छह के ख़त्म तक बिल्कुल आख़िरत की बहस है। फिर रुकूअ़ नम्बर आठ से इक्कीसवीं रुकूअ़ तक वे मामलात बयान हुए हैं जो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के बीच हुए हैं। ये सब मसले रिसालत से संबन्धित हैं, और इन क़िस्सों में साथ-साथ नुबुव्वत व रिसालत के इनकारियों की सज़ाओं का भी ज़िक्र चला आया है, ताकि नुबुव्वत व रिसालत के मौजूदा इनकार करने वालों को सीख हासिल हो। और रुकूअ़ नम्बर बाईस के आधे से तेईस के ख़त्म तक फिर मआ़द (यानी आख़िरत) की बहस है। सिर्फ़ सातवें और बाईसवीं रुकूअ़ के शुरू में और आख़िरी रुकूअ़ (यानी नम्बर चौबीस) के अक्सर हिस्से में तौहीद (अल्लाह के एक अकेला माबूद होने के एतिक़ाद लाने) पर ख़ास बहस है, बाक़ी बहुत कम हिस्सा सूरत का ऐसा है जिसमें आंशिक फ़ुरूई (ऊपर के) अहकाम मौक़े की मुनासबत से बयान हुए हैं। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

अलिफ़्-लाम्-मीम्-सॉद (इसके मायने तो अल्लाह तआ़ला ही के इल्म में हैं और अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बीच एक राज़ है, जिस पर उम्मत को इत्तिला नहीं दी गयी, बल्कि इसकी जुस्तजू को भी मना किया गया)।

كِتٰبٌ اُنْزِلَ اِلَيْكَ............ الخ.

यह (क़ुरआन) एक किताब है जो (अल्लाह की तरफ़ से) आपके पास इसलिए भेजी गई है कि आप इसके ज़रिये (लोगों को नाफ़रमानी की सज़ा से) डराएँ, सो आपके दिल में (किसी के न मानने से) बिल्कुल तंगी न होनी चाहिए (क्योंकि किसी के न मानने से आपकी नुबुव्वत के

असल मक़सद में जो कि हक़ बात पहुँचाने का है, कोई ख़लल नहीं आता, फिर आप क्यों दुखी और परेशान हों)। और यह (क़ुरआन विशेष तौर पर) नसीहत है ईमान वालों के लिए।

(आगे आम उम्मत को ख़िताब है कि जब क़ुरआन का अल्लाह की ओर से नाज़िल होना साबित हो गया तो) तुम लोग इस (किताब की हिदायतों का) पालन करो, जो तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से आई है (किताब पर अ़मल करना यह है कि इसकी दिल से तस्दीक़ भी करो और इस पर अ़मल भी) और ख़ुदा तआ़ला को छोड़कर (जिसने तुम्हारी हिदायत के लिये क़ुरआन नाज़िल किया) दूसरे रफ़ीक़ों (साथियों) की पैरवी मत करो, (जो तुमको गुमराह करते हैं, जैसे जिन्नात व इनसानों में के शैतान, मगर बावजूद इस हमदर्दी भरी तंबीह और समझाने के) तुम लोग बहुत ही कम नसीहत मानते हो। और बहुत-सी बस्तियों को (यानी उनके रहने वालों को उनके कुफ़्र और झुठलाने की बिना पर) हमने तबाह कर दिया, और उन पर हमारा अ़ज़ाब (या तो) रात के वक़्त पहुँचा (जो सोने और आराम करने का वक़्त है) या ऐसी हालत में (पहुँचा) कि वे दोपहर के वक़्त आराम में थे (यानी किसी को किसी वक़्त, किसी को किसी वक़्त)। तो जिस वक़्त उन पर हमारा अ़ज़ाब आया उस वक़्त उनके मुँह से सिवाय इसके और कोई बात न निकली थी कि वाक़ई हम ज़ालिम (और ख़तावार) थे। (यानी ऐसे वक़्त इक़रार किया जबकि इक़रार का वक़्त गुज़र चुका था। यह तो दुनियावी अ़ज़ाब हुआ) फिर (उसके बाद आख़िरत के अ़ज़ाब का सामान होगा यानी क़ियामत में) हम उन लोगों से (भी) ज़रूर पूछेंगे जिनके पास पैग़म्बर भेजे गए थे (कि तुमने पैग़म्बरों का कहना माना या नहीं) और हम पैग़म्बरों से ज़रूर पूछेंगे (कि तुम्हारी उम्मतों ने तुम्हारा कहना माना या नहीं? और दोनों सवालों से मक़सद काफ़िरों को डाँट-डपट और तंबीह होगी) फिर हम चूँकि पूरी ख़बर रखते हैं, ख़ुद ही (सब के सामने उनके आमाल को) बयान कर देंगे, और हम (अ़मल के वक़्त और जगह से) ग़ायब तो न थे।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस पूरी सूरत पर नज़र डालने से मालूम होता है कि इस सूरत के मज़ामीन ज़्यादातर मआ़द यानी आख़िरत और नुबुव्वत व रिसालत के बारे में हैं। चुनाँचे सूरत के शुरू से छठे रुकूअ़ तक तक़रीबन मआ़द व आख़िरत के मज़मून का बयान हुआ है, फिर आठवें रुकूअ़ से इक्कीसवें रुकूअ़ तक पहले अम्बिया के हालात और उनकी उम्मतों के वाक़िआ़त, उनकी जज़ा व सज़ा और उन पर आने वाले अ़ज़ाबों का विस्तार से तज़किरा है

فَلَا يَكُنْ فِىْ صَدْرِكَ حَرَجٌ

पहली आयत में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब फ़रमाकर यह इरशाद किया गया है कि यह क़ुरआन अल्लाह की किताब है जो आपके पास भेजी गयी है, आपको इसकी वजह से दिली तंगी न होनी चाहिये। दिली तंगी से मुराद यह है कि क़ुरआने करीम और उसके अहकाम की तब्लीग़ (पहुँचाने) में आपको किसी का डर बाधा और रुकावट न होना चाहिये कि लोग इसको झुठला देंगे और आपको तकलीफ़ देंगे। (मज़हरी, अबुल-आ़लिया की रिवायत से)

इशारा इस बात की तरफ़ है कि जिसने आप पर यह किताब नाज़िल फ़रमाई है उसने आपकी इमदाद व हिफ़ाज़त का भी इन्तिज़ाम कर दिया है, इसलिये आप क्यों दिल-तंग (दुखी और परेशान) हों। और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि इस जगह दिली तंगी से मुराद यह है कि क़ुरआन और इस्लाम के अहकाम सुनकर भी जो लोग मुसलमान न होते थे तो यह हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर उम्मत के लिये शफ़क़त व हमदर्दी के सबब भारी गुज़रता था, इसी को दिली तंगी से ताबीर किया गया, और यह बतलाया गया है कि आपका फ़र्ज़े मन्सबी सिर्फ़ तब्लीग़ व दावत का है, जब आपने यह काम कर लिया तो अब यह ज़िम्मेदारी आपकी नहीं कि कौन मुसलमान हुआ कौन नहीं हुआ, फिर आप क्यों बिना वजह दिल-तंग हों।

فَلَنَسْئَلَنَّ الَّذِيْنَ اُرْسِلَ اِلَيْهِمْ وَلَنَسْئَلَنَّ الْمُرْسَلِيْنَ.

यानी क़ियामत के दिन आ़म लोगों से सवाल किया जायेगा कि हमने तुम्हारे पास अपने रसूल और किताबें भेजी थीं, तुमने उनके साथ क्या मामला किया? और रसूलों से पूछा जायेगा कि जो रिसालत और अल्लाह के अहकाम का पैग़ाम देकर हमने आपको भेजा था वो आप हज़रात ने अपनी-अपनी उम्मतों को पहुँचा दिये या नहीं? (मज़हरी, बैहक़ी से इब्ने अ़ब्बास के हवाले से)

और सही मुस्लिम में हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से बयान हुआ है कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आख़िरी हज के ख़ुतबे (सम्बोधन) में लोगों से सवाल किया कि क़ियामत के दिन तुम लोगों से मेरे बारे में सवाल किया जायेगा कि मैंने तुम लोगों को अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा दिया कि नहीं? उस वक़्त तुम इसके जवाब में क्या कहोगे? सब सहाबा किराम ने अ़र्ज़ किया कि हम कहेंगे कि आपने अल्लाह का पैग़ाम हम तक पहुँचा दिया, और अल्लाह की अमानत का हक़ अदा कर दिया, और उम्मत के साथ ख़ैरख़्वाही का मामला किया। यह सुनकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

اَللّٰهُمَّ اشْهَدْ.

''यानी या अल्लाह! आप गवाह रहें।''

और मुस्नद अहमद की रिवायत में है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला मुझसे मालूम फ़रमायेंगे कि क्या मैंने अल्लाह तआ़ला का पैग़ाम बन्दों को पहुँचा दिया, और मैं जवाब में अ़र्ज़ करूँगा कि मैंने पहुँचा दिया है, इसलिये अब तुम सब इसका एहतिमाम करो कि जो लोग हाज़िर (उपस्थित) हैं वे ग़ायब (अनुपस्थित) लोगों तक मेरा पैग़ाम पहुँचा दें। (तफ़सीरे मज़हरी)

ग़ायब लोगों से मुराद वे लोग हैं जो उस ज़माने में मौजूद थे मगर उस मज्लिस में हाज़िर न थे, और वो नस्लें भी जो बाद में पैदा होंगी। उन तक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पैग़ाम पहुँचाने का मतलब यह है कि हर ज़माने के लोग आने वाली नस्ल को इस पैग़ाम के पहुँचाने का सिलसिला जारी रखें, ताकि क़ियामत तक पैदा होने वाले तमाम इनसानों को यह पैग़ाम पहुँच जाये।

وَالْوَزْنُ يَوْمَئِذِ ِالْحَقُّ ۚ فَمَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِينُهُ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ۞ وَمَنْ خَفَّتْ مَوَازِينُهُ فَأُولَٰئِكَ الَّذِينَ خَسِرُوا أَنْفُسَهُمْ بِمَا كَانُوا بِآيَاتِنَا يَظْلِمُونَ ۞ وَلَقَدْ مَكَّنَّاكُمْ فِي الْأَرْضِ وَجَعَلْنَا لَكُمْ فِيهَا مَعَايِشَ ۗ قَلِيلًا مَا تَشْكُرُونَ ۞

ع ۸

वल्वज़्नु यौमइज़ि-निल्हक़्क़ु फ़-मन् सक़ुलत् मवाज़ीनुहू फ़-उलाइ-क हुमुल्-मुफ़्लिहून (8) व मन् ख़फ़्फ़त् मवाज़ीनुहू फ़-उला-इकल्लज़ी-न ख़ासिरू अन्फ़ु-सहुम् बिमा कानू बिआयातिना यज़्लिमून (9) व ल-क़द् मक्कन्नाकुम् फ़िल्अर्ज़ि व जअ़ल्ना लकुम् फ़ीहा मआयि-श, क़लीलम् मा तश्कुरून (10) ❁	और तौल उस दिन ठीक होगी फिर जिसकी तौलें भारी हुईं सो वही हैं निजात पाने वाले। (8) और जिसकी तौलीं हल्की हुईं सो वही हैं जिन्होंने अपना नुक़सान किया, इस वास्ते कि हमारी आयतों का इनकार करते थे। (9) और हमने तुमको जगह दी ज़मीन में और मुक़र्रर कर दीं उसमें तुम्हारे लिये रोज़ियाँ, तुम बहुत कम शुक्र करते हो। (10) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और उस दिन (यानी क़ियामत के दिन आमाल व अ़क़ीदों का) वज़न भी किया जाएगा (ताकि आम तौर पर हर एक की हालत ज़ाहिर हो जाये) फिर (वज़न के बाद) जिस शख़्स का (ईमान का) पल्ला भारी होगा (यानी वह मोमिन होगा) सो ऐसे लोग (तो) कामयाब होंगे (यानी निजात पायेंगे)। और जिस शख़्स का (ईमान का) पल्ला हल्का होगा (यानी वह काफ़िर होगा) सो ये वे लोग होंगे जिन्होंने अपना नुक़सान कर लिया, इस वजह से कि वे हमारी आयतों की हक़-तल्फ़ी करते थे। और बेशक हमने तुमको ज़मीन पर रहने के लिए जगह दी और हमने तुम्हारे लिए इस (ज़मीन) में ज़िन्दगानी का सामान पैदा किया (जिसका तक़ाज़ा यह था कि तुम इसके शुक्रिये में फ़रमाँबरदार व हुक्मों के पालनहारी होते, लेकिन) तुम लोग बहुत ही कम शुक्र अदा करते हो (मुराद इससे इताअ़त है, और कम इसलिये फ़रमाया कि थोड़ा बहुत नेक काम तो अक्सर लोग कर ही लेते हैं, लेकिन ईमान न होने के सबब वह क़ाबिले एतिबार नहीं)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में इरशाद है:

وَالْوَزْنُ يَوْمَئِذِ ِالْحَقُّ

यानी भले-बुरे आमाल का वज़न होना उस दिन हक़ व सही है, इसमें किसी शक व शुब्हे की गुंजाईश नहीं। इसमें इस तरफ़ इशारा है कि लोग इससे धोखा न खायें कि वज़न और तौल तो उन चीज़ों की हुआ करती है जिनमें कोई बोझ और भारीपन हो, इनसान के आमाल चाहे अच्छे हों या बुरे उनका कोई जिस्म और वजूद ही नहीं, जिसकी तौल हो सके, फिर आमाल का वज़न कैसे होगा? क्योंकि अव्वल तो मालिकुल-मुल्क क़ादिरे-मुतलक़ हर चीज़ पर क़ादिर है, यह क्या ज़रूरी है कि जिस चीज़ को हम न तौल सकें हक़ तआ़ला भी न तौल सकें। इसके अ़लावा आजकल तो दुनिया में वज़न तौलने के लिये नये-नये उपकरण और आले ईजाद हो चुके हैं, जिनमें न तराज़ू की ज़रूरत है, न उनके पल्लों की और न डण्डी की और काँटे की। आज तो इन नये उपकरणों के ज़रिये वो चीज़ें भी तौली जाती हैं जिनके तौलने का आज से पहले किसी को ख़्याल व गुमान भी न था। हवा तौली जाती है, बिजली की रौ तौली जाती है, सर्दी गर्मी तौली जाती है, इनका मीटर ही इनकी तराज़ू होती है, अगर हक़ तआ़ला अपनी कामिल क़ुदरत से इनसानी आमाल का वज़न कर लें तो इसमें क्या मुहाल और ताज्जुब की बात है। इसके अ़लावा ख़ालिक़े कायनात को इस पर भी क़ुदरत है कि हमारे आमाल को किसी वक़्त जिस्मानी वजूद और कोई शक्ल व सूरत अ़ता फ़रमा दें। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीस की बहुत सी रिवायतें इस पर सुबुत भी हैं कि बर्ज़ख़ और मेहशर में इनसानी आमाल ख़ास-ख़ास शक्लों और सूरतों में आयेंगे। क़ब्र में इनसान के नेक आमाल एक हसीन सूरत में उसकी तन्हाई के साथी बनेंगे, और बुरे आमाल साँप बिच्छू बनकर लिपटेंगे। हदीस में है कि जिस शख़्स ने माल की ज़कात नहीं अदा की वह माल एक ज़हरीले साँप की शक्ल में उसकी क़ब्र में पहुँचकर उसको डसेगा, और कहेगा कि मैं तेरा माल हूँ मैं तेरा ख़ज़ाना हूँ।

इसी तरह मोतबर हदीसों में है कि मैदाने हश्र में इनसान के नेक आमाल उसकी सवारी बन जायेंगे, और बुरे आमाल बोझ बनकर उसके सर पर लादे जायेंगे।

एक सही हदीस में है कि क़ुरआन मजीद की सूरः ब-क़रह और सूरः आले इमरान मैदाने हश्र में दो गहरे बादलों की शक्ल में आकर उन लोगों पर साया करने वाली होंगी जो इन सूरतों के पढ़ने वाले थे।

इसी तरह की हदीस की बेशुमार रिवायतें विश्वसनीय और मोतबर तरीक़ों से मन्क़ूल हैं जिनसे मालूम होता है कि इस जहान से गुज़र जाने के बाद हमारे ये सारे अच्छे-बुरे आमाल ख़ास-ख़ास शक्लें और सूरतें इख़्तियार कर लेंगे, और एक जिस्मानी वजूद के साथ मैदाने हश्र में मौजूद होंगे।

क़ुरआन मजीद के भी बहुत से इरशादात से इसकी ताईद होती है। एक जगह इरशाद है:

وَوَجَدُوْا مَا عَمِلُوْا حَاضِرًا.

"यानी लोगों ने दुनिया में जो कुछ अ़मल किया था उसको वहाँ हाज़िर व मौजूद पायेंगे।" एक आयत में फ़रमाया:

مَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَّرَهٗ. وَمَنْ يَّعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَّرَهٗ.

"यानी जो शख़्स एक ज़र्रे के बराबर भी कोई नेकी करेगा तो क़ियामत में उसको देखेगा, और एक ज़र्रे की बराबर भी बुराई करेगा तो क़ियामत में उसको भी देखेगा।"

इन हालात से ज़ाहिर यही है कि इनसान का अ़मल माद्दी वजूद के साथ उसके सामने आयेगा, उनमें भी कोई और दूर के मायने बयान करने की कोई ज़रूरत नहीं, कि आमाल की जज़ा (बदले) को मौजूद पायेगा और देखेगा।

इन हालात में ज़ाहिर है कि इन आमाल का तौला जाना कोई बईद या मुश्किल चीज़ नहीं रहता, मगर चूँकि थोड़ी सी अ़क्ल व समझ का मालिक इनसान इसका आ़दी है कि सारे चीज़ों और मामलात को अपनी मौजूदा हालत और ज़ाहिरी कैफ़ियत पर अन्दाज़ा व ख़्याल करता है, और सब चीज़ों को इसी के पैमाने से जाँचता है। क़ुरआने करीम ने इसके इसी हाल को इस तरह बयान फ़रमाया है:

يَعْلَمُوْنَ ظَاهِرًا مِّنَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْاٰخِرَةِ هُمْ غٰفِلُوْنَ.

यानी ये लोग सिर्फ़ दुनियावी ज़िन्दगी के एक ज़ाहिरी पहलू को जानते हैं वह भी पूरा नहीं, और आख़िरत से बिल्कुल ग़ाफ़िल हैं। दुनियावी ज़िन्दगी के ज़ाहिरी मामलात में तो ज़मीन व आसमान की बातें बनाते हैं, मगर चीज़ों की हक़ीक़त से जो पूरे तौर पर आख़िरत में सामने आने वाली हैं, ये लोग बिल्कुल बेख़बर हैं।

उक्त आयत में इसी लिये एहतिमाम करके यह फ़रमाया गया:

وَالْوَزْنُ يَوْمَئِذِ ِالْحَقُّ.

ताकि ज़ाहिरी हालात पर नज़र रखने वाला यह इनसान आख़िरत में आमाल के तौले जाने से इनकार न कर बैठे, जो क़ुरआने करीम से साबित और पूरी उम्मते मुस्लिमा का अ़क़ीदा है।

क़ुरआन मजीद में क़ियामत के दिन आमाल का वज़न होने का मसला बहुत सी आयतों में विभिन्न उनवानों से बयान हुआ है और हदीस की रिवायतें इसकी तफ़सीलात में बेशुमार हैं।

आमाल का वज़न होने के बारे में एक शुब्हा और जवाब

आमाल के वज़न होने के बारे में जो तफ़सीली बयान रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसों में आया है उसमें एक बात तो यह क़ाबिले ग़ौर है कि हदीस की अनेक रिवायतों में आया है कि मेहशर की इन्साफ़ की तराज़ू में सबसे बड़ा वज़न कलिमे "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाहि" का होगा। जिस पल्ले में यह कलिमा होगा वह सब पर भारी रहेगा।

तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, इब्ने हिब्बान, बैहक़ी और हाकिम ने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से यह रिवायत नक़ल की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- मेहशर में मेरी उम्मत का एक आदमी सारी मख़्लूक़ के सामने लाया जायेगा और

उसके निन्नानवे नामा-ए-आमाल लाये जायेंगे, और उनमें से हर नामा-ए-आमाल इतना लम्बा होगा कि जहाँ तक उसकी नज़र पहुँचती है। और ये सब नामा-ए-आमाल बुराईयों और गुनाहों से भरे होंगे। उस शख़्स से पूछा जायगा कि इन नामा-ए-आमाल में जो कुछ लिखा है वह सब सही है या नामा-ए-आमाल लिखने वाले फ़रिश्तों ने तुम पर कुछ ज़ुल्म किया है और ख़िलाफ़े हक़ीक़त कोई बात लिख दी है? वह इक़रार करेगा कि ऐ मेरे परवर्दिगार! जो कुछ लिखा है सब सही है, और दिल में घबरायेगा कि अब मेरी निजात की क्या सूरत हो सकती है? उस वक़्त हक़ तआ़ला फ़रमायेंगे कि आज किसी पर ज़ुल्म नहीं होगा, इन तमाम गुनाहों के मुक़ाबले में तुम्हारी एक नेकी का पर्चा भी हमारे पास मौजूद है, जिसमें तुम्हारा कलिमाः

اَشْهَدُ اَنْ لَّاۤ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ.

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू

लिखा हुआ है। वह अ़र्ज़ करेगा कि ऐ परवर्दिगार! इतने बड़े सियाह नामा-ए-आमाल के मुक़ाबले में यह छोटा सा पर्चा क्या वज़न रखेगा? उस वक़्त इरशाद होगा कि तुम पर ज़ुल्म नहीं होगा, और एक पल्ले में वो सब गुनाहों से भरे हुए नामा-ए-आमाल रखे जायेंगे, दूसरे में यह ईमान के कलिमे का पर्चा रखा जायेगा, तो इस कलिमे का पल्ला भारी हो जायेगा और सारे गुनाहों का पल्ला हल्का हो जायेगा। इस वाक़िए को बयान करके रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह के नाम के मुक़ाबले में कोई चीज़ भारी नहीं हो सकती।

(तफ़सीरे मज़हरी)

और मुस्नद बज़्ज़ार और मुस्तदरक हाकिम में हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जब नूह अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात का वक़्त आया तो उन्होंने अपने लड़कों को जमा करके फ़रमाया कि मैं तुम्हें कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु" की वसीयत करता हूँ। क्योंकि अगर सातों आसमान और ज़मीन एक पल्ले में और कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु" दूसरे पल्ले में रख दिया जाये तो कलिमे का पल्ला ही भारी रहेगा। इसी मज़मून की हदीस की रिवायतें हज़रत अबू सईद ख़ुदरी, हज़रत इब्ने अ़ब्बास और हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से मोतबर सनदों के साथ हदीस की किताबों में नक़ल की गयी हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इन रिवायतों का तक़ाज़ा तो यह है कि मोमिन का पल्ला हमेशा भारी रहेगा, चाहे वह कितने भी गुनाह करे, लेकिन क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों और हदीस की बहुत सी रिवायतों से साबित होता है कि मुसलमानों की नेकियों और अच्छाईयों को तौला जायेगा, किसी की नेकियों का पल्ला भारी होगा, किसी के गुनाहों का। जिसकी नेकियों का पल्ला भारी रहेगा वह निजात पायेगा, जिसकी बुराईयों और गुनाहों का पल्ला भारी होगा उसको अ़ज़ाब होगा।

मसलन क़ुरआन मजीद की एक आयत में हैः

وَنَضَعُ الْمَوَازِيْنَ الْقِسْطَ لِيَوْمِ الْقِيٰمَةِ فَلَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْئًا وَاِنْ كَانَ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِّنْ خَرْدَلٍ اَتَيْنَا بِهَا وَكَفٰى بِنَا حٰسِبِيْنَ.

"यानी हम कियामत के दिन इन्साफ़ की तराज़ू कायम करेंगे इसलिये किसी शख़्स पर मामूली सा भी ज़ुल्म नहीं होगा। जो भलाई या बुराई एक राई के दाने के बराबर भी किसी ने की है वह सब अमल की तराज़ू में रखी जायेगी, और हम हिसाब के लिये काफ़ी हैं।"

और सूरः कारिआ में है:

فَاَمَّا مَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِيْنُهٗ فَهُوَ فِیْ عِيْشَةٍ رَّاضِيَةٍ. وَاَمَّا مَنْ خَفَّتْ مَوَازِيْنُهٗ فَاُمُّهٗ هَاوِيَةٌ.

"यानी जिसका नेकियों का पल्ला भारी होगा वह उम्दा ऐश में रहेगा, और जिसका पल्ला नेकी का हल्का होगा उसका मकाम दोज़ख़ होगा।"

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इन आयतों की तफ़सीर में फ़रमाया कि जिस मोमिन का नेकियों का पल्ला भारी होगा वह अपने आमाल के साथ जन्नत में और जिसका गुनाहों का पल्ला भारी होगा वह अपने आमाल के साथ जहन्नम में भेज दिया जायेगा।

(बैहकी, शुअ़बुल-ईमान, तफ़सीरे मज़हरी)

और अबू दाऊद में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि अगर किसी बन्दे के फ़र्ज़ों में कोई कमी पाई जाये तो रब्बुल-आ़लमीन का इरशाद होगा कि देखो इस बन्दे के कुछ नवाफ़िल भी हैं या नहीं, अगर नवाफ़िल मौजूद हैं तो फ़र्ज़ों की कमी को नफ़्लों से पूरा कर दिया जायेगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

इन तमाम आयतों और रिवायतों का हासिल यह है कि मोमिन मुसलमान का पल्ला भी कभी भारी कभी हल्का होगा। इसलिये तफ़सीर के कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि इससे मालूम होता है कि मेहशर में वज़न दो मर्तबा होगा, पहले कुफ़्र व ईमान का वज़न होगा, जिसके ज़रिये मोमिन, काफ़िर का फ़र्क़ और भेद किया जायेगा, इस वज़न में जिसके नामा-ए-आमाल में सिर्फ़ ईमान का कलिमा भी है उसका पल्ला भारी हो जायेगा, और वह काफ़िरों के गिरोह से अलग कर दिया जायेगा। फिर दूसरा वज़न अच्छे बुरे आमाल का होगा, इसमें किसी मुसलमान की नेकियाँ किसी की बुराईयाँ भारी होंगी, और उसी के मुताबिक़ उसको जज़ा व सज़ा मिलेगी। इस तरह तमाम आयतों और रिवायतों का मज़मून अपनी-अपनी जगह दुरुस्त और एक दूसरे के मुवाफ़िक़ हो जाता है। (तफ़सीर बयानुल-क़ुरआन)

आमाल का वज़न किस तरह होगा?

बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से यह हदीस मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन कुछ मोटे फ़र्बा आदमी आयेंगे जिनका वज़न अल्लाह के नज़दीक एक मच्छर के पर के बराबर भी न होगा, और इसके सुबूत में आपने क़ुरआने करीम की यह आयत पढ़ी:

فَلَا نُقِيْمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَزْنًا.

"यानी क़ियामत के दिन हम उनका कोई वज़न क़रार न देंगे।" (तफ़सीरे मज़हरी)

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तारीफ़ में यह हदीस आई है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इनकी टाँगें ज़ाहिर में कितनी पतली हैं लेकिन क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कि क़ियामत की इन्साफ़ की तराज़ू में इनका वज़न उहुद पहाड़ से भी ज़्यादा होगा।

और हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की वह हदीस जिस पर इमाम बुख़ारी ने अपनी किताब को ख़त्म किया है, उसमें यह है कि दो कलिमे ऐसे हैं जो ज़बान पर बहुत हल्के हैं मगर अ़मल की तराज़ू में बहुत भारी हैं, और अल्लाह तआ़ला के नज़दीक महबूब हैं, और वो कलिमे यह हैं:

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَبِحَمْدِهٖ سُبْحَانَ اللّٰهِ الْعَظِيْمِ.

सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिही सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाया करते थे कि **सुब्हानल्लाह** कहने से अ़मल की तराज़ू का आधा पल्ला भर जाता है, और **अल्हम्दु लिल्लाह** से बाक़ी आधा पूरा हो जाता है।

और अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, इब्ने हिब्बान ने सही सनद के साथ हज़रत अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अ़मल की तराज़ू में अच्छे अख़्लाक़ के बराबर कोई अ़मल वज़नी नहीं होगा।

और हज़रत अबूज़र गिफ़ारी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हें ऐसे दो काम बताता हूँ जिन पर अ़मल करना इनसान के लिये कुछ भारी नहीं, और अ़मल की तराज़ू में वो सबसे ज़्यादा भारी होंगे- एक अच्छा अख़्लाक़, दूसरे ज़्यादा ख़ामोश रहना, यानी बिना ज़रूरत कलाम न करना।

और इमाम अहमद रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने किताबुज़्ज़ोहद में हज़रत हाज़िम रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास एक मर्तबा जिब्रीले अमीन तशरीफ़ लाये तो वहाँ कोई शख़्स अल्लाह के ख़ौफ़ से रो रहा था, तो जिब्रीले अमीन ने फ़रमाया कि इनसान के तमाम आमाल का तो वज़न होगा मगर ख़ुदा व आख़िरत के ख़ौफ़ से रोना ऐसा अ़मल है जिसको तौला न जायेगा, बल्कि एक आँसू भी जहन्नम की बड़ी से बड़ी आग को बुझा देगा। (तफ़सीरे मज़हरी)

एक हदीस में है कि मैदाने हश्र में एक शख़्स हाज़िर होगा, जब उसका नामा-ए-आमाल सामने आयेगा तो वह अपने नेक आमाल को बहुत कम पाकर घबरायेगा कि अचानक एक चीज़ बादल की तरह उठकर आयेगी और उसके नेक आमाल के पल्ले में गिर जायेगी, और उसको बतलाया जायेगा कि यह तेरे उस अ़मल का फल है जो तू दुनिया में लोगों को दीन के अहकाम व मसाईल बतलाता और सिखाता था, और यह तेरी तालीम का सिलसिला आगे चला तो जिस जिस शख़्स ने इस पर अ़मल किया उन सब के अ़मल में तेरा हिस्सा भी लगाया गया।

(तफ़सीरे मज़हरी, इब्ने मुबारक की रिवायत से)

तबरानी ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- जो शख़्स जनाज़े के साथ क़ब्रिस्तान तक जाये उसकी अ़मल की तराज़ू में दो क़ीरात रख दी जायेंगी। और दूसरी रिवायतों में है कि उस क़ीरात का वज़न उहुद पहाड़ के बराबर होगा।

तबरानी ने हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- इनसान के अ़मल की तराज़ू में सबसे पहले जो अ़मल रखा जायेगा वह अपने अहल व अ़याल (घर वालों और बाल-बच्चों) पर ख़र्च करने और उनकी ज़रूरतें पूरा करने का नेक अ़मल है।

और इमाम ज़हबी रह. ने हज़रत इमरान बिन हुसैन रज़ियल्लाहु अ़न्हु से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन उलेमा की रोशनाई जिससे उन्होंने इल्मे दीन और अहकामे दीन लिखे हैं और शहीदों के ख़ून को तौला जायेगा तो उलेमा की रोशनाई का वज़न शहीदों के ख़ून के वज़न से बढ़ जायेगा।

क़ियामत में आमाल का वज़न होने के बारे में हदीस की इस तरह की रिवायतें बहुत हैं, यहाँ चन्द को इसलिये ज़िक्र किया गया है कि इनसे ख़ास-ख़ास आमाल की फ़ज़ीलत और क़द्र व क़ीमत का अन्दाज़ा होता है।

हदीस की इन तमाम रिवायतों से आमाल के वज़न की कैफ़ियत अलग-अलग मालूम होती है। कुछ से मालूम होता है कि अ़मल करने वाले इनसान तौले जायेंगे, वे अपने-अपने अ़मल के एतिबार से हल्के भारी होंगे। और कुछ से मालूम होता है कि उनके नामा-ए-आमाल तौले जायेंगे, और कुछ से साबित होता है कि ख़ुद आमाल जिस्म वाले हो जायेंगे और वे तौले जायेंगे। इमामे तफ़सीर इब्ने कसीर ने ये सब रिवायतें नक़ल करने के बाद फ़रमाया कि यह हो सकता है कि वज़न विभिन्न सूरतों से कई मर्तबा किया जाये, और ज़ाहिर है कि पूरी हक़ीक़त इन मामलात की अल्लाह तआ़ला ही जानते हैं, और अ़मल करने के लिये उस हक़ीक़त का जानना ज़रूरी भी नहीं, सिर्फ़ इतना ही काफ़ी है कि हमारे आमाल का वज़न होगा, नेक आमाल का पल्ला हल्का रहा तो अ़ज़ाब के मुस्तहिक़ होंगे, यह दूसरी बात है कि हक़ तआ़ला किसी को ख़ुद अपने फ़ज़्ल व करम से या किसी नबी या वली की शफ़ाअ़त से माफ़ फ़रमा दें, और अ़ज़ाब से निजात हो जाये।

जिन रिवायतों में यह बयान हुआ है कि कुछ लोगों को सिर्फ़ ईमान के कलिमे की बदौलत निजात हो जायेगी और सब गुनाह इसके मुक़ाबले में माफ़ हो जायेंगे, यह आ़म उसूल से अलग इसी विशेष सूरत से संबन्धित हैं जो आ़म नियम से अलग मख़्सूस फ़ज़्ल व करम का प्रतीक है।

इन दोनों आयतों में जिनकी तफ़सीर अभी बयान हुई, गुनाहगारों को मैदाने हश्र की रुस्वाई और अल्लाह के अ़ज़ाब से डराया गया था। तीसरी आयत में अल्लाह तआ़ला की नेमतों का ज़िक्र फ़रमाकर हक़ को क़ुबूल करने और उस पर अ़मल करने की तरग़ीब इस तरह दी गयी कि हमने तुमको ज़मीन पर पूरी क़ुदरत और मालिकाना हक़ व इख़्तियार अ़ता किया, और फिर उसमें तुम्हारे लिये आराम व ऐश के सामान हासिल करने के हज़ारों रास्ते खोल दिये, गोया

रब्बुल-आलमीन ने ज़मीन को इनसान की तमाम ज़रूरतों से लेकर तफ़रीही सामान तक का अज़ीमुश्शान गोदाम बना दिया है, और तमाम इनसानी ज़रूरतों को इसके अन्दर पैदा फ़रमा दिया है। अब इनसान का काम सिर्फ़ इतना है कि इस गोदाम से अपनी ज़रूरतों को निकालने और उनके इस्तेमाल करने के तरीक़ों को सीख ले। इनसान के हर इल्म व फ़न और साईंस की नई से नई ईजाद का हासिल इसके सिवा कुछ नहीं कि कायनात के पैदा करने वाले की पैदा की हुई चीज़ें जो ज़मीन के गोदाम में महफ़ूज़ हैं, उनको सलीक़े के साथ निकाले और सही तरीक़े से इस्तेमाल करे। बेवक़ूफ़ और बुरे सलीक़े वाला आदमी जो इस गोदाम से निकालने का तरीक़ा नहीं जानता, या फिर निकाल कर उसके इस्तेमाल का तरीक़ा नहीं समझता वह उनके लाभ और फ़ायदों से मेहरूम रहता है, समझदार इनसान दोनों चीज़ों को समझकर उनसे नफ़ा उठाता है।

ख़ुलासा यह है कि इनसान की सारी ज़रूरतें हक़ तआ़ला ने ज़मीन में पैदा करके रख दी हैं जिसका तक़ाज़ा यह है कि वह हर वक़्त हर हाल में हक़ तआ़ला का शुक्र-गुज़ार हो, मगर वह ग़फ़लत में पड़कर अपने ख़ालिक़ व मालिक के एहसानात को भूल जाता है, और उन्हीं चीज़ों में उलझ कर रह जाता है। इसी लिये आयत के आख़िर में शिकायत के तौर पर इरशाद फ़रमायाः

قَلِيلًا مَّا تَشْكُرُونَ.

"यानी तुम लोग बहुत कम शुक्र अदा करते हो।"

وَلَقَدْ خَلَقْنٰكُمْ ثُمَّ صَوَّرْنٰكُمْ ثُمَّ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ ۖ فَسَجَدُوْٓا اِلَّآ اِبْلِيْسَ ۭ لَمْ يَكُنْ مِّنَ السّٰجِدِيْنَ ۝ قَالَ مَا مَنَعَكَ اَلَّا تَسْجُدَ اِذْ اَمَرْتُكَ ۭ قَالَ اَنَا خَيْرٌ مِّنْهُ ۚ خَلَقْتَنِيْ مِنْ نَّارٍ وَّخَلَقْتَهٗ مِنْ طِيْنٍ ۝ قَالَ فَاهْبِطْ مِنْهَا فَمَا يَكُوْنُ لَكَ اَنْ تَتَكَبَّرَ فِيْهَا فَاخْرُجْ اِنَّكَ مِنَ الصّٰغِرِيْنَ ۝ قَالَ اَنْظِرْنِيْٓ اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُوْنَ ۝ قَالَ اِنَّكَ مِنَ الْمُنْظَرِيْنَ ۝ قَالَ فَبِمَآ اَغْوَيْتَنِيْ لَاَقْعُدَنَّ لَهُمْ صِرَاطَكَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝ ثُمَّ لَاٰتِيَنَّهُمْ مِّنْ بَيْنِ اَيْدِيْهِمْ وَمِنْ خَلْفِهِمْ وَعَنْ اَيْمَانِهِمْ وَعَنْ شَمَآئِلِهِمْ ۭ وَلَا تَجِدُ اَكْثَرَهُمْ شٰكِرِيْنَ ۝ قَالَ اخْرُجْ مِنْهَا مَذْءُوْمًا مَّدْحُوْرًا ۭ لَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنْكُمْ اَجْمَعِيْنَ ۝

व ल-क़द् ख़लक़्नाकुम् सुम्-म सव्वर्नाकुम् सुम्-म क़ुल्ना लिल्मलाइ-कतिस्जुदू लिआद-म फ़-स-जदू इल्ला इब्ली-स, लम् यकुम् मिनस्साजिदीन (11) क़ा-ल मा	और हमने तुमको पैदा किया फिर सूरतें बनायीं तुम्हारी, फिर हुक्म किया फ़रिश्तों को कि सज्दा करो आदम को, पस सज्दा किया सब ने मगर इब्लीस न था सज्दे वालों में। (11) कहा तुझको क्या रुकावट

म-न-अ़-क अल्ला तस्जु-द इज़् अमर्तु-क, का-ल अ-न ख़ैरुम्-मिन्हु ख़लक़्तनी मिन्-नारिंव्-व ख़लक़्तहू मिन् तीन (12) का-ल फ़हबित् मिन्हा फ़मा यकूनु ल-क अन् त-तकब्ब-र फ़ीहा फ़ख़्रुज् इन्न-क मिनस्साग़िरीन (13) का-ल अन्ज़िर्नी इला यौमि युब्अ़सून (14) का-ल इन्न-क मिनल्-मुन्ज़रीन (15) का-ल फ़बिमा अग़्वैतनी ल-अक्अ़ुदन्-न लहुम् सिरातकल्-मुस्तक़ीम (16) सुम्-म लआतियन्नहुम् मिम्-बैनि ऐदीहिम् व मिन् ख़ल्फ़िहिम् व अ़न् ऐमानिहिम् व अ़न् शमा-इलिहिम्, व ला तजिदु अक्स-रहुम् शाकिरीन (17) कालख़्रुज् मिन्हा मज़्ऊमम्- मद्हूरन्, ल-मन् तबि-अ़-क मिन्हुम् लअम्-लअन्-न जहन्न-म मिन्कुम् अज्मअ़ीन (18)	थी कि तूने सज्दा न किया जब मैंने हुक्म दिया? बोला मैं इससे बेहतर हूँ, मुझको तूने बनाया आग से और इसको बनाया मिट्टी से। (12) कहा तू उतर यहाँ से, तू इस लायक़ नहीं कि तकब्बुर करे यहाँ, पस बाहर निकल तू ज़लील है। (13) बोला कि मुझे मोहलत दे उस दिन तक कि लोग क़ब्रों से उठाये जायें। (14) फ़रमाया तुझको मोहलत दी गई। (15) बोला तो जैसा तूने मुझे गुमराह किया है मैं भी ज़रूर बैठूँगा उनकी ताक में तेरी सीधी राह पर। (16) फिर उनपर आऊँगा उनके आगे से और पीछे से और दायें से और बायें से, और न पायेगा अक्सरों को उनमें शुक्रगुज़ार। (17) कहा निकल यहाँ से बुरे हाल से मरदूद होकर, जो कोई उनमें से तेरी राह पर चलेगा तो मैं ज़रूर भरूँगा दोज़ख़ को तुम सब से। (18)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने तुमको पैदा (करने का सामान शुरू) किया, (यानी आदम अ़लैहिस्सलाम का माद्दा बनाया, उसी माद्दे से तुम सब लोग हो) फिर (माद्दा बनाकर) हमने ही तुम्हारी सूरत बनाई (यानी उस माद्दे में आदम अ़लैहिस्सलाम की सूरत बनाई, फिर वही सूरत उनकी औलाद में चली आ रही है। यह नेमत ईजाद हुई) फिर (जब आदम अ़लैहिस्सलाम बन गये और नामों के उलूम से सम्मानित हुए तो) हमने फ़रिश्तों से फ़रमाया कि आदम को (अब) सज्दा करो, (यह इज़्ज़त व सम्मान की नेमत हुई) सो सब ने सज्दा किया सिवाय शैतान के, वह सज्दा करने वालों में

शामिल नहीं हुआ। (अल्लाह तआ़ला ने) फ़रमाया- तू जो सज्दा नहीं करता, तुझको इससे कौनसी बात रुकावट है, जबकि मैं (ख़ुद) तुझको हुक्म दे चुका। कहने लगा- (वह रुकावट यह है कि) मैं इससे बेहतर हूँ। आपने मुझको आग से पैदा किया है और इस (आदम) को आपने मिट्टी से पैदा किया। (यह शैतानी दलील पकड़ने का पहला मुक़द्दिमा है, और दूसरा मुक़द्दिमा जिसका ज़िक्र नहीं किया वह यह है कि आग नूरानी होने की वजह से मिट्टी से बेहतर है, तीसरा मुक़द्दिमा यह है कि अफ़ज़ल और बेहतर से निकलने वाली और उसकी औलाद भी ग़ैर-अफ़ज़ल की औलाद और उससे निकलने वाली से अफ़ज़ल होती है, चौथा मुक़द्दिमा यह है कि अफ़ज़ल का सज्दा करना ग़ैर-अफ़ज़ल को नामुनासिब है, इन चारों मुक़द्दिमों को मिलाकर शैतान ने अपने सज्दा न करने की यह दलील बनाई कि मैं अफ़ज़ल व बेहतर हूँ इसलिये ग़ैर-अफ़ज़ल को सज्दा नहीं किया। मगर पहले मुक़द्दिमे के सिवा सारे ही मुक़द्दिमे ग़लत हैं, और पहला मुक़द्दिमा भी आ़म इनसानों के हक़ में इस मायने के एतिबार से सही है कि इनसान की पैदाईश में ग़ालिब हिस्सा मिट्टी का है, बाक़ी दलील के तमाम मुक़द्दिमों का ग़लत होना स्पष्ट है, क्योंकि आग का ख़ाक पर अफ़ज़ल होना एक आंशिक फ़ज़ीलत तो हो सकती है कुल्ली तौर पर उसको अफ़ज़ल कहना दावा बिना दलील है। इसी तरह अफ़ज़ल से निकलने वाली और उसकी औलाद का अफ़ज़ल होना भी संदिग्ध है, हज़ारों वाक़िआ़त इसके ख़िलाफ़ सामने आये हैं, कि नेक की औलाद बद और बद की औलाद नेक हो जाती है। इसी तरह यह भी ग़लत है कि अफ़ज़ल को ग़ैर-अफ़ज़ल के लिये सज्दा नामुनासिब है, कई बार मस्लेहतों का तक़ाज़ा इसके ख़िलाफ़ होना देखा जाता है)।

(अल्लाह तआ़ला ने) फ़रमाया (जब तू ऐसा नाफ़रमान है) तो आसमान से उतर, तुझको कोई हक़ हासिल नहीं कि तू इसमें (यानी आसमान में रहकर) तकब्बुर करे, (जहाँ सब फ़रमाँबरदारों ही का मक़ाम है) सो तू (यहाँ से) निकल, (दूर हो) बेशक तू (इस तकब्बुर की वजह से) ज़लीलों में शुमार होने लगा। वह कहने लगा कि मुझे क़ियामत के दिन तक मोहलत दीजिये। (अल्लाह तआ़ला ने) फ़रमाया कि तुझको मोहलत दी गई। वह कहने लगा इस सबब से कि आपने मुझको (तक्वीनी हुक्म के तहत) गुमराह किया है मैं क़सम खाता हूँ कि मैं उन (के यानी आदम और आदम की औलाद की रहज़नी करने) के लिए आपकी सीधी राह पर (जो कि दीने हक़ है, जाकर) बैठूँगा। फिर उन पर (चारों तरफ़ से) हमला करूँगा, उनके आगे से भी और उनके पीछे से भी, और उनकी दाहिनी तरफ़ से भी और उनकी बाईं तरफ़ से भी (यानी उनके बहकाने में कोशिश का कोई पहलू बाक़ी न छोड़ूँगा ताकि वे आपकी इबादत न करने पायें) और (मैं अपनी कोशिश में कामयाब हूँगा, चुनाँचे) आप उनमें ज़्यादातर को (आपकी नेमतों का) एहसान मानने वाला न पाईएगा। (अल्लाह तआ़ला ने) फ़रमाया कि यहाँ (आसमान) से ज़लील व रुस्वा होकर निकल, (और तू जो आदम की औलाद को बहकाने को कहता है तो जो तेरा जी चाहे कर ले मैं सबसे बेपरवाह हूँ, न किसी के सही रास्ते पर आने से मेरा कोई फ़ायदा है न गुमराह होने से कोई नुक़सान) जो शख़्स उनमें से तेरा कहना मानेगा मैं ज़रूर तुम सबसे (यानी शैतान और उसकी बात मानने वालों से) जहन्नम को भर दूँगा।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम और शैतान का यह वाकिआ जो यहाँ बयान हुआ है इससे पहले सूरः ब-क़रह के चौथे रुकूअ़ में बयान हो चुका है। इसके बारे में बहुत सी तहक़ीक़-तलब बातों का बयान वहाँ हुआ है। यहाँ और तहक़ीक़-तलब बातों का जवाब लिखा जाता है।

शैतान की दुआ़ क़ियामत तक ज़िन्दगी की क़ुबूल हुई या नहीं, क़ुबूल होने की सूरत में दो आयतों के आपस में टकराने वाले अलफ़ाज़ की आपस में मुवाफ़क़त

शैतान ने ऐन उस वक़्त जबकि उस पर नाराज़गी व सज़ा हो रही थी अल्लाह तआ़ला से एक दुआ़ माँगी, और वह भी अ़जीब दुआ़ कि हश्र तक की ज़िन्दगी की मोहलत अ़ता फ़रमा दीजिए। इसके जवाब में जो इरशाद हक़ तआ़ला ने फ़रमाया उसके अलफ़ाज़ इस जगह मज़कूरा आयत में तो सिर्फ़ ये हैं:

اِنَّكَ مِنَ الْمُنْظَرِيْنَ.

"यानी तुझको मोहलत दी गयी" इन अलफ़ाज़ से दुआ़ व सवाल के हिसाब से यह समझा जा सकता है कि यह मोहलत हश्र तक की दी गयी, जैसा कि उसने सवाल किया था, मगर इसकी वज़ाहत इस आयत में नहीं है कि जिस मोहलत देने का ज़िक्र यहाँ फ़रमाया है वह शैतान के कहने के मुताबिक़ हश्र तक है या किसी और मियाद तक, लेकिन एक दूसरी आयत में इस जगहः

اِلٰى يَوْمِ الْوَقْتِ الْمَعْلُوْمِ.

के अलफ़ाज़ भी आये हैं, जिनके ज़ाहिर से यह मालूम होता है कि शैतान की माँगी हुई मोहलत क़ियामत तक नहीं दी गयी बल्कि किसी ख़ास मुद्दत तक दी गयी है जो अल्लाह के इल्म में महफ़ूज़ है। तो हासिल यह हुआ कि शैतान की यह दुआ़ क़ुबूल तो हुई मगर नामुकम्मल, कि बजाय क़ियामत के दिन के एक ख़ास मुद्दत की मोहलत दे दी गयी।

तफ़सीर इब्ने जरीर में एक रिवायत सुद्दी रह. से मन्क़ूल है उससे इसी मज़मून की ताईद होती है। उसके अलफ़ाज़ ये हैं:

فلم ينظره الى يوم البعث ولكن انظره الى يوم الوقت المعلوم وهو يوم ينفخ فى الصّور النفخة الأولى فصعق من فى السمٰوٰت ومن فى الارض فمات ...... الخ.

"अल्लाह तआ़ला ने शैतान को क़ियामत के दिन तक मोहलत नहीं दी बल्कि एक तयशुदा दिन तक मोहलत दी है और वह दिन वह है जिसमें पहला सूर फूँका जायेगा, जिससे आसमान व ज़मीन वाले सब बेहोश हो जायेंगे और मर जायेंगे।"

इसका ख़ुलासा यह हुआ कि शैतान ने तो अपनी दुआ में उस वक़्त तक की मोहलत माँगी थी जबकि दूसरा सूर फूँकने तक तमाम मुर्दों को ज़िन्दा किया जायेगा, उसी का नाम यौमुल-बअ़स है, अगर यह दुआ बिल्कुल उसी तरह क़ुबूल होती तो जिस वक़्त एक ज़ात हय्यु व क़य्यूम (यानी अल्लाह तआ़ला) के सिवा कोई ज़िन्दा न रहेगा, औरः

كُلُّ مَنْ عَلَيْهَا فَانٍ. وَّيَبْقٰى وَجْهُ رَبِّكَ ذُوالْجَلٰلِ وَالْاِكْرَامِ.

का ज़हूर होगा, इस दुआ की बिना पर शैतान उस वक़्त भी ज़िन्दा रहता, इसलिये उसकी एक दुआ को क़ियामत के दिन तक की मोहलत के बजाय सूर फूँके जाने वाले दिन तक की मोहलत से तब्दील करके क़ुबूल किया गया। जिसका असर यह होगा कि जिस वक़्त सारे आ़लम पर मौत तारी होगी, उस वक़्त शैतान को भी मौत आयेगी। फिर जब सब दोबारा ज़िन्दा होंगे तो वह भी ज़िन्दा हो जायेगा।

इस तहक़ीक़ से वह शुब्हा भी दूर हो गया जो आयतः

كُلُّ مَنْ عَلَيْهَا فَانٍ.

से इस दुआ के बारे में पैदा होता है कि बज़ाहिर दोनों में टकराव हो गया।

लेकिन इस तहक़ीक़ का हासिल यह है कि यौमुल-बअ़स (उठाये जाने के दिन) और यौमुल-वक़्तिल-मालूम (निर्धारित दिन) दो अलग-अलग दिन हैं। शैतान ने यौमुल-बअ़स तक की मोहलत माँगी थी वह पूरी क़ुबूल न हुई, उसको बदलकर यौमुल-वक़्तिल-मालूम तक की मोहलत दी गयी। सय्यिदी हज़रत हकीमुल-उम्मत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी रह. ने बयानुल-क़ुरआन में तरजीह इसको दी है कि हक़ीक़त में ये दोनों अलग-अलग दिन हैं, बल्कि पहला सूर फूँके जाने के वक़्त से जन्नत व दोज़ख़ में दाख़िल होने तक एक लम्बा दिन होगा, उसके विभिन्न हिस्सों में विभिन्न वाक़िआ़त होंगे, उन्हीं विभिन्न वाक़िआ़त की बिना पर उस दिन के हर वाक़िए की तरफ़ निस्बत कर सकते हैं। मसलन उसको सूर फूँके जाने वाला दिन, फ़ना का दिन भी कह सकते हैं और उठाये जाने वाला दिन और बदले का दिन भी। इससे सब शुब्हात ख़त्म हो गये। फ़ल्हम्दु लिल्लाह।

क्या काफ़िर की दुआ भी क़ुबूल हो सकती है?

यह सवाल इसलिये पैदा होता है कि क़ुरआन मजीद की आयतः

وَمَادُعَاۤءُ الْكٰفِرِيْنَ اِلَّا فِىْ ضَلٰلٍ.

से बज़ाहिर यह समझा जाता है कि काफ़िर की दुआ क़ुबूल नहीं होती, मगर शैतान के इस वाक़िए और बयान हुई आयत से दुआ के क़ुबूल होने का शुब्हा ज़ाहिर है। जवाब यह है कि दुनिया में तो काफ़िर की दुआ भी क़ुबूल हो सकती है, यहाँ तक कि शैतान जैसे "सबसे बड़े काफ़िर" की दुआ भी क़ुबूल हो गयी, मगर आख़िरत में काफ़िर की दुआ क़ुबूल न होगी, और ज़िक्र की गयी आयतः

وَمَادُعَاۤءُ الْكٰفِرِيْنَ.

आख़िरत के बारे में है दुनिया से इसका कोई ताल्लुक़ नहीं।

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम और शैतान के वाक़िए के विभिन्न अलफ़ाज़

क़ुरआन मजीद में यह किस्सा कई जगह आया है, और हर जगह इस सवाल व जवाब के अलफ़ाज़ अलग-अलग हैं, हालाँकि वाक़िआ एक ही है। वजह यह है कि असल वाक़िए में तो सब जगह एक ही मज़मून है, और हर जगह एक जैसे ही अलफ़ाज़ नक़ल करना ज़रूरी नहीं, मज़मून की रियायत करना भी काफ़ी हो सकता है, मज़मून व मफ़्हूम के एक होने के बाद अलफ़ाज़ की भिन्नता ज़्यादा अहमियत देने की चीज़ नहीं।

शैतान को यह जुर्रत कैसे हुई कि अल्लाह की बारगाह में ऐसी बेधड़क गुफ़्तगू की

रब्बुल-इज़्ज़त जल्ल शानुहू की पवित्र बारगाह में फ़रिश्तों और रसूलों को भी हैबत व जलाल की बिना पर दम मारने की मजाल नहीं थी, शैतान को ऐसी जुर्रत कैसे हो गयी? उलेमा ने फ़रमाया कि यह अल्लाह के क़हर का इन्तिहाई सख़्त प्रतीक है कि शैतान के मरदूद हो जाने के कारण एक ऐसा पर्दा रुकावट हो गया, जिसने उस पर हक़ तआ़ला की बड़ाई व जलाल को छुपा दिया और उस पर बेहयाई मुसल्लत कर दी। (बयानुल-क़ुरआन संक्षिप्त रूप से)

शैतान का हमला इनसान पर चार दिशाओं में सीमित नहीं, आ़म है

क़ुरआन मजीद की उक्त आयत में यह बयान हुआ है कि शैतान ने आदम की औलाद (यानी इनसानों) को गुमराह करने के लिये चार दिशाओं को बयान किया है- आगे पीछे, दायें बायें, लेकिन यहाँ दर हक़ीक़त कोई दिशा सीमित करना मक़सूद नहीं, बल्कि मुराद यह है कि हर तरफ़ से और हर पहलू से। इसलिये ऊपर की जानिब या पाँव तले से गुमराह करने का गुमान व संभावना इसके विरुद्ध नहीं। इसी तरह हदीस में जो यह बयान हुआ है कि शैतान इनसान के बदन में दाख़िल होकर ख़ून की रगों के ज़रिये पूरे इनसानी बदन पर अपना काम करता है, यह भी इसके ख़िलाफ़ नहीं।

ज़िक्र की गयी आयतों में शैतान को आसमान से निकल जाने का हुक्म दो मर्तबा बयान किया गया है। पहलेः

فَاخْرُجْ اِنَّكَ مِنَ الصّٰغِرِيْنَ.

में, दूसराः

اخْرُجْ مِنْهَا مَذْءُوْمًا.

में। ग़ालिबन पहला कलाम एक तजवीज़ (तय किये गये हुक्म की इत्तिला) है और दूसरे में उसकी तन्फ़ीज़ (लागू करना है)। (बयानुल-क़ुरआन)

وَيٰۤاٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ فَكُلَا مِنْ حَيْثُ شِئْتُمَا
وَلَا تَقْرَبَا هٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُوْنَا مِنَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۹﴾ فَوَسْوَسَ لَهُمَا الشَّيْطٰنُ لِيُبْدِيَ لَهُمَا مَا وٗرِيَ عَنْهُمَا
مِنْ سَوْاٰتِهِمَا وَقَالَ مَا نَهٰىكُمَا رَبُّكُمَا عَنْ هٰذِهِ الشَّجَرَةِ اِلَّاۤ اَنْ تَكُوْنَا مَلَكَيْنِ اَوْ تَكُوْنَا
مِنَ الْخٰلِدِيْنَ ﴿۲۰﴾ وَقَاسَمَهُمَاۤ اِنِّيْ لَكُمَا لَمِنَ النّٰصِحِيْنَ ﴿۲۱﴾ فَدَلّٰىهُمَا بِغُرُوْرٍ فَلَمَّا ذَاقَا الشَّجَرَةَ
بَدَتْ لَهُمَا سَوْاٰتُهُمَا وَطَفِقَا يَخْصِفٰنِ عَلَيْهِمَا مِنْ وَّرَقِ الْجَنَّةِ وَنَادٰىهُمَا رَبُّهُمَاۤ اَلَمْ اَنْهَكُمَا عَنْ
تِلْكُمَا الشَّجَرَةِ وَاَقُلْ لَّكُمَاۤ اِنَّ الشَّيْطٰنَ لَكُمَا عَدُوٌّ مُّبِيْنٌ ﴿۲۲﴾ قَالَا رَبَّنَا ظَلَمْنَاۤ اَنْفُسَنَا وَاِنْ لَّمْ
تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُوْنَنَّ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿۲۳﴾ قَالَ اهْبِطُوْا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ
مُسْتَقَرٌّ وَّمَتَاعٌ اِلٰى حِيْنٍ ﴿۲۴﴾ قَالَ فِيْهَا تَحْيَوْنَ وَفِيْهَا تَمُوْتُوْنَ وَمِنْهَا تُخْرَجُوْنَ ﴿۲۵﴾

व या आदमुस्कुन् अन्-त व ज़ौजुकल्जन्न-त फ़-कुला मिन् हैसु शिअ्तुमा व ला तक़्रबा हाज़िहिश्-श-ज-र-त फ़-तकूना मिनज़्ज़ालिमीन (19) फ़-वस्व-स लहुमश्शैतानु लियुब्दि-य लहुमा मा वूरि-य अन्हुमा मिन् सौआतिहिमा व क़ा-ल मा नहाकुमा रब्बुकुमा अन् हाज़िहिश्-श-ज-रति इल्ला अन् तकूना म-लकैनि औ तकूना मिनल्-ख़ालिदीन (20) व क़ास-महुमा इन्नी लकुमा लमिनन्-नासिहीन (21) फ़दल्लाहुमा बिग़ुरूरिन् फ़-लम्मा ज़ाक़श्श-ज-र-त बदत् लहुमा सौआतुहुमा व तफ़िक़ा

और ऐ आदम! रह तू और तेरी औरत जन्नत में, फिर खाओ जहाँ से चाहो और पास न जाओ इस दरख़्त के, फिर तुम हो जाओगे गुनाहगार। (19) फिर बहकाया उनको शैतान ने ताकि खोल दे उन पर वह चीज़ जो कि उनकी नज़र से छुपी थी उनकी शर्मगाहों से, और वह बोला कि तुमको नहीं रोका तुम्हारे रब ने इस दरख़्त से मगर इसी लिए कि कभी तुम हो जाओ फ़रिश्ते या हो जाओ हमेशा रहने वाले। (20) और उनके आगे क़सम खाई कि मैं यक़ीनन तुम्हारा दोस्त हूँ। (21) फिर माईल कर लिया उनको फ़रेब से, फिर जब चखा उन दोनों ने दरख़्त को तो खुल गईं उन पर उनकी शर्मगाहें और लगे जोड़ने अपने ऊपर

यख़्सिफ़ानि अ़लैहिमा मिंव्-रकिल्-जन्नति, व नादाहुमा रब्बुहुमा अलम् अन्हकुमा अ़न् तिल्कुमश्श-ज-रति व अक़ुल्-लकुमा इन्नश्शैता-न लकुमा अ़दुव्वुम् मुबीन (22) क़ाला रब्बना ज़लम्ना अन्फ़ु-सना व इल्लम् तग़्फ़िर् लना व तर्हम्ना ल-नकूनन्-न मिनल्-ख़ासिरीन (23) क़ालह्बितू बअ़्ज़ुकुम् लि-बअ़्ज़िन् अ़दुव्वुन् व लकुम् फ़िल्अर्ज़ि मुस्तक़र्रुंव्-व मताअ़ुन् इला हीन (24) क़ा-ल फ़ीहा तह्यौ-न व फ़ीहा तमूतू-न व मिन्हा तुख़्रजून (25) ❁	जन्नत के पत्ते और पुकारा उनको उनके रब ने कहा- मैंने मना न किया था तुमको इस दरख़्त से और न कह दिया था तुमको कि शैतान तुम्हारा खुला दुश्मन है। (22) बोले वे दोनों ऐ हमारे रब! ज़ुल्म किया हमने अपनी जान पर, और अगर तू हमको न बख़्शे और हम पर रहम न करे तो हम ज़रूर हो जायेंगे तबाह। (23) फ़रमाया तुम उतरो, तुम एक दूसरे के दुश्मन हो गये, और तुम्हारे वास्ते ज़मीन में ठिकाना और नफ़ा उठाना है एक वक़्त तक। (24) फ़रमाया उसी में तुम ज़िन्दा रहोगे और उसी में तुम मरोगे और उसी से तुम निकाले जाओगे। (25) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (हमने (आदम अ़लैहिस्सलाम को) हुक्म दिया कि ऐ आदम! तुम और तुम्हारी बीवी (हव्वा) जन्नत में रहो, फिर जिस जगह से चाहो (और जिस चीज़ को चाहो) दोनों आदमी खाओ और (इतना ख़्याल रहे कि) उस (ख़ास) पेड़ के पास (भी) मत जाओ (यानी उसका फल न खाओ) कभी तुम उन लोगों की गिनती में आ जाओ जिनसे नामुनासिब काम हो जाया करता है। फिर शैतान ने उन दोनों के दिलों में वस्वसा डाला, ताकि (उनको वह प्रतिबन्धित दरख़्त खिलाकर) उनका पर्दे का बदन जो एक-दूसरे से छुपा हुआ था दोनों के सामने बेपर्दा कर दे, (क्योंकि उस दरख़्त के खाने की यही तासीर है, चाहे उसके ज़ाती असर के सबब या मनाही की वजह से)। और (वह वस्वसा यह था कि दोनों से) कहने लगा कि तुम्हारे रब ने तुम दोनों को इस पेड़ (के खाने) से और किसी सबब से मना नहीं फ़रमाया मगर सिर्फ़ इस वजह से कि तुम दोनों (इसको खाकर) कहीं फ़रिश्ते न बन जाओ, या कहीं हमेशा ज़िन्दा रहने वालों में से न हो जाओ (दिल में वस्वसा डालने का हासिल यह था कि इस दरख़्त के खाने से फ़रिश्ता बनने और हमेशा ज़िन्दा रहने की क़ुव्वत पैदा हो जाती है, मगर शुरू में आपका वजूद इस ताक़तवर ग़िज़ा को बरदाश्त करने के लायक़ न था, इसलिये मना कर दिया गया था, अब आपकी हालत और

क़ुव्वत में तरक़्क़ी हो गयी और आपके अंग और जिस्मानी क़ुव्वतों में इसको बरदाश्त करने की ताक़त पैदा हो गयी, तो अब वह मनाही बाक़ी न रही)। और उन दोनों के सामने (इस बात पर) क़सम खाई कि यक़ीन जानिए मैं आप दोनों का (दिल से) ख़ैरख़्वाह "यानी भला चाहने वाला" हूँ। सो (ऐसी बातें बनाकर) उन दोनों को फ़रेब से नीचे ले आया, (नीचे लाना हालत और राय के एतिबार से भी था कि अपनी बुलन्द राय को छोड़कर उस दुश्मन की राय पर माईल हो गये, और मक़ाम के एतिबार से भी कि जन्नत से नीचे की तरफ़ उतारे गये)। पस उन दोनों ने जब पेड़ को चखा तो (फ़ौरन) दोनों के पर्दे का बदन एक-दूसरे के सामने बेपर्दा हो गया (यानी जन्नत का लिबास उतर पड़ा और दोनों शर्मा गये) और (बदन छुपाने के लिये) दोनों अपने (बदन के) ऊपर जन्नत के (दरख़्तों के) पत्ते जोड़-जोड़कर रखने लगे, और (बदन छुपाने के लिये) उनके रब ने उनको पुकारा- क्या मैं तुम दोनों को इस पेड़ (के खाने से) से मना न कर चुका था, और यह न कह चुका था कि शैतान तुम्हारा खुला दुश्मन है? (उसके बहकाने से बचते रहना।) दोनों कहने लगे कि ऐ हमारे रब! हमने अपना बड़ा नुक़सान किया (कि पूरी एहतियात और सोच-समझ से काम न लिया) और अगर आप हमारी मग़फ़िरत न करेंगे और हम पर रहम न करेंगे तो वाक़ई हमारा बड़ा नुक़सान हो जाएगा। अल्लाह तआ़ला ने (आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम से) फ़रमाया कि (जन्नत से) नीचे (ज़मीन पर) ऐसी हालत में जाओ कि तुम (यानी तुम्हारी औलाद) आपस में कुछ कुछ (यानी एक-दूसरे) के दुश्मन रहोगे। और तुम्हारे वास्ते ज़मीन में रहने की जगह (तजवीज़ की गयी) है और (ज़िन्दगी गुज़ारने के असबाब से) फ़ायदा हासिल करना (तजवीज़ हुआ है) एक (ख़ास) वक़्त तक (यानी मौत के वक़्त तक। और यह भी) फ़रमाया कि तुमको वहाँ ही ज़िन्दगी बसर करना है और वहाँ ही मरना है, और उसी में से (क़ियामत के दिन) फिर ज़िन्दा होकर निकलना है।

मआ़रिफ़ व मसाईल

हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम और शैतान का जो वाक़िआ़ उक्त आयतों में बयान हुआ है बिल्कुल इसी तरह यह सब वाक़िआ़ सूरः ब-क़रह के चौथे रुकूअ़ में पूरी तफ़सील के साथ आ चुका है, और इसके बारे में जिस क़द्र सवालात व शुब्हात हो सकते हैं उन सब का तफ़सीली जवाब और पूरी वज़ाहत मय दूसरे फ़ायदों के सूरः ब-क़रह की तफ़सीर में लिखे जा चुके हैं, ज़रूरत हो तो वहाँ देख लिया जाये।

يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُّوَارِيْ سَوْاٰتِكُمْ وَرِيْشًا ۭ

وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ۙ ذٰلِكَ خَيْرٌ ۭ ذٰلِكَ مِنْ اٰيٰتِ اللّٰهِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُوْنَ ۝ يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ لَا يَفْتِنَنَّكُمُ الشَّيْطٰنُ كَمَآ اَخْرَجَ اَبَوَيْكُمْ مِّنَ الْجَنَّةِ يَنْزِعُ عَنْهُمَا لِبَاسَهُمَا لِيُرِيَهُمَا سَوْاٰتِهِمَا ۭ اِنَّهٗ يَرٰىكُمْ هُوَ وَقَبِيْلُهٗ مِنْ حَيْثُ لَا تَرَوْنَهُمْ ۭ اِنَّا جَعَلْنَا الشَّيٰطِيْنَ اَوْلِيَاۗءَ لِلَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝

या बनी आद-म क़द् अन्ज़ल्ना अ़लैकुम् लिबासंय्युवारी सौआतिकुम् वरीशन्, व लिबासुत्तक़्वा ज़ालि-क ख़ैरुन्, ज़ालि-क मिन् आयातिल्लाहि लअ़ल्लहुम् यज़्ज़क्करून (26) या बनी आद-म ला यफ़्तिनन्नकुमुश्शैतानु कमा अख़्र-ज अ-बवैकुम् मिनल्जन्नति यन्ज़िअ़ु अ़न्हुमा लिबा-सहुमा लियुरि-यहुमा सौआतिहिमा, इन्नहू यराकुम् हु-व व क़बीलुहू मिन् हैसु ला तरौनहुम्, इन्ना जअ़ल्नश्-शयाती-न औलिया-अ लिल्लज़ी-न ला युअ्मिनून (27)	ऐ आदम की औलाद! हमने उतारी तुम पर पोशाक जो ढाँके तुम्हारी शर्मगाहें और उतारे ज़ीनत के कपड़े और लिबास परहेज़गारी का वह सबसे बेहतर है, ये निशानियाँ हैं अल्लाह की क़ुदरत की ताकि वे लोग ग़ौर करें। (26) ऐ आदम की औलाद! न बहका दे तुमको शैतान जैसा कि उसने निकाल दिया तुम्हारे माँ-बाप को जन्नत से, उतरवा दिये उनसे उनके कपड़े ताकि दिखलाये उनको उनकी शर्मगाहें, वह देखता है तुमको और उसकी क़ौम जहाँ से तुम उनको नहीं देखते, हमने कर दिया शैतानों को साथी उन लोगों का जो ईमान नहीं लाते। (27)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ऐ आदम की औलाद! (एक हमारा इनाम यह है कि) हमने तुम्हारे लिए लिबास पैदा किया जो कि तुम्हारे पर्दे (यानी पर्दे वाले बदन) को भी छुपाता है और (तुम्हारे बदन के लिये) ज़ीनत का सबब भी (होता) है। और (इस ज़ाहिरी लिबास के अ़लावा एक मानवी लिबास भी तुम्हारे लिये तजवीज़ किया है जो) तक़्वे (यानी दीनदारी) का लिबास (है कि) यह इस (ज़ाहिरी लिबास) से बढ़कर (ज़रूरी) है, (क्योंकि इस ज़ाहिरी लिबास का शरई तौर पर वांछित होना उसी तक़्वे यानी दीनदारी की एक शाखा है, असल मक़सूद हर हालत में परहेज़गारी का लिबास ही है) यह (लिबास पैदा करना) अल्लाह तआ़ला के (फ़ज़्ल व करम) की निशानियों में से है ताकि ये लोग (इस नेमत को) याद रखें (और याद रखकर अपने नेमत देने वाले और एहसान करने वाले की फ़रमाँबरदारी का हक़ अदा करें और वह फ़रमाँबरदारी का हक़ वही है जिसको तक़्वे का लिबास फ़रमाया है)।

ऐ आदम की औलाद! शैतान तुमको किसी ख़राबी में न डाल दे (कि दीन व परहेज़गारी के ख़िलाफ़ तुमसे कोई काम कराये) जैसा कि उसने तुम्हारे दादा-दादी (यानी आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम) को जन्नत से बाहर करा दिया (यानी उनसे ऐसा काम करा दिया कि उसके नतीजे में वे जन्नत से बाहर हो गये, और बाहर भी) ऐसी हालत से (कराया) कि उनका लिबास

भी उन (के बदन) से उतरवा दिया, ताकि उनको उनके पर्दे का बदन दिखाई देने लगे (जो शरीफ़ इनसान के लिये बड़ी शर्म व रुस्वाई है। ग़र्ज़ कि शैतान तुम्हारा पुराना दुश्मन है, उससे बहुत होशियार रहो और ज़्यादा एहतियात इसलिये और भी ज़रूरी है कि) वह और उसका लश्कर तुमको ऐसे तौर पर देखता है कि तुम उनको (आदतन) नहीं देखते हो, (ज़ाहिर है कि ऐसा दुश्मन बहुत ख़तरनाक है, उससे बचने का पूरा एहतिमाम करना चाहिये, और यह एहतिमाम कामिल ईमान और परहेज़गारी से हासिल होता है, वह इख़्तियार कर लो तो बचाव का सामान हो जायेगा, क्योंकि) हम शैतानों को उन्हीं लोगों का साथी होने देते हैं जो ईमान नहीं लाते। (अगर बिल्कुल ईमान नहीं तो पूरी तरह शैतान उस पर मुसल्लत हो जाता है, और अगर ईमान तो है मगर कामिल नहीं तो उससे कम दर्जे का क़ब्ज़ा होता है, बख़िलाफ़ कामिल मोमिन के कि उस पर शैतान का बिल्कुल काबू नहीं चलता, जैसा कि क़ुरआन मजीद की एक आयत में इरशाद हुआ है 'इन्नहू लै-स लहू सुल्तानुन अ़लल्लज़ी-न आमनू व अ़ला रब्बिहिम य-तवक्कलून')।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों से पहले एक पूरे रुकूअ़ में हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम और शैतान मरदूद का वाक़िआ बयान फ़रमाया गया था, जिसमें शैतान के बहकाने का पहला असर यह हुआ था कि आदम व हव्वा अ़लैहिमस्सलाम का जन्नती लिबास उतर गया और वे नंगे रह गये, और पत्तों से अपने सतर को छुपाने लगे।

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में हक़ तआ़ला ने तमाम इनसानों को ख़िताब करके इरशाद फ़रमाया कि तुम्हारा लिबास क़ुदरत की एक अ़ज़ीम नेमत है, इसकी क़द्र करो। यहाँ ख़िताब सिर्फ़ मुसलमानों को नहीं बल्कि आदम की पूरी औलाद को है। इसमें इशारा है कि सतर छुपाना और लिबास इनसान की फ़ितरी इच्छा और ज़रूरत है, बग़ैर किसी मज़हब व मिल्लत के भेदभाव के सब ही इसके पाबन्द हैं। फिर इसकी तफ़सील में तीन क़िस्म के लिबासों का ज़िक्र फ़रमाया। अव्वलः

لِبَاسًا يُّوَارِىْ سَوْاٰتِكُمْ

इसमें **युवारी** मुवारात से निकला है जिसके मायने छुपाने के हैं। और **सौआत** सूअतुन् की जमा (बहुवचन) है, इनसान के उन अंगों को सूअतुन् कहा जाता है जिनके खुलने को इनसान फ़ितरी तौर पर बुरा और क़ाबिले शर्म समझता है। मतलब यह है कि हमने तुम्हारी बेहतरी और कामयाबी के लिये एक ऐसा लिबास उतारा है जिससे तुम अपने क़ाबिले शर्म अंगों को छुपा सको।

इसके बाद फ़रमाया "वरीशन्" रीश उस लिबास को कहा जाता है जो आदमी ख़ूबसूरती और अच्छा लगने के लिये इस्तेमाल करता है। मुराद यह है कि सिर्फ़ सतर छुपाने के लिये तो मुख़्तसर सा लिबास काफ़ी होता है, मगर हमने तुम्हें इससे ज़्यादा लिबास इसलिये अ़ता किया कि तुम उसके ज़रिये ज़ीनत व ख़ूबसूरती हासिल कर सको, और अपनी शक्ल व हालत को अच्छी

और बेहतर बना सको।

इस जगह क़ुरआने करीम ने "अन्ज़लना" यानी उतारने का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है, मुराद इससे अ़ता करना है। यह ज़रूरी नहीं कि आसमान से बना बनाया उतरा हो, जैसे दूसरी जगह "अन्ज़ल्नल्-हदी-द" का लफ़्ज़ आया है, यानी हमने लोहा उतारा, जो सब के सामने ज़मीन से निकलता है। अलबत्ता दोनों जगह लफ़्ज़ "अन्ज़लना" फ़रमाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि जिस तरह आसमान से उतरने वाली चीज़ों में किसी इनसानी तदबीर और कारीगरी को दख़ल नहीं होता, इसी तरह लिबास का असल माद्दा जो रूई या ऊन वग़ैरह है उसमें किसी इनसानी तदबीर को ज़र्रा बराबर दख़ल नहीं, वह सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत का अ़तीया (वरदान) है, अलबत्ता इन चीज़ों से अपनी राहत व आराम और मिज़ाज के मुनासिब सर्दी गर्मी से बचने के लिये लिबास बना लेने में इनसानी कारीगरी काम करती है, और वह कारीगरी भी हक़ तआ़ला ही की बतलाई और सिखाई हुई है, इसलिये हक़ीक़त पहचानने वाली निगाह में यह सब हक़ तआ़ला ही का ऐसा अ़तीया है जैसे आसमान से उतारा गया हो।

लिबास के दो फ़ायदे

इसमें लिबास के दो फ़ायदे बतलाये गये- एक सतर ढाँकना, दूसरे सर्दी गर्मी से हिफ़ाज़त और बदन की सजावट। और पहले फ़ायदे को शुरू में लाकर इस तरफ़ इशारा कर दिया कि इनसानी लिबास का असल मक़सद सतर ढाँकना है, और यही इसकी आ़म जानवरों से अलग पहचान और फ़र्क़ है, कि जानवरों का लिबास जो क़ुदरती तौर पर उनके बदन का हिस्सा बना दिया गया है उसका काम सिर्फ़ सर्दी गर्मी से हिफ़ाज़त या ज़ीनत है, सतर ढाँकने का उसमें इतना एहतिमाम नहीं, अलबत्ता ख़ास अंगों (यानी शर्मगाह) की बनावट उनके बदन में इस तरह रख दी है कि बिल्कुल खुले न रहें, कहीं उन पर दुम का पर्दा है कहीं दूसरी तरह का।

और हज़रत आदम व हव्वा और शैतान के बहकाने का वाक़िआ़ बयान करने के बाद लिबास के ज़िक्र करने में इस तरफ़ इशारा है कि इनसान के लिये नंगा होना और क़ाबिले शर्म हिस्सों का दूसरों के सामने खुलना इन्तिहाई ज़िल्लत व रुस्वाई और बेहयाई की निशानी और तरह-तरह की बुराई और ख़राबी का पहला क़दम है।

इनसान पर शैतान का पहला हमला

इनसान पर शैतान का पहला हमला उसको नंगा करने की सूरत में हुआ। आज भी नई शैतानी तहज़ीब इनसान को नंगा या अर्धनंगा करने में लगी हुई है। और यही वजह है कि शैतान का सबसे पहला हमला इनसान के ख़िलाफ़ इसी राह से हुआ कि उसका लिबास उतर गया, और आज भी शैतान अपने शागिर्दों के ज़रिये जब इनसान को गुमराह करना चाहता है तो तहज़ीब व सभ्यता का नाम लेकर सबसे पहले उसको नंगा या अर्धनंगा करके आ़म सड़कों और गलियों में खड़ा कर देता है, और शैतान ने जिसका नाम तरक़्क़ी रख दिया है वह तो औ़रत को शर्म व

हया से मेहरूम करके मन्ज़रे आम पर अर्धनंग हालत में ले आने के बग़ैर हासिल ही नहीं होती।

ईमान के बाद सबसे पहला फ़र्ज़ सतर का ढाँकना है

शैतान ने इनसान के इस कमज़ोर पहलू को भाँपकर पहला हमला इनसान के सतर ढाँकने पर किया तो इस्लामी शरीअ़त जो इनसान की हर बेहतरी व कामयाबी की ज़िम्मेदार है, उसने सतर ढाँपने का एहतिमाम इतना किया कि ईमान के बाद सबसे पहला फ़र्ज़ सतर ढाँपने को क़रार दिया। नमाज़, रोज़ा, वग़ैरह सब इसके बाद है।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब कोई शख़्स नया लिबास पहने तो उसको चाहिये कि लिबास पहनने के वक़्त यह दुआ़ पढ़े:

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ کَسَانِیْ مَاۤ اُوَارِیْ بِهٖ عَوْرَتِیْ وَاَتَجَمَّلُ بِهٖ فِیْ حَیَاتِیْ

"यानी शुक्र उस ज़ात का जिसने मुझे लिबास दिया जिसके ज़रिये मैं अपने सतर का पर्दा करूँ और ख़ूबसूरती हासिल करूँ।"

नया लिबास बनाने के वक़्त पुराने लिबास को सदक़ा कर देने का बड़ा सवाब

और फ़रमाया कि जो शख़्स नया लिबास पहनने के बाद पुराने लिबास को ग़रीबों व मिस्कीनों पर सदक़ा कर दे तो वह अपनी मौत व ज़िन्दगी के हर हाल में अल्लाह तआ़ला की ज़िम्मेदारी और पनाह में आ गया। (इब्ने कसीर, मुस्नद अहमद के हवाले से)

इस हदीस में भी इनसान को लिबास पहनने के वक़्त इन्हीं दोनों मस्लेहतों को याद दिलाया गया है, जिसके लिये अल्लाह तआ़ला ने इनसानी लिबास पैदा फ़रमाया है।

सतर ढाँकना पहले दिन से इनसान का फ़ितरी अ़मल है, तरक़्क़ी का नया फ़ल्सफ़ा ग़लत है

आदम अ़लैहिस्सलाम के वाक़िए और क़ुरआने करीम के इस इरशाद से यह बात भी वाज़ेह हो गयी कि सतर ढाँकना और लिबास इनसान की फ़ितरी इच्छा और पैदाईशी ज़रूरत है, जो पहले दिन से इसके साथ है, और आजकल के कुछ फ़लॉस्फ़रों (वैज्ञानिकों) का यह क़ौल सरासर ग़लत और बेअसल है कि इनसान पहले नंगा फिरा करता था, फिर तरक़्क़ी की मन्ज़िलें तय करने के बाद इसने लिबास ईजाद किया।

लिबास की एक तीसरी क़िस्म

सतर ढाँकने और आराम व सजावट के लिये दो क़िस्म के लिबासों का ज़िक्र फ़रमाने के

बाद क़ुरआने करीम ने एक तीसरे लिबास का ज़िक्र इस तरह फ़रमायाः

وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ.

कुछ क़िराअतों में "लिबासत्तक़्वा" पढ़ा गया है, तो "अन्ज़लना" के तहत में दाख़िल होकर मायने यह हुए कि हमने एक तीसरा लिबास तक़्वे का उतारा है, और मशहूर क़िराअत के एतिबार से मायने ये हैं कि ये दो लिबास तो सब जानते हैं, एक तीसरा लिबास तक़्वे का है, और वह सब लिबासों से ज़्यादा बेहतर है। तक़्वे के लिबास से मुराद हज़रत इब्ने अ़ब्बास और हज़रत उरवा बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा की तफ़सीर के मुताबिक़ नेक अ़मल और ख़ौफ़े ख़ुदा है। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

मतलब यह है कि जिस तरह ज़ाहिरी लिबास इनसान के क़ाबिले शर्म बदन के हिस्सों के लिये पर्दा और सर्दी गर्मी से बचने और ख़ूबसूरती हासिल करने का ज़रिया होता है इसी तरह एक मानवी (अन्दरूनी) लिबास नेक अ़मल और ख़ुदा तआ़ला का ख़ौफ़ है, जो इनसान के अख़्लाक़ी ऐबों और कमज़ोरियों का पर्दा है, और हमेशा की तकलीफ़ों और मुसीबतों से निजात का ज़रिया है। इसी लिये वह सबसे बेहतर लिबास है।

इसमें इस तरफ़ भी इशारा है कि एक बदकार आदमी जिसमें ख़ौफ़े ख़ुदा न हो और वह नेक अ़मल का पाबन्द न हो वह कितने ही पर्दों में छुपे मगर अन्जामकार रुस्वा और ज़लील होकर रहता है। जैसा कि इब्ने जरीर रह. ने हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- "क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मुहम्मद की जान है, जो शख़्स कोई भी अ़मल लोगों की नज़रों से छुपाकर करता है अल्लाह तआ़ला उसको उस अ़मल की चादर उढ़ाकर ऐलान कर देते हैं। नेक अ़मल हो तो नेकी का और बुरा अ़मल हो तो बुराई का।" चादर उढ़ाने से मतलब यह है कि जिस तरह बदन पर ओढ़ी हुई चादर सब के सामने होती है, इनसान का अ़मल कितना ही छुपा हुआ हो उसके नतीजे और आसार उसके चेहरे और बदन पर अल्लाह तआ़ला ज़ाहिर कर देते हैं, और इस इरशाद की सनद में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह आयत पढ़ीः

وَرِيْشًا، وَلِبَاسُ التَّقْوٰى، ذٰلِكَ خَيْرٌ، ذٰلِكَ مِنْ اٰيٰتِ اللّٰهِ.

ज़ाहिरी लिबास का भी असल मक़सद तक़्वा हासिल करना है

"लिबासुत्तक़्वा" के लफ़्ज़ से इस तरफ़ भी इशारा पाया जाता है कि ज़ाहिरी लिबास के ज़रिये सतर ढाँकने, ख़ूबसूरती व सजावट हासिल करने सब का असल मक़सद तक़्वा (परहेज़गारी) और अल्लाह तआ़ला का ख़ौफ़ है, जिसका ज़हूर उसके लिबास में भी इस तरह होना चाहिये कि उसमें पूरे सतर का ढाँकना हो, कि क़ाबिले शर्म हिस्सों (अंगों) का पूरा पर्दा हो। वो नंगे भी न रहें और बदन पर लिबास ऐसा चुस्त भी न हो जिसमें ये अंग नंगे होने की तरह नज़र आयें, साथ ही उस लिबास में घमण्ड व ग़ुरूर का अन्दाज़ भी न हो बल्कि तवाज़ो

(विनम्रता) के आसार हों। बेजा ख़र्च भी न हो, ज़रूरत के मुवाफ़िक़ कपड़ा इस्तेमाल किया जाये, औरतों के लिये मर्दाना और मर्दों के लिये ज़नाना लिबास भी न हो जो अल्लाह तआ़ला के नज़दीक नापसन्दीदा और बुरा है, लिबास में किसी दूसरी क़ौम की नक़ल भी न उतारी गयी हो जो अपनी क़ौम व मिल्लत से ग़द्दारी और मुँह मोड़ने की अ़लामत है।

इसके साथ ही अख़्लाक़ व आमाल का संवारना भी हो जो लिबास का असल मक़सद है। आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

ذٰلِكَ مِنْ اٰيٰتِ اللّٰهِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُوْنَ.

यानी इनसान को लिबास की ये तीनों क़िस्में अ़ता फ़रमाना अल्लाह जल्ल शानुहू की क़ुदरत की निशानियों में से है, ताकि लोग इससे सबक़ हासिल करें।

दूसरी आयत में फिर तमाम इनसानों को ख़िताब करके तंबीह फ़रमाई गयी है कि अपने हर हाल और हर काम में शैतानी फ़रेब से बचते रहो, ऐसा न हो कि वह तुमको फिर किसी फ़ितने में मुब्तला कर दे, जैसा कि तुम्हारे माँ-बाप हज़रत आदम व हव्वा को उसने जन्नत से निकलवाया, और उनका लिबास उतरवाकर उनके सतर खोलने का सबब बना, वह तुम्हारा पुराना दुश्मन है, उसकी दुश्मनी का हमेशा हर वक़्त ख़्याल रखो।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّهٗ يَرٰكُمْ هُوَ وَقَبِيْلُهٗ مِنْ حَيْثُ لَا تَرَوْنَهُمْ اِنَّا جَعَلْنَا الشَّيٰطِيْنَ اَوْلِيَآءَ لِلَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ.

इसमें लफ़्ज़ क़बील के मायने जमाअ़त और जत्थे के हैं। जो जमाअ़त एक ख़ानदान की शरीक हो उसको क़बीला कहते हैं, और आ़म जमाअ़तों को क़बील कहा जाता है। मतलब यह है कि शैतान तुम्हारा ऐसा दुश्मन है कि वह और उसके साथी तो तुमको देखते हैं, तुम उनको नहीं देखते, इसलिये उनका मक्र व फ़रेब तुम पर चल जाने की ज़्यादा सम्भावनाएँ हैं।

लेकिन दूसरी आयतों में यह भी बतला दिया गया कि जो लोग अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करने वाले और शैतानी फ़रेब से होशियार रहने वाले हैं, उनके लिये शैतान का जाल बहुत ही कमज़ोर है।

और इस आयत के आख़िर में भी जो यह फ़रमाया कि हमने शैतानों को उनका सरपरस्त (वली) बना दिया है जो ईमान नहीं रखते, इसमें भी इस तरफ़ इशारा है कि ईमान वालों के लिये उसके जाल से बचना कुछ ज़्यादा मुश्किल नहीं।

बुज़ुर्गों में से कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि यह दुश्मन जो हमें देखता है और हम इसको नहीं देख सकते, इसका इलाज हमारे लिये यह है कि हम अल्लाह तआ़ला की पनाह में आ जायें, जो इन शैतानों को और इनकी हर हरकत व गतिविधि को देखता है और शैतान उसको नहीं देख सकता।

और यह इरशाद कि इनसान शैतानों को नहीं देख सकता, आ़म हालात और आ़म आ़दत के एतिबार से है। आ़दत के ख़िलाफ़ चमत्कारिक तौर पर कोई इनसान कभी उनको देख ले तो यह

उसके विरुद्ध नहीं, जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में जिन्नात का आना और सवालात करना और इस्लाम क़ुबूल करना वग़ैरह हदीस की सही रिवायतों में बयान हुआ है। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

وَاِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً قَالُوْا وَجَدْنَا عَلَيْهَا اٰبَآءَنَا وَاللّٰهُ اَمَرَنَا بِهَا ۚ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَاْمُرُ بِالْفَحْشَآءِ ۚ اَتَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿٢٨﴾ قُلْ اَمَرَ رَبِّيْ بِالْقِسْطِ ۗ وَاَقِيْمُوْا وُجُوْهَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَّادْعُوْهُ مُخْلِصِيْنَ لَهُ الدِّيْنَ ۚ كَمَا بَدَاَكُمْ تَعُوْدُوْنَ ﴿٢٩﴾ فَرِيْقًا هَدٰى وَفَرِيْقًا حَقَّ عَلَيْهِمُ الضَّلٰلَةُ ۚ اِنَّهُمُ اتَّخَذُوا الشَّيٰطِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَيَحْسَبُوْنَ اَنَّهُمْ مُّهْتَدُوْنَ ﴿٣٠﴾ يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ خُذُوْا زِيْنَتَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَّكُلُوْا وَاشْرَبُوْا وَلَا تُسْرِفُوْا ۚ اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِيْنَ ﴿٣١﴾

ع ٣ / ١٠

व इज़ा फ़-अ़लू फ़ाहि-शतन् क़ालू वजद्ना अ़लैहा आबा-अना वल्लाहु अ-म-रना बिहा, क़ुल् इन्नल्ला-ह ला यअ्मुरु बिल्फ़ह्शा-इ, अ-तक़ूलू-न अ़लल्लाहि मा ला तअ़्लमून (28) क़ुल् अ-म-र रब्बी बिल्क़िस्ति, व अक़ीमू वुजूहकुम् अ़िन्-द कुल्लि मस्जिदिंव्-वद्अ़ूहु मुख़्लिसी-न लहुद्दी-न, कमा ब-द-अकुम् तअ़ूदून (29) फ़रीक़न् हदा व फ़रीक़न् हक़्-क़ अ़लैहिमुज़्ज़लालतु, इन्नहुमुत्त-ख़ज़ुश्शयाती-न औलिया-अ मिन् दूनिल्लाहि व यह्सबू-न अन्नहुम् मुह्तदून (30) या बनी आद-म ख़ुज़ू ज़ीन-तकुम् अ़िन्-द कुल्लि मस्जिदिंव्	और जब करते हैं कोई बुरा काम तो कहते हैं कि हमने देखा इसी तरह करते अपने बाप-दादों को, और अल्लाह ने भी हमको हुक्म किया है, तू कह दे कि अल्लाह हुक्म नहीं करता बुरे काम का, क्यों लगाते हो अल्लाह के ज़िम्मे वो बातें जो तुमको मालूम नहीं। (28) तू कह दे कि मेरे रब ने हुक्म दिया है इन्साफ़ का, और सीधे करो अपने मुँह हर नमाज़ के वक़्त और पुकारो उसको ख़ालिस उसके फ़रमाँबरदार होकर, जैसा कि तुमको पहले पैदा किया दूसरी बार भी पैदा होगे। (29) एक फ़िर्क़े को हिदायत की और एक फ़िर्क़े पर मुक़र्रर हो चुकी गुमराही, उन्होंने बनाया शैतानों को साथी अल्लाह को छोड़कर और समझते हैं कि वे हिदायत पर हैं। (30) ऐ औलाद आदम की! ले लो अपनी ज़ीनत हर नमाज़ के वक़्त और

-व कुलू वशरबू व ला तुस्रिफ़ू, इन्नहू ला युहिब्बुल् मुस्रिफ़ीन (31) ✿	खाओ और पियो और बेजा ख़र्च न करो, उसको पसन्द नहीं आते बेजा ख़र्च करने वाले। (31) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वे लोग जब कोई फ़ुहश काम करते हैं (यानी ऐसा काम जिसकी बुराई खुली हुई हो और इनसानी फ़ितरत उसको बुरा समझती हो, जैसे नंगे होकर तवाफ़ करना) तो कहते हैं कि हमने अपने बाप-दादा को इसी तरीक़े पर पाया है और (नऊज़ु बिल्लाह) अल्लाह तआ़ला ने हमको यही बतलाया है। (ऐ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनके जाहिलाना तर्क देने के जवाब में) आप कह दीजिए कि अल्लाह तआ़ला फ़ुहश "यानी बुरी और बेहूदा" बात की तालीम नहीं देता, क्या (तुम ऐसा दावा करके) ख़ुदा के ज़िम्मे ऐसी बात लगाते हो जिसकी तुम सनद नहीं रखते? आप (यह भी) कह दीजिए कि (तुमने जिन फ़ुहश और ग़लत कामों का हुक्म अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मन्सूब किया है वह तो ग़लत है, अब वह बात सुनो जिसका हुक्म वास्तविक तौर पर अल्लाह तआ़ला ने दिया है, वह यह है कि) मेरे रब ने हुक्म दिया है इन्साफ़ करने का, और यह कि तुम हर सज्दे (यानी इबादत) के वक़्त अपना रुख़ सीधा (अल्लाह की तरफ़) रखा करो, (यानी किसी मख़्लूक़ को उसकी इबादत में शरीक न करो) और उसकी (यानी अल्लाह की) इबादत इस अन्दाज़ पर करो कि उस इबादत को ख़ालिस अल्लाह ही के वास्ते रखा करो। (इस मुख़्तसर जुमले में शरीअ़त की तमाम हुक्म की हुई बातें संक्षिप्त तौर पर आ गयीं। **क़िस्त** में बन्दों के हुक़ूक़, **अक़ीमू** में आमाल व नेक काम, **मुख़्लिसीन** में अ़क़ीदे) जिस तरह तुमको अल्लाह तआ़ला ने शुरू में पैदा किया था उसी तरह तुम (एक वक़्त) फिर दोबारा पैदा होगे। कुछ लोगों को तो अल्लाह ने (दुनिया में) हिदायत की है (उनको उस वक़्त जज़ा मिलेगी) और कुछ पर गुमराही साबित हो चुकी है (उनको सज़ा मिलेगी)। उन लोगों ने अल्लाह तआ़ला को छोड़कर शैतानों को अपना साथी बना लिया, और (बावजूद इसके फिर अपने बारे में) ख़्याल रखते हैं कि वो राह पर हैं। ऐ आदम की औलाद! तुम मस्जिद की हर हाज़िरी के वक़्त (नमाज़ के लिये हो या तवाफ़ के लिये) अपना लिबास पहन लिया करो, और (जिस तरह लिबास का न पहनना गुनाह था, ऐसे ही हलाल चीज़ों के खाने पीने को नाजायज़ समझना भी बड़ा गुनाह है, इसलिये हलाल चीज़ों को) ख़ूब खाओ और पियो और हद से मत निकलो, बेशक अल्लाह तआ़ला हद से निकल जाने वालों को पसन्द नहीं करते।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इस्लाम से पहले अ़रब के जाहिली दौर में शैतान ने लोगों को जिन शर्मनाक और बेहूदा रस्मों में मुब्तला कर रखा था उनमें से एक यह भी थी कि क़ुरैश के सिवा कोई शख़्स बैतुल्लाह का तवाफ़ अपने कपड़ों में नहीं कर सकता था, बल्कि या तो वह किसी क़ुरैशी से उसका लिबास

आ़रियत के तौर पर माँगे या फिर नंगा तवाफ़ करे।

और ज़ाहिर है कि सारे अ़रब के लोगों को क़ुरैश के लोग कहाँ तक कपड़े दे सकते थे, इसलिये होता यही था कि ये लोग अक्सर नंगे ही तवाफ़ करते थे, मर्द भी औ़रतें भी, और औ़रतें उमूमन रात के अंधेरे में तवाफ़ करती थीं, और अपने इस फ़ेल की शैतानी हिक्मत यह बयान करते थे कि "जिन कपड़ों में हमने गुनाह किये हैं उन्हीं कपड़ों में बैतुल्लाह के गिर्द तवाफ़ करना ख़िलाफ़े अदब है (और ये अ़क्ल के अंधे यह न समझते थे कि नंगे तवाफ़ करना इससे ज़्यादा ख़िलाफ़े अदब और ख़िलाफ़े इनसानियत है)। सिर्फ़ क़ुरैश का क़बीला हरम के सेवक होने के नाते इस नंगे होने के क़ानून से अलग समझा जाता था।"

ज़िक्र की गयी आयतों में से पहली आयत इसी बेहूदा रस्म को मिटाने और इसकी ख़राबी को बतलाने के लिये नाज़िल हुई है। इस आयत में फ़रमाया कि जब ये लोग कोई फ़ुहश (बुरा और गंदा) काम करते थे तो जो लोग उनको उस बुरे काम से मना करते तो उनका जवाब यह होता था कि हमारे बाप-दादा और बड़े-बूढ़े यूँही करते आये हैं। उनके तरीक़े को छोड़ना आ़र और शर्म की बात है। और यह भी कहते थे कि हमें अल्लाह तआ़ला ने ऐसा ही हुक्म दिया है। (इब्ने कसीर)

इस आयत में फ़ुहश (बुरे) काम से मुराद अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक यही नंगा तवाफ़ है। और असल में फ़ुहश, फ़हशा फ़ाहिशा हर ऐसे बुरे काम को कहा जाता है जिसकी बुराई हद को पहुँची हुई हो, और अ़क्ल व समझ और सलीम फ़ितरत के नज़दीक बिल्कुल वाज़ेह और खुली हुई हो। (तफ़सीरे मज़हरी) और इस दर्जे में अच्छाई बुराई का अ़क्ली होना सब के नज़दीक मुसल्लम है। (रूहुल-मआ़नी)

फिर उन लोगों ने इस बेहूदा रस्म के जवाज़ (सही और जायज़ होने) के लिये दो दलीलें पेश कीं, एक अपने बड़ों की पैरवी, कि बाप-दादों के तरीक़े को क़ायम रखना ही ख़ैर और भलाई है। इसका जवाब तो बिल्कुल वाज़ेह और खुला हुआ था कि जाहिल बाप-दादों का इत्तिबा (पैरवी) कोई माक़ूल चीज़ नहीं। ज़रा सी अ़क्ल व होश रखने वाला इनसान भी इसको समझ सकता है, कि किसी तरीक़े के जवाज़ की यह कोई दलील नहीं हो सकती कि बाप-दादा ऐसा करते थे, क्योंकि अगर किसी तरीक़े और किसी अ़मल के सही और जायज़ होने के लिये बाप-दादों का तरीक़ा होना काफ़ी समझा जाये तो दुनिया में विभिन्न लोगों के बाप-दादा विभिन्न और एक-दूसरे के विपरीत तरीक़ों पर अ़मल किया करते थे। इस दलील से तो दुनिया भर के सारे गुमराह करने वाले तरीक़े जायज़ और सही क़रार पाते हैं। ग़र्ज़ कि उन जाहिलों की यह दलील कुछ क़ाबिले तवज्जोह न थी, इसलिये यहाँ क़ुरआने करीम ने इसका जवाब देना ज़रूरी न समझा और दूसरी रिवायतों में इसका भी जवाब यह दिया गया है कि अगर बाप-दादा कोई जहालत का काम करें तो वह किस तरह पैरवी और अनुसरण के क़ाबिल हो सकता है?

दूसरी दलील उन लोगों ने अपने नंगे तवाफ़ के सही और जायज़ होने पर यह पेश की कि हमें अल्लाह तआ़ला ने ही ऐसा हुक्म दिया है, यह सरासर बोहतान और हक़ तआ़ला के हुक्म के

ख़िलाफ़ उसकी तरफ़ एक ग़लत हुक्म को मन्सूब करना है। इसके जवाब में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़िताब करके इरशाद फ़रमायाः

قُلْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَاْمُرُ بِالْفَحْشَآءِ.

यानी आप फ़रमा दीजिए कि अल्लाह तआ़ला कभी किसी फ़ुहश (बुरे और ग़लत) काम का हुक्म नहीं दिया करते। क्योंकि ऐसा हुक्म देना हिक्मत और शाने क़ुद्दूसी के ख़िलाफ़ है। फिर उन लोगों के इस बोहतान, अल्लाह पर झूठ बोलने और बातिल ख़्याल को पूरी तरह रद्द करने के लिये उन लोगों को इस तरह तंबीह की गयीः

اَتَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ مَالَا تَعْلَمُوْنَ.

यानी क्या तुम लोग अल्लाह तआ़ला की तरफ़ ऐसी चीज़ों को मन्सूब करते हो जिसका तुमको इल्म नहीं। यानी जिसके यक़ीन करने के लिये तुम्हारे पास कोई हुज्जत नहीं, और ज़ाहिर है कि बिना तहक़ीक़ किसी शख़्स की तरफ़ भी किसी काम को मन्सूब करना इन्तिहाई दिलेरी और ज़ुल्म है, तो अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ किसी नक़्ल की ऐसी ग़लत निस्बत करना कितना बड़ा जुर्म और ज़ुल्म होगा। मुज्तहिदीन हज़रात क़ुरआनी आयतों से इज्तिहाद (ग़ौर व फ़िक्र करके और ज़ेहनी मेहनत से) जो अहकाम निकालते और बयान करते हैं वो इसमें दाख़िल नहीं, क्योंकि क़ुरआन के अलफ़ाज़ व इरशादात से उनका अहकाम निकालना एक हुज्जत (दलील) के मातहत होता है।

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

قُلْ اَمَرَ رَبِّىْ بِالْقِسْطِ.

यानी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ नंगे तवाफ़ के जायज़ करने की ग़लत निस्बत करने वाले जाहिलों से आप कह दीजिए कि अल्लाह तआ़ला तो हमेशा क़िस्त का हुक्म दिया करते हैं। क़िस्त के असली मायने इन्साफ़ व एतिदाल के हैं, और इस जगह क़िस्त से मुराद वह अ़मल है जो कमी-बेशी से ख़ाली हो, यानी न उसमें कोताही हो और न मुक़र्ररा हद से आगे निकला गया हो, जैसा कि शरीअ़त के तमाम अहकाम का यही हाल है। इसलिये लफ़्ज़ क़िस्त के मफ़्हूम में तमाम इबादतें, नेक काम और शरीअ़त के आ़म अहकाम दाख़िल हैं। (रूहुल-मआ़नी)

इस आयत में **क़िस्त** यानी इन्साफ़ व एतिदाल का हुक्म बयान करने के बाद उन लोगों की गुमराही और ग़लत रास्ते पर चलने के मुनासिब शरीअ़त के अहकाम में से दो हुक्म ख़ुसूसियत के साथ बयान फ़रमाये गये। एकः

اَقِيْمُوْا وُجُوْهَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ.

और दूसराः

وَادْعُوْهُ مُخْلِصِيْنَ لَهُ الدِّيْنَ.

पहला हुक्म इनसान के ज़ाहिरी कामों के बारे में है, और दूसरा उसके दिल और बातिन

(अन्दर) के बारे में है। पहले हुक्म में लफ़्ज़ मस्जिद अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक सज्दे व इबादत के मायने में आया है, और मायने यह हैं कि हर इबादत व नमाज़ के वक़्त अपना रुख़ सीधा रखा करो। इसका यह मतलब भी हो सकता है कि नमाज़ के वक़्त अपना रुख़ सीधा ठीक क़िब्ले की तरफ़ करने का एहतिमाम करो, और रुख़ सीधा करने के यह मायने भी हो सकते हैं कि अपने हर क़ौल व फ़ेल और हर अ़मल में अपना रुख़ अपने रब के हुक्म के ताबे रखो, उससे इधर उधर न होने पाये। इस मायने के लिहाज़ से यह हुक्म सिर्फ़ नमाज़ के लिये ख़ास नहीं, बल्कि तमाम इबादतों और मामलात को शामिल है।

और दूसरे हुक्म का तर्जुमा यह है कि अल्लाह तआ़ला को इस तरह पुकारो कि इबादत ख़ालिस उसी की हो, उसमें किसी दूसरे की शिर्कत किसी हैसियत से न हो, यहाँ तक कि छुपे शिर्क यानी दिखावे और नमूद से भी पाक हो।

इन दोनों हुक्मों को साथ ज़िक्र करने से इस तरफ़ भी इशारा हो सकता है कि इनसान पर लाज़िम है कि अपने ज़ाहिर व बातिन दोनों को शरीअ़त के अहकाम के मुताबिक़ दुरुस्त करे, न सिर्फ़ ज़ाहिरी इताअ़त बग़ैर इख़्लास के काफ़ी है, और न महज़ इख़्लासे बातिनी बग़ैर ज़ाहिरी इत्तिबा-ए-शरीअ़त के काफ़ी हो सकता है। बल्कि हर शख़्स पर लाज़िम है कि अपने ज़ाहिर को भी शरीअ़त के मुताबिक़ दुरुस्त करे और बातिन को भी सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के लिये ख़ालिस रखे। इससे उन लोगों की ग़लती वाज़ेह होती है जो शरीअ़त व तसव्वुफ़ को अलग-अलग तरीक़े समझते हैं, और यह ख़्याल करते हैं कि तसव्वुफ़ के मुताबिक़ बातिन को दुरुस्त कर लेना काफ़ी है, चाहे शरीअ़त के ख़िलाफ़ करते रहें। यह खुली गुमराही है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

كَمَا بَدَاَكُمْ تَعُوْدُوْنَ.

यानी अल्लाह तआ़ला ने जिस तरह तुम्हें शुरू में पैदा फ़रमाया था इसी तरह क़ियामत के दिन दोबारा तुम्हें ज़िन्दा करके खड़ा कर देंगे, उसकी कामिल क़ुदरत के आगे यह कोई मुश्किल चीज़ नहीं, और शायद इसी आसानी की तरफ़ इशारा करने के लिये 'युओ़दुकुम' के बजाय "तऊदून" फ़रमाया कि दोबारा पैदा होने के लिये किसी ख़ास कोशिश व अ़मल की ज़रूरत नहीं। (तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

इस जुमले को इस जगह लाने का एक फ़ायदा यह भी है कि शरीअ़त के अहकाम पर पूरी तरह क़ायम रहना इनसान के लिये आसान हो जाये, क्योंकि आख़िरत के जहान और क़ियामत और उसमें अच्छे-बुरे आमाल की जज़ा व सज़ा का तसव्वुर ही वह चीज़ है जो इनसान के लिये हर मुश्किल को आसान और हर तकलीफ़ को राहत बना सकती है, और तजुर्बा गवाह है कि जब तक इनसान पर यह ख़ौफ़ मुसल्लत न हो न कोई वअ़ज़ व नसीहत उसको सीधा कर सकती है, और न किसी क़ानून की पाबन्दी उसको बुराईयों और अपराधों से रोक सकती है।

तीसरी आयत में फ़रमाया कि कुछ लोगों को तो अल्लाह तआ़ला ने हिदायत की है और कुछ पर गुमराही साबित हो चुकी है, क्योंकि उन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर शैतानों को अपना

रफ़ीक़ (साथी) और दोस्त बना लिया, और यह ख़्याल रखते हैं कि वे राह पर हैं।

मुराद यह है कि अगरचे अल्लाह जल्ल शानुहू की हिदायत आ़म थी मगर उन लोगों ने उस हिदायत से मुँह मोड़ा और शैतानों की पैरवी करने लगे, और सितम पर सितम यह हुआ कि ये अपनी बीमारी ही को सेहत और गुमराही को हिदायत ख़्याल करने लगे।

इस आयत से मालूम हुआ कि शरीअ़त के अहकाम से अज्ञानता और नावाक़िफ़ियत कोई उज़्र नहीं। एक शख़्स अगर ग़लत रास्ते को सही समझकर पूरे इख़्लास के साथ इख़्तियार करे तो वह अल्लाह के नज़दीक माज़ूर नहीं, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने हर शख़्स को होश व हवास और अ़क़्ल व समझ इसी लिये दी है कि वह उससे काम लेकर खरे-खोटे और ग़लत सही को पहचाने। फिर उसको सिर्फ़ उसकी अ़क़्ल व समझ पर नहीं छोड़ा, अपने अम्बिया भेजे, किताबें नाज़िल फ़रमायीं, जिनके ज़रिये सही व ग़लत और हक़ व बातिल को ख़ूब खोलकर वाज़ेह (स्पष्ट) कर दिया।

अगर किसी शख़्स को इस पर शुब्हा हो कि एक शख़्स जो वास्तव में अपनें को हक़ पर समझता हो अगरचे ग़लती पर हो, फिर उस पर क्या इल्ज़ाम है? वह माज़ूर होना चाहिये, क्योंकि उसको अपनी ग़लती की इत्तिला ही नहीं। जवाब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने हर इनसान को अ़क़्ल व होश फिर अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की तालीम अ़ता फ़रमा दी हैं, जिनके ज़रिये कम से कम उसको अपने इख़्तियार किये हुए तरीक़े के ख़िलाफ़ का संदेह, गुमान और शक ज़रूर हो जाना चाहिये। अब उसका क़सूर यह है कि उसने इन चीज़ों की तरफ़ ध्यान न दिया और जिस ग़लत तरीक़े को इख़्तियार कर लिया था उस पर जमा रहा।

लेकिन जो शख़्स हक़ की तलब व तलाश में अपनी पूरी कोशिश ख़र्च कर चुका, और फिर भी उसकी नज़र सही रास्ते और हक़ बात की तरफ़ न पहुँची वह मुम्किन है कि अल्लाह तआ़ला के नज़दीक माज़ूर हो, जैसा कि इमाम ग़ज़ाली रह. ने अपनी किताब "अत्तफ़रक़तु बैनल-इस्लामि वज़्ज़नदक़ति" में फ़रमाया है। वल्लाहु सुब्हानहू व तआ़ला आलम

चौथी आयत में इरशाद फ़रमाया- "ऐ आदम की औलाद! तुम मस्जिद की हर हाज़िरी के वक़्त अपना लिबास पहन लिया करो और ख़ूब खाओ और पियो और हद से न निकलो, बेशक अल्लाह तआ़ला हद से निकलने वालों को पसन्द नहीं करते।"

ज़माना-ए-जाहिलीयत (इस्लाम आने से पहले दौर) के अ़रब वाले जैसा कि बैतुल्लाह का तवाफ़ नंगे होकर करने को सही इबादत और बैतुल्लाह का सम्मान समझते थे इसी तरह उनमें यह रस्म भी थी कि हज के दिनों में खाना पीना छोड़ देते थे, सिर्फ़ इतना खाते थे जिससे साँस चलता रहे, ख़ुसूसन घी, दूध और पाकीज़ा ग़िज़ाओं से बिल्कुल परहेज़ करते थे। (इब्ने जरीर)

उनके इस बेहूदा तरीक़ा-ए-कार के ख़िलाफ़ यह आयत नाज़िल हुई, जिसने बतलाया कि नंगे होकर तवाफ़ करना बेहयाई और सख़्त बेअदबी है, इससे परहेज़ करें। इसी तरह अल्लाह तआ़ला की दी हुई पाकीज़ा ग़िज़ाओं से बिना वजह परहेज़ करना भी कोई दीन की बात नहीं, बल्कि उसकी हलाल की हुई चीज़ें अपने ऊपर हराम ठहराना गुस्ताख़ी और इबादत में हद से निकलना

है, जिसको अल्लाह तआ़ला पसन्द नहीं फ़रमाते। इसलिये हज के दिनों में ख़ूब खाओ पियो, हाँ फ़ुज़ूल ख़र्ची न करो, हलाल ग़िज़ाओं से बिल्कुल बचना भी हद से निकलने में दाख़िल है, और हज के असल मक़ासिद और ज़िक्रुल्लाह से ग़ाफ़िल होकर खाने पीने ही में मशग़ूल रहना भी बेजा हरकत में दाख़िल है।

यह आयत अगरचे अ़रब के जाहिली दौर की एक ख़ास रस्म नंगेपन को मिटाने के लिये नाज़िल हुई है जिसको वे तवाफ़ के वक़्त बैतुल्लाह की ताज़ीम (अदब व सम्मान) के नाम पर किया करते थे, लेकिन तफ़सीर के इमामों और उम्मत के फ़ुक़हा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि किसी हुक्म के किसी ख़ास वाक़िए में नाज़िल होने के यह मायने नहीं होते कि वह हुक्म उसी वाक़िए के साथ ख़ास है, बल्कि अलफ़ाज़ के आ़म होने का एतिबार होता है। जो चीज़ें उन अलफ़ाज़ के आ़म होने में शामिल होती हैं सब पर यही हुक्म आयद होता है।

नमाज़ में सतर ढाँकना फ़र्ज़ है उसके बग़ैर नमाज़ नहीं होती

इसी लिये इस आयत से सहाबा व ताबिईन और मुज्तहिद की बड़ी जमाअ़त ने कई अहकाम निकाले हैं। अव्वल यह कि इसमें जिस तरह नंगे होकर तवाफ़ को मना किया गया है, इसी तरह नंगे नमाज़ पढ़ना भी हराम और बातिल है। क्योंकि हदीस में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है:

اَلطَّوَافُ بِالْبَيْتِ صَلٰوةٌ.

कि बैतुल्लाह का तवाफ़ करना भी नमाज़ (इबादत) है। (मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)

इसके अ़लावा ख़ुद इसी आयत में जबकि लफ़्ज़ **मस्जिद** से मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक मुराद सज्दा है, तो सज्दे की हालत में नंगा होने की मनाही ख़ुद आयत में स्पष्टता से आ जाती है, और जब सज्दे में यह हालत वर्जित और मना हुई तो रुकूअ़, क़ियाम, बैठने और नमाज़ के तमाम कामों और हालतों में इसका लाज़िम होना ज़ाहिर है।

फिर रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात ने इसको और भी वाज़ेह कर दिया। एक हदीस में इरशाद है कि किसी बालिग़ औ़रत की नमाज़ बग़ैर दुपट्टे के जायज़ नहीं। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

और नमाज़ के अ़लावा दूसरे हालात में भी सतर ढाँकने का फ़र्ज़ होना दूसरी आयतों व रिवायतों से साबित है, जिनमें से एक आयत इसी सूरत में गुज़र चुकी है:

يٰبَنِىْٓ اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُّوَارِىْ سَوْاٰتِكُمْ.

ख़ुलासा यह है कि सतर छुपाना इनसान के लिये पहला इनसानी और इस्लामी फ़र्ज़ है जो हर हालत में इस पर लाज़िम है। नमाज़ और तवाफ़ में और भी ज़्यादा फ़र्ज़ है।

नमाज़ के लिये अच्छा लिबास

दूसरा मसला इस आयत में यह है कि लिबास को लफ़्ज़ ज़ीनत से ताबीर करके इस तरफ़

भी इशारा फ़रमा दिया गया है कि नमाज़ में अफ़ज़ल व बेहतर यह है कि सिर्फ़ सतर ढाँपने पर किफ़ायत न की जाये बल्कि अपनी वुस्अ़त के मुताबिक़ अच्छा लिबास इख़्तियार किया जाये। हज़रत हसन रज़ियल्लाहु अ़न्हु की आ़दत थी कि नमाज़ के वक़्त अपना सबसे बेहतर लिबास पहनते थे, और फ़रमाते थे कि अल्लाह तआ़ला जमाल को पसन्द फ़रमाते हैं, इसलिये मैं अपने रब के लिये ज़ीनत व जमाल इख़्तियार करता हूँ। और अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया हैः

خُذُوْا زِيْنَتَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ.

मालूम हुआ कि इस आयत से जिस तरह नमाज़ में सतर छुपाने का फ़र्ज़ होना साबित होता है इसी तरह वुस्अ़त व गुंजाईश के मुताबिक़ साफ़-सुथरा अच्छा लिबास इख़्तियार करने की फ़ज़ीलत और पसन्दीदा होना भी साबित होता है।

नमाज़ में लिबास के मुताल्लिक़ चन्द मसाईल

तीसरा मसला इस जगह यह है कि सतर जिसका छुपाना इनसान पर हर हाल में और ख़ास तौर पर नमाज़ व तवाफ़ में फ़र्ज़ है, उसकी हद क्या है? क़ुरआने करीम ने मुख़्तसर तौर पर सतर छुपाने का हुक्म देकर इसकी तफ़सीलात को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हवाले किया। आपने तफ़सील के साथ इरशाद फ़रमाया कि मर्द का सतर नाफ़ से लेकर घुटनों तक और औ़रत का सतर सारा बदन है, सिर्फ़ चेहरा, दोनों हथेलियाँ और क़दम इससे बाहर हैं।

हदीस की रिवायतों में यह सब तफ़सील मज़कूर है। मर्द के लिये नाफ़ से नीचे का बदन या घुटने खुले हों तो ऐसा लिबास ख़ुद भी गुनाह है और नमाज़ भी उसमें अदा नहीं होती। इसी तरह औ़रत का सर, गर्दन, बाज़ू या पिण्डली खुली हो तो ऐसे लिबास में रहना ख़ुद भी नाजायज़ है और नमाज़ भी अदा नहीं होती। एक हदीस में इरशाद है कि जिस मकान में औ़रत नंगे सर हो वहाँ नेकी के फ़रिश्ते नहीं आते।

औ़रत का चेहरा, हथेलियाँ और क़दम जो सतर से बाहर क़रार दिये गये, इसके यह मायने हैं कि नमाज़ में उसके ये हिस्से (अंग) खुले हों तो नमाज़ में कोई ख़लल नहीं आयेगा। इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं कि ग़ैर-मेहरमों के सामने भी वह बग़ैर शरई उ़ज़्र (मजबूरी) के चेहरा खोलकर फिरा करे।

यह हुक्म तो सतर के फ़रीज़े के बारे में है, जिसके बग़ैर नमाज़ ही अदा नहीं होती। और चूँकि नमाज़ में सिर्फ़ सतर छुपाना ही मतलूब नहीं, बल्कि ज़ीनत वाला लिबास इख़्तियार करने का इरशाद है, इसलिये मर्द का नंगे सर नमाज़ पढ़ना या मोंढे या कोहनियाँ खोलकर नमाज़ पढ़ना मक्रूह है, चाहे क़मीज़ ही आधी आस्तीन की हो या आस्तीन चढ़ाई गयी हो, बहरहाल नमाज़ मक्रूह है। इसी तरह ऐसे लिबास में भी नमाज़ मक्रूह है जिसको पहनकर आदमी अपने दोस्तों और अ़वाम के सामने जाना क़ाबिले शर्म व आ़र समझे, जैसे सिर्फ़ बनियान बग़ैर कुर्ते के, अगरचे पूरी आस्तीन भी हो, या सर पर बजाय टोपी के कोई कपड़ा छोटा दस्ती रूमाल बाँध लेना कि कोई समझदार आदमी अपने दोस्तों या दूसरों के सामने इस अन्दाज़ व शक्ल में जाना

पसन्द नहीं करता, तो अल्लाह रब्बुल-आ़लमीन के दरबार में जाना कैसे पसन्दीदा हो सकता है। सर, मोंढे, कोहनियाँ खोलकर नमाज़ का मक्रूह होना क़ुरआनी आयतों के लफ़्ज़ ज़ीनत से भी समझ में आता है और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात से भी।

जिस तरह आयत का पहला जुमला अ़रब के जाहिली दौर की नंगेपन की रस्म को मिटाने के लिये नाज़िल हुआ, मगर अलफ़ाज़ के आ़म होने से और बहुत से अहकाम व मसाईल इससे मालूम हुए, इसी तरह दूसरा जुमलाः

كُلُوْا وَاشْرَبُوْا وَلَا تُسْرِفُوْا.

भी अगरचे अ़रब के जाहिली दौर की इस रस्म को मिटाने के लिये नाज़िल हुआ कि हज के दिनों में अच्छी ग़िज़ा खाने पीने को गुनाह समझते थे, लेकिन अलफ़ाज़ के आ़म होने से यहाँ भी बहुत से अहकाम व मसाईल साबित होते हैं।

खाना पीना ज़रूरत के मुताबिक़ फ़र्ज़ है

अव्वल यह कि खाना पीना शरई हैसियत से भी इनसान पर फ़र्ज़ व लाज़िम है। बावजूद क़ुदरत के कोई शख़्स खाना पीना छोड़ दे, यहाँ तक कि मर जाये, या इतना कमज़ोर हो जाये कि वाजिबात (फ़राईज़ और ज़रूरी चीज़ें) भी अदा न कर सके तो यह शख़्स अल्लाह के नज़दीक मुजरिम व गुनाहगार होगा।

दुनिया की चीज़ों में असल उनका जायज़ व मुबाह होना है

दुनिया की चीज़ों में असल उनका जायज़ व मुबाह होना है। जब तक किसी दलील से उनका हराम होना या मनाही साबित न हो कोई चीज़ हराम नहीं होती।

इमाम जस्सास की अहकामुल-क़ुरआन की वज़ाहत के मुताबिक़ एक मसला इस आयत से यह निकला कि दुनिया में जितनी चीज़ें खाने पीने की हैं, असल उनमें यह है कि वे सब जायज़ व हलाल हैं। जब तक किसी ख़ास चीज़ की हुर्मत व मनाही किसी शरई दलील से साबित न हो जाये हर चीज़ को जायज़ व हलाल समझा जायेगा। इसकी तरफ़ इशारा इस बात से हुआ कि 'कुलू वश्रबू' (खाओ और पियो) का मफ़ऊल (यानी किस चीज़ को खाया जाये) ज़िक्र नहीं फ़रमाया कि क्या चीज़ खाओ पियो। और अ़रबी ग्रामर के उलेमा की वज़ाहत है कि ऐसे मौक़े पर मफ़ऊल ज़िक्र न करना उसके आ़म होने की तरफ़ इशारा हुआ करता है कि हर चीज़ खा पी सकते हो सिवाय उन चीज़ों के जिनको स्पष्टता के साथ हराम कर दिया गया।

(अहकामुल-क़ुरआन, जस्सास)

खाने-पीने में हद से बढ़ना जायज़ नहीं

आयत के आख़िरी जुमले "व ला तुस्रिफ़ू" से साबित हुआ कि खाने पीने की तो इजाज़त है, बल्कि हुक्म है, मगर साथ ही इस्राफ़ करने की मनाही है। इस्राफ़ के मायने हैं हद से

निकलना। फिर हद से बढ़ने की कई सूरतें हैं- एक यह कि हलाल से बढ़कर हराम तक पहुँच जाये, और हराम चीज़ों को खाने पीने बरतने लगे। इसका हराम होना ज़ाहिर है।

दूसरे यह कि अल्लाह की हलाल की हुई चीज़ों को बिना शरई कारण और सबब के हराम समझकर छोड़ दे। जिस तरह हराम का इस्तेमाल जुर्म व गुनाह है इसी तरह हलाल को हराम समझना भी अल्लाह के क़ानून की मुख़ालफ़त और सख़्त गुनाह है।

(इब्ने कसीर, मज़हरी, रूहुल-मआनी)

इसी तरह यह भी इस्राफ़ है कि भूख और ज़रूरत से ज़्यादा खाये पिये। इसी लिये फ़ुक़हा हज़रात (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने पेट भरने से ज़ायद खाने को नाजायज़ लिखा है। (अहकामुल-क़ुरआन वग़ैरह) इसी तरह यह भी इस्राफ़ के हुक्म में है कि बावजूद ताक़त व इख़्तियार के ज़रूरत से इतना कम खाये जिससे कमज़ोर होकर वाजिबात की अदायेगी की क़ुदरत न रहे। इन दोनों क़िस्म के इस्राफ़ (हद से निकलने) को मना करने के लिये क़ुरआने करीम में एक जगह इरशाद है:

اِنَّ الْمُبَذِّرِيْنَ كَانُوْٓا اِخْوَانَ الشَّيٰطِيْنِ.

"यानी फ़ुज़ूल ख़र्ची करने वाले शैतानों के भाई हैं।"

और दूसरी जगह इरशाद है:

وَالَّذِيْنَ اِذَآ اَنْفَقُوْا لَمْ يُسْرِفُوْا وَلَمْ يَقْتُرُوْا وَكَانَ بَيْنَ ذٰلِكَ قَوَامًا.

"यानी अल्लाह को वे लोग पसन्द हैं जो ख़र्च करने में दरमियानी और बीच का रास्ता रखते हैं, न ज़रूरत की हद से ज़्यादा ख़र्च करें और न उससे कम ख़र्च करें।"

खाने-पीने में दरमियानी राह ही दीन व दुनिया के लिये लाभदायक है

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि बहुत खाने पीने से बचो, क्योंकि वह जिस्म को ख़राब करता है, बीमारियाँ पैदा करता है, अमल में सुस्ती पैदा करता है, बल्कि खाने पीने में बीच की राह इख़्तियार करो, इसलिये कि वह जिस्म की सेहत के लिये भी मुफ़ीद है और इस्राफ़ से भी दूर है। और फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला मोटे जिस्म वाले आ़लिम को पसन्द नहीं फ़रमाते (मुराद यह है कि जो ज़्यादा खाने से अपने इख़्तियार से मोटा और फ़र्बा हो गया हो) और फ़रमाया कि आदमी उस वक़्त तक हलाक नहीं होता जब तक कि वह अपनी नफ़्सानी इच्छाओं को दीन पर तरजीह न देने लगे। (रूहुल-मआनी, अबी नुऐम के हवाले से)

पहले बुज़ुर्गों ने इस बात को इस्राफ़ (हद से आगे निकलने) में दाख़िल क़रार दिया है कि आदमी हर वक़्त खाने पीने ही के धंधे में मशग़ूल रहे, या इसको दूसरे अहम कामों में मुक़द्दम (आगे और पहले) जाने, जिससे यह समझा जाये कि उसकी ज़िन्दगी का मक़सद यही खाना पीना है। उन्हीं हज़रात का मशहूर मक़ूला है कि "ख़ुरदन बराये ज़ीस्तन अस्त न ज़ीस्तन बराये

ख़ुरदन।" यानी खाना इसलिये है कि ज़िन्दगी क़ायम रहे, यह नहीं कि ज़िन्दगी खाने पीने ही के लिये हो।

एक हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको भी इस्राफ़ (फ़ुज़ूल ख़र्ची और हद से निकलने) में दाख़िल फ़रमाया है कि जब किसी चीज़ को जी चाहे तो उसको ज़रूर ही पूरा कर ले। फ़रमायाः

اِنَّ مِنَ الْاِسْرَافِ اَنْ تَاْكُلَ كُلَّ مَااشْتَهَيْتَ. (ابن ماجة عن انس).

और इमाम बैहक़ी ने नक़ल किया है कि हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को एक मर्तबा हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा कि दिन में दो मर्तबा खाना खाया है, तो इरशाद फ़रमाया ऐ आयशा! क्या तुम्हें यह पसन्द है कि तुम्हारा शग़ल सिर्फ़ खाना ही रह जाये।

और दरमियानी राह चलने का यह हुक्म जो खाने पीने से संबन्धित इस आयत में बयान हुआ है सिर्फ़ खाने पीने के साथ ख़ास नहीं, बल्कि पहनने और रहने सहने के हर काम में दरमियानी हालत पसन्द और महबूब है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि जो चाहो खाओ पियो, और जो चाहो पहनो, सिर्फ़ दो बातों से बचो- एक यह कि उसमें इस्राफ़ यानी ज़रूरत की हद से ज़्यादती न हो, दूसरे ग़ुरूर व इतराहट न हो।

एक आयत से आठ शरई मसाईल

ख़ुलासा यह है कि "कुलू वश्रबू व ला तुस्रिफ़ू" के कलिमात से आठ शरई मसाईल निकले- अव्वल यह कि खाना पीना ज़रूरत के मुताबिक़ फ़र्ज़ है। दूसरे यह कि जब तक किसी चीज़ की हुर्मत (हराम होना) किसी शरई दलील से साबित न हो जाये हर चीज़ हलाल है। तीसरे यह कि जिन चीज़ों को अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मना कर दिया उनका इस्तेमाल इस्राफ़ और नाजायज़ है। चौथे यह कि जो चीज़ें अल्लाह ने हलाल की हैं उनको हराम समझना भी इस्राफ़ और गुनाह है। पाँचवें यह कि पेट भर जाने के बाद और खाना नाजायज़ है। छठे यह कि इतना कम खाना जिससे कमज़ोर होकर वाजिबात और ज़रूरी कामों के करने की क़ुदरत न रहे, दुरुस्त नहीं है। सातवें यह कि हर वक़्त खाने पीने की फ़िक्र में रहना भी इस्राफ़ है। आठवें यह भी इस्राफ़ है कि जब कभी किसी चीज़ को जी चाहे तो ज़रूर ही उसको हासिल करे।

यह तो इस आयत के दीनी फ़ायदे हैं, और अगर तिब्बी तौर पर ग़ौर किया जाये तो सेहत व तन्दुरुस्ती के लिये इससे बेहतर कोई नुस्ख़ा नहीं। खाने पीने में एतिदाल (दरमियानी राह इख़्तियार करना) सारी बीमारियों से हिफ़ाज़त है।

तफ़सीर रूहुल-मआ़नी और मज़हरी वग़ैरह में है कि अमीरुल-मोमिनीन हारून रशीद के पास एक ईसाई तबीब (हकीम, चिकित्सक) इलाज के लिये रहता था, उसने अ़ली बिन हुसैन विन वाक़िद से कहा कि तुम्हारी किताब यानी क़ुरआन में इल्मे तिब्ब का कोई हिस्सा नहीं? हालाँकि दुनिया में दो ही इल्म इल्म हैं- एक धर्मों का इल्म, दूसरा बदनों का इल्म, जिसका नाम तिब्ब है।

अ़ली बिन हुसैन ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने तिब्ब व हिक्मत के सारे फ़न को क़ुरआन की आधी आयत में जमा कर दिया है, वह यह कि इरशाद फ़रमायाः

كُلُوْا وَاشْرَبُوْا وَلَا تُسْرِفُوْا.

(और तफ़सीर इब्ने कसीर में यह क़ौल पहले कुछ उलेमा के हवाले से भी नक़ल किया है) फिर उसने कहा कि अच्छा तुम्हारे रसूल के कलाम में भी तिब्ब के मुताल्लिक़ कुछ है? उन्होंने फ़रमाया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने चन्द कलिमात में सारे फ़न्ने तिब्ब को जमा कर दिया है। आपने फ़रमाया कि मेदा बीमारियों का घर है, और नुक़सानदेह चीज़ों से परहेज़ हर दवा की असल है, और हर बदन को वह चीज़ दो जिसका वह आ़दी है।

(तफ़सीरे कश्शाफ़, रूहुल-मआ़नी)

ईसाई तबीब (हकीम) ने यह सुनकर कहा कि तुम्हारी किताब और तुम्हारे रसूल ने जालीनूस के लिये कोई तिब्ब नहीं छोड़ी।

इमाम बैहक़ी ने शुअ़बुल-ईमान में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- मेदा (पेट) बदन का हौज़ है, सारे बदन की रगें इसी हौज़ से सैराब होती हैं। अगर मेदा ठीक है तो सारी रगें यहाँ से स्वस्थ गिज़ा लेकर लौटेंगी, और वह ख़राब है तो सारी रगें बीमारी लेकर बदन में फैलेंगी।

मुहद्दिसीन ने हदीस की इन रिवायतों के अलफ़ाज़ में कुछ कलाम किया है, लेकिन कम खाने और मोहतात रहने की ताकीदें जो बेशुमार हदीसों में मौजूद हैं उन पर सब का इत्तिफ़ाक़ है।

(तफ़सीर रूहुल-मआ़नी)

قُلْ مَنْ حَرَّمَ زِيْنَةَ اللّٰهِ الَّتِيْٓ

اَخْرَجَ لِعِبَادِهٖ وَالطَّيِّبٰتِ مِنَ الرِّزْقِ ؕ قُلْ هِيَ لِلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا خَالِصَةً يَّوْمَ الْقِيٰمَةِ ؕ كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ ۝ قُلْ اِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّيَ الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ وَالْاِثْمَ وَالْبَغْيَ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَاَنْ تُشْرِكُوْا بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ سُلْطٰنًا وَّاَنْ تَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ۝ وَلِكُلِّ اُمَّةٍ اَجَلٌ ۚ فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ ۝

क़ुल् मन् हर्र-म ज़ी-नतल्लाहिल्लती अख़्र-ज लिअ़िबादिही वत्तय्यिबाति मिनर्रिज़्क़ि, क़ुल् हि-य लिल्लज़ी-न आमनू फ़िल्हयातिद्-दुन्या ख़ालि-सतंय्यौमल्-क़ियामति,	तू कह किसने हराम किया अल्लाह की ज़ीनत को जो उसने पैदा की अपने बन्दों के वास्ते, और सुथरी चीज़ें खाने की, तू कह ये नेमतें असल में ईमान वालों के वास्ते हैं दुनिया की ज़िन्दगी में ख़ालिस उन्हीं के वास्ते हैं क़ियामत के दिन, इसी

कज़ालि-क नुफ़स्सिलुल्-आयाति लिक़ौमिंय्-यअ्लमून (32) क़ुल् इन्नमा हर्र-म रब्बियल्-फ़वाहि-श मा ज़-ह-र मिन्हा व मा ब-त-न वल्इस्-म वल्बग़्-य बिग़ैरिल्-हक़्क़ि व अन् तुश्रिकू बिल्लाहि मा लम् युनज़्ज़िल् बिही सुल्तानंव्-व अन् तक़ूलू अ़लल्लाहि मा ला तअ्लमून (33) व लिकुल्लि उम्मतिन् अ-जलुन् फ़-इज़ा जा-अ अ-जलुहुम् ला यस्तअ्ख़िरू-न सा-अ़तंव्-व ला यस्तक़्दिमून (34)	तरह तफ़सील से बयान करते हैं हम आयतें उनके लिये जो समझते हैं। (32) तू कह दे मेरे रब ने हराम किया है सिर्फ़ बेहयाई की बातों को जो उनमें खुली हुई हैं और जो छुपी हुई हैं, और गुनाह को, और नाहक़ की ज़्यादती को, और इस बात को कि शरीक करो अल्लाह का ऐसी चीज़ को जिसकी उसने सनद नहीं उतारी, और इस बात को कि लगाओ अल्लाह के ज़िम्मे वो बातें जो तुमको मालूम नहीं। (33) और हर फ़िर्के (जमाअ़त) के वास्ते एक वायदा है, फिर जब आ पहुँचेगा उनका वायदा, न पीछे सरक सकेंगे एक घड़ी और न आगे सरक सकेंगे। (34)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(जो लोग अल्लाह की हलाल की हुई खाने-पीने और पहनने की चीज़ों को बिना दलील बल्कि ख़िलाफ़े दलील हराम समझ रहे हैं उनसे) आप फ़रमाईए कि (यह बतलाओ) अल्लाह तआ़ला के पैदा किए हुए कपड़ों को, जिनको उसने अपने बन्दों के (इस्तेमाल के) वास्ते बनाया है और खाने-पीने की हलाल चीज़ों को (जिनको अल्लाह ने हलाल क़रार दिया है) किस शख़्स ने हराम किया है? (यानी हलाल व हराम क़रार देना तो ख़ालिक़ और मालिके कायनात का काम है, तुम अपनी तरफ़ से किसी चीज़ को हलाल या हराम कहने वाले कौन हो? उक्त आयतों में लिबास और खाने-पीने की चीज़ों को अल्लाह का इनाम क़रार दिया है; इससे काफ़िरों को यह शुब्हा हो सकता था कि यह इनाम तो हमें ख़ूब मिल रहा है, अगर अल्लाह तआ़ला हमसे नाराज़ होता और हमारे अ़क़ीदे व आमाल उसके ख़िलाफ़ होते तो यह इनाम हमें क्यों मिलता? इस शुब्हे के जवाब के लिये फ़रमाया कि ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम!) आप उनसे यह कह दीजिए कि (अल्लाह के इनामात के मुताल्लिक़ इस्तेमाल की इजाज़त अल्लाह के यहाँ मक़बूलियत की दलील नहीं, हाँ जिस इस्तेमाल के बाद कोई वबाल न हो वह मक़बूलियत की दलील है, और ऐसा इस्तेमाल ख़ालिस ईमान वालों का हिस्सा है, क्योंकि काफ़िर जितना ज़्यादा दुनियावी नेमतों को इस्तेमाल करते हैं उतना ही उनका वबाल और आख़िरत का अ़ज़ाब बढ़ता रहता है। इसलिये फ़रमाया कि) ये चीज़ें (लिबास और खाने-पीने की चीज़ें) इस तौर पर कि

क़ियामत के दिन (भी नाराज़गी और अज़ाब से) ख़ालिस रहें, दुनियावी ज़िन्दगानी में ख़ालिस ईमान वालों ही के लिए हैं, (बख़िलाफ़ काफ़िर के कि अगरचे दुनिया में उन्होंने अल्लाह की नेमतों को इस्तेमाल करके ऐश व मस्ती की ज़िन्दगी बसर की, मगर चूँकि इन नेमतों का शुक्र ईमान व इताअ़त के ज़रिये अदा नहीं किया, इसलिये वहाँ ये नेमतें वबाल और अ़ज़ाब बन जायेंगी) हम इसी तरह समझदारों के वास्ते तमाम आयतों को साफ़-साफ़ बयान किया करते हैं।

आप (उनसे यह भी) फ़रमाईए कि (तुमने जिन हलाल चीज़ों को बिना वजह हराम समझ रखा है वो तो अल्लाह ने हराम नहीं कीं) अलबत्ता मेरे रब ने सिर्फ़ (उन चीज़ों को जिनमें से अक्सर में तुम मुब्तला हो) हराम किया है (मसलन) तमाम फ़ुहश "यानी गन्दी और बेहूदा" बातों को, उनमें जो खुले तौर पर हों वो भी (जैसे नंगे होकर तवाफ़ करना) और उनमें जो छुपे तौर पर हों वो भी (जैसे बदकारी), और हर गुनाह की बात को (हराम किया है) और नाहक़ किसी पर ज़ुल्म करने को (हराम किया है) और इस बात को कि तुम अल्लाह तआ़ला के साथ किसी ऐसी चीज़ को (इबादत में) शरीक ठहराओ जिसकी अल्लाह तआ़ला ने कोई सनद (और दलील) नाज़िल नहीं फ़रमाई (न पूरी तरह और न आंशिक तौर पर), और इस बात को (हराम किया है) कि तुम लोग अल्लाह तआ़ला के ज़िम्मे ऐसी बात लगा दो जिसकी तुम सनद न रखो (जिस तरह आयत नम्बर 29 में तमाम हुक्म की गयीं चीज़ें जिन पर अ़मल करना शरअ़न ज़रूरी है, दाख़िल हो गये। इसी तरह आयत नम्बर 33 में तमाम मना की गयी बातें जिनकी मनाही है, शामिल हो गयीं), और (अगर इन हराम क़रार दी गयीं चीज़ों और कामों के करने वालों को फ़ौरन सज़ा न होने से उन चीज़ों के हराम होने में किसी को शुब्हा हो जाये तो उसका जवाब यह है कि अल्लाह के इल्म में) हर गिरोह (के हर व्यक्ति की सज़ा) के लिए (अल्लाह की हिक्मत के तहत) एक मुक़र्ररा मियाद है, सो जिस वक़्त उनकी (वह) मुक़र्ररा मियाद (नज़दीक) आ जाएगी उस वक़्त एक घड़ी न (उससे) पीछे हट सकेंगे और न आगे बढ़ सकेंगे (बल्कि फ़ौरन ही सज़ा जारी हो जायेगी। उस मियाद के पहले सज़ा न होना इसकी दलील नहीं कि इन हराम और मना किये गये कामों को करने पर सज़ा न होगी)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहली आयत में उन लोगों को तंबीह (चेतावनी) की गयी है जो इबादतों में ग़ुलू (हद से बढ़ना) और ख़ुद अपने हाथों तंगियाँ पैदा करते हैं। अल्लाह तआ़ला की हलाल की हुई चीज़ों से परहेज़ करने और अपने ऊपर हराम क़रार देने को इबादत व नेकी समझते हैं। जैसे मक्का के मुश्रिक लोग हज के दिनों में तवाफ़ के वक़्त लिबास पहनना ही जायज़ न समझते थे, और अल्लाह तआ़ला की हलाल और अच्छी ग़िज़ाओं से परहेज़ करने को इबादत जानते थे।

ऐसे लोगों को डाँट और फटकार के अन्दाज़ में तंबीह की गयी कि अल्लाह की ज़ीनत यानी उम्दा लिबास जो अल्लाह ने अपने बन्दों के लिये पैदा फ़रमाया है, और पाकीज़ा उम्दा ग़िज़ायें जो अल्लाह ने अ़ता फ़रमाई हैं उनको किसने हराम किया?

उम्दा लिबास और लज़ीज़ खाने से परहेज़ इस्लाम की तालीम नहीं

मतलब यह है कि किसी चीज़ को हलाल या हराम ठहराना सिर्फ़ उस पाक ज़ात का हक़ है जिसने उन चीज़ों को पैदा किया है, किसी दूसरे की उसमें दख़ल-अन्दाज़ी जायज़ नहीं, इसलिये वो लोग सज़ा व अ़ज़ाब के क़ाबिल हैं जो अल्लाह की हलाल की हुई उम्दा पोशाक या पाकीज़ा और लज़ीज़ खुराक को हराम समझें, वुस्अ़त होते हुए फटे हालों गन्दा परागन्दा रहना न कोई इस्लाम की तालीम है न कोई इस्लाम में पसन्दीदा चीज़ है, जैसा कि बहुत से जाहिल ख़्याल करते हैं।

पहले बुज़ुर्गों और इस्लाम के इमामों में बहुत से अकाबिर जिनको अल्लाह तआ़ला ने माली वुस्अ़त अ़ता फ़रमाई थी अक्सर उम्दा और क़ीमती लिबास इस्तेमाल फ़रमाते थे। नबी करीम हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी जब गुंजाईश हुई उम्दा से उम्दा लिबास भी पहना है। एक रिवायत में है कि एक मर्तबा आप बाहर तशरीफ़ लाये तो आपके बदन मुबारक पर ऐसी चादर थी जिसकी क़ीमत एक हज़ार दिरहम थी। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. से मन्क़ूल है कि चार सौ गिन्नी की क़ीमत की चादर इस्तेमाल फ़रमाई। इसी तरह हज़रत इमाम मालिक रह. हमेशा नफ़ीस और उम्दा लिबास इस्तेमाल फ़रमाते थे, उनके लिये तो किसी सज्जन ने साल भर के लिये तीन सौ साठ जोड़ों का सालाना इन्तिज़ाम अपने ज़िम्मे लिया हुआ था, और जो जोड़ा इमाम साहिब के बदन पर एक मर्तबा पहुँचता था दोबारा इस्तेमाल न होता था, क्योंकि सिर्फ़ एक दिन इस्तेमाल करके किसी ग़रीब तालिब-इल्म को दे देते थे।

वजह यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब अल्लाह तआ़ला किसी बन्दे को अपनी नेमत और वुस्अ़त अ़ता फ़रमायें तो अल्लाह तआ़ला इसको पसन्द फ़रमाते हैं कि उसकी नेमत का असर उसके लिबास वग़ैरह में देखा जाये। इसलिये कि नेमत का ज़ाहिर करना भी एक क़िस्म का शुक्र है। इसके मुक़ाबिल वुस्अ़त होते हुए फटे पुराने या मैले-कुचैले कपड़े इस्तेमाल करना नाशुक्री है।

हाँ ज़रूरी बात यह है कि दो चीज़ों से बचे, एक दिखावे और नाम करने, दूसरे घमण्ड व ग़ुरूर से, यानी महज़ लोगों को दिखलाने और अपनी बड़ाई ज़ाहिर करने के लिये क़ीमती लिबास इस्तेमाल न करे। और ज़ाहिर है कि पहले बुज़ुर्ग इन दोनों चीज़ों से बरी थे।

और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और पहले नेक हज़रात में हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु और कुछ दूसरे सहाबा से जो आ़म हालात में मामूली क़िस्म का लिबास या पैवन्द लगे हुए कपड़े इस्तेमाल करना मन्क़ूल है इसकी दो वजह थीं- एक तो यह कि अक्सर जो कुछ माल आता वह फ़क़ीरों, मिस्कीनों और दीनी कामों में ख़र्च कर डालते थे, अपने लिये बाक़ी ही न रहता था, जिससे उम्दा लिबास आ सके। दूसरे यह कि आप मख़्लूक़ के पेशवा और रहनुमा थे, इस सादी और सस्ती पोशाक के रखने से दूसरे अमीरों को उसकी तालीम देना था, ताकि आ़म ग़रीबों व फ़क़ीरों पर उनकी माली हैसियत का रौब न पड़े।

इसी तरह सूफ़िया-ए-किराम जो इस रास्ते के शुरूआती लोगों को ज़ीनत वाला लिबास और उम्दा लज़ीज़ खानों से रोकते हैं, इसका मन्शा भी यह नहीं कि इन चीज़ों को हमेशा के लिये छोड़ देना कोई सवाब का काम है, बल्कि नफ़्स की इच्छाओं पर क़ाबू पाने के लिये अल्लाह की राह में ऐसे मुजाहदे (तपस्यायें) इलाज व दवा के तौर पर कर दिये जाते हैं, और जब वह इस दर्जे पर पहुँच जाये कि नफ़्सानी इच्छाओं पर क़ाबू पा ले कि उसका नफ़्स उसको हराम व नाजायज़ की तरफ़ न खींच सके, तो उस वक़्त तमाम सूफ़िया-ए-किराम आम नेक बुज़ुर्गों की तरह उम्दा लिबास और लज़ीज़ खानों को इस्तेमाल करते हैं, और उस वक़्त यह पाक रिज़्क़ उनके लिये अल्लाह की मारिफ़त (पहचानने) और निकटता के दर्जों में रुकावट के बजाय इज़ाफ़े और तरक़्क़ी का ज़रिया बनते हैं।

खाने और पहनने में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत

ख़ुराक व पोशाक (खाने और पहनने) के बारे में सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा व ताबिईन का ख़ुलासा यह है कि इन चीज़ों में तकल्लुफ़ न करे, जैसी पोशाक व ख़ुराक आसानी से मयस्सर हो उसको शुक्र के साथ इस्तेमाल करे। मोटा कपड़ा, ख़ुश्क ग़िज़ा मिले तो यह तकल्लुफ़ न करे कि किसी न किसी तरह अच्छा ही हासिल करे, चाहे क़र्ज़ लेना पड़े, या इसकी फ़िक्र में अपने आपको किसी दूसरी मुश्किल में मुब्तला करने की नौबत आये।

इसी तरह उम्दा नफ़ीस लिबास या लज़ीज़ ग़िज़ा मयस्सर आये तो यह तकल्लुफ़ न करे कि उसको जान-बूझकर ख़राब कर ले या उसके इस्तेमाल से परहेज़ करे। जिस तरह अच्छा लिबास और ग़िज़ा की जुस्तजू तकल्लुफ़ है इसी तरह अच्छे को ख़राब करना या उसको छोड़कर घटिया इस्तेमाल करना भी तकल्लुफ़ और बुरा है।

आयत के अगले जुमले में इसकी एक ख़ास हिक्मत यह बतलाई गयी कि दुनिया की तमाम नेमतें नफ़ीस और उम्दा लिबास, पाकीज़ा और लज़ीज़ ग़िज़ायें दर असल मोमिन फ़रमाँबरदारों ही के लिये पैदा की गयी हैं, दूसरे लोग उनके तुफ़ैल में खा-पी रहे हैं। क्योंकि यह दुनिया दारुल-अ़मल (अ़मल करने की जगह) है, दारुल-जज़ा (बदला मिलने की जगह) नहीं, यहाँ खरे-खोटे और अच्छे-बुरे का फ़र्क़ दुनिया की नेमतों में नहीं किया जा सकता, बल्कि दुनिया के रहमान की नेमतों का यह दस्तरख़्वाने आम यहाँ सब के लिये बराबर खुला हुआ है, बल्कि दुनिया में अल्लाह का क़ानून यह है कि अगर मोमिन व फ़रमाँबरदार बन्दों से नेकी और फ़रमाँबरदारी में कुछ कमी हो जाती है तो दूसरे लोग उन पर ग़ालिब आकर दुनियावी नेमतों के ख़ज़ानों पर क़ाबिज़ हो जाते हैं, और ये लोग फ़क़्र व फ़ाक़े में मुब्तला हो जाते हैं।

मगर यह क़ानून सिर्फ़ इसी दारुल-अ़मल दुनिया के अन्दर है, और आख़िरत में सारी नेमतें और राहतें सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला के फ़रमाँबरदार अल्लाह के हुक्मों का पालन करने वाले बन्दों के लिये मख़्सूस होंगी। यही मायने हैं आयत के इस जुमले के:

قُلْ هِيَ لِلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا خَالِصَةً يَّوْمَ الْقِيٰمَةِ.

यानी आप कह दीजिए कि दुनिया की सब नेमतें दुनिया की ज़िन्दगी में भी दर असल मोमिनों ही का हक़ हैं, और क़ियामत के दिन तो ख़ालिस इन्हीं के साथ मख़्सूस होंगी।

और हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इस जुमले का यह मतलब क़रार दिया है कि दुनिया की सारी नेमतें और राहतें इस ख़ास कैफ़ियत के साथ कि वह आख़िरत में वबाले जान न बनें सिर्फ़ फ़रमाँबरदार मोमिनों का हिस्सा है, बख़िलाफ़ काफ़िर व बदकार लोगों के कि अगरचे दुनिया में नेमतें उनको भी मिलती हैं बल्कि ज़्यादा मिलती हैं, मगर उनकी ये नेमतें आख़िरत में वबाले जान और हमेशा का अ़ज़ाब बनने वाली हैं, इसलिये नतीजे के एतिबार से उनके लिये यह कोई इज़्ज़त व राहत की चीज़ न हुई।

और मुफ़स्सिरीन हज़रात में से कुछ ने इसके यह मायने क़रार दिये कि दुनिया में सारी नेमतों और राहतों के साथ मेहनत व मशक़्क़त और फिर ज़वाल (ख़त्म होने और छिन जाने) का ख़तरा और फिर तरह-तरह के रंज व ग़म लगे हुए हैं, ख़ालिस नेमत और ख़ालिस राहत का यहाँ वजूद ही नहीं। अलबत्ता क़ियामत में जिसको ये नेमतें मिलेंगी वो ख़ालिस होकर मिलेंगी, न उनके साथ कोई मेहनत व मशक़्क़त होगी और न उनके ख़त्म होने, छिनने या कम होने का कोई ख़तरा, और न उनके बाद कोई रंज व मुसीबत, तीनों मफ़्हूम आयत के इस जुमले में खप सकते हैं। और इसी लिये सहाबा व ताबिईन मुफ़स्सिरीन ने इनको इख़्तियार किया है।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّعْلَمُوْنَ.

"यानी हम अपनी कामिल क़ुदरत की निशानियाँ समझदार लोगों के लिये इसी तरह तफ़सील व वज़ाहत से बयान किया करते हैं।" जिससे हर आ़लिम व जाहिल समझ ले। इस आयत में लोगों के ग़ुलू (हद से निकलने) और इन जाहिलाना ख़्यालात की तरदीद थी कि अच्छा लिबास और अच्छा खाना छोड़ने से अल्लाह तआ़ला राज़ी होते हैं।

इसके बाद दूसरी आयत में कुछ उन चीज़ों का बयान है जिनको अल्लाह तआ़ला ने हराम क़रार दिया है। और यह हक़ीक़त है कि उनके छोड़ने ही से ख़ुदा तआ़ला की रज़ा हासिल होती है। और इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये लोग दोहरी जहालत में मुब्तला हैं, एक तरफ़ तो अल्लाह तआ़ला की हलाल की हुई उम्दा और नफ़ीस चीज़ों को अपने ऊपर बिना वजह हराम करके इन नेमतों से मेहरूम हो गये, और दूसरी तरफ़ जो चीज़ें हक़ीक़त में हराम थीं और जिनके इस्तेमाल से अल्लाह तआ़ला का ग़ज़ब और आख़िरत का अ़ज़ाब परिणाम के तौर पर आने वाला है, उनके इस्तेमाल में मुब्तला होकर आख़िरत का वबाल ख़रीद लिया, और इस तरह दुनिया व आख़िरत दोनों जगह नेमतों से मेहरूम होकर दुनिया व आख़िरत के घाटे और नुक़सान उठाने वाले बन गये। इरशाद फ़रमायाः

اِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّيَ الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ وَالْاِثْمَ وَالْبَغْيَ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَاَنْ تُشْرِكُوْا بِاللّٰهِ مَالَمْ يُنَزِّلْ بِهٖ

سُلْطٰنًا وَّاَنْ تَقُوْلُوْا عَلَى اللّٰهِ مَالَا تَعْلَمُوْنَ.

"यानी जिन चीज़ों को तुमने ख़्वाह-मख़्वाह हराम ठहरा लिया वे तो हराम नहीं, मगर अल्लाह तआला ने तमाम बेहयाई के कामों को हराम किया है, चाहे वो खुले हुए हों या छुपे हुए। और हर गुनाह के काम को, और नाहक़ किसी पर ज़ुल्म करने को और अल्लाह तआला के साथ बिना दलील किसी को शरीक ठहराने को, और इस बात को कि तुम लोग अल्लाह तआला के ज़िम्मे ऐसी बात लगा दो जिसकी तुम सनद न रखो।"

इस तफ़सील में लफ़्ज़े इस्म के तहत वो तमाम गुनाह आ गये हैं जिनका ताल्लुक़ इनसान की अपनी ज़ात से है, और बग़्युन में वो गुनाह जिनका ताल्लुक़ दूसरों के मामलात और हुक़ूक़ से हो, और शिर्क और अल्लाह पर बोहतान बाँधने के अक़ीदे का ज़बरदस्त गुनाह होना ज़ाहिर ही है।

इस ख़ास तफ़सील का ज़िक्र इसलिये भी किया गया है कि इसमें तक़रीबन हर तरह के मुहर्रमात (हराम की गयी चीज़ें) और गुनाह पूरे आ गये, चाहे अक़ीदे के गुनाह हों या अमल के, और फिर ज़ाती अमल के गुनाह हों या लोगों के हुक़ूक़। और इसलिये भी कि ये जाहिलीयत के ज़माने के लोग इन सब बुराईयों और हराम कारियों में मुब्तला थे, इस तरह उनकी डबल जहालत को खोला गया, कि हलाल चीज़ों से परहेज़ करते और हराम के इस्तेमाल से नहीं झिझकते।

और दीन में ग़ुलू (हद से निकलना) और नई निकाली हुई बातों (यानी बिदअ़तों) की यह लाज़िमी विशेषता है कि जो शख़्स इन चीज़ों में मुब्तला होते हैं वे दीन की असल और अहम ज़रूरतों से आदतन ग़ाफ़िल हो जाते हैं। इसलिये दीन में ग़ुलू और बिदअ़त का नुक़सान दोहरा होता है- एक खुद ग़ुलू और बिदअ़त में मुब्तला होना गुनाह है, दूसरे उसके मुक़ाबले में सही दीन और सुन्नत के तरीक़ों से मेहरूम होना। अल्लाह तआला हमें इन बातों से अपनी पनाह में रखे।

पहली और दूसरी दोनों आयतों में मुश्रिक व मुजरिम लोगों के दो ग़लत कामों का ज़िक्र था- एक हलाल को हराम ठहराना, दूसरे हराम को हलाल क़रार देना। तीसरी आयत में उनके बुरे अन्जाम और आख़िरत की सज़ा व अ़ज़ाब का बयान है। इरशाद फ़रमायाः

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ اَجَلٌ فَاِذَا جَآءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُوْنَ سَاعَةً وَّلَا يَسْتَقْدِمُوْنَ.

यानी ये मुजरिम लोग जो हर तरह की नाफ़रमानी के बावजूद अल्लाह तआला की नेमतों में पल रहे हैं, और दुनिया में बज़ाहिर इन पर कोई अ़ज़ाब आता नज़र नहीं आता, अल्लाह के इस दस्तूर व क़ानून से ग़ाफ़िल न रहें कि अल्लाह तआला मुजरिमों को अपनी रहमत से ढील देते रहते हैं, कि किसी तरह ये अपनी हरकतों से बाज़ आ जायें। लेकिन अल्लाह तआला के इल्म में उस ढील और मोहलत की एक मियाद तय होती है, जब वह मियाद आ पहुँचती है तो एक घड़ी भी आगे पीछे नहीं होती, और ये अ़ज़ाब में पकड़ लिये जाते हैं। कभी दुनिया ही में कोई अ़ज़ाब आ जाता है, और अगर दुनिया में अ़ज़ाब न आया तो मरते ही अ़ज़ाब में दाख़िल हो जाते हैं।

इस आयत में तयशुदा मियाद से आगे पीछे न होने का जो ज़िक्र है यह ऐसा ही मुहावरा है

जैसे हमारे उर्फ़ में ख़रीदार दुकानदार से कहता है कि क़ीमत में कुछ कमी ज़्यादती हो सकती है? ज़ाहिर है कि क़ीमत की ज़्यादती उसको नहीं चाहिये, सिर्फ़ कमी को पूछना है, मगर साथ ही ज़्यादती का ज़िक्र किया जाता है। इसी तरह यहाँ असल मक़सद तो यह है कि निर्धारित मियाद के बाद देरी नहीं होगी, और पहले होने का ज़िक्र देरी के साथ अ़वाम के मुहावरे के तौर पर कर दिया गया।

يَٰبَنِيٓ ءَادَمَ إِمَّا يَأۡتِيَنَّكُمۡ رُسُلٞ مِّنكُمۡ يَقُصُّونَ عَلَيۡكُمۡ ءَايَٰتِي فَمَنِ ٱتَّقَىٰ وَأَصۡلَحَ فَلَا خَوۡفٌ عَلَيۡهِمۡ وَلَا هُمۡ يَحۡزَنُونَ ۝ وَٱلَّذِينَ كَذَّبُواْ بِـَٔايَٰتِنَا وَٱسۡتَكۡبَرُواْ عَنۡهَآ أُوْلَٰٓئِكَ أَصۡحَٰبُ ٱلنَّارِۖ هُمۡ فِيهَا خَٰلِدُونَ ۝ فَمَنۡ أَظۡلَمُ مِمَّنِ ٱفۡتَرَىٰ عَلَى ٱللَّهِ كَذِبًا أَوۡ كَذَّبَ بِـَٔايَٰتِهِۦٓۚ أُوْلَٰٓئِكَ يَنَالُهُمۡ نَصِيبُهُم مِّنَ ٱلۡكِتَٰبِۖ حَتَّىٰٓ إِذَا جَآءَتۡهُمۡ رُسُلُنَا يَتَوَفَّوۡنَهُمۡ قَالُوٓاْ أَيۡنَ مَا كُنتُمۡ تَدۡعُونَ مِن دُونِ ٱللَّهِۖ قَالُواْ ضَلُّواْ عَنَّا وَشَهِدُواْ عَلَىٰٓ أَنفُسِهِمۡ أَنَّهُمۡ كَانُواْ كَٰفِرِينَ ۝ قَالَ ٱدۡخُلُواْ فِيٓ أُمَمٖ قَدۡ خَلَتۡ مِن قَبۡلِكُم مِّنَ ٱلۡجِنِّ وَٱلۡإِنسِ فِي ٱلنَّارِۖ كُلَّمَا دَخَلَتۡ أُمَّةٞ لَّعَنَتۡ أُخۡتَهَاۖ حَتَّىٰٓ إِذَا ٱدَّارَكُواْ فِيهَا جَمِيعٗا قَالَتۡ أُخۡرَىٰهُمۡ لِأُولَىٰهُمۡ رَبَّنَا هَٰٓؤُلَآءِ أَضَلُّونَا فَـَٔاتِهِمۡ عَذَابٗا ضِعۡفٗا مِّنَ ٱلنَّارِۖ قَالَ لِكُلّٖ ضِعۡفٞ وَلَٰكِن لَّا تَعۡلَمُونَ ۝ وَقَالَتۡ أُولَىٰهُمۡ لِأُخۡرَىٰهُمۡ فَمَا كَانَ لَكُمۡ عَلَيۡنَا مِن فَضۡلٖ فَذُوقُواْ ٱلۡعَذَابَ بِمَا كُنتُمۡ تَكۡسِبُونَ ۝

या बनी आद-म इम्मा यअ्तियन्नकुम् रुसुलुम्-मिन्कुम् यक़ुस्सू-न अ़लैकुम् आयाती फ़-मनित्तक़ा व अस्ल-ह फ़ला ख़ौफ़ुन् अ़लैहिम् व ला हुम् यह्ज़नून (35) वल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना वस्तक्बरू अ़न्हा उलाइ-क अस्हाबुन्नारि हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (36) फ़-मन् अज़्लमु मिम्-मनिफ़्तरा अ़लल्लाहि कज़िबन् औ कज़्ज़-ब बिआयातिही, उलाइ-क	ऐ औलाद आदम की! अगर आयें तुम्हारे पास रसूल तुममें के कि सुनायें तुमको आयतें मेरी तो जो कोई डरे और नेकी पकड़े तो न ख़ौफ़ होगा उन पर और न वे ग़मगीन होंगे। (35) और जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और तकब्बुर किया उनसे, वही हैं दोज़ख़ में रहने वाले, वे उसी में हमेशा रहेंगे। (36) फिर उससे ज़्यादा ज़ालिम कौन जो बोहतान बाँधे अल्लाह पर झूठा, या झुठलाये उसके हुक्मों को, वे लोग हैं कि मिलेगा उनको जो उनका हिस्सा लिखा हुआ है किताब

यनालुहुम् नसीबुहुम् मिनल्-किताबि, हत्ता इज़ा जाअत्हुम् रुसुलुना य-तवफ़्फ़ौनहुम् क़ालू ऐ-न मा कुन्तुम् तद्ऊ-न मिन् दूनिल्लाहि, क़ालू ज़ल्लू अ़न्ना व शहिदू अ़ला अन्फ़ुसिहिम् अन्नहुम् कानू काफ़िरीन (37) क़ालद्ख़ुलू फ़ी उ-ममिन् क़द् ख़लत् मिन् क़ब्लिकुम् मिनल्-जिन्नि वल्इन्सि फ़िन्नारि, कुल्लमा द-ख़लत् उम्मतुल्ल-अ़नत् उख़्तहा, हत्ता इज़्द्दा-रकू फ़ीहा जमीअ़न् क़ालत् उख़राहुम् लिऊलाहुम् रब्बना हा-उला-इ अज़ल्लूना फ़आतिहिम् अ़ज़ाबन् ज़िअ़्फ़म्-मिनन्नारि, क़ा-ल लिकुल्लिन् ज़िअ़्फ़ुंव्-व ला किल्ला तअ़्लमून (38) व क़ालत् ऊलाहुम् लिउख़्राहुम् फ़मा का-न लकुम् अ़लैना मिन् फ़ज़्लिन् फ़ज़ूक़ुल्-अ़ज़ा-ब बिमा कुन्तुम् तक्सिबून (39) ❁	में, यहाँ तक कि जब पहुँचें उनके पास हमारे भेजे हुए उनकी जान लेने को तो कहें क्या हुई वे जिनको तुम पुकारा करते थे सिवाय अल्लाह के, बोलेंगे वे हमसे खोये गये और इक़रार कर लेंगे अपने ऊपर कि बेशक वे काफ़िर थे। (37) फ़रमायेगा दाख़िल हो जाओ साथ और उम्मतों के जो तुमसे पहले हो चुकी हैं जिन्न और आदमियों में से दोज़ख़ के अन्दर। जब दाख़िल होगी एक उम्मत तो लानत करेगी दूसरी उम्मत को यहाँ तक कि जब गिर चुकेंगे उसमें सारे, तो कहेंगे उनके पिछले पहलों को ऐ रब हमारे! हम को इन्हीं ने गुमराह किया, सो तू इनको दे दोगुना अ़ज़ाब आग का। फ़रमायेगा कि दोनों को दोगुना है लेकिन तुम नहीं जानते। (38) और कहेंगे उनके पहले पिछलों को- पस कुछ न हुई तुमको हम पर बड़ाई, अब चखो अ़ज़ाब अपनी कमाई (यानी आमाल) के सबब। (39) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(हमने रूहों के आ़लम ही में कह दिया था) ऐ आदम की औलाद! अगर तुम्हारे पास पैग़म्बर आएँ जो तुम्हीं में से होंगे, जो मेरे अहकाम तुम पर बयान करेंगे, सो (उनके आने पर) जो शख़्स (तुम में उन आयतों को झुठलाने से) परहेज़ रखे और (आमाल की) दुरुस्ती करे, (मुराद यह कि पूर्ण रूप से उनकी पैरवी करे) सो उन लोगों पर (आख़िरत में) न कुछ अन्देशा (की बात वाक़े होने वाली) है और न वे ग़मगीन होंगे। और जो लोग (तुममें से) हमारे उन

अहकाम को झूठा बतलाएँगे और उन (के क़ुबूल करने) से तकब्बुर करेंगे, वे लोग दोज़ख़ (में रहने) वाले होंगे, (और) वे उसमें हमेशा-हमेशा रहेंगे। (जब झुठलाने वालों का सख़्त धमकी और अ़ज़ाब का हक़दार होना संक्षिप्त रूप से मालूम हो गया सो अब तफ़सील सुनो कि) उस शख़्स से ज़्यादा ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह तआ़ला पर झूठ बाँधे (यानी जो बात ख़ुदा की कही हुई न हो उसको ख़ुदा की कही हुई कहे) या उसकी आयतों को झूठा बतलाए (यानी जो बात ख़ुदा की कही हुई हो उसको बिना कही बतलाये), उन लोगों के नसीब का जो कुछ (रिज़्क़ और उम्र) (लिखा) है वह उनको (दुनिया में) मिल जाएगा, (लेकिन आख़िरत में मुसीबत ही मुसीबत है) यहाँ तक कि (बर्ज़ख़ में मरने के वक़्त तो उनकी यह हालत होगी कि) जब उनके पास हमारे भेजे हुए (फ़रिश्ते) उनकी जान क़ब्ज़ करने आएँगे तो (उनसे) कहेंगे कि (कहो) वे कहाँ गए जिनकी तुम ख़ुदा को छोड़कर इबादत किया करते थे (अब इस मुसीबत में क्यों नहीं काम आते)? वे (काफ़िर) कहेंगे कि हमसे सब ग़ायब हो गए (यानी वाक़ई कोई काम न आया) और (उस वक़्त) अपने काफ़िर होने का इक़रार करने लगेंगे (लेकिन उस वक़्त का इक़रार बिल्कुल बेकार होगा। और कुछ आयतों में ऐसे ही सवाल व जवाब का क़ियामत में होना भी मज़कूर है सो दोनों मौक़ों पर होना मुम्किन है। और क़ियामत में उनका यह हाल होगा कि) अल्लाह फ़रमाएगा कि जो फ़िर्क़े (काफ़िरों के) तुमसे पहले गुज़र चुके हैं जिन्नात में से भी और आदमियों में से भी, उनके साथ तुम भी दोज़ख़ में जाओ (चुनाँचे आगे पीछे सब काफ़िर उसमें दाख़िल होंगे, और यह कैफ़ियत पेश आयेगी कि) जिस वक़्त भी (काफ़िरों की) कोई जमाअ़त (दोज़ख़ में) दाख़िल होगी, अपनी जैसी दूसरी जमाअ़त को (भी जो उन्हीं जैसे काफ़िर होंगे और उनसे पहले दोज़ख़ में जा चुके होंगे) लानत करेगी, (यानी आपस में हमदर्दी न होगी, बल्कि असल हक़ीक़त के सामने आ जाने की वजह से हर शख़्स दूसरे को बुरी नज़र से देखेगा और बुरा कहेगा) यहाँ तक कि जब उस (दोज़ख़) में सब जमा हो जाएँगे तो (उस वक़्त) बाद वाले लोग (जो बाद में दाख़िल हुए होंगे और ये वे लोग होंगे जो कुफ़्र में दूसरों के ताबे थे) पहले (दाख़िल होने वाले) लोगों के बारे में (यानी उन लोगों के बारे में जो सरदार और कुफ़्र में पेशवा होने के सबब दोज़ख़ में पहले दाख़िल होंगे, यह) कहेंगे कि ऐ हमारे परवर्दिगार! हमको इन लोगों ने गुमराह किया था, सो इनको दोज़ख़ का अ़ज़ाब (हमसे) दोगुना दीजिए। (अल्लाह तआ़ला) फ़रमाएँगे कि (इनको दोगुना होने से तुमको कौनसी तसल्ली व राहत हो जायेगी, बल्कि चूँकि तुम्हारा अ़ज़ाब भी हमेशा आनन-फ़ानन बढ़ता जायेगा, इसलिये तुम्हारा अ़ज़ाब भी उनके दोगुने अ़ज़ाब ही जैसा हो गया। पस इस हिसाब से) सब ही का (अ़ज़ाब) दोगुना है, लेकिन (अभी) तुमको (पूरी) ख़बर नहीं। (क्योंकि अभी तो अ़ज़ाब की शुरूआ़त ही है, उसके बढ़ने को देखा नहीं इसलिये ऐसी बातें बना रहे हो जिनसे मालूम होता है कि दूसरे के अ़ज़ाब के दोगुना होने को अपने लिये गुस्से के ठंडा होने और तसल्ली का ज़रिया समझ रहे हो)। और पहले (दाख़िल होने वाले) लोग बाद वाले (दाख़िल होने वाले) लोगों से (ख़ुदा तआ़ला के इस जवाब से बाख़बर होकर) कहेंगे (कि जब सब की सज़ा की यह हालत है तो) फिर तुमको हम पर (अ़ज़ाब के कम

होने के बारे में) कोई बरतरी नहीं, (क्योंकि कमी न हमारे लिये न तुम्हारे लिये) सो तुम भी अपने (बुरे) आमाल के मुक़ाबले में (बढ़े हुए) अज़ाब (का मज़ा) चखते रहो।

إِنَّ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا وَاسْتَكْبَرُوا عَنْهَا لَا تُفَتَّحُ لَهُمْ أَبْوَابُ السَّمَاءِ وَلَا يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ حَتَّىٰ يَلِجَ الْجَمَلُ فِي سَمِّ الْخِيَاطِ ۚ وَكَذَٰلِكَ نَجْزِي الْمُجْرِمِينَ ۝ لَهُم مِّن جَهَنَّمَ مِهَادٌ وَمِن فَوْقِهِمْ غَوَاشٍ ۚ وَكَذَٰلِكَ نَجْزِي الظَّالِمِينَ ۝ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِم مِّنْ غِلٍّ تَجْرِي مِن تَحْتِهِمُ الْأَنْهَارُ ۖ وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلَّهِ الَّذِي هَدَانَا لِهَٰذَا وَمَا كُنَّا لِنَهْتَدِيَ لَوْلَا أَنْ هَدَانَا اللَّهُ ۖ لَقَدْ جَاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ ۖ وَنُودُوا أَن تِلْكُمُ الْجَنَّةُ أُورِثْتُمُوهَا بِمَا كُنتُمْ تَعْمَلُونَ ۝

इन्नल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना वस्तक्बरू अ़न्हा ला तुफ़त्तहु लहुम् अब्वाबुस्समा-इ व ला यद्ख़ुलूनल्-जन्न-त हत्ता यलिजल्-ज-मलु फ़ी सम्मिल्-ख़ियाति, व कज़ालि-क नज्ज़िल्-मुज्रिमीन (40) लहुम् मिन् जहन्न-म मिहादुंव्-व मिन् फ़ौक़िहिम् ग़वाशिन्, व कज़ालि-क नज्ज़िज़्-ज़ालिमीन (41) वल्लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्-सालिहाति ला नुकल्लिफ़ु नफ़्सन् इल्ला वुस्अ़हा उलाइ-क अस्हाबुल्-जन्नति हुम् फ़ीहा ख़ालिदून (42) व नज़अ़्ना मा फ़ी सुदूरिहिम् मिन् ग़िल्लिन् तज्री मिन्	बेशक जिन्होंने झुठलाया हमारी आयतों को और उनके मुक़ाबले में तकब्बुर किया, न खोले जायेंगे उनके लिये दरवाज़े आसमान के और न दाख़िल होंगे जन्नत में यहाँ तक कि घुस जाये ऊँट सूई के नाके में, और हम यूँ बदला देते हैं गुनाहगारों को। (40) उनके वास्ते दोज़ख़ का बिछौना है और ऊपर से ओढ़ना, और हम यूँ बदला देते हैं ज़ालिमों को। (41) और जो ईमान लाये और कीं नेकियाँ हम बोझ नहीं रखते किसी पर मगर उसकी ताक़त के मुवाफ़िक़, वही हैं जन्नत में रहने वाले, वे उसी में हमेशा रहेंगे। (42) और निकाल लेंगे हम जो कुछ उनके दिलों में नाराज़गी थी, बहती होंगी उनके नीचे नहरें, और कहेंगे शुक्र अल्लाह का जिसने हमको यहाँ तक पहुँचा

तस्तिहिमुल्-अन्हारु व क़ालुल्-हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी हदाना लिहाज़ा, व मा कुन्ना लिनह्तदि-य लौ ला अन् हदानल्लाहु ल-क़द् जाअत् रुसुलु रब्बिना बिल्हक़्क़ि, व नूदू अन् तिल्कुमुल्-जन्नतु ऊरिस्तुमूहा बिमा कुन्तुम् तअ्मलून (43) ▲	दिया और हम न थे राह पाने वाले अगर न हिदायत करता हमको अल्लाह, बेशक लाये थे रसूल हमारे रब की सच्ची बात। और आवाज़ आएगी कि ये जन्नत है, वारिस हुए तुम इसके, बदले में अपने आमाल के। (43) ▲

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

(ये हालत तो काफ़िरों के दोज़ख़ में दाख़िल होने की हुई, अब जन्नत से मेहरूमी की कैफ़ियत सुनो कि) जो लोग हमारी आयतों को झूठा बतलाते हैं और उन (के मानने) से तकब्बुर करते हैं, उन (की रूह के चढ़ने) के लिए (मरने के बाद) आसमान के दरवाज़े न खोले जाएँगे। (यह तो हालत मरने के बाद बर्ज़ख़ में हुई) और (क़ियामत के दिन) वे लोग कभी जन्नत में न जाएँगे जब तक कि ऊँट सूई के नाके के अन्दर से (न) चला जाये (और यह असंभव है तो उनका जन्नत में दाख़िल होना भी असंभव है) और हम मुजरिम लोगों को ऐसी ही सज़ा देते हैं। (यानी हमको कोई दुश्मनी न थी, जैसा किया वैसा भुगता। और ऊपर जो दोज़ख़ में जाना मज़कूर हुआ है वह आग उनको हर तरफ़ से घेरे हुए होगी कि किसी तरफ़ से कुछ राहत न मिले, चुनाँचे यह हाल होगा कि) उनके लिए दोज़ख़ (की आग) का बिछौना होगा और उनके ऊपर (उसी का) ओढ़ना होगा, और हम ऐसे ज़ालिमों को ऐसी ही सज़ा देते हैं (जिनका ज़िक्र ऊपर आयत नम्बर 37 में आया है)।

और जो लोग (अल्लाह की आयतों पर) ईमान लाए और उन्होंने नेक काम किए (और ये नेक काम कुछ मुश्किल नहीं, क्योंकि हमारी आ़दत है कि) हम किसी शख़्स को उसकी ताक़त से ज़्यादा कोई काम नहीं बतलाते (यह जुमला बीच में बयान हो रहे मज़मून से अलग था। ग़र्ज़ कि) ऐसे लोग जन्नत (में जाने) वाले हैं, (और) वे उसमें हमेशा-हमेशा रहेंगे। (और उनकी हालत दोज़ख़ वालों के जैसी न होगी कि वे वहाँ भी एक दूसरे को लानत मलामत करते रहेंगे, बल्कि उनकी यह कैफ़ियत होगी कि) जो कुछ उनके दिलों में (किसी मामले की वजह से दुनिया में तबई तक़ाज़े के सबब) ग़ुबार (और रंज) था हम उसको (भी) दूर कर देंगे (कि आपस में उलफ़त व मुहब्बत से रहेंगे और) उनके (मकानात के) नीचे नहरें जारी होंगी और वे लोग (बहुत ही ख़ुशी व सुरूर से) कहेंगे कि अल्लाह का (लाख-लाख) एहसान है जिसने हमको इस मक़ाम तक पहुँचाया, और हमारी कभी (यहाँ तक) रसाई न होती अगर अल्लाह तआ़ला हमको न

पहुँचाते। (इसमें यह भी आ गया कि यहाँ तक पहुँचने का जो तरीक़ा था ईमान और नेक आमाल वो हमको बतलाया और उस पर चलने की तौफ़ीक़ दी) वाक़ई हमारे रब के पैग़म्बर सच्ची बातें लेकर आए थे। (चुनाँचे उन्होंने जिन आमाल पर जन्नत का वायदा किया था वह सच्चा साबित हुआ) और उनसे पुकारकर कहा जाएगा कि तुमको यह जन्नत दी गई है तुम्हारे (अच्छे और नेक) आमाल के बदले।

मआरिफ़ व मसाईल

पहले चन्द आयतों में एक अ़हद व इक़रार का ज़िक्र है जो हर इनसान से उसकी इस दुनिया में पैदाईश से पहले रूहों के आ़लम में लिया गया था, कि जब हमारे रसूल तुम्हारे पास हमारी हिदायतें और अहकाम लेकर आयें तो उनको दिल व जान से मानना और उनके मुताबिक़ अ़मल करना। और यह भी बतला दिया गया था कि जो शख़्स दुनिया में आने के बाद उस अ़हद पर क़ायम रहकर उसके तक़ाज़ों को पूरा करेगा वह हर रंज व ग़म से निजात पायेगा और हमेशा की राहत व आराम का मुस्तहिक़ होगा। और जो नबियों को झुठलायेगा या उनके अहकाम से मुँह फेरेगा उसके लिये जहन्नम का हमेशा का अ़ज़ाब मुक़र्रर है। उपर्युक्त आयतों में उस वाक़िए की सूरत का इज़हार है जो इस दुनिया में आने के बाद इनसानों के विभिन्न गिरोहों ने इख़्तियार की, कि कुछ ने अ़हद व इक़रार को भुला दिया, और उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी की और कुछ उस पर क़ायम रहे और उसके मुताबिक़ नेक आमाल अन्जाम दिये। इन दोनों फ़रीक़ों के अन्जाम और अ़ज़ाब व सवाब का बयान इन चार आयतों में है।

पहली और दूसरी आयत में अ़हद तोड़ने वाले इनकारियों व मुजरिमों का ज़िक्र है, और आख़िरी दो आयतों में अ़हद पूरा करने वाले मोमिनों व मुत्तक़ी लोगों का।

पहली आयत में इरशाद फ़रमाया कि जिन लोगों ने नबियों को झुठलाया और हमारी हिदायतों और आयतों के मुक़ाबले में तकब्बुर के साथ पेश आये उनके लिये आसमान के दरवाज़े न खोले जायेंगे।

तफ़सीर बहरे मुहीत में हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इसकी एक तफ़सीर यह नक़ल फ़रमाई है कि न उन लोगों के आमाल के लिये आसमान के दरवाज़े खोले जायेंगे न उनकी दुआ़ओं के लिये। मतलब यह है कि उनकी दुआ़ क़ुबूल न की जायेगी, और उनके आमाल उस मक़ाम पर जाने से रोक दिये जायेंगे जहाँ अल्लाह के नेक बन्दों के आमाल महफ़ूज़ रखे जाते हैं, जिसका नाम क़ुरआने करीम ने सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन में **इल्लिय्यीन** बतलाया है। और क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत में भी इस मज़मून की तरफ़ इशारा है, जिसमें इरशाद है:

إِلَيْهِ يَصْعَدُ الْكَلِمُ الطَّيِّبُ وَالْعَمَلُ الصَّالِحُ يَرْفَعُهُ

यानी इनसान के कलिमात-ए-तय्यिबात (अच्छी बातें) अल्लाह तआ़ला के पास ले जाये जाते हैं, और उसका नेक अ़मल उनको उठाता है। यानी इनसान के नेक आमाल इसका सबब बनते हैं

कि उसके कलिमात-ए-तय्यिबात हक़ तआ़ला की ख़ास बारगाह में पहुँचाये जाते हैं।

एक रिवायत हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु और दूसरे सहाबा-ए-किराम से इस आयत की तफ़सीर में यह भी है कि इनकारियों व काफ़िरों की रूहों के लिये आसमान के दरवाज़े न खोले जायेंगे, ये रूहें नीचे पटख़ दी जायेंगी, और इस मज़मून की ताईद हज़रत बरा बिन आ़ज़िब रज़ियल्लाहु अ़न्हु की उस हदीस से होती है जिसको अबू दाऊद, नसाई, इब्ने माजा और इमाम अहमद रह. ने मुफ़स्सल नक़ल किया है, जिसका मुख़्तसर बयान यह है कि:

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी अन्सारी सहाबी के जनाज़े में तशरीफ़ ले गये। अभी क़ब्र की तैयारी में कुछ देर थी तो एक जगह बैठ गये, और सहाबा-ए-किराम आपके गिर्द ख़ामोश बैठ गये। आपने सर मुबारक उठाकर फ़रमाया कि मोमिन बन्दे के लिये जब मौत का वक़्त आता है तो आसमान से सफ़ेद चमकते हुए चेहरों वाले फ़रिश्ते आते हैं, जिनके साथ जन्नत का कफ़न और ख़ुशबू होती है, और वे मरने वाले के सामने बैठ जाते हैं। फिर मौत का फ़रिश्ता इज़राईल अ़लैहिस्सलाम आते हैं और उसकी रूह को ख़िताब करते हैं कि ऐ इत्मीनान वाली रूह! अपने रब की मग़फ़िरत और रज़ा के लिये निकलो। उस वक़्त उसकी रूह इस तरह बदन से आसानी के साथ निकल जाती है जैसे किसी मशकीज़े का दहाना खोल दिया जाये तो उसका पानी निकल जाता है। उसकी रूह को मौत का फ़रिश्ता अपने हाथ में लेकर उन फ़रिश्तों के हवाले कर देता है, ये फ़रिश्ते उसको लेकर चलते हैं, जहाँ उनको कोई फ़रिश्तों का गिरोह मिलता है वे पूछते हैं यह पाक रूह किसकी है? ये हज़रात उसका वह नाम व लक़ब लेते हैं जो इज़्ज़त व एहतिराम के लिये उसके वास्ते दुनिया में इस्तेमाल किया जाता था, और कहते हैं कि यह फ़ुलाँ पुत्र फ़ुलाँ है। यहाँ तक कि यह फ़रिश्ते रूह को लेकर पहले आसमान पर पहुँचते हैं और दरवाज़ा खुलवाते हैं। दरवाज़ा खोला जाता है, यहाँ से और फ़रिश्ते भी उनके साथ हो जाते हैं, यहाँ तक कि सातवें आसमान पर पहुँचते हैं। उस वक़्त हक़ तआ़ला फ़रमाते हैं कि मेरे इस बन्दे का आमाल नामा इल्लिय्यीन में लिखो, और इसको वापस कर दो। यह रूह फिर लौटकर क़ब्र में आती है और क़ब्र में हिसाब लेने वाले फ़रिश्ते आकर इसको बैठाते और सवाल करते हैं, कि तेरा रब कौन है और तेरा दीन क्या है? वह कहता है कि मेरा रब अल्लाह तआ़ला है और मेरा दीन इस्लाम है। फिर सवाल होता है कि यह बुज़ुर्ग जो तुम्हारे लिये भेजे गये हैं कौन हैं? वह कहता है यह अल्लाह तआ़ला के रसूल हैं। उस वक़्त एक आसमानी आवाज़ आती है कि मेरा बन्दा सच्चा है, इसके लिये जन्नत का फ़र्श बिछा दो और जन्नत का लिबास पहना दो और जन्नत की तरफ़ इसका दरवाज़ा खोल दो। उस दरवाज़े से इसको जन्नत की ख़ुशबूएँ आने लगती हैं, और उसका नेक अ़मल एक हसीन सूरत में उसके पास उसको मानूस करने के लिये आ जाता है।

इसके मुक़ाबले में काफ़िर व इनकारी का जब मौत का वक़्त आता है तो आसमान से काले रंग के डरावनी सूरत वाले फ़रिश्ते ख़राब क़िस्म का टाट लेकर आते हैं, और उस शख़्स के सामने बैठ जाते हैं। फिर मौत का फ़रिश्ता उसकी रूह इस तरह निकालता है जैसे कोई काँटेदार

टहनी गीली ऊन में लिपटी हुई हो, उसमें से खींची जाये। यह रूह निकलती है तो इसकी बदबू मुर्दार जानवर की बदबू से भी ज़्यादा तेज़ होती है। फ़रिश्ते उसको लेकर चलते हैं, रास्ते में जो दूसरे फ़रिश्ते मिलते हैं तो पूछते हैं कि यह किसकी ख़बीस रूह है। ये हज़रात उस वक़्त उसका वह बुरे से बुरा नाम व लक़ब ज़िक्र करते हैं जिसके साथ वह दुनिया में पुकारा जाता था कि यह फ़ुलाँ पुत्र फ़ुलाँ है, यहाँ तक कि सबसे पहले आसमान पर पहुँचकर दरवाज़ा खोलने के लिये कहते हैं तो उसके लिये आसमान का दरवाज़ा नहीं खोला जाता, बल्कि हुक्म यह होता है कि इस बन्दे का आमाल नामा सिज्जीन में रखो, जहाँ नाफ़रमान बन्दों के आमाल नामे रखे जाते हैं, और उस रूह को फेंक दिया जाता है। वह बदन में दोबारा आती है, फ़रिश्ते उसको बैठाकर उससे भी वही सवालात करते हैं जो मोमिन बन्दे से किये थे, यह सब का जवाब यह देता है:

هَاهْ هَاهْ لَا اَدْرِیْ.

यानी मैं कुछ नहीं जानता। उसके लिये जहन्नम का फ़र्श, जहन्नम का लिबास दे दिया जाता है, और जहन्नम की तरफ़ दरवाज़ा खोल दिया जाता है, जिससे उसको जहन्नम की आँच और गर्मी पहुँचती रहती है, और उसकी क़ब्र उस पर तंग कर दी जाती है। अल्लाह तआ़ला हमें उससे अपनी पनाह में रखे।

ख़ुलासा यह है कि इस हदीस से मालूम हुआ कि इनकारियों व काफ़िरों की रूहें आसमान तक ले जाई जाती हैं, आसमान का दरवाज़ा उनके लिये नहीं खुलता तो वहीं से फेंक दी जाती है। ज़िक्र की गयी आयतः

لَا تُفَتَّحُ لَهُمْ اَبْوَابُ السَّمَآءِ.

का यह मफ़्हूम भी हो सकता है कि मौत के वक़्त उनकी रूहों के लिये आसमान के दरवाज़े नहीं खोले जाते।

आयत के आख़िर में उन लोगों के मुताल्लिक़ फ़रमायाः

وَلَا يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ حَتّٰى يَلِجَ الْجَمَلُ فِىْ سَمِّ الْخِيَاطِ.

इसमें लफ़्ज़ **यलि-ज** वलूज से बना है, जिसके मायने हैं तंग जगह में घुसना, और **जमल** ऊँट को कहा जाता है और **सम्म** सूई के सूराख़ को। मायने यह हैं कि ये लोग उस वक़्त तक जन्नत में दाख़िल नहीं हो सकते जब तक ऊँट जैसा बड़े जिस्म वाला जानवर सूई के नाके में दाख़िल न हो जाये। मतलब यह है कि जिस तरह सूई के सूराख़ में ऊँट का दाख़िल होना आ़दतन असंभव है इसी तरह इनका जन्नत में जाना असंभव है। इससे उन लोगों का जहन्नम के हमेशा के अ़ज़ाब का बयान करना मक़सूद है। इसके बाद उन लोगों के जहन्नम के अ़ज़ाब की और अधिक शिद्दत का बयान इन अलफ़ाज़ से किया गया है:

لَهُمْ مِّنْ جَهَنَّمَ مِهَادٌ وَّمِنْ فَوْقِهِمْ غَوَاشٍ.

'मिहाद' के मायने फ़र्श और 'ग़वाश' ग़ाशिया की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं ढाँप

लेने वाली चीज़ के। मतलब यह है कि इन लोगों का ओढ़ना बिछौना सब जहन्नम का होगा। और पहली आयत जिसमें जन्नत से मेहरूमी का ज़िक्र था उसके ख़त्म पर 'व कज़ालि-क नज्ज़िल् मुज्रिमीन' फ़रमाया और दूसरी आयत जिसमें जहन्नम के अ़ज़ाब का ज़िक्र है, उसके ख़त्म पर 'व कज़ालि-क नज्ज़िज़्ज़ालिमीन' इरशाद फ़रमाया। क्योंकि यह उससे ज़्यादा सख़्त है।

तीसरी आयत में अल्लाह के अहकाम की पैरवी और पाबन्दी करने वालों का ज़िक्र है, कि ये लोग जन्नत वाले हैं और जन्नत ही में हमेशा रहेंगे।

शरीअ़त के अहकाम में आसानी की रियायत

लेकिन उनके लिये जहाँ यह शर्त ज़िक्र की गयी है कि वे ईमान लायें और नेक आमाल करें, इसके साथ ही रहमत व करम से यह भी फ़रमा दियाः

لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا.

जिसके मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला किसी बन्दे पर कोई ऐसा बोझल काम नहीं डालते जो उसकी ताक़त से बाहर हो। मक़सद यह है कि नेक आमाल जिनको जन्नत में दाख़िल होने के लिये शर्त कहा गया है वो कोई बहुत मुश्किल काम नहीं जो इनसान न कर सके, बल्कि अल्लाह तआ़ला ने शरीअ़त के अहकाम को हर शोबे में नर्म और आसान कर दिया है। बीमारी, कमज़ोरी, सफ़र और दूसरी इनसानी ज़रूरतों का हर हुक्म में लिहाज़ रखकर आसानियाँ दी गयी हैं।

और तफ़सीर बहरे मुहीत में है कि जब इनसान को नेक आमाल का हुक्म दिया गया तो यह गुमान व शुब्हा था कि उसको यह हुक्म इसलिये भारी मालूम हो कि तमाम नेक आमाल हर जगह हर हाल में पूरा करना तो इनसान के बस में नहीं, इसलिये उसके शुब्हे को इन अलफ़ाज़ से दूर कर दिया गया कि हम इनसानी ज़िन्दगी के तमाम विभिन्न दौरों और हालात का जायज़ा लेकर हर हाल में और हर वक़्त और हर जगह के लिये मुनासिब अहकाम देते हैं जिन पर अ़मल करना कोई दुश्वार काम नहीं है।

जन्नत वालों के दिलों से आपसी मन-मुटाव निकाल दिये जायेंगे

चौथी आयत में जन्नत वालों के दो ख़ास हाल बयान किये गये- एक यह किः

وَنَزَعْنَا مَافِىْ صُدُوْرِهِمْ مِّنْ غِلٍّ تَجْرِىْ مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهٰرُ.

"यानी जन्नती लोगों के दिलों में अगर एक दूसरे की तरफ़ से कोई रंजिश या मैल होगा तो हम उसको उनके दिलों से निकाल देंगे। ये लोग एक दूसरे से बिल्कुल ख़ुश भाई-भाई होकर जन्नत में जायेंगे, और बसेंगे।"

सही बुख़ारी में है कि मोमिन लोग जब पुलसिरात से गुज़र कर जहन्नम से निजात हासिल कर लेंगे तो उनको जन्नत व दोज़ख़ के बीच एक पुल के ऊपर रोक लिया जायेगा, और उनमें आपस में अगर किसी से किसी को कोई रंजिश थी, या किसी पर किसी का हक़ था तो यहाँ

पहुँच कर एक दूसरे से बदला और मुआवज़ा लेकर मामलात साफ़ कर लेंगे, और इस तरह हसद, बुग़ज़, कीना वग़ैरह से पाक साफ़ होकर जन्नत में दाख़िल होंगे।

तफ़सीरे मज़हरी में है कि यह पुल बज़ाहिर पुलसिरात का आख़िरी हिस्सा होगा, जो जन्नत से मिला हुआ और क़रीब है। अल्लामा सुयूती रह. वग़ैरह ने भी इसी को इख़्तियार किया है।

और उस मक़ाम पर जो हुक़ूक़ के मुतालबे होंगे उनकी अदायेगी ज़ाहिर है कि रुपये-पैसे से न हो सकेगी, क्योंकि वह वहाँ किसी के पास न होगा, बल्कि बुख़ारी व मुस्लिम की एक हदीस के मुताबिक़ यह अदायेगी आमाल से होगी। हुक़ूक़ के बदले में उसके अमल हक़ वाले को दे दिये जायेंगे, और अगर उसके आमाल इस तरह सब ख़त्म हो गये और लोगों के हुक़ूक़ अभी बाक़ी रहे तो फिर हक़ वाले के गुनाह उस पर डाल दिये जायेंगे।

एक हदीस में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऐसे शख़्स को सबसे बड़ा मुफ़लिस (ग़रीब व कंगाल) क़रार दिया है जिसने दुनिया में नेक आमाल किये लेकिन लोगों के हुक़ूक़ की परवाह नहीं की, इसके नतीजे में तमाम आमाल से ख़ाली और मुफ़लिस होकर रह गया।

हदीस की इस रिवायत में हुक़ूक़ के अदा करने और इन्तिक़ाम (बदले) का आम नियम बयान किया गया है, लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि सब को यही सूरत पेश आये, बल्कि तफ़सीर इब्ने कसीर और तफ़सीरे मज़हरी की रिवायत के मुताबिक़ वहाँ यह सूरत भी मुम्किन होगी कि बिना बदला और मुआवज़ा लिये आपस के दिलों के मैल और मन-मुटाव दूर हो जायें।

जैसा कि कुछ रिवायतों में है कि ये लोग जब पुलसिरात से गुज़र लेंगे तो पानी के एक चश्मे पर पहुँचेंगे और उसका पानी पियेंगे। उस पानी की विशेषता यह होगी कि सब के दिलों से आपसी कीना और मैल धुल जायेगा। इमाम क़ुर्तुबी रह. ने आयते करीमाः

وَسَقٰهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُوْرًا.

की तफ़सीर भी यही नक़ल की है कि जन्नत के उस पानी से सब के दिलों की रंजिशें और मैल धुल जायेंगे।

हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक मर्तबा यह आयत पढ़कर फ़रमाया कि मुझे उम्मीद है कि हम और उस्मान और तल्हा और ज़ुबैर उन्हीं लोगों में से होंगे जिनके सीने जन्नत में दाख़िल होने से पहले कदूरतों (दिलों के मैल) से साफ़ कर दिये जायेंगे। (इब्ने कसीर) ये वो हज़रात हैं जिनके आपस में दुनिया में विवाद पेश आये और नौबत जंग तक पहुँच गयी थी।

दूसरा हाल जन्नत वालों का इस आयत में यह बयान किया गया कि जन्नत में पहुँचकर ये लोग इस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करेंगे कि उसने इनके लिये जन्नत की तरफ़ हिदायत की और उसका रास्ता आसान कर दिया, और कहेंगे कि अगर अल्लाह तआला का फ़ज़्ल न होता तो हमारी मजाल न थी कि हम यहाँ पहुँच सकते।

इससे मालूम हुआ कि कोई इनसान महज़ अपनी कोशिश से जन्नत में नहीं जा सकता, जब तक अल्लाह तआला का फ़ज़्ल उस पर न हो, क्योंकि कोशिश ख़ुद उसके क़ब्ज़े में नहीं, वह भी महज़ अल्लाह तआला की रहमत व फ़ज़्ल ही से हासिल होती है।

हिदायत के विभिन्न दर्जे हैं जिसका आख़िरी दर्जा जन्नत में दाख़िल होना है

इमाम राग़िब अस्फ़हानी ने लफ़्ज़ हिदायत की तशरीह में बड़ी मुफ़ीद और अहम बात फ़रमाई है, कि हिदायत का लफ़्ज़ बहुत आम है, इसके दर्जे विभिन्न और अलग-अलग हैं, और हक़ीक़त यह है कि हिदायत अल्लाह तआ़ला की तरफ़ जाने का रास्ता मिलने का नाम है, इसलिये अल्लाह की निकटता के दर्जे भी जितने अलग-अलग और बेहिसाब हैं, इसी तरह हिदायत के दर्जे भी बेहद अलग-अलग हैं। हिदायत का मामूली दर्जा कुफ़्र व शिर्क से निजात पाना और ईमान लाना है, जिससे इनसान का रुख़ ग़लत रास्ते से फिरकर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ हो जाता है। फिर बन्दे और अल्लाह तआ़ला के दरमियान जिस क़द्र फ़ासला है उसको तय करने के हर दर्जे का नाम हिदायत है। इसलिये हिदायत की तलब से किसी वक़्त कोई इनसान यहाँ तक कि नबी और रसूल भी बेज़रूरत नहीं हैं। इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आख़िर उम्र तक 'इहदिनस्सिरातल् मुस्तक़ीम' की तालीम जिस तरह उम्मत को दी ख़ुद भी इस दुआ़ की पाबन्दी जारी रखी, क्योंकि अल्लाह की निकटता के दर्जों की कोई इन्तिहा नहीं, यहाँ तक कि जन्नत के दाख़िले को भी इस आयत में लफ़्ज़ हिदायत से ताबीर किया गया कि यह हिदायत का आख़िरी मक़ाम है।

وَنَادَىٰ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ أَصْحَابَ النَّارِ أَن قَدْ وَجَدْنَا مَا وَعَدَنَا رَبُّنَا حَقًّا فَهَلْ وَجَدتُّم مَّا وَعَدَ رَبُّكُمْ حَقًّا ۖ قَالُوا نَعَمْ ۚ فَأَذَّنَ مُؤَذِّنٌ بَيْنَهُمْ أَن لَّعْنَةُ اللَّهِ عَلَى الظَّالِمِينَ ﴿٤٤﴾ الَّذِينَ يَصُدُّونَ عَن سَبِيلِ اللَّهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا وَهُم بِالْآخِرَةِ كَافِرُونَ ﴿٤٥﴾ وَبَيْنَهُمَا حِجَابٌ ۚ وَعَلَى الْأَعْرَافِ رِجَالٌ يَعْرِفُونَ كُلًّا بِسِيمَاهُمْ ۚ وَنَادَوْا أَصْحَابَ الْجَنَّةِ أَن سَلَامٌ عَلَيْكُمْ ۚ لَمْ يَدْخُلُوهَا وَهُمْ يَطْمَعُونَ ﴿٤٦﴾ وَإِذَا صُرِفَتْ أَبْصَارُهُمْ تِلْقَاءَ أَصْحَابِ النَّارِ قَالُوا رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٤٧﴾ وَنَادَىٰ أَصْحَابُ الْأَعْرَافِ رِجَالًا يَعْرِفُونَهُم بِسِيمَاهُمْ قَالُوا مَا أَغْنَىٰ عَنكُمْ جَمْعُكُمْ وَمَا كُنتُمْ تَسْتَكْبِرُونَ ﴿٤٨﴾ أَهَٰؤُلَاءِ الَّذِينَ أَقْسَمْتُمْ لَا يَنَالُهُمُ اللَّهُ بِرَحْمَةٍ ۚ ادْخُلُوا الْجَنَّةَ لَا خَوْفٌ عَلَيْكُمْ وَلَا أَنتُمْ تَحْزَنُونَ ﴿٤٩﴾

व नादा अस्हाबुल्-जन्नति अस्हाबन्नारि अन् क़द् वजद्ना मा व-अ़-दना रब्बुना हक़्क़न् फ़-हल्	और पुकारेंगे जन्नत वाले दोज़ख़ वालों को कि हमने पाया जो हम से वायदा किया था हमारे रब ने सच्चा, सो तुमने

नजत्तुम् मा व-अ-द रब्बुकुम् हक़्क़न्, क़ालू न-अ़म् फ़-अज़्ज़-न मुअज़्ज़िनुम् बैनहुम् अल्लअ़्-नतुल्लाहि अ़लज़्ज़ालिमीन (44) अल्लज़ी-न यसुद्दू-न अ़न् सबीलिल्लाहि व यब्ग़ूनहा अ़ि-वजन् व हुम् बिल्आख़ि-रति काफ़िरून। (45) व बैनहुमा हिजाबुन् व अ़लल्-अअ़्राफ़ि रिजालुंय्यअ़्रिफ़ू-न कुल्लम्-बिसीमाहुम् व नादौ अस्हाबल्-जन्नति अन् सलामुन् अ़लैकुम्, लम् यद्ख़ुलूहा व हुम् यत्मअ़ू-न (46) व इज़ा सुरिफ़त् अब्सारुहुम् तिल्क़ा-अ अस्हाबिन्नारि क़ालू रब्बना ला तज्अ़ल्ना मअ़ल्-क़ौमिज़्ज़ालिमीन (47) ❁

व नादा अस्हाबुल्-अअ़्राफ़ि रिजालंय्-यअ़्रिफ़ूनहुम् बिसीमाहुम् क़ालू मा अग़्ना अ़न्कुम् जम्अ़ुकुम् व मा कुन्तुम् तस्तक्बिरून (48) अ-हाउला-इल्लज़ी-न अक़्सम्तुम् ला यनालुहुमुल्लाहु बिरह्मतिन्, उद्ख़ुलुल्-जन्न-त ला ख़ौफ़ुन् अ़लैकुम् व ला अन्तुम् तह्ज़नून (49)

भी पाया अपने रब के वायदे को सच्चा? वे कहेंगे कि हाँ! फिर पुकारेगा एक पुकारने वाला उनके बीच में कि लानत है अल्लाह की उन ज़ालिमों पर (44) जो रोकते थे अल्लाह की राह से और ढूँढते थे उसमें कजी (कमी और टेढ़), और वे आख़िरत से इनकारी थे। (45) और दोनों के बीच में होंगी एक दीवार और आराफ़ के ऊपर मर्द होंगे कि पहचान लेंगे हर एक को उसकी निशानी से और वे पुकारेंगे जन्नत वालों को कि सलामती है तुम पर, वे अभी जन्नत में दाख़िल नहीं हुए और वे उम्मीदवार हैं। (46) और जब फिरेगी उनकी निगाह दोज़ख़ वालों की तरफ़ तो कहेंगे ऐ हमारे रब! मत कर हम को गुनाहगार लोगों के साथ। (47) ❁

और पुकारेंगे आराफ़ वाले उन लोगों को कि उनको पहचानते हैं उनकी निशानी से, कहेंगे न काम आई तुम्हारे जमाअ़त तुम्हारी और जो तुम तकब्बुर करते थे। (48) अब ये वही हैं कि तुम क़सम खाया करते थे कि न पहुँचेगी उनको अल्लाह की रहमत, चले जाओ जन्नत में न डर है तुम पर और न तुम ग़मगीन होगे। (49)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जब जन्नत वाले जन्नत में जा पहुँचेगे उस वक़्त वे) जन्नत वाले दोज़ख़ वालों को

(अपनी हालत पर ख़ुशी ज़ाहिर करने को और उनकी हसरत बढ़ाने को) पुकारेंगे कि हमसे जो हमारे रब ने वायदा फ़रमाया था (कि ईमान और नेक आमाल इख़्तियार करने से जन्नत देंगे) हमने तो उसको हक़ीक़त के मुताबिक़ पाया, सो (तुम बतलाओ कि) तुमसे जो तुम्हारे रब ने वायदा किया था (कि कुफ़्र के सबब दोज़ख़ में पड़ोगे) तुमने भी उसको हक़ीक़त के मुताबिक़ पाया (यानी अब तो हक़ीक़त अल्लाह और रसूल की सच्चाई और अपनी गुमराही की मालूम हुई)? वे (दोज़ख़ वाले जवाब में) कहेंगे हाँ! (वाक़ई सब बातें अल्लाह और रसूल की ठीक निकलीं) फिर (उन दोज़ख़ियों की हसरत और जन्नतियों की ख़ुशी बढ़ाने को) एक पुकारने वाला (यानी कोई फ़रिश्ता) उन दोनों (फ़रीक़ों) के बीच में (खड़ा होकर) पुकारेगा कि अल्लाह की मार हो उन ज़ालिमों पर जो अल्लाह की राह (यानी दीने हक़) से मुँह फेरा करते थे, और उस (दीने हक़) में (हमेशा अपने गुमान के मुताबिक़) कजी ("यानी टेढ़ और कमी" की बातें) तलाश करते रहते थे (कि उसमें ऐब और एतिराज़ पैदा करें), और वे लोग (इसके साथ) आख़िरत का इनकार करने वाले भी थे (जिसका नतीजा आज भुगत रहे हैं। यह कलाम तो जन्नत वालों का और उनकी ताईद में इस सरकारी मुनादी का ज़िक्र हुआ। आगे आराफ़ वालों का ज़िक्र है)।

और इन दोनों (फ़रीक़ यानी जन्नत वालों और दोज़ख़ वालों) के बीच एक आड़ (यानी दीवार) होगी, (जिसका ज़िक्र सूरः हदीद में है 'फ़ज़ुरि-ब बैनहुम बिसूरिल् लहू बाबुन........'। उसकी विशेषता यह होगी कि जन्नत का असर दोज़ख़ तक और दोज़ख़ का असर जन्नत तक न जाने देगी, रहा यह कि फिर गुफ़्तगू क्योंकर होगी, सो मुम्किन है कि उस दीवार में जो दरवाज़ा होगा जैसा कि सूरः हदीद में इसका ज़िक्र है, उस दरवाज़े में से गुफ़्तगू और बातचीत हो जाये, या वैसे ही आवाज़ पहुँच जाये)। और (उस दीवार का या उसके ऊपर वाले हिस्से का नाम आराफ़ है, और उस पर से जन्नती और दोज़ख़ी सब नज़र आयेंगे, सो) आराफ़ के ऊपर बहुत-से आदमी होंगे (जिनकी नेकियाँ और बुराईयाँ तराज़ू में बराबर वज़न की हुई होंगी) वे लोग (जन्नत वालों और दोज़ख़ वालों में से) हर एक को (जन्नत और दोज़ख़ के अन्दर होने की अ़लावा निशानी के) उनके निशानों से (भी) पहचानेंगे (निशानी यह कि जन्नत वालों के चेहरों पर नूरानियत और दोज़ख़ वालों के चेहरों पर सियाही, अंधकार और मैलापन होगा, जैसा कि एक दूसरी आयत में है 'वुजूहुंय्यौमइज़िन् मुस्फ़ि-रतुन ज़ाहि-कतुन..........' और जन्नत वालों को पुकारकर कहेंगे- अस्सलामु अ़लैकुम। अभी ये (आराफ़ वाले) उसमें (यानी जन्नत में) दाख़िल नहीं हुए होंगे और उसके उम्मीदवार होंगे (चुनाँचे हदीसों में आया है कि उनकी उम्मीद पूरी कर दी जायेगी और जन्नत में जाने का हुक्म हो जायेगा)। और जब उनकी निगाहें दोज़ख़ वालों की तरफ़ जा पड़ेंगी (उस वक़्त दहशत में आकर) तो कहेंगे ऐ हमारे रब! हमको इन ज़ालिम लोगों के साथ (अ़ज़ाब में) शामिल न कीजिए। और (जैसे इन आराफ़ वालों ने ऊपर जन्नत वालों से सलाम व कलाम किया इसी तरह) आराफ़ "जन्नत और दोज़ख़ के बीच एक जगह" वाले (दोज़ख़ियों में) बहुत-से आदमियों को (जो कि काफ़िर होंगे और) जिनको कि उनके निशानों (चेहरे की सियाही और मैला होने) और अन्दाज़ों से पहचानेंगे (कि ये काफ़िर हैं) पुकारेंगे (और)

कहेंगे कि तुम्हारी जमाअ़त और तुम्हारा अपने को बड़ा समझना (और नबियों की बात न मानना) तुम्हारे कुछ काम न आया (और तुम इसी तकब्बुर की वजह से मुसलमानों को ज़लील समझकर यह भी कहा करते थे कि ये बेचारे अल्लाह के फ़ज़्ल व करम के हक़दार क्या बनेंगे, जैसा किः

اَهٰٓؤُلَآءِ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنْ ۢ بَيْنِنَا.

से भी यह मज़मून समझ में आता है, तो इन मुसलमानों को अब तो देखो) क्या ये (जो जन्नत में ऐश कर रहे हैं) वही (मुसलमान) हैं जिनके बारे में तुम क़समें खा-खाकर कहा करते थे कि अल्लाह तआ़ला इन पर रहमत न करेगा (तो इन पर तो इतनी बड़ी रहमत हुई कि) इनको यह हुक्म हो गया कि) जाओ जन्नत में (जहाँ चाहो), तुम पर न कुछ अन्देशा है और न तुम ग़मगीन होंगे (और इस कलाम में जो **रिजालन** यानी कुछ आदमियों को ख़ास करके बयान किया ग़ालिबन इसकी वजह यह मालूम होती है कि अभी तक गुनाहगार मोमिन भी दोज़ख़ में पड़े होंगे। निशानी इसकी यह है कि जब आराफ़ वाले जन्नत की उम्मीद में हैं मगर जन्नत में दाख़िल नहीं हुए होंगे, तो गुनाहगार लोग जिनकी बुराईयाँ और गुनाह आराफ़ वालों की बुराईयों और गुनाह से ज़्यादा हैं, ज़ाहिरन अभी दोज़ख़ से न निकले होंगे, मगर ऐसे लोग इस कलाम के मुख़ातब न होंगे। वल्लाहु आलम)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

जब जन्नत वाले जन्नत में और दोज़ख़ वाले दोज़ख़ में अपने-अपने ठिकानों पर पहुँच जायेंगे, और ज़ाहिर है कि इन दोनों जगहों में हर हैसियत से बहुत बड़ी रुकावट होगी, लेकिन इसके बावजूद क़ुरआन की बहुत सी आयतें इस पर गवाह हैं कि इन दोनों मक़ामात के बीच कुछ ऐसे रास्ते होंगे जिनसे एक दूसरे को देख सकेगा, और उनकी आपस में बातचीत और सवाल व जवाब होंगे।

सूरः सॉफ़्फ़ात में दो शख़्सों का ज़िक्र मुफ़स्सल आया है जो दुनिया में एक दूसरे के साथी थे लेकिन एक मोमिन दूसरा काफ़िर था, आख़िरत में जब मोमिन जन्नत में और काफ़िर जहन्नम में चला जायेगा तो ये एक दूसरे को देखेंगे और बातें करेंगे। इरशाद हैः

فَاطَّلَعَ فَرَاٰهُ فِيْ سَوَآءِ الْجَحِيْمِ. قَالَ تَاللّٰهِ اِنْ كِدْتَّ لَتُرْدِيْنِ. وَلَوْ لَا نِعْمَةُ رَبِّيْ لَكُنْتُ مِنَ الْمُحْضَرِيْنَ. اَفَمَا نَحْنُ بِمَيِّتِيْنَ. اِلَّا مَوْتَتَنَا الْاُوْلٰى وَمَا نَحْنُ بِمُعَذَّبِيْنَ.

जिसके मज़मून का ख़ुलासा यह है कि जन्नती साथी झाँककर दोज़ख़ी साथी को देखेगा तो उसको जहन्नम के बीच में पड़ा हुआ पायेगा, और कहेगा कि कमबख़्त तू यह चाहता था कि मैं भी तेरी तरह बरबाद हो जाऊँ, और अगर अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल न होता तो आज मैं भी तेरे साथ जहन्नम में पड़ा होता। और तू जो मुझसे यह कहा करता था कि इस दुनिया की मौत के

बाद कोई ज़िन्दगी और कोई हिसाब-किताब या सवाब-अ़ज़ाब होने वाला नहीं, अब देख लिया कि यह क्या हो रहा है।

उक्त आयतों और इनके बाद भी तक़रीबन एक रुकूअ़ तक इसी क़िस्म के मुकालमे (गुफ़्तगूएँ) और सवाल व जवाब का तज़किरा है, जो जन्नत वालों और जहन्नम वालों के आपस में होंगे।

और यह जन्नत दोज़ख़ के बीच एक दूसरे को देखने और बातें करने के रास्ते भी दर हक़ीक़त जहन्नम वालों के लिये एक और तरह का अ़ज़ाब होगा कि चारों तरफ़ से उन पर मलामत होती होगी, और वे जन्नत वालों की नेमतों और राहतों को देखकर जहन्नम की आग के साथ हसरत व अफ़सोस की आग में भी जलेंगे। और जन्नत वालों के लिये नेमत व राहत में एक नई तरह का इज़ाफ़ा होगा कि दूसरे फ़रीक़ की मुसीबत देखकर अपनी राहत व नेमत की क़द्र ज़्यादा होगी, और जो लोग दुनिया में दीनदारों पर हंसा करते थे और उनका मज़ाक़ उड़ाया करते थे, और ये कोई इन्तिक़ाम न लेते थे, आज उन लोगों को ज़िल्लत व रुस्वाई के साथ अ़ज़ाब में मुब्तला देखेंगे तो ये हंसेंगे कि उनके अ़मल की उनको सज़ा मिल गयी। क़ुरआने करीम में यही मज़मून सूरः मुतफ़्फ़िफ़ीन में इस तरह इरशाद हुआ है:

فَالْيَوْمَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنَ الْكُفَّارِ يَضْحَكُوْنَ. عَلَى الْاَرَآئِكِ يَنْظُرُوْنَ. هَلْ ثُوِّبَ الْكُفَّارُ مَا كَانُوْا يَفْعَلُوْنَ.

जहन्नम वालों को उनकी गुमराही पर तंबीह और उनके अहमक़ाना कलिमात पर मलामत फ़रिश्तों की तरफ़ से भी होगी, वे उनको मुख़ातब करके कहेंगे:

هٰذِهِ النَّارُ الَّتِىْ كُنْتُمْ بِهَا تُكَذِّبُوْنَ. اَفَسِحْرٌ هٰذَآ اَمْ اَنْتُمْ لَا تُبْصِرُوْنَ.

"यानी यह है वह आग जिसको तुम झुठलाया करते थे। अब देखो कि क्या यह जादू है या तुम्हें नज़र नहीं आता?"

इसी तरह उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में है कि जन्नत वाले जहन्नम वालों से सवाल करेंगे कि हमारे रब ने हमसे जिन नेमतों और राहतों का वायदा किया था हमने तो उनको बिल्कुल सच्चा और पूरा पाया, तुम बतलाओ कि तुम्हें जिस अ़ज़ाब से डराया गया था वह भी तुम्हारे सामने आ गया या नहीं? वे इक़रार करेंगे कि बेशक हमने भी उसको देख (यानी पा) लिया।

उनके इस सवाल व जवाब की ताईद में अल्लाह जल्ल शानुहू की तरफ़ से कोई फ़रिश्ता यह ऐलान करेगा कि अल्लाह तआ़ला की लानत और फटकार है ज़ालिमों पर, जो लोगों को अल्लाह के रास्ते से रोकते थे, और यह चाहते थे कि उनका रास्ता भी सीधा न रहे, और वे आख़िरत का इनकार किया करते थे।

आराफ़ वाले कौन लोग हैं?

जन्नत दोज़ख़ वालों की आपसी गुफ़्तगू और बातचीत के तहत एक और बात तीसरी

आयत में यह बतलाई गयी कि कुछ लोग ऐसे भी होंगे जो जहन्नम से तो निजात पा गये मगर अभी जन्नत में दाख़िल नहीं हुए, अलबत्ता उसके उम्मीदवार हैं कि वे भी जन्नत में दाख़िल हो जायें, उन लोगों को आराफ़ वाले कहा जाता है।

आराफ़ क्या चीज़ है, इसकी तशरीह सूरः हदीद की आयतों से होती है। जिनसे मालूम होता है कि मेहशर में लोगों के तीन गिरोह होंगे- एक खुले काफ़िर व मुश्रिक, उनको तो पुलसिरात पर चलने की नौबत ही न आयेगी, पहले ही जहन्नम के दरवाज़ों से उसमें धकेल दिये जायेंगे। दूसरे मोमिन हज़रात, उनके साथ ईमान के नूर की रोशनी होगी। तीसरे मुनाफ़िक़ लोग, ये चूँकि दुनिया में मुसलमानों के साथ लगे रहे वहाँ भी शुरू में साथ लगे रहेंगे, और पुलसिरात पर चलना शुरू होंगे। उस वक़्त एक सख़्त अंधेरी सब को ढाँप लेगी, मोमिन अपने ईमानी नूर की मदद से आगे बढ़ जायेंगे और मुनाफ़िक़ लोग पुकार कर उनको कहेंगे कि ज़रा ठहरो हम भी तुम्हारी रोशनी से फ़ायदा उठायें। इस पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से कोई कहने वाला कहेगा कि पीछे लौटो वहाँ रोशनी तलाश करो। मतलब यह होगा कि यह रोशनी ईमान और नेक अ़मल की है, जिसे हासिल करने का मक़ाम पीछे गुज़र गया। जिन लोगों ने वहाँ ईमान व अ़मल के ज़रिये यह रोशनी हासिल नहीं की उनको आज रोशनी का फ़ायदा नहीं मिलेगा। इसी हालत में मुनाफ़िक़ों और मोमिनों के बीच एक दीवार का घेरा रुकावट और आड़ कर दिया जायेगा, जिसमें एक दरवाज़ा होगा, उस दरवाज़े के बाहर तो सारा अ़ज़ाब ही अ़ज़ाब नज़र आयेगा, और दरवाज़े के अन्दर जहाँ मोमिन हज़रात होंगे वहाँ अल्लाह तआ़ला की रहमतों का नज़ारा और जन्नत की फ़िज़ा सामने होगी। यही मज़मून इस आयत का हैः

يَوْمَ يَقُوْلُ الْمُنٰفِقُوْنَ وَالْمُنٰفِقٰتُ لِلَّذِيْنَ اٰمَنُوا انْظُرُوْنَا نَقْتَبِسْ مِنْ نُّوْرِكُمْ. قِيْلَ ارْجِعُوْا وَرَآءَكُمْ فَالْتَمِسُوْا نُوْرًا. فَضُرِبَ بَيْنَهُمْ بِسُوْرٍ لَّهٗ بَابٌ، بَاطِنُهٗ فِيْهِ الرَّحْمَةُ وَظَاهِرُهٗ مِنْ قِبَلِهِ الْعَذَابُ.

इस आयत में वह हिसार (घेरा) जो जन्नत वालों और दोज़ख़ वालों के बीच आड़ और रोक बना दिया जायेगा उसको लफ़्ज़ **सूर** से ताबीर किया गया है, और यह लफ़्ज़ दर असल शहर पनाह के लिये बोला जाता है, जो बड़े शहरों के गिर्द दुश्मन से हिफ़ाज़त के लिये बड़ी मज़बूत चौड़ी दीवार से बनाई जाती है। ऐसी दीवारों में फ़ौज के हिफ़ाज़ती दस्तों की चौकियाँ भी बनी होती हैं जो हमलावरों से बाख़बर रहते हैं।

सूरः आराफ़ की उक्त आयत में हैः

وَبَيْنَهُمَا حِجَابٌ وَعَلَى الْاَعْرَافِ رِجَالٌ يَّعْرِفُوْنَ كُلًّا ۢ بِسِيْمٰهُمْ.

इब्ने जरीर और दूसरे तफ़सीर के इमामों की तहरीर के मुताबिक़ इस आयत में लफ़्ज़ **हिजाब** से वही हिसार (घेराबन्दी) मुराद है जिसको सूरः हदीद की आयत में लफ़्ज़ **सूर** से ताबीर किया गया है। उस हिसार के ऊपर वाले हिस्से का नाम **आराफ़** है, क्योंकि आराफ़ उर्फ़ की जमा (बहुवचन) है, और उर्फ़ हर चीज़ के ऊपर वाले हिस्से को कहा जाता है, क्योंकि वह दूर से

परिचित व नुमायाँ होता है। इस वज़ाहत से मालूम हुआ कि जन्नत व दोज़ख़ के बीच रोक होने वाले हिजाब के ऊपर वाले हिस्से का नाम आराफ़ है, और आराफ़ वाली आयत में यह बतलाया गया है कि मेहशर में इस मक़ाम पर कुछ लोग होंगे जो जन्नत व दोज़ख़ दोनों तरफ़ के हालात को देख रहे होंगे, और दोनों तरफ़ रहने वालों से बातचीत और सवाल व जवाब करेंगे।

अब यह बात कि ये कौन लोग होंगे और उस बीच के मक़ाम में इनको क्यों रोका जायेगा इसमें तफ़सीर के अक़वाल विभिन्न और हदीस की रिवायतें अनेक हैं, लेकिन मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत के नज़दीक सही और राजेह यह है कि ये वे लोग होंगे जिनकी नेकियों और बुराईयों के दोनों पल्ले अ़मल की तराज़ू में बराबर हो जायेंगे। अपनी नेकियों के सबब जहन्नम से तो निजात पा लेंगे लेकिन बुराईयों और गुनाहों के सबब अभी जन्नत में इनका दाख़िला न हुआ होगा, और आख़िरकार रहमते ख़ुदावन्दी से ये लोग भी जन्नत में दाख़िल हो जायेंगे।

सहाबा-ए-किराम में से हज़रत हुज़ैफ़ा, हज़रत इब्ने मसऊद और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का और दूसरे सहाबा व ताबिईन का यही क़ौल है, और इसमें हदीस की तमाम रिवायतें भी जमा हो जाती हैं, जो विभिन्न उनवानों से नक़ल की गयी हैं। इमाम इब्ने जरीर रह. ने हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से आराफ़ वालों के बारे में पूछा गया तो आपने फ़रमाया कि ये वे लोग हैं जिनकी नेकियाँ और बुराईयाँ बराबर होंगी, इसलिये जहन्नम से तो निजात हो गयी मगर जन्नत में अभी दाख़िल नहीं हुए, उनको इस आराफ़ के स्थान पर रोक लिया गया, यहाँ तक कि तमाम जन्नत वालों और दोज़ख़ वालों का हिसाब और फ़ैसला हो जाने के बाद उनका फ़ैसला किया जायेगा, और आख़िरकार उनकी मग़फ़िरत हो जायेगी और जन्नत में दाख़िल कर दिये जायेंगे। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

और इब्ने मर्दूया ने हज़रत जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया गया कि आराफ़ वाले कौन लोग हैं? आपने फ़रमाया ये वे लोग हैं जो अपने माँ-बाप की मर्ज़ी और इजाज़त के ख़िलाफ़ जिहाद में शरीक हो गये, और अल्लाह की राह में शहीद हो गये, तो इनको जन्नत के दाख़िले से माँ-बाप की नाफ़रमानी ने रोक दिया और जहन्नम के दाख़िले से अल्लाह के रास्ते में शहादत ने रोक दिया।

इस हदीस और पहली हदीस में कोई टकराव नहीं, बल्कि यह हदीस एक मिसाल है उन लोगों की जिनकी नेकियाँ और गुनाह बराबर दर्जे के हैं, कि एक तरफ़ अल्लाह के रास्ते में शहादत और दूसरी तरफ़ माँ-बाप की नाफ़रमानी, दोनों पल्ले बराबर हो गये। (इब्ने कसीर)

सलाम का मस्नून लफ़्ज़

आराफ़ वालों की तशरीह और परिचय मालूम होने के बाद अब असल आयत का मज़मून

देखिये, जिसमें इरशाद है कि आराफ़ वाले जन्नत वालों को आवाज़ देकर कहेंगे "सलामुन अ़लैकुम" यह लफ़्ज़ दुनिया में भी आपस में मुलाक़ात के वक़्त दुआ़ व सम्मान के तौर पर बोला जाता है, और मस्नून है। और मौत के बाद क़ब्रों की ज़ियारत के वक़्त भी, और फिर मेहशर और जन्नत में भी, लेकिन क़ुरआनी आयतों और हदीस की रिवायतों से मालूम होता है कि दुनिया में तो **अस्सलामु अ़लैकुम** कहना मस्नून है, और इस दुनिया से गुज़रने के बाद बग़ैर अलिफ़ लाम के **सलामुन् अ़लैकुम** का लफ़्ज़ मस्नून है, क़ब्रों की ज़ियारत के लिये जो कलिमा क़ुरआन मजीद में मज़कूर है वह भीः

سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ بِمَا صَبَرْتُمْ فَنِعْمَ عُقْبَى الدَّارِ.

आया है, और फ़रिश्ते जब जन्नत वालों का स्वागत करेंगे उस वक़्त भी यह लफ़्ज़ इसी उनवान से आया हैः

سَلٰمٌ عَلَيْكُمْ طِبْتُمْ فَادْخُلُوْهَا خٰلِدِيْنَ.

और यहाँ भी आराफ़ वाले जन्नत वालों को इसी लफ़्ज़ के साथ सलाम करेंगे।

आगे आराफ़ वालों का यह हाल बतलाया है कि वे अभी जन्नत में दाख़िल नहीं हुए मगर उसके उम्मीदवार हैं। इसके बाद इरशाद हैः

وَاِذَا صُرِفَتْ اَبْصَارُهُمْ تِلْقَآءَ اَصْحٰبِ النَّارِ قَالُوْا رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا مَعَ الْقَوْمِ الظّٰلِمِيْنَ.

यानी जब आराफ़ वालों की नज़र जहन्नम वालों पर पड़ेगी और उनके अ़ज़ाब व मुसीबत को देखेंगे तो अल्लाह से पनाह माँगेंगे कि हमें इन ज़ालिमों के साथ न कीजिए।

पाँचवीं आयत में यह भी मज़कूर है कि आराफ़ वाले जहन्नम वालों को ख़िताब करके बतौर मलामत के यह कहेंगे कि दुनिया में तुमको जिस माल व दौलत और जमाअ़त व जत्थे पर भरोसा था, और जिनकी वजह से तुम तकब्बुर व गुरूर में मुब्तला थे आज वह तुम्हारे कुछ काम न आया।

छठी आयत में बयान हुआ हैः

اَهٰٓؤُلَآءِ الَّذِيْنَ اَقْسَمْتُمْ لَا يَنَالُهُمُ اللّٰهُ بِرَحْمَةٍ اُدْخُلُوا الْجَنَّةَ لَا خَوْفٌ عَلَيْكُمْ وَلَآ اَنْتُمْ تَحْزَنُوْنَ.

इसकी तफ़सीर में हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब आराफ़ वालों का सवाल जवाब जन्नत वालों और दोज़ख़ वालों के साथ हो चुकेगा, उस वक़्त रब्बुल-आ़लमीन दोज़ख़ वालों को ख़िताब करके यह कलिमात आराफ़ वालों के बारे में फ़रमायेंगे कि तुम लोग क़समें खाया करते थे कि इनकी मग़फ़िरत न होगी और इन पर कोई रहमत न होगी, सो अब देखो हमारी रहमत, और इसके साथ ही आराफ़ वालों को ख़िताब होगा कि जाओ जन्नत में दाख़िल हो जाओ, न तुम पर पिछले मामलात का कोई ख़ौफ़ होना चाहिये और न आगे का कोई ग़म व फ़िक्र। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

وَنَادَىٰ أَصْحٰبُ النَّارِ أَصْحٰبَ الْجَنَّةِ أَنْ أَفِيضُوا عَلَيْنَا مِنَ الْمَاءِ أَوْ مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ ۚ قَالُوا إِنَّ
اللّٰهَ حَرَّمَهُمَا عَلَى الْكٰفِرِينَ ﴿٥٠﴾ الَّذِينَ اتَّخَذُوا دِينَهُمْ لَهْوًا وَلَعِبًا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا ۚ
فَالْيَوْمَ نَنْسٰهُمْ كَمَا نَسُوا لِقَاءَ يَوْمِهِمْ هٰذَا ۙ وَمَا كَانُوا بِاٰيٰتِنَا يَجْحَدُونَ ﴿٥١﴾ وَلَقَدْ جِئْنٰهُمْ بِكِتٰبٍ
فَصَّلْنٰهُ عَلٰى عِلْمٍ هُدًى وَّرَحْمَةً لِّقَوْمٍ يُّؤْمِنُونَ ﴿٥٢﴾ هَلْ يَنْظُرُونَ إِلَّا تَأْوِيلَهُ ۚ يَوْمَ يَأْتِي تَأْوِيلُهُ
يَقُولُ الَّذِينَ نَسُوهُ مِنْ قَبْلُ قَدْ جَاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ ۚ فَهَلْ لَّنَا مِنْ شُفَعَاءَ فَيَشْفَعُوا
لَنَا أَوْ نُرَدُّ فَنَعْمَلَ غَيْرَ الَّذِي كُنَّا نَعْمَلُ ۚ قَدْ خَسِرُوا أَنْفُسَهُمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَّا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٥٣﴾

व नादा अस्हाबुन्नारि अस्हाबल्-जन्नति अन् अफ़ीज़ू अ़लैना मिनल्-मा-इ औ मिम्मा र-ज़-क़कुमुल्लाहु, क़ालू इन्नल्ला-ह हर्र-महुमा अ़लल्-काफ़िरीन (50) अल्लज़ीनत्त-ख़ज़ू दीनहुम् लह्वंव्-व लअ़िबंव्-व ग़र्रत्हुमुल्-हयातुद्दुन्या फ़ल्यौ-म नन्साहुम् कमा नसू लिक़ा-अ यौमिहिम् हाज़ा व मा कानू बिआयातिना यज्हदून (51) व ल-क़द् जिअ्नाहुम् बिकिताबिन् फ़स्सल्नाहु अ़ला अ़िल्मिन् हुदंव्-व रह्मतल्-लिक़ौमिंय्-युअ्मिनून (52) हल् यन्ज़ुरू-न इल्ला तअ्वी-लहू, यौ-म यअ्ती तअ्वीलुहू यक़ूलुल्लज़ी-न नसूहु मिन् क़ब्लु क़द् जाअत् रुसुलु रब्बिना बिल्हक़्क़ि फ़हल्-लना मिन्

और पुकारेंगे दोज़ख़ वाले जन्नत वालों को कि बहाओ हम पर थोड़ा सा पानी, या कुछ उसमें से जो रोज़ी तुमको दी अल्लाह ने, कहेंगे- अल्लाह ने इन दोनों को रोक दिया है काफ़िरों से। (50) जिन्होंने ठहराया अपना दीन तमाशा और खेल और धोखे में डाला उनको दुनिया की ज़िन्दगी ने, सो आज हम उनको भुला देंगे जैसा कि उन्होंने भुला दिया इस दिन के मिलने को, और जैसा कि वे हमारी आयतों के इनकारी थे। (51) और हमने उन लोगों के पास पहुँचा दी है किताब जिसको तफ़सील से बयान किया है हमने ख़बरदारी से, राह दिखाने वाली और रहमत है ईमान वालों के लिये। (52) क्या अब इसी के मुन्तज़िर हैं कि उसका मज़मून ज़ाहिर हो जाये? जिस दिन ज़ाहिर हो जायेगा मज़मून कहने लगेंगे वे लोग जो उसको भूल रहे थे पहले से- बेशक लाये थे हमारे रब के रसूल सच्ची बात सो अब कोई हमारी सिफ़ारिश वाले

शु-फ़आ-अ फ़यश्फ़अू लना औ नुरद्दु फ़नअ्-म-ल ग़ैरल्लज़ी कुन्ना नअ्-मलु, क़द् ख़सिरू अन्फ़ु-सहुम् व ज़ल्-ल अन्हुम् मा कानू यफ़्तरून (53) ✿	हैं तो हमारी सिफ़ारिश करें, या हम लौटा दिये जायें तो हम अमल करें उसके विपरीत जो हम कर रहे थे, बेशक तबाह किया उन्होंने अपने आपको और गुम हो जाएगा उनसे जो वे बोहतान बाँधा करते थे। (53) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और (जिस तरह ऊपर जन्नत वालों ने दोज़ख़ वालों से गुफ़्तगू की इसी तरह) दोज़ख़ वाले जन्नत वालों को पुकारेंगे कि (हम भूख, प्यास और गर्मी के मारे बेदम हुए जाते हैं, ख़ुदा के वास्ते) हमारे ऊपर थोड़ा पानी ही डाल दो (शायद कुछ सुकून हो जाये) या और ही कुछ दे दो जो अल्लाह तआ़ला ने तुमको दे रखा है। (इससे यह लाज़िम नहीं आता कि वे उम्मीद करके माँगेंगे, क्योंकि ज़्यादा बेचैनी में उम्मीद के ख़िलाफ़ बातें भी मुँह से निकला करती हैं) जन्नत वाले (जवाब में) कहेंगे कि अल्लाह तआ़ला ने दोनों चीज़ों (यानी जन्नत के खाने और पीने) की काफ़िरों के लिए बन्दिश कर रखी है। जिन्होंने (दुनिया में) अपने दीन को (जिसका क़ुबूल करना उनके ज़िम्मे वाजिब था) लह्व-व-लअ़िब "यानी खेल-तमाशे की चीज़" बना रखा था, और जिनको दुनियावी ज़िन्दगानी ने धोखे (और ग़फ़लत) में डाल रखा था (इसलिये दीन की कुछ परवाह ही न की, और यह बदला मिलने की जगह है, जब दीन नहीं तो उसका फल कहाँ। आगे हक़ तआ़ला जन्नत वालों के इस जवाब की तस्दीक़ व ताईद में फ़रमाते हैं) सो (जब उनकी दुनिया में यह हालत थी तो) हम भी आज (क़ियामत) के दिन उनका नाम न लेंगे (और खाना-पीना बिल्कुल न देंगे) जैसा कि उन्होंने इस (अ़ज़ीमुश्शान) दिन का नाम तक न लिया था, और जैसा कि ये हमारी आयतों का इनकार किया करते थे। और हमने इन लोगों के पास एक ऐसी किताब पहुँचा दी है (यानी क़ुरआन) जिसको हमने अपने कामिल इल्म से बहुत ही स्पष्ट करके बयान कर दिया है (और यह बयान सब के सुनाने को किया है लेकिन) हिदायत का ज़रिया और रहमत उन (ही) लोगों के लिए (हुआ) है जो (इसको सुनकर) ईमान लाते हैं। (और जो बावजूद हुज्जत पूरी होने के ईमान नहीं लाते, उनकी हालत से ऐसा मालूम होता है कि) उन लोगों को और किसी बात का इन्तिज़ार नहीं सिर्फ़ इस (क़ुरआन) के आख़िरी नतीजे (यानी सज़ा के वायदे) का इन्तिज़ार है (यानी अ़ज़ाब से पहले सज़ा की धमकी से नहीं डरते तो एक तरह से ख़ुद अ़ज़ाब का अपने ऊपर पड़ना चाहते होंगे, सो) जिस दिन इसका (बतलाया हुआ) आख़िरी नतीजा पेश आएगा (जिसकी तफ़सील दोज़ख़ वग़ैरह की ऊपर मज़कूर हुई) उस दिन जो लोग इसको पहले से भूले हुए थे (बेक़रार व परेशान होकर) यूँ कहने लगेंगे कि वाक़ई हमारे रब के पैग़म्बर (दुनिया में) सच्ची-सच्ची बातें लाए थे (मगर हमसे बेवक़ूफ़ी हुई) सो अब क्या हमारा

कोई सिफ़ारिश करने वाला है कि वह हमारी सिफ़ारिश कर दे। या क्या हम फिर (दुनिया में) वापस भेजे जा सकते हैं ताकि हम लोग (फिर दुनिया में जाकर) उन (बुरे) आमाल के उलट जिनको हम किया करते थे दूसरे (नेक) आमाल करें? (अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि अब निजात और छुटकारे की कोई सूरत नहीं) बेशक इन लोगों ने अपने को (कुफ़्र के) घाटे में डाल दिया, और ये जो-जो बातें बनाते थे (इस वक़्त) सब गुम हो गईं (अब सिवाय सज़ा के और कुछ न होगा)।

إِنَّ رَبَّكُمُ اللّٰهُ الَّذِي خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضَ فِي سِتَّةِ أَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ يُغْشِي اللَّيْلَ النَّهَارَ يَطْلُبُهُ حَثِيثًا وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ وَالنُّجُومَ مُسَخَّرٰتٍ بِأَمْرِهِ أَلَا لَهُ الْخَلْقُ وَالْأَمْرُ تَبٰرَكَ اللّٰهُ رَبُّ الْعٰلَمِينَ ۝

इन्-न रब्बकुमुल्लाहुल्लज़ी ख़-लक़स्-समावाति वल्अर्-ज़ फ़ी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अ़लल्-अ़र्शि, युग़्शिल्लैलन्नहा-र यत्लुबुहू हसीसंव्-व वश्शम्-स वल्क़-म-र वन्नुजू-म मुसख़्ख़रातिम्-बिअम्रिही, अला लहुल्-ख़ल्क़ु वल्अम्रु, तबारकल्लाहु रब्बुल्-आ़लमीन (54)	बेशक तुम्हारा रब अल्लाह है जिसने पैदा किए आसमान और ज़मीन छह दिन में, फिर क़रार पकड़ा अ़र्श पर, उढ़ाता है रात पर दिन कि वह उसके पीछे लगा आता है दौड़ता हुआ, और पैदा किए सूरज और चाँद और तारे, ताबेदार अपने हुक्म के, सुन लो उसी का काम है पैदा करना और हुक्म फ़रमाना, बड़ी बरकत वाला है अल्लाह जो रब है सारे जहान का। (54)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

बेशक तुम्हारा रब अल्लाह ही है जिसने सब आसमानों और ज़मीन को छह दिन (के बराबर वक़्त) में पैदा किया, फिर अ़र्श पर (जो एक राज गद्दी की तरह है, इस तरह) क़ायम (और जलवा फ़रमा) हुआ (जो कि उसकी शान के लायक़ है)। छुपा देता है रात (की अंधेरी) से दिन (की रोशनी) को, (यानी रात की अंधेरी से दिन की रोशनी छुप जाती और ख़त्म हो जाती है) ऐसे तौर पर कि वह रात उस दिन को जल्दी से आ लेती है (यानी दिन आनन फ़ानन गुज़रता मालूम होता है, यहाँ तक कि अचानक रात आ जाती है) और सूरज और चाँद और दूसरे सितारों को पैदा किया, ऐसे अन्दाज़ पर कि सब उसके (डायरेक्ट) हुक्म के ताबे हैं। याद रखो अल्लाह ही के लिए ख़ास है ख़ालिक़ "यानी पैदा करने वाला" होना और हाकिम होना, बड़ी ख़ूबियों वाले हैं अल्लाह तआ़ला जो तमाम जहान के पालने वाले हैं।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयत में आसमान व ज़मीन और सितारों के पैदा करने और एक ख़ास स्थिर निज़ाम के ताबे अपने-अपने काम में लगे रहने का ज़िक्र और उसके तहत में हक् तआ़ला की मुतलक़ क़ुदरत का बयान करके हर अ़क्ल व समझ रखने वाले इनसान को यह सोचने और विचार करने की दावत दी गयी है कि जो पाक ज़ात इस अ़ज़ीमुश्शान आ़लम को अ़दम (नापैदी) से वजूद में लाने और हकीमाना निज़ाम के साथ चलाने पर क़ादिर है उसके लिये क्या मुश्किल है कि इन चीज़ों को ख़त्म करके क़ियामत के दिन दोबारा पैदा फ़रमा दे। इसलिये क़ियामत का इनकार छोड़कर सिर्फ़ उसी ज़ात को अपना रब समझें, उसी से अपनी ज़रूरतें तलब करें, उसी की इबादत करें, मख़्लूक़ को पूजने की दलदल से निकलें और हक़ीक़त को पहचानें। इसमें इरशाद फ़रमाया कि "तुम्हारा रब अल्लाह ही है, जिसने आसमान और ज़मीन को छह दिन में पैदा किया।"

आसमान व ज़मीन की पैदाईश में छह दिन की मुद्दत क्यों हुई

यहाँ एक सवाल यह होता है कि अल्लाह जल्ल शानुहू तो इस पर क़ादिर हैं कि यह सारा जहान एक आन में पैदा फ़रमा दें, खुद क़ुरआने करीम में मुख़्तलिफ़ उनवानात से यह बात बार बार दोहराई गयी है। कहीं इरशाद हैः

وَمَآ اَمْرُنَآ اِلَّا وَاحِدَةٌ كَلَمْحٍ ۢبِالْبَصَرِ.

यानी आँख झपकने की मिक्दार में हमारा हुक्म नाफ़िज़ हो जाता है। कहीं फ़रमाया हैः

اِذَآ اَرَادَ شَيْئًا اَنْ يَّقُوْلَ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ.

यानी "जब अल्लाह तआ़ला किसी चीज़ को पैदा फ़रमाना चाहते हैं तो फ़रमा देते हैं कि हो जा, वह पैदा हो जाती है।" फिर दुनिया की पैदाईश के लिये छह दिन ख़र्च होने की क्या वजह है?

मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत सईद बिन जुबैर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इसका यह जवाब दिया है कि हक् तआ़ला की क़ुदरत तो बेशक इस पर हावी है कि यह सब कुछ एक आन में पैदा कर दें, लेकिन हिक्मत के तक़ाज़े से इस आ़लम की पैदाईश में छह दिन लगाये गये, ताकि इनसान को दुनिया की व्यवस्था चलाने में तदरीज (दर्जा-ब-दर्जा धीरे-धीरे) किसी काम को करने और पुख़्ताकारी की तालीम दी जाये जैसा कि हदीस में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ग़ौर व फ़िक्र और वक़ार व तदरीज के साथ काम करना अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से है और जल्दबाज़ी शैतान की तरफ़ से। (तफ़सीरे मज़हरी, शुअ़बुल-ईमान बैहक़ी के हवाले से)

मतलब यह है कि जल्दबाज़ी में इनसान मसले के हर पहलू पर ग़ौर व फ़िक्र नहीं कर सकता, इसलिये अक्सर काम ख़राब हो जाता है, और शर्मिन्दगी होती है, सोचने व ग़ौर करने और सहूलत के साथ जो काम किया जाये उसमें बरकत होती है।

ज़मीन व आसमान और सितारों की पैदाईश से पहले दिन रात कैसे पहचाने गये?

दूसरा सवाल यह है कि दिन और रात का वजूद तो सूरज की हरकत से पहचाना जाता है, आसमान और ज़मीन की पैदाईश से पहले जब न सूरज था न चाँद, तो छह दिनों की तायदाद किस हिसाब से हुई?

इसलिये कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि छह दिन से मुराद इतना वक़्त और ज़माना है जिसमें छह दिन-रात इस दुनिया में होते हैं। लेकिन साफ़ और बेग़ुबार बात यह है कि दिन और रात की यह इस्तिलाह (परिभाषा) कि सूरज निकलने से छुपने तक दिन और सूरज छुपने से निकलने तक रात, यह तो इस दुनिया की इस्तिलाह है, दुनिया के बनाने से पहले हो सकता है कि अल्लाह तआला ने दिन और रात की दूसरी निशानियाँ मुक़र्रर फ़रमा रखी हों, जैसे जन्नत में होगा कि वहाँ का दिन और रात सूरज की हरकत के ताबे नहीं होगा।

इससे यह भी मालूम हो गया कि यह ज़रूरी नहीं कि वे छह दिन जिनमें ज़मीन व आसमान बनाये गये वे हमारे छह दिन के बराबर हों, बल्कि हो सकता है कि इससे बड़े हों, जैसे आख़िरत के दिन के बारे में क़ुरआन का इरशाद है कि एक हज़ार साल के बराबर एक दिन होगा।

अबू अ़ब्दुल्लाह राज़ी रह. ने फ़रमाया कि सबसे बड़े फ़लक की हरकत इस दुनिया की हरकतों के मुक़ाबले में इतनी तेज़ है कि एक दौड़ने वाला इनसान एक क़दम उठाकर ज़मीन पर रखने नहीं पाता कि फ़लक-ए-आज़म तीन हज़ार मील की दूरी तय कर लेता है। (बहरे मुहीत)

इमाम अहमद बिन हम्बल और इमाम मुजाहिद रह. का क़ौल यही है कि यहाँ छह दिन से आख़िरत के छह दिन मुराद हैं, और इमाम ज़ह्हाक रह. की रिवायत के मुताबिक़ हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से भी यही मन्क़ूल है।

और ये छह दिन जिनमें इस दुनिया की पैदाईश वजूद में आई है, सही रिवायात के मुताबिक़ इतवार से शुरू होकर जुमे पर ख़त्म होते हैं। यौमुस्सब्त यानी शनिवार के अन्दर दुनिया की पैदाईश का काम नहीं हुआ। कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि सब्त के मायने काटने के हैं, इस दिन का यौमुस्सब्त इसी लिये नाम रखा गया कि इस पर काम ख़त्म हो गया।

(तफ़सीर इब्ने कसीर)

उक्त आयत में ज़मीन व आसमान की पैदाईश छह दिन में मुकम्मल होने का ज़िक्र है, इसकी तफ़सील सूरः हा-मीम अस्सज्दा की नवीं और दसवीं आयतों में इस तरह आई है कि दो दिन में ज़मीन बनाई गयी, फिर दो दिन में ज़मीन के ऊपर पहाड़, दरिया, खनिज चीज़ें, दरख़्त, नबातात (पेड़-पौधे) और इनसान व हैवान के खाने पीने की चीज़ें बनाई गयीं, कुल चार दिन हो गये। इरशाद फ़रमायाः

خَلَقَ الْاَرْضَ فِیْ یَوْمَیْنِ.

और फिर फ़रमायाः

قَدَّرَ فِيهَا أَقْوَاتَهَا فِي أَرْبَعَةِ أَيَّامٍ.

पहले दो दिन जिनमें ज़मीन बनाई गयी, इतवार और सोमवार हैं और दूसरे दो दिन जिनमें ज़मीन की आबादी का सामान पहाड़, दरिया बनाये गये वह मंगलवार और बुधवार हैं, उसके बाद इरशाद फ़रमायाः

فَقَضٰهُنَّ سَبْعَ سَمٰوٰتٍ فِي يَوْمَيْنِ.

यानी फिर सातों आसमान बनाये दो दिन में। ज़ाहिर है कि ये दो दिन जुमेरात और जुमा होंगे। इस तरह जुमे तक छह दिन हो गये।

आसमान व ज़मीन की पैदाईश (बनाने) का बयान करने के बाद इरशाद फ़रमायाः

ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ.

यानी फिर अ़र्श पर क़ायम हुआ। इस्तिवा के लफ़्ज़ी मायने क़ायम होने और अ़र्श शाही तख़्त को कहा जाता है। अब रहमान का यह अ़र्श कैसा और क्या है, और उस पर क़ायम होने का क्या मतलब है? इसके बारे में बेगुबार और साफ़ व सही वह मस्लक है जो पहले बुज़ुर्गों, सहाबा व ताबिईन से और बाद में अक्सर सूफ़िया-ए-किराम हज़रात से मन्क़ूल है कि इनसानी अ़क्ल अल्लाह जल्ल शानुहू की ज़ात व सिफ़ात की हक़ीक़त का इहाता करने से आजिज़ है। उसकी खोज में पड़ना बेकार बल्कि नुक़सानदेह है, इन पर संक्षिप्त रूप से यह ईमान लाना चाहिये कि इन अलफ़ाज़ से जो कुछ हक़ तआ़ला की मुराद है वह सही और हक़ है, और ख़ुद कोई मायने मुतैयन करने की फ़िक्र न करे।

हज़रत इमाम मालिक रह. से एक शख़्स ने यही सवाल किया कि इस्तिवा अ़लल्-अ़र्श (अ़र्श पर क़ायम होने) का क्या मतलब है? आपने कुछ देर ग़ौर फ़रमाने के बाद फ़रमाया कि लफ़्ज़ तो मालूम हैं और उसकी कैफ़ियत और हक़ीक़त तक इनसानी अ़क्ल नहीं पहुँच सकती, और ईमान लाना इन पर वाजिब है। और इसके मुताल्लिक़ कैफ़ियत व हक़ीक़त का सवाल करना बिदअ़त है। क्योंकि सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ऐसे सवालात नहीं किये। हज़रत सुफ़ियान सौरी, इमाम औज़ाई, लैस बिन सअ़द, सुफ़ियान इब्ने उयैना, अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रह. ने फ़रमाया कि जो आयतें अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात के बारे में आई हैं उनको जिस तरह वो आई हैं उसी तरह बग़ैर किसी वज़ाहत व मतलब के रखकर उन पर ईमान लाना चाहिये। (तफ़सीरे मज़हरी)

इसके बाद आयते मज़कूरा में फ़रमायाः

يُغْشِي الَّيْلَ النَّهَارَ يَطْلُبُهٗ حَثِيْثًا.

यानी अल्लाह तआ़ला ढाँप देते हैं रात को दिन पर, इस तरह कि रात जल्दी के साथ दिन को आ लेती है। मुराद यह है कि रात और दिन का यह ज़बरदस्त बदलाव कि पूरे आ़लम को नूर से अंधेरे में या अंधेरे से नूर में ले आता है, अल्लाह तआ़ला की ग़ालिब क़ुदरत के ताबे

इतनी जल्दी और आसानी से हो जाता है कि ज़रा देर नहीं लगती।

इसके बाद इरशाद फ़रमाया:

وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ وَالنُّجُوْمَ مُسَخَّرٰتٍ ۢ بِاَمْرِهٖ.

यानी पैदा किया अल्लाह तआ़ला ने सूरज और चाँद और तमाम सितारों को इस हालत पर कि सब के सब अल्लाह तआ़ला के हुक्म के ताबे चल रहे हैं।

इसमें एक अ़क्ल रखने वाले इनसान के लिये विचार का मक़ाम है जो मख़्लूक़ की बनाई हुई चीज़ों को हर वक़्त देखता और अनुभव करता है कि बड़े-बड़े माहिरीन की बनाई हुई मशीनों में अव्वल तो कुछ कमियाँ रहती हैं, और कमियाँ भी न रहें तो कैसी फ़ौलादी मशीनें और कलपुर्ज़े हों चलते-चलते घिसते हैं, ढीले होते हैं, मरम्मत की ज़रूरत होती है, ग्रीसिंग की ज़रूरत पेश आती है, और इसके लिये कई-कई दिन बल्कि हफ़्तों और महीनों मशीन बेकार (बिना काम किये) रहती है, लेकिन इन ख़ुदाई मशीनों को देखो कि जिस तरह और जिस शान से पहले दिन इनको चलाया था इसी तरह चल रही हैं, न कभी इनकी रफ़्तार में एक मिनट सैकण्ड का फ़र्क़ आता है, न कभी इनका कोई पुर्ज़ा घिसता टूटता है, न कभी इनको वर्कशॉप की ज़रूरत पड़ती है। वजह यह है कि ये अल्लाह के हुक्म के ताबे होकर चल रही हैं। यानी इनके चलने चलाने के लिये न कोई बिजली की पॉवर दरकार है, न किसी इंजन की मदद ज़रूरी है, ये सिर्फ़ अल्लाह के हुक्म से चल रही हैं, उसी के ताबे हैं। इसमें कोई फ़र्क़ आना नामुम्किन है, हाँ जब ख़ुद क़ादिरे मुतलक़ ही इनके फ़ना करने का इरादा एक निर्धारित वक़्त पर करेंगे तो यह सारा सिस्टम उलट-पुलट और तबाह हो जायेगा, और उसी का नाम क़ियामत है।

इन चन्द मिसालों के ज़िक्र के बाद हक़ तआ़ला की ज़बरदस्त मुतलक़ क़ुदरत का बयान एक कुल्ली क़ायदे की सूरत में इस तरह किया गया:

اَلَا لَهُ الْخَلْقُ وَالْاَمْرُ.

ख़ल्क़ के मायने पैदा करना और अम्र के मायने हुक्म करना हैं। मायने यह हो सकते हैं कि उसी के लिये ख़ास है ख़ालिक़ होना और हाकिम होना, उसके सिवा कोई दूसरा न किसी मामूली सी चीज़ को भी पैदा कर सकता है और न किसी पर हुक्म करने का हक़ है (सिवाय उसके कि अल्लाह तआ़ला ही की तरफ़ से हुक्म का कोई ख़ास शोबा किसी के सुपुर्द कर दिया जाये तो वह भी हक़ीक़त के एतिबार से अल्लाह ही का हुक्म है) इसलिये आयत की मुराद यह हुई कि ये सारी चीज़ें पैदा करना भी उसी का काम था, और पैदा होने के बाद इनसे काम लेना भी किसी दूसरे के बस की बात न थी, वह भी अल्लाह तआ़ला ही की कामिल क़ुदरत का करिश्मा है।

सूफ़िया-ए-किराम ने फ़रमाया कि ख़ल्क़ और अम्र दो आ़लम हैं। ख़ल्क़ का ताल्लुक़ माद्दे और माद्दी चाज़ों से है, और अम्र का ताल्लुक़ लतीफ़ माद्दे से ख़ाली चीज़ों के साथ है। आयतः

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ.

में इसकी तरफ़ इशारा पाया जाता है कि रूह को रब का हुक्म फ़रमाया है। ख़ल्क़ और

अम्र दोनों का अल्लाह तआ़ला के लिये ख़ास होने का मतलब इस सूरत में यह है कि आसमान व ज़मीन और उनके बीच जितनी चीज़ें हैं ये तो सब माद्दी हैं, इनकी पैदाईश को ख़ल्क़ कहा गया, और आसमानों से ऊपर की चीज़ें जो माद्दे और माद्दियत से बरी हैं उनकी पैदाईश को लफ़्ज़ अम्र से ताबीर किया गया। (तफ़सीरे मज़हरी)

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

تَبٰرَكَ اللّٰهُ رَبُّ الْعٰلَمِيْنَ.

इसमें लफ़्ज़ **तबार-क** बरकत से बना है और लफ़्ज़ बरकत, बढ़ने, ज़्यादा होने, साबित रहने वग़ैरह के कई मायनों में इस्तेमाल होता है। इस जगह लफ़्ज़ तबार-क के मायने बुलन्द व बाला होने के हैं, जो बढ़ने के मायने से भी लिया जा सकता है और साबित रहने के मायने से भी, क्योंकि अल्लाह तआ़ला क़ायम और साबित भी हैं और बुलन्द व बाला भी। बुलन्द होने के मायने की तरफ़ हदीस के एक जुमले में भी इशारा किया गया है। फ़रमायाः

تَبَارَكْتَ وَتَعَالَيْتَ يَاذَا الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ.

यहाँ "तबारक्-त" की तफ़सीर "तआ़लै-त" के लफ़्ज़ से कर दी गयी है।

اُدْعُوْا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً ۚ اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۚ﴿۵۵﴾

وَلَا تُفْسِدُوْا فِي الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا وَادْعُوْهُ خَوْفًا وَّطَمَعًا ۚ اِنَّ رَحْمَتَ اللّٰهِ قَرِيْبٌ مِّنَ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿۵۶﴾

उद्अ़ू रब्बकुम् त-ज़र्रुअ़ंव्-व ख़ुफ़्य-तन्, इन्नहू ला युहिब्बुल् मुअ़्तदीन (55) व ला तुफ़्सिदू फ़िल्अर्ज़ि बअ़्-द इस्लाहिहा वद्अ़ूहु ख़ौफ़ंव्-व त-मअ़न्, इन्-न रह्मतल्लाहि क़रीबुम् मिनल् मुह्सिनीन (56)	पुकारो अपने रब को गिड़गिड़ाकर और चुपके-चुपके, उसको पसन्द नहीं आते हद से बढ़ने वाले। (55) और मत ख़राबी डालो ज़मीन में उसकी इस्लाह (सुधार) के बाद, और पुकारो उसको डर और उम्मीद से, बेशक अल्लाह की रहमत नज़दीक है नेक काम करने वालों से। (56)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

तुम लोग (हर हालत में और हर ज़रूरत में) अपने परवर्दिगार से दुआ़ किया करो आ़जिज़ी ज़ाहिर करके भी और चुपके-चुपके भी। (अलबत्ता यह बात) वाक़ई (है कि) अल्लाह तआ़ला उन लोगों को ना-पसन्द करते हैं जो (दुआ़ में अदब की) हद से निकल जाएँ। (मसलन ऐसी चीज़ों की दुआ़ माँगने लगें जो अ़क़्ली तौर पर नामुम्किन या शरीअ़त की तरफ़ से हराम हों) और

दुनिया में बाद इसके कि (तौहीद की तालीम और नबियों के भेजने के द्वारा) इसकी दुरुस्ती कर दी गई है, फ़साद मत फैलाओ (यानी हक़ बातों तौहीद वग़ैरह के मानने और उन पर चलने से जिनकी ऊपर तालीम है दुनिया में अमन क़ायम होता है, तुम उक्त तालीम को छोड़कर अमन को ख़राब मत करो) और (जैसा कि तुमको ऊपर ख़ास दुआ करने का हुक्म हुआ है उसी तरह बाक़ी की इबादतों का हुक्म किया जाता है कि) उसकी (यानी अल्लाह की) इबादत (जिस तरीक़े से तुमको बतला दिया है) किया करो, ख़ुदा तआला से डरते और उम्मीदवार रहते हुए (यानी इबादत करके न तो नाज़ और इतराना हो और न मायूसी हो। आगे इबादत की तरग़ीब है कि) बेशक अल्लाह की रहमत नज़दीक है नेक काम करने वालों से।

मआरिफ़ व मसाईल

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली आयतों में हक़ तआला की कामिल क़ुदरत के ख़ास-ख़ास मज़ाहिर (ज़ाहिर होने के मौक़े और निशानियाँ) और अहम इनामात का ज़िक्र था, इन आयतों में इसका बयान है कि जब मुतलक़ क़ुदरत का मालिक और तमाम एहसानात व इनामात का करने वाला सिर्फ़ रब्बुल-आलमीन है तो मुसीबत और हाजत के वक़्त उसी को पुकारना और उसी से दुआ करनी चाहिये, उसको छोड़कर किसी दूसरी तरफ़ मुतवज्जह होना जहालत और मेहरूमी है।

इसी के साथ इन आयतों में दुआ के कुछ आदाब भी बतला दिये गये, जिनकी रियायत करने से दुआ के क़ुबूल होने की उम्मीद ज़्यादा हो जाती है।

लफ़्ज़ दुआ अरबी भाषा में किसी को हाजत रवाई (आवश्यकता पूरी करने) के लिये पुकारने के मायने में भी आता है और आम याद करने के मायने में भी, और यहाँ दोनों मायने मुराद हो सकते हैं। आयत में इरशाद है:

اُدْعُوْا رَبَّكُمْ

यानी पुकारो अपने रब को अपनी हाजतों (ज़रूरतों और आवश्यकताओं) के लिये, या याद करो और इबादत करो अपने रब की। पहली सूरत में मायने ये होंगे कि अपनी ज़रूरतें सिर्फ़ अल्लाह तआला से माँगो, और दूसरी सूरत में यह कि ज़िक्र व इबादत सिर्फ़ उसी की करो। ये दोनों तफ़सीरें पहले गुज़रे बुज़ुर्गों और तफ़सीर के इमामों से मन्क़ूल भी हैं।

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً

तज़र्रोअ़ के मायने विनम्रता व इन्किसारी और अपनी पस्ती के इज़हार के हैं, और ख़ुफ़िया के मायने पोशीदा, छुपा हुआ। जैसा कि उर्दू भाषा में भी यह लफ़्ज़ इसी मायने में बोला जाता है। इन दोनों लफ़्ज़ों में दुआ व ज़िक्र के लिये दो अहम आदाब का बयान है- अव्वल यह कि दुआ की क़ुबूलियत के लिये यह ज़रूरी है कि इनसान अल्लाह तआला के सामने अपनी आजिज़ी व इन्किसारी और पस्ती का इज़हार करके दुआ करे। उसके अलफ़ाज़ भी आजिज़ी व इन्किसारी

वाले हों, अन्दाज़ और तरीक़ा भी तवाज़ो व इन्किसारी का हो, दुआ माँगने की हालत व सूरत भी ऐसी ही हो। इससे मालूम हुआ कि आजकल अ़वाम जिस अन्दाज़ से दुआ माँगते हैं अव्वल तो उसको दुआ माँगना ही नहीं कहा जा सकता, बल्कि पढ़ना कहना चाहिये, क्योंकि अक्सर यह भी मालूम नहीं होता कि हम जो कलिमात ज़बान से बोल रहे हैं उनका मतलब क्या है, जैसा कि आजकल आ़म मस्जिदों में इमामों का मामूल हो गया है कि कुछ अ़रबी भाषा के दुआ वाले कलिमात उन्हें याद होते हैं, नमाज़ के ख़त्म पर उन्हें पढ़ देते हैं, अक्सर तो ख़ुद उन इमामों को भी उन कलिमात का मतलब व मफ़्हूम मालूम नहीं होता और अगर उनको मालूम हो तो कम से कम जाहिल मुक़्तदी तो उनसे बिल्कुल बेख़बर होते हैं, वे बिना समझे बूझे इमाम के पढ़े हुए कलिमात के पीछे आमीन आमीन कहते हैं। इस सारे तमाशे का हासिल चन्द कलिमात का पढ़ना होता है, दुआ माँगने की जो हक़ीक़त है यहाँ पाई ही नहीं जाती, यह दूसरी बात है कि अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व रहमत से उन बेजान कलिमात ही को क़ुबूल फ़रमाकर दुआ की क़ुबूलियत के आसार पैदा फ़रमा दें, मगर अपनी तरफ़ से यह समझ लेना ज़रूरी है कि दुआ पढ़ी नहीं जाती बल्कि माँगी जाती है, इसके लिये ज़रूरी है कि माँगने के ढंग से माँगा जाये।

दूसरी बात यह है कि अगर किसी शख़्स को अपने कलिमात के मायने भी मालूम हों और समझकर ही कह रहा हो तो अगर उसके साथ उनवान, अन्दाज़ और सूरत व हालते ज़ाहिरी तवाज़ो व इन्किसारी की न हो तो यह दुआ एक ख़ालिस मुतालबा रह जाता है, जिसका किसी बन्दे को कोई हक़ नहीं।

ग़र्ज़ कि पहले लफ़्ज़ दुआ की रूह बतला दी गयी कि वह आ़जिज़ी व इन्किसारी और अपनी ज़िल्लत व पस्ती का इज़हार करके अल्लाह तआ़ला से अपनी हाजत माँगना है। दूसरे लफ़्ज़ में एक दूसरी हिदायत यह दे गयी कि दुआ का ख़ुफ़िया और आहिस्ता माँगना ज़्यादा बेहतर और क़ुबूल होने के क़रीब है, क्योंकि बुलन्द आवाज़ से दुआ माँगने में अव्वल तो तवाज़ो व इन्किसारी बाक़ी रहना मुश्किल है, दूसरे उसमें दिखावे व शोहरत का भी ख़तरा है। तीसरे उसकी सूरते अ़मल ऐसी है कि गोया यह शख़्स यह नहीं जानता कि अल्लाह तआ़ला सुनने और जानने वाले हैं, हमारे ज़ाहिर व बातिन को बराबर तौर पर जानते हैं, हर बात ख़ुफ़िया हो या खुली उसको सुनते हैं, इसलिये ख़ैबर की लड़ाई के मौक़े पर सहाबा-ए-किराम की आवाज़ दुआ में बुलन्द हो गयी तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तुम किसी बहरे को या ग़ायब को नहीं पुकार रहे हो जो इतनी बुलन्द आवाज़ से कहते हो, बल्कि एक सुनने वाला और क़रीब वाला तुम्हारा मुख़ातब है यानी अल्लाह तआ़ला (इसलिये आवाज़ बुलन्द करना फ़ुज़ूल है)। ख़ुद अल्लाह जल्ल शानुहू ने एक नेक आदमी की दुआ का ज़िक्र इन अलफ़ाज़ से फ़रमाया है:

اِذْ نَادٰى رَبَّهٗ نِدَآءً خَفِيًّا

यानी "जब उन्होंने रब को पुकारा आहिस्ता आवाज़ से।" इससे मालूम हुआ कि अल्लाह

तआला को दुआ की यह कैफ़ियत पसन्द है कि पस्त और आहिस्ता आवाज़ से दुआ माँगी जाये।

हज़रत हसन बसरी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि ऐलानिया और आवाज़ से दुआ करने में और आहिस्ता पस्त आवाज़ से करने में सत्तर दर्जे फ़ज़ीलत का फ़र्क़ है। पहले बुज़ुर्गों की आ़दत यह थी कि ज़िक्र व दुआ में बड़ा मुजाहिदा करते और अक्सर वक़्त इसमें मशग़ूल रहते थे मगर कोई उनकी आवाज़ न सुनता था, बल्कि उनकी दुआयें सिर्फ़ उनके और उनके रब के बीच रहती थीं। उनमें बहुत से हज़रात पूरा क़ुरआन हिफ़्ज़ करते और तिलावत करते रहते थे, मगर किसी दूसरे को ख़बर न होती थी। और बहुत से हज़रात बड़ा इल्मे दीन हासिल करते मगर लोगों पर जतलाते न फिरते थे। बहुत से हज़रात रातों को अपने घरों में लम्बी-लम्बी नमाज़ें अदा करते मगर आने वालों को कुछ ख़बर न होती थी। और फ़रमाया कि हमने ऐसे हज़रात को देखा है कि वे तमाम इबादतें जिनको वे पोशीदा करके अदा कर सकते थे कभी नहीं देखा गया कि उनको ज़ाहिर करके अदा करते हों, उनकी आवाज़ें दुआओं में निहायत पस्त होती थीं।

(तफ़सीर इब्ने कसीर, तफ़सीरे मज़हरी)

इब्ने जुरैज ने फ़रमाया कि दुआ में आवाज़ बुलन्द करना और शोर करना मक्रूह है। इमाम अबू बक्र जस्सास हनफ़ी ने अहकामुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि इस आयत से मालूम हुआ कि दुआ का आहिस्ता माँगना इज़हार करने के मुक़ाबले में अफ़ज़ल है। हज़रत हसन बसरी और हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हुमा से ऐसा ही मन्क़ूल है, और इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि नमाज़ में सूरः फ़ातिहा के ख़त्म पर जो आमीन कही जाती है उसको भी आहिस्ता कहना अफ़ज़ल है, क्योंकि आमीन भी एक दुआ है।

हमारे ज़माने के मस्जिदों के इमामों को अल्लाह तआ़ला हिदायत फ़रमायें कि क़ुरआन व सुन्नत की इस तालीम और पहले बुज़ुर्गों की हिदायतों को पूरी तरह छोड़ बैठे। हर नमाज़ के बाद दुआ की एक बनावटी सी कार्रवाई होती है, बुलन्द आवाज़ से कुछ कलिमात पढ़े जाते हैं, जो दुआ के आदाब के ख़िलाफ़ होने के अ़लावा उन नमाज़ियों की नमाज़ में भी ख़लल-अन्दाज़ होते हैं जो इमाम के साथ कुछ रक्अ़त छूट जाने की वजह से इमाम के फ़ारिग़ होने के बाद अपनी बाक़ी रही नमाज़ पूरी कर रहे हैं। रस्मों के ग़लबे ने इसकी बुराई और ख़राबियों को उनकी नज़रों से ओझल कर दिया है, किसी ख़ास मौक़े पर ख़ास दुआ पूरी जमाअ़त से कराना मक़सूद हो तो ऐसे मौक़े पर एक आदमी किसी क़द्र आवाज़ से दुआ के अलफ़ाज़ कहे और दूसरे आमीन कहें, इसमें तो कोई हर्ज नहीं, शर्त यह है कि दूसरों की नमाज़ व इबादत में ख़लल का सबब न बनें, और ऐसा करने की आ़दत न डालें कि अ़वाम यह समझने लगें कि दुआ करने का तरीक़ा यही है जैसा कि आजकल आ़म तौर से हो रहा है।

यह बयान अपनी हाजतों के लिये दुआ माँगने का था, अगर दुआ के मायने इस जगह ज़िक्र व इबादत के लिये जायें तो इसमें भी पहले ज़माने के उलेमा की तहक़ीक़ यही है कि छुपा और आहिस्ता वाला ज़िक्र ज़ाहिरी और आवाज़ वाले ज़िक्र से अफ़ज़ल है, और सूफ़िया-ए-किराम में

चिश्तिया बुज़ुर्ग जो तसव्वुफ़ की लाईन के शुरूआती मुसाफ़िर को आवाज़ से ज़िक्र करने की हिदायत फ़रमाते हैं वह उस शख़्स के हाल की मुनासबत से इलाज के तौर पर है, ताकि आवाज़ से ज़िक्र करने के ज़रिये सुस्ती व ग़फ़लत दूर हो जाये, और दिल में ज़िक्रुल्लाह के साथ एक लगाव पैदा हो जाये, वरना अपनी ज़ात में ज़िक्र में आवाज़ से काम लेना उनके यहाँ भी मतलूब (पसन्दीदा) नहीं, अगरचे जायज़ है, और उसका जायज़ होना भी हदीस से साबित है, बशर्ते कि उसमें दिखावा व नमूद न हो।

इमाम अहमद बिन हम्बल, इब्ने हिब्बान, बैहक़ी वग़ैरह ने हज़रत सअ़द बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से नक़ल किया है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

خَيْرُ الذِّكْرِ الْخَفِيُّ وَخَيْرُ الرِّزْقِ مَايَكْفِيْ.

"यानी बेहतरीन ज़िक्र ख़फ़ी (पोशीदा) है, और बेहतरीन रिज़्क़ वह है जो इनसान के लिये काफ़ी हो जाये।"

हाँ ख़ास-ख़ास हालात और वक़्तों में आवाज़ की बुलन्दी ही मतलूब और अफ़ज़ल है। उन वक़्तों और हालात की तफ़सील रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने क़ौल व अ़मल से वाज़ेह फ़रमा दी है। मसलन अज़ान व तकबीर का बुलन्द आवाज़ से कहना, जहरी नमाज़ों में बुलन्द आवाज़ से क़ुरआन की तिलावत करना। नमाज़ की तकबीरों, क़ुरबानी और तशरीक़ के दिनों की तकबीरें और हज में तल्बिया (लब्बैक अलफ़ाज़) बुलन्द आवाज़ से कहना वग़ैरह। इसी लिये फ़ुक़हा (दीनी मसाईल के माहिर उलेमा) ने इस बारे में फ़ैसला यह फ़रमाया है कि जिन ख़ास हालात और मक़ामात में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपने क़ौल या अ़मल से जहर करने की तालीम फ़रमाई है वहाँ तो जहर (आवाज़ से) ही करना चाहिये, उसके अ़लावा दूसरे हालात व मक़ामात में पोशीदा ज़िक्र ही बेहतर व फ़ायदेमन्द है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

اِنَّهٗ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ.

'मोतदीन' एतिदा से निकला है, एतिदा के मायने हैं हद से आगे बढ़ना। मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला हद से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं फ़रमाते। हद से आगे बढ़ना चाहे दुआ़ में हो या किसी दूसरे अ़मल में सब का यही हाल है कि वह अल्लाह तआ़ला को पसन्द नहीं, बल्कि अगर ग़ौर से देखा जाये तो दीने इस्लाम नाम ही हदों व शर्तों की पाबन्दी और फ़रमाँबरदारी का है। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात और तमाम मामलात में शरई हदों से आगे बढ़ा जाये तो वो बजाय इबादत के गुनाह बन जाते हैं।

दुआ़ में हद से निकलने की कई सूरतें हैं- एक यह कि दुआ़ में लफ़्ज़ी तकल्लुफ़ बरता जाये कि एक वज़न के अलफ़ाज़ वग़ैरह को ज़बरदस्ती इख़्तियार किया जाये, जिससे आ़जिज़ी व इन्किसारी में फ़र्क़ पड़े। दूसरे यह कि दुआ़ में ग़ैर-ज़रूरी क़ैदें शर्तें लगाई जायें, जैसे हदीस में है

कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुग़फ़्फ़ल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने देखा कि उनके बेटे इस तरह दुआ़ माँग रहे हैं कि या अल्लाह! मैं आप से जन्नत में सफ़ेद रंग का दाहिनी तरफ़ वाला महल तलब करता हूँ तो आपने उनको रोका और फ़रमाया कि दुआ़ में ऐसी क़ैदें शर्तें लगाना हद से आगे बढ़ना है, जिसको क़ुरआन व हदीस में वर्जित क़रार दिया गया है। (मज़हरी, इब्ने माजा वग़ैरह की रिवायत से)

तीसरी सूरत हद से निकलने की यह है कि आ़म मुसलमानों के लिये बद्दुआ़ करे या कोई ऐसी चीज़ माँगे जो आ़म लोगों के लिये नुक़सान देने वाली हो। इसी तरह एक सूरत हद से निकलने की यह भी है जो इस जगह मज़कूर है कि दुआ़ में बिना ज़रूरत आवाज़ बुलन्द की जाये। (तफ़सीरे मज़हरी, अहकामुल-क़ुरआन)

दूसरी आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَلَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا.

इसमें दो लफ़्ज़ एक दूसरे के उलट और मुक़ाबले के आये हैं- **सलाह** और **फ़साद**। सलाह के मायने दुरुस्ती और फ़साद के मायने ख़राबी के आते हैं। इमाम राग़िब रह. ने मुफ़्रदातुल-क़ुरआन में फ़रमाया कि फ़साद कहते हैं किसी चीज़ के एतिदाल से निकल जाने को, चाहे यह निकलना थोड़ा सा हो या ज़्यादा, और हर फ़साद में कमी-बेशी का मदार उसी एतिदाल (सही और दरमियानी राह) से निकलने पर है। जिस क़द्र निकलना बढ़ेगा फ़साद बढ़ेगा। इफ़साद के मायने हैं ख़राबी पैदा करना और इस्लाह के मायने दुरुस्ती करना। इसलियेः

وَلَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا.

के मायने यह हुए कि "ज़मीन में ख़राबी न पैदा करो बाद इसके कि अल्लाह तआ़ला ने इसकी दुरुस्ती फ़रमा दी है।"

इमाम राग़िब रह. ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला का किसी चीज़ की इस्लाह करने की कई सूरतें होती हैं- एक यह कि उसको पहले ही ठीक-ठीक और दुरुस्त पैदा फ़रमाया हो, जैसेः

وَاَصْلَحَ بَالَهُمْ.

दूसरे यह कि उसमें जो फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) आ गया था उसको दूर कर दिया हो, जैसेः

يُصْلِحْ لَكُمْ اَعْمَالَكُمْ.

तीसरे यह कि उसको सलाह का हुक्म दिया जाये। इस आयत में जो यह इरशाद है कि अल्लाह तआ़ल ने जब ज़मीन की इस्लाह व दुरुस्ती फ़रमा दी तो इसके बाद तुम इसमें फ़साद और ख़राबी न डालो। इसमें ज़मीन की दुरुस्ती करने के दो मफ़्हूम हो सकते हैं- एक ज़ाहिरी दुरुस्ती कि ज़मीन को खेती और पेड़ उगाने के क़ाबिल बनाया, उस पर बादलों से पानी बरसाकर ज़मीन से फल-फूल निकाले, इनसान और दूसरे जानदारों के लिये ज़मीन से हर क़िस्म की ज़िन्दगी की ज़रूरतें और आराम के सामान पैदा किये।

दूसरा मफ़्हूम यह है कि ज़मीन की अन्दरूनी और मानवी दुरुस्ती फ़रमाई। इस तरह कि

ज़मीन पर अपने रसूल, अपनी किताबें और हिदायतें भेजकर इसको कुफ़ व शिर्क और गुमराही से पाक किया, और हो सकता है कि ये दोनों मफ़्हूम यानी ज़ाहिर और बातिन हर तरह की इस्लाह (दुरुस्त करना) इस आयत में मुराद हो, तो अब आयत के मायने ये हो गये कि अल्लाह तआ़ला ने ज़मीन को ज़ाहिरी और बातिनी तौर पर दुरुस्त फ़रमा दिया है, अब तुम इसमें अपने गुनाहों और नाफ़रमानियों के ज़रिये फ़साद न मचाओ, और ख़राबी पैदा न करो।

ज़मीन की दुरुस्ती और ख़राबी क्या है और लोगों के गुनाहों का इसमें क्या दख़ल है

जिस तरह इस्लाह (दुरुस्त करने) की दो क़िस्में ज़ाहिरी और बातिनी हैं इसी तरह फ़साद की भी दो क़िस्में हैं। ज़मीन की ज़ाहिरी इस्लाह तो यह है कि अल्लाह तआ़ला ने इसको ऐसा जिस्म बनाया है कि न पानी की तरह नर्म है जिस पर ठहराव न हो सके, और न पत्थर लोहे की तरह सख़्त है जिसको खोदा न जा सके। एक दरमियानी हालत में रखा गया है, ताकि इनसान इसको नर्म करके इसमें खेती, पेड़-पौधे और फूल-फल उगा सके, और खोदकर इसमें कुएँ और ख़न्दक़ें, नहरें बना सके। मकानात की बुनियादें मज़बूत कर सके। फिर इस ज़मीन के अन्दर और बाहर ऐसे सामान पैदा फ़रमा दिये जिनसे ज़मीन की आबादी हो, इसमें सब्ज़ी और दरख़्त और फल फूल उग सकें। बाहर से हवा, रोशनी, गर्मी, सर्दी पैदा की, और फिर बादलों के ज़रिये इस पर पानी बरसाया जिससे दरख़्त पैदा हो सकें। विभिन्न सितारों और सय्यारों की सर्द-गर्म किरणें उन पर डाली गयीं, जिनसे फूलों फलों में रंग और रस भरे गये। इनसान को समझ व अ़क्ल अ़ता की गयी, जिसके ज़रिये उसने ज़मीन से निकलने वाले कच्चे मैटेरियल लकड़ी, लोहा, ताँबा, पीतल, एलुमिनियम वग़ैरह के जोड़-तोड़ लगाकर तैयार की जाने वाली चीज़ों की एक नई दुनिया बना डाली। यह सब ज़मीन की ज़ाहिरी इस्लाह (सुधार व दुरुस्ती) है जो हक़ तआ़ला ने अपनी कामिल क़ुदरत से फ़रमाई।

और बातिनी व रूहानी इस्लाह का मदार अल्लाह के ज़िक्र, अल्लाह के साथ ताल्लुक़ और उसकी इताअ़त पर है। इसलिये अल्लाह तआ़ला ने अव्वल तो हर इनसान के दिल में एक माद्दा और जज़्बा ख़ुदा की इताअ़त (फ़रमाँबरदारी) और याद का रख दिया है। फ़रमायाः

فَأَلْهَمَهَا فُجُورَهَا وَتَقْوٰهَا.

और इनसान के आस-पास के हर ज़र्रे-ज़र्रे में अपनी कामिल क़ुदरत और अ़जीब कारीगरी के ऐसे नमूने रखे कि उनको देखकर मामूली समझ व अ़क्ल रखने वाला भी बोल उठे कि वाक़ई अल्लाह की ज़ात क्या ही ख़ूब बनाने और पैदा करने वाली है।

इसके अ़लावा अपने रसूल भेजे, किताबें नाज़िल फ़रमायीं, जिनके ज़रिये मख़्लूक़ का रिश्ता ख़ालिक़ के साथ जोड़ने का पूरा इन्तिज़ाम फ़रमाया।

इस तरह गोया ज़मीन की मुकम्मल इस्लाह ज़ाहिरी और बातिनी हो गयी, अब हुक्म यह है

कि हमने इस ज़मीन को दुरुस्त कर दिया है तुम इसको ख़राब न करो।

जिस तरह इस्लाह (दुरुस्त करने और सुधारने) की दो क़िस्में ज़ाहिरी और बातिनी बयान की गयी हैं इसी तरह इसके मुक़ाबले में फ़साद (बिगाड़ और ख़राबी) की भी दो क़िस्में ज़ाहिरी और बातिनी हैं, और अल्लाह के इस इरशाद के ज़रिये दोनों ही की मनाही की गयी है।

अगरचे क़ुरआन और रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का असल वज़ीफ़ा और फ़र्ज़े मन्सबी बातिनी सुधार है, और इसके मुक़ाबिल बातिनी फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) से रोकना है, लेकिन इस दुनिया में ज़ाहिर व बातिन की बेहतरी व ख़राबी में एक ऐसा ताल्लुक़ है कि एक का फ़साद (ख़राबी) दूसरे के फ़साद का कारण बन जाता है। इसलिये क़ुरआनी क़ानून व हिदायत ने जिस तरह बातिनी फ़साद के दरवाज़े बन्द किये हैं इसी तरह ज़ाहिरी फ़साद को भी मना फ़रमाया। चोरी, डाका, क़त्ल और बेहयाई के तमाम तरीक़े दुनिया में ज़ाहिरी और बातिनी हर तरह का फ़साद पैदा करते हैं, इसलिये इन चीज़ों पर विशेष रूप से पाबन्दियाँ और सख़्त सज़ायें मुक़र्रर फ़रमाईं, और आम गुनाहों और अपराधों को भी मना (वर्जित और प्रतिबन्धित) क़रार दिया है। क्योंकि हर जुर्म व गुनाह कहीं ज़ाहिरी फ़साद का सबब होता है कहीं बातिनी फ़साद का, और अगर ग़ौर से देखा जाये तो हर ज़ाहिरी फ़साद बातिनी फ़साद का सबब बनता है, और हर बातिनी फ़साद ज़ाहिरी फ़साद का कारण होता है।

ज़ाहिरी फ़साद का बातिनी हालत के लिये वजह व सबब होना तो इसलिये ज़ाहिर है कि वह अल्लाह के अहकाम की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है, और ख़ुदा तआ़ला की नाफ़रमानी ही का दूसरा नाम फ़सादे बातिनी है। अलबत्ता फ़सादे बातिनी किस तरह फ़सादे ज़ाहिरी का सबब बनता है इसका पहचानना किसी क़द्र ग़ौर व फ़िक्र का मोहताज है। वजह यह है कि यह सारा जहान और इसकी हर छोटी-बड़ी चीज़ सब रब्बुल-आ़लमीन की बनाई हुई और उसके फ़रमान के ताबे है। जब तक इनसान अल्लाह तआ़ला के फ़रमान के ताबे रहता है तो ये सब चीज़ें इनसान की सही-सही ख़िदमतगार होती हैं, और जब इनसान अल्लाह तआ़ला की नाफ़रमानी करने लगे तो दुनिया की सारी चीज़ें अन्दर ही अन्दर इनसान की नाफ़रमान हो जाती हैं, जिसको बज़ाहिर इनसान अपनी आँख से नहीं देखता लेकिन उन चीज़ों के आसार व विशेषता और परिणाम व फ़ायदों में ग़ौर करने से आसानी से इसका सुबूत मिल जाता है।

ज़ाहिर में तो दुनिया की ये सारी चीज़ें इनसान के इस्तेमाल में रहती हैं। पानी उसके हलक़ में उतरे तो प्यास बुझाने से इनकार नहीं करता, खाना उसकी भूख दूर करने से नहीं रुकता, लिबास और मकान उसकी सर्दी गर्मी के आराम मुहैया करने से इनकार नहीं करता।

लेकिन परिणाम और नतीजों को देखा जाये तो यूँ मालूम होता है कि इनमें से कोई चीज़ अपना काम पूरा नहीं कर रही। क्योंकि असल मक़सद इन तमाम चीज़ों और इनके इस्तेमाल का यह है कि इनसान को आराम व राहत मयस्सर आये, उसकी परेशानी और तकलीफ़ दूर हो और बीमारियों को शिफ़ा हो।

अब दुनिया के हालात पर नज़र डालिये तो मालूम होगा कि आजकल राहत और शिफ़ा के

सामान की हद से ज़्यादा अधिकता के बावजूद इनसानों की अक्सरियत इन्तिहाई परेशानियों और बीमारियों का शिकार है। नये-नये रोग, नई-नई मुसीबतें बरस रही हैं। कोई बड़े से बड़ा इनसान अपनी जगह मुत्मईन और आराम से नहीं है, बल्कि जैसे-जैसे ये सामान बढ़ते जाते हैं उसी अन्दाज़ से मुसीबतें व आफ़तें और रोग व परेशानियाँ बढ़ती जाती हैं।

मर्ज़ बढ़ता गया जूँ-जूँ दवा की

आज का इनसान जिसको ऊर्जा व भाप और दूसरी माद्दी रंगीनियों ने क़ाबू में कर रखा है, ज़रा इन चीज़ों से ऊपर उठकर सोचे तो उसको मालूम होगा कि हमारी सारी कोशिशें और सारी बनाई हुई चीज़ें व ईजादात हमारे असल मक़सद यानी इत्मीनान व राहत के हासिल करने में फ़ेल और नाकाम हैं। इसकी वजह सिवाय इस मानवी और बातिनी सबब के नहीं है कि हमने अपने रब और मालिक की नाफ़रमानी इख़्तियार की तो उसकी मख़्लूक़ात ने मानवी तौर पर (यानी अन्दर ही अन्दर) हम से नाफ़रमानी शुरू कर दी।

चूँ अज़ो गश्ती हमा चीज़ अज़ तू गश्त

यानी जब तू उसका नाफ़रमान बन गया, तूने उससे मुँह मोड़ लिया तो दुनिया की तमाम चीज़ों ने तुझसे नाता तोड़ लिया, सब ने तेरा साथ छोड़ दिया। **(मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

कि हमारे लिये असली आराम व राहत मुहैया नहीं करती। मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने ख़ूब फ़रमाया है:

ख़ाक व बाद व आब व आतिश बन्दा अन्द
बा मन व तू मुर्दा, बा हक़ ज़िन्दा अन्द

(यानी आग पानी मिट्टी हवा सब अपने काम में लगे हुए हैं। अगरचे ये हमें बेजान और मुर्दा नज़र आते हैं मगर अल्लाह तआ़ला ने इनके मुनासिब इन सब को ज़िन्दगी और एहसास दिया है। **मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी)**

दुनिया की ये सब चीज़ें अगरचे ज़ाहिर में बेजान व बेशऊर नज़र आती हैं मगर हक़ीक़त में इतना शऊर व समझ इनमें भी है कि मालिक के फ़रमान के ताबे काम करती हैं।

ख़ुलासा-ए-कलाम यह है कि जब ग़ौर से देखा जाये तो हर गुनाह और ख़ुदा तआ़ला से ग़फ़लत और उसकी हर नाफ़रमानी दुनिया में न सिर्फ़ बातिनी फ़साद पैदा करती है बल्कि ज़ाहिरी फ़साद भी उसका लाज़िमी फल होता है।

और यह कोई शायराना और काल्पनिक सोच नहीं, बल्कि वह हक़ीक़त है जिस पर क़ुरआन व हदीस गवाह हैं, लेकिन सज़ा का हल्का सा नमूना इस दुनिया में बीमारियों, वबाओं, तूफ़ानों, सैलाबों की सूरत में सामने आता रहता है। इसलिये:

وَلَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا.

के मफ़्हूम में जैसे वे अपराध और गुनाह दाख़िल हैं जिनसे ज़ाहिरी तौर पर दुनिया में फ़साद पैदा होता है इसी तरह हर नाफ़रमानी और ख़ुदा तआ़ला से ग़फ़लत व नाफ़रमानी भी इसमें शामिल है, इसी लिये उक्त आयत में इसके बाद फ़रमाया:

وَادْعُوْهُ خَوْفًا وَّطَمَعًا.

कि अल्लाह तआला को पुकारो ख़ौफ़ और उम्मीद के साथ। यानी इस तरह कि एक तरफ़ दुआ के नाक़ाबिले क़ुबूल होने का ख़ौफ़ लगा हो और दूसरी तरफ़ उसकी रहमत से पूरी उम्मीद भी लगी हुई हो, और यही उम्मीद व ख़ौफ़ सही रास्ते पर जमे रहने में इनसानी रूह के दो बाज़ू हैं, जिनसे वह परवाज़ करती और ऊँचे दर्जे हासिल करती है।

और इस इबादत से यह ज़ाहिर है कि उम्मीद व ख़ौफ़ दोनों बराबर दर्जे में होने चाहियें। और कुछ उलेमा ने फ़रमाया कि मुनासिब यह है कि ज़िन्दगी और तन्दुरुस्ती के ज़माने में ख़ौफ़ को ग़ालिब रखे, ताकि इताअ़त में कोताही न हो, और जब मौत का वक़्त क़रीब आये तो उम्मीद को ग़ालिब रखे, क्योंकि अब अ़मल की ताक़त रुख़्सत हो चुकी है, रहमत की उम्मीद ही उसका अ़मल रह गया है। (बहरे मुहीत)

और कुछ मुहक़्क़िक़ उलेमा ने फ़रमाया कि असल मक़सद दीन के सही रास्ते पर क़ायम रहना और अल्लाह तआला की फ़रमाँबरदारी पर जमना और पाबन्दी करना है, और इनसानों के मिज़ाज व तबीयतें अलग-अलग होती हैं, किसी को ख़ौफ़ की ज़्यादती से यह जमाव और पाबन्दी का मक़ाम हासिल होता है, किसी को मुहब्बत की अधिकता और उम्मीद से, सो जिसको जिस हालत से इस मक़सद में मदद मिले उसको हासिल करने की फ़िक्र करे।

ख़ुलासा यह है कि दुआ के दो आदाब इससे पहली आयत में बतलाये गये- एक आजिज़ी और गिड़गिड़ाने के साथ होना, दूसरे पोशीदा तौर पर और आहिस्ता होना। ये दोनों सिफ़तें इनसान के ज़ाहिरी बदन से संबन्धित हैं, क्योंकि गिड़गिड़ाने से मुराद यह है कि अपनी दुआ के वक़्त अपनी शक्ल व हालत आजिज़ी और फ़क़ीरी वाली बना ले, तकब्बुर व घमण्ड वाली और लापरवाही वाली न हो, और पोशीदा होने का ताल्लुक़ भी मुँह और ज़ुबान से है।

इस आयत में दुआ के लिये दो आदाब बातिनी और बतलाये गये, जिनका ताल्लुक़ इनसान के दिल से है। वो यह कि दुआ करने वाले के दिल में इसका ख़तरा भी होना चाहिये कि शायद मेरी दुआ क़ुबूल न हो, और उम्मीद भी होनी चाहिये कि मेरी दुआ क़ुबूल हो सकती है, क्योंकि अपनी ख़ताओं और गुनाहों से बेफ़िक्र हो जाना भी ईमान के ख़िलाफ़ है, और अल्लाह तआला की वसीअ़ रहमत से मायूस हो जाना भी कुफ़्र है। दुआ की क़ुबूलियत की तब ही उम्मीद की जा सकती है जबकि इन दोनों हालतों के बीच-बीच रहे।

फिर आयत के आख़िर में फ़रमायाः

اِنَّ رَحْمَتَ اللّٰهِ قَرِيْبٌ مِّنَ الْمُحْسِنِيْنَ.

"यानी अल्लाह की रहमत क़रीब है नेक अ़मल करने वालों से।"

इसमें इशारा इस बात की तरफ़ है कि अगरचे दुआ के वक़्त ख़ौफ़ और उम्मीद दोनों ही हालतें होनी चाहियें, लेकिन इन दोनों हालतों में से उम्मीद ही की हालत वरीयता प्राप्त है, क्योंकि रब्बुल-आ़लमीन और तमाम रहम करने वालों से ज़्यादा रहम करने वाले के करम व एहसान में न

कोई कमी है न कन्जूसी। वह बुरे से बुरे इनसान बल्कि शैतान की भी दुआ़ क़ुबूल कर सकता है, हाँ अगर क़ुबूल न होने का कोई ख़तरा हो सकता है तो वह अपने बुरे आमाल और गुनाहों की नहूसत से हो सकता है, क्योंकि अल्लाह तआ़ला की रहमत के क़रीब होने के लिये नेक अ़मल वाला होना दरकार है।

इसी लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि कुछ आदमी लम्बे-लम्बे सफ़र करते हैं, और अपनी शक्ल व सूरत फ़क़ीराना बनाते हैं, और अल्लाह के सामने दुआ़ के लिये हाथ फैलाते हैं, मगर उनका खाना भी हराम है और पीना भी हराम है और लिबास भी हराम का है, सो ऐसे आदमी की दुआ़ कहाँ क़ुबूल हो सकती है।

(मुस्लिम, तिर्मिज़ी, हज़रत अबू हुरैरह की रिवायत से)

और एक हदीस में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बन्दे की दुआ़ उस वक़्त तक क़ुबूल होती रहती है जब तक वह किसी गुनाह या रिश्ता व ताल्लुक़ तोड़ने की दुआ़ न करे, और जल्दबाज़ी न करे। सहाबा-ए-किराम ने मालूम किया कि जल्दबाज़ी का क्या मतलब है? आपने फ़रमाया- मतलब यह है कि यूँ ख़्याल कर बैठे कि मैं इतने समय से दुआ़ माँग रहा हूँ अब तक क़ुबूल नहीं हुई, यहाँ तक कि मायूस होकर दुआ़ छोड़ दे। (मुस्लिम, तिर्मिज़ी)

और एक हदीस में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- अल्लाह तआ़ला से जब दुआ़ माँगो तो इस हालत में माँगो कि तुम्हें उसके क़ुबूल होने में कोई शक न हो। मुराद यह है कि अल्लाह की रहमत की वुस्अ़त को सामने रखकर दिल को इस पर जमाओ कि मेरी दुआ़ ज़रूर क़ुबूल होगी। यह इसके ख़िलाफ़ नहीं कि अपने गुनाहों की नहूसत के सबब यह ख़तरा भी महसूस करे कि शायद मेरे गुनाह दुआ़ के क़ुबूल होने में आड़े आ जायें। व सल्लल्लाहु तआ़ला अ़ला नबिय्यिना व सल्ल-म।

وَهُوَ الَّذِىْ يُرْسِلُ الرِّيٰحَ بُشْرًاۢ بَيْنَ يَدَىْ رَحْمَتِهٖ ؕ حَتّٰۤى اِذَاۤ اَقَلَّتْ سَحَابًا ثِقَالًا سُقْنٰهُ لِبَلَدٍ مَّيِّتٍ فَاَنْزَلْنَا بِهِ الْمَآءَ فَاَخْرَجْنَا بِهٖ مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ ؕ كَذٰلِكَ نُخْرِجُ الْمَوْتٰى لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ ۝ وَالْبَلَدُ الطَّيِّبُ يَخْرُجُ نَبَاتُهٗ بِاِذْنِ رَبِّهٖ ۚ وَالَّذِىْ خَبُثَ لَا يَخْرُجُ اِلَّا نَكِدًا ؕ كَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّشْكُرُوْنَ ۝

व हुवल्लज़ी युरसिलुर्रिया-ह बुश्रम् बै-न यदै रह्मतिही, हत्ता इज़ा अक़ल्लत् सहाबन् सिक़ालन् सुक़्नाहु लि-ब-लदिम् मय्यितिन् फ़-अन्ज़ल्ना	और वही है कि चलाता है हवायें ख़ुशख़बरी लाने वाली बारिश से पहले यहाँ तक कि जब वो हवायें उठा लाती हैं भारी बादलों को तो हाँक देते हैं हम उस बादल को एक मुर्दा शहर की तरफ़, फिर

बिहिल्मा-अ फ़अख़्रज्ना बिही मिन् कुल्लिस्स-मराति, कज़ालि-क नुख़्रिजुल्मौता लअ़ल्लकुम् तज़क्करून (57) वल्ब-लदुत्-तय्यिबु यख़्रुजु नबातुहू बि-इज़्नि रब्बिही वल्लज़ी ख़बु-स ला यख़्रुजु इल्ला नकिदन्, कज़ालि-क नुसर्रिफ़ुल्-आयाति लिक़ौमिंय्यश्कुरून (58) ✿	हम उतारते हैं उस बादल से पानी फिर उससे निकलते हैं सब तरह के फल, इसी तरह हम निकालेंगे मुर्दों को ताकि तुम ग़ौर करो। (57) और जो शहर पाकीज़ा है उसका सब्ज़ा निकालता है उसके रब के हुक्म से, और जो ख़राब है उसमें नहीं निकलता मगर नाक़िस, यूँ फेर-फेरकर बतलाते हैं हम आयतें हक़ मानने वाले लोगों को। (58) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और वह (अल्लाह) ऐसा है कि अपनी रहमत की बारिश से पहले हवाओं को भेजता है कि वो (बारिश की उम्मीद दिलाकर दिल को) ख़ुश कर देती हैं, यहाँ तक कि जब वो हवाएँ भारी बादलों को उठा लेती हैं तो हम उस बादल को किसी सूखी ज़मीन की तरफ़ हाँक ले जाते हैं, फिर उस बादल से पानी बरसाते हैं, फिर उस पानी से हर क़िस्म के फल निकालते हैं, (जिससे अल्लाह तआ़ला की तौहीद और बेपनाह क़ुदरत मुर्दों को ज़िन्दा करने की साबित होती है। इसलिये फ़रमाया) यूँ ही (क़ियामत के दिन) हम मुर्दों को (ज़मीन से) निकाल खड़ा कर देंगे। (यह सब इसलिये सुनाया) ताकि तुम समझो (और क़ुरआन और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हिदायत अगरचे सब के लिये आ़म है मगर इससे फ़ायदा उठाने वाले कम लोग होते हैं। इसकी मिसाल इसी बारिश से समझ लो कि बारिश तो हर ज़मीन पर बरसती है, मगर खेती और दरख़्त हर जगह नहीं पैदा होते, सिर्फ़ उन ज़मीनों में पैदा होते हैं जिनमें सलाहियत है। इसी लिये फ़रमाया कि) और जो ज़मीन सुथरी होती है उसकी पैदावार तो ख़ुदा के हुक्म से ख़ूब निकलती है, और जो ख़राब है उसकी पैदावार (अगर निकली भी) तो बहुत कम निकलती है। इसी तरह हम (हमेशा) दलीलों को तरह-तरह से बयान करते रहते हैं, (मगर वो सब) उन लोगों के लिए (नफ़ा देने वाली होती हैं) जो (उनकी) क़द्र करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पहले बयान हुई आयतों में हक़ तआ़ला ने अपनी ख़ास-ख़ास और बड़ी-बड़ी नेमतों का ज़िक्र फ़रमाया है, जिसमें आसमान ज़मीन, रात दिन, चाँद सूरज और आ़म सितारों की पैदाईश और उनका इनसान की ज़रूरतें मुहैया करने और उसकी ख़िदमत में लगे रहने का तज़किरा करके इस पर तंबीह फ़रमाई है कि जब हमारी सारी ज़रूरतों और सारी राहतों का सामान करने

वाली एक पाक ज़ात है, तो हर हाजत व ज़रूरत में हमें दुआ व दरख़्वास्त भी उसी से करनी चाहिये, और उसी की तरफ़ रुजू करने को अपने लिये कामयाबी की कुंजी समझना चाहिये।

उपर्युक्त आयतों में से पहली आयत में भी इसी क़िस्म की अहम और बड़ी नेमतों का ज़िक्र है, जिस पर इनसान और ज़मीन की तमाम मख़्लूक़ात की ज़िन्दगी व बक़ा का मदार है। मसलन बारिश और उससे पैदा होने वाले दरख़्त और खेतियाँ, तरकारियाँ वग़ैरह, फ़र्क़ यह है कि पिछली आयतों में उन नेमतों का ज़िक्र था, जो ऊपर के जहान से संबन्धित हैं, और इसमें उन नेमतों का तज़किरा है जो नीचे के जहान से संबन्धित हैं। (बहरे मुहीत)

और दूसरी आयत में एक ख़ास बात यह बतलाई गयी है कि हमारी ये अ़ज़ीमुश्शान नेमतें अगरचे ज़मीन के हर हिस्से पर आ़म हैं, बारिश जब बरसती है तो दरिया पर भी बरसती है पहाड़ पर भी, बंजर और ख़राब ज़मीन और उम्दा और बेहतर ज़मीन सब पर बराबर बरसती है, लेकिन खेती, दरख़्त, सब्ज़ी सिर्फ़ उसी ज़मीन में पैदा होती है जिसमें उगाने की सलाहियत है, पथरीली ज़मीनें उस बारिश के फ़ैज़ से लाभान्वित नहीं होतीं।

पहली आयत से यह नतीजा निकाल कर बतलाया गया कि जो पाक ज़ात मुर्दा ज़मीन में फलने-फूलने और उगाने की ज़िन्दगी अ़ता फ़रमा देती है, उसके लिये यह क्या मुश्किल है कि जो इनसान पहले से ज़िन्दा थे फिर मर गये, उनमें दोबारा ज़िन्दगी पैदा फ़रमा दे, इसी नतीजे को इस आयत में वाज़ेह तौर पर बतलाया दिया गया। और दूसरी आयत से यह नतीजा निकाला गया कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से आने वाली हिदायत, आसमानी किताबें और अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम, फिर उनके नायब उलेमा व बुज़ुर्गों की तालीम व तरबियत भी बारिश की तरह हर इनसान के लिये आ़म है, मगर जिस तरह रहमत की बारिश से हर ज़मीन फ़ायदा नहीं उठाती, इसी तरह इस रूहानी बारिश का फ़ायदा भी सिर्फ़ वही लोग हासिल करते हैं जिनमें यह सलाहियत है, और जिन लोगों के दिल पथरीली या रेतीली ज़मीन की तरह उगाने और उपज की क़ाबलियत नहीं रखते वे तमाम स्पष्ट हिदायतों और खुली निशानियों के बावजूद अपनी गुमराही पर जमे रहते हैं।

इस नतीजे की तरफ़ दूसरी आयत के आख़िरी जुमले से इरशाद फ़रमायाः

كَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّشْكُرُوْنَ.

यानी हम इसी तरह अपनी दलीलों (निशानियों) को तरह-तरह से बयान करते हैं उन लोगों के लिये जो क़द्र करते हैं। मतलब यह है कि अगरचे वास्तव में यह बयान तो सब ही के लिये था मगर नतीजे के तौर पर मुफ़ीद होना उन्हीं लोगों के लिये साबित हुआ जिनमें इसकी सलाहियत है, और वे इसकी क़द्र व मर्तबा पहचानते हैं। इस तरह ज़िक्र हुई दो आयतें आग़ाज़ व अन्जाम के अहम मसाईल पर मुश्तमिल हो गयीं। अब इन दोनों आयतों को तफ़सील के साथ समझने के लिये सुनिये। पहली आयत में इरशाद हैः

وَهُوَالَّذِىْ يُرْسِلُ الرِّيٰحَ بُشْرًاۢ بَيْنَ يَدَىْ رَحْمَتِهٖ.

इसमें **रियाह** रीह की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं हवा, और **बुशरा** के मायने बशारत और ख़ुशख़बरी, और **रहमत** से मुराद रहमत की बारिश के हैं। यानी अल्लाह तआ़ला ही है जो भेजता है रहमत की बारिश से पहले हवायें ख़ुशख़बरी देने के लिये।

मतलब यह है कि अल्लाह का आ़म क़ानून और दस्तूर यह है कि बारिश से पहले ऐसी ठण्डी हवायें भेजते हैं जिनसे ख़ुद भी इनसान को राहत व बशारत होती है, और वे गोया आने वाली बारिश की ख़बर भी पहले दे देती हैं। इसलिये ये हवायें दो नेमतों का मजमूआ़ हैं, ख़ुद भी इनसान और आ़म मख़्लूक़ात के लिये नाफ़े व मुफ़ीद हैं, और बारिश के आने से पहले बारिश की ख़बर भी दे देती हैं। क्योंकि इनसान एक लतीफ़ और नाज़ुक मख़्लूक़ है कि उसकी बहुत सी ज़रूरतें बारिश की वजह से बन्द हो जाती हैं, जब बारिश की इत्तिला कुछ पहले मिल जाये तो वह अपना इन्तिज़ाम कर लेता है, इसके अ़लावा ख़ुद उसका वजूद और उसका सामान बारिश को बरदाश्त करने वाला नहीं, वह बारिश की निशानियाँ देखकर अपने सामान और अपनी जान की हिफ़ाज़त का सामान कर लेता है।

इसके बाद फ़रमायाः

حَتّٰٓى اِذَآ اَقَلَّتْ سَحَابًا ثِقَالًا.

सहाब के मायने बादल और **सिक़ाल** सक़ील की जमा (बहुवचन) है, जिसके मायने हैं भारी। यानी जब वे हवायें भारी बादलों को उठा लेती हैं, भारी बादलों से मुराद पानी से भरे हुए बादल हैं, जो हवा के कन्धों पर सवार होकर ऊपर जाते हैं, और इस तरह यह हज़ारों मन का वज़नी पानी हवा पर सवार होकर ऊपर पहुँच जाता है। और हैरत-अंगेज़ बात यह है कि न उसमें कोई मशीन काम करती है न कोई इनसान उसमें मेहनत करता है, जब अल्लाह तआ़ला का हुक्म हो जाता है तो ख़ुद-बख़ुद दरिया से बुख़ारात (मानसून) उठना शुरू हो जाते हैं और ऊपर जाकर बादल बनता है, और यह हज़ारों बल्कि लाखों गेलन पानी से भरा हुआ जहाज़ अपने आप हवा के कन्धे पर सवार होकर आसमान की तरफ़ चढ़ता है।

इसके बाद फ़रमायाः

سُقْنٰهُ لِبَلَدٍ مَّيِّتٍ.

सौक़ के मायने किसी जानवर को हाँकने और चलाने के हैं। और **बलद्** के मायने शहर और बस्ती के हैं, **मय्यित** के मायने मुर्दा।

मायने यह हैं कि "जब हवाओं ने भारी बादलों को उठा लिया तो हमने उन बादलों को हाँक दिया एक मरे हुए शहर की तरफ़।"

मरे हुए शहर में मुराद वह बस्ती है जो पानी न होने के सबब वीरान हो रही है। और इस जगह बजाय आ़म ज़मीन के ख़ुसूसियत से शहर और बस्ती का ज़िक्र करना इसलिये मुनासिब मालूम हुआ कि बिजली व बारिश और उनसे ज़मीन को सैराब करने से असल मक़सद इनसान की ज़रूरतें मुहैया करना है जिसका ठिकाना और रहने की जगह शहर है, वरना जंगल की

सरसब्ज़ी (हरा-भरा बनाना) ख़ुद कोई मक़सद नहीं।

यहाँ तक उक्त आयत के मज़मून से चन्द अहम चीज़ें साबित हुईं- अव्वल यह कि बारिश बादलों से बरसती है जैसा कि देखा जाता है। इससे मालूम हुआ कि जिन आयतों में आसमान से बारिश बरसना मज़कूर है, वहाँ भी आसमान लफ़्ज़ से बादल मुराद है, और यह भी कुछ बईद नहीं कि किसी वक़्त दरियाई मानसून के बजाय डायरेक्ट आसमान से बादल पैदा हो जायें और उनसे बारिश हो जाये।

दूसरे यह कि बादलों का किसी ख़ास दिशा और ख़ास ज़मीन की तरफ़ जाना यह डायरेक्ट अल्लाह के हुक्म से जुड़ा है, वह जब चाहते हैं जहाँ चाहते हैं जिस क़द्र चाहते हैं बारिश बरसाने का हुक्म दे देते हैं, बादल अल्लाह के फ़रमान की तामील (पालन) करते हैं।

इसका नज़ारा और अनुभव हर जगह इस तरह होता रहता है कि बहुत सी बार किसी शहर या बस्ती पर बादल छाया रहता है, और वहाँ बारिश की ज़रूरत भी होती है लेकिन वह बादल वहाँ एक क़तरा पानी का नहीं देता, बल्कि जिस शहर या बस्ती का कोटा अल्लाह के हुक्म से मुक़र्रर हो चुका है वहीं जाकर बरसता है। किसी की मजाल नहीं कि उस शहर के अलावा किसी और जगह उस बादल का पानी हासिल कर ले।

पुराने और नये फ़लासफ़ा (वैज्ञानिकों) ने मानसून और हवाओं की हरकत के लिये कुछ नियम और उसूल निकाल रखे हैं जिनके ज़रिये वे बतला देते हैं कि फ़ुलाँ मानसून जो फ़ुलाँ समन्दर से उठा है किस तरफ़ जायेगा, कहाँ जाकर बरसेगा, कितना पानी बरसायेगा। आम मुल्कों में मौसम विभाग इसी क़िस्म की मालूमात मुहैया करने के लिये क़ायम किये जाते हैं, लेकिन तजुर्बा गवाह है कि मौसम विभाग की दी हुई ख़बरें ज़्यादातर ग़लत हो जाती हैं, और जब अल्लाह का हुक्म उनके ख़िलाफ़ होता है तो उनके सारे उसूल और क़ायदे धरे रह जाते हैं। हवायें और मानसून अपना रुख़ उनकी दी हुई ख़बरों के ख़िलाफ़ किसी दूसरी दिशा की तरफ़ फेर लेती हैं और मौसम विभाग महकमे देखते रह जाते हैं।

इसके अलावा जो उसूल व क़ायदे हवाओं की हरकत के लिये फ़लॉस्फ़ा (वैज्ञानिकों) ने तजवीज़ किये हैं वो भी कुछ इसके विरुद्ध नहीं हैं कि बादलों का उठना और चलना-फिरना अल्लाह के फ़रमान के ताबे है, क्योंकि अल्लाह तआ़ला का क़ानून इस आ़लम के तमाम कारोबार में यही है कि अल्लाह का हुक्म असबाब (संसाधनों) के पर्दों में ज़ाहिर होता है, उन तबई असबाब से इनसान कोई उसूल व क़ायदा बना लेता है, वरना हक़ीक़त वही है जो हाफ़िज़ शीराज़ी रह. ने बतलाई है कि:

कारे ज़ुल्फ़े तुस्त मुश्क अफ़शानी अम्मा आ़शिक़ाँ
मस्लेहत रा तोहमते बर आहू-ए-चीं बस्ता अन्द

मुश्क से ख़ुशबू बिखेरना यह तेरी क़ुदरत की कारीगरी है मगर कुछ कम-नज़र और हक़ीक़त से नावाक़िफ़ लोग चीन के हिरण की तरफ़ इसकी निस्बत करते हैं।

मुहम्मद इमरान क़ासमी बिज्ञानवी

इसके बाद इरशाद फ़रमायाः

فَاَنْزَلْنَا بِهِ الْمَآءَ فَاَخْرَجْنَا بِهٖ مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ.

यानी हमने उस मुर्दा शहर में पानी बरसाया फिर उस पानी से हर क़िस्म के फल-फूल निकाले।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

كَذٰلِكَ نُخْرِجُ الْمَوْتٰى لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُوْنَ.

"यानी हम इसी तरह निकालेंगे मुर्दों को क़ियामत के दिन, शायद तुम समझो।"

मतलब यह है कि जिस तरह हमने मुर्दा ज़मीन को ज़िन्दा किया और उसमें से दरख़्त और फल-फूल निकाले इसी तरह क़ियामत के दिन मुर्दों को दोबारा ज़िन्दा करके निकाल खड़ा करेंगे। और ये मिसालें हमने इसलिये बयान की हैं कि तुम्हें सोचने और ग़ौर करने का मौक़ा मिले।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- क़ियामत में सूर दो मर्तबा फूँका जायेगा- पहले सूर पर तमाम आ़लम फ़ना हो जायेगा, कोई चीज़ ज़िन्दा बाक़ी न रहेगी, और दूसरे सूर पर फिर नये सिरे से नया आ़लम पैदा होगा और सब मुर्दे ज़िन्दा हो जायेंगे। उक्त हदीस में है कि इन दोनों मर्तबा के सूर के बीच चालीस साल का फ़ासला होगा, और उन चालीस सालों में लगातार बारिश होती रहेगी। इसी अ़रसे में हर मुर्दा इनसान और जानवर के बदन के हिस्से (अंग) उसके साथ जमा करके हर एक का मुकम्मल ढाँचा बन जायेगा, और फिर दूसरी मर्तबा सूर फूँकने के वक़्त उन लाशों के अन्दर रूह आ जायेगी, और ज़िन्दा होकर खड़े हो जायेंगे। इस रिवायत का अक्सर हिस्सा बुख़ारी व मुस्लिम में मौजूद है, कुछ हिस्से अबू दाऊद की किताबुल-बअ़स से लिये गये हैं। दूसरी आयत में इरशाद हैः

وَالْبَلَدُ الطَّيِّبُ يَخْرُجُ نَبَاتُهٗ بِاِذْنِ رَبِّهٖ وَالَّذِىْ خَبُثَ لَا يَخْرُجُ اِلَّا نَكِدًا.

नकिद कहते हैं उस चीज़ को जो बेफ़ायदा भी हो और फिर मात्रा में भी कम हो। मायने यह हैं कि अगरचे रहमत की बारिश का फ़ैज़ हर शहर हर ज़मीन पर बराबर होता है, लेकिन परिणाम और फल के एतिबार से ज़मीन की दो क़िस्में होती हैं- एक उम्दा और अच्छी ज़मीन जिसमें उपजाऊ सलाहियत है, उसमें तो हर तरह के फूल-फल निकलते हैं और फ़ायदे हासिल होते हैं। दूसरी वह सख़्त या खारी ज़मीन जिसमें उगाने और फलने-फूलने की सलाहियत नहीं, उसमें अव्वल तो कुछ पैदा ही नहीं होता, फिर अगर कुछ हुआ भी तो वह बहुत कम मात्रा में होता है, और जितना पैदा होता है वह भी बेकार और ख़राब होता है।

आयत के आख़िर में इरशाद फ़रमायाः

كَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ يَّشْكُرُوْنَ.

"यानी हम अपनी क़ुदरत की दलीलें (निशानियाँ) तरह-तरह से बयान करते हैं, उन लोगों के लिये जो क़द्र करने वाले हैं।"

इसमें इशारा है कि अगरचे रहमत की बारिश के आ़म फ़ैज़ान की तरह अल्लाह की हिदायत और खुली निशानियों का फ़ैज़ (लाभ) भी सब ही इनसानों के लिये आ़म है, मगर जिस तरह हर ज़मीन बारिश से फ़ायदा नहीं उठाती इसी तरह हर इनसान अल्लाह की हिदायत से नफ़ा हासिल नहीं करता, बल्कि नफ़ा सिर्फ़ वे लोग हासिल करते हैं जो शुक्रगुज़ार और क़द्र पहचानने वाले हैं।

ल-क़द् अर्सल्ना नूहन् इला क़ौमिही फ़क़ा-ल या-क़ौमिअ़्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, इन्नी अख़ाफ़ु अ़लैकुम् अ़ज़ा-ब यौमिन् अ़ज़ीम (59) क़ालल्-म-लउ मिन् क़ौमिही इन्ना ल-नरा-क फ़ी ज़लालिम्-मुबीन (60) क़ा-ल या क़ौमि लै-स बी ज़लालतुंव्-व लाकिन्नी रसूलुम् मिर्रब्बिल्-आ़लमीन (61) उबल्लिग़ुकुम् रिसालाति रब्बी व अन्सहु लकुम् व अअ़्लमु मिनल्लाहि मा ला तअ़्लमून (62) अ-व अ़जिब्तुम् अन् जा-अकुम्	बेशक भेजा हमने नूह को उसकी क़ौम की तरफ़, पस उसने कहा ऐ मेरी क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई नहीं तुम्हारा माबूद उसके सिवा, मैं ख़ौफ़ करता हूँ तुम पर एक बड़े दिन के अ़ज़ाब से। (59) बोले सरदार उसकी क़ौम के- हम देखते हैं तुझको खुला बहका हुआ। (60) बोला ऐ मेरी क़ौम! मैं हरगिज़ बहका नहीं व लेकिन में भेजा हुआ हूँ जहान के परवर्दिगार का। (61) पहुँचाता हूँ तुमको पैग़ाम अपने रब के, और नसीहत करता हूँ तुमको और जानता हूँ अल्लाह की तरफ़ से वो बातें जो तुम नहीं जानते। (62) क्या तुमको ताज्जुब हुआ कि आई तुम्हारे पास नसीहत तुम्हारे रब की तरफ़ से एक मर्द की ज़ुबानी जो

ज़िक्रुम्-मिर्रब्बिकुम् अ़ला रजुलिम्-मिन्कुम् लियुन्ज़ि-रकुम् व लि-तत्तक़ू व लअ़ल्लकुम् तुर्हमून (63) फ़-कज़्ज़बूहु फ़-अन्जैनाहु वल्लज़ी-न म-अ़हू फ़िल्फ़ुल्कि व अग़रक़्नल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना, इन्नहुम् कानू क़ौमन् अ़मीन (64) ❁	तुम्हीं में से है, ताकि वह तुमको डराये और ताकि तुम बचो और ताकि तुम पर रहम हो। (63) फिर उन्होंने उसको झुठलाया, फिर हमने बचा लिया उसको और उनको जो कि उसके साथ थे कश्ती में, और ग़र्क़ कर दिया उनको जो झुठलाते थे हमारी आयतों को, बेशक वे लोग थे अन्धे। (64) ❁

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

हमने नूह (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) उनकी क़ौम की तरफ़ भेजा, सो उन्होंने (उस क़ौम से) फ़रमाया- ऐ मेरी क़ौम! तुम सिर्फ़ अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद होने के लायक़ नहीं (और बुतों की पूजा छोड़ दो जिनका नाम सूरः नूह में है 'वद्' और 'सवाअ़' और 'यग़ूस' और 'यऊक़' और 'नस्र') मुझको तुम्हारे लिए (मेरा कहना न मानने की सूरत में) एक बड़े (सख़्त) दिन के अ़ज़ाब का अन्देशा है (कि वह क़ियामत का दिन है या तूफ़ान का दिन)। उनकी क़ौम के आबरूदार "यानी समाज के बड़े और प्रमुख" लोगों ने कहा कि हम तुमको खुली ग़लती में (मुब्तला) देखते हैं (कि एक माबूद को मानने की तालीम कर रहे हो और अ़ज़ाब का डरावा दिखला रहे हो)। उन्होंने (जवाब में) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! मुझमें तो ज़रा भी ग़लती नहीं लेकिन (चूँकि) मैं परवर्दिगारे-आ़लम का (भेजा हुआ) रसूल हूँ (उसने मुझको तौहीद पहुँचाने का हुक्म किया है इसलिये अपनी ज़िम्मेदारी अदा करता हूँ कि) तुमको अपने परवर्दिगार के पैग़ाम (और अहकाम) पहुँचाता हूँ (और इस पहुँचाने में मेरी कोई दुनियावी ग़र्ज़ नहीं बल्कि केवल) तुम्हारी ख़ैर-ख़्वाही करता हूँ (क्योंकि एक अल्लाह पर ईमान लाने में तुम्हारा ही नफ़ा है) और (बड़े दिन के अ़ज़ाब से जो तुमको ताज्जुब होता है तो तुम्हारी ग़लती है क्योंकि) मैं ख़ुदा की तरफ़ से उन चीज़ों की ख़बर रखता हूँ जिनकी तुमको ख़बर नहीं (तो अल्लाह तआ़ला ने मुझको बतला दिया है कि ईमान न लाने से बड़े दिन का अ़ज़ाब वाक़े होगा)। और (तुमको जो मेरे रसूल होने पर मेरे इनसान होने की वजह से इनकार है जैसा कि सूरः मोमिनून में ख़ुलासा है:

مَا هٰذَآ اِلَّا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ يُرِيْدُ اَنْ يَّتَفَضَّلَ عَلَيْكُمْ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَاَنْزَلَ مَلٰٓئِكَةً ......الخ.

तो) क्या तुम इस बात से ताज्जुब करते हो कि तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से तुम्हारे पास एक ऐसे शख़्स के ज़रिये जो तुम्हारी ही जिन्स का (यानी इनसान) है कोई नसीहत की बात आ गई (वह नसीहत की बात यही है जो ऊपर बयान हुई कि ऐ मेरी क़ौम अल्लाह तआ़ला की

बन्दगी करो............) ताकि वह शख़्स तुमको (अल्लाह के हुक्म से अ़ज़ाब से) डराए और ताकि तुम (उसके डराने से) डर जाओ, और ताकि (डरने की वजह से सही राह की मुख़ालफ़त छोड़ दो जिससे) तुम पर रहम किया जाए।

सो (इस तमाम तंबीह और समझाने के बावजूद) वे लोग उनको झुठलाते ही रहे तो हमने उनको (यानी नूह अ़लैहिस्सलाम को) और जो लोग उनके साथ कश्ती में थे (तूफ़ान के अ़ज़ाब से) बचा लिया, और जिन लोगों ने हमारी आयतों को झुठलाया उनको हमने (तूफ़ान में) डुबो दिया, बेशक वे लोग अन्धे हो रहे थे (हक़ व ग़ैर-हक़ और नफ़ा नुक़सान कुछ न सूझता था)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

सूरः आराफ़ के शुरू से यहाँ तक उसूले इस्लाम तौहीद, रिसालत और आख़िरत का मुख़्तलिफ़ उनवानात और दलीलों से सुबूत और लोगों को पैरवी की तरग़ीब और उसकी मुख़ालफ़त पर वईद और तरहीब (सज़ा की धमकी और डरावा) और उसके तहत में शैतान के गुमराह करने वाले मक्र व फ़रेब का बयान था, अब आठवें रुकूअ़ से तक़रीबन सूरत के आख़िर तक चन्द अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों का ज़िक्र है जिसमें तमाम अम्बिया का मुत्तफ़िक़ा तौर पर ज़िक्र हुए उसूल (बुनियादी बातों) तौहीद, रिसालत और आख़िरत की तरफ़ अपनी-अपनी उम्मतों को दावत देना और मानने वालों के अज्र व सवाब और न मानने वालों पर तरह-तरह के अ़ज़ाब और उनके बुरे अन्जाम का मुफ़स्सल बयान तक़रीबन चौदह रुकूअ़ में आया है। जिसके अंतर्गत सैंकड़ों उसूली और फ़ुरूई (बुनियादी और उनसे निकलने वाले) मसाईल भी आ गये हैं और मौजूदा क़ौमों को पिछली क़ौमों के अन्जाम से इबरत (सबक़ और सीख) हासिल करने का मौक़ा उपलब्ध किया गया। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के लिये तसल्ली का सामान हो गया कि पहले सब रसूलों के साथ ऐसे ही मामलात होते रहे हैं।

उक्त आयतें सूरः आराफ़ का आठवाँ रुकूअ़ पूरा है। इसमें हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम और उनकी उम्मत के हालात और कही हुई बातों का बयान है।

नबियों के सिलसिले में सबसे पहले नबी अगरचे आदम अ़लैहिस्सलाम हैं लेकिन उनके ज़माने में कुफ़्र व गुमराही का मुक़ाबला न था, उनकी शरीअ़त में ज़्यादातर अहकाम भी ज़मीन की आबादकारी और इनसानी ज़रूरतों से संबन्धित थे। कुफ़्र और काफ़िर कहीं मौजूद न थे। कुफ़्र व शिर्क का मुक़ाबला हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम से शुरू हुआ, और रिसालत व शरीअ़त की हैसियत से दुनिया में वह सबसे पहले रसूल हैं। इसके अ़लावा तूफ़ान में पूरी दुनिया ग़र्क़ हो जाने के बाद जो लोग बाक़ी रहे वे हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम और उनके कश्ती के साथी थे, उन्हीं से नई दुनिया आबाद हुई, इसी लिये उनको आदमे असग़र (छोटा आदम) कहा जाता है। यही वजह है कि नबियों के क़िस्से का आग़ाज़ भी उन्हीं से किया गया है जिसमें साढ़े नौ सौ बरस की लम्बी उम्र में उनकी पैग़म्बराना जिद्दोजहद और उस पर उम्मत की अक्सरियत की गुमराही और उसके नतीजे में सिवाय थोड़े से मोमिनों के बाक़ी सब का ग़र्क़ होना बयान हुआ है। तफ़सील

इसकी यह है।

पहली आयत में इरशाद है:

لَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوْحًا اِلٰى قَوْمِهٖ.

नूह अ़लैहिस्सलाम आदम अ़लैहिस्सलाम की आठवीं पुश्त में हैं। मुस्तद्रक हाकिम में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि आदम अ़लैहिस्सलाम और नूह अ़लैहिस्सलाम के बीच दस क़र्न (ज़माने) गुज़रे हैं। और यही मज़मून तबरानी ने हज़रत अबूज़र रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से नक़ल किया है। (तफ़सीरे मज़हरी) क़र्न आम तौर पर एक सौ साल को कहा जाता है इसलिये इन दोनों के बीच इस रिवायत के मुताबिक़ एक हज़ार साल का अ़रसा हो गया। इब्ने जरीर ने नक़ल किया है कि नूह अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात से आठ सौ छब्बीस साल बाद हुई है और क़ुरआनी खुलासे के मुताबिक़ उनकी उम्र नौ सौ पचास साल हुई। और आदम अ़लैहिस्सलाम की उम्र की मुताल्लिक़ एक हदीस में है कि चालीस कम एक हज़ार साल है, इस तरह आदम अ़लैहिस्सलाम की पैदाईश से नूह अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात तक कुल दो हज़ार आठ सौ छप्पन साल हो जाते हैं। (1) (तफ़सीरे मज़हरी)

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम का असली नाम शाकिर और कुछ रिवायतों में सकन् और कुछ में अ़ब्दुल-ग़फ़्फ़ार आया है।

इसमें इख़्तिलाफ़ है कि उनका ज़माना हज़रत इदरीस अ़लैहिस्सलाम से पहले है या बाद में। अक्सर सहाबा का क़ौल यह है कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम इदरीस अ़लैहिस्सलाम से पहले हैं। (बहरे मुहीत)

मुस्तद्रक हाकिम में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मन्क़ूल है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया- नूह अ़लैहिस्सलाम को चालीस साल की उम्र में नुबुव्वत अ़ता हुई और तूफ़ान के बाद साठ साल ज़िन्दा रहे।

क़ुरआन की आयतः

لَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوْحًا اِلٰى قَوْمِهٖ.

से साबित है कि नूह अ़लैहिस्सलाम का भेजा जाना और नुबुव्वत सिर्फ़ अपनी क़ौम के लिये थी, सारी दुनिया के लिये आ़म न थी, और उनकी क़ौम इराक़ में आबाद बज़ाहिर सभ्य मगर

(1) यह मुद्दत तफ़सीरे मज़हरी (पेज 367 जिल्द 3) से ली गयी है, बज़ाहिर इसके हिसाब में ग़लती हुई है। खुद तफ़सीरे मज़हरी की बयान की हुई तफ़सील के अनुसार हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की उम्र 1050 साल हुई (क्योंकि 950 साल जो क़ुरआन में ज़िक्र हुए हैं वो नुबुव्वत के बाद और तूफ़ान से पहले की मुद्दत पर मुश्तमिल हैं। नुबुव्वत चालीस साल की उम्र में मिली और तूफ़ान के बाद भी वह साठ साल ज़िन्दा रहे) इस तरह कुल मुद्दत 2856 के बजाय 2836 बनती है, और अगर हज़रत नूह की कुल उम्र 1050 के बजाय 950 क़रार दी जाये जैसा कि तफ़सीर के लेखक ने ज़िक्र किया है तो कुल मुद्दत 2736 क़रार पाती है।

मुहम्मद तक़ी उस्मानी 12/07/1425 हिजरी

शिर्क में मुब्तला थी। हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम को जो दावत दी वह यह थीः

يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَالَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ. اِنِّيْ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيْمٍ.

यानी ऐ मेरी क़ौम! तुम अल्लाह तआ़ला की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद नहीं। मुझे तुम पर एक बड़े दिन के अ़ज़ाब का ख़तरा है।

इसके पहले जुमले में अल्लाह तआ़ला की इबादत की तरफ़ दावत है जो तमाम बुनियादों की बुनियाद है। दूसरे जुमले में शिर्क व कुफ़्र से परहेज़ करने की तालीम है जो उस क़ौम में वबा की तरह फैल गया था। तीसरे जुमले में उस बड़े अ़ज़ाब के ख़तरे से आगाह करना है जो ख़िलाफ़ वर्ज़ी की सूरत में उनको पेश आने वाला है। इस बड़े अ़ज़ाब से मुराद आख़िरत का अ़ज़ाब भी हो सकता है और दुनिया में तूफ़ान का अ़ज़ाब भी। (तफ़सीरे कबीर)

उनकी क़ौम ने इसके जवाब में कहाः

قَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِهٖٓ اِنَّا لَنَرٰىكَ فِيْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ.

लफ़्ज़ "म-ल-अ" क़ौम के सरदारों और बिरादरियों के चौधरियों के लिये बोला जाता है। मतलब यह है कि हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की इस दावत के जवाब में क़ौम के सरदारों ने कहा कि हम तो यह समझते हैं कि आप खुली गुमराही में पड़े हुए हैं कि हमारे बाप दादों के दीन से हमको निकालना चाहते हैं और क़ियामत में दोबारा ज़िन्दा होने और जज़ा व सज़ा पाने के ख़्यालात ये सब वहम हैं।

इस दिल को दुखाने वाली और जिगर को चीरने वाली गुफ़्तगू के जवाब में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम ने पैग़म्बराना लहजे में जो जवाब दिया वह इस्लाम के मुबल्लिग़ों (प्रचारकों) और सुधारकों के लिये एक अहम तालीम और हिदायत है कि उत्तेजित होने की बात पर उत्तेजित और ग़ज़बनाक होने के बजाय सादा लफ़्ज़ों में उनके शुब्हात को दूर फ़रमा रहे हैंः

قَالَ يٰقَوْمِ لَيْسَ بِيْ ضَلٰلَةٌ وَّلٰكِنِّيْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ. اُبَلِّغُكُمْ رِسٰلٰتِ رَبِّيْ وَاَنْصَحُ لَكُمْ وَاَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَالَا تَعْلَمُوْنَ.

यानी ऐ मेरी क़ौम! मुझमें कोई गुमराही नहीं, मगर बात यह है कि मैं तुम्हारी तरह बाप-दादा की जहालत भरी रस्मों का पाबन्द नहीं, बल्कि मैं रब्बुल-आ़लमीन की तरफ़ से रसूल हूँ, जो कुछ कहता हूँ अल्लाह की हिदायात से कहता हूँ और अल्लाह तआ़ला का पैग़ाम तुमको पहुँचाता हूँ जिसमें तुम्हारा ही भला है, न उसमें अल्लाह तआ़ला का कोई फ़ायदा और न मेरी कोई ग़र्ज़। इसमें रब्बुल-आ़लमीन का लफ़्ज़ शिर्क के अ़क़ीदे पर गहरी चोट है कि इसमें ग़ौर करने के बाद न कोई देवी और देवता ठहर सकता है न कोई यज़्दान व अहरमन। इसके बाद फ़रमाया कि तुमको जो क़ियामत के अ़ज़ाब में शंकायें हैं उसकी वजह तुम्हारी बेख़बरी और नावाक़फ़ियत है, मुझे अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से उसका यक़ीनी इल्म दिया गया है।

इसके बाद उनके दूसरे शुब्हे का जवाब है जो सूरः मोमिनून में स्पष्ट रूप से मज़कूर हैः

مَاهٰذَآ اِلَّا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ يُرِيْدُ اَنْ يَّتَفَضَّلَ عَلَيْكُمْ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَاَنْزَلَ مَلٰٓئِكَةً............ الخ.

यानी उनकी क़ौम ने नूह अ़लैहिस्सलाम की दावत पर एक शुब्हा यह भी किया कि यह तो हमारी ही तरह एक बशर और इनसान हैं, हमारी ही तरह खाते पीते सोते जागते हैं, इनको हम कैसे अपना मुक़्तदा (पेशवा और नबी) मान लें। अगर अल्लाह तआ़ला को हमारे लिये कोई पैग़ाम भेजना था तो वह फ़रिश्तों को भेजते जिनकी विशेषता और बड़ाई हम सब पर वाज़ेह होती। अब तो इसके सिवा कोई बात नहीं कि हमारी क़ौम और नस्ल का एक आदमी हम पर अपनी बरतरी और बड़ाई क़ायम करना चाहता है।

इसके जवाब में फ़रमायाः

اَوَعَجِبْتُمْ اَنْ جَآءَكُمْ ذِكْرٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ عَلٰى رَجُلٍ مِّنْكُمْ لِيُنْذِرَكُمْ وَلِتَتَّقُوْا وَلَعَلَّكُمْ تُرْحَمُوْنَ.

यानी क्या तुम्हें इस पर ताज्जुब है कि तुम्हारे रब का पैग़ाम तुम्हारी तरफ़ एक ऐसे शख़्स के द्वारा आया जो तुम्हारी ही जिन्स का है ताकि वह तुम्हें डराये और ताकि तुम डर जाओ और ताकि तुम पर रहम किया जाये। यानी उसके डराने से तुम सचेत होकर मुख़ालफ़त छोड़ दो जिसके नतीजे में तुम पर रहमत नाज़िल हो।

मतलब यह है कि यह कोई ताज्जुब की बात नहीं कि इनसान को रसूल बनाया जाये। अव्वल तो हक़ तआ़ला मुख़्तारे मुतलक़ हैं जिसको चाहें अपनी नुबुव्वत व रिसालत अ़ता फ़रमायें, इसमें किसी को चूँ-चरा की मजाल नहीं। इसके अ़लावा असल मामले पर ग़ौर करो तो वाज़ेह हो जाये कि आ़म इनसानों की तरफ़ रिसालत व नुबुव्वत का मक़सद इनसान ही के ज़रिये पूरा हो सकता है, फ़रिश्तों से यह काम नहीं हो सकता।

क्योंकि रिसालत व नुबुव्वत का असल मक़सद यह है कि अल्लाह तआ़ला की पूरी इताअ़त और इबादत पर लोगों को क़ायम कर दिया जाये और उसके अहकाम की मुख़ालफ़त से बचाया जाये। और यह तब ही हो सकता है कि उनकी इनसानी जिन्स का कोई शख़्स अ़मल का नमूना बनकर उनको दिखलाये कि बशरी तक़ाज़ों और इच्छाओं के साथ भी अल्लाह के अहकाम की इताअ़त और उसकी इबादत जमा हो सकती है। अगर फ़रिश्ते यह दावत लेकर आते और अपनी मिसाल लोगों के सामने रखते तो सब लोगों का यह उज़्र ज़ाहिर था कि फ़रिश्ते तो इनसानी इच्छाओं से पाक हैं, न उनको भूख-प्यास लगती है, न नींद आती है, न थकान होती है, उनकी तरह हम कैसे बन जायें। लेकिन जब अपना ही एक हम-जिन्स इनसान तमाम इनसानी इच्छाएँ और ख़ुसूसियतें रखने के बावजूद अल्लाह के उन अहकाम की मुकम्मल इताअ़त करके दिखलाये तो उनके लिये कोई उज़्र नहीं रह सकता।

इसी बात की तरफ़ इशारा करने के लिये फ़रमायाः

لِيُنْذِرَكُمْ وَلِتَتَّقُوْا.

मतलब यह है कि जिसके डराने से मुतास्सिर होकर लोग डर जायें वह वही हो सकता है जो उनका हम-जिन्स और उनकी तरह इनसानी ख़ुसूसियतें रखने वाला हो। यह शुब्हा अक्सर उम्मतों

के काफ़िरों ने पेश किया कि कोई बशर नबी और रसूल नहीं होना चाहिये, और क़ुरआन ने सब का यही जवाब दिया है। अफ़सोस है कि क़ुरआन की इतनी स्पष्टताओं के बावजूद आज भी कुछ लोग हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बशरियत (इनसान होने) का इनकार करने की जुर्रत करते हैं। मगर जाहिल इनसान इस हक़ीक़त को नहीं समझता, वह किसी अपने हम-जिन्स की बरतरी को तस्लीम करने के लिये तैयार नहीं होता। यही वजह है कि अपने ज़माने के उलेमा और बुज़ुर्गों से उनके समकालीन होने की बिना पर नफ़रत व अपमान का बर्ताव जाहिलों का हमेशा शेवा (चलन) रहा है।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम के दिल को चीर देने वाले कलाम के जवाब में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम का यह शफ़क़त और नसीहत भरा रवैया भी उनकी बेहिस क़ौम पर असर डालने वाला न हुआ बल्कि अंधे बनकर झुठलाने ही में लगे रहे। तो अल्लाह तआ़ला ने उन पर तूफ़ान का अ़ज़ाब भेज दिया। इरशाद फ़रमायाः

فَكَذَّبُوْهُ فَاَنْجَيْنٰهُ وَالَّذِيْنَ مَعَهٗ فِى الْفُلْكِ وَاَغْرَقْنَا الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا اِنَّهُمْ كَانُوْا قَوْمًا عَمِيْنَ.

यानी नूह अ़लैहिस्सलाम की ज़ालिम क़ौम ने उनकी नसीहत व ख़ैरख़्वाही की कोई परवाह न की और बराबर अपने झुठलाने की रविश पर अड़े रहे, जिसका नतीजा यह हुआ कि हमने नूह अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों को एक कश्ती में सवार करके तूफ़ान से निजात दे दी और जिन लोगों ने हमारी आयतों (और निशानियों) को झुठलाया था उनको ग़र्क़ कर दिया। बेशक ये लोग अंधे हो रहे थे।

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा और उनकी क़ौम के पानी के तूफ़ान में ग़र्क़ होने और कश्ती वालों की निजात की पूरी तफ़सील सूरः नूह और सूरः हूद में आयेगी। इस जगह ज़रूरत के मुताबिक़ उसका ख़ुलासा बयान हुआ है। हज़रत ज़ैद बिन असलम फ़रमाते हैं कि क़ौमे नूह पर तूफ़ान का अ़ज़ाब उस वक़्त आया जबकि वे अपनी अधिकता व ताक़त के एतिबार से भरपूर थे। इराक़ की ज़मीन और उसके पहाड़ उनकी बड़ी संख्या के सबब तंग हो रहे थे। और हमेशा अल्लाह तआ़ला का यही दस्तूर रहा है कि नाफ़रमान लोगों को ढील देते रहते हैं। अ़ज़ाब उस वक़्त भेजते हैं जब वे अपनी बहुसंख्या, क़ुव्वत और दौलत में इन्तिहा को पहुँच जायें और उसमें मस्त व मगन हो जायें। (तफ़सीर इब्ने कसीर)

हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के साथ कश्ती में कितने आदमी थे? इसमें रिवायतें भिन्न हैं। अ़ल्लामा इब्ने कसीर रह. ने इब्ने अबी हातिम की रिवायत से हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का क़ौल नक़ल किया है कि अस्सी आदमी थे जिनमें एक का नाम जुरहुम था यह अ़रबी भाषा बोलता था। (इब्ने कसीर)

कुछ रिवायतों में यह तफ़सील भी आई है कि अस्सी के अ़दद में चालीस मर्द और चालीस औरतें थीं। तूफ़ान के बाद ये सब हज़रात मूसल में जिस जगह मुक़ीम हुए उस बस्ती का नाम समानून मशहूर हो गया। (समानून अ़रबी भाषा में 80 को कहते हैं। मुहम्मद इमरान क़ासमी)

ग़र्ज़ इस जगह नूह अ़लैहिस्सलाम का मुख़्तसर किस्सा बयान फ़रमाकर एक तो यह बतला दिया कि पहले तमाम अम्बिया की दावत और अ़क़ीदों की बुनियाद व उसूल एक ही थे। दूसरे यह बतला दिया कि अल्लाह तआ़ला अपने रसूलों की ताईद व हिमायत किस तरह हैरत-अंगेज़ तरीक़े पर करते हैं कि पहाड़ों की चोटियों पर चढ़ जाने वाले तूफ़ान में भी उनकी सलामती को कोई ख़तरा नहीं होता। तीसरे यह वाज़ेह कर दिया कि अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को झुठलाना अल्लाह के अ़ज़ाब को दावत देना है। जिस तरह पिछली उम्मतें नबियों को झुठलाने के सबब अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हो गयीं आज के लोगों को भी इससे निडर नहीं होना चाहिये।

व इला आ़दिन् अख़ाहुम् हूदन्, क़ा-ल या क़ौमिअ़्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, अ-फ़ला तत्तक़ून (65) क़ालल्- म-लउल्लज़ी-न क-फ़रू मिन् क़ौमिही इन्ना ल-नरा-क फ़ी सफ़ाहतिंव्-व इन्ना	और क़ौम-ए-आ़द की तरफ़ भेजा उनके भाई हूद को, बोला ऐ मेरी क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई नहीं तुम्हारा माबूद उसके सिवा, सो क्या तुम डरते नहीं? (65) बोले सरदार जो काफ़िर थे उसकी क़ौम में, हम तो देखते हैं तुझको अ़क़्ल नहीं और हम तो तुझको झूठा

ल-नज़ुन्नु-क मिनल्-काज़िबीन (66) क़ा-ल या क़ौमि लै-स बी सफ़ाहतुंव्-व लाकिन्नी रसूलुम् मिर्रब्बिल्-आलमीन (67) उबल्लिग़ुकुम् रिसालाति रब्बी व अ-न लकुम् नासिहुन् अमीन (68) अ-व अ़जिब्तुम् अन् जा-अकुम् ज़िक्रुम्-मिर्रब्बिकुम् अ़ला रजुलिम्-मिन्कुम् लियुन्ज़ि-रकुम्, वज़्कुरू इज़् ज-अ़-लकुम् ख़ु-लफ़ा-अ मिम्-बअ़्दि क़ौमि नूहिंव्-व ज़ादकुम् फ़िल्ख़ल्कि बस्त-तन् फ़ज़्कुरू आला-अल्लाहि लअ़ल्लकुम् तुफ़्लिहून (69) क़ालू अजिअ्तना लिनअ़्बुदल्ला-ह वह्दहू व न-ज़-र मा का-न यअ़्बुदु आबाउना फ़अ्तिना बिमा तअ़िदुना इन् कुन्-त मिनस्-सादिक़ीन (70) क़ा-ल क़द् व-क़-अ अ़लैकुम् मिर्रब्बिकुम् रिज्सुंव्-व ग़-ज़बुन्, अतुजादिलू-ननी फ़ी अस्माइन् सम्मैतुमूहा अन्तुम् व आबाउकुम् मा नज़्ज़लल्लाहु बिहा मिन् सुल्तानिन्, फ़न्तज़िरू इन्नी म-अ़कुम् मिनल् मुन्तज़िरीन (71) फ़-अन्जैनाहु वल्लज़ी-न म-अ़हू

गुमान करते हैं। (66) बोला ऐ मेरी क़ौम! मैं कुछ बेअ़क़्ल नहीं लेकिन मैं भेजा हुआ हूँ परवर्दिगार-ए-आलम का। (67) पहुँचाता हूँ तुमको पैग़ाम अपने रब के, और मैं तुम्हारा भला चाहने वाला हूँ इत्मीनान के लायक़। (68) क्या तुमको ताज्जुब हुआ कि आई तुम्हारे पास नसीहत तुम्हारे रब की तरफ़ से एक मर्द की ज़ुबानी, जो तुम ही में से है ताकि तुमको डराये, और याद करो जबकि तुमको सरदार कर दिया क़ौमे नूह के बाद, और ज़्यादा कर दिया तुम्हारे बदन का फैलाव, सो याद करो अल्लाह के एहसान ताकि तुम्हारा भला हो। (69) बोले- क्या तू इस वास्ते हमारे पास आया कि हम बन्दगी करें अकेले अल्लाह की और छोड़ दें जिनको पूजते रहे हमारे बाप दादे? पस तू ले आ हमारे पास जिस चीज़ से तू हमको डराता है अगर तू सच्चा है। (70) क्या तुम पर पड़ चुका है तुम्हारे रब की तरफ़ से अ़ज़ाब और ग़ुस्सा, क्यों झगड़ते हो मुझसे उन नामों पर जो कि रख लिये हैं तुमने और तुम्हारे बाप-दादाओं ने, नहीं उतारी अल्लाह ने उनकी कोई सनद, सो मुन्तज़िर रहो मैं भी तुम्हारे साथ मुन्तज़िर हूँ। (71) फिर हमने बचा लिया उसको और जो उसके

मिन्ना व क़तअ़्ना दाबिरल्लज़ी-न कज़्ज़बू बिआयातिना व मा कानू मुअ्मिनीन (72) ✿	साथ थे अपनी रहमत से, और जड़ काटी उनकी जो झुठलाते थे हमारी आयतों को, और नहीं मानते थे। (72) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने आ़द क़ौम की तरफ़ उनके (बिरादरी या वतन के) भाई (हज़रत) हूद (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा, उन्होंने (अपनी क़ौम से) फ़रमाया ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के क़ाबिल) नहीं, (और बुत-परस्ती छोड़ दो जैसा कि आगे 'व न-ज़-र मा का-न यअ़्बुदु आबाउना.......' से मालूम होता है) सो क्या तुम (ऐसे बड़े ज़बरदस्त जुर्म यानी शिर्क के करने वाले होकर अल्लाह के अ़ज़ाब से) नहीं डरते? उनकी क़ौम में जो सम्मानित काफ़िर थे उन्होंने (जवाब में) कहा कि हम तुमको कम-अ़क़्ली में (मुब्तला) देखते हैं (कि तौहीद की तालीम कर रहे हो और अ़ज़ाब से डरा रहे हो) और हम बेशक तुमको झूठे लोगों में से समझते हैं (यानी नऊज़ु बिल्लाह न तो तौहीद सही मसला है और न अ़ज़ाब का आना सही है)। उन्होंने फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! मुझमें ज़रा भी कम-अ़क़्ली नहीं, लेकिन (चूँकि) मैं परवर्दिगारे-आ़लम का भेजा हुआ पैग़म्बर हूँ। (उसने मुझको तौहीद की तालीम और अ़ज़ाब से डराने का हुक्म किया है इसलिये अपना फ़र्ज़ अदा करता हूँ कि) तुमको अपने परवर्दिगार के पैग़ाम (और अहकाम) पहुँचाता हूँ और मैं तुम्हारा सच्चा ख़ैरख़्वाह हूँ (क्योंकि तौहीद व ईमान में तुम्हारा ही नफ़ा है) और (तुम जो मेरे इनसान होने से मेरी नुबुव्वत का इनकार करते हो जैसा कि सूरः इब्राहीम में क़ौमे नूह, आ़द और समूद के ज़िक्र के बाद है 'क़ालू इन अन्तुम इल्ला ब-शरुम् मिस्लुना' और सूरः फ़ुस्सिलत में क़ौमे आ़द व समूद के ज़िक्र के बाद है 'क़ालू लौ शा-अ रब्बुना ल-अन्ज़-ल मलाइ-कतन्...........', तो) क्या तुम इस बात से ताज्जुब करते हो कि तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से तुम्हारे पास एक ऐसे शख़्स के ज़रिये जो तुम्हारी जिन्स का (यानी आदमी) है कोई नसीहत की बात आ गई? (वह नसीहत की बात वही है जो ऊपर बयान हुई यानी ऐ मेरी क़ौम एक अल्लाह की इबादत करो............) ताकि वह शख़्स तुमको (अल्लाह के अ़ज़ाब से) डराए? (यानी यह तो कोई ताज्जुब की बात नहीं, क्या बशरियत और नुबुव्वत में बैर है ऊपर 'अ-फ़ला तत्तक़ून' में डराना और चेतावनी थी आगे शौक़ और रुचि दिलाने का मज़मून है)।

और (ऐ क़ौम) तुम यह हालत याद करो (और याद करके एहसान मानो और इताअ़त करो) कि अल्लाह तआ़ला ने तुमको नूह की क़ौम के बाद (रू-ए-ज़मीन पर) आबाद किया और डील-डोल में तुमको फैलाव (भी) ज़्यादा दिया। सो ख़ुदा तआ़ला की (इन) नेमतों को याद करो (और याद करके एहसान मानो और इताअ़त करो) ताकि तुमको (हर तरह की) कामयाबी हो। वे

कहने लगे कि क्या (ख़ूब) आप हमारे पास इस वास्ते आए हैं कि हम सिर्फ़ अल्लाह ही की इबादत किया करें और जिन (बुतों) को हमारे बाप-दादा पूजते थे हम उन (की इबादत) को छोड़ दें? (यानी हम ऐसा न करेंगे) और हमको (न मानने पर) जिस अ़ज़ाब की धमकी देते हो (जैसा कि 'अ-फ़ला तत्तक़ून' से मालूम होता है) उस (अ़ज़ाब) को हमारे पास मँगवा दो अगर तुम सच्चे हो।

उन्होंने फ़रमाया कि (तुम्हारी सरकशी की जब यह हालत है तो) बस अब तुम पर ख़ुदा की तरफ़ से अ़ज़ाब और ग़ज़ब आने ही वाला है। (पस अ़ज़ाब के शुब्हे का जवाब तो उस वक़्त मालूम हो जायेगा और बाक़ी तौहीद पर जो शुब्हा है कि उन बुतों को माबूद कहते हो जिनका नाम तो तुमने माबूद रख लिया है, लेकिन वास्तव में उनके माबूद होने की कोई दलील ही नहीं तो) क्या तुम मुझसे ऐसे (बेहक़ीक़त) नामों के बारे में झगड़ते हो (यानी वो बुत सिर्फ़ नाम के हैं) जिनको तुमने और तुम्हारे बाप-दादा ने (ख़ुद ही) मुक़र्रर कर लिया है (लेकिन) इसकी (यानी उनके माबूद होने की) ख़ुदा तआ़ला ने कोई (किताबी, पैग़म्बरी या अ़क़्ली) दलील नहीं भेजी। (यानी झगड़े और मुक़द्दमे में दावेदार के ज़िम्मे दलील है और सामने वाले की दलील का जवाब भी, सो तुम न दलील क़ायम कर सकते हो न मेरी दलील का जवाब दे सकते हो, फिर झगड़ने का क्या मतलब) सो तुम (अब झगड़ा ख़त्म करो और अल्लाह के अ़ज़ाब का) इन्तिज़ार करो, मैं भी तुम्हारे साथ इन्तिज़ार कर रहा हूँ। ग़र्ज़ कि (अ़ज़ाब आया और) हमने उनको और उनके साथियों को (यानी मोमिनों को) अपनी रहमत (व करम) से (उस अ़ज़ाब से) बचा लिया, और उन लोगों की जड़ (तक) काट दी (यानी बिल्कुल हलाक कर दिया) जिन्होंने हमारी आयतों को झुठलाया था, और वे (अपनी हद से बढ़ी हुई सख़्त-दिली की वजह से) ईमान लाने वाले न थे (यानी अगर हलाक भी न होते तब भी ईमान न लाते। इसलिये हमने उस वक़्त की हिक्मत के तक़ाज़े के मुताबिक़ उनका ख़ात्मा ही कर दिया)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

आ़द और समूद क़ौमों का मुख़्तसर इतिहास

आ़द असल में एक शख़्स का नाम है जो नूह अ़लैहिस्सलाम की पाँचवीं नस्ल और उनके बेटे साम की औलाद में है। फिर उस शख़्स की औलाद और पूरी क़ौम आ़द के नाम से मशहूर हो गयी। क़ुरआने करीम में आ़द के साथ कहीं लफ़्ज़ आ़दे ऊला और कहीं इ-र-म ज़ातिल-इमाद भी आया है। जिससे मालूम होता है कि क़ौमे आ़द को इरम भी कहा जाता है। और आ़दे ऊला के मुक़ाबले में कोई आ़दे सानिया भी है। इसकी तहक़ीक़ में मुफ़स्सिरीन और इतिहासकारों के अक़वाल विभिन्न हैं। ज़्यादा मशहूर यह है कि आ़द के दादा का नाम इरम है उसके एक बेटे यानी अ़िवस की औलाद में आ़द है, यह आ़दे ऊला कहलाता है, और दूसरे बेटे जस्सू का बेटा समूद है यह आ़दे सानी कहलाता है। इस तहक़ीक़ का हासिल यह है कि आ़द

और समूद दोनों इरम की दो शाख़ें हैं। एक शाख़ को आ़दे ऊला और दूसरी को समूद या आ़दे सानिया भी कहा जाता है, और लफ़्ज़ इरम आ़द व समूद दोनों के लिये संयुक्त है।

और कुछ इतिहासकारों ने फ़रमाया है कि क़ौमे आ़द पर जिस वक़्त अ़ज़ाब आया तो उनका एक वफ़्द (गिरोह) मक्का मुअ़ज़्ज़मा गया हुआ था, वह अ़ज़ाब से सुरक्षित रहा, उसको आ़दे उख़रा कहते हैं। (बयानुल-क़ुरआन)

और हूद अ़लैहिस्सलाम एक नबी का नाम है यह भी नूह अ़लैहिस्सलाम की पाँचवीं नस्ल और साम की औलाद में हैं। क़ौमे आ़द और हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का नसब नामा चौथी पुश्त में साम पर जमा हो जाता है, इसलिये हूद अ़लैहिस्सलाम आ़द के नसबी भाई हैं। इसी लिये 'अख़ाहुम हूदन्' (उनके भाई हूद) फ़रमाया गया।

क़ौमे आ़द के तेरह ख़ानदान थे। अ़म्मान से लेकर हज़रेमूत और यमन तक उनकी बस्तियाँ थीं। उनकी ज़मीनें बड़ी उपजाऊ और हरी-भरी थीं, हर क़िस्म के बाग़ात थे। रहने के लिये बड़े बड़े शानदार महल बनाते थे। बड़े क़द्दावर और भारी-भरकम जिस्म वाले आदमी थे। उक्त आयतों में 'ज़ादकुम फ़िल्ख़ल्क़ि बस्ततन्' का यही मतलब है। अल्लाह तआ़ला ने दुनिया की सारी ही नेमतों के दरवाज़े उन पर खोल दिये थे, मगर उनकी टेढ़ी समझ ने उन्हीं नेमतों को उनके लिये वबाले जान बना दिया। अपनी ताक़त व शौकत के नशे में बदमस्त होकर 'मन् अशद्दु मिन्ना क़ुव्वतन' (हमसे ज़्यादा ताक़तवर कौन है) की डींग मारने लगे। और रब्बुल-आ़लमीन जिसकी नेमतों की बारिश उन पर हो रही थी उसको छोड़कर बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा यानी शिर्क) में मुब्तला हो गये।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का नसब-नामा और कुछ हालात

अल्लाह तआ़ला ने उनकी हिदायत के लिये हूद अ़लैहिस्सलाम को पैग़म्बर बनाकर भेजा जो ख़ुद उन्हीं के ख़ानदान से थे। और अबुल-बरकात जौनी जो अ़रब के नसबों (नस्लों और ख़ानदानों के हालात) के बड़े मशहूर माहिर हैं, उन्होंने लिखा है कि हूद अ़लैहिस्सलाम के बेटे यारिब बिन क़हतान हैं जो यमन में जाकर आबाद हुए और यमनी क़ौमें उन्हीं की नस्ल हैं। और अ़रबी भाषा की शुरूआ़त उन्हीं से हुई और यारिब की मुनासबत से ही भाषा का नाम अ़रबी और उसके बोलने वालों को अ़रब कहा गया। (बहरे मुहीत)

मगर सही यह है कि अ़रबी भाषा तो नूह अ़लैहिस्सलाम के ज़माने से जारी थी, नूह अ़लैहिस्सलाम की कश्ती के एक साथी जुरहुम थे जो अ़रबी भाषा बोलते थे। (बहरे मुहीत) और यही जुरहुम हैं जिनसे मक्का मुअ़ज़्ज़मा की आबादी शुरू हुई। हाँ यह हो सकता है कि यमन में अ़रबी भाषा की शुरूआ़त यारिब बिन क़हतान से हुई हो और अबुल-बरकात की तहक़ीक़ का यही मतलब हो।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम ने क़ौमे आ़द को बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) छोड़कर तौहीद (एक ख़ुदा यानी अल्लाह तआ़ला को मानने को) इख़्तियार करने और ज़ुल्म व ज़्यादती छोड़कर अ़दल व इन्साफ़ इख़्तियार करने की तालीम व हिदायत फ़रमाई। मगर ये लोग अपनी दौलत व क़ुव्वत

के नशे में डूबे हुए थे। बात न मानी, जिसके नतीजे में इन पर पहला अ़ज़ाब तो यह आया कि तीन साल तक लगातार बारिश बन्द हो गयी। उनकी ज़मीनें ख़ुश्क रेगिस्तानी बयाबान बन गयीं, बाग़ात जल गये, मगर इस पर भी ये लोग शिर्क व बुत-परस्ती से बाज़ न आये तो आठ दिन और सात रातों तक इन पर सख़्त क़िस्म की आँधी का अ़ज़ाब मुसल्लत हुआ जिसने इनके रहे सहे बाग़ों और महलों को ज़मीन पर बिछा दिया। इनके आदमी और जानवर हवा में उड़ते और फिर सर के बल आकर गिरते थे। इस तरह यह क़ौमे आ़द पूरी की पूरी हलाक कर दी गयी। उक्त आयतों में जो इरशाद हैः

وَقَطَعْنَا دَابِرَ الَّذِيْنَ كَذَّبُوْا.

यानी हमने झुठलाने वालों की नस्ल काट दी, इसका मतलब कुछ हज़रात ने यही क़रार दिया है कि उस वक़्त जो लोग मौजूद थे वे सब फ़ना कर दिये गये। और कुछ हज़रात ने इस लफ़्ज़ के ये मायने क़रार दिये हैं कि आईन्दा के लिये भी क़ौमे आ़द की नस्ल अल्लाह तआ़ला ने ख़त्म कर दी।

हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम की बात न मानने और कुफ़्र व शिर्क में मुब्तला रहने पर जब उनकी क़ौम पर अ़ज़ाब आया तो हूद अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों ने एक हज़ीरा (घेर) में पनाह ली। यह अ़जीब बात थी कि उस तूफ़ानी हवा से बड़े-बड़े महल तो ध्वस्त हो रहे थे मगर उस घेर में हवा निहायत मोतदिल होकर दाख़िल होती थी। हूद अ़लैहिस्सलाम के सब साथी अ़ज़ाब नाज़िल होने के वक़्त भी उसी जगह मुत्मईन बैठे रहे, उनको किसी क़िस्म की तकलीफ़ नहीं हुई। क़ौम के हलाक हो जाने के बाद मक्का मुअ़ज़्ज़मा में मुन्तक़िल हो गये और फिर यहीं वफ़ात पाई। (बहरे मुहीत)

क़ौमे आ़द का अ़ज़ाब हवा के तूफ़ान की सूरत में आना क़ुरआन मजीद में स्पष्ट तौर पर बयान हुआ है और सूरः मोमिनून में नूह अ़लैहिस्सलाम का क़िस्सा ज़िक्र करने के बाद जो इरशाद हुआ हैः

ثُمَّ اَنْشَاْنَا مِنْ ۢ بَعْدِهِمْ قَرْنًا اٰخَرِيْنَ.

यानी फिर हमने उनके बाद एक और जमाअ़त पैदा की। ज़ाहिर यह है कि इस जमाअ़त से मुराद क़ौमे आ़द है। फिर इस जमाअ़त के आमाल व अक़वाल बयान फ़रमाने के बाद इरशाद फ़रमायाः

فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ بِالْحَقِّ.

यानी पकड़ लिया उनको एक सख़्त आवाज़ ने। क़ुरआन के इस इरशाद की बिना पर कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि क़ौमे आ़द पर सख़्त क़िस्म की डरावनी आवाज़ का अ़ज़ाब मुसल्लत हुआ था, मगर इन दोनों बातों में कोई टकराव नहीं। हो सकता है कि सख़्त आवाज़ भी हुई हो और हवा का तूफ़ान भी।

यह मुख़्तसर वाक़िआ़ है क़ौमे आ़द और हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम का, इसकी तफ़सील

क़ुरआनी अलफ़ाज़ के साथ यह है।

पहली आयत में:

وَاِلٰى عَادٍ اَخَاهُمْ هُوْدًا. قَالَ يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَالَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ. اَفَلَا تَتَّقُوْنَ.

यानी हमने क़ौमे आ़द की तरफ़ उनके भाई हूद अ़लैहिस्सलाम को हिदायत के लिये भेजा तो उन्होंने फ़रमाया- ऐ मेरी क़ौम! तुम सिर्फ़ अल्लाह तआ़ला की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद नहीं है, क्या तुम डरते नहीं?

क़ौमे आ़द से पहले क़ौमे नूह का ज़बरदस्त अ़ज़ाब अभी तक लोगों के ज़ेहनों से ग़ायब न हुआ था, इसलिये हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम को अ़ज़ाब की विशालता और सख़्ती बयान करने की ज़रूरत न थी, सिर्फ़ इतना फ़रमाना काफ़ी समझा कि क्या तुम अल्लाह के अ़ज़ाब से डरते नहीं?

दूसरी आयत में है:

قَالَ الْمَلَاُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَوْمِهٖٓ اِنَّا لَنَرٰكَ فِيْ سَفَاهَةٍ وَّاِنَّا لَنَظُنُّكَ مِنَ الْكٰذِبِيْنَ.

यानी क़ौम के सरदारों ने कहा कि हम आपको बेवक़ूफ़ी में मुब्तला पाते हैं, और हमारा गुमान यह है कि आप झूठ बोलने वालों में से हैं।

यह तक़रीबन ऐसा ही मुकालमा (गुफ़्तगू) है जैसा हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने उनसे किया था, सिर्फ़ कुछ अलफ़ाज़ का फ़र्क़ है। तीसरी और चौथी आयत में इसका जवाब भी तक़रीबन उसी अन्दाज़ का है जैसा नूह अ़लैहिस्सलाम ने दिया था। यानी यह कि मुझमें बेवक़ूफ़ी कुछ नहीं, बात सिर्फ़ इतनी है कि मैं रब्बुल-आ़लमीन की तरफ़ से रसूल और पैग़म्बर बनकर आया हूँ उसके पैग़ामात तुम्हें पहुँचाता हूँ। और मैं वाज़ेह तौर पर तुम्हारा ख़ैरख़्वाह हूँ। इसलिये तुम्हारी बाप-दादा से चली आई जहालतों और ग़लतियों में तुम्हारा साथ देने के बजाय मैं तुम्हारी तबीयतों के ख़िलाफ़ हक़ बात तुम्हें पहुँचाता हूँ जिससे तुम बुरा मानते हो।

पाँचवीं आयत में क़ौमे आ़द का वही एतिराज़ ज़िक्र किया गया है जो उनसे पहले क़ौमे नूह ने पेश किया था कि हम किसी अपने ही जैसे बशर और इनसान को कैसे अपना बड़ा और पेशवा मान लें, कोई फ़रिश्ता होता तो मुम्किन था कि हम मान लेते। इसका जवाब भी क़ुरआने करीम ने वही ज़िक्र किया है जो नूह अ़लैहिस्सलाम ने दिया था कि यह कोई ताज्जुब की बात नहीं कि कोई इनसान अल्लाह का नबी व रसूल होकर लोगों को डराने के लिये आ जाये। क्योंकि दर हक़ीक़त इनसान के समझाने बुझाने के लिये इनसान ही का पैग़म्बर होना प्रभावी हो सकता है।

इसके बाद उनको वो इनामात याद दिलाये जो अल्लाह तआ़ला ने उस क़ौम पर फ़रमाये हैं। इरशाद फ़रमायाः

وَاذْكُرُوْٓا اِذْ جَعَلَكُمْ خُلَفَآءَ مِنْۢ بَعْدِ قَوْمِ نُوْحٍ وَّزَادَكُمْ فِي الْخَلْقِ بَصْۜطَةً فَاذْكُرُوْٓا اٰلَآءَ اللّٰهِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ.

यानी इस बात को याद करो कि अल्लाह तआ़ला ने तुमको क़ौमे नूह के बाद ज़मीन का

मालिक व काबिज़ बना दिया और डील-डोल में तुमको फैलाव भी ज़्यादा दिया। उसकी इन नेमतों को याद करो तो तुम्हारा भला होगा।

मगर उस नाफ़रमान गुनाहों में डूबी हुई क़ौम ने एक न सुनी और वही जवाब दिया जो आ़म तौर पर गुमराह लोग दिया करते हैं कि क्या तुम यह चाहते हो कि हमसे हमारे बाप-दादा का मज़हब छुड़ा दो और सारे देवताओं को छोड़कर हम सिर्फ़ एक ख़ुदा को मानने लगें? यह तो हमसे न होगा। आप जिस अ़ज़ाब की धमकी हमें दे रहे हैं उस अ़ज़ाब को बुला लो अगर तुम सच्चे हो।

छठी आयत में हूद अ़लैहिस्सलाम ने जवाब दिया कि जब तुम्हारी सरकशी और बेहोशी की यह हालत है तो अब तुम पर ख़ुदा तआ़ला का ग़ज़ब और अ़ज़ाब आया ही चाहता है, तुम भी इन्तिज़ार करो और हम भी अब उसी का इन्तिज़ार करते हैं। क़ौम के इस उत्तेजना भरे जवाब पर अ़ज़ाब आने की ख़बर तो दे दी लेकिन पैग़म्बराना शफ़क़त व नसीहत ने फिर मजबूर किया, इस कलाम के दौरान में यह भी फ़रमा दिया कि अफ़सोस है तुमने और तुम्हारे बाप-दादों ने बेअ़क़्ल बेजान चीज़ों को अपना माबूद बना लिया जिनके माबूद होने पर न कोई अ़क़्ली दलील है न किताबी और आसमानी। और फिर तुम उनकी इबादत में ऐसे पुख़्ता हो गये कि उनकी हिमायत में मुझसे झगड़ा कर रहे हो।

आख़िरी आयत में इरशाद फ़रमाया कि हूद अ़लैहिस्सलाम की सारी जिद्दोजहद और आ़द क़ौम की सरकशी का आख़िरी अन्जाम यह हुआ कि हमने हूद अ़लैहिस्सलाम को और उन लोगों को जो उन पर ईमान लाये थे अ़ज़ाब से महफ़ूज़ रखा और झुठलाने वालों की जड़ काट दी, और वे ईमान लाने वाले न थे।

इस क़िस्से में ग़ाफ़िल इनसानों के लिये ख़ुदा की याद और इताअ़त में लग जाने क़ी हिदायत और ख़िलाफ़वर्ज़ी करने वालों के लिये सीख लेने का सामान और मुबल्लिग़ीन व मुस्लिहीन (इस्लाम के प्रचारकों और सुधारकों) के लिये तब्लीग़ व इस्लाह (प्रचार व सुधार) के पैग़म्बराना तरीक़े की तालीम है।

व इला समू-द अख़ाहुम् सालिहन्। क़ा-ल या क़ौमिअ़्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, क़द् जाअत्कुम् बय्यि-नतुम् मिर्रब्बिकुम्, हाज़िही नाक़तुल्लाहि लकुम् आ-यतन् फ़-ज़रूहा तअ्कुल् फ़ी अर्ज़िल्लाहि व ला तमस्सूहा बिसूइन् फ़-यअ्ख़ु-ज़कुम् अ़ज़ाबुन् अलीम (73) वज़्कुरू इज़् ज-अ-लकुम् ख़ु-लफ़ा-अ मिम्-बअ़्दि आदिंव्-व बव्व-अकुम् फ़िल्अर्ज़ि तत्तख़िज़ू-न मिन् सुहूलिहा क़ुसूरंव्-व तन्हितूनल् जिबा-ल बुयूतन् फ़ज़्कुरू आला-अल्लाहि व ला तअ़्सौ फ़िल्अर्ज़ि मुफ़्सिदीन (74) क़ालल्-म-लउल्लज़ीन-स्तक्बरू मिन् क़ौमिही लिल्लज़ीनस्-तुज़्अिफ़ू लिमन् आम-न मिन्हुम् अ-तअ़्लमू-न अन्-न सालिहम् मुर्सलुम्-मिर्रब्बिही, क़ालू इन्ना बिमा उर्सि-ल बिही मुअ्मिनून (75) क़ालल्लज़ीनस्तक्बरू इन्ना बिल्लज़ी आमन्तुम् बिही काफ़िरून (76)	और समूद की तरफ़ भेजा उनके भाई सालेह को। बोला ऐ मेरी क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की, कोई नहीं तुम्हारा माबूद उसके सिवा, तुमको पहुँच चुकी है दलील तुम्हारे रब की तरफ़ से, यह ऊँटनी अल्लाह की है तुम्हारे लिये निशानी, सो इसको छोड़ दो कि खाये अल्लाह की ज़मीन में और इसको हाथ न लगाओ बुरी तरह, फिर तुमको पकड़ेगा दर्दनाक अज़ाब। (73) और याद करो जबकि तुमको सरदार कर दिया आद के बाद और ठिकाना दिया तुमको ज़मीन में कि बनाते हो नरम ज़मीन में महल और तराशते हो पहाड़ों के घर, सो याद करो एहसान अल्लाह के और मत मचाते फिरो ज़मीन में फ़साद। (74) कहने लगे सरदार जो घमण्डी थे उसकी क़ौम में, ग़रीब लोगों को कि जो उनमें ईमान ला चुके थे- क्या तुमको यक़ीन है कि सालेह को भेजा है उसके रब ने? बोले हमको तो जो वह लेकर आया उस पर यक़ीन है। (75) कहने लगे वे लोग जो घमण्डी थे- जिस पर तुमको यक़ीन है हम उसको नहीं मानते। (76)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने समूद की तरफ़ उनके भाई सालेह (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (अपनी क़ौम से) फ़रमाया- ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह की इबादत करो, उसके

सिवा कोई तुम्हारा माबूद (होने के क़ाबिल) नहीं। (उन्होंने एक ख़ास मोजिज़े की दरख़्वास्त की कि इस पत्थर में से एक ऊँटनी पैदा हो तो हम ईमान लायें, चुनाँचे आपकी दुआ से ऐसा ही हुआ कि वह पत्थर फटा और उसके अन्दर से एक बड़ी ऊँटनी निकली। आपने फ़रमाया कि) तुम्हारे पास तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से एक साफ़ और खुली दलील (मेरे रसूल होने की) आ चुकी है। (आगे उसका बयान है) यह ऊँटनी है अल्लाह की, जो तुम्हारे लिए दलील (बनाकर ज़ाहिर की गयी) है, (और इसी लिये अल्लाह की ऊँटनी कहलाई कि अल्लाह की दलील है) सो (अलावा इसके कि मेरी रिसालत पर निशानी और सुबूत है खुद इसके भी कुछ हुक़ूक़ हैं उनमें से एक यह है कि) इसको छोड़ दो कि अल्लाह की ज़मीन में (घास चारा) खाती फिरा करे, (इसी तरह अपनी बारी के दिन पानी पीती रहे जैसा कि दूसरी आयत में है) और इसको बुराई (और तकलीफ़ देने) के साथ हाथ भी मत लगाना, कभी तुमको दर्दनाक अ़ज़ाब आ पकड़े।

और (ऐ क़ौम) तुम यह हालत याद करो (और याद करके एहसान मानो और इताअ़त करो) कि अल्लाह तआ़ला ने तुमको (क़ौमे) आ़द के बाद (रू-ए-ज़मीन पर) आबाद किया और तुमको ज़मीन पर रहने के लिये (मनमर्ज़ी) ठिकाना दिया कि नर्म ज़मीन पर (भी बड़े-बड़े) महल बनाते हो और पहाड़ों को तराश-तराशकर उनमें (भी) घर बनाते हो, सो खुदा तआ़ला की (इन) नेमतों को (और दूसरी नेमतों को भी) याद करो (और कुफ़्र व शिर्क के ज़रिये) ज़मीन में फ़साद मत फैलाओ (यानी ईमान ले आओ। मगर बावजूद इस क़द्र समझाने और तंबीह के कुछ ग़रीब लोग ईमान लाये और उनमें और सरदारों में यह गुफ़्तगू हुई, यानी) उनकी क़ौम में जो घमण्डी सरदार थे, उन्होंने ग़रीब लोगों से जो कि उनमें से ईमान ले आए थे पूछा कि क्या तुमको इस बात का यक़ीन है कि सालेह (अ़लैहिस्सलाम) अपने रब की तरफ़ से (पैग़म्बर बनाकर) भेजे हुए (आये) हैं? उन्होंने (जवाब में) कहा कि बेशक हम तो उस (हुक्म) पर पूरा यक़ीन रखते हैं जो उनको देकर भेजा गया है। वे घमण्डी लोग कहने लगे कि तुम जिस चीज़ पर यक़ीन लाए हुए हो हम तो उसका इनकार करते हैं।

मआ़रिफ़ व मसाईल

इन आयतों में हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम समूद के हालात का तज़किरा है, जैसे कि इससे पहले क़ौमे नूह और क़ौमे हूद का ज़िक्र आ चुका है, और सूरः आराफ़ के आख़िर तक भी पहले अम्बिया और उनकी क़ौमों के हालात, अम्बिया की दावते हक़ पर उनके कुफ़्र व इनकार के बुरे अन्जाम का बयान है।

उक्त आयतों में से पहली आयत में इरशाद फ़रमायाः

وَاِلٰى ثَمُوْدَ اَخَاهُمْ صٰلِحًا.

इससे पहले क़ौमे आ़द के तज़किरे में बयान हो चुका है कि आ़द व समूद एक ही दादा की औलाद में दो शख़्सों का नाम है, उनकी औलाद भी उनके नाम से नामित होकर दो क़ौमें बन गयीं, एक क़ौमे आ़द दूसरी क़ौमे समूद कहलाती है। अ़रब के उत्तर पश्चिम में बसते थे और इनके

बड़े शहर का नाम हिज्र था जिसको अब उमूमन **मदाईन-ए-सालेह** कहा जाता है। क़ौमे आद की तरह क़ौमे समूद भी दौलतमन्द, ताक़तवर, बहादुर, पत्थर गढ़ने और तामीर के फ़न में माहिर क़ौम थी। खुली ज़मीन पर बड़े-बड़े महल बनाने के अ़लावा पहाड़ों को खोदकर उनमें तरह-तरह की इमारतें बनाते थे। किताब अर्ज़ुल-क़ुरआन में मौलाना सय्यिद सुलैमान नदवी ने लिखा है कि उनकी तामीरी यादगारें अब तक बाक़ी हैं, उनपर इरमी और समूदी ख़त में कतबे लिखे हैं।

दुनिया की दौलत व मालदारी का नतीजा उमूमन यही होता है कि ऐसे लोग ख़ुदा व आख़िरत से ग़ाफ़िल होकर ग़लत रास्तों पर पड़ जाते हैं। क़ौमे समूद का भी यही हाल हुआ।

हालाँकि उनसे पहले क़ौमे नूह के अ़ज़ाब के वाक़िआ़त का तज़किरा अभी तक दुनिया में मौजूद था और फिर उनके भाई क़ौमे आ़द की हलाकत के वाक़िआ़त तो ताज़ा ही थे, मगर दौलत व क़ुव्वत के नशे का ख़ास्सा ही यह है कि अभी एक शख़्स की बुनियाद ध्वस्त होती है दूसरा उसकी ख़ाक के ढेर पर अपनी तामीर खड़ी कर लेता है और पहले के वाक़िआ़त को भूल जाता है। क़ौमे आ़द की तबाही और हलाकत के बाद क़ौमे समूद उनके मकानों और ज़मीनों की वारिस बनी और उन्हीं मक़ामात पर अपने ऐश के घर तैयार किये जिनमें उनके भाई हलाक हो चुके थे, और ठीक वही आमाल व काम शुरू कर दिये जो क़ौमे आ़द ने किये थे कि ख़ुदा व आख़िरत से ग़ाफ़िल होकर शिर्क व बुत-परस्ती में लग गये। अल्लाह तआ़ला ने अपनी जारी आ़दत के मुताबिक़ उनकी हिदायत के लिये हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम को रसूल बनाकर भेजा। सालेह अ़लैहिस्सलाम नसब व वतन के एतिबार से क़ौमे समूद ही के एक फ़र्द थे। क्योंकि यह भी साम ही की औलाद में से थे। इसी लिये क़ुरआने करीम में इनको क़ौमे समूद का भाई फ़रमाया है।

हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम को जो दावत दी वह वही दावत है जो आदम अ़लैहिस्सलाम से लेकर इस वक़्त तक के सब अम्बिया देते चले आये हैं जैसा कि क़ुरआने करीम में है:

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِىْ كُلِّ اُمَّةٍ رَّسُوْلًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوْتَ.

यानी हमने हर उम्मत में एक रसूल भेजा कि वह लोगों को यह हिदायत करे कि अल्लाह तआ़ला की इबादत करो और बुत-परस्ती से बचो। पहले गुज़रे आ़म अम्बिया की तरह सालेह अ़लैहिस्सलाम ने भी क़ौम से यही फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला को अपना रब और ख़ालिक़ व मालिक समझो, उसके सिवा कोई माबूद बनाने के लायक़ नहीं। फ़रमायाः

يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ.

इसके साथ ही यह भी फ़रमायाः

قَدْ جَآءَتْكُمْ بَيِّنَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ.

यानी अब तो एक खुला हुआ निशान भी तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से तुम्हारे पास आ पहुँचा है। इस निशान से मुराद एक अ़जीब व ग़रीब ऊँटनी है, जिसका मुख़्तसर ज़िक्र इस

आयत में भी है और क़ुरआने करीम की विभिन्न सूरतों में उसकी अधिक तफ़सीलात बयान हुई हैं। वाक़िआ उस ऊँटनी का यह था कि हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने अपनी जवानी के ज़माने से अपनी क़ौम को तौहीद (एक अल्लाह को मानने और उसकी इबादत) की दावत देनी शुरू की और बराबर इसमें लगे रहे, यहाँ तक कि बुढ़ापे के आसार शुरू हो गये। हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के बार-बार इसरार से तंग होकर उनकी क़ौम ने यह तय किया कि इनसे कोई ऐसा मुतालबा करो जिसको यह पूरा न कर सकें और हम इनकी मुख़ालफ़त में कामयाब हो जायें। मुतालबा यह किया कि अगर आप वाक़ई अल्लाह के रसूल हैं तो हमारी फ़ुलाँ पहाड़ी जिसका नाम कातिबा था उसके अन्दर से एक ऐसी ऊँटनी निकाल दीजिए जो दस महीने की गाभन हो और ताक़तवर व तन्दुरुस्त हो।

हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने पहले तो उनसे अ़हद लिया कि अगर मैं तुम्हारा यह मुतालबा पूरा करा दूँ तो तुम सब मुझ पर और मेरी दावत पर ईमान ले आओगे? जब सब ने इक़रार और पक्का वायदा कर लिया तो सालेह अ़लैहिस्सलाम ने दो रक्अ़त नमाज़ पढ़कर अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की कि आपके लिये तो कोई काम दुश्वार नहीं, इनका मुतालबा पूरा फ़रमा दें। दुआ़ करते ही पहाड़ी के अन्दर हरकत पैदा हुई और उसकी एक बड़ी चट्टान फटकर उसमें से एक ऊँटनी उसी तरह की निकल आई जैसा मुतालबा किया था।

सालेह अ़लैहिस्सलाम का यह खुला हुआ हैरत-अंगेज़ मोजिज़ा देखकर उनमें से कुछ लोग तो मुसलमान हो गये और बाक़ी तमाम क़ौम ने भी इरादा कर लिया कि ईमान ले आयें, मगर क़ौम के चन्द सरदार जो बुतों के ख़ास पुजारी और बुत-परस्ती के मुखिया थे, उन्होंने उनको बहका कर इस्लाम क़ुबूल करने से रोक दिया। हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने जब देखा कि क़ौम ने अ़हद तोड़ दिया और ख़तरा हुआ कि इन पर कोई अ़ज़ाब आ जायेगा तो पैग़म्बराना शफ़क़त की बिना पर उनको यह नसीहत फ़रमाई कि इस ऊँटनी की हिफ़ाज़त करो, इसको कोई तकलीफ़ न पहुँचाओ तो शायद तुम अ़ज़ाब से महफ़ूज़ रहो, वरना फ़ौरन तुम पर अ़ज़ाब आ जायेगा। यही मज़मून उक्त आयत के इन जुमलों में इरशाद हुआ है:

هٰذِهٖ نَاقَةُ اللّٰهِ لَكُمْ اٰيَةً فَذَرُوْهَا تَاْكُلْ فِيْٓ اَرْضِ اللّٰهِ وَلَا تَمَسُّوْهَا بِسُوْٓءٍ فَيَاْخُذَكُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ.

यानी यह ऊँटनी है अल्लाह की जो तुम्हारे लिये दलील (निशानी) है, सो इसको छोड़ दो कि अल्लाह की ज़मीन में खाती फिरा करे। और इसको बुराई के इरादे से हाथ न लगाना वरना तुमको दर्दनाक अ़ज़ाब आ पकड़ेगा। इस ऊँटनी को नाक़तुल्लाह (अल्लाह की ऊँटनी) इसलिये कहा गया कि अल्लाह की कामिल क़ुदरत की दलील और सालेह अ़लैहिस्सलाम के मोजिज़े के तौर पर हैरत-अंगेज़ तरीक़े से पैदा हुई। जैसे हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम को रूहुल्लाह फ़रमाया गया कि उनकी पैदाईश भी मोजिज़ाना (चमत्कारी) अन्दाज़ से हुई थी।

"खाती फिरा करे अल्लाह की ज़मीन में" के अन्दर इसकी तरफ़ इशारा है कि इस ऊँटनी के खाने-पीने में तुम्हारी मिल्क और तुम्हारे घर से कुछ नहीं जाता, ज़मीन अल्लाह की है उसकी

पैदावार का पैदा करने वाला वही है, उसकी ऊँटनी को उसकी ज़मीन में आज़ाद छोड़ दो ताकि वह आ़म चरागाहों में खाती रहे।

क़ौमे समूद जिस कुएँ से पानी पीते पिलाते थे उसी से यह ऊँटनी भी पानी पीती थी, मगर यह अ़जीब अन्दाज़ से पैदा शुदा ऊँटनी जब पानी पीती तो पूरे कुएँ का पानी ख़त्म कर देती थी। हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से यह फ़ैसला फ़रमा दिया था कि एक दिन यह ऊँटनी पानी पियेगी और दूसरे दिन क़ौम के सब लोग पानी लेंगे, और जिस दिन यह ऊँटनी पानी पियेगी तो दूसरों को पानी के बजाय ऊँटनी का दूध उतनी मात्रा में मिल जाता था कि वे अपने सारे बर्तन उससे भर लेते थे। क़ुरआन मजीद में दूसरी जगह इस तक़सीम का ज़िक्र आया है:

وَنَبِّئْهُمْ اَنَّ الْمَآءَ قِسْمَةٌ م بَيْنَهُمْ كُلُّ شِرْبٍ مُّحْتَضَرٌ.

यानी सालेह अ़लैहिस्सलाम आप अपनी क़ौम को बतला दें कि कुएँ का पानी उनके और अल्लाह की ऊँटनी के बीच तक़सीम होगा। एक दिन ऊँटनी का और दूसरे दिन पूरी क़ौम का। और इस तक़सीम पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से फ़रिश्तों की निगरानी मुसल्लत होगी ताकि कोई इसके ख़िलाफ़ न कर सके। और एक दूसरी आयत में है:

هٰذِهٖ نَاقَةٌ لَّهَا شِرْبٌ وَّلَكُمْ شِرْبُ يَوْمٍ مَّعْلُوْمٍ.

यानी यह अल्लाह की ऊँटनी है, एक दिन पानी का हक़ इसका और दूसरे दिन का पानी तुम्हारे लिये तयशुदा व मुक़र्रर है।

दूसरी आयत में इस वायदा भुलाने वाली नाफ़रमान क़ौम की ख़ैरख़्वाही और उनको अल्लाह के अ़ज़ाब से बचाने के लिये फिर उनको अल्लाह के इनामात व एहसानात याद दिलाये कि अब भी ये लोग अपनी सरकशी (बुरी हरकतों और नाफ़रमानी) से बाज़ आ जायें। फ़रमायाः

وَاذْكُرُوْٓا اِذْ جَعَلَكُمْ خُلَفَآءَ مِنْ م بَعْدِ عَادٍ وَّبَوَّاَكُمْ فِى الْاَرْضِ تَتَّخِذُوْنَ مِنْ سُهُوْلِهَا قُصُوْرًا وَّتَنْحِتُوْنَ الْجِبَالَ بُيُوْتًا.

इसमें **ख़ुलफ़ा** ख़लीफ़ा की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने हैं क़ायम-क़ाम और नायब। और **क़ुसूर** क़स्र की जमा है यह ऊँची आ़लीशान इमारत और महल को कहा जाता है। "तन्हितू-न" नहत से निकला है जिसके मायने हैं पत्थर तराशना, "जिबाल" जबल की जमा (बहुवचन) है जिसके मायने पहाड़ के हैं। "बुयूता" बैत की जमा है जो घर के कमरे के लिये बोला जाता है। मायने यह हैं कि अल्लाह तआ़ला की इस नेमत को याद करो कि उसने क़ौमे आ़द को हलाक करके उनकी जगह तुमको बसाया। उनकी ज़मीन और मकानात तुम्हारे क़ब्ज़े में दे दिये और तुमको यह हुनर और फ़न सिखला दिया कि खुली ज़मीन में बड़े-बड़े महल बना लेते हो और पहाड़ों को तराश कर उनमें कमरे और मकानात बना लेते हो। आयत के आख़िर में फ़रमायाः

فَاذْكُرُوْٓا اٰلَآءَ اللّٰهِ وَلَا تَعْثَوْا فِى الْاَرْضِ مُفْسِدِيْنَ.

यानी अल्लाह की नेमतें याद करो और उनका एहसान मानो। उसकी इताअ़त इख़्तियार करो और ज़मीन में फ़साद फैलाते मत फिरो।

अहकाम व मसाईल

उक्त आयतों से चन्द उसूली और उनसे निकलने वाले मसाईल मालूम हुए।

अव्वल यह कि बुनियादी अ़क़ीदों में तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम मुत्तफ़िक़ (एक राय) हैं और उनकी शरीअ़तें एक हैं, सब की दावत तौहीद के साथ अल्लाह की इबादत करना और उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी (उल्लंघन) पर दुनिया व आख़िरत के अ़ज़ाब से डराना है।

दूसरे यह कि तमाम पिछली उम्मतों में होता भी रहा है कि क़ौमों के बड़े दौलतमन्द आबरूदार लोगों ने उनकी दावत को क़ुबूल नहीं किया और उसके नतीजे में दुनिया में भी हलाक व बरबाद हुए और आख़िरत में भी अ़ज़ाब के हक़दार हुए।

तीसरे तफ़सीरे क़ुर्तुबी में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि अल्लाह तआ़ला की नेमतें दुनिया में काफ़िरों पर भी मुतवज्जह होती हैं, जैसा कि क़ौमे आ़द व समूद पर अल्लाह तआ़ला ने दौलत व क़ुव्वत के दरवाज़े खोल दिये थे।

चौथे तफ़सीरे क़ुर्तुबी ही में है कि इस आयत से मालूम हुआ कि बड़े-बड़े महलों और आ़लीशान मकानों की तामीर भी अल्लाह तआ़ला की नेमत है और उनका बनाना जायज़ है। यह दूसरी बात है कि अम्बिया व औलिया-अल्लाह ने इसको इसलिये पसन्द नहीं फ़रमाया कि ये चीज़ें इनसान को ग़फ़लत में डाल देने वाली हैं। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जो ऊँची तामीरों के बारे में इरशादात मन्क़ूल हैं वो इसी अन्दाज़ के हैं।

तीसरी और चौथी आयत में वह गुफ़्तगू और मुबाहसा ज़िक्र किया गया है जो क़ौमे समूद के दो गिरोहों के बीच हुआ। एक वह गिरोह जो सालेह अ़लैहिस्सलाम प्र ईमान ले आया था, दूसरा इनकारियों और काफ़िरों का गिरोह। इरशाद फ़रमायाः

قَالَ الْمَلَاُ الَّذِيْنَ اسْتَكْبَرُوْا مِنْ قَوْمِهٖ لِلَّذِيْنَ اسْتُضْعِفُوْا لِمَنْ اٰمَنَ مِنْهُمْ.

यानी कहा क़ौमे सालेह में से उन लोगों ने जिन्होंने तकब्बुर किया उन लोगों से जिनको बेइज़्ज़त व कमज़ोर समझा जाता था, यानी जो ईमान लाये थे।

इमाम राज़ी रह. ने तफ़सीरे कबीर में फ़रमाया कि इस जगह इन दोनों गिरोहों के दो गुण क़ुरआने करीम ने बतलाये मगर काफ़िरों का वस्फ़ (गुण) मारूफ़ के कलिमे से बतलाया "इस्तक्बरू" और मोमिनों का वस्फ़ मजहूल के कलिमे से बतलाया "उस्तुज़्इफ़ू" इसमें इशारा पाया जाता है कि काफ़िरों का यह हाल कि वे तकब्बुर करते थे ख़ुद उनका अपना फ़ेल था, जो पकड़ और मलामत के क़ाबिल और अन्जामकार अ़ज़ाब का सबब हुआ। और मोमिनों का जो वस्फ़ ये लोग बयान करते थे कि वे ज़लील व हक़ीर और कमज़ोर हैं, यह काफ़िरों का कहना है ख़ुद मोमिनों का वास्तविक हाल और वस्फ़ नहीं, जिस पर कोई मलामत हो सके, बल्कि मलामत (बुरा-भला कहना और निंदा करना) उन लोगों पर है जो बिना वजह उनको ज़लील व ज़ईफ़

कहते और समझते हैं। आगे वह बातचीत जो दोनों गिरोहों में हुई यह है कि काफ़िरों ने मोमिनों से कहा कि क्या तुम वाक़ई यह जानते हो कि सालेह अ़लैहिस्सलाम अपने रब की तरफ़ से भेजे हुए रसूल हैं? मोमिनों ने जवाब दिया कि जो हिदायतें वह अल्लाह की तरफ़ से देकर भेजे गये हैं हम उन सब पर यक़ीन व ईमान रखते हैं।

तफ़सीरे कश्शाफ़ में है कि क़ौमे समूद के मोमिनों ने कैसा बेहतरीन और भरपूर जवाब दिया है कि तुम जिस बहस में पड़े हुए हो कि यह रसूल हैं या नहीं, यह बात बहस के क़ाबिल ही नहीं बल्कि आसानी से समझ में आने वाली और यक़ीनी है, और यह भी यक़ीनी है कि वह जो कुछ फ़रमाते हैं वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से लाया हुआ पैग़ाम है। बात कुछ हो सकती है तो यह कि कौन उन पर ईमान लाता है कौन नहीं, सो अल्लाह का शुक्र व एहसान है कि हम तो उनकी लाई हुई सब हिदायतों पर ईमान रखते हैं।.

मगर उनके इस उम्दा और स्पष्ट जवाब पर भी क़ौम ने वही सरकशी की बात की कि जिस चीज़ पर तुम ईमान लाये हो हम उसके इनकारी हैं। दुनिया की मुहब्बत और दौलत व क़ुव्वत के नशे से अल्लाह तआ़ला महफ़ूज़ रखे कि वह इनसान की आँखों का पर्दा बन जाते हैं और वह आसानी से समझ में आने वाली चीज़ों का इनकार करने लगता है।

فَعَقَرُوا النَّاقَةَ وَعَتَوْا عَنْ اَمْرِ رَبِّهِمْ وَقَالُوْا يٰصٰلِحُ ائْتِنَا بِمَا تَعِدُنَآ اِنْ كُنْتَ مِنَ الْمُرْسَلِيْنَ ۞ فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ فَاَصْبَحُوْا فِيْ دَارِهِمْ جٰثِمِيْنَ ۞ فَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يٰقَوْمِ لَقَدْ اَبْلَغْتُكُمْ رِسَالَةَ رَبِّيْ وَنَصَحْتُ لَكُمْ وَلٰكِنْ لَّا تُحِبُّوْنَ النّٰصِحِيْنَ ۞

फ़-अ़-क़रुन्नाक़-त व अ़तौ अ़न् अम्रि रब्बिहिम् व क़ालू या सालिहुअ्तिना बिमा तअ़िदुना इन् कुन्-त मिनल्-मुर्सलीन (77) फ़-अ-ख़ज़त्हुमुर्रज्फ़तु फ़-अस्बहू फ़ी दारिहिम् जासिमीन (78) फ़-तवल्ला अ़न्हुम् व क़ा-ल या क़ौमि ल-क़द् अब्लग़्तुकुम् रिसाल-त रब्बी व नसह्तु लकुम् व लाकिल्ला तुहिब्बूनन्-नासिहीन (79)	फिर उन्होंने काट डाला ऊँटनी को और फिर गये अपने रब के हुक्म से, और बोले ऐ सालेह! ले आ हम पर जिस से तू हमको डराता था अगर तू रसूल है। (77) पस आ पकड़ा उनको ज़लज़ले ने फिर सुबह को रह गये अपने घर में औंधे पड़े। (78) फिर सालेह उल्टा फिरा उनसे और बोला ऐ मेरी क़ौम! मैं पहुँचा चुका तुम को पैग़ाम अपने रब का और ख़ैरख़्वाही की तुम्हारी लेकिन तुमको मुहब्बत नहीं ख़ैरख़्वाहों (भला चाहने वालों) से। (79)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

ग़र्ज़ कि (न सालेह अ़लैहिस्सलाम पर ईमान लाये और न ऊँटनी के हुक़ूक़ अदा किये बल्कि) उन्होंने उस ऊँटनी को (भी) मार डाला और अपने परवर्दिगार के हुक्म (मानने) से (भी) सरकशी की (वह हुक्म तौहीद व रिसालत पर ईमान लाना था), और (इस पर यह दुस्साहस किया) कहने लगे कि ऐ सालेह! जिस (अ़ज़ाब) की आप हमको धमकी देते थे उसको मंगवाईए, अगर आप पैग़म्बर हैं (क्योंकि पैग़म्बर का सच्चा होना लाज़िमी है)। पस आ पकड़ा उनको ज़लज़ले ने, सो अपने घरों में औंधे (के औंधे) पड़े रह गए। उस वक़्त वह (यानी सालेह अ़लैहिस्सलाम) उनसे मुँह मोड़कर चले और (बतौर हसरत के फ़र्ज़ी ख़िताब करके) फ़रमाने लगे कि ऐ मेरी क़ौम! मैंने तो तुमको अपने परवर्दिगार का हुक्म पहुँचा दिया था, (जिस पर अ़मल करना कामयाबी का ज़रिया था) और मैंने तुम्हारी (बहुत) ख़ैरख़्वाही की (कि किस तरह शफ़क़त से समझाया) लेकिन (अफ़सोस तो यह है कि) तुम लोग (अपने) ख़ैरख़्वाहों को पसन्द ही नहीं करते थे (इसलिये एक न सुनी और आख़िर यह बुरा दिन देखा)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

पिछली आयतों में आ चुका है कि हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम की दुआ़ से पहाड़ की एक बड़ी चट्टान फटकर उससे एक अ़जीब व ग़रीब ऊँटनी पैदा हो गयी थी और अल्लाह तआ़ला ने उस ऊँटनी को भी उस क़ौम के लिये आख़िरी इम्तिहान इस तरह बना दिया था कि जिस कुएँ से सारी बस्ती के लोग और उनके मवेशी (जानवर) पानी हासिल करते थे, यह उसका सारा पानी पी जाती थी, इसलिये सालेह अ़लैहिस्सलाम ने उनके लिये बारी मुक़र्रर कर दी थी कि एक दिन यह ऊँटनी पानी पिये दूसरे दिन बस्ती वाले।

क़ौमे समूद उस ऊँटनी की वजह से तकलीफ़ में मुब्तला थे और चाहते थे कि किसी तरह यह हलाक हो जाये, मगर ख़ुद ऐसी हरकत करने से डरते थे कि ख़ुदा तआ़ला का अ़ज़ाब आ जायेगा।

शैतान का सबसे बड़ा वह फ़रेब जिसमें मुब्तला होकर इनसान अपने होश व अ़क़्ल खो बैठता है वह औरत का फ़ितना है। क़ौम की दो हसीन व सुन्दर औरतों ने यह बाज़ी लगा दी कि जो शख़्स इस ऊँटनी को क़त्ल कर देगा हम और हमारी लड़कियों में से जिसको चाहे वह उसकी है।

क़ौम के दो नौजवान "मिस्दअ़" और "क़ज़ार" इस नशे में मदहोश होकर उस ऊँटनी को क़त्ल करने के लिये निकले और ऊँटनी के रास्ते में एक पत्थर की चट्टान के नीचे छुपकर बैठ गये। जब ऊँटनी सामने आई तो मिस्दअ़ ने तीर का वार किया और क़ज़ार ने तलवार से उसकी टाँगें काटकर क़त्ल कर दिया।

क़ुरआने करीम ने इसी को क़ौमे समूद का सबसे बड़ा बदबख़्त क़रार दिया है:

اِذِانْبَعَثَ اَشْقٰهَا.

क्योंकि इसके सबब पूरी क़ौम अ़ज़ाब में गिरफ़्तार हो गयी।

हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने ऊँटनी के क़त्ल का वाक़िआ़ मालूम होने के बाद क़ौम को अल्लाह के हुक्म से बतला दिया कि अब तुम्हारी ज़िन्दगी के सिर्फ़ तीन दिन बाक़ी हैं:

تَمَتَّعُوْا فِیْ دَارِكُمْ ثَلٰثَةَ اَیَّامٍ. ذٰلِكَ وَعْدٌ غَیْرُ مَكْذُوْبٍ.

यानी तीन दिन और अपने घरों में आराम कर लो (उसके बाद अ़ज़ाब आने वाला है) और यह वायदा सच्चा है इसमें ख़िलाफ़ की सम्भावना नहीं। मगर जिस क़ौम का वक़्त ख़राब आ जाता है उसके लिये कोई नसीहत व तंबीह कारगर नहीं होती। हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के इस इरशाद पर भी उन बदबख़्त लोगों ने मज़ाक़ उड़ाना शुरू किया और कहने लगे कि यह अ़ज़ाब कैसे और कहाँ से आयेगा, और उसकी निशानी क्या होगी?

हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि लो अ़ज़ाब की निशानी और पहचान भी सुन लो। कल जुमेरात के दिन तुम सब के चेहरे बहुत ही पीले हो जायेंगे, मर्द व औ़रत, बच्चा बूढ़ा कोई इससे अलग न होगा। फिर परसों जुमे के दिन सब के चेहरे ख़ूब लाल हो जायेंगे और तरसों शनिवार को सब के चेहरे बहुत ज़्यादा काले हो जायेंगे। और यह दिन तुम्हारी ज़िन्दगी का आख़िरी दिन होगा। बदनसीब क़ौम ने यह सुनकर भी बजाय इसके कि तौबा व इस्तिग़फ़ार की तरफ़ मुतवज्जह हो जाते, यह फ़ैसला किया कि सालेह अ़लैहिस्सलाम ही को क़त्ल कर दिया जाये। क्योंकि अगर ये सच्चे हैं और हम पर अ़ज़ाब आना ही है तो हम अपने से पहले इनका काम तमाम क्यों न कर दें, और अगर झूठे हैं तो अपने झूठ का ख़मियाज़ा भुगतें। क़ौम के इस इरादे का तज़किरा क़ुरआन में दूसरी जगह तफ़सील से मौजूद है। क़ौम के इस सर्वसम्मति के फ़ैसले के मातहत कुछ लोग रात को हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के मकान पर क़त्ल के इरादे से गये मगर अल्लाह तआ़ला ने रास्ते ही में उन पर पत्थर बरसाकर हलाक कर दिया:

وَمَكَرُوْا مَكْرًا وَّمَكَرْنَا مَكْرًا وَّهُمْ لَا یَشْعُرُوْنَ.

यानी उन्होंने भी एक ख़ुफ़िया तदबीर की और हमने भी ऐसी तदबीर की कि उनको उसकी ख़बर न हुई।

और जब जुमेरात की सुबह हुई तो सालेह अ़लैहिस्सलाम के कहने के मुताबिक़ सब के चेहरे ऐसे ज़र्द (पीले) हो गये जैसे गहरा ज़र्द रंग फेर दिया गया हो। अ़ज़ाब की पहली अ़लामत (निशानी) के सच्चा होने के बाद भी ज़ालिमों को इस तरफ़ कोई तवज्जोह न हुई कि अल्लाह तआ़ला पर ईमान लाते और अपनी ग़लत हरकतों से बाज़ आ जाते। बल्कि उनका ग़ुस्सा व आक्रोश हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के प्रति और बढ़ गया और पूरी क़ौम उनके क़त्ल की फ़िक्र में फिरने लगी। अल्लाह तआ़ला अपने क़हर से बचाये उसकी भी निशानियाँ होती हैं कि दिल व दिमाग़ औंधे हो जाते हैं, नफ़े को नुक़सान और नुक़सान को नफ़ा, अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा समझने लगते हैं।

आख़िरकार दूसरा दिन आया तो भविष्यवाणी के मुताबिक़ सब के चेहरे सुर्ख़ हो गये और तीसरे दिन बहुत काले हो गये। अब तो ये सब के सब अपनी ज़िन्दगी से मायूस होकर इन्तिज़ार करने लगे कि अज़ाब किस तरफ़ से किस तरह आता है।

इसी हाल में ज़मीन से एक सख़्त ज़लज़ला आया और ऊपर से सख़्त डरावनी चीख़ और तेज़ आवाज़ हुई जिससे सब के सब एक ही वक़्त में बैठे-बैठे औंधे गिरकर मर गये। ज़लज़ले का ज़िक्र तो इन आयतों में मौजूद है जो ऊपर बयान हुई हैं:

فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ

रजफ़ा के मायने हैं ज़लज़ला।

और दूसरी आयतों में:

فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ

भी आया है। "सैहा" के मायने हैं चीख़ और सख़्त तेज़ आवाज़। दोनों आयतों से मालूम हुआ कि दोनों तरह के अज़ाब उन पर जमा हो गये थे। ज़मीन से ज़लज़ला और ऊपर से चीख़ और तेज़ आवाज़ जिसका नतीजा यह हुआ कि वे औंधे मुँह गिरकर बेजान हो गये और सब के सब अल्लाह के अज़ाब के सामने ढेर हो गये। अल्लाह तआला हमें अपने क़हर और अज़ाब से अपनी हिफ़ाज़त में रखे। आमीन

क़ौमे समूद के इस क़िस्से के अहम अंश और हिस्से तो ख़ुद क़ुरआने करीम की विभिन्न सूरतों में मज़कूर हैं और कुछ हिस्से हदीस की रिवायतों में बयान हुए हैं। कुछ वो भी हैं जो मुफ़स्सिरीन ने इस्राईली रिवायतों से लिये हैं, मगर उन पर किसी वाक़िए और हक़ीक़त के सुबूत का मदार नहीं।

सही बुख़ारी की एक हदीस में है कि ग़ज़्वा-ए-तबूक (तबूक की मुहिम) के सफ़र में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा किराम का गुज़र उस मक़ामे हिज्र पर हुआ जहाँ क़ौमे समूद पर अज़ाब आया था, तो आपने सहाबा किराम को हिदायत फ़रमाई कि इस अज़ाब से ग्रस्त बस्ती की ज़मीन में कोई अन्दर न जाये और न इसके कुएँ का पानी इस्तेमाल करे।

(तफ़सीरे मज़हरी)

और कुछ रिवायतों में है कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि क़ौमे समूद पर जब अज़ाब आया तो उनमें सिवाय एक शख़्स अबू रिग़ाल के कोई नहीं बचा। यह शख़्स उस वक़्त हरमे मक्का में पहुँचा हुआ था, अल्लाह तआ़ला ने हरमे मक्का के सम्मान के सबब उस वक़्त इसको अज़ाब से बचा लिया और आख़िरकार जब यह हरम से निकला तो वही अज़ाब जो इसकी क़ौम पर आया था इस पर भी आ गया और यहीं हलाक हो गया। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लोगों को मक्का से बाहर अबू रिग़ाल की क़ब्र का निशान भी दिखलाया और यह भी फ़रमाया कि इसके साथ एक सोने की छड़ी भी दफ़न हो गयी थी। सहाबा किराम ने क़ब्र खोली तो सोने की छड़ी मिल गयी, वह निकाल ली। इस रिवायत में यह

भी है कि ताईफ़ के नागरिक बनू सक़ीफ़ इसी अबू रिग़ाल की औलाद हैं। (तफ़सीरे मज़हरी)

इन अ़ज़ाब हुई क़ौमों की बस्तियों को अल्लाह तआ़ला ने आने वाली नस्लों के लिये इबरत का निशान बनाकर क़ायम रखा है और क़ुरआने करीम ने अ़रब के लोगों को बार-बार इस पर चौंकाया है कि तुम्हारे शाम के सफ़र के रास्ते पर ये स्थान आज भी दास्ताने इबरत बने हुए हैं:

لَمْ تُسْكَنْ مِّنْ بَعْدِهِمْ إِلَّا قَلِيْلًا.

क़ौमे सालेह के अ़ज़ाब के वाक़िए के आख़िर में इरशाद है:

فَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يٰقَوْمِ لَقَدْ اَبْلَغْتُكُمْ رِسَالَةَ رَبِّىْ وَنَصَحْتُ لَكُمْ وَلٰكِنْ لَّا تُحِبُّوْنَ النّٰصِحِيْنَ.

यानी क़ौम पर अ़ज़ाब नाज़िल होने के बाद हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम और उन पर ईमान लाने वाले मोमिन भी उस जगह को छोड़कर किसी दूसरी जगह चले गये। कुछ रिवायतों में है कि हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम के साथ चार हज़ार मोमिन थे, उन सब को लेकर यमन के इलाक़े हज़रेमूत में चले गये और वहीं हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम की वफ़ात हुई। और कुछ रिवायतों से उनका मक्का मुअ़ज़्ज़मा चला जाना और वहीं वफ़ात होना मालूम होता है।

इबारत के ज़ाहिर से मालूम होता है कि हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम ने चलते वक़्त अपनी क़ौम को ख़िताब करके फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! मैंने तुमको अपने रब का पैग़ाम पहुँचा दिया और तुम्हारी ख़ैरख़्वाही (भलाई) की मगर अफ़सोस तुम ख़ैरख़्वाहों को ही पसन्द नहीं करते।

यहाँ यह सवाल होता है कि जब सारी क़ौम अ़ज़ाब से हलाक हो चुकी तो अब उनको ख़िताब करने से क्या फ़ायदा? जवाब यह है कि एक फ़ायदा तो यही है कि इससे लोगों को इबरत (सीख हासिल) हो और यह ख़िताब ऐसा ही है जैसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ग़ज़्वा-ए-बदर में मरे हुए क़ुरैशी मुश्रिकों को ख़िताब करके कुछ कलिमात इरशाद फ़रमाये थे। और यह भी मुम्किन है कि हज़रत सालेह अ़लैहिस्सलाम का यह फ़रमाना अ़ज़ाब के नाज़िल होने और क़ौम की तबाही से पहले हुआ हो, अगरचे वाक़िए के बयान में इसको बाद में ज़िक्र किया है।

وَ لُوْطًا اِذْ قَالَ لِقَوْمِهٖٓ اَتَاْتُوْنَ الْفَاحِشَةَ مَا سَبَقَكُمْ بِهَا مِنْ اَحَدٍ مِّنَ الْعٰلَمِيْنَ ○ اِنَّكُمْ لَتَاْتُوْنَ الرِّجَالَ شَهْوَةً مِّنْ دُوْنِ النِّسَآءِ ۭ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ مُّسْرِفُوْنَ ○ وَمَا كَانَ جَوَابَ قَوْمِهٖٓ اِلَّآ اَنْ قَالُوْٓا اَخْرِجُوْهُمْ مِّنْ قَرْيَتِكُمْ ۚ اِنَّهُمْ اُنَاسٌ يَّتَطَهَّرُوْنَ ○ فَاَنْجَيْنٰهُ وَاَهْلَهٗٓ اِلَّا امْرَاَتَهٗ ۖ كَانَتْ مِنَ الْغٰبِرِيْنَ ○ وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ مَّطَرًا ۭ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُجْرِمِيْنَ ○

व लूतन् इज़् क़ा-ल लिक़ौमिही अ-तअ्तूनल्-फ़ाहि-श-त मा	और भेजा लूत को जब कहा उसने अपनी क़ौम को- क्या तुम करते हो ऐसी

स-ब-क़कुम् बिहा मिन् अ-हदिम् मिनल्-आ़लमीन (80) इन्नकुम् ल-तअ्तूनर्रिजा-ल शह्व-तम् मिन् दूनिन्निसा-इ, बल् अन्तुम् क़ौमुम्-मुस्रिफ़ून (81) व मा का-न जवा-ब क़ौमिही इल्ला अन् क़ालू अख़्रिजूहुम् मिन् क़र्यतिकुम् इन्नहुम् उनासुंय्--य-ततह्हरून (82) फ़-अन्जैनाहु व अह्लहू इल्लम्र-अ-तहू कानत् मिनल्-ग़ाबिरीन (83) व अम्तर्ना अ़लैहिम् म-तरन्, फ़न्ज़ुर् कै-फ़ का-न आ़क़ि-बतुल्-मुज्रिमीन (84) ✿	बेहयाई कि तुमसे पहले नहीं किया उसको किसी ने जहान में? (80) तुम तो दौड़ते हो मर्दों पर शहवत के मारे औ़रतों को छोड़कर, बल्कि तुम लोग हो हद से गुज़रने वाले। (81) और कुछ जवाब न दिया उसकी क़ौम ने मगर यही कहा कि निकालो इनको अपने शहर से, ये लोग बहुत ही पाक रहना चाहते हैं। (82) फिर बचा दिया हमने उसको और उसके घर वालों को मगर उसकी औ़रत, कि रह गई वहाँ के रहने वालों में। (83) और बरसाई हमने उनके ऊपर बारिश यानी पत्थरों की, फिर देख क्या हुआ अन्जाम गुनाहगारों का। (84) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने लूत (अ़लैहिस्सलाम) को (चन्द बस्तियों की तरफ़ पैग़म्बर बनाकर) भेजा जबकि उन्होंने अपनी क़ौम (यानी अपनी उम्मत) से फ़रमाया- क्या तुम ऐसा फ़ुहश "यानी गन्दा और बुरा" काम करते हो जिसको तुमसे पहले किसी ने दुनिया जहान वालों में से नहीं किया (यानी) तुम औ़रतों को छोड़कर मर्दों के साथ इच्छा पूरी करते हो, (और इस काम के करने में यह नहीं कि तुमको कोई धोखा हो गया हो) बल्कि (इस बारे में) तुम (इनसानियत की) हद से ही गुज़र गए हो। और (इन बातों का) उनकी क़ौम से कोई (माक़ूल) जवाब न बन पड़ा सिवाय इसके कि (आख़िर में बेहूदगी की राह से) आपस में कहने लगे कि इन लोगों को (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम को और उनके साथी मोमिनों को) तुम अपनी (इस) बस्ती में से निकाल दो, (क्योंकि) ये लोग बड़े पाक-साफ़ बनते हैं (और हमको गन्दा बतलाते हैं। फिर गन्दों में पाकों का क्या काम। यह बात उन्होंने मज़ाक़ उड़ाने के तौर पर कही थी) सो (जब यहाँ तक नौबत पहुँची तो) हमने (उस क़ौम पर अ़ज़ाब नाज़िल किया और) उनको (यानी लूत अ़लैहिस्सलाम को) और उनके मुताल्लिक़ीन को (यानी उनके घर वालों को और दूसरे ईमान वालों को भी उस अ़ज़ाब से) बचा लिया (इस तरह कि वहाँ से निकल जाने का पहले ही हुक्म हो गया) सिवाय उनकी बीवी के, कि वह (ईमान न लाने के कारण) उन्हीं लोगों में रही जो अ़ज़ाब में रह गए थे। और (वह अ़ज़ाब जो

उन पर नाज़िल हुआ यह था कि) हमने उनके ऊपर एक नई तरह की बारिश बरसाई (जो कि पत्थरों की थी)। सो (ऐ देखने वाले) देख तो सही उन मुजरिमों का अन्जाम कैसा हुआ (अगर तू ग़ौर से देखेगा तो ताज्जुब करेगा और समझेगा कि नाफ़रमानी का क्या अन्जाम होता है)।

मआरिफ़ व मसाईल

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनकी उम्मतों के क़िस्सों का जो सिलसिला ऊपर से चल रहा है उसका चौथा क़िस्सा हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम का है।

लूत अ़लैहिस्सलाम हज़रत ख़लीलुल्लाह इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के भतीजे हैं। दोनों का असल वतन पश्चिमी इराक़ में बसरा के क़रीब अर्ज़-ए-बाबिल के नाम से परिचित था, उसमें बुत-परस्ती का आ़म रिवाज था। ख़लीलुल्लाह का घराना ख़ुद बुत-परस्ती में मुब्तला था। हक़ तआ़ला ने उनकी हिदायत के लिये इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम को रसूल बनाकर भेजा। क़ौम ने मुख़ालफ़त की जिसकी नौबत नमरूद की आग तक पहुँची। ख़ुद वालिद ने घर से निकाल देने की धमकियाँ दीं।

अपने घराने में से सिर्फ़ बीवी साहिबा हज़रत सारा और भतीजे हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम मुसलमान हुए। आख़िरकार इन्हीं दोनों को साथ लेकर वतन से मुल्क शाम की तरफ़ हिजरत फ़रमाई। नहर उर्दुन पर पहुँचने के बाद अल्लाह के हुक्म से हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम किनआ़न के इलाक़े में जाकर मुक़ीम हुए जो बैतुल-मुक़द्दस के क़रीब है।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम को भी हक़ तआ़ला ने नुबुव्वत अ़ता फ़रमाकर उर्दुन और बैतुल-मुक़द्दस के बीच मक़ाम सुदूम के लोगों की हिदायत के लिये भेजा। यह इलाक़ा पाँच अच्छे बड़े शहरों पर मुश्तमिल था। जिनके नाम सुदूम, अ़मूरा, अदमा, सबूबीम और बालेअ़ या सूग़र थे। इनके मजमूए को क़ुरआने करीम ने "मोतफ़िका" और "मोतफ़िकात" के अलफ़ाज़ में कई जगह बयान फ़रमाया है। सुदूम इन शहरों की राजधानी और मर्कज़ समझा जाता था। हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम ने यहीं क़ियाम फ़रमाया। ज़मीन हरी-भरी और शादाब थी, हर तरह के ग़ल्ले और फलों की कसरत थी (यह तारीख़ी तफ़सीलात तफ़सीर बहरे मुहीत, मज़हरी, इब्ने कसीर, अल्‌मनार वग़ैरह में बयान हुई हैं)।

इनसान की आ़म आ़दत क़ुरआने करीम ने बयान फ़रमाई है:

كَلَّآ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَيَطْغٰى. اَنْ رَّاٰهُ اسْتَغْنٰى.

यानी इनसान सरकशी (नाफ़रमानी) करने लगता है जब यह देखता है कि वह किसी का मोहताज नहीं रहा। इन लोगों पर भी हक़ तआ़ला ने अपनी नेमतों के दरवाज़े खोल दिये थे। आ़म इनसानी आ़दत के तहत दौलत व मालदारी के नशे में मुब्तला होकर ऐश व इशरत और इच्छा-परस्ती के उस किनारे पर पहुँच गये कि इनसानी ग़ैरत व हया और अच्छे-बुरे की फ़ितरी तमीज़ भी खो बैठे। ऐसी ख़िलाफ़े फ़ितरत गन्दगियों और बुराईयों में मुब्तला हो गये जो हराम और गुनाह होने के अ़लावा सही फ़ितरत के लिये क़ाबिले नफ़रत और ऐसे घिन के काम हैं कि आ़म जानवर भी उसके पास नहीं जाते।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम को अल्लाह तआ़ला ने उनकी हिदायत के लिये मामूर फ़रमाया। उन्होंने अपनी क़ौम को ख़िताब करके फ़रमायाः

أَتَأْتُونَ الْفَاحِشَةَ مَا سَبَقَكُم بِهَا مِنْ أَحَدٍ مِّنَ الْعَٰلَمِينَ.

यानी बतौर तंबीह के फ़रमाया- क्या तुम ऐसा फ़ुहश (गन्दा और बुरा) काम करते हो जो तुमसे पहले सारे जहान में किसी ने नहीं किया।

ज़िना के बारे में तो क़ुरआने करीम ने 'इन्नहू का-न फ़ाहिशतन्' बग़ैर अलिफ़ लाम के ज़िक्र किया है, और यहाँ अलिफ़ लाम के साथ "अल्फ़ाहिश-त" फ़रमाकर इसकी तरफ़ इशारा कर दिया कि यह ख़िलाफ़े फ़ितरत बदकारी गोया तमाम बुराईयों का मजमूआ़ और ज़िना से ज़्यादा सख़्त जुर्म है।

फिर यह फ़रमाया कि यह बदकारी तुमसे पहले सारे जहान में किसी ने नहीं की। अ़मर बिन दीनार ने फ़रमाया कि इस क़ौम से पहले दुनिया में कभी ऐसी हरकत न देखी गयी थी।

(तफ़सीरे मज़हरी)

और न सुदूम वालों से पहले किसी बुरे से बुरे इनसान का ज़ेहन इस तरफ़ गया। उमवी ख़लीफ़ा अ़ब्दुल-मलिक ने कहा कि अगर क़ुरआन में क़ौमे लूत का वाक़िआ़ मज़कूर न होता तो मैं कभी गुमान नहीं कि सकता था कि कोई इनसान ऐसा काम कर सकता है। (इब्ने कसीर)

इसमें उनकी बेहयाई पर दो हैसियत से तंबीह की गयी- अव्वल तो यह कि बहुत से गुनाहों में इनसान अपने माहौल या अपने बड़ों की पैरवी की वजह से मुब्तला हो जाता है अगरचे वह भी कोई शरई उज़्र नहीं, मगर उर्फ़ में उसको किसी न किसी दर्जे में माज़ूर कहा जा सकता है। मगर ऐसा गुनाह जो पहले किसी ने नहीं किया न उसके लिये ख़ास असबाब और माहौल है, यह और भी ज़्यादा वबाल है। दूसरे इस हैसियत से कि किसी बुरे काम या बुरी रस्म को जो शख़्स ईजाद करता (निकालता और शुरू करता) है उस पर अपने फ़ेल का गुनाह और अ़ज़ाब तो होता ही है इसके साथ उन तमाम लोगों का अ़ज़ाब व वबाल भी उसी की गर्दन पर होता है जो क़ियामत तक उसके फ़ेल से मुतास्सिर होकर गुनाह में मुब्तला हो जाते हैं।

दूसरी आयत में उनकी इस बेहयाई को ज़्यादा वाज़ेह अलफ़ाज़ में इस तरह बयान फ़रमाया कि तुम औ़रतों को छोड़कर मर्दों के साथ जिन्सी इच्छा पूर्ति करते हो। इसमें इशारा कर दिया कि इनसान की तबई और फ़ितरी इच्छा की पूर्ति और उसको बुझाने के लिये अल्लाह तआ़ला ने एक हलाल और जायज़ तरीक़ा औ़रतों से निकाह करने का मुक़र्रर फ़रमा दिया है उसको छोड़कर ग़ैर-फ़ितरी तरीक़े को इख़्तियार करना नफ़्स की ख़ालिस ख़बासत और ज़ेहन के गन्दा होने का सुबूत है।

इसी लिये सहाबा व ताबिईन और इमाम हज़रात ने इस जुर्म को आ़म बदकारी से ज़्यादा सख़्त जुर्म व गुनाह क़रार दिया है। इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रह. ने फ़रमाया कि ऐसा फ़ेल करने वाले को ऐसी ही सज़ा देनी चाहिये जैसी क़ौम लूत को अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से दी गयी कि आसमान से पत्थर बरसे, ज़मीन का तख़्ता उलट गया। इसलिये उस शख़्स को किसी

ऊँचे पहाड़ से गिराकर ऊपर से पथराव कर दिया जाये। मुस्नद अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा में हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु की रिवायत से मज़कूर है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसा काम करने वालों के बारे में फ़रमायाः

فاقتلوا الفاعل والمفعول به.

कि इस काम के करने और कराने वाले दोनों को क़त्ल कर देना चाहिये।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

بَلْ أَنْتُمْ قَوْمٌ مُّسْرِفُوْنَ.

यानी तुम ऐसी क़ौम हो जो इनसानियत की हद से गुज़र गयी है। यानी तुम्हारा असल रोग यह है कि तुम हर काम में उसकी हद से निकल जाते हो। जिन्सी इच्छा के बारे में भी ऐसा ही हुआ कि ख़ुदा तआ़ला की मुक़र्रर की हुई हद से निकल कर ग़ैर-फ़ितरी तरीक़े में मुब्तला हो गये।

तीसरी आयत में हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम की नसीहत के जवाब में उनकी क़ौम का जवाब इस तरह ज़िक्र फ़रमाया गया है कि उन लोगों से कोई माक़ूल जवाब तो बन नहीं सका, ज़िद में आकर आपस में यह कहने लगे कि ये लोग बड़ी पाकी और सफ़ाई के दावेदार हैं, इनका इलाज यह है कि इनको अपनी बस्ती से निकाल दो।

तीसरी और चौथी आयतों में सुदूम क़ौम के इस ग़लत चलन और बेहयाई की आसमानी सज़ा का ज़िक्र है और यह कि उस पूरी क़ौम पर अल्लाह तआ़ला का अ़ज़ाब नाज़िल हुआ, सिर्फ़ लूत अ़लैहिस्सलाम और उनके चन्द साथी अ़ज़ाब से महफ़ूज़ रहे। क़ुरआन पाक के अलफ़ाज़ मेंः

فَأَنْجَيْنٰهُ وَأَهْلَهٗ.

आया है, यानी हमने लूत और उनके घर वालों को अ़ज़ाब से निजात दी। यह अहल (घर वाले) कौन लोग थे, कुछ हज़राते मुफ़स्सिरीन का क़ौल है कि घर वालों में दो लड़कियाँ थीं जो मुसलमान हुई थीं। बीवी भी मुसलमान न हुई थी। क़ुरआन मजीद की एक दूसरी आयत मेंः

فَمَا وَجَدْنَا فِيْهَا غَيْرَ بَيْتٍ مِّنَ الْمُسْلِمِيْنَ.

बयान हुआ है कि उन तमाम बस्तियों में एक घर के सिवा कोई मुसलमान न था। इससे बज़ाहिर यही मालूम होता है कि सिर्फ़ लूत अ़लैहिस्सलाम के घर के आदमी मुसलमान थे जिनको अ़ज़ाब से निजात मिली, उनमें भी बीवी दाख़िल न थी। और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि अहल से मुराद आ़म है, अपने घर वाले और दूसरे मुताल्लिक़ीन जो मुसलमान हो चुके थे।

ख़ुलासा यह है कि गिने-चुने चन्द मुसलमान थे जिनको अल्लाह तआ़ला ने अ़ज़ाब से बचाने के लिये हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दे दिया कि बीवी के सिवा दूसरे घर वालों और अपने से जुड़े लोगों को लेकर रात के आख़िरी हिस्से में इस बस्ती से निकल जायें और पीछे मुड़कर न देखें, क्योंकि जिस वक़्त आप इस बस्ती से निकल जायेंगे तो बस्ती वालों पर फ़ौरन अ़ज़ाब आ जायेगा।

हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म की तामील की, अपने घर वालों और मुताल्लिक़ लोगों को लेकर रात के आख़िरी हिस्से में सुदूम से निकल गये। बीवी के मुताल्लिक़ दो रिवायतें हैं- एक यह कि वह साथ चली ही नहीं, दूसरी यह कि कुछ दूर तक साथ चली मगर अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ पीछे मुड़कर बस्ती वालों का हाल देखना चाहती थी तो उसको अ़ज़ाब ने पकड़ लिया। क़ुरआन मजीद के विभिन्न मक़ामात में इस वाक़िए को संक्षिप्त और विस्तृत अन्दाज़ में बयान फ़रमाया गया है। यहाँ तीसरी आयत में सिर्फ़ इतना ज़िक्र है कि हमने लूत अ़लैहिस्सलाम और उनके घर वालों व मुताल्लिक़ीन को अ़ज़ाब से निजात दे दी मगर उनकी बीवी अ़ज़ाब में रह गयी। निजात देने की यह सूरत कि ये लोग रात के आख़िरी हिस्से में बस्ती से निकल जायें और मुड़कर न देखें दूसरी आयतों में बयान हुई है।

चौथी आयत में इस क़ौम पर नाज़िल होने वाले अ़ज़ाब को मुख़्तसर लफ़्ज़ों में सिर्फ़ इतना ज़िक्र किया गया है कि उन पर एक अ़जीब क़िस्म की बारिश भेजी गयी। और सूरः हूद में इस अ़ज़ाब की मुफ़स्सल कैफ़ियत यह बयान फ़रमाई है:

فَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا جَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهَا حِجَارَةً مِّنْ سِجِّيْلٍ. مَّنْضُوْدٍ مُّسَوَّمَةً عِنْدَ رَبِّكَ وَمَا هِيَ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ بِبَعِيْدٍ.

यानी जब हमारा अ़ज़ाब आ पहुँचा तो कर डाली हमने वह बस्ती ऊपर-नीचे और बरसाये उन पर पत्थर कंकर के एक-दूसरे के ऊपर, निशान लगे हुए तेरे रब के पास से, और नहीं है वह बस्ती इन ज़ालिमों से कुछ दूर।

इससे मालूम हुआ कि ऊपर से पत्थरों की बारिश भी हुई और नीचे से ज़मीन की पूरी परत को जिब्रीले अमीन ने उठाकर औंधा पलट दिया। और जिन पत्थरों की बारिश बरसी वो तह-ब-तह थे, यानी ऐसी लगातार बारिश हुई कि तह-ब-तह जमा हो गये और ये पत्थर निशान लगे हुए थे। कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि हर एक पत्थर पर उस शख़्स का नाम लिखा हुआ था जिसकी हलाकत के लिये वह फेंका गया था। और सूरः हिज्र की आयतों में इस अ़ज़ाब से पहले यह भी बयान हुआ है:

فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ مُشْرِقِيْنَ.

यानी आ पकड़ा उनको चिंघाड़ ने सूरज निकलते वक़्त।

इससे मालूम हुआ कि पहले आसमान से कोई सख़्त आवाज़ चिंघाड़ की सूरत में आई, फिर उसके बाद दूसरे अ़ज़ाब आये। ज़ाहिर अलफ़ाज़ से यह समझा जाता है कि चिंघाड़ के बाद पहले ज़मीन का तख़्ता उलट दिया गया फिर उस पर उनकी और अधिक ज़िल्लत व रुस्वाई और अपमान के लिये पथराव किया गया। और यह भी मुम्किन है कि पहले पथराव किया गया हो बाद में ज़मीन का तख़्ता उलट दिया गया हो। क्योंकि क़ुरआनी अन्दाज़े बयान में यह ज़रूरी नहीं कि जिस चीज़ का ज़िक्र पहले हुआ हो वह वाक़े होने के एतिबार से भी पहले हो।

क़ौमे लूत के हौलनाक अ़ज़ाबों में से ज़मीन का तख़्ता उलट देने की सज़ा उनके फ़ुहश व

बेहयाई के अ़मल के साथ ख़ास मुनासबत भी रखती है, कि उन्होंने एक उल्टे और ख़िलाफ़े फ़ितरत काम का अपराध किया है।

सूरः हूद की आयतों के आख़िर में क़ुरआने करीम ने अ़रब वालों की मज़ीद तंबीह के लिये यह भी फ़रमाया किः

وَمَا هِيَ مِنَ الظّٰلِمِيْنَ بِبَعِيْدٍ.

यानी ये उल्टी हुई बस्तियाँ इन ज़ालिमों से कुछ दूर नहीं। मुल्क शाम के सफ़र के रास्ते पर हर वक़्त इनके सामने आती हैं, मगर हैरत है कि ये उससे इबरत (सबक़) हासिल नहीं करते।

और यह मन्ज़र सिर्फ़ क़ुरआन नाज़िल होने के ज़माने में नहीं आज भी मौजूद है, बैतुल-मुक़द्दस और नहर उर्दुन के बीच आज भी ज़मीन का यह टुकड़ा बहर-ए-लूत या बहर-ए-मय्यित के नाम से नामित है। इसकी ज़मीन समन्दर की सतह से बहुत ज़्यादा गहराई में है और इसके एक ख़ास हिस्से पर एक दरिया की सूरत में एक अ़जीब क़िस्म का पानी मौजूद है, जिसमें कोई जानदार मछली, मेंढक वग़ैरह ज़िन्दा नहीं रह सकता। इसी लिये इसको बहर-ए-मय्यित बोलते हैं। यही मक़ाम सुदूम का बतलाया जाता है। अल्लाह तआ़ला हमें अपने ग़ुस्से व अ़ज़ाब से अपनी पनाह में रखे। आमीन

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا ۚ قَالَ يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ ۚ قَدْ جَآءَتْكُمْ بَيِّنَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ فَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيْزَانَ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ وَلَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا ۚ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝ وَلَا تَقْعُدُوْا بِكُلِّ صِرَاطٍ تُوْعِدُوْنَ وَتَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِهٖ وَتَبْغُوْنَهَا عِوَجًا ۚ وَاذْكُرُوْٓا اِذْ كُنْتُمْ قَلِيْلًا فَكَثَّرَكُمْ ۖ وَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِيْنَ ۝ وَاِنْ كَانَ طَآئِفَةٌ مِّنْكُمْ اٰمَنُوْا بِالَّذِىْٓ اُرْسِلْتُ بِهٖ وَطَآئِفَةٌ لَّمْ يُؤْمِنُوْا فَاصْبِرُوْا حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ بَيْنَنَا ۚ وَهُوَ خَيْرُ الْحٰكِمِيْنَ ۝

व इला मद्य-न अख़ाहुम् शुअ़ैबन्, क़ा-ल या क़ौमिअ़्बुदुल्ला-ह मा लकुम् मिन् इलाहिन् ग़ैरुहू, क़द् जाअत्कुम् बय्यि-नतुम् मिर्रब्बिकुम् फ़-औफ़ुल्कै-ल वल्मीज़ा-न व ला तब्ख़सुन्ना-स अश्या-अहुम् व ला	और मदयन की तरफ़ भेजा उनके भाई शुऐब को, बोला ऐ मेरी क़ौम! बन्दगी करो अल्लाह की कोई नहीं तुम्हारा माबूद. उसके सिवा, तुम्हारे पास पहुँच चुकी है दलील तुम्हारे रब की तरफ़ से, सो पूरी करो माप और तौल, और मत घटा कर दो लोगों को उनकी चीज़ें और मत

तुफ़्सिदू फ़िल्अर्ज़ि बअ्-द इस्लाहिहा, ज़ालिकुम् ख़ैरुल्लकुम् इन् कुन्तुम् मुअ्मिनीन (85) व ला तक़्अुदू बिकुल्लि सिरातिन् तूअिदू-न व तसुद्दू-न अन् सबीलिल्लाहि मन् आम-न बिही व तब्ग़ूनहा अि-वजन् वज़्कुरू इज़् कुन्तुम् क़लीलन् फ़-कस्स-रकुम् वन्ज़ुरू कै-फ़ का-न आक़ि-बतुल् मुफ़्सिदीन (86) व इन् का-न ताइ-फ़तुम् मिन्कुम् आमनू बिल्लज़ी उर्सिल्तु बिही व ताइ-फ़तुल् -लम् युअ्मिनू फ़स्बिरू हत्ता यह्कुमल्लाहु बैनना व हु-व ख़ैरुल्-हाकिमीन (87)	ख़राबी डालो ज़मीन में उसकी इस्लाह के बाद, यह बेहतर है तुम्हारे लिये अगर तुम ईमान वाले हो। (85) और मत बैठो रास्तों पर कि डराओ और रोको अल्लाह के रास्ते से उसको जो कि ईमान लाये उस पर और ढूँढो उसमें ऐब, और याद करो जबकि थे तुम बहुत थोड़े फिर तुमको बढ़ा दिया, और देखो क्या हुआ अन्जाम फ़साद करने वालों का। (86) और अगर तुममें से एक फ़िर्क़ा ईमान लाया उस पर जो मेरे हाथ भेजा गया और एक फ़िर्क़ा ईमान नहीं लाया तो सब्र करो जब तक अल्लाह फ़ैसला करे हमारे बीच, और वह सबसे बेहतर फ़ैसला करने वाला है। (87)

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

और हमने मदयन (वालों) की तरफ़ उनके भाई शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) को (पैग़म्बर बनाकर) भेजा। उन्होंने (मदयन वालों से) फ़रमाया कि ऐ मेरी क़ौम! तुम (सिर्फ़) अल्लाह तआ़ला की इबादत करो, उसके सिवा तुम्हारा कोई माबूद (बनने के क़ाबिल) नहीं, तुम्हारे पास तुम्हारे परवर्दिगार की तरफ़ से (मेरे नबी होने पर) एक स्पष्ट और खुली दलील (जो कि कोई मोजिज़ा है) आ चुकी है। (जब मेरी नुबुव्वत साबित है) तो (शरीअ़त के अहकाम में मेरा कहना मानो। चुनाँचे मैं कहता हूँ कि) तुम नाप और तौल पूरी-पूरी किया करो और लोगों का इन चीज़ों में नुक़सान मत किया करो (जैसा कि तुम्हारी आ़दत है), और रू-ए-ज़मीन में इसके बाद कि (तालीम व तौहीद, नबियों के भेजने, अ़दल व इन्साफ़ वाजिब होने और नाप-तौल के हुक़ूक़ अदा करने से) इसकी दुरुस्ती (तय) कर दी गई, फ़साद मत फैलाओ (यानी इन अहकाम की मुख़ालफ़त और कुफ़्र मत करो क्योंकि यह फ़साद और ख़राबी का सबब है)। यह (जो कुछ मैं कह रहा हूँ इस पर अ़मल करना) तुम्हारे लिए (दुनिया व आख़िरत दोनों में) फ़ायदेमन्द है, अगर तुम (मेरी) तस्दीक़ करो (जिस पर दलील क़ायम है और तस्दीक़ करके अ़मल करो तो उक्त बातें

दोनों जहान में नफ़ा देने वाली हैं, आख़िरत में तो ज़ाहिर है कि निजात होगी और दुनिया में शरीअ़त पर अ़मल करने से अमन व व्यवस्था क़ायम रहती है, ख़ासकर पूरा नापने तौलने में एतिबार बढ़ने के सबब तिजारत को तरक़्क़ी होती है)।

और तुम सड़कों पर (इस ग़र्ज़ से) मत बैठा करो कि अल्लाह पर ईमान लाने वालों को (ईमान लाने पर) धमकियाँ दो और (उनको) अल्लाह की राह (यानी ईमान) से रोको, और उस (राह) में कजी "यानी टेढ़ और कमी" (और शुब्हात) की तलाश में लगे रहो (कि बेजा एतिराज़ सोच-सोचकर लोगों को बहकाओ, ये लोग ज़िक्र हुए गुमराही के साथ इस गुमराह करने में भी मुब्तला थे कि सड़कों पर बैठकर आने वालों को बहकाते कि शुऐब अ़लैहिस्सलाम पर ईमान न लाना, नहीं तो हम तुमको मार डालेंगे। आगे नेमत याद दिलाकर दिलचस्पी दिलाने और डराने का मज़मून है यानी) और उस हालत को याद करो जबकि तुम (संख्या में या माल में) कम थे फिर अल्लाह तआ़ला ने तुमको (संख्या या माल में) ज़्यादा कर दिया (यह तो ईमान लाने के लिये शौक़ व दिलचस्पी दिलाना था) और देखो कि कैसा अन्जाम हुआ फ़साद (यानी कुफ़्र व झुठलाने और ज़ुल्म) करने वालों का (जैसे नूह और आ़द और समूद क़ौम वाले गुज़र चुके हैं इसी तरह तुम पर अ़ज़ाब आने का अन्देशा है, यह डराना है कुफ़्र पर)। और अगर (तुमको अ़ज़ाब न आने का इस पर शुब्हा हो कि) तुममें से कुछ (तो) उस हुक्म पर जिसको देकर मुझे भेजा गया है, ईमान लाए हैं, और कुछ ईमान नहीं लाए (और फिर भी दोनों फ़रीक़ एक ही हालत में हैं, यह नहीं कि ईमान न लाने वालों पर अ़ज़ाब आ गया हो, इससे मालूम होता है कि आपका अ़ज़ाब से डराना बेबुनियाद है) तो (इस शुब्हे का जवाब यह है कि फ़ौरन अ़ज़ाब न आने से यह कैसे मालूम हुआ कि अ़ज़ाब न आयेगा) ज़रा ठहर जाओ यहाँ तक कि हमारे (यानी दोनों फ़रीक़ों के) बीच में अल्लाह तआ़ला (अ़मली) फ़ैसला किए देते हैं (यानी अ़ज़ाब नाज़िल करके मोमिनों को निजात देंगे और काफ़िरों को हलाक करेंगे) और वह सब फ़ैसला करने वालों से बेहतर हैं (कि उनका फ़ैसला बिल्कुल मुनासिब ही होता है)।

मआ़रिफ़ व मसाईल

अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम के क़िस्से जिनका सिलसिला पिछली आयतों से चल रहा है, उनमें पाँचवाँ क़िस्सा हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम और उनकी क़ौम का है जो उपर्युक्त आयतों में बयान हुआ है।

मुहम्मद बिन इस्हाक़ की रिवायत के मुताबिक़ हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के बेटे मदयन की औलाद में से हैं और हज़रत लूत अ़लैहिस्सलाम से भी क़रीबी रिश्ता रखते हैं। मदयन हज़रत ख़लीलुल्लाह अ़लैहिस्सलाम के बेटे हैं उनकी नस्ल व औलाद भी मदयन के नाम से मशहूर हो गयी, और जिस बस्ती में इनका क़ियाम था उसको भी मदयन कहते हैं। गोया मद्यन एक क़ौम का भी नाम है और एक शहर का भी। यह शहर आज भी पूर्वी उर्दुन के बन्दरगाह मआ़न के क़रीब मौजूद है। क़ुरआने करीम में दूसरी जगह मूसा

अ़लैहिस्सलाम के क़िस्से में इरशाद हैः

وَلَمَّا وَرَدَ مَآءَ مَدْيَنَ.

इसमें यही बस्ती मुराद है। (इब्ने कसीर) हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम को उनके बयान की उम्दगी की वजह से **ख़तीबुल-अम्बिया** कहा जाता था। (इब्ने कसीर, बहरे मुहीत)

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम जिस क़ौम की तरफ़ भेजे गये हैं क़ुरआने करीम ने कहीं उनका अहले-मद्यन और अस्हाबे-मद्यन के नाम से ज़िक्र किया है और कहीं अस्हाबे-ऐका के नाम से। ऐका के मायने जंगल और वन के हैं।

कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि ये दोनों क़ौमें अलग-अलग थीं, दोनों की बस्तियाँ भी अलग थीं। हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम इनमें से पहले एक क़ौम की तरफ़ भेजे गये, उनकी हलाकत के बाद दूसरी क़ौम की तरफ़ भेजे गये। दोनों क़ौमों पर जो अ़ज़ाब आया उसके अलफ़ाज़ भी अलग-अलग हैं। मद्यन वालों पर कहीं **सैहा** और कहीं **रजफ़ा** मज़कूर है और ऐका वालों पर **अ़ज़ाबे ज़ुल्ला** ज़िक्र किया गया है। सैहा के मायने चिंघाड़ और सख़्त आवाज़ के और रजफ़ा के मायने ज़लज़ले के हैं, और ज़ुल्ला सायबान को कहा जाता है। ऐका वालों पर अ़ज़ाब की यह सूरत हुई कि पहले चन्द दिन उनकी पूरी बस्ती में सख़्त गर्मी पड़ी जिससे सारी क़ौम बिलबिला उठी। फिर उनके पास के जंगल पर एक गहरा बादल आया जिससे उस जंगल में साया हो गया और ठण्डी हवायें चलने लगीं। यह देखकर सारे बस्ती के आदमी उस बादल के साये में जमा हो गये। इस तरह ये ख़ुदाई मुजरिम बग़ैर किसी वारंट और सिपाही के अपने पाँव चलकर अपनी हलाकत की जगह पहुँच गये। जब सब जमा हो गये तो बादल से आग बरसी और ज़मीन में भी ज़लज़ला आया जिससे ये सब हलाक हो गये।

और कुछ मुफ़स्सिरीन हज़रात ने फ़रमाया कि मदयन वाले और ऐका वाले एक ही क़ौम का नाम है और अ़ज़ाब की जो तीन क़िस्में अभी ज़िक्र की गयी हैं तीनों इस क़ौम पर जमा हो गयीं। पहले बादल से आग बरसी फिर उसके साथ सख़्त आवाज़ चिंघाड़ की शक्ल में आई, फिर ज़मीन में ज़लज़ला आया। अ़ल्लामा इब्ने कसीर रह. ने इसी को इख़्तियार किया है।

बहरहाल ये दोनों क़ौमें अलग-अलग हों या एक ही क़ौम के दो नाम हों, हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने जो हक़ का पैग़ाम इनको दिया वह पहली और दूसरी आयतों में मज़कूर है। इस पैग़ाम की तफ़सीर से पहले यह समझ लें कि इस्लाम जो तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम की संयुक्त दावत है, उसका ख़ुलासा हुक़ूक़ की अदायेगी है। फिर हुक़ूक़ दो क़िस्म के हैं- एक डायरेक्ट अल्लाह तआ़ला का हक़ जिसके करने या छोड़ने से इनसानों का कोई ख़ास नफ़ा नुक़सान मुताल्लिक़ नहीं, जैसे इबादतें नमाज़ रोज़ा वग़ैरह। दूसरे बन्दों के हुक़ूक़ जिनका ताल्लुक़ इनसानों से है। और यह क़ौम इन दोनों हुक़ूक़ से बेख़बर और दोनों के ख़िलाफ़ काम कर रही थी।

ये लोग अल्लाह तआ़ला और उसके रसूलों पर ईमान न लाकर अल्लाह के हुक़ूक़ की

ख़िलाफ़वर्ज़ी कर रहे थे और इसके साथ ही ख़रीद व फ़रोख़्त में नाप-तौल घंटाकर लोगों के हुक़ूक़ को ज़ाया कर रहे थे, और इस पर मज़ीद यह कि रास्तों और सड़कों के थानों पर बैठ जाते और आने वालों को डरा-धमकाकर लूटते और शुऐब अ़लैहिस्सलाम पर ईमान लाने से रोकते थे। इस तरह रू-ए-ज़मीन पर फ़साद मचा रखा था। ये उनके सख़्त और मुख्य अपराध थे जिनकी इस्लाह (सुधार) के लिये हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम को भेजा गया था।

ज़िक्र हुई आयतों में से पहली दो आयतों में इस क़ौम की इस्लाह (सुधार) के लिये हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने तीन बातें फ़रमायीं- अव्वलः

يٰقَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَالَكُمْ مِّنْ اِلٰهٍ غَيْرُهٗ.

यानी ऐ मेरी क़ौम तुम अल्लाह की इबादत करो, उसके सिवा कोई तुम्हारा माबूद बनने के लायक़ नहीं। यह वही तौहीद की दावत है जो तमाम अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम देते आये हैं और जो तमाम अ़क़ीदों व आमाल की रूह है। चूँकि यह क़ौम भी मख़्लूक़ को पूजने में मुब्तला और अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात और उसके हुक़ूक़ से ग़ाफ़िल थी इसलिये इनको भी सबसे पहले यही पैग़ाम दिया गया। और फ़रमायाः

قَدْ جَآءَتْكُمْ بَيِّنَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ.

यानी तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से स्पष्ट और खुली दलील आ चुकी है। यहाँ स्पष्ट दलील से मुराद वो मोजिज़े हैं जो हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम के हाथ पर ज़ाहिर हुए। तफ़सीर बहरे मुहीत में मुख़्तलिफ़ सूरतें उनके मोजिज़ों की ज़िक्र की हैं।

दूसरी बात यह फ़रमाईः

فَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيْزَانَ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ.

इसमें **कैल** के मायने नाप और **मीज़ान** के मायने वज़न तौलने के हैं, और **बख़्स** के मायने किसी के हक़ में कमी करके नुक़सान पहुँचाने के हैं। आयत के मायने यह हैं कि तुम नाप-तौल पूरा किया करो और लोगों की चीज़ों में कमी करके उनको नुक़सान न पहुँचाया करो।

इसमें पहले तो एक ख़ास जुर्म से मना फ़रमाया गया जो ख़रीद व फ़रोख़्त के वक़्त नाप-तौल में कमी की सूरत से किया जाता था। बाद मेंः

لَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ.

फ़रमाकर हर तरह के हुक़ूक़ में काट-छाँट और कमी-कोताही को आ़म कर दिया। चाहे वह माल से मुताल्लिक़ हो या इज़्ज़त व आबरू से, या किसी दूसरी चीज़ से। (बहरे मुहीत)

इससे मालूम हुआ कि जिस तरह नाप-तौल में हक़ से कम देना हराम है इसी तरह दूसरे इनसानी हुक़ूक़ में कमी करना भी हराम है। किसी की इज़्ज़त व आबरू पर हमला करना या किसी के दर्जे और रुतबे के मुवाफ़िक़ उसका एहतिराम न करना, जिस-जिसकी इताअ़त वाजिब है उनकी इताअ़त में कोताही करना, या जिस शख़्स का सम्मान व अदब वाजिब है उसमें कोताही बरतना, ये सब बातें उसी जुर्म में दाख़िल हैं जो शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम किया

करती थी। हज्जतुल-विदा के ख़ुतबे में रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लोगों की आबरू को उनके ख़ून के बराबर सम्मानीय और क़ाबिले हिफ़ाज़त क़रार दिया है, इसका भी हासिल यही है।

क़ुरआन मजीद में जहाँ "मुतफ़्फ़िफ़ीन" और "ततफ़ीफ़" का ज़िक्र आया है उसमें ये सब चीज़ें दाख़िल हैं। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने एक शख़्स को जल्दी-जल्दी रुकूअ़ सज्दे करते हुए देखा तो फ़रमाया "क़द तफ़्फ़फ़्-त" यानी तूने नाप-तौल में कमी कर दी। (मुवत्ता इमाम मालिक) मुराद यह है कि नमाज़ का जो हक़ था वह तूने पूरा न किया। इसमें नमाज़ के हक़ को पूरा अदा न करने को ततफ़ीफ़ के लफ़्ज़ से ताबीर किया गया है।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَلَا تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا.

यानी ज़मीन की दुरुस्ती (ठीक होने) के बाद उसमें फ़साद मत फैलाओ। यह जुमला इसी सूरः आराफ़ में पहले भी आ चुका है, वहाँ इसके मायने की तफ़सील बयान हो चुकी है कि ज़मीन की ज़ाहिरी इस्लाह (बेहतरी और सुधार) हर चीज़ को उसकी सही जगह पर ख़र्च और इस्तेमाल करने और हदों की रियायत करने और अ़दल व इन्साफ़ क़ायम रखने पर मौक़ूफ़ है, और अन्दरूनी इस्लाह अल्लाह के साथ ताल्लुक़ और अल्लाह के अहकाम का पालन करने पर। इसी तरह ज़मीन का ज़ाहिरी और बातिनी फ़साद इन उसूलों को छोड़ देने से पैदा होता है। शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम ने इन तमाम उसूल को नज़र-अन्दाज़ कर रखा था जिसकी वजह से ज़मीन पर ज़ाहिरी और बातिनी हर तरह का फ़साद (ख़राबी और बिगाड़) बरपा था। इसलिये उनको यह नसीहत की गयी कि तुम्हारे ये आमाल सारी ज़मीन को ख़राब करने वाले हैं, इनसे बचो। फिर फ़रमायाः

ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ.

यानी यही बात तुम्हारे लिये फ़ायदेमन्द है अगर तुम मेरी बात मानो। मतलब यह है कि अगर तुम अपनी इन नाजायज़ हरकतों से बाज़ आ जाओ तो इसी में तुम्हारे दीन व दुनिया की बेहतरी और कामयाबी है। दीन और आख़िरत की बेहतरी व कामयाबी तो ज़ाहिर है कि अल्लाह के अहकाम पर अ़मल करने से जुड़ी है और दुनिया की कामयाबी व भलाई इसलिये कि जब लोगों को मालूम हो जायेगा कि फ़ुलाँ शख़्स नाप-तौल में और दूसरे हुक़ूक़ में ईमानदारी से काम करता है तो बाज़ार में उसकी साख क़ायम होकर उसकी तिजारत को तरक़्क़ी होगी।

तीसरी आयत में जो यह इरशाद है कि तुम लोगों को डराने धमकाने और अल्लाह के रास्ते से रोकने के लिये रास्तों सड़कों पर न बैठा करो। इसका मतलब कुछ मुफ़स्सिरीन ने यह क़रार दिया कि ये दोनों जुमले एक ही मायने को अदा करते हैं कि ये लोग रास्तों पर बैठकर हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम के पास आने वालों को रोकते और डराते धमकाते थे, इससे मना किया गया।

और कुछ हज़रात ने फ़रमाया कि उनके ये दो जुर्म अलग-अलग थे। रास्तों पर बैठकर लूट-खसोट भी करते थे और हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम पर ईमान लाने से रोकते भी थे। पहले जुमले में पहला मज़मून और दूसरे जुमले में दूसरा मज़मून बयान फ़रमाया है। तफ़सीर बहरे मुहीत वग़ैरह में इसी को इख़्तियार किया है। और रास्तों पर बैठकर लूट-खसोट करने में इसको भी दाख़िल क़रार दिया है जो ख़िलाफ़े शरीअ़त नाजायज़ टैक्स वसूल करने के लिये रास्तों पर चौकियाँ बनाई जाती हैं।

अ़ल्लामा क़ुर्तुबी ने फ़रमाया कि जो लोग रास्तों पर बैठकर ख़िलाफ़े शरीअ़त नाजायज़ टैक्स वसूल करते हैं वे भी क़ौमे शुऐब की तरह मुजरिम हैं, बल्कि उनसे ज़्यादा ज़ालिम व जाबिर हैं।

आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَتَبْغُوْنَهَا عِوَجًا.

यानी तुम लोग अल्लाह के रास्ते में कजी (टेढ़ और कमी) की तलाश में लगे रहते हो कि कहीं उंगली रखने की जगह मिले तो एतिराज़ों व शुब्हात के दफ़्तर खोल दें और लोगों को दीने हक़ से बेज़ार करने की कोशिश करें।

इसके बाद आयत के आख़िर में फ़रमायाः

وَاذْكُرُوْآ اِذْ كُنْتُمْ قَلِيْلًا فَكَثَّرَكُمْ وَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِيْنَ.

इसमें उन लोगों की तंबीह के लिये शौक़ दिलाने और डराने के दोनों पहलू इस्तेमाल किये गये- अव्वल तो रुचि पैदा करने और शौक़ दिलाने के लिये अल्लाह तआ़ला की यह नेमत याद दिलाई कि तुम पहले संख्या और आंकड़ों के लिहाज़ से कम थे अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारी नस्लें बढ़ाकर एक बड़ी विशाल क़ौम बना दिया। या माल व सामान के एतिबार से कम थे अल्लाह तआ़ला ने दौलत अ़ता फ़रमाकर दूसरों से बेपरवाह कर दिया। फिर डराने के लिये फ़रमाया कि अपने से पहले फ़साद करने वाली क़ौमों के अन्जाम पर नज़र डालो कि क़ौमे नूह क़ौमे आ़द व समूद क़ौमे लूत पर क्या-क्या अ़ज़ाब आ चुके हैं, ताकि तुम समझ से काम लो।

पाँचवीं आयत में इस क़ौम के एक शुब्हे का जवाब है कि शुऐब अ़लैहिस्सलाम की ईमान वाली दावत के बाद उनकी क़ौम दो हिस्सों में बंट गयी- कुछ ईमान लाये कुछ इनकारी रहे। मगर ज़ाहिरी एतिबार से दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं। दोनों जमाअ़तें आराम व ऐश में बराबर हैं, अगर इनकारी होना कोई जुर्म होता तो मुजरिम को सज़ा मिलती। इसके जवाब में फ़रमायाः

فَاصْبِرُوْا حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ بَيْنَنَا.

यानी जल्दबाज़ी न करो अल्लाह तआ़ला अपने हिल्म व करम (बरदाश्त और मेहरबानी) से मुजरिमों को मोहलत देते हैं, जब वे बिल्कुल ही सरकश हो जाते हैं तो फिर फ़ैसला कर दिया जाता है। तुम्हारा भी यही हाल है, अगर तुम अपने इनकार से बाज़ न आये तो जल्दी ही इनकारियों पर निर्णायक अ़ज़ाब नाज़िल हो जायेगा।

पारा नम्बर 9 (क़ालल् म-लउ)

क़ालल् म-लउल्लज़ीनस्तक्बरू मिन् क़ौमिही लनुख़्रिजन्न-क या-शुऐबु वल्लज़ी-न आमनू म-अ-क मिन् क़र्यतिना औ ल-तअूदुन्-न फ़ी मिल्लतिना, क़ा-ल अ-व लौ कुन्ना कारिहीन (88) क़दिफ़्तरैना अ़लल्लाहि कज़िबन् इन् अ़ुद्ना फ़ी मिल्लतिकुम् बअ़्-द इज़् नज्जानल्लाहु मिन्हा, व मा यकूनु लना अन्-नअू-द फ़ीहा इल्ला अंय्यशा-अल्लाहु रब्बुना, वसि-अ़ रब्बुना कुल्-ल शैइन् अ़िल्मन्, अ़लल्लाहि तवक्कल्ना, रब्बनफ़्तह् बैनना व बै-न क़ौमिना	बोले सरदार जो घमण्डी थे उसकी क़ौम में, हम ज़रूर निकाल देंगे ऐ शुऐब तुझको और उनको जो कि ईमान लाये तेरे साथ अपने शहर से, या यह कि तुम लौट आओ हमारे दीन में। बोला क्या हम बेज़ार हों तो भी? (88) बेशक हमने बोहतान बाँधा अल्लाह पर झूठा अगर लौट आयें तुम्हारे दीन में बाद इसके कि निजात दे चुका हमको अल्लाह उससे, और हमारा काम नहीं कि लौट आयें उसमें मगर यह कि चाहे अल्लाह हमारा रब, घेरे हुए है हमारा परवर्दिगार सब चीज़ों को अपने इल्म में, अल्लाह ही पर हमने भरोसा किया। ऐ हमारे रब! फ़ैसला कर हम में और हमारी क़ौम में इन्साफ़ के साथ और तू सबसे बेहतर फ़ैसला करने वाला है। (89) और

बिल्हक़्क़ि व अन्-त ख़ैरुल्-फ़ातिहीन (89) व क़ालल् म-लउल्लज़ी-न क-फ़रू मिन् क़ौमिही ल-इनित्तबअ़्तुम् शुऐबन् इन्नकुम् इज़ल्-लख़ासिरून (90) फ़-अ-ख़ज़त्हुमुर्रज्फ़तु फ़अस्बहू फ़ी दारिहिम् जासिमीन (91) अल्लज़ी-न कज़्ज़बू शुऐबन् कअल्लम् यग़्नौ फ़ीहा, अल्लज़ी-न कज़्ज़बू शुऐबन् कानू हुमुल्-ख़ासिरीन (92) फ़-तवल्ला अ़न्हुम् व क़ा-ल या क़ौमि ल-क़द् अब्लग़्तुकुम् रिसालाति रब्बी व नसह्तु लकुम् फ़कै-फ़ आसा अ़ला क़ौमिन् काफ़िरीन (93) ✿	बोले सरदार जो काफ़िर थे उसकी क़ौम में- अगर पैरवी करोगे तुम शुऐब की तो तुम बेशक ख़राब होगे। (90) फिर आ पकड़ा उनको ज़लज़ले ने, पस सुबह को रह गये अपने घरों के अन्दर औंधे पड़े। (91) जिन्होंने झुठलाया शुऐब को गोया क़भी बसे ही न थे वहाँ, जिन्होंने झुठलाया शुऐब को वही हुए ख़राब। (92) फिर उल्टा फिरा उन लोगों से और बोला ऐ मेरी क़ौम! मैं पहुँचा चुका तुमको पैग़ाम अपने रब के और ख़ैरख़्वाही कर चुका तुम्हारी, अब क्या अफ़सोस करूँ काफ़िरों पर। (93) ✿

ख़ुलासा-ए-तफ़सीर

उनकी क़ौम के घमण्डी सरदारों ने (जो ये बातें सुनीं तो उन्होंने गुस्ताख़ी के तौर पर) कहा कि ऐ शुऐब! (याद रखिये) हम आपको और आपके साथ जो ईमान वाले हैं उनको अपनी बस्ती से निकाल देंगे, या (यह हो कि) तुम हमारे मज़हब में फिर आ जाओ (तो अलबत्ता हम कुछ न कहेंगे। यह बात मोमिनों के लिये इसलिये कही कि वे लोग ईमान लाने से पहले के उसी कुफ़्र के तरीक़े पर थे लेकिन शुऐब अ़लैहिस्सलाम के हक़ में बावजूद इसके कि अम्बिया से कभी कुफ़्र सादिर नहीं होता इसलिये कही कि उनके नबी बनने से पहले दावत का काम न करने के सबब वे यही समझते थे कि इनका एतिक़ाद भी हम ही जैसा होगा)। शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) ने जवाब दिया कि क्या (हम तुम्हारे मज़हब में आ जाएँगे) अगरचे हम उसको (समझ व दलील से) ना-पसन्द और बुरा (और क़ाबिले नफ़रत) ही समझते हों (यानी जब उसके बातिल होने पर दलील क़ायम है तो हम कैसे उसको इख़्तियार कर लें)? हम तो अल्लाह पर बड़ी झूठी तोहमत लगाने वाले हो जाएँ अगर (ख़ुदा न करे) हम तुम्हारे मज़हब में आ जाएँ (ख़ास कर) इसके बाद कि अल्लाह तआ़ला ने हमको उससे निजात दी हो (क्योंकि अव्वल तो वैसे ही कुफ़्र को दीने हक़ समझना यही अल्लाह पर तोहमत लगाना है कि यह दीन अल्लाह की पनाह! अल्लाह को पसन्द

है, ख़ुसूसन मोमिन का काफ़िर होना, चूँकि जानने और हक़ दलील के साथ क़ुबूल करने के बाद और ज़्यादा तोहमत है, एक तो वही तोहमत दूसरी यह तोहमत कि अल्लाह ने जो मुझको दलील का इल्म दिया था जिसको मैं हक़ समझता था वह ग़लत इल्म दिया था। और शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने वापस लौटने का लफ़्ज़ सब के साथ मिलने या उन लोगों के सवाल के अन्दाज़ में उन्हीं जैसा अन्दाज़ अपनाने के एतिबार से या उनके गुमान को फ़र्ज़ करके बरता) और हमसे मुम्किन नहीं कि उसमें (यानी तुम्हारे मज़हब में) फिर आ जाएँ, लेकिन हाँ यह कि अल्लाह ही ने जो कि हमारा मालिक है हमारे मुक़द्दर (में) किया हो, (जिसकी मस्लेहत उन्हीं के इल्म में है, तो ख़ैर और बात है) हमारे रब का इल्म हर चीज़ को घेरे हुए है (उस इल्म से वह सब मुक़द्दर हुई चीज़ों की मस्लेहतों को जानते हैं, मगर) हम अल्लाह तआ़ला ही पर भरोसा रखते हैं (और भरोसा करके यह उम्मीद करते हैं कि वह हमको दीने हक़ पर जमाये रखे। और इससे यह शुब्हा न किया जाये कि उनको अपने ईमान पर ख़ात्मे का यक़ीन न था, अम्बिया को यह यक़ीन दिया जाता है, बल्कि इससे मक़सद अपनी आ़जिज़ी व इन्किसारी और ख़ुद को अपने मालिक के सुपुर्द कर देने का इज़हार है जो कि नुबुव्वत की विशेषताओं में से है। और अगर इसको दूसरे मोमिनों के एतिबार से लिया जाये तो कोई शुब्हा ही पैदा नहीं होता। यह जवाब देकर जब देखा कि उनसे ख़िताब करना बिल्कुल बेफ़ायदा है और उनके ईमान लाने की बिल्कुल उम्मीद नहीं तो उनसे ख़िताब छोड़कर हक़ तआ़ला से दुआ़ की कि) ऐ हमारे परवर्दिगार! हमारे और हमारी (इस) क़ौम के बीच फ़ैसला कर दीजिए (जो कि हमेशा) हक़ के मुवाफ़िक़ (हुआ करता है, क्योंकि ख़ुदाई फ़ैसले का हक़ होना लाज़िम है। यानी अब अ़मली तौर पर हक़ का हक़ और बातिल का बातिल होना स्पष्ट कर दीजिए), और आप सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाले हैं।

और उनकी क़ौम के (उन्हीं ज़िक्र किए गये) काफ़िर सरदारों ने (शुऐब अ़लैहिस्सलाम की यह दिल में उतर जाने वाली तक़रीर सुनकर अन्देशा किया कि कहीं सुनने वालों पर इसका असर न हो जाये इसलिये उन्होंने बक़िया काफ़िरों से) कहा कि अगर तुम शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) की राह पर चलने लगोगे तो बेशक बड़ा नुक़सान उठाओगे (दीन का भी, क्योंकि हमारा मज़हब हक़ है, हक़ को छोड़ना ख़सारा है, और दुनिया का भी इसलिये कि पूरा नापने-तौलने में बचत कम होगी। ग़र्ज़ कि वे सब अपने कुफ़्र व ज़ुल्म पर जमे रहे, अब अ़ज़ाब की आमद हुई)। पस उनको ज़लज़ले ने आ पकड़ा, सो अपने घर में (औंधे के औंधे) पड़े रह गये। जिन्होंने शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) को झुठलाया था (और मुसलमानों को उनके घरों से निकालने को आमादा थे ख़ुद) उनकी यह हालत हो गई कि जैसे उन घरों में कभी बसे ही न थे। जिन्होंने शुऐब (अ़लैहिस्सलाम) को झुठलाया था (और उनकी पैरवी करने वाले को नुक़सान उठाने वाला बतलाते थे ख़ुद) वही घाटे में पड़ गये। उस वक़्त वह (यानी शुऐब अ़लैहिस्सलाम) उनसे मुँह मोड़कर चले और (हसरत व अफ़सोस के तौर पर फ़र्ज़ी ख़िताब करके) फ़रमाने लगे कि ऐ मेरी क़ौम! मैंने तुमको अपने परवर्दिगार के अहकाम पहुँचा दिए थे (जिन पर अ़मल करना हर तरह

की कामयाबी का ज़रिया था) और मैंने तुम्हारी (बड़ी) ख़ैरख़्वाही की, (कि किस-किस तरह समझाया गया मगर अफ़सोस तुमने न माना और यह बुरा दिन देखा। फिर उनके कुफ़्र व दुश्मनी वग़ैरह को याद करके फ़रमाने लगे कि जब उन्होंने अपने हाथों यह मुसीबत ख़रीदी तो) फिर मैं उन काफ़िर लोगों (के हलाक होने) पर क्यों रंज करूँ।

मआरिफ़ व मसाईल

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम से जब उनकी क़ौम ने यह कहा कि अगर आप हक़ पर होते तो आपके मानने वाले फलते-फूलते और न मानने वालों पर अ़ज़ाब आता, मगर हो यह रहा है कि दोनों फ़रीक़ बराबर दर्जे में आराम की ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं, तो हम आपको कैसे सच्चा मान लें? इस पर हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि जल्दबाज़ी न करो बहुत जल्दी अल्लाह तआ़ला हमारे तुम्हारे बीच फ़ैसला फ़रमा देंगे। इस पर क़ौम के घमण्डी सरदारों ने वही बात कही जो हमेशा ज़ालिम घमण्डी कहा करते हैं कि ऐ शुऐब! या तो तुम और जो लोग तुम पर ईमान लाये हैं वे सब हमारे मज़हब में वापस आ जाओ वरना हम तुम सब को अपनी बस्ती से निकाल देंगे।

उनके मज़हब में वापस आना शुऐब अ़लैहिस्सलाम के मोमिनों की क़ौम के बारे में तो इसलिये सही बैठता है कि वे सब पहले उन्हीं के मज़हब और तरीक़े पर थे, फिर शुऐब अ़लैहिस्सलाम की दावत पर मुसलमान हो गये। मगर हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम तो एक दिन भी उनके बातिल मज़हब व तरीक़े पर न रहे थे और न कोई अल्लाह तआ़ला का पैग़म्बर कभी किसी मुश्रिकाना बातिल मज़हब की पैरवी कर सकता है, तो फिर उनके लिये यह कहना कि हमारे मज़हब में वापस आ जाओ ग़ालिबन इस वजह से था कि नुबुव्वत अ़ता होने से पहले हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम उन लोगों की ख़िलाफ़े हक़ और ग़लत बातों और कामों पर ख़ामोश रहते थे और क़ौम के अन्दर रले-मिले रहते थे, इसके सबब उनका ख़्याल हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम के बारे में भी यह था कि वह भी हमारे ही हम-ख़्याल और हमारे मज़हब पर चलने वाले हैं। ईमान की दावत देने के बाद उनको मालूम हुआ कि उनका मज़हब हमसे अलग है और ख़्याल किया कि यह हमारे मज़हब से फिर गये। हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने जवाब दिया 'अ-व लौ कुन्ना कारिहीन' यानी क्या तुम्हारा यह मतलब है कि तुम्हारे मज़हब को नापसन्द और बातिल (ग़ैर-हक़) समझने के बावजूद हम तुम्हारे मज़हब में दाख़िल हो जायें? और मुराद इससे यह है कि ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता। यहाँ तक पहली आयत का मज़मून है।

दूसरी आयत में है कि हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से फ़रमाया कि तुम्हारे बातिल मज़हब से अल्लाह तआ़ला ने हमें निजात दे दी। इसके बाद अगर हम तुम्हारे मज़हब में वापस हो जायें तो यह हमारी तरफ़ से अल्लाह तआ़ला पर सख़्त झूठा बोहतान (इल्ज़ाम) होगा।

क्योंकि अव्वल तो ख़ुद कुफ़्र व शिर्क को मज़हब बनाना ही यह मायने रखता है कि यह अल्लाह तआ़ला का हुक्म है जो उस पर बोहतान व इल्ज़ाम है। इसके अ़लावा ईमान लाने और

इल्म व समझ हासिल होने के बाद फिर कुफ़ की तरफ़ लौटना गोया यह कहना है कि पहला तरीक़ा बातिल और ग़लत था, हक़ और सही वह तरीक़ है जिसको अब इख़्तियार किया है। और ज़ाहिर है कि यह दोहरा झूठ और बोहतान है कि हक़ को बातिल कहा और बातिल को हक़।

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम के इस क़ौल में एक क़िस्म का दावा था कि हम अब तुम्हारे मज़हब में फिर वापस नहीं हो सकते। और ऐसा दावा करना बज़ाहिर बन्दगी के ख़िलाफ़ है जो अल्लाह की बारगाह के ख़ास और मक़बूल बन्दों और अल्लाह वालों की शायाने शान नहीं, इसलिये फ़रमायाः

مَا كَانَ لَنَآ اَنْ نَّعُوْدَ فِيْهَآ اِلَّآ اَنْ يَّشَآءَ اللّٰهُ رَبُّنَا. وَسِعَ رَبُّنَا كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا. عَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْنَا.

यानी हम तुम्हारे मज़हब में हरगिज़ वापस नहीं हो सकते सिवाय इसके कि (ख़ुदा न ख़्वास्ता) हमारे परवर्दिगार ही की मर्ज़ी व इरादा हमारी गुमराही का हो जाये। हमारे रब का इल्म हर चीज़ को घेरे हुए है। हमने उसी अल्लाह पर भरोसा किया है।

इसमें अपनी आ़जिज़ी व कमज़ोरी का इज़हार और ख़ुद को अल्लाह को सौंपना और भरोसा करना है जो नुबुव्वत के कमालात में से है, कि हम क्या हैं जो किसी काम के करने या उससे बचने का दावा कर सकें, किसी नेकी का करना या बुराई से बचना सब अल्लाह तआ़ला ही के फ़ज़्ल से है। जैसा कि रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

لولا الله ما اهتدينا ولا تصدقنا ولا صلينا.

यानी अगर अलाह तआ़ला का फ़ज़्ल न होता तो हमको सही रास्ते की हिदायत न होती, और न हम सदक़ा-ख़ैरात कर पाते न नमाज़ पढ़ सकते।

यहाँ तक क़ौम के घमण्डी सरदारों से गुफ़्तगू करने के बाद जब हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम को यह अन्दाज़ा हुआ कि इन लोगों पर किसी बात का कोई असर नहीं होता तो अब उनको ख़िताब छोड़कर अल्लाह तआ़ला से यह दुआ़ कीः

رَبَّنَا افْتَحْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ قَوْمِنَا بِالْحَقِّ وَاَنْتَ خَيْرُ الْفٰتِحِيْنَ.

यानी ऐ हमारे परवर्दिगार! हमारे और हमारी क़ौम के बीच फ़ैसला कर दीजिए हक़ के मुवाफ़िक़, और आप सबसे अच्छा फ़ैसला करने वाले हैं।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि लफ़्ज़ फ़तह के मायने इस जगह फ़ैसला करने के हैं, इसी मायने से फ़ातेह "क़ाज़ी" के मायने में आता है। (बहरे मुहीत)

और दर हक़ीक़त इन अलफ़ाज़ से हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम में से काफ़िरों के लिये हलाकत की दुआ़ की थी जिसको अल्लाह तआ़ला ने क़ुबूल फ़रमाकर उन लोगों को ज़लज़ले के ज़रिये हलाक कर दिया। दूसरी आयत का मज़मून ख़त्म हुआ।

तीसरी आयत में हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम के घमण्डी सरदारों का एक गुमराह करने वाला क़ौल यह नक़ल किया है कि वे आपस में कहने लगे, या अपने मानने वालों से कहने लगे कि अगर तुमने शुऐब की पैरवी की तो तुम बड़े बेवक़ूफ़ जाहिल ठहरोगे।

(बहरे मुहीत, अ़ता की रिवायत से)

चौथी आयत में इस सरकश क़ौम के अ़ज़ाब का वाक़िआ़ इस तरह ज़िक्र फ़रमाया हैः

فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ فَاَصْبَحُوْا فِىْ دَارِهِمْ جٰثِمِيْنَ.

यानी उनको सख़्त और बड़े ज़लज़ले ने आ पकड़ा जिससे वे अपने घरों में औंधें पड़े रह गये।

हज़रत शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम का अ़ज़ाब इस आयत में ज़लज़ले को बतलाया है और दूसरी आयतों मेंः

فَاَخَذَهُمْ عَذَابُ يَوْمِ الظُّلَّةِ.

आया है, जिसके मायने यह हैं कि उनको "यौमिज़्ज़ुल्लति" के अ़ज़ाब ने पकड़ लिया। "यौमिज़्ज़ुल्लति" के मायने हैं साये का दिन। जिसका मतलब यह है कि पहले उन पर गहरे बादल का साया आया, जब सब उसके नीचे जमा हो गये तो उसी बादल से उन पर पत्थर या आग बरसाई गयी।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने इन दोनों आयतों में ततबीक़ (जोड़ और मुवाफ़क़त) के लिये फ़रमाया कि शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम पर पहले तो ऐसी सख़्त गर्मी मुसल्लत हुई जैसे जहन्नम का दरवाज़ा उनकी तरफ़ खोल दिया गया हो, जिससे उनका दम घुटने लगा, न किसी साये में चैन आता था न पानी में। ये लोग गर्मी से घबराकर तहख़ानों में घुस गये तो वहाँ ऊपर से भी ज़्यादा सख़्त गर्मी पाई। परेशान होकर शहर से जंगल की तरफ़ भागे, वहाँ अल्लाह तआ़ला ने एक गहरा बादल भेज दिया जिसके नीचे ठण्डी हवा थी। ये सब लोग गर्मी से बदहवास थे, दौड़-दौड़कर उस बादल के नीचे जमा हो गये। उस वक़्त यह सारा बादल आग होकर उन पर बरसा और ज़लज़ला भी आया जिससे ये सब लोग राख का ढेर बनकर रह गये। इस तरह इस क़ौम पर ज़लज़ले और साये का अ़ज़ाब दोनों जमा हो गये। (बहरे मुहीत)

और कुछ मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यह भी मुम्किन है कि शुऐब अ़लैहिस्सलाम की क़ौम के विभिन्न हिस्से होकर कुछ पर ज़लज़ला आया और कुछ साये के अ़ज़ाब से हलाक किये गये हों।

पाँचवीं आयत में क़ौमे शुऐब के वाक़िए से दूसरों को सीख लेने का सबक़ दिया गया है जो इस वाक़िए के बयान करने का असल मक़सद है। फ़रमायाः

اَلَّذِيْنَ كَذَّبُوْا شُعَيْبًا كَاَنْ لَّمْ يَغْنَوْا فِيْهَا.

लफ़्ज़ "ग़िना" के एक मायने किसी जगह में आराम के साथ ज़िन्दगी बसर करने के भी आते हैं, इस जगह यही मायने मुराद हैं। मतलब यह है कि ये लोग जिन मकानों में आराम व ऐश की ज़िन्दगी गुज़ारते थे, इस अ़ज़ाब के बाद ऐसे हो गये कि गोया कभी यहाँ आराम व ऐश का नाम ही न था। फिर फ़रमायाः

اَلَّذِيْنَ كَذَّبُوْا شُعَيْبًا كَانُوْا هُمُ الْخٰسِرِيْنَ.

यानी जिन लोगों ने शुऐब अलैहिस्सलाम को झुठलाया वही लोग ख़सारे (घाटे और नुक़सान) में पड़े। इशारा इस बात की तरफ़ है कि ये लोग हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम और उनके मोमिन साथियों को अपनी बस्ती से निकाल देने की धमकियाँ दे रहे थे, अन्जाम यह हुआ कि ख़सारा इन्हीं पर पड़ा।

छठी आयत में फ़रमायाः

فَتَوَلّٰى عَنْهُمْ

यानी क़ौम पर अ़ज़ाब आता हुआ देखकर शुऐब अलैहिस्सलाम और उनके साथी यहाँ से चल दिये। मुफ़स्सिरीन की अक्सरियत ने फ़रमाया कि ये हज़रात यहाँ से मक्का मुअ़ज़्ज़मा आ गये और फिर आख़िर तक यहीं क़ियाम रहा।

क़ौम की हद से ज़्यादा सरकशी और नाफ़रमानी से मायूस होकर शुऐब अलैहिस्सलाम ने बद्दुआ़ तो कर दी मगर जब उसके नतीजे में क़ौम पर अ़ज़ाब आया तो पैग़म्बराना शफ़क़त व रहमत के सबब दिल दुखा तो अपने दिल को तसल्ली देने के लिये क़ौम को ख़िताब करके फ़रमाया- मैंने तो तुमको तुम्हारे रब के अहकाम पहुँचा दिये थे और तुम्हारी ख़ैरख़्वाही (भला चाहने) में कोई कमी नहीं छोड़ी थी मगर मैं काफ़िर क़ौम का कहाँ तक ग़म करूँ।

अल्लाह तआ़ला का शुक्र है कि तफ़सीर मआरिफ़ुल-क़ुरआन की तीसरी जिल्द पूरी हुई।
सूरः आराफ़ का बाक़ी हिस्सा चौथी जिल्द में आयेगा। इन्शाअल्लाह